साहित्य

4

रांगेय राघव ग्रंथावली

रांगेय राघव ग्रंथावली

4

संपादिका

डॉ० सुलोचना रांगेय राघव

राजपाल एण्ड सन्ज़

इस खण्ड में·

1949 ई० की बात है।

उन दिनों मैं गांव मे रहता था। मैं अस्वस्थ रहा करता था। जिस स्थान पर मैं रहता था, वहां एक नीरवता छायी रहती और दिन मे कभी-कभी गायें और भैंसें वहां पेडों की छाया मे बैठकर जुगाली किया करतीं। सब अपने-अपने धन्धों में लगे रहते। पेडों की छाया घनी-घनी-सी जब पूस की ठंडी हवाओं मे कांपती, तब धूप बहुत ही अच्छी लगती। मेरे पांव का फोडा अब अच्छा होने लगा था। वह ऐसा भयानक था कि मैं शहर के लगभग सभी डाक्टरों को आजमा चुका था। हकीम साहब के काढ़े, एलोपैथ की नुकीली सुइयां, होम्योपैथों के पानी के घोल जब उसपर व्यर्थ हो गए, तो मुझे एक आदमी ने राय दी और मैं यहां चला आया। दूर तक यहां झाड़ झाड़ें मारती, हवा के थपेडों मे ऐसी लहर मारती कि जैसे कोई झीनी चादर सरकती चली जा रही हो और अब वह उठ जाएगी, उठ जाएगी, पर ऐसा नहीं होता। मै देर तक उसे देखा करता।

मेरा इलाजी एक और भी आश्चर्यजनक व्यक्ति था। वह गले में मालाएं पहनता, सिर पर साफा बांधे रहता और हाथों में कांच के कडे पहनता। वह इतने पुराने युग का था और मैं अपने को नितान्त आधुनिक समझता था। मै कभी इन गंवार इलाजों मे भरोसा नहीं करता, पर जरूरत ही कुछ ऐसी पड गई कि मुझे झुकना पड गया। वह जंगल से रूखडी तोड़कर लाता, किसीको उसके बारे मे नहीं बताता, पर मेरे सामने बैठकर जादू-सा करता। कभी उसमे फूंक मारता, कभी आंखें फाड़कर आसमान की तरफ देखता और कभी झूमर-सी मारता हुआ चटाचट आवाज करके अपनी अंगु लियां चटकाता। मै सब समझता था कि ये सब उसके मध्यकालीन अंधविश्वास हैं। परन्तु वह एक दिन इस बात पर नाराज हो गया। उसने कहा कि वह किसीके भी सामने यह रूखडी खोलने की बात नहीं करता, पर क्योंकि मैं शहरी हूं, इसलिए उसने इसमें कोई डर महसूस नहीं किया। उसने मुस्कराकर कहा: 'बाबू! तुम भिलावां और बैंगन के पत्ते का फरक नहीं जानते, फिर तुमसे क्या डर!'

उसके स्वर में वही व्यंग्य था जैसा हम शहरी लोगों मे गांववालों के प्रति होता है।

मैं मुस्कराया। तब उसने फिर हंसकर कहा: 'बाबू भैया! तुम तो फिर भी अपने हो, मेरी इस रूखडी पर जब मैंने मुंह खोला था तब सात अंजाम धरा गया था।'

अब मेरे कान जरा खड़े हुए।

'सो कैसे?' मैंने पूछा। और आज पहली बार मैंने उसके मुख की ओर देखा। साफे, मूंछों और गांव की धूल ने उसको ढक लिया था। उसका रंग धूप की तरह तपा हुआ था। आंखों में एक चमक थी। अब वह लगभग चालीस बरस का हो गया था। उसकी सीधी लम्बी नाक बड़ी सुन्दर थी। वह एक घुटनों तक की धोती और एक लम्बा-सा खुले गले का कोट पहने था। और मैंने कल्पना की कि एक दिन यह मुस्कराता नट चौंड़ी हड्डियों का गबरू जवान रहा होगा। उसकी आंखें बहुत सुन्दर रही होंगी जिनके डोरों और जब गोरे नारियों खिंच गई थीं

उस दिन वह चला गया

सातवें दिन उसने पट्टी खोल दी और कहा : 'आज बाबू भैया मेरे संग घूमने चलो। तुम्हें अपनी दवाई का जादू दिखाऊंगा।' मैं हैरान हो गया। मैंने सोचा : जरूर इन रूखड़ियों की वैज्ञानिक खोज होनी चाहिए। पर मुश्किल तो यह है कि वे लोग गुरु-परम्परा से पायी हुई इन चीजों की हवा तक नहीं देते। सदियों से जो काम हो चुका है उसको ये लोग ईश्वरीय समझकर उसे सुलझाने के बजाय धार्मिक और दैवी बनाकर उलझाने में ही अपना गौरव समझते हैं।

आज हम लोग घूमने थोड़ी ही दूर गए। फुलवारी में बैठे रहे। उसके बीचों-बीच एक सफेद महल था। मैंने पूछा : 'यह कब का बना है ?'

सुखराम ने कहा : 'जब इस राजा की अमलदारी शुरू हुई थी, तब पहले राजा ने इसे बनवाया था।'

महल सुन्दर था। जाड़े की शाम। डूबते सूरज की किरणें बेरों के सुगन्धित जंगल पर पड़कर अमलतासों और सेमल के पेड़ों पर फिसल रही थीं। और फिर कच्चे दगरे की गाय-भैंसों के खुरों से उठी धूल पर आरपार हो जाने का प्रयत्न कर रही थीं। चारों ओर ठंडक थी। दूर एक पेड़ के नीचे हनुमान जी थे, लाल सिन्दूर में लगे; और एक पहलवान नंगे बदन, अखाड़े की मिट्टी को मले हुए, लंगोट बांधे, दनादन बैठक लगा रहा था। एकमात्र कमरख के फलहीन पेड़ के सामने वह मुझे बड़ा अजीब-सा लग रहा था।

गांव की शाम की गंदगी, परेशानी सब धीरे-धीरे उतरते अंधेरे में छिपती चली जा रही थी और चारों ओर लौटते पक्षियों का कलरव अंधेरे के पांवों के नीचे तिरता-तिरता दबा जा रहा था। मन्दिरों की झालरों और घंटों की आवाज़ अब ऐसे सुनायी देती थी जैसे किसीने नाता जोड़ दिया हो। और दूर बजती बैलों की घंटियां और भी एक सूनापन भर-भर देती थीं।

सुखराम ने कहा : 'कल और आगे चलेंगे।'

मैंने कहा : 'वह क्या है ?'

सुखराम ने कहा : 'रोज तो देखते ही हो।'

मैंने कहा : 'किला है। किसने बनवाया था ?'

सुखराम ने उत्तर दिया : 'उसी राजा के बेटे ने।'

मैंने कहा : 'छोटा ही है।'

'रह गया है।'

मैंने पूछा : 'क्या मतलब ?'

'अधूरा किला है।'

'शायद राजा मर गया था ?'

'हां, बाबू भैया। कहते हैं, राज्य के लिए उसकी भाभी ने उसे जहर दे दिया था। वह जानते हुए पी गया था।'

कहते हुए सुखराम की आंखों में पानी छलक आया। मैं समझा नहीं। मैंने कहा : 'ऐसा क्या हुआ सुखराम ? और इसमें तुम्हें रोने की क्या जरूरत है ?'

वह आंसू पोंछकर मुस्कराया। उसने कहा : 'कुछ नहीं बाबू भैया ! अब जमाना बदल गया है। राजाओं के ही राज चले गए तो इन बातों में फायदा ही क्या है !'

'नहीं, नहीं सुखराम', मेरे भिखारी उपन्यासकार ने याचना की, 'बताओ न ! मैं तो परदेसी हूं। उस दिन तुम साहब के घराने की बात कहते-कहते रुक गए थे, आज तुम इस बात को भी छिपा रहे हो।'

परन्तु वह कुछ नहीं बोला। उसने बात बदलकर कहा : 'क्यों, अब चल सकते हो न ?'

'क्यों नहीं। कल और भी चलेंगे।'

'हां, अब क्या डर है ?'

'सुखराम, वह क्या है ?' मैंने एक ओर हाथ उठाकर कहा।

वह एक नीला पहाड़ था। उसपर एक गहरा सन्नाटा था। लगता था, आसमान से उतरता अंधेरा पहले वहां इकट्ठा हो गया है और अब हवा के झोंके उसीसे उड़ा-उड़ाकर उसे इधर-उधर फैला रहे हैं। सुखराम ने कहा : 'चलो बाबू भैया ! चलो।'

उसने जैसे मेरी बांसुरी मे से तरह-तरह के राग निकलते देखकर किसी भी राग को पकड़ने की जगह बांसुरी के रंध्र को ही उंगली से दबाकर बन्द कर दिया। मेरी सारी जिज्ञासा रुकी हुई पड़ी रह गई।

तीसरे दिन जब हम लोग जंगल मे पहुंचे तो सामने धुआं उठता हुआ दिखायी दिया। मैंने कहा : 'यह क्या है ?'

'यह हमारी बस्ती है।' सुखराम ने कहा।

मैंने देखा, छोटे-छोटे घर थे। और अब साझ उस जंगल से बस्ती को चारों ओर से घिराव डालकर दबाए ले रही थी। शायद ही दस घर हों। मैंने सोचा -यह संसार कितनी तरह का है ? कहीं बम्बई की भीड़ है, कहीं आदमी ऐसे भी सन्नाटे मे रहकर उम्र गुजार देता है ? सामने एक बड़ा-सा कुआं था। मै उसकी ओर बढ़ा, पर वहां पहुंचकर ठिठक गया। एक बच्ची, लगभग तेरह या चौदह वर्ष की, वहां पानी भर रही थी। वह ऊंचा घाघरा और फरिया पहने थी। फरिया उस वक्त उसके कंधों के नीचे पड़ी थी। उसकी ओर मैंने देखा तो मुझे कुछ आश्चर्य हुआ। उसके नेत्र नीले, बाल सुनहले और रंग भभूका सफेद था। उसकी नाक कुछ आगे से उठी हुई थी और उसके गालों पर सुर्खी थी। वह मुस्करायी।

'कौन ?' सुखराम ने कहा : 'चन्दा, अभी घर नहीं गई ?'

'रोटी बनाकर धर आई हूं दादा (पिता), पानी का एक डोल लेने आई थी।'

मुझे अब मालूम हुआ कि वह सुखराम की बेटी थी। परन्तु कितना अजीब था। वह लड़की बिलकुल अंग्रेज मालूम देती थी। उसकी आवाज में कितना तीखा पतलापन था कि मेरा विश्वास विचलित हो उठा।

सुखराम ने बीड़ी सुलगा ली और फिर ध्यान में डूब गया। मैं सोच नहीं सका। सामने पहाड़ के पैरों पर चांदी की बेंदी-सी एक इमारत खड़ी थी। मैंने उसकी ओर इशारा करके पूछा : 'सुखराम, वह क्या है ?'

लड़की ने हंसकर कहा : 'डाक-बंगला। पहले यहां साब लोग आया करते थे। अब तो उनका राज ही चला गया।'

वह फिर हंसी और सुखराम की आंखों में एक छाया-सी उभरकर आई, कातर, परन्तु अनिंद्य, सुखावह नहीं, अपने-आप में पूर्ण।

उस दिन और बात नहीं हुई। मैं घर आ गया। जिनके घर ठहरा था, वे दिन खाने के समय यह बताने में लगे रहे कि अब वे नई जिन्दगी शुरू करना चाहते हैं। उनका दिल गांव से ऊब गया था। काफी देर तक वे गांव की निंदा करते रहे, परन्तु उन्होंने सारांश यही निकाला कि गांव हर हालत में शहर से अच्छा होता है, और वे यहीं रहेंगे। मेरे पांव की बात चली। फिर सुखराम की बात आई। मैंने उसकी लड़की के बारे में भी जिक्र किया। मेरे दोस्त ने खाना पास सरकाया और खाने की थाली में हाथ धोकर उसे एक ओर सरका दिया, जिसे उनकी पत्नी यानी मेरी भाभी ले गई।

दोम्त बड़े पसोपेश में पड़े हुए नजर आते थे। मैंने कहा 'आखिर बात क्या है ? लगती है वह अंग्रेज-सी, परेशान आप है !"

'मै न होऊंगा तो होगा और कौन ?'

'क्यो ? आपका उसमे सम्बन्ध ही क्या ?'

'बड़े कुवर को जाके ढूढो इस वक्त।'

'आखिर मतलब क्या है आपका ?'

'बेटा किसी पेड के नीचे होगा और 'चदा-चदा' कहकर आहे भर रहा होगा।'

मै हसा। बडा कुवर पन्द्रह का, चदा होगी तेरह या चौदह की। इनके प्रेम का इलाज मेरी राय मे फकत दो-दो चाटे थे।

मैने कहा : 'आप भी…!'

भाभी ने कहा : 'मगर उसने तो अभी खाना भी नही खाया है ? दस बज रहे है। पूस की ठंड है। मेरी तो दांती बज रही है। जन्म लिया था मुअर ने ठाकुर के घर घूमा है तो नटनी के पीछे। मेरी तो उसने इज्जत बिगाड दी।'

मेरे दोस्त हठात् उठ खडे हुए। मै जानता था, वे ठाकुर है जरूर, पर सीधे-सादे आदमी है। वे दो बार कांग्रेस के अहिंसा-आन्दोलनों मे जेल भी हो आए थे। बो। 'तो उसे ढूढ ही लाऊं ?'

'कहा जाएगे आप ?' मैने कहा।

रात नब बाहर गरज रही थी। दूर कही बघर्रे की गुर्राहट सुनायी दे रही थी, और चारों ओर अधकार था।

'मुझे लालटेन नही, मेरी टॉर्च दे दो।' उन्होने कहा, और कानो पर गुलूबद बाध लिया। मै बडे चक्कर मे पडा। यह सब मेरे लिए ऐसा था जैसे किसी जासूसी उपन्यास का हिस्सा हो। मै भी झट से तैयार हो गया।

जब भाई दरवाजे पर आए तो मैं वहा हाथ मे डडा लिये खडा था। भाभी की आखें मुझे साथ जाते देखकर प्रसन्न दिखाई दी। उनकी राय मे चदा को मार डालने में भी कोई हरज न था, क्योंकि वह उनके बेटे पर जादू कर रही थी, बेटे घर मे आने के लिए। भाई साहब का मन और था। वे कहते थे कि साला आजकल की प्रेम की किताबें पढकर बावला हो गया है। नटनी से इश्क करके समझता है कोई [illegible] कर रहा है। बल्कि एक गरीब लडकी को फुसला रहा है। औरत मे अक्ल होती ही कहा है ? और मैंने उनके तर्कों को सुना। मुझे मुस्कराहट भी आई। स्त्री अपने [illegible] दोषहीन समझती है, क्योंकि वह उसके छलछिद्रों को नही समझती, अपनी [illegible] के मायावी रूप को जानती है और पुरुष को मूर्ख मानती है। और पुरुष अपने [illegible] को जानता है, स्त्री को बेवकूफ समझता है, अत. अपने ही पुत्र को दोषी मानता [illegible]

बाहर हवा काटे खा रही थी। दोस्त ने टॉर्च जलायी। [illegible] तो पुकार सुनायी दी : 'चंदा ! ओ चदा !'

फिर सब शात हो गया। वही आगे बढने पर बडा कुंवर नरेश [illegible] दिया। बाप और बेटे की कोई बातचीत नही हुई। मेरे कारण [illegible] भी नही [illegible] घर आकर नरेश ने अनमने होकर रोटी खायी। बाजरे की घी-चुपडी रोटी थी। [illegible] भाभी ने कहा था : 'स्वाद मे ज्यादा न खा जाना, पेट मे गचक जाएगी।' [illegible] कह रही थीं 'क्यों रे ? खाता क्यों नही ? भूख नही है तुझे ?'

मैं बाहर आ गया और मैने अपना सिगरेट का पैकेट निकालकर एक सिगरेट सुलगायी

दूसरे दिन मैं सुबह ही उठा और आज भाई साहब के साथ खेत पर [illegible] गया

उनके पास पचास बीघा खेत था, उसमें कुएँ की सिचाई थी और इस वक्त गेहूँ और जौ की फसलें झूमने के लिए तैयार हो गई थीं। पखेरू उड़ाने के लिए लड़के इधर-उधर पुकार रहे थे और पानी देने वाला जुआरा लेकर हारिया बरसात के ढांढौनों की सूखी पत्तियों के पास बैठा था। मैंने देखा, नरेश चुपचाप बैठा कुछ सोच रहा था। मैंने मन ही मन निश्चय किया कि इससे बात करूँगा। लिहाजा जब मेरे दोस्त चले गए तो मैं नरेश के पास जा बैठा।

मैंने कहा : 'नरेश! तू क्या सोचा करता है?'

वह मेरी ओर देखने लगा। बोला कुछ नहीं।

मैंने ही कहा : 'तू जानता है कि दुनिया के लोगों की तरह मैं कठोर-हृदय नहीं हूँ। तू मेरी रचनाएँ पढ़ चुका है जिनमें मैंने जाति-पाँति के बन्धनों को तोड़ने की बात लिखी है। मुझसे अपने दिल की बात कह दे।'

नरेश के कोमल मुख पर एक नया अवसाद घिर आया, जिसमें जीवन के नए निश्वासों का अम्बार लगा था, मानो वे जौ फसलों में झूमती हुई हरी-हरी बालें थीं कट-कटकर कनक बनकर ढेर-ढेर वसुधरा पर मनुष्य के कल्याण-स्वप्न का प्रतीक बनकर सामने निखार लेकर उपस्थित हो गई थीं। मेरी अन्तरात्मा उस भीगे स्नेह से विभोर हो उठी। यह आयु कितनी मादक, कितनी वितृष्ण होती है जब सारी दुनिया इसलिए फैली हुई पड़ी रहती है कि उसपर अपने ही चरणों के वैभव से चलना है। हिमगिरियों से भी ऊँचे अरमानों पर जब सूर्य अपनी देदीप्यमान किरणों की प्रतीक्षा करता है तब मानो दिगन्तों में नया आलोक विकीर्ण होकर अंधकार के-से भविष्य की मोटी-मोटी पर्तों को फाड़कर भीतर तक चेतना फैला जाता है। मैं जानता हूँ, इसी आयु पर पुरुष के भीतर पौरुष परिपक्व होता है और उधर सदा की ही आयु पर बालिका स्त्री बनने लगती है। मानो तितली बनकर फूलों का मधु ले-लेकर उड़ जाने के पहले, यह किशोरावस्था वह अवस्था है जिसमें वह कीट रेशम अपने उदर के भीतर से बुनता है और संसार के लिए उगलता है। यह वह आयु है जिसे मनुष्य की शाश्वत कोमलता, रंगीन और स्वप्निल झिलमिल ने आज तक, मनु से लेकर आज तक, अपने काव्य-भवन में प्रवेश करने के पहले, देहलीज बनाकर लगा दिया है। सौन्दर्य अपनी नई अंगड़ाई लेकर मानो बचपन की नींद को छोड़ना चाहता है। वे अनजाने मिठास-भरे दिन, जो बाल्यावस्था में होठों पर पंखुड़ियों की भाँति फिसलते हैं, इस वय पर आकर मानो रसभरी फल की फाकों-सी छाया-माया भरकर नया रूप धारण कर लेते हैं। और मैंने सोचा कि यह धरती ऐसे ही कितने-कितने युगों से मनुष्य की अमर चेतना का प्रवाह अपने भीतर अपने कण-कण में धारण करती हुई, हर भोर की बेला में नये-नये कुड़कते कान्तारों में गुंजन-भरी, डाली-डाली पर मधुर-मधुर फूल खिलाती है।

मैंने स्नेह से नरेश की ओर देखा। किन्तु उसके कपोल आरक्त थे और वह धूप में पीले-पीले जगमगाते-से अधूरे किले की ओर एकटक देख रहा था।

मैंने फिर कुछ भी नहीं पूछा। आज मौन का प्रारम्भ कल अन्तरतम वाणी का स्रोत बन जाएगा, यही मैंने मन में सोच लिया।

किन्तु साँझ की बेला जब फिर घर लौटती गायों के खिरकों की ओर से निकलकर नगरों पर लौटती हुई आ गई तब मैं और सुखराम धीरे-धीरे घूमते हुए जंगल की ओर चल पड़े। आज हम जिस ओर गए थे उधर झील लहरा रही थी। साँझ की पीली-पीली चादर झील पर ऐसे गिर गई थी कि मुझे वह कोई भिक्षुणी-सी दिखायी दी। सुखराम आज पहले से अधिक चिन्तित था। आज हम दोनों एक स्थान पर आकर बैठ

गए। घनी झाड़ियों मे हम घिरे हुए थे, जहां कुछ छोटे-छोटे देवालय थे। उनके पीछे कोई बाग था, जिसमे अब देखभाल न होने के कारण बड़े-बड़े इमली के पेड़ थे जिनपर कौओ की कांव-कांव सुनाई दे रही थी।

अचानक हमने सुना, झाड़ी के पीछे किसी ने कहा : 'चंदा! तू सच कह, मेरी बात मानेगी?'

मैंने स्वर से पहचान लिया कि यह नरेश का स्वर था।

सुखराम गम्भीर था। उसमे मुझे एक भी विचलित भाव नही मिला।

चंदा की आवाज़ आई : 'मैं सच कहती हूं, राजा! मुझे लगता है, मै इस अधूरे किले की मालकिन हू। पर न जाने क्यों, यहा मैं इतनी दूर रहती हूं!'

इसे सुनकर सुखराम जैसे थर्रा उठा और उसने कांपकर मेरा हाथ पकड़ लिया।

'मै तुझे वहा ले जा सकता हूं।' नरेश का स्वर सुनायी दिया।

'तुम्हे डर नही लगेगा?'

'डरूंगा क्यो? लोग यह भी तो कहते है कि यहा बघेरा आता है और आज तक हम-तुम यहा आने से नही डरे, तो अब ही क्या डरने की बात हो सकती है!'

'तुम सचमुच बड़े बहादुर हो।'

'अच्छा, यह तो बता, तुझे किसने बताया कि यह किला तेरा है?'

चंदा हंसी। कहा : 'कल मैने दादा के बक्स मे एक तस्वीर पायी थी। वह बिलकुल मुझ-सी थी। उसे देखकर मै कुछ भी समझ नहीं पायी। वह औरत बिलकुल मेम-सी लगती थी और उसकी तस्वीर के पीछे एक और तस्वीर दबी छपी थी। वह किसी पुरानी ठकुरानी की तस्वीर थी। न जाने क्यों, मैने जब से उसे देखा है, मेरे मन म चाह हो उठी है कि मै भी वैसी ही बन जाऊं।'

हठात् सुखराम का भर्राया स्वर उठा : 'चंदा! चंदा हो!'

और फिर लगा, झाड़ियो के पीछे कोई भागा। जब हम वहां पहुंचे, कोई नही था। सन्नाटा छाया हुआ था। सुखराम अत्यन्त विचलित था। मै समझा नही कि आखिर बात क्या थी। सुखराम अपने-आप बुडबुडाया, 'फिर आग लगेगी, फिर धुआ उठेगा।' और वह भयानकता से अधूरे किले की ओर देखकर ठठाकर हंसा। मेरे रोंगटे खड़े हो गए। वह विकराल लग रहा था। उसने मानो अधूरे किले से कहा : 'तू गिरकर मिट्टी मे मिल जा, अभागे! तूने इस धरती पर रहने वालो को कभी चैन से नहीं रहने दिया।'

मैने पुकारा : 'सुखराम!'

'सच कहता हूं।' सुखराम ने मेरे दोनो हाथ पकड़कर कहा : 'मै सच कहता हू बाबू भैया! जिस दिन इसकी नींव खुदी थी, उस दिन इसमे नर-बलि दी गई थी, क्योंकि तब प्रेत को चौकीदार बना देने का कायदा था। जो ज़िंदे आदमी की हड्डियो पर खड़ा किया है, वह क्या कभी आदमी को चैन दे सकता है? इस किले म भाई भाई का नही रहा। इसी के लिए भाभी ने देवर को जहर दिया। इसी किले में देवर के मरने पर देवर की गर्भ वाली बहू रातोंरात भागकर जंगल में छिपी और ठकुरानी को एक जोगी ने जंगल मे जापा कराया। फिर उसे वह नटों में छोड़ गया, क्योंकि नटों मे कोई जान का खतरा नहीं था। जब बच्चा दो बरस का हो गया तो वह ठकुरानी नाचने वाली बनकर बदला लेने आई, और अभागिन कहां तो बदला लेने आई थी, कहां खुद शिकार हो गई। जेठ नहीं जानता था, पर अपने भाई की बहू पर आशिक हो गया। ठकुरानी की चाह पूरी होने को थी वह उसका खून कर देती पर एक अफसोस रह गया कि वह एक की मुहब्बत मे फस गई राजा को मालूम पड़ा तो उसने ठकुरानी को हीरा

की, मोतियों की लड़ों की पोशाक भेजी। ठकुरानी ने उन्हें चक्की में धरकर, पीसकर चूरा करके राजा को भेज दिया और खुद दरबान के साथ भाग निकली, पर दरबान पकड़ा गया और ठकुरानी मार डाली गई। दरबान ने कैद से छूटकर बच्चे को पाला। वह बच्चा बड़ा हुआ तो नट बना।'

'फिर ?' मैंने कहा।

'फिर ?' सुखराम हिल उठा। उसकी आवाज़ कांप उठी। उसने कहा 'मैं उसी खानदान का आखिरी ठाकुर हूं बाबू भैया ! जब नटों के यहां रहकर ठकुरानी एक बार पड़ोस के ठाकुरों के यहां गई तो उन्होंने कहा—तूने नटों का छुआ हुआ खाया है, अब हम तुझे वापस नहीं ले सकते। उस दिन उसने कहा था—वो किला मेरा है। इसे कोई भी जीतना ही होगा। यही मेम ने कहा था, आज चंदा भी कह रही है।'

मैं आवेश में था। सुखराम की अन्तिम बात ने मुझे किसी अजीब कहानी की तरफ मोड़ दिया था। मैं अब उसे सुनना चाहता था और सुखराम ने मुझे सुनाया। मैं सुनता रहा—सुनता रहा। उसे सुनकर मैंने सोचा, इसे मैं अवश्य लिखूंगा। यह मनुष्य की विवशता की कितनी ज्वलंत गाथा है और कितनी आश्चर्यजनक है !

'नहीं-नहीं बाबू भैया,' सुखराम ने कहा 'मैंने कभी किसी नट की बात को नहीं माना। मैं अब भी असली ठाकुर हूं।'

'तुमने बुरा किया सुखराम।' मैंने कहा। 'तुमने उनको अपना नहीं समझा, जिन्होंने तुम्हें आदमी बनाकर जिंदा रहने का हक दिया। तुमने इंसान को इंसान से नफरत करने की बात को इतना बड़प्पन देकर अपने दिल के दूध को पिला-पिलाकर उस ज़हरीले सांप को पाला है, जो भीतर ही भीतर तुम्हें डस रहा है और तुम्हें बेहोश किए दे रहा है।'

सुखराम कुछ नहीं बोल सका। उसने आंखें फाड़कर देखा, मानो जो मैं कह रहा हूं वह उसने कभी नहीं सुना है।

मैंने कहा : 'जंगल की रूखड़ी की टोह लेने वाला नहीं जानता कि इन्सानियत की रूखड़ी सबसे बड़ी है, सबसे ऊंची है।'

रात घिर आई थी। हम लौट आए। दूसरे ही दिन मैंने उसकी कहानी को लिखना प्रारम्भ कर दिया। यह सच है कि उस कथा की वर्णनात्मकता मेरी है परन्तु, तथ्य उसीके दिए हुए हैं। जब मैं लिखता तब मैं अक्सर सोचता कि मैं इस अजीब सी कहानी को क्यों लिख रहा हूं। तब मुझे महसूस हुआ कि रजवाड़ों की इस मध्यकालीन संस्कृति को अभी तक मशीन आकर बदल नहीं सकी है।

सुखराम रोज आता और हम घूमने जाते। धीरे-धीरे कहानी पूरी हो गयी। मैंने उस चित्र को ज्यों का त्यों लिखा था। आज मेरे सामने चंदा की लाश पड़ी है और प्यारे पागल सा एक कोने में खड़ा हंस रहा है। पुलिस ने सुखराम के हाथों हथकड़ी पहना दी है। चारों ओर सन्नाटा छा रहा है। मेरे दोस्त की आंखों में पानी है और उसकी पत्नी दोनों हाथों से सिर के बाल कभी-कभी नोच लेती है, फिर अपने हाथों को उठाकर अपने सीने से मार लेती है।

तुम ! तुम नये साहित्य को पढ़ते हो। तो, इसे भी पढ़ो। जीवन उतना ही नहीं है जितना तुम समझते हो। रात भयानक आ गई है। आसमान में तूफान गरज रहा है। मैंने चंदा की लाश छू ली है। वह अब भी कितनी खूबसूरत थी। और प्यारे चीख रहा है 'काका ! आज इसे सो जाने दो। कल यह अपने-आप जाग उठेगी और तब मेरे पास आएगी।'

भाभी कहती है बेटा

उनका स्वर रुंध जाता है। अब वह रो रही है : 'अभागिन ! तू औरत बनकर जन्मी ही क्यों ? स्त्री होकर तू कभी मनचाहा पा सकती है ? कभी नहीं। यह दुनिया बड़ी निर्दयी है।'

'सुखराम !' मैं कहता हूं, 'तूने इसकी हत्या की है ?'

हां,' वह कहता है, 'मैंने ठकुरानी का खून किया है, मैंने चंदा को नहीं मारा। वह मरकर भी मरी नहीं थी। उसकी आत्मा भटक रही थी। वह बार-बार आदमियों को भरम में डालती थी। मैंने उसे आजाद कर दिया है। एक दिन ठकुरानी ने चक्की में डालकर लाखों रुपयों के हीरे-जवाहरात पीसकर जुलमी के मुंह पर दे मारे थे। उसकी मुहब्बत का पागलपन उसपर सवार हो गया। वह मरकर भी जिंदा रहती थी। वह अधूरे किले को छोड़ नहीं पा रही थी। चार पीढी बीत गई, पर उसमें माया का जाल नहीं कटा। बाबू भैया, दौलत का जाल पिंजरा होता है। इसमें फंसकर आदमी तोते से भी गया-बीता हो जाता है कि द्वार खुल जाने पर भी उड़कर नहीं जाता।'

सुखराम को पुलिस ले गई है। आकाश में झम-झमकर बिजली नाच रही है। हठात् नरेश चमकती बिजली के उजाले में हाथ उठाकर अधूरे किले की ओर देखकर कह रहा है : 'चंदा ! वह हंस रही है। आज वह बहुत दिन बाद अधूरे किले की मालकिन हो गई।'

और वह हंस रहा है, हंस रहा है, बाहर मानो तूफान उसकी हंसी बनकर उमड़ रहा है। विक्षोभ आज आकाश से लेकर पृथ्वी तक थरथराकर लरजता हुआ डोल उठा है।

और मैं सुखराम की कहानी सोच रहा हूं। मैं उसे निकाल रहा हूं। पर नरेश पागल हो गया है, नहीं, यह मेरी कहानी अधूरी है। यह कहानी चार पीढ़ियों तक फैली हुई है, जिसमें सामंतीय व्यवस्था का भूत पुकार रहा है, लहू से इसकी नींवें रंगी हुई हैं। इसमें एक बहुत सुनहरा छलावा है, जो आज की विषमताओं को कभी-कभी छल में लगाता है, परन्तु यह स्वयं किसी नरेश की भूली हुई-सी बात है।

मैं इसे फिर लिखूंगा, जिसमें सब कहानी आ जाए।

मेरे दोस्त की आंखें अब बरस नहीं रही हैं। भाभी खामोश है। आसमान चुप है, और नरेश नीरव है। बाहर वायु का संचरण शान्त है। सघन वनों का हाहाकार निस्तब्ध हो गया है। अंधकार अपनी गतिहीन सत्ता में अवाक् हो गया-सा जहां-का-तहां जमकर बैठ गया है।

पर मैं जानता हूं यह सब क्षणिक है। हवा फिर चिल्ला सकती है, आसमान फिर दहाड़ सकता है। सघन वन फिर पुकार सकता है, यही अंधकार अपने अंगों को झकझोरता हुआ फिर गर्जन कर सकता है, दोस्त की आंखें फिर बरस सकती हैं, भाभी फिर कराह सकती है, और नरेश फिर वही विकराल हंसी हंस सकता है। विकराल ! पन्द्रह बरस का लड़का और इस प्रकार उसकी चरमराती हुई कर्कश हंसी !

मैंने अपनी उमर गवा दी है। मैंने कभी अपने लिए स्नेह नहीं मांगा, मैंने तुमसे कभी कुछ पाया नहीं, पर मेरे इस असम्बन्धित सम्बन्धी नरेश को तो देखो ! कैसी फटी-फटी-सी आंखों से देख रहा है !

फिर अचानक आकाश जल उठा, उजाला हो गया, ऐसा कि बरसाती नदी का बहता पानी पत्तों के नीचे भागता हुआ दिखाई देने लगा। और नरेश ने द्वार पर खड़े होकर कहा 'काका ! कोई नहीं समझ सकता, बस, तुम समझ सकते हो। देखो ! वही है न चंदा ! आज कैसी ठकुरानी बनकर खड़ी है। सोलह सिंगार किए ठीक वैसे ही जैसी वह तस्वीर थी आज वह सचमुच अधूरे किले की मालकिन हो गई है

2

जो तब सुखराम ने कहा था, वह लिखता हूं। इसमे अनुभूतियो की गहराइयो के वर्णन स्पष्ट ही मेरे हैं, सुखराम के नही। उसने कहा था :

मैं तब बारह बरस का हो गया था। अभी मेरा बोल लड़कियो का-सा था। मैं तो धीरे-धीरे जवानी की सडक को देखने लगा था, क्योंकि बचपन की वह पगडण्डी जाकर उसमे मिल जाती थी।

मेरा बाप अपने झोपडे मे बैठा शराब पी रहा था। उसकी लम्बी मूछे थीं, और गिद्ध की-सी आंखें थीं। वह इतना सख्त दिखायी देता था कि मेरी मा के सिवाय सब उससे डरते थे। मां नटनी थी। अब वह लगभग पैंतीस वर्ष की थी।

मुझे वह सब बिल्कुल तो याद नही है, पर वह रात का वक्त था। चादनी पहाड़ के ढालों पर से फिसलती हुई आकर मैदान मे फैल गई थी। काम के चितकते पथ पीले सफेद-से भुरभुरे पेड़ों पर पड़कर वह कितनी बेहोश-सी दिखायी देती थी कि मुझे और कुछ नही भाता था। बाप की कुछ बीड़ियां चुराकर ले जाता था और किसी जगह सन्नाटे मे बैठकर रात की नीली-पीली परछाइयो को मैं चुपचाप देखा करता। आज भी मैं ऐसे ही चला गया था। मैंने एक पेड़ की तिरछी होकर फैल गई जड पर सिर रख लिया था और पड़ा हुआ था। घरो के पास लडको और लड़कियो के स्वर गीत गाते हुए उठते और एक मजी हुई स्वर-साधना-सी बार-बार झाकती, कापती, फरफराती हुई मुझे विभोर किए दे रही थी।

पूरा चाद निकला हुआ था। झील में उतर आया था बेईमान, चादी की नाव बनकर, जिसपर किरनों की लडकिया बैठकर आई थी। पानी की लहरो पर आकर जैसे नाव डूब गई थी और वे लड़कियां लहरों पर बहने लगी थी।

रेंमझा के पेड़ों के पतले-पतले पत्तों के पीछे से जब मैं देखता तो दूर तक फैला हुआ जंगल बड़ा ही खूबसूरत दिखायी देता।

इतने मे मेरे बाप की भर्राई हुई पर मोटी आवाज सुनायी दी 'सुखराम! ओ सुखराम!'

मैं दौड़कर गया। दादा (बाप) ने आवाज दी थी। मेरे बाप ने कहा : 'सुखराम! चल, तुझे जंगल में चलकर रूखड़ियां दिखा दूं। आज बड़ी अच्छी पूरनमासी है, पर एक चीज साफ दिखायी दे रही है। यह काम रात को चादनी में ही हो सकता है।'

मैं समझ नही सका। पर मैंने कहा : 'चलो दादा, चलें।'

मेरे अधेड उम्र के बाप ने मुझे सीने से लगा लिया और माथे को चूम लिया। उसके मुह से शराब की बदबू आ रही थी। पर शराब वहां सब पीते थे। बचपन में मेरी मा मुझे नशा करके सुला देने को दो बूंद शराब पिला देती थी। मुझे शराब सूंघने की आदत थी। आज मैंने पिता मे एक विह्वलता देखी थी, जैसे वह पुराना बरगद का पेड़ हिल उठा हो, जिसकी लटकती जटा फिर धरती में घुसकर एक नया बरगद बन गई हो। उस जटा के कंधे पर हाथ धरकर उसे सीने से लगाकर, जैसे बरगद फिर असीम आकाश की ओर देखने लगता है, वैसे ही मेरे कंधों पर हाथ रखकर मुझे सीने से लगाए, मेरा बाप आकाश की फैली हुई पीली और रुपहली किरनों को देखने में लगा हुआ था।

हम लोग झाड़ियों में से चल पड़े। अब शीत उठ रहा था।

'आज चांदनी है। आज मैं तेरे पास सोऊंगी, मुझे अकेले में डर लगता है।'

'ओ चन्दा की-सी कामिनी, तू जिसमें से जन्मी है, तुझे उसी से डर क्यों लगता है बावरी!'

'ओ साजन, मुझे हसुली बनवा दो, उन चंदा में उतना सोना-चांदी है, उन्हें जाकर कटवा दो न ? दरोगा क्या तुम्हें इनके गहने बनवाने पर भी पकड़ लेगा ?'

'प्यारी, वह बड़ा निरदयी होता है। वह मेरा दुश्मन नहीं है, वह चंदा का रखवाला भी नहीं है, असल में उसकी आंख तेरे जोबन पर लगी है।'

हम लोग धीरे-धीरे बढ रहे थे। मेरा बाप उस समय बड़ा गंभीर था। मैंने देखा, वह इस समय बड़ा गंभीर दिखायी दे रहा था। उसके सिर पर साफा बंधा हुआ था। मैंने उसे भिट दबाकर लोमड़ पकड़ते देखा था, वह भागते रोझ को घेर लेता था, वह तीन हाथ में काटे फेंकती सेही को मार देता था, और बिज्जू-जैसे सख्त और खतरनाक जानवर को उसने सबके सामने अकेला मार डाला था। वह गांवों में घूमा करता। मेरी मां से वह बहुत प्रेम करता था। कभी हाथ उठाकर नहीं बोलता था। जब वह शराब पीकर पराये मर्दों के साथ मस्त होकर बकती थी, तब वह उसे कंधों पर धरकर ले आता था। मैंने अकेले में उसे उसके साथ बड़े प्यार की बातें करते देखा था।

जब हम लोग देवी की मढ़ैया के पास पहुंचे, मैंने देखा कि एक चिराग जल रहा है, दो-तीन आदमी बैठे हैं और मेरी मां बैठी है। वे सब शराब पी रहे है।

मेरा बाप उसे लेने को बढ़ा, पर हठात् रुक गया, क्योंकि मेरी मां के सामने बैठे हुए काले रंग के पुरुष इसीला ने कहा : 'ठाकुर ! तो वह तुझे भी ठकुरानी बना देना चाहता है ?'

'हां !' स्वर खींचकर मां ने कहा, जैसे वह हंसना चाहती थी, और भीतर ही भीतर घुटी जा रही थी।

इसीला ने कहा : 'इसकी मां नटनी थी। फिर ठाकुर क्या इसे अपने में मिला लेंगे, जो यह ठाकुर बनना चाहता है ?"

वे सब हंसे और उस हास्य में एक विद्रूप था, व्यंग्य था। मनका ने कुल्हड़ों में शराब भरी और फिर वे नया दौर खतम करने में लग गए। अपने बाप को मैंने देखा। वह स्तब्ध खड़ा था, जैसे उसे काठ मार गया था। मैं उसको इस तरह गंभीर देखकर उस समय डर गया। वह बिल्कुल पत्थर हो गया था। कब तक ऐसे ही वह खड़ा रहेगा, मैं सोच नहीं सका। तब मैंने धीरे से कहा : 'दादा ! चांद पहाड़ की सीध में आ गया है, चलो।'

वह चौंका और हम लोग चल पड़े। जंगल भयानक था। दूर हमारी बस्ती में अब भी गीत उठ रहा था, और मुझे यहां ऐसा सुनायी देता जैसे वह कहीं दूर स्वप्न की-सी एक हल्की-सी लोरी थी, जो दूर-बहुत दूर गूंज रही थी। मेरे पिता ने मुझे जड़िया-बूटियां खोज-खोजकर देनी शुरू की। वह मुझसे कहने लगा : 'सुखराम ! इन्हें पहचान लो। मैं सदा नहीं रहूंगा। यह विद्या मैंने नटों से सीखी है और इनके यहां का कायदा है कि बाप से बेटे को यह विद्या मिला करती है।'

मेरा मन हिल गया। मैंने कहा : 'तो क्या हम इनमें से नहीं ? क्या हम नट नहीं हैं ?'

'नहीं बेटा।' मेरे बाप ने आसमान की तरफ देखते हुए कहा : 'हम इनकी तरह जरायमपेशा नहीं है। इनको हमेशा से बेवजह गिरफ्तार किया जाता है, पर हम वे नहीं हैं : तू और मैं ठाकुर हैं। ठाकुर !' उसका स्वर कठोर हो उठा। उसमें अथाह तृष्णा थी, कुचले हुए सांप की तरह का फन पटकता हुआ अहंकार था, हम ठाकुर हैं। उसने हठात् हाथ उठाकर कहा : 'वह क्या है ?'

अधूरा किला मैंने कहा

हम अधूरे किले के असली मालिक हैं आज जो अंग्रेजों के गुलाम राजा यहां

बैठे हुए रंडियों में अपनी जिंदगी गुजार रहे हैं, जो परजा के दुख-दरद नहीं देखते, वे बेईमानी से यहां आकर बैठे हुए हैं। हम इसके असली मालिक हैं।' और फिर जैसे उसका गला रुंध गया। वह आगे कुछ कह न सका। उसके सिर के काले बालों का आगे वाला गुच्छा, जिसमें चांदी के-से उलझाव आ गए थे, उस तने हुए रंग के माथे पर झूल आया, क्योंकि उसका साफा ढीला होकर पीछे गिरकर कंधों पर सांप-सा टेढ़ी मारकर इकट्ठा हो गया था। उसकी घनी भौंहों के नीचे से उसकी अथाह आंखों को देखकर लगता था कि वे दो खाली दीपक हैं जिनमें अब किसी आग ने दो शिखाएं जला दी थीं, जिनका धुआं बाल बनकर ऊपर जम गया था। अलगाव की मजबूत ऊंचाई-सी वह नाक उसके रोम-रोम से अपना सम्मान मांग रही थी।

उस स्वर को सुनकर मुझे रोमांच हो आया। अधूरे किले के असली मालिक! मेरे शरीर में एक हलचल-सी हो गई। मेरा खून मेरे सिर की तरफ दौड़ने लगा। मुझे लगा, मेरी कनपटियां बहुत गर्म हो गई हैं। और मेरे सामने हुकूमत का ख्वाब अब जीता-जागता खड़ा हो गया था, पत्थर की मोटी, ऊंची मजबूत दीवारें धरती की धूल में से निकलकर खड़ी हो गई थीं, वैसी ही विशाल, जैसे सामने अधूरा किला खड़ा हुआ था।

मैंने फुसफुसाकर कहा : 'दादा!'

'हां बेटा!' मेरे बाप ने फिर कहा : 'एक दिन हम ही इसके मालिक थे।'

'तुमसे किसने कहा?'

'तेरे बाबा ने।'

'उनसे किसने कहा?'

'तेरे परबाबा ने।'

मैं खामोश होकर सोचने लगा। फिर कहा : 'मुझे सब-कुछ बता दो।'

मेरा बाप चुप रहा; कुछ सोचता रहा। फिर उसने कहा : 'तेरे परबाबा यानी मेरे बाबा इस किले के असली वारिस थे। पर हम ठाकुर हैं, हम नट नहीं हैं, समझा?'

मैंने कहा : 'समझ गया, लेकिन तुमने मुझे इतने दिन क्यों नहीं बताया?'

मेरी आवाज अब तीखी हो गई थी। मेरे बाप ने ही कहा : 'अभी तक तू काठ का टुकड़ा था, अगर मैं तुझे सुलगा भी देता, तो थोड़े-से पानी से तू बुझ गया होता। पर अब तू जंगल हो गया है। अब जो मैंने तुझमें आग लगाई है वह नहीं बुझेगी; क्योंकि जितनी हवा चलेगी उतनी ही आग फैलती जाएगी।'

वह मुझे स्नेह से देखने लगा। मैं अपना सिर पकड़कर बैठ गया।

पर उस वक्त हम लोगों का सपना टूट गया। मेरी मां सामने खड़ी थी। उसके हाथ में कटार थी, जो चांदनी में चमचमा रही थी। उसने मेरे पास आकर मुझे अपने सीने से लगा लिया और कहा : 'नहीं, तू मेरा बेटा है; तू मेरा, मेरा बेटा है। तू इसका बेटा नहीं है, तू ठाकुर नहीं है।'

मेरा बाप आहत-सा पुकार उठा : 'बेटा!'

'हां,' शराब की गन्ध उगलती हुई मेरी मां ने कहा : 'मेरे एक ही बेटा है, इसे मैं पागल नहीं बनने दूंगी। तुमने अपने-आपको जैसे पागल बना लिया है, वैसे मैं इसको नहीं होने दूंगी।'

'तब फिर तू मुझे छोड़ क्यों नहीं देती?'

'लाज नहीं आती यह कहते हुए तुझे?' मां ने कहा : 'निरदयी! तेरे लिए मैंने क्या नहीं किया!' — मां की आवाज में व्यंग्य था, प्रेम की आत्मा थी, दाह की ज्वाला थी, उलाहने की ममता थी। उसने कहा [illegible]

अपने को ठाकुर कहता है ! तूने झोपड़े में रहकर महलों का सपना देखा है, पर मेरा लाडला तेरा जैसा नहीं होगा।

'बेला !' मेरा बाप पुकार उठा।

'मुझे डराता है ?' मां ने कहा : 'ठाकुर !'

मां ने दांत पीसे और आंखें निकालकर हाथ उठाकर कहा : 'तू जिस पत्तल में खाता है, उसीमें सुराख करता है। तेरा बाप जब मरा था, तब तू छोटा ही था। मेरे बाप ने तुझे पाला था। कितने नट मुझे चाहते थे, पर मैंने तेरा ही हाथ पकड़ा। क्या मैं जानती थी कि तू मुझे नफरत करता रहेगा ! तूने मुझे कभी प्यार नहीं किया जालिम ! तूने मेरे पेट से एक ठाकुर लेने के लिए, अपना सुपना पूरा करने के लिए मुझसे प्यार का स्वांग रचा था ? तेरे लिए मैंने अपने-आपको मिटा दिया। दरोगा हरनाम मुझे अपनी रखैल बनाकर सारे आराम देने को कहता था, पर तेरे लिए मैंने उसे ठुकरा दिया। जब दरोगा करीमखां ने तुझे गिरफ्तार कर लिया था, तब मैंने जोबन का सौदा करके तुझे छुड़ाया था। जब अकाल पड़ा था, तब तेरे और तेरे बच्चे के लिए गांव में जाकर परायों के संग रातें काटकर कमाकर लाती थी, ताकि तुझे बचा सकूं। और मेरे नटों ने मुझसे कभी घिन नहीं की, पर तू मुझसे मन-ही-मन नफरत करता रहा।'

वह नशे में थी, अतः बकती जा रही थी। मेरे बाप ने दोनों हाथों से अपना मुंह छिपा लिया था। मां की कटार चमक रही थी। उसने फिर कहा : 'नहीं सुक्खा ! मेरे राजा बेटे ! आज असली बात बताती हूं। तू इसका बेटा नहीं है, तू नट है, क्योंकि मैं बता नहीं सकती कि तू किसका बेटा है, जैसे कोई नटनी नहीं बता सकती।'

'नहीं !' मैंने चिल्लाकर कहा—'मैं इसीका बेटा हूं। मैं ठाकुर हूं ! मैं ठाकुर हूं ! क्यों दादा, मैं ठाकुर हूं न ?'

मेरे बाप ने पागल की तरह दोनों हाथों से अपने बाल नोच लिये और, कांपते स्वर में कहा : 'तेरी मां सब ठीक कहती है बेटा, पर वह यह झूठ कहती है कि तू मेरा बेटा नहीं है। तू मेरा बेटा है। तू ठाकुर का बेटा है। तू किले का मालिक है…'

और इससे पहले कि वह बात खतम करे, मैंने मां की तरफ हाथ उठाकर कहा : 'सुन ! दादा क्या कह रहा है !'

'तू भी !' मां ने ऐसे आश्चर्य से कहा, जैसे वह विश्वास नहीं कर सकी। उसने फिर कहा : 'सचमुच ! मां की ममता भी तुझे नहीं। तू भी ! सांप के सांप।' और जैसे वह पागल हो गई थी। वह हंसी, और उसने दादा से कहा : 'तो ठाकुर ! ले, अपने नये ठाकुर को संभाल। मैं चली।'

वह छेंड की तरफ भागने लगी। छेंड में बघेर डोलते थे। उधर पुराने जमाने के कुछ कुण्ड बने थे, जिनमें पहाड़ों का पानी आता था। बघेर वहीं पानी पीने आया करते थे। वह नहीं रुकी। मैं अवाक् देखता रहा। मेरा बाप एकदम चौंक उठा और उसके पीछे दौड़ा। वह चिल्ला रहा था : '…बेला…तुझे मेरी कसम ! तुझे मेरी कसम ! ठहर जा ! तुझे तेरे बेटे की कसम !'

पर नहीं, वह नहीं रुकी। वह छेंड में घुस गई। फिर एक भयानक दर्दनाक चीख सुनायी दी और मैंने अपने बाप को दो बघेरों से लड़ते देखा। मैं दूर था; चिल्लाने लगा। बस्ती से लोग मशालें जलाकर भागते हुए आए; पर जब तक वे पहुंचे, मेरा बाप और मेरी मां दोनों चले जा चुके थे, मैं अकेला रह गया था।

उस समय मैं रोने लगा था। मुझे मेरी मां की सूरत याद आ रही थी। वह पति की उपेक्षा को प्रेम के सहारे सहती जा रही थी परन्तु बेटे की घृणा को नहीं सह सकी उसका हृदय नहीं सह सका वह मर गई थी परन्तु मेरा हृदय रो रहा था

मैं अब अनाथ हो गया था

इसीला और मनका ने पास आकर पूछा : 'क्या हुआ था ?'

मैं कुछ नहीं कह सका। रोता रहा।

इसीला ने कहा : 'लगता है, बात खुल गई।'

मनका ने सिर हिलाया। पूछा : 'क्यों रे, तू कौन है ?'

मैंने उत्तर नहीं दिया।

वे लोग चले गए। मैं वहीं बैठा रोता रहा। आज मेरे भीतर अनेक विचार कांप रहे थे। मैं ठाकुर था, मैं अधूरे किले का मालिक था, मैं अपने मां-बाप का हत्यारा था। मेरी समझ में नहीं आ रहा था कि मैं क्या करूं।

चांद डूब गया था। मैं अंधेरे की भीगती हुई उदासी में चुपचाप बैठा था। सहसा मेरे सिर पर किसीने प्यार से हाथ फेरा। वह इसीला की बेटी प्यारी थी। नौ साल की। गोरी, बड़ी-बड़ी आंखों वाली। उसने कंजरियों की तरह सिर पर रूमाल बांध रखा था। वह नटों से अधिक कंजर बच्चों में खेलती और उसकी हर आदत भी कंजरों की-सी थी। पर वह अभी से करतब दिखा लेती थी। वह अपने को लड़के से कम नहीं समझती थी।

उसने कहा : 'सुखराम !'

मैंने आंखें उठाकर देखा।

उसने फिर कहा : 'रोता क्यों है ?'

मैं उसके कंधे पर सिर धरकर सिसकने लगा। उसने फिर मेरे सिर पर हाथ फिराया।

इसीला ने पुकारा : 'प्यारी !'

'नहीं आऊंगी।' उसने कहा।

इसीला कुछ समझा नहीं। वह निकट आ गया। उसने उसका हाथ पकड़कर खींचा। प्यारी रोने लगी।

'नहीं जाऊंगी।'

'तो क्या करेगी आखिर ?'

'मैं सुखराम के पास रहूंगी।'

बस्ती के लोगों में से कुछ ने सुना। वे हंस दिए। कहा : 'जाने दे इसीला। सुखराम भी तो अपना ही है।'

इसीला ने मुझसे कहा : 'सुन रे सुखराम ! आज ही नय कहता हूं। मेरी प्यारी तेरी है, पर अगर तूने उसे दुख दिया या तूने अपने घमण्ड में उससे घिन की, तो जब तक मैं जीता रहूंगा तब तक मेरी कटार तेरे लहू की प्यासी रहेगी और जब मैं मर जाऊंगा, तो इसीला नट का भूत तुझसे बदला लेगा।'

हम लोग लौट आए। मेरे झोंपड़े का सामान इसीला के झोंपड़े में आ गया। इसीला की प्यारी अकेली बेटी थी और घर में थी प्यारी की मां मौनो। और कोई नहीं। इसीला काला था, उसकी बेटी गोरी थी।

जब दादा का बक्स खुला तो उसमें एक तस्वीर निकली। मैंने देखा, वह [illegible] पुरानी ठकुरानी थी।

प्यारी ने आश्चर्य से पूछा : 'दादा यह कौन है ?'

'कोई नहीं, रख दे उसे।' इसीला ने डांटा। पर वह जिद्दी लड़की थी। मानी नहीं; अड़ गई। कहा : 'बता दे दादा, कौन है ? बता दे दादा !'

उसकी मां मौनो चरखा चला रही थी। इसीला ने लड़की की जि[illegible] [illegible] देख

चाटा जड़ दिया। प्यारी रोकर मां से लिपट गई। इसीला हुक्का गुड़गुड़ाने लगा।

'क्या देखना है ?' इसीला ने मुझसे कहा : 'जा, बाहर खेल !'

पर मैं नहीं हटा।

सौनो ने मुझे गोद में खींचकर कहा : 'क्या बकता है तू ?'

इसीला मुंह फेरकर बैठ गया : 'बिगाड़ दे, सबको बिगाड़ दे।'

'बता दे न ?' सौनो ने कहा : 'एक ही बेटी है, उसका भी सुख तुझसे देखा नहीं जाता ?'

इसीला नरम पड़ा, और उसने बताया :

'यह तसवीर ही तो झगडे की जड़ है सौनो। यह ठकुरानी है। तीन पीढ़ी पहले यह हुई थी। छिनाल थी, छिनाल ! दरबान से फंस गई। यह अभागा उसी के बेटे के बस में जन्मा है। उसने मेरी तरफ हाथ उठाकर कहा।

'तो सचमुच यह अधूरे किले की मालकिन थी ?' सौनो ने पूछा।

'हां !' इसीला ने कहा।

सौनो ने अपनी बेटी का और फिर मेरा गाल प्यार से चूम लिया और कहा 'इसीला ! आज मेरी बेटी का ब्याह तूने उससे पक्का किया है जो अधूरे किले के असली मालिकों के खानदान में से है !'

उसके नेत्र आनन्द से फट गए थे। उसने अपनी बेटी से कहा : 'समझी प्यारी ! तू अब नटनी नहीं है। ठाकुर की बहू है। तुझे ठकुरानी बनना पड़ेगा। वही इज्जत, वही परदा, वही ठाठ रख सकेगी ? या तू भी कंजरों और नटनियों की तरह सिलियां बीनती फिरेगी ?'

इसीला के नेत्रों में भयाक्रान्त छाया थी। वह ऐसा लग रहा था, जैसे चौंक उठा हो। उसने कहा : 'सौनो, क्या बकती हो ?'

'क्यों ?' सौनो ने कहा : 'तुम नहीं चाहते कि तुम्हारी बेटी इज्जत से रहे ? हम नट हैं। दुनिया में हमारी कोई इज्जत नहीं। हमें जब चाहे पुलिस वाले पकड़ लेते हैं। राजा के अहलकार हमारी औरतों को ले जाते हैं। हम चोर समझे जाते हैं।'

इसीला ने चिलम औंधा दी। वह कुछ नहीं कह सका; केवल मेरी ओर देखा। मैं सिर झुकाए बैठा था। सौनो मेरे सिर पर प्यार से हाथ फेर रही थी। प्यारी उसकी गोद में सिर रखे लेटी थी। इसीला उठा। उसने प्यारी को अपनी तरफ खींच लिया और कहा : 'नहीं सौनो ! प्यारी मेरी बेटी है। जैसी तू नटनी है, ऐसी ही तेरी बेटी भी बने, यही मेरी इच्छा है; और कुछ नहीं। जो धरती पर खड़े नहीं होते और आसमान को छूने की कोशिश करते हैं, वे मुंह के बल गिर पड़ते हैं।'

पर मैं खड़ा हो गया था। मैंने प्यारी का हाथ पकड़कर अपनी तरफ खींच लिया और कहा : 'प्यारी मेरी है। मैं ठाकुर हूं, वह मेरी ठकुरानी है।'

सौनो ठहाका लगाकर हंसी और उसने उठकर इसीला के हाथ पकड़कर कहा 'सुन ले इसीला ! एक दिन तूने भी मेरे हाथ पकड़कर ऐसे ही कहा था।'

इसीला की आंखों में प्यार झांक रहा था। उसने आंखें तरेरकर कहा : 'है तो तू ठाकुर ही।'

उसके स्वर में व्यंग्य भी था, आश्चर्य भी, स्नेह भी और अपरिमित उल्लास भी।

'जुहार ठाकुर जू !' सौनो ने झुककर सलाम किया।

'पर याद रख अभागे !' इसीला ने कहा : 'तू नट है। तू बिरादरी में जाएगा तो ठाकुर का कुत्ता भी तेरा मुंह नहीं चाटेगा समझा

मुझे रुलाई आ गई। मेरी आंखों मे आंसू छलक आए।

इसीला ने कहा :' कायर ! रोता है ! किसके मां-बाप नहीं मरते ? अबे, मस्ती कर। चल मेरे साथ। तुझे जंगल की जड़ी-बूटियों की पहचान करा दूं। इस बस्ती मे दो ही जानकार थे, तेरा बाप और मैं। वह नहीं रहा तो चल, मै तुझे सिखाऊंगा। यह ही एक ऐसी जानकारी है कि पुलिस वाले भी, काम पड़ते रहने से, जुल्म नही कर पाते।'

मैंने आंखें पोछ ली। सौनो हंस दी और उसने प्यार से मेरा माथा चूम लिया। उसकी देखा-देखी प्यारी ने मेरा हाथ पकड़ लिया। मैं तीनों से घिरा तो हंसी मेरे होंठो पर फूट पडी।

3

सुखराम ने कहा था :

इसीला मेरी चतुराई पर प्रसन्न था। मैंने जल्दी ही जड़ी-बूटियों की पहचान कर ली।

उस वक्त मै सोलह साल का था। प्यारी तेरह की थी। इन तीन वर्षों में वह लगातार कंजरों से मिलती-जुलती थी। मै इधर सब काम सीख गया था। मैं बांस पर चढ़ जाता था, रस्सी पर चल लेता था, पतला-दुबला था; ठाकुर-बामनों मे मेरी कला का नाम फैल गया था। इसीला को मुझपर नाज था। मैं पक्का नट हो गया था। परन्तु प्यारी का रंग दूसरा था। वह मुझे बहुत चाहती थी, पर वह कंजरों के डेरो मे बराबर आती-जाती रहती थी।

रात हो गई थी। मैं जिस वक्त घर मे घुसा, भीतर इसीला और सौनो में बात-चीत हो रही थी।

सौनो कह रही थी : 'क्यों, तेरह की हो गई है। तेरह की मैं जवान थी। जब मै तेरह की थी तब बताओ, पूरी औरत नही थी ? मै उठान थी, क्या प्यारी कम उठान है ?'

इसीला ने कहा : 'तो क्या है ! सुखराम भी तो जवान हो गया है।'

'पर मुझे उसमे जवानी की हड़कम्प ही नही दिखायी देती। वह शराब पीता है तो पीते मे हिचक जाता है। किसीकी लड़की के साथ एक दिन नहीं पाया गया। कौन-सा जवान है जो यह नहीं करता। वह गाली भी नहीं देता, जो मरदानगी की निशानी है; चोरी वह नही जानता, जुआ वह नही खेलता।'

इसीला के नेत्र वक्र हो गये। उसने कहा : 'जानती है, वह मुझसे डरता है। डरता क्या नही कर सकता ! वह समझता है, मै उसे मार डालूंगा।'

'क्यों ?'

'मैंने उससे शुरू मे ही कह जो दिया था।'

'पर तुमने यह भी कह दिया था कि प्यारी को हाथ नहीं लगाना ? अरे, वह आप ही मरद न बनेगा तो प्यारी का दिल उससे बंधेगा कैसे ?'

'तू गन्दी बात करती है सौनो।' इसीला ने कहा।

'आहा ! जैसे तुम जानते ही नही। मेरी बेटी है तो क्या ? औरत तो उसी की होकर रहेगी, जो मरद होगा। तुम्हारा सुखराम अगर कुछ नही कर सकता तो मेरी बेटी किसी और को कर ही लेगी।'

'चुप रह सौनो।' इसीला ने कहा : 'सरम कर। अभी वे बच्चे है।'

'बच्चे हैं !' व्यंग्य से सौनो ने कहा : 'बच्चे हैं ?

मैंने देखा, अन्धकार में मेरी बगल में इस समय कोई आ खड़ा हुआ था। वह प्यारी थी। उसने मुझे देखा और मेरे हाथ को पकड़ कर दबा दिया।

मैंने अनुभव किया। मैं मरद था और प्यारी मेरी औरत थी।

'तुझसे कहना बेकार है।' सौनो ने कहा : 'तू बूढ़ा हो गया है।'

'तू अभी तक जवान बनी हुई है ?'

'मैं कहती हूं, लड़की किसीके साथ भाग जाएगी।'

हठात् मैंने प्यारी को पकड़ लिया। कसकर पकड़ लिया। उस बंधन ने प्यारी को मेरे वक्ष पर लिटा दिया। मेरी धमनी में धड़कन होने लगी। मैंने अपने दिल की धक-धक को खुद ही सुना। मेरे हाथों में दर्द होने लगा था, पर प्यारी ने एक बार भी उनकी कठोर पकड़ पर भी उफ् तक न की।

भीतर लम्बा और काला इसीला खड़ा था। उसपर दीपक की रोशनी पड़ रही थी। सौनो उसके सामने आ गई। उसने कर्कश स्वर में कहा : 'तुम जानते हो, मैं यह सब क्यों कह रही हूं ?'

'नहीं।'

'तो सुनो।' सौनो ने कहा : 'मेरी बेटी ठाकुर की बहू बनी है, उसे ठकुरानी की तरह रहना होगा। मैं नहीं चाहती कि वह नटनी की तरह रहे।'

इसीला हंसा। कहा : 'बेटी वैसी ही होगी, सौनो, जैसी मां होती है। मैं साफ देख रहा हूं कि सुखराम ठीक अपने बाप जैसा है। वह चुप रहता है। मुझे कभी-कभी डर हो जाता है कि कहीं यह अपने बाप को हमारा मालिक तो नहीं समझता। और रही ठाकुर बनने की बात। सौनो, ताल के बंधे पानी को बार-बार धूप में सूखकर बरसात में ही भरना ठीक रहता है, क्योंकि वह नदी की तरह बह नहीं पाता। तू अपनी जात भूल रही है। जाने किस-किससे तू सूजाक ले आई थी, मैंने ही उसका इलाज किया था। फिर मुझसे तू पारसा बन रही है ?'

सौनो का मुंह लाल हो गया। उसने कहा : 'मेरी कहते हो, पर बेटी की तरफ नहीं देखते। कंजरों में पड़ी रहती है।'

मुझे धक्का लगा, मैंने प्यारी की आंखों में देखा। अंधेरे में भी मैं देख सका। वहां निर्मम शान्ति थी। उसके होठों पर मुस्कराहट थी—निर्द्वन्द्व। कोई डर नहीं, झकोल नहीं। उसने मेरे मुंह के पास अपने होंठ रख दिए। उसकी सांस मेरी सांस से टकरा गई। मैंने सूंघा। वह शराब पिये हुए थी।

सौनो कह रही थी, 'मैंने सुखराम को पाला है कि वह मेरी बेटी को दुनिया के जुलम से बचा सके। क्या बात है बड़ी जात की औरतों में, जो इज्जत से रहती हैं। मेरी बेटी क्यों नहीं रह सकती! मैंने इसी आशा से उसे इतने लाड़ से पाल-पोसकर बड़ा किया है।'

उजाले की झपकती अवस्था उसके चेहरे पर पड़ रही थी। मैंने देखा, उसकी लंबी बरौनियां अब तिरछी-सी दिखाई दे रही थीं। उसका ऊपर का होंठ कांप रहा था। उसके मुख पर एक गांभीर्य था। उसकी नुकीली ठोड़ी पर अब भी थोड़ा-सा मांस था जिसके कारण वह यौवन की झाईं मारती थी। उसकी नाक के अब बाहरी हिस्से झुके हुए लगते थे, यद्यपि वह कुछ तेजी से सांस ले रही थी। मैंने उसकी जिज्ञासा में जीवन के सम्मान का एक सवाल देखा था। किन्तु इसीला चुप खड़ा था। वह कुछ सोच रहा था। उसने कुछ देर तक झोंपड़े में चहलकदमी की और फिर सिर उठाया।

प्यारी इस समय मेरे होंठों पर होंठ रख चुकी थी। शराब की दुर्गन्ध मेरे

भीतर घुमड़ रही थी। जा घूम रहा था। पर तु मैं उसे अलग नहीं कर सका, बल्कि मेरी भुजाओं ने उसे पहले से भी अधिक कसकर पकड़ लिया था।

'तुमने,' सौनो ने कहा : 'सुखराम को किसी लायक नहीं छोड़ा। तुमने उसे जनाना बना दिया है। नहीं, जनाना नहीं, क्योंकि औरत किसी तरह मरद से कम जोश नहीं रखती, तुमने उसे हि...'

परन्तु इसीला ने बात काटकर कहा : 'खबरदार सौनो!'

'अरे, रहने दो तुम! मैं जानती हूं। सुखराम की मा तुमसे फंसी हुई थी।'

हठात् इसीला के हाथ में छूरी चमक उठी। परन्तु सौनो नहीं डरी। उसने कहा : 'डराते हो, नहीं कहूंगी!' इस समय उसके मुख पर एक अजीब गौरव था। उसका मुख कठोर और गम्भीर हो गया था। उसकी आंखों में से जैसे वासना का धुआं निकल रहा था, इसीलिए वे काली दिखायी दे रही थीं। उसने काफी देर बाद कहा 'इसीला! तू मेरी जवानी का यार है। मैंने तुझे सदा चाहा है। मैं तेरी आशिक रही हूं। जा, मैं तुझे फिर माफ करती हूं।'

परन्तु कहते हुए उसकी मुट्ठियां तन गईं और मैंने उसके शरीर में एक फरफरी दौड़ते देखी। वह दोनों पांवों को दूर दूर जमाए ऐसे खड़ी थी जैसे धरती में से निकल पड़ी हो और उसकी दृष्टि में अब अकर्मक निराशा नहीं, सकर्मक प्रेम था। इसीला रम का चेहरा कुछ लाल-सा दिखायी दिया, जैसे उसे अपने ऊपर लज्जा थी। उसने अपनी अंगुलियां चटकाईं, जिसका स्वर सुनकर प्यारी ने मुड़कर देखा और फिर शायद बेहोश हो गई। मैंने उसे गिरने नहीं दिया। मैं बैठा नहीं। उसे संभाले झोंपड़े के पीछे आ गया। इसीला का घोड़ा मुड़ा, और फिर हमें पहचान कर घास खाने लगा। उसका वह ऊंचा घोड़ा काले रंग का था और चमचमाया करता था। हमारा कुत्ता भूरा आकर पास बैठ गया, जैसे वह कुत्ता नहीं था, कोई शेर था। हमारी रक्षा के लिए धरती पर पूंछ फैलाकर बैठ गया। प्यारी मेरी गोद में सो रही थी।

इसीला का छूरा अब धरती पर पड़ा था। उसके फलक पर दीपक की रोशनी पकड़कर जम गई थी, चमकने लगी थी। सौनो ने देखा और कहा : 'मारोगे नहीं?'

इसीला ने हाथ फैला दिए। सौनो रो पड़ी और इसीला ने भी अपने आंसू पोंछ लिये। उनके बीच का विषाक्त वातावरण स्वच्छ हो गया था। अब कोई संदेह की बात नहीं थी। परन्तु भावों के बाह्य रूप उनके भीतरी रूप को सदैव ही ठीक-ठीक प्रतिबिम्बित कर देते हों, ऐसा कभी नहीं हुआ है।

'तू मुझे क्यों तंग करती है सौनो?'

'क्या कहती हूं मैं तुमसे?'

'कुछ नहीं, तू कुछ नहीं कहती।'

ये समझौते की शर्तें थीं, ठीक वैसी ही थीं जैसे और मौकों पर हुई थीं, पर आज के और उस समय के नजरिये में ही भेद था। वह मान-मनावन रहा होगा। आज एक नए दृष्टिकोण के लिए संघर्ष हुआ था।

मैंने अनजाने ही प्यारी के सिर पर हाथ फेरा और मुझे ध्यान आया, रात कितनी बीत चुकी है।

सौनो कह रही थी : 'परसों सिपाही आया था। वह प्यारी को देख गया है। तुमने क्या बेचा है आज?'

'तेरी काली रुई का बहुत अच्छा सूत था। मैंने मोर बनाने को दान दिया है सब।'

मेरे लिए घाघरा चाहिए

ठाकुरों के जाकर मांग क्यों नहीं लाती ?

जाऊंगी कल

'भैंस के पड़ा (पड़वा) हुआ है हरलाल के।'

वह हंसी। कहा : 'उसने भी कितनी मनौतियां न मानी, पर गाय देगी बछिया, भैंस देगी पड़ा। दो पैसे का फायदा नहीं होगा। सुखराम तो अच्छी कमाई कर लेता है।'

'अरी तू देख, वह कितना हुसियार निकलता है। और छोरों की तरह वह है ही नहीं। परसों मैं नगले गया था। चंदन मेहतर उसकी बड़ी तारीफ कर रहा था।'

''कौन चंदन ? वही जो हांडी चलाता है ? मरघट जगाता है ?'

'वही, वही।' इसीला ने कहा : 'जरा जड़ी-बूटी का काम और पक्की तरह से सीख ले, तो शायद वह भी प्यारी को चांदी के गहनों से लाद देगा।'

'तेरी कसम, छोरी बड़ी जिद्दन है।' सौनो ने कहा, 'शाम को मैं देख रही थी। दिन-भर मेहनत करके जो कमाई लाया था—झट उसके साफे में हाथ डाल के सब निकाल ली।'

'फिर ?'

'फिर क्या ! मैंने देखा, उसका मुंह नैक-सा निकल आया। वह सोच में पड़ गया।'

'अभी तक घर आया नहीं।'

'न लड़की आई है।'

'लड़की तो कहीं कजरों में होगी।

'सुखराम रूठ तो नहीं गया ?'

'भगवान जाने। पर मुझे लगे, वह प्यारी को चाहता बहुत है।'

'अरी, वही तो उसे इस नर से लाई थी।'

'सो तो है। तुम्हारी तो उसकी मां से मुहब्बत थी, उससे थोड़े ही थी।'

'फिर तू बकने लगी ?' इसीला ने कहा। सौनो हंस दी। कहा, 'अब क्यों बिगड़ते हो ? जब मैंने चिढ़कर बीच में दूसरा कर लिया था, और थान गांव जा बसी थी, तब क्यों मुकदमा करके मुझे ले आए थे ?'

इसीला ने हुक्का सुलगाया और पीने लगा। फिर हठात् कहा : 'कहीं सुखराम रूठकर तो नहीं चला गया ?'

'मुझे तो नींद आ रही है। मैं तो सोती हूं।'

वह लेट गई खटोले पर और पावों को घुटनों पर से मोड़कर सो गई।

मैं सोचने लगा—क्यों मैं इतना अजीब हूं ? क्यों मैं उनका-सा नहीं हूं, जिनके बीच रहता हूं ? मैं क्यों नहीं नाचता, मैं क्यों नहीं गाता ? सोलह साल की उम्र तक मैं क्यों भूला रहा हूं। मेरी गोद में मेरी प्यारी सो रही है। वह मेरी बहू है। क्यों वह कजरों में जाती है ? मैं इसे छुरियों से गोदकर फेंक दूंगा, ससुरी अगर मुझे छोड़कर कहीं गई तो। कुतिया !

पर मुझे क्रोध अधिक देर तक नहीं आया। मैं उसको भूल गया। अचानक मेरी आंख पड़ी। किले की दीवार अब स्याह दिखायी दे रही थी, क्योंकि चंदा, कटीला-सा उसके ऊपर उठ आया था। वह देख-देखकर मुझे जादू-सा चढ़ने लगा। कैसे मैं इसका फिर से मालिक बन सकता हूं। जब मैं मालिक हो जाऊंगा, तब नटों को महल में बसा दूंगा फिर नटनियां घूंघट करने लगेंगी वे गमी नहीं रहेंगी लोग नटों की जुहार करेंगे

मेरा स्वप्न उतर गया। मुझे पसीना आ गया। यह मैं क्या सोच रहा था! नट और जुहार? ठाकुर तो मैं हूं। ये सब कमीन हैं। जरायमपेशा है, चोर हैं। ये सब वहां नहीं रहेंगे। और उस समय मैं पागल-सा हो गया। मैंने देखा, नीला पहाड़ मुझे बुला रहा था। बहुत दिन से सुनते आ रहे थे कि उसमें घने में जोगी रहते हैं, जिनके लिए कुछ भी सिद्ध कर लेना कठिन नहीं है।

अगर मैं सिद्ध कर लूं तो! तो क्या मैं राजा नहीं हो सकता! राजा! मैंने देखा था। वह बड़ी मोटर में चलता था। जरूर वह गुड़ से लगाकर रोज रोटी खाता होगा, तभी तो उसके गालों पर ऐसा गुलाबी रंग था। कानों में कैसे जवाहिर पहने था। उसके आगे-पीछे कैसे अमले चलते थे। ये सिपाही जो हमें पकड़ते हैं, कैसे झुक-झुक कर सलामी देते थे। क्या ठाठ थे। मेरी तो आखें चौंधिया गई थीं। नटनियों ने राजा के स्वागत में गीत गाए थे, नाची थीं। राजा बाप होता है। भगवान का औतार होता है। राजा की बात ही और है!

और मैं राजा बनना चाहता हूं। अरे सुखराम! तू क्या सोच रहा है?

पर क्या अगर मैं धन कमा लाऊं, तो भी वैसा नहीं हो सकता? मैं नट क्यों बना रहूं? मैं नट जात का तो नहीं। मैं अहमदाबाद जाकर, कलकत्ता जाकर खेल-करतब क्यों न दिखाऊं? क्यों न खूब पैसे कमाऊं? मैं बड़ा आदमी क्यों न बनूं? मैं क्या खेल नहीं कर लेता? मनोहर दर्जी कहता था कि मैं बड़ा चतुर खिलाड़ी हूं।

भीकम नट स पास जैसे खेत-क्यार हैं, मैं भी वैसे ही जायदाद रखूंगा। मेरी प्यारी को सूप नहीं बनाने होंगे, घर बैठे खाएगी।

उस जोश में मैं पागल-सा हो उठा। प्यारी को होश आ गया था। मैंने उसकी आंखों में झांका और आज मैं उसकी आंखों में डूब गया।

प्यारी हंस दी। उसने कहा: 'तू मेरा आदमी है।'

भोर हो गई थी। पहली किरन फूटी थी। प्यारी मेरी बगल में सो रही थी। मैं भी सो रहा था।

मेरी आंख खुली जब सौनो ने पुकारा: 'ओ उठोगे नहीं? हाय दैया! कैसी सीरी रात थी, और दोनों खुले में सोए रहे। मरी ऐसी भी क्या लाज! तुम तो मर्द बैय्यर हो। पराये थोड़े ही। कहीं मेरी बेटी को ठंड तो नहीं ब्याप गई?'

उसने प्यारी को छुआ। मैं उठकर बैठ गया। शरम तो मुझे आ रही थी। मेरे सिरहाने का कुत्ता ही रात का गवाह था। उसने मुझे अपनी ओर देखते हुए देखकर प्यार से अपनी पूछ हिलायी। घोड़ा अब मक्खियों को उड़ाने के लिए अपनी पूछ हिलाता या कभी-कभी धरती को सुमों से खोद देता।

मैंने उठकर बीड़ी सुलगाई। हारों में किसान आने लगे थे, धरती के मैले बच्चे धूल में खेलने लगे थे। नटनियां गाम से बाहर के कुएं से पानी भरने घड़े लेकर आ-जा रही थीं। घरों से रोटी पकाने का धुआं उठने लगा था।

प्यारी लजाई-सी उठकर चली गई थी। मैं भी उठा। जब मैं हाथ-मुंह धोकर आकर खाट पर बैठा तो माथा ढककर प्यारी रोटी ले आई। चुपड़ी हुई। उनपर लाल मिरच की चटनी थी। मैंने खायी तो आज मुझे वे बड़ी स्वाद की लगी।

मैंने कहा: 'रोटी बड़ी अच्छी बनी है।'

सौनो ने कहा: 'हां लाला! सब ऐसा ही कहते हैं।'

'क्या मतलब?' मैंने पूछा।

'अरे, रोज़ मैं बनाती थी तो कभी मुंह से तारीफ का एक बोल भी न कहा, आज इसने बनायी है तो कहता है रोटी बड़ी अच्छी बनी है'

मैं झेंप गया। [illegible] वह उसके मन की खुशी जाहिर करने [illegible] मैंने कहा [illegible] :

मैंने कहा : 'हां!'

'त आज काम पर नहीं जाएगा?'

'नहीं, अभी तो अंग-अंग में पीर [illegible]।'

'[illegible] में पड़ा था, [illegible]!'

मैं मुस्कराया। प्यारी थी। नौनों ने [illegible] लगती है कि काम करती हूं! मैं तब से चूल्हे में लगी हूं, तुझसे पानी भी नहीं [illegible] कुएं से! तेरे तो बाप ने तेरा सत्यानाश करवाया है। [illegible] जो [illegible] तेरे हाथ न तुड़वा दूं। हराम की लगी है मुंह में। अब झुकाए भी नहीं जाते तुझसे!'

प्यारी घड़ा लेकर चली गई।

4

मैं सोच रहा हूं। सुखराम यहां नहीं है।

सुखराम ने जो आगे कहा वह मैं [illegible] नहीं कह सका। किन्तु मैंने मनुष्य के उस मूलरूप को पहचान लिया था। यह निस्सन्देह एक आदिम उलझन में है। उसकी अभिव्यक्ति उसकी अनुकूलता में नहीं, उसकी उलझन में है। सुखराम का जीवन एक द्वन्द्व था। मैं आज ठाकुर के कमरे में बैठा देख रहा हूं। मेरी खिड़की से शीतऋतु की सुगंधित बेलों की बहार दिखाई आ रही है। चांद के टुकड़े पर उजाला छा गया है और झीनी-झीनी-सी फुहार जाने कैसी तरंगों बरसती हवा में भीगापन बन गई है। आज मैं अपने बाह्य संसार की अन्तःस्थ-गरिमा देखने के बजाय उस बाह्य का अपरिमित विस्तार देखना चाहता हूं।

चांद कितना सुन्दर है! जैसे, चंदा का मुख हो। वही श्वेत और नीलिम छांह। यह मेरी बेटी का-सा मुंह है। कितना प्यारा है! और दूर कजरों के गीत गूंज रहे हैं। मैं सोच रहा हूं— क्यों नहीं इन अभिशप्त आत्माओं के विषय में किसी ने आज तक अपनी वेदना उंडेल दी?

रूप का सागर मुझे जाड़े की रात में कहराच्छादित जगती में उमड़ता हुआ दिखायी देता था है। और सुखराम कहता था कि जाड़े में इन्हें बहुत कष्ट होता है। उसकी लस्ती से बहुत तकलीफ होती है क्योंकि इन लोगों के पास कपड़े नहीं होते।

इसलिए वे आग जलाकर चारों ओर बैठकर हाथ और शरीर तापते हैं। फिर उससे काम नहीं चलता तो पौरुष और स्त्रीत्व एक-दूसरे को गरम करने का यत्न करते हैं। सब-कुछ घृणित! एक भयानक सूनापन मुझे इस विचार से ही खाए जा रहा है कि मनुष्य को यह सब सहन करना पड़ता है।

सुखराम की बात फिर याद आ गई है। वह कैसी छटपटाहट में पड़ गया है? वह भविष्य चाहता है। उसको एक ऐसी कल्पना ने मोहित कर लिया है कि अपनी अज्ञानता का आराम और चैन वह खो चुका है, परन्तु आगे बढ़ने का तरीका उसे ज्ञात नहीं है। वही झोंपड़ा है। वही दरिद्रता है और फिर रक्त और कुलवर्ग का लोहा उसकी कलाइयों को काटे खा रहा था। कैसा उन्माद है कि वह इतनी आयु में संघर्षों में ही अपनी सत्ता को भरका रहा है।

प्यारी के नेत्रों में यौवन में उसका जितना ही समर्पण होता है वह उससे

उतना ही अपने को दूर क्यों महसूस करता है ? मौनो का हृदय जीवन के समस्त अपमानों का बदला चाहता है। पर किस तरह ? केवल अपनों का ही अपमान करके ?

उन लोगों की नैतिकता को सोचकर मैं घबरा नहीं रहा हूं, पर मेरे आलोचकों को हैरानी जरूर हो जाएगी। पर उन्होंने जिन्दगी को नहीं देखा। वे अपनी दृढ़ धारणाएं बनाये बैठे हैं। हर तरफ मुझे मकड़ी का सा जाला तना हुआ दिखायी दे रहा है। सबके बीच में अहंकार का मकड़ा बैठा हुआ ताना-बाना बुन रहा है।

अब कोई आवाज़ नहीं आ रही है। चारो ओर कुहरे का रूएंदार कम्बल ओढ़े अंधेरा सो रहा है। एक चांद ऐसा लगता है जैसे किसी गरीब की खिड़की में लटके टाट में से किसी फटी जगह से बिजली की हल्की हल्की रोशनी दिखायी दे रही हो।

केवल दूर पर झील आज कुछ कह रही है। हवा का तर झोंका उसका संदेशा ला रहा है। कुत्तों और सियारों की कर्कश आवाजें मेरे कानों में उतर रही है, जैसे रात की अधियारी पुकार रही है। यह सब मुझे अच्छा नहीं लग रहा है।

मुझे याद आ रहा है।

मुझे जिन्दगी में कुछ भी वह सब नहीं भाता जिसमें किसी प्रकार की अश्लीलता मुखर हो उठती है। पर यौन सम्बन्धों की अभिव्यक्ति को मैं जीवन का एक अंग मानता हूं। क्या सचमुच सुखराम भी इन्ही आकृतियों में नहीं है जो मूलतः यौन मनोवृत्ति के चारों ओर घूमता है ?

मुझे ऐसा नहीं लगता। ये नीच कहे जाने वाले भी मूलतः मनुष्य हैं और उनके भावों का स्थायित्व उनके मनुष्यत्व में है। शिकारगाहों में शेर को खदेड़ने का हाका और कोयल-संगीत की लहरियों को मापने के लिए एक माप-दण्ड तो नहीं हो सकता ? यही तो जीवन का वैषम्य है। अचानक एक हल्की आहट हुई। मैं चौंक उठा हूं। एक छाया-सी बाहर चल रही है। कौन है यह ?

मैं बैठा नहीं हूं। मैं देख रहा हूं। यह नरेश है।

इस आधी रात को यह चंदा के पास जा रहा है ?

क्या सचमुच प्रेम में इतनी शक्ति है ? आधुनिक विज्ञानवादी तो कहते हैं कि वासना केवल उच्च वर्गों का ही खिलवाड़ है। क्या यही सीमित दृष्टि अपने आपमें पूर्ण है ?

रेस में घोड़े दौड़ते है। वे मुझे अच्छे नहीं लगते। परन्तु उनकी जीत-हार की वह आवेश-भरी उन्मत्तता जो लोगों को व्यथित कर देती है, उसके प्रति मैं अवश्य काफी दिलचस्पी रखता आया हूं। वह क्या है जो मूलतः स्थिरमति मनुष्य को इतना चंचल कर देती है ? क्या यह प्रेम वैसा ही नहीं है ? इस प्रेम का अन्त क्या है ? वासना और नय ! नहीं, नहीं, मुझे अपनी सीमाओं पर स्वयं विक्षोभ हो रहा है।

नरेश की ही आयु है जब वीर्य परिपक्व होने लगता है और चंदा की आयु में लड़की मातृत्व के योग्य होने की अवस्था में रहती है। तब प्रकृति के ही कारण पारस्परिक मिलन की चाहना होती है। प्रेम का अंत संतान में है, न स्त्री में वह अंत है, न पुरुष में ही। इसी अभिव्यक्ति का नाम मिलन है।

और यह मशीन का-सा मेरा विवेचन ही क्या मनुष्य के अध्ययन के लिए पूर्ण है ? नहीं, मनुष्य इन सब छोटे चिन्तनों से बड़ा है। उसकी महत्त्वाकांक्षा बहुत बड़ी है। काश ! सुखराम भी मेरे शब्दों में ही मनुष्य के जीवन के इस सार्थक महत्व को समझ पाता उसके लिए यह उतना ही है जितना नरेश के माता पिता के लिए इस

अगभता म फर ।

[illegible] अब [illegible] के पास कुछ सोच रहा है। नीम का वह पेड़ शायद भीतर से ठंडा हो गया है। उसके लिए [illegible] होना क्या सहज है? मैं तो समझकर वहां ठहर नहीं सकता; और लोग कहते हैं कि मैं बड़ी लगन का आदमी हूं। पर वह पन्द्रह साल का छोटा-सा लड़का वहां निश्चल और पूर्ण धैर्य के साथ खड़ा हुआ है। वह शायद चंदा के पास जाना चाहता है। फिर? शायद जाते हुए डरता है, क्योंकि अंधेरा बहुत घना है।

मैं वर्ग-संघर्ष के वैज्ञानिक विश्लेषण से समझ नहीं पा रहा हूं कि यह क्यों उस नटनी से प्रेम करता है। इसलिए कि उससे कुछ वर्ग-स्वार्थ साधना करना चाहता है!

मैं अपने कुत्सित समाज-शास्त्र पर स्वयं ही जघन्यता का अनुभव करने लगा हूं। क्या मैं सचमुच चंदा और नरेश की इस कथा को लिखकर मनुष्य के विकास के रास्ते में रोड़े बिछा रहा हूं?

मैं बाहर आ गया हूं।

क्योंकि नरेश चला जा रहा है।

वह निःशस्त्र है। एकाकी है। सामने जीवन का अन्धकार है। बम्बई की-सी यह चिकनी कोलतार की सड़क नहीं है जिसपर बड़ी-बड़ी मोटरें फिसलती चली जाती हैं। कच्चा डगरा है। और नीरव! जनशून्य!

मैंने सोचा था, इसे डर लगेगा!

भय! जीवन के समस्त भय इस लगन के सामने क्यों ऐसे तिरोहित हो गए हैं? क्यों वे दिखायी नहीं देते?

नरेश! एक पतला-दुबला लड़का। सिर्फ एक कम्बल ओढ़े है। उसके मुख पर अब एक गांभीर्य आ गया है। वह बहुत लम्बा नहीं है, बल्कि पपीते के नये पेड़-सा कोमल है।

उसका रंग गेहुंआ है, जिसमें अभी एक ताजगी है, जैसे कोई छपकर निकलने वाली साफ किताब, जिसपर उंगलियों के धब्बे नहीं पड़े होते। उसके मुलायम बालों को इस वक्त कम्बल ने छिपा लिया है और उसकी पेशानी पर सख्त धारियां पड़ गई हैं जैसे सोचते-सोचते उसके मुंह पर चिन्ता की रस्सी ने बार-बार फिसलकर बचपन के नाजुक संगमरमर के ढांचे पर अपना निशान छोड़ दिया हो।

और उसकी आंखें मुझे याद आ रही हैं। कैसी मासूम और डबडबाई हुई हैं वे, जैसे घायल हिरन की हृदय को हिला देने वाली आंखें, जिनकी बरौनियों में फरियादें पर्त-की-पर्त जमकर काली पुतलियां बनती हैं और जिन्दगी अपनी सारी मायूसी लेकर टिमटिमाती हुई तारा बनकर चमका करती है।

भयानक सर्दी मुझे काटने लगी है। मैं चला जा रहा हूं, जैसे वह अगर हवा से उड़ता हुआ फूल है तो मैं जड़ से उखाड़कर गिरने के लिए डगमगाने वाला पेड़ हूं।

हम लोग फुलवारी के दरवाजे से घुसे। पुरानी इमारत में बसने वाले माली सो रहे हैं। उनके बैल भी सो गए हैं। रास्तों के दोनों तरफ सुनसान छाया हुआ है और सफेद महल अपने सारे भूतों के किस्सों को लेकर एकान्त खड़ा है। नरेश उसीमें चला गया है निर्भय, अम्लान। मैं दूर खड़ा रहा हूं। मुझे लग रहा है, वहां कोई और भी है।

और फिर वे दोनों हंसे हैं। मैं जानता हूं, वह चंदा की हंसी है। संगमरमर के चबूतरे पर वह हंसी ठंड से सिकुड़कर धीरे-धीरे कुहरे में खो गई है। जहां बरसात में बैठकर भीगे हुए मोर पुरवैया में अपने पंख और पर फैलाकर सुखाते हैं वहां अब उनके हास्य का आखिरी च प सुनाई दे रही है

मेरे भीतर भय हो रहा है। मैं क्या कर रहा हूं। लडका मेरे सामने बिगड़ रहा है और मैं देख रहा हूं। मुझे गुस्सा आ रहा है। क्या जरूरत थी मुझे यहां आने की? और वह यहां प्रेम कर रहा है। मैं ठंड में अकड़ा जा रहा हूं।

मैं उसे बुलाकर डांट क्यों नहीं देता? पर मेरा स्वर रुंध गया है। क्या मैं उसे डाट नहीं पाता?

तभी कोई बुडबुड़ाता हुआ आ रहा है। मैं उसकी आवाज सुन रहा हूं—फिर चली आई। तू मुझे जीने नहीं देगी। न जाने कब तुझसे पीछा छूटेगा! सुअर की बच्ची! हराम की औलाद! जैसी मां वैसी बेटी। तेरी मां भी ऐसी ही भयानक थी।'

वह सुखराम है। मैं पेड़ की आड़ में खो गया हूं। मैं अंधेरे में हूं। वह मुझे देख नहीं सकता।

सुखराम चंदा को ढूढ़ रहा है। वह सफेद महल में घूम आया है, किन्तु कहीं भी उसे चंदा का पता नहीं मिला है। सुखराम बड़बड़ाता हुआ लौट गया है और मैं खडा-खडा ऊब गया हूं।

अब रात आधी हो गई है और कहीं दूर उल्लू हंसता हुआ-सा बोल उठा है। जब मैं ऊब गया हूं तो खड़े रहने से लाभ ही क्या है! यही सोचकर मैं लौट पड़ा हूं। अब मेरे मन मे घोर संशय है। क्या नरेश लौट आया है?

और मेरे आश्चर्य की सीमा नहीं है, क्योंकि नरेश मुझसे पहले ही से उसी पेड के नीचे घर के सामने खड़ा है।

उसने मुझे देखकर आश्चर्य से अचानक पूछा: 'काका, कहां गए थे?'

मैंने मुस्कराकर कहा: 'घूमने।'

और इससे पहले कि वह संभल सके, मैंने कहा: 'और तू यहा क्यों खड़ा है?'

उसने उत्तर नहीं दिया। एक लम्बी सांस ली और फिर धीरे-धीरे भीतर चला गया।

जब मैं कमरे में पहुंचा, अंग-अंग ठिठुर चुके थे। मैं अपने शरीर को गर्म करने के लिए रजाई मे घुसकर रक्त को तेजी से दौड़ाने के लिए जोर-जोर से मालिश-सी करने लगा।

कब जाने मैं गर्म हुआ, कब जाने नींद आ गई, मैं नहीं जान सका, परन्तु भोर तभी हुआ जब मेरे दोस्त की पत्नी ने सिरहाने आकर पुकारा: 'लाला! बड़ी देर सोए हो आज, क्या बात है?'

मैं आंखें मलकर उठ बैठा। भाभी ने सामने चाय का गर्मागर्म प्याला रख दिया और स्नेह से मेरी ओर देखा।

मैंने कहा: 'रात में देर तक पढ़ता रह गया। सुबह आंख खुली तो सोचा कि अभी से जागकर करूंगा भी क्या? इसलिए फिर जो दस मिनट के लिए सोया तो तुमने जगाया है।'

भाभी हंसी। कहा: 'सुबह का सोया फिर कभी जल्दी उठ जाता हो, ऐसा तो हमने कभी सुना नहीं।' फिर बोली: 'देखो, मैंने आज अपने मन की चाय बनायी है इसमें इलायची और कुछ मसाले डाल दिए हैं। तुम्हारे भैया को यह बड़ी पसन्द है। सो मैंने सोचा कि जो भैया को अच्छी लगे तो लाला को क्यों न लगेगी!'

मैंने शैतानी से कहा 'यह भी भाभी, तुमने क्या कह दिया? यह कानून हर चीज पर लागू है?'

'अरे, तुम्हारी मसखरी की आदत नहीं गई अभी तक!' भाभी ने भौं तरेरकर मुस्कराकर कहा चाय पियो अभी दिमाग मे सुपने का कोई टुकड़ा बचा रह गया है

गर्मी पहुंचते ही अकल साफ हो जाएगी।'

हम दोनों हंस दिए। उसी समय द्वार पर से नरेश निकला। उदास-सा, डरा हुआ-सा। मैंने और भाभी ने देखा और दोनों ने एक-दूसरे की ओर प्रश्न-भरी सांकेतिकता से काम लिया।

मैंने ही धीरे से कहा : 'भाभी, हर्ज ही क्या है, लड़के का ब्याह उसीसे कर दो न?'

'ठीक है,' भाभी ने मेरा पिया हुआ प्याला हाथ में वापस ले लिया और कहा, नटनी से छोरे का ब्याह कर दो और मुझे जहर की पुड़िया लाकर दे दो।'

वो पांव पटकती हुई चली गईं।

मैं सोच रहा हूं, स्त्री ही स्त्री की शत्रु होती है। वस्तुतः, यह चिन्तन ठीक नहीं है। स्त्री जाति आज तक संसार में एक बनकर नहीं रही है। प्रत्येक स्त्री का संसार में एक गुट होता है, वह उसका पिता, मां, पति या पुत्र आदि हैं। वह उन में ही अपने सुख-दु:ख सिरजती है और उनमें ही ज़िंदा रहती है और मर जाती है। वह स्त्री जाति के सुख-दुःख नहीं देखती; देखती है अपने परिवार के हित-अहित! स्त्री ही क्यों, पुरुष भी तो यही करता है। क्या पुरुष दूसरे पुरुष को सड़क पर भीख मांगते देखकर अपनी स्त्री का गहना उतारकर उस भूखे को दे देता है? समाज में स्त्री-पुरुष यद्यपि द्वन्द्व बनकर रहते हैं, परन्तु मूलतः वे एक-दूसरे से अविच्छेद्य हैं, एक हैं; और उनके स्वार्थ एक-एक गुट में सीमित हो गए हैं।

भाभी की आंखों में एक अद्भुत मिश्रण है। मेरी दृष्टि में इनका जीवन विवशता का, ममता का प्रतीक है। वे सुन्दरी रही होंगी, क्योंकि अभी तक के दृष्टिकोण से मनुष्य रूप को यौवन के आधार पर ही आंकता आ रहा है। किन्तु मैं जानता हूं कि सौंदर्य प्रत्येक आयु की अपनी एक भिन्न सत्ता रखता है। भाभी को नरेश से स्नेह है किन्तु उस स्नेह की मर्यादाएं समाज के नियमों से निर्मित हैं। जीवन का सौंदर्य मनुष्य को अपनी सीमाओं की पूर्ति में श्रेयस्कर लगता है। उनकी पतली बरौनियों पर झुकती-सी लम्बी भौंहें, उनकी भारतीयता की लापरवाही में इस आयु को काटने की भावना में, मुझे और भी आकर्षक लगती हैं। उनके पति की आंखें यद्यपि उनकी-सी पानीदार नहीं हैं, फिर भी उनमें एक करुणा है, जो ठाकुर होने के कारण कुछ उनपर फबती नहीं है क्योंकि गांव में ठाकुर अभी तक हुकूमत कर रहा है। मैं उस अधिकार की व्यापकता को देखकर सिहर उठता हूं क्योंकि वह धर्म की आड़ लेकर इतिहास की शताब्दियों-रूपी पसलियों में भाला बनकर धंसा हुआ है। उसको देखकर चमार अभी तक मन में अभाव का अनुभव करता है। भाभी के लिए यह सब होना आधा है और सब सहज तथा मान्य सत्य है, जिसपर उनके स्त्रीत्व की कोमलता ने अपने आकार ढूंढे हैं और अपनी प्यार-भरी ममता का रंग भरकर उसे आकर्षक बनाने की चेष्टा की है। भैया में मुझको और ही कुछ दिखाई देता है। वे कर्मठ व्यक्ति हैं और उनको युग के परिवर्तन का पूरा आभास है। उस स्वीकृति में नरेश अभी तक अपने नयेपन को लेकर कोई स्थान नहीं बना सका है।

भाभी जब नरेश की बात करती हैं तब उनका मुंह और ठोड़ी कठोर-सी हो जाती हैं, जैसे वे उसे चाहती तो हैं, पर उसकी हरकतों को पसन्द नहीं करतीं।

यह सत्य है कि हमारा प्रेम, हमारी समस्त कोमल भावनाएं, जिन पर ही समाज के भीषण अंकुश हैं। हमने ही अपनी स्वतन्त्रता को मिटाया है ताकि हम अपनी स्वतन्त्रता को भोग सकें। यही तो समाज का नियम है, जिसको तोड़ने का अधिकार नहीं मिलता और उसके आधार इतने गहरे हैं कि उन्हें तोड़ना ही हमें पाप बनकर करता है

सब-कुछ बदल रहा है और बदलता चला जाएगा, परन्तु जीवन की यह रेखा सीधी कभी भी नहीं चल सकेगी, क्योंकि वह बिंदु-बिंदु के संघर्षों और द्वन्द्वों से ही आगे बढ़कर चित्र का रूप धारण करती है।

और वह चंदा जो अपने रूप में अप्रतिम है, उसे मनुष्यता का पूर्ण अधिकार नहीं है। उसका मुंह देखकर मुझे वीनस की याद हो आती है। वह कितनी सुंदर है कि यदि यह मध्यकाल होता तो कोई भी राजा उसको अपनी रानी बना सकता था। किन्तु यह अधिकार केवल समर्थ को ही प्राप्त था, नरेश को नहीं।

मेरा मन छटपटा रहा है। हम क्यों इतने सीमित हैं कि अपनी निरलघुता को ही अपनी व्यापक समष्टि स्वीकार कर चुके हैं।

चंदा के नेत्रों में आकाश की अनन्त नीलिमा है। उसके अधरों पर बिना रंगी मादक ऊष्मा का प्रतीक बनकर एक मुग्धकारिणी लालिमा सदैव मुस्कराया करती है। उसके शुभ्र वर्ण को देखकर मुझे उस दिन ऐसा लगा था जैसे वन की समस्त श्री मानवी का आकार धारण करके आ उपस्थित हुई थी।

और वह अनिन्द्य सौन्दर्य भी अपने गलत जगह होने के कारण अन्त में वेश्या का-सा जीवन व्यतीत करने के लिए बाध्य है। कहते हैं, अम्बपाली इतनी सुन्दरी थी कि लिच्छविगण के राजा उसके लिए एक-दूसरे की हत्या करने पर उतारू हो गए थे। तब पुरुषकृत समाज ने स्त्री को सम्पत्ति की भांति बांट लिया था और कुल-गृहिणी का अधिकार उससे छीनकर उसे वेश्या बना दिया था।

इतने दिन बीत गए हैं, किन्तु अभी हम वहीं घूम-फिरकर अपने कुल की असमर्थताओं की निरन्तर घोषणाएं करते चले जा रहे हैं।

मेरा सिर झन्ना रहा है। मैं मुक्ति चाहता हूं, मुझे बन्धन मिलते हैं।

मैं जीवन से अमर प्रेम चाहता हूं क्योंकि मुझे घृणा की छलनियों में छनती करुणा की बूंदें मिलती हैं। क्या यही मेरे जीवन का संतोष बन सकता है?

मैं अब अनुभव कर रहा हूं कि जब मेरा पांव पक रहा था तब मैं स्वस्थ था किन्तु अब जब मेरा पांव ठीक हो गया है तब मैं सचमुच अस्वस्थ हो गया हूं; क्योंकि तब न चल पाने का कोई बहाना तो था, परन्तु अब पांव ठीक है, पर चलने की इजाजत नहीं है।

धूप उतर आई है। भैया आ रहे हैं। उनके पैरों और सिर पर राह की धूल छा रही है। और वे यह सब नहीं सोच रहे। वे कह रहे हैं, 'जब फसल तैयार होगी तो सरकार नाज बाहर ले जाने पर रोक लगा देगी और हमें मजबूरन कमकीमत पर बनियों को सब माल बेचना पड़ेगा। जब फसल बनियों के हाथ में चली जाएगी तब सरकार उसे बाहर भेजने की इजाजत दे देगी और हमें उलटे महंगा नाज खरीदना पड़ेगा। मजा यह कि पहले सरकार यहां की जनता के फायदे के नाम पर ऐसा करेगी, और फिर बाहर की जनता के लाभ के हेतु नया कानून लागू करेगी...'

मैं चाहता हूं, इस विषमता को देखकर एक बार भयानकता से अट्टहास कर सकूं...

5

सुखराम ने कहा था:

दो साल बीत गए थे।

उसके बाद मेरी जिंदगी में एक नया रास्ता खुल गया। मैं रोज सवेरे नहाने

जाता। प्यारी मेरे साथ जाती। बस्ती का एक लडका रामलाल हमारे साथ जाता। और इसीला खेल में आवाजें लगाता। हम लोग गांव-गांव घूमते; तरह-तरह के खेल दिखाते। रात को अपना तम्बू तानकर सो रहते। इसीला पैसे इकट्ठे करके गिनने लगता और फिर छिपाकर रखता। प्यारी रोटी बनाती। सौनो दिन भर एकान्त में ही रहती यानी हमारे साथ नहीं रहती। वह भीख मांग लाया करती थी। वह पीछे पड़ जाया करती थी और आदमी को उसे कुछ न कुछ देना ही पड़ता था। कभी वह सिरकी के खिलौने बनाती और बच्चों को बजा-बजाकर दिखाती और नाज के बदले उन्हें बेच आती। वह बहुत अच्छा सूप बनाती थी। दो-चार करतब प्यारी भी जानती थी। वह लहंगा फिरा-फिराकर नाचती, दोनों हाथों से घूंघट आगे लम्बा-सा खींच लेती और मटक-मटककर चलती। लोग उसे देखकर खुश होते। पर वे उसका मुंह नहीं देख पाते।

एक दिन हम लोग गांव छहरन में खेल-तमाशे दिखा रहे थे। अचानक मेरा पांव फिसल गया और मैं गिरा, लेकिन मैंने फिर भी रस्सी पकड़ ली और ऊपर ही टंगा रह गया। चारों ओर घबराहट से हहर व्याप गई और उसी परेशानी में प्यारी का घूंघट भी उठ गया। नट के गिरने में अमूमन उसको गहरी चोट या मौत ही मिलती है। पर मैं होशियारी से अपनी हार को भी जीत में बदल ले गया, क्योंकि रस्सी पकड़ इस दफे झूला और फिर मैंने पांवों से उसे पकड़ा और अंगूठों से रस्सी पकड़कर रस्सी के सहारे झूलने लगा।

'ओई माबाप!' इसीला की भर्राती आवाज उठी, 'देखिए हुजूर ''यह नया खेल है ''

जब मैं नीचे आया तो प्यारी ने मुझे छुआ। कहा: 'चोट-चोट तो नहीं आई?'

'नहीं।' मैंने कहा।

'फिर ऐसे क्या जानलेवा खेल दिखाने चला था?'

'तू क्या समझती है?' मैंने कहा।

वह चुप हो गई।

खेल खतम करके हम लोग गांव के जमींदार साहब की हवेली पर पहुंचे। इसीला ने आगे बढ़कर सलाम किया और कहा: 'दरबारजी! तुम्हारे गांव में पेट भरते हुए आए हैं। आज का आटा मिल जाए।'

दरबारजी यानी जमींदार पढ़े-लिखे आदमी लगते थे, क्योंकि उनके बाल अंग्रेजी फैशन के कटे हुए थे। उन्होंने अपने कारिन्दे से कुछ कहा। फिर मूढ़े पर बैठे दरोगाजी से बातें करने लगे।

यह हम जानते थे कि जमींदार हुकुम चलाता है, पर गांव के कायदे मानता है। वह हमारा बाप है, हम उसकी रिआया हैं। उसका काम है हमारा पेट भरना। पर सदा से उसके सामने सिर झुकाते ही आए हैं। पर दरोगा ने टेढ़ी नजर से देखा।

बोला: 'साले नट हैं?'

कारिन्दा ने कहा: 'हां, हुजूर!'

इशारा हुआ। इसीला आगे गया। झुककर सलाम किया। दरोगा ने कहा, 'क्या बे, यहां तुम लोग चोरी-बोरी तो नहीं करते?'

'नहीं हुजूर! हम तो मेहनत करके पेट पालते हैं। और गरीब लोग हैं माई-बाप, दरबारजी से अपना हक-पानी मांगते हैं। हम चोरी क्यों करने लगे?'

दरोगा हंसा। उसकी नुकीली मूंछें देखकर मुझे डर लगने लगा था। प्यारी घूंघट में से देख रही थी। दरोगा की नजरें बार-बार उसपर पड़ती थीं। प्यारी शायद यह ताड़ गई थी। उसके उठे हुए वक्ष पर दरोगा की नजरों के सांप बार-बार फन मारते

और फिर वह गडेड़ी मारते, अपना रोष दिखाते इसीला पर। मैं विक्षुब्ध था। मैं घुट रहा था। डर के मारे मेरा अजीब हाल था। लगता था, कोई मेरा गला घोंट रहा है।

जब हम लोग तम्बू में लौटकर आए, सौनो रोटी पका चुकी थी। उसे आज थाने पर भीख मांगते वक्त दो आने मिल गए थे और वह उसका आटा ले आई थी। रुपये का बीस सेर मिलता था। दो आने में ढाई सेर आया था। चार खाने वाले थे। वही आधा-आधा सेर का हिसाब हम लोगों के लिए काफी था। गोठिया उसने ईंटों के चूल्हे पर तवा रखके उसपर गरम-गरम रख छोड़ी थी।

हम लोग मजे-मजे में खा रहे थे। बातें कर रहे थे। प्यारी ने घूंघट हटा दिया था। वह मेरे सामने बैठी हाथ पर रोटी रखकर चाब रही थी। इसी समय एक सिपाही आ गया। सौनो ने सशंक आंखों से देखा। इसीला कांप उठा। मैं चुपचाप खाता रहा और प्यारी ने घूंघट खींच लिया। हमारा भूरा सामने आ गया और दुम उठाकर गर्व से छाती फुला कर खड़ा हो गया। इस वक्त हम आदमियों के मुकाबले में वह कुत्ता ही बहादुर दिखायी देता था।

सिपाही मोटा आदमी था। उसने इसीला को देखकर कहा : 'इस गांव में कब से आया है?'

इसीला खड़ा हो गया। रोटी उसकी बेंने में धरी रह गई। उसने कहा 'हुजूर! ऐसे ही कमाते फिरते हैं।'

'दरोगाजी ने बुलाया है तुझे।'

'हुजूर, खता माफ हो। हमने क्या कसूर किया है?'

'इधर आ!'

इसीला चला चला गया। जब वह लौटा तो सिपाही जा चुका था। वह आकर फिर खाना खाने लगा। उसने सौनो की ओर देखा और प्यारी पर निगाह डालकर कुछ इशारा किया। सौनो समझ गई। उसने सिर हिलाया जैसे मैं जानती थी; और फिर वह भी रोटी हाथ पर रखकर खाने लगी।

रात हो गई थी। मैं लेटकर बीड़ी पी रहा था। मैंने सुना, प्यारी और सौनो की बातें हो रही थीं।

सौनो कह रही थी : 'जानती है; सिपाही क्यों आया था?'

'जानती हूं।' प्यारी ने कहा : 'दरोगा मुझे दिन में घूर रहा था। मेरे मन में कया-यत आ गई है। पर सुखराम तो न मानेगा।'

'नहीं मानेगा? अरी, ये तो औरत के काम हैं। इसे बताने की जरूरत ही क्या है!'

'सो तो है, पर वह बुरा समझेगा न!'

'औरत का काम औरत का काम है। इसमें बुरा-भला क्या? कौन नहीं करती? नहीं तो मार-मार कर खाल उड़ा देगा दरोगा। और तेरे बाप और खसम दोनों को जेल भेज देगा। फिर कमेरा न रहेगा तो क्या करेगी? फिर भी तो पेट भरने को यही करना होगा?'

प्यारी चुप हो गई।

रात गाढ़ी होने लगी। प्यारी उठकर चलने लगी, पर अंधेरा गाढ़ा हुआ जब मैंने उसके रास्ते को हाथ फैलाकर रोक लिया।

'तू कहां जा रही है?'

कहीं नहीं

झूठी कहीं की तुझे शरम नहीं है?

'मैं करूं भी क्या ?'

'कोई जरूरत नहीं है जाने की।'

'फिर ?'

'हम यहां से अभी भाग चलते हैं।'

'तुम्हें गांव से पकड़वा मंगायेगा। रात ही रात में क्या सियासत से दूर हो जाओगे ?'

मेरी आंखों के सामने अब मजबूरी आने लगी। तो क्या हम इतने निरीह और कमजोर हैं ? और मुझे अब अधूरा किला याद आने लगा। मैं ठाकुर हूं, नट नहीं हूं। फिर मेरी बहू दरोगा के पास जा सकती है !

'तू नहीं जाएगी।' मैंने कहा।

'तो वह कोड़े मार-मारकर तेरी और मेरे बाप की चमड़ी उधेड़ देगा।'

'उधेड़ देने दे।'

'फिर भी पकड़वा मंगवायेगा मुझे। अब इनाम भी देगा, तब ठोकर और देगा ऊपर से।'

पर मुझपर जोश छा रहा था। मैंने उसका हाथ पकड़ लिया और कहा : 'तो तू मर क्यों नहीं जाती ?'

प्यारी हंस दी। कहा : 'इत्ती-सी बात के लिए मरना मुझे नहीं आता। औरत को तो औरत का ही काम करना पड़ता है। इसमें ऐसी बात ही क्या है ?'

'जानती है, तू ठाकुर की बहू है !' मैंने पूछा।

वह फिर मुस्कराई और बोली : 'हां, रोज नाइन मुझे नहलाने आती है। चमारिन मेरे कण्डे थापती है। डोमनी मेरे आड़े नहीं आती। लेकिन मेरे पांव धोती है। कुजड़िन मेरे द्वार साग बेचती है। सुनारिन मेरी नथ में कील ठोंकने आती है। बाजदारनी और गड़िवारिन'

'रंडी !' मैंने फूत्कार किया। मैं क्रोध से भर गया था। परन्तु प्यारी की आंखों में आंसू आ गए। उसने जलती आंखों से कहा : 'धिक रे राजा मरद ! तेरी आंखों में शील नहीं रह गया है। औरत को बचाना तेरा काम है। तू अपने धरम-मरजाद की टेक निवाहता है तो फिर मुझे रोकना तेरा काम है। तू मुझे बचा ! मैं और नहीं तो नटनी तो नहीं हूं। मैं क्या करूं ? जोबन दिखानी नहीं, दिख जाता है, उसे क्या तिजोरी में बन्द करके धर लूं ? तुझे मरम नहीं। चिल्ला-चिल्लाकर जगत को अपनी सुनाता है। फिर भी मरम छिपाना नहीं भाता तुझे ?'

मैंने सिर पकड़ लिया अपना और मुझे लगा, मेरा सिर फट जाएगा। मुझे क्रोध आ रहा था। मैंने उसका हाथ पकड़कर कहा : 'अच्छा, तू तम्बू में जा। मैं आऊं तब तो जाना।'

मैं चला। वह लौट गई। मुझे चारों ओर अंधेरा-ही-अंधेरा दिखाई दे रहा था। उस वक्त मुझे गांधी महात्मा की याद आई। कुछ गांव के परधानियों ने उनकी जै बोली थी, वे गिरफ्तार हो गए थे। सुना था, वे दीन-दुखियों के लिए लड़ते हैं। पर गांधी तक तो उस वक्त मैं पहुंच नहीं सकता था। मैं जमींदार साहब की हवेली की ओर चल पड़ा। रात के अंधेरे में उनकी बाहरी पौरी में लालटेन जल रही थी। वहां दरबान और दो आदमी बातें कर रहे थे; हुक्का चल रहा था। मैं गया और सलाम करके बैठ गया।

'क्या है रे ?' एक ने कहा : 'आटा तो मिल गया था तुझे ?'

हां महाराज मैंने कहा

फिर क्या आया है ?

और अपनी फरिया के कोने से खून पोंछने लगी। मुझे पलकें झुकाए देखकर सौनो उठ गई। प्यारी ने कहा : 'इतना सोच क्यों करते हो ?'

मैंने कहना चाहा पर कुछ कह नहीं सका। मेरी आंखों की बात वह समझ गई थी। बोली : 'मैं जानती हूं। तू मुझे बहुत चाहता है, बहुत इतना, जितना कि कोई पराई लुगाई को आसनाई के बावत चाहता है। पर मैं तेरे सामने हूं। तुझे नहीं छोड़ूंगी। मुझमें क्या कुछ बिगड़ गया है ?' वह कुछ देर रुकी और उसने उठकर मेरे लिए चिलम भरी और कहा : 'पी ले।'

मैं पीने लगा।

उसने कहा : 'तू बुरा क्यों मानता है ? औरत के काम में औरत को सरम नहीं होती। मरद के काम में क्या मरद सरम करता है ? मेरी-तेरी चाहना है। सग तो तेरे ही रहूंगी। पहले कंजरों में जाती थी; तब वहां क्या मैंने दूसरों से नाता जोड़के तुझे छोड़ दिया था ?'

मुझे अब लगा कि मैं दुनिया में नहीं हूं, नहीं हूं।

'तू अपने को ठाकुर समझता है बावरे !' वह हंस दी।

मैं दिन-भर लेटा रहा। कब सो गया पता नहीं। जब जागा तो रात थी। प्यारी मेरे पास लेटी थी। उसने मेरे कंधों को हाथों में कस रखा था। मैं उसकी बांहों में एक सुख पा रहा था। मेरा गुस्सा दूर हो चुका था। मैं मुस्करा दिया। मैंने उसके गालों पर हाथ फेरा। वह हंस दी।

बोली : 'रोटी ले आऊं ? पहले खा ले। जल्दी क्या करता है ?'

वह रोटी ले आई। जब मैं खा चुका तो उसने पानी लाकर रखा। मैंने पिया और तब वह मेरे पास लेट गई।

दूसरे दिन इसीला ने कहा : 'चलो, नये गांव चलें। रास्ते में किसी जगह माल बेचेंगे। एक ठाकुर को मैं जानता हूं जो ऐसा माल आधे मोल पर खरीदता है।'

हमने तम्बू समेट लिया। घोड़े पर सामान लद गया। इसीला आगे-आगे चला। सौनो, मैं और प्यारी उसके पीछे और आखिर में सूरा चला आ रहा था।

6

सुखराम ने बताया :

मैं तब बाईस बरस का था; प्यारी उन्नीस की थी। सौनो पैंतिस बरस की उमर में एक बाईस साल के गबरू नट के साथ बैठ गई थी क्योंकि [illegible] खाकर बुखार में बर्रा-बर्राकर मर गया था। मैंने बैदजी [illegible] ला के दी थी, पर कुछ नहीं हुआ था। तब सौनो ने उसे गर्मी पहुंचाने को [illegible] खिला दी थी, और वह मर गया था। हमने उसे फूंक दिया। सौनो रोती थी। फिर वह आंसू पोंछकर उठ बैठी थी। उसने कहा था : 'अब मेरा संसार में कोई नहीं है।'

मैंने कहा था : 'हम तो हैं।'

'तू तेरी लुगाई का है, मेरा नहीं।'

'मुंह में आग लगा दूंगी,' प्यारी ने कहा था, 'जो मेरे [illegible] आंख [illegible] है, नहीं रहा जाता तो किसी को कर ले। बंजर धरती तक मैं किसान हल चलाता है, फिर तू तो अभी जन-जन के ढेर लगा सकती है।'

'हां है' सौनो ने [illegible] तू [illegible] बापके [illegible] पर जब वहां नहीं रहा जिसकी ठसक। [illegible] बनती थी तो मेरा [illegible] ही रह

गया। अब तो मुझसे कोई भी कुछ मनचाही कह जाए! अभी तो मुझमें ओर है लाड़ली। और जब नहीं रहेगा, किसी साठा-पाठा के घर जा रोटी ठोकूगी। बेटी के घर रहकर अपनी इज्जत नहीं खोऊंगी।'

मैंने बीच-बचाव करने की कोशिश की। कहा : 'अभी तो इसीला को मरे देर नही हुई, फिर अभी से झगडा क्यो करती हो ?'

'तुम्हारी भी नीयत मुझे ठीक नही लगती।' फिर प्यारी ने कहा : 'इसका कमेरा तो मर गया। अब यह तेरी कमाई पै जिएगी ? थू है तेरे पर!'

'अरी जा, जा!' सौनो ने कहा : 'तूने क्या मुझसे बनिया-बामन समझा है कि जीते-जनम बैठी रहूंगी ? मलूको गूजरी ने तो नाती रहते रोटी न तोडी, दब्बारी न सही, मौरसिंह गूजर के जा बैठी। दण्ड भर दिया। मेरा तो कोई दण्ड-धराऊ भी नहीं है। मौरसिंह का बाप लोटन गूजर तो खुश हो गया था। उसने कहा कि खरी गूजरी लाके बेटा तैने लोहरों का नाम ऊंचा कर दिया। ठठेरनी अलबेली के सात यार थे खसम के रहते। कोई कुछ कर लेता! वह मरा तो जा बैठी अमरू ठठेरे के घर। कम्पूरी नाइन तो बूढी थी, जब उसे पैंसठ बरस के बैनी नाई ने अपने घर न बैठने पर चोरी लगा पुलिस मे फंसा दिया था, तब भी अपने मन के यार के घर बैठी। मनोहरा ले गया उसे। मेरा तो कोई नही। चली जाऊंगी रानी, कल ही चली जाऊंगी। नटनी का क्या ? चाहे जिसके बैठ जाए!'

प्यारी प्रसन्न हो गई। मैंने एक नई बात देखी। प्यारी अब मुझपर हुकूमत जताती थी। वह एक तरह से मेरी रक्षक थी। पुलिस-प्यादे, राजा के चौकीदारों और जागीरी अमलो से वह मेरी रक्षा करती थी। और मैं उतना निरीह क्यों था ? क्योंकि मुझे शराब की लत लग गई थी। मै करतब दिखाता था, पर शराब पीता था। तो अब वह बांस पर नाचती थी। उसकी जवानी की हुमक से ठट्ठ के ठट्ठ झूमते थे। जब मैं उसके पास जाता था तो वह कहती थी, 'अभी नहीं, मैं अभी थकी हूं। अभी तो बौहरे का बेटा गया है।'

सौनो कहती : 'कुछ दिन की बहार है लाड़ली। फिर मैंने क्या ये दिन देखे नही ?'

सौनो और प्यारी की जलन और द्वेष दूर हो गए। सौनो ने इंतजाम कर लिया। मै और प्यारी अकेले रह गए। मैं चाहता था कि हम कही दूर जा बसें और नई रियासत मे जाकर तमोली बन जाएं। पर प्यारी कहती थी : 'तमोलिन की क्या बचत है मेरे निखट्टू! तू बनिया-बामन बन, ठाकुर बन, पर मैं तो नटिनी की नटिनी हूं।'

और वह ठुमका मारकर कमर हिलाती हुई नाचती। मैं हस देता। मुझे वह बहुत प्यारी लगती थी।

प्यारी कहती : 'देख! मे भंगिन-चमारिन नही हूं जो मरद की गुलाम बनकर रहू। मै तो देखूगी। पर मेरा मन तेरा है। जिस दिन मन तुझसे हट जाएगा, मैं तुझे छोडकर चली जाऊगी।'

मुझे बहुत गुस्सा आता। शराब मेरे सिर पर चढ जाती और उसे रस्से से मारता। नील पड़-पड जातीं। वह रोती। निरदयी कहती; पर फिर मुझसे लिपट जाती। कहती : 'बैय्यर समझके मार ले निगोड़े! पर निपूते, तेरी लुगाई हूं, तभी न मारता है ? मार ले। मैं क्या तेरी मार से डरती हूं!'

मै कहता : 'फिर तू मुझे छोड़ने की बात क्यो करती है ?'

'तुझे जलाती हूं। तू चिढ़ता है। मारता है। तू मुझे मन से न चाहता होता, तो तू मुझे क्यों तेरा प्यार देखने को ही तो मगर हिया है जब कभी

गाम जाती हूं तो मरद मुझे देखकर ठंडी सांस भरते हैं, कोई कौंधा दिखाता है, कोई चवन्नी। बौहरे से मुफत नाज ले आती हूं, पर तू मुझे अपना मन उघेलकर नहीं दिखाता बेरहम!'

मैं उसके नील देखता और सहलाता। पीठ पर लंबे-लंबे दाग पड़े होते।

'चल, हम गाम लौट चलें अपने।' वह कहती। 'वहां अपने पुराने साथी हैं।'

'नहीं।' मैं कहता : 'तू फिर कंजरों की मांद में जाना चाहती है!'

'तेरी कसम! वह तो कोई बात नहीं, पर जहां बचपन बीता है, वह जगह याद आती है।'

'पर मैं 'वहां' नहीं जाना चाहता।'

वह आश्चर्य से पूछती : 'क्यों?'

मैं उत्तर नहीं देता।

एक दिन वह अड़ गई। बोली : 'जो तू नहीं बतायेगा तो समझ ले तैंने गाँ मारी।"

मैंने उसे मारा। पर उसे गुस्सा था। उसके हाथ पै जूता पड़ा। उसने खींच कर मारा। बोली : 'कढ़ीखाया, मन का मेल न करे! मुझसे छिपाए! मैं [illegible] तेरी बांदी हूं जो चुपचाप सहे जाऊंगी! मैं तो चली जाऊंगी।'

मुझे आग लग गई।

कहा : 'कहां जाएगी?"

'कहीं, जहां मन करेगा।'

'मुझे छोड़ जाएगी!'

'हां, तू मुझसे जद रखेगा तो तेरे पास क्यों रहूंगी?'

उसकी बात मेरी समझ में आ गई। मैंने कहा : 'जी [illegible] है, तुझे छोड़ के रख दूं।'

'आ तो मेरे पास।' पर वह खुद मेरे पास आ गई और मेरे सामने मुंह निकाल-कर बैठ गई जैसे मुझे थप्पड़ मारने को उकसा रही हो। मैंने उसकी ढिठाई देखकर मुंह पर चांटा मारा। उसने पलटकर खड़े होकर लात दी। कूल्हे की चोट से [illegible] गिर पड़ गया; खून आ गया। वह हंस दी और पास बैठ गई।

'कैसा दरद होता है?' उसने कहा।

'बहुत।' मैंने कहा, और पास पड़ा गंडासा उठाया।

वह डरी नहीं। कहा : 'दो टुकड़े कर दे। तेरे हाथ से मरूंगी तो मेरे मन की आग बुझ जाएगी।'

गंडासा मेरे हाथ से गिर गया। उसके प्यार में जीत पागी थी। मैं उसे देखता रह गया। वह कितनी खूबसूरत थी! मुझे ऐसे घूरते देखकर उसने लाज से घूंघट काढ़-कर कहा : 'हाय, मुझे सरम आती है। कैसे देखता है, जैसे मैं कोई पराई लुगाई हूं।'

रात की अंधियारी में हम चुप बैठे थे। थोड़ा बरसा बंद रहा था। कुत्ता अब भी इधर-उधर घूम-घूमकर कभी-कभी भौंक लेता था। गांव में सन्नाटा था। चमरों और भंगियों के घरों में अब सन्नाटा था। गांव के बाहर के घरे पर कोई-कोई सुअर घूम रहा था और दूर पुरविनी वाले बाबाजी के मंदिर में दिया जल रहा था।

आसमान नीला था। तारे झलमल कर रहे थे। मैं लेट गया। वह मेरे पास आयी. उसने अंगिया में हाथ डाला और पांच रुपये का नोट मेरे हाथ पर धर दिया।

'यह कहां से आया?' मैंने पूछा [illegible] बड़ी [illegible] [illegible] था

हां तू [illegible] है मैं किसी काम की नहीं प्यारी ने कहा तू मुझ [illegible] अपनी

बात छिपा, मैं अपनी छिपाऊंगी।'

मैने कहा : 'तुझसे क्या छिपाता हूं ?'

'तू क्यों नहीं बताता कि हम गाम क्यों न लौट चलें ? तू यों डरता है कि मै किसी कंजर से नाता जोड़ लूंगी ? यही न ? पर नाता जोड़ना और बात है, मन की होके रहना और बात है।'

'नहीं, मै इससे नही डरता।' मैंने कहा : 'मैं अधूरे किले से डरता हूं।'

'क्यों ? उसमे भूत बसते है इसलिए ? पर मरकर तो सभी भूत बनते हैं। क्या रक, क्या राजा। तू उसमे जाता ही क्यो है ?'

'मैं नही जाता, मेरा मन जाता है।'

'क्यों ?'

'मैं उसका असली मालिक हूं प्यारी।'

'तू रेसम के गदेलों पर सोना चाहता है ? तू चाहता है, बांदियां तेरे पांव दबाए ? ला, मै दबा दूं।'

वह मेरे पांव दबाने लगी।

'अरी, नहीं बावरी। उसे देखता हूं तो लगता है कि वह मुझे बुला रहा है।'

वह सोच में पड़ गई। उसने कहा : 'रानी तो रोज मालपुए खाती होगी ? गदेलों पर लेटती होगी ? बड़ा मजा आता होगा उसे !'

वह शायद कल्पना का सुख ले रही थी, पर फिर उसने ठंडी सांस लेकर कहा : 'इतना ही भाग लिखाकर लाई होती तो जाने क्या बात थी। पर मैं इस तरह तो तेरे लिए रहती हूं। रानी नहीं बन सकती तो सिपाही की तो बन सकती हूं।'

मैं कांप गया।

मैंने कहा : 'क्या कहती है प्यारी ! तेरे बिना मैं नही रह सकता, तू मुझे छोड़ने की बात कर रही है !'

'अरे नहीं ?' उसने हंसकर कहा : 'तुझे मैं कैसे छोड़ सकती हूं ! तू भी वहीं मेरे पास रहना।'

मैं अवाक् बैठ गया।

'सच कह।' मैने उसके कंधे पकड़कर कहा : 'तुझे ये रुपये किसने दिए हैं ?'

'रुस्तमखां ने।' वह दूर आसमान की तरफ देखती हुई बोली। मैं अब उसके पास नहीं था। वह कुछ और सोच रही थी।

वह बोली : 'तू महलों का सुपना देखता है। देख ! तू कभी महलों का मालक नही बन सकता। पर मैंने तुझे अपना माना है। अगर तुझे महलों में नहीं ले जा सकती तो अपने को बेचकर तुझे हुकुमत दूंगी। फिर तुझे पुलिसवाले डरा न सकेंगे। मुझे भी हर किसीकी जूठन न खानी पड़ेगी, जो हम-तू ब्याह-बरातों में बटोरते हैं। मै रुस्तमखां के यहां बैठ जाऊंगी। तू मेरे पास रहेगा। उसीने रुपये दिए हैं। वह मुझसे इतना खुश हुआ कि उसने मुझसे आप ही कहा। वह कहता था कि तुझे जेल भिजवा देगा। फिर मजे से मैं और वह रह सकेंगे। पर मैं तुझे जेल नहीं जाने दूंगी। इतने दिन से तुझसे कहती थी, यहां से चला चल, चला चल; पर तू नहीं माना। अब मैं क्या करूं ? पर इस तरह मैं भी चैन पाऊंगी, तू भी मजे में रहेगा। मनिहारिन रामकली उसकी पुरानी सहेली है। अब वह उसे नहीं चाहता। उसने छोड़ दी है।'

उसकी बात जैसे मेरे लिए नहीं कही गई थी। वह जैसे जोर-जोर से बोल-बोलकर सोच रही थी। उसे मुझसे राय नही लेनी थी, वह मुझसे सलाह नहीं ले रही थी पर मुझे सुना रही थी फिर अपने आप कहने लगी तब मैं दो-एक ठाकुर को पिट

वाऊंगी, जिन्होंने मुझसे मतलब निकालकर दुअन्नी की जगह इकन्नी दी थी। गिरोही बामन के घर मे आग लगवा दूंगी चुपचाप! हरामज़ादा मुझे छिनाल कहता था। गो भी अपना काम साधकर, पूरी गुड़ की भेली देने को कहकर मुकर गया था। हुकूमत करूंगी मैं, सबका सिर कुचलूंगी। रुस्तमखां इकबाल बहादुर तहसीलदार का मुहल्ला है। नायब पेसकार कामथ है। सबकी एक राय है। एक बार रुस्तमखां के पास पहुंच जाऊं तो पेसकार को भी मुट्ठी मे कर लूंगी। तू देखता रहियो, भला!'

अब उसने मुझे मुड़कर देखा।

मैने कहा: 'प्यारी!'

'क्यों?'

'तू क्या कह रही है?'

'तुझे मेरी बात पसन्द नहीं आई?'

'नहीं।'

'क्यों आएगी भला!' उसने चिढ़कर कहा: 'तू तो चाहता है, मैं ऐसे ही जूतियां खाती डोलूं।'

'पर तू बेड़नी तो नहीं है?'

'नहीं हूं। कौन कह सकता है?'

'पर यह तू क्या करने वाली है?'

'अरे, तू मेरा सुख नहीं देख सकता!

'तू इसे सुख कहती है?'

'क्यों, मेरे वहां रहते, फिर कोई नटों को बेवजह पकड़कर थाने में बन्द कर सकेगा?'

'तू क्या कर लेगी?'

'मेरा वह न छुड़ा देगा? कोई मेरा अकेली का फायदा ही थोड़ा है?'

'तो क्या तूने तय कर लिया है?'

'तय? और तू मेरे पास बैठा क्या कर रहा है?'

'तो क्या यह मैं कह रहा हूं?'

'बेवकूफ!' उसने कहा।

'अच्छा, चली जा!' मैंने कहा: 'मैं भी चला जाऊंगा।'

'मुझे छोड़कर?'

'हां।'

'तुझे सरम नहीं है। अपनी लुगाई को छोड़कर जाने को कहता है?'

'तू भी तो जा रही है?'

'पर मैं तो तेरे लिए जाती हूं।'

'चल परमेसुरी! मुझपे अहसान न कर।'

'ओहो!' उसने स्वर उठाकर कहा: 'मुझे गौं है!'

मैं चुप रहा।

उसने कहा: 'अरे, मैं समझती हूं।'

'क्या?' मैने पूछा।

'तू मुझसे पीछा छुड़ाने की सोच रहा था। सो [illegible] तुझे रास्ता मिल गया।'

'पर मैं जाने से पहले तेरा [illegible] कर जाऊंगा प्यारी! जानत [illegible]

कर जा [illegible] तेरी सात पी[illegible] या के मरा का भी हथकड़ा उतरवा देगा

फांसी होगी। भगवान से बच जाएगा, पर पुलस से आज तक कोई नही बचा। वह मुझसे बहुत खुस हो गया है।'

'तूने उसे अपनी चमक-चौंदस से मोह लिया होगा।'

'मै तो जैसी हूं वैसी ही हूं।'

मुझे कोई राह दिखाई नही दे रही थी। उसने कहा: 'वह मेरा पराया है। तू मेरा अपना है। तू न रहेगा तो मैं किसके सहारे जिऊंगी?'

उसने मुझे चिपटा लिया और रोने लगी। मै मूरख-सा देखता रहा। समझ मे नही आ रहा था क्या करूं। प्यारी मुझे बहुत प्यारी थी। मै उसे छोड नही सकता था। मै उसके बिना जिन्दा रहने की सोच भी नहीं पाता था। मैंने उसे छाती से लगाकर कहा: 'मै तुझे नही छोड सकता। मैं तुझे छोड नहीं सकता प्यारी! जब मेरा दुनिया मे कोई नही था, तब तूने ही मुझे आसरा दिया था। तुझे छोड़कर मै जी नही सकूंगा। मै तेरी जूठन खाकर, ठोकर खाकर भी पड़ा रहूंगा, पर तेरा कुत्ता बनकर रहूंगा।'

प्यारी ने मुझे बाहों में बांध लिया और कहा: 'मै जानती हूं, यह जवानी सदा नही रहेगी। जब यह चली जाएगी तो रुस्तमखा भी मुझे छोड़ देगा, दूध की मक्खी की तरह निकालकर फेंक देगा। तब मेरा एक तू ही तो है। और मेरा कौन है!'

रात घनी हो गई थी। हवा के सर्राते झोंकों मे एक नशीली छाया थी जो धीरे-धीरे अब गात पर घिर आई थी। झोंपडे के बाहर भूरा अब कभी-कभी उगते चांद की तरफ देखकर रो लेता था, और कुछ नही। दूर के पहाड सुनसान पडे थे। मेरे मन मे अब हलचल थक गई थी। प्यारी सोने के लिए लेट गई थी। दिये की रोशनी में उसका गोरा रंग दमक रहा था। मैंने दिया बुझा दिया।

7

सुखराम ने कहा:

भोर हो गई। आज रात-भर प्यारी सो नही सकी थी। कई बार सोते में बड़-बड़ा उठी थी। मैंने देखा था, वह बातें कर रही थी। कभी कहती: 'तू मुझे छोड़कर चला जाएगा?'

मैंने उसे अपने हृदय से चिपका लिया, जैसे चिड़िया अपने बच्चे को अपने पखो मे छिपा लेती है। मैंने कहा: 'नहीं जाऊंगा, तुझे छोड़कर मैं कहीं नहीं जाऊंगा।'

वह सुन नही सकी थी। पर उस समय उसकी अकुलाहट कम हो गई थी। रात की ठंड बढ़ती जा रही थी। मैं ऊंघने लग गया था। फिर से उसे मैंने कांपते पाया और मैंने उसके होठों को फड़कते पाया। सचमुच मैंने अपने हाथों से उसके होंठों को दबा दिया। वह शांत हो गई।

मैं सदा से ही उसके रूप को प्यार करता रहा था। मुझे बहुत जोश आता था, मैं उससे गुस्सा भी हो जाता था, पर उसे पास देखकर मैं जानवर का-सा बोदा हो जाता। मैं उसके बदन को देर तक हाथों से सहलाया करता था। वह ऐसे हंसती थी जैसे अपनी खूबसूरती की ताकत उसे मालूम है। उन दिनों मैं जवान था। मेरे बालों मे तेल पड़ा रहता और मेरा कुर्ता महीन काले रंग का होता। मैं मूछों मे ताव देता और धोती को दुलांगी बांधता। कमर मे कटार खोंसे रखता। मेरे एक हाथ मे कड़ा पड़ा था, पतला लोहे का। गले मे मैं दो-तीन तावीज पहनता। मैं ताकत-भरा था। मुझे उसकी वासना थी, क्योंकि मेरी सारी आग जैसे उसे छूकर बुझ जाती थी। पर आज जबकि वह मेरे हाथों मे पड़ी थी आज मुझे एक नई बात हुई रोज जब वह ऐसी हालत मे

होती तो वह मेरी औरत हो जाती, पर आज मुझे वह बुखार नहीं था। आज मैंने देखा था कि वह औरत नहीं थी। उभरी छातियां, पतली कमर, उसकी भारी जांघें आज मुझे रोज की तरह बावला नहीं बना रही थीं। तब मैंने महसूस किया कि औरत सिर्फ इतनी ही नहीं है, वह देवी भी है।

मैं कह नहीं सकता कि वह सब मुझमें कैसा ख्याल था। पर इतना ही कह सकता हूं, आज यह गोरापन आग की तरह नहीं था। आज यह चांदनी की तरह हो गया था। मुझे उस सोती हुई औरत की बेहोशी में एक नया जागा हुआपन मिला, वह था उसकी नींद में भी उसका जागी हुई की तरह हो जाना। जैसे वह आज नींद के पार भी मेरी थी। मुझे अपना बना लेना चाहती थी।

मैं समझ नहीं सका कि यह क्या था। पर मेरा दिल उमंग रहा था। आज देखा कि मैं सचमुच उसे प्यार करता हूं। वह मेरी है। मैं उसका हूं।

सुखराम चुप हो गया था। मैं सोच रहा हूं।

सुखराम की अभिव्यक्ति समाप्त हो गई थी किन्तु मेरे अनुभव किया कि आज सुखराम क्या कहना चाहता था। वह था उसके पशु का उन्नयन। और प्रेम की असाधारण शक्ति ने उसके हृदय की अन्धकारमय गुहा में जीवन की ज्योति प्रज्वलित कर दी थी। आज तक वह नारी के रूप से आकृष्ट होकर, उससे पराजित होकर पशु की भांति केवल उसका भोग करके, अपनी वासना के लाल लोहे को उसकी जवानी के अथाह विलास में बुझा लिया करता था। किन्तु आज समस्त देह उसके लिए अपनी सीमाओं का त्याग कर गई थी। अरूप ने अचेतन के माध्यम से उसकी सीमित बुद्धि पर प्रहार किया। वह अंग-अंग सटाए रहा किन्तु आज वासना नहीं, जीवन की आधारभूत संवेदना ने अपना सिर उठाया और मानो इस अज्ञात गौरव से नितान्त अपरिचित होने के कारण सुखराम अपने-आपको समेट नहीं सका। वहां कलुषित वासना नहीं रही। यह वह नारी-देह थी जिसे अनेक पुरुषों ने गंदा कर दिया था और वह नटों का पतित[illegible] समाज इसे प्रकृति की आवश्यकता, समाज की विषमता समझकर सहता चला आ रहा था। वे संभोग को बुरा नहीं कहते थे। स्त्री कहती थी कि उसका काम पुरुष के सामने स्त्री कर रही है। उसमें कोई लज्जा नहीं थी। किन्तु सुखराम अपने को ठाकुर समझता था और उसी अहंकार ने उसमें एक विष बो दिया था। परन्तु उसका कमनीय सौन्दर्य उसको, उसके बीज को फूटकर जड़ों में बदलने नहीं देता था। प्यारी अपनी देह जला चुकी थी और सुखराम ने इतना ही समझा भी था। किन्तु आज उस बर्बर ने एक नई बात देखी थी। उसने इस अंधेरी रात में, सरासूद में रहने वाली स्त्री का अपराजित हृदय देखा था, जो केवल स्त्री का हृदय था, जो मूलतः भव्य है, करुण है, प्रेम में आप्लावित है। स्त्री का यह जीवन तभी सार्थक है और इसीलिए शक्ति की आराधिका असीम वेदनात्मक ग्राह्यता से वह अपने को बनाए रह सकी है।

मैं अपनी कल्पना में देख रहा हूं कि प्यारी लेटी है और सुखराम उसके पास लेटा है। उसके नेत्र मुंदे हैं। वह सो रही है। उसकी भीतरी वेदना, आशंका उसके होठों पर थिरकते हैं और सुखराम उस सबको देख-देखकर विभोर हुआ जा रहा है। आज वासना छोटी चीज़ हो गई है। आज वासना से भी ऊपर हृदय जागा है, यह जो जागरण में यदि दीपक की भांति जल रहा था, तो नींद में बिजली की तरह कौंधकर अपनी एक झांई-सी मार जाता है। अनिद्य थी वह बेला। आकाश में मानो सकल वायु मर्मर वनांत की झूमती मरोर और अंधकार का गहन उच्छ्वास सब आज उसी महामोद के अस्पष्ट और छविमय प्रतीक थे जो प्रतिकण में उच्चरित हो

रहे थे। आज स्त्री का रूप अपने वास्तविक सौन्दर्य के कारण विजयी हो गया था; और सुखराम उसे समझ गया था। किन्तु कितना ? जैसे समुद्र के किनारे खड़ा हुआ मनुष्य अपने पांवों को भिगो जाने वाली लहरमात्र की तरलता का, मर्मर का आभास पा सका हो। अभी उसने गहन गंभीर सिन्धुराज का वह मध्य गंभीर अन्तस्तल कहां देखा था जहां निस्पन्द किन्तु हाहाकारों की प्रतिक्रिया बनकर एक अटूट सर्जनवती शान्ति होती है।

वह प्रेम की अभिनव छाया है। प्यारी एक मशाल है। आज तक वह जैसे सुलगी नहीं थी। आज जल उठी है। उसमें से फरफराता उजाला निकल रहा है। प्यारी रहे न रहे, सुखराम उस आलोक से प्रदीप्त हो चुका है। वह ज्योति-परम्परा है। वह आज तक भी थी किन्तु मुखर नहीं हुई थी। तब उसे अनुभव हुआ था कि वे केवल शरीर के कारण ही एक-दूसरे से नहीं जुड़े हुए थे। उनकी समस्त अनुभूतियों ने अपना एकाकार और तादात्म्य कर लिया था। वही जीवन की पूर्ण तृप्ति का साधन था। यह समस्त पाप-पुण्य मनुष्यकृत है और वह ही अपनी अनुभूतियों से इनमें यातना पाता है। इनमें ही शोषण ने अपना स्थान बना लिया है। किन्तु सुखराम की यह सुख-वह तृप्ति आज ऊंची उठ रही है। उसमें दर्द जागा है।

और सुखराम ने कहा :

'वह नींद में चिल्ला उठी। उसका सारा बदन पसीने में तर-बतर हो उठा। मैं चौंक उठा। मुझे लगा वह पसीना उसे चिकना बनाकर मेरे हाथों में फिसलन पैदा करना चाहता है। वह मेरे हाथ से छूट जाएगी। मैंने चिल्लाकर कहा : 'प्यारी ! होश में आ। क्या हुआ तुझे ?'

वह उठकर बैठ गई। उसने कहा : 'मैंने एक डरावना सुपना देखा है। डरावना !' वह कहकर कांप उठी।

मैंने कहा : 'तूने क्या देखा है ऐसा ?'

'मैं कह दूं !'

'क्यों ? कहने में भी हरज है !'

'पर मुझे डर लगता है।'

'मैं तो तेरे पास हूं।'

'हां, तू मेरे पास है।' उसने मुझे पकड़कर कहा : 'अब नहीं सोऊंगी।'

'क्यों ?'

'कहीं यही सुपना आगे शुरू हो गया तो ?'

'ऐसा भी कहीं हुआ है पगली !'

वह क्षण-भर चुप रही। फिर कहा : 'मुझे वे तुमसे छीने लिये जा रहे थे।'

'वे कौन थे ?'

'मैं नहीं जानती। चारों तरफ सांप ही सांप थे।'

'सांप !!' मैंने कहा : 'मैं हनुमान जी पर दीपक चढ़ाऊंगा। महादेव जी पर बेलपत्तर चढ़ाऊंगा। पीर के मजार पर दिया चढ़ाऊंगा। ईस्माइल की चींटियों को बूरा डालूंगा। तू कहेगी तो पंडित को सीधा भी दे आऊंगा। भगवान कसम ! ठाकुरजी के मंदिर में जाकर परार्थना करूंगा। पर तूने ऐसा क्या देखा ?'

'मैंने देखा कि मैं जंगल में जा रही हूं। तू मेरे पास नहीं है। वहां एक बड़ा सुन्दर मनी रखा है। उसमें से उजाला होता है। मैं उसको लेकर हाथ में उठा लेती हूं। तब मैं देखती हूं, एक बड़ा सांप मुझे देखकर फुफकारता हुआ भागा आ रहा है। मैं उस मनी को लेकर भागी जा रही हूं चारों तरफ से सांप भागे आ रहे हैं वे कह रहे हैं

'पकड लो इसे, जाने न पावे ।'

मेरे कान खडे हो गए । पूछा : 'फिर ?'

'फिर मैने देखा कि तू बड़ी दूर पहाड़ पर खड़ा मुझे पुकार रहा है । तू मुझसे बहुत ऊंचा है, बहुत ऊंचा । मै तुझ तक पहुच नही सकती । मैं तुझे पुकारती हूं सुख-राम ! हो, सुखराम ! सुखराम ! पर मुझे लगता है मेरा गला रुंध गया है । मैं पुकार नही सकती । मेरी आवाज़ बध गई है और रात का अंधेरा अब टूट रहा है । सारा आसमान गुफा के काले-काले पत्थरो की तरह नीचे धमकता आ रहा है । चारों तरफ शोर हो रहा है । गूज उठ रही है ।

'और फिर बहुत-से कजर गाते है । मेरा पहला दोस्त, जिसके साथ मै पहली बार सोई थी, वह मेरे सामने आ गया है और मुझे बचाने को दोनों हाथ उठाए खड़ा है । मैं कहती हूं : नैकस ! तू हट जा । तेरे सामने आ जाने से मेरा सुखराम मेरी आंखो से दूर हो गया है । तू दूर हट जा । और मै उससे लड़ने लगी हूं ।

'तभी साप और पास आ गए है, सांप···एक मुझे डसने को फन फैलाए खड़ा हो जाता है···।'

'तभी मेरी आंख खुल जाती है ।'

प्यारी का सुपना भयानक था । पर मुझे हंसी आ गई ।

कहा : 'तो इतना क्यों डरती है ? सुपना तो सुपना ही होता है ।'

'लेकिन मैंने आज तक मीठे सुपने देखे है ।'

'बावरी ! रोज कोई मीठे सुपने नही देखता ।'

'पर सुपना कोई वैसे ही नही देखता । जब देवता नाराज होते है तभी ऐसे सुपने दीख पड़ते है ।'

'मै इतनी मनावनी तो कर चुका हूं ।'

'तू सच मुझे बहुत चाहता है ।' कहकर उसने मेरा हाथ दबा दिया । उसके कसकर बंधे हुए बाल, जो कानो के ऊपर बटी हुई बालों की लड़ी में होकर पीछे उठी हुई चुटिया मे खतम होकर पीठ पर लटकते थे, इस समय ढीले हो गए । उसने उसी वक्त उनपर हाथ फेरा और कहा : 'कल तू मेरे जुएं बीन देगा ?'

मैने कहा : 'जरूर !'

यह प्यार की निशानी थी ।

'और मैं तेरे बीन दूंगी ।' उसने कहा ।

फिर हम लोग लेट गए । आकाश की ओर देखकर उसने कहा : 'कितने तारे चमक रहे हैं ! ये सब आत्मा है सुखराम !'

'हां प्यारी ! लोग ऐसा ही कहते है ।'

'सब मरकर आखिर में ऐसी ही आत्मा बन जाते है । फिर एक दिन टूटकर धरती पर आ गिरते है ।'

'इसीला यही कहता था ।'

'वह जादू भी जानता था थोड़ा-सा । उसने मुझे बताया नही ।'

'क्यों !'

'मै नहीं जानती । उसीने मुझसे कहा था कि तेरा बाप भी कुछ-कुछ जादू जानता था ।'

'मेरा बाप !!' मैने कहा । 'मुझे उसकी धुधली-सी याद रह गई है ।'

तब तू छोटा ही तो था

तू ही कौन बड़ी थी

'हां, मैं भी छोटी थी।'

'तूने ही मुझे आसरा दिया था।'

उसने शरम से कहा : 'चल हट ! लुगाई भी कहीं मरद को आसरा देती है !'

मैंने उसकी लाज को समझा। वह मुझपर अहसान नहीं चाहती थी। उसने फिर कहा : 'सुखराम ! तू भी जादू सीख ले।'

'क्यों ?'

'फिर तू चाहे जित्ते रुपयें ला सकेगा।'

'तेरा बाप ही क्यों न ले आया ?'

'उसे पूरी सिद्धी मिली ही कहां थी ! वह तो थोड़ा-बहुत मंतर-जंतर जानता था। सिद्धी मिलना क्या कोई खेल होता है ! गांव में इस बखत एक सगाला है। कहते है, बड़ा पहुंचा हुआ है। एक दिन मुझे मिला तो मुंह फेरकर बैठ गया और गाली देने लगा। बोला : हरामजादी ! माया है।

'माया है। सच मैं डर गई। गांव में उसका बड़ा मान है।'

मैं उसकी बातों से चकरा गया। वह मुझे एक नई दुनिया की तरफ ले जा रही थी और मुझे लगा, मैं आसमान में उड़ रहा हूं। मैं उड़ रहा हूं।

कोई कहता है : 'सुखराम !'

मैं जवाब नहीं देता।

'तू कहां जा रहा है ?'

मैं उड़ता रहता हूं। बोलता नहीं।

और फिर अचानक मैं अधूरे किले पर खड़ा हूं। वह मेरा है। सब मेरे सामने सिर झुकाए खड़े हैं।

पर वह सुपना भी नहीं था। एक खयाल-भर था। मैं प्यारी के बोल से चौंक उठा। उसने कहा : 'तुम मेरे हो, मैं तुम्हारी हूं। बस यही एक बात मेरे दिल की है। बाकी सब बातें दुनियादारी की है। वह सब तो है ही; मेरा मन उन सबमें रमता नहीं। बोलो, तुम जलन से मुझे छोड़ तो नहीं जाओगे ? तुम पराये मरद के साथ देखकर गुस्सा तो न होगे ?'

'नहीं।' मैंने कहा। हालांकि मैं अपने ऊपर पूरा भरोसा नहीं करता था।

'और एक वादा लूंगी। दोगे ?'

'कह तो सही।'

'तुम किसी दूसरी लुगाई से नाता न जोड़ोगे !'

'क्यों ? और तू आजाद है !'

'मेरा क्या ! मेरा तो रास्ता शुरू ही से ऐसा पड़ गया है। पर तुमपर किसी चुडैल की छांह भी नहीं पड़ी है। तुम मेरे हो, सिर्फ मेरे ही हो।'

मैंने कहा : 'तू मुझसे यह क्यों कहलवाना चाहती है ?'

'क्योंकि मैं चाहती हूं।' उसने कहा।

'अच्छा, मैं मानता हूं।'

मुझे खुद ताज्जुब हुआ। हम लोग शराब पीकर जब झूमते हुए लड़ते हैं तब औरतें डरती हैं। मुझे याद है, तब मैं छोटा था। एक बार हजारी नट ने कटारी उठाकर भरी बस्ती में चंदू की लुगाई को शराब पीकर पकड़ लिया था। चंदू और हजारी में रात बड़ी देर तक कटारें चलीं। लोगों ने कुछ नहीं कहा। देखते रहे, चंदू की लुगाई डरती रही। पर अचानक वह बीच में आ गई। उसके सीने में चंदू की कटार गलती से धस गई। हजारी ने चंदू की बोटी बोटी काट दी और फिर सवेरे थाने चला गया उसे

फांसी लग गई थी। हजारी नामी चोर था। पुलिस के हाथ नहीं आता था। पर मुहब्बत का ऐसा दीवाना हुआ कि आप ही मौत के मुंह में चला गया। उसे तब बिलकुल डर नहीं लगा।

मैं उठ बैठा। मैंने बीड़ी सुलगाई, कहा : 'प्यारी!'

वह भी बैठ गई।

'तू भी पीएगी?'

'ला, पी लूं।'

वह और मैं दोनों बीड़ी पीते रहे।

अब मैंने कहा : 'तू सिपाही के घर बैठेगी, तो यहां मेरे पास आया करेगी?'

'तूने क्या कहा?'

'क्यों?'

'फिर से कह तो!'

'तू यहां आया करेगी न?'

उसने मेरे बाल पकड़कर झिंझोड़ दिए, जैसे उसे रोष हो आया था।

मैंने कहा : 'क्यों?'

'आऊंगी, किन्तु मेरे साथ चलेगा?'

'वह मुझे रोटी देगा?'

'मैं दूंगी तुझे। इसी सरत पर जाकर वहां रहूंगी। तू समझता है, पराए मरद के घर रहते हुए मुझे डर नहीं लगता!'

'तुझे काहे का डर लगता है?'

'मैं नहीं जानती। पर तू रहता है तो सासत नहीं रहती।'

'अच्छा, मैं दिन-भर अपनी कमाई कर लिया करूंगा।'

उसके स्वर में तो रोष था, पर आंखों में खुशी थी जैसे उसे मेरी इज्जत की बात अच्छी लगी थी। वह मरद क्या जो लुगाई का खाकर रहे!

'हां, नहीं खाऊंगा।' मैंने कहा।

'तुम्हारी मरजी; मैं जोर नहीं देती। पर तुम्हारी इज्जत तो मैं करवाऊंगी ही।'

इसका अन्दाज हम दोनों में से किसीको न था। हम इतना ही जानते थे कि सिपाही में बड़ी ताकत होती है। वह राजा का आदमी होता है। वह सबमें घूमता है। गांव के लोग उससे डरते हैं। वह बड़ी जातों में उठता-बैठता है। वह जिधर जाता है उधर ही नट दौड़कर छिप जाते हैं। हम तो यही देखते आ रहे थे कि चाहे जब, चाहे जिस नटनी-कंजरिया को पकड़ ले जाता है। हम सब उससे डरते थे क्योंकि वह थाने में पकड़ ले जाता था। वहां वह हमें चोर कह देता था। फिर हम लोग बेंतों से पिटते थे। कभी-कभी गुड़ के पानी के छींटे दे दिए जाते थे जिससे चींटे लग जाते थे और देह सूज जाती थी। फिर उसकी बात ही सच मानी जाती थी। हमें हमेशा गाली दी जाती थी। ज्यादा किसीने सिर उठाया तो वह जेल की हवा खाता था। चक्की पीसते-पीसते उसकी धज्जियां उड़ जाती थीं। एक बार सिपाही से एक नटनी को कोई बीमारी लग गई थी। उसका इलाज बड़ी मुश्किल से हुआ था, सो भी किया था सुसीला ने रूखड़ियों से।

न जाने कैसे इसी समय उसने पूछा : 'सुखराम! तू तो रूखड़ियों के बारे में जानता है!'

'हां, हां।'

वह चुप हो रही

मैंने कहा : 'क्यों पूछती है ?'

'अरे, मैं सबसे कह दूंगी तू बड़ा इलाजी है। फिर सब तेरी खुशामद किया करेंगे, ओडी मे हाथ डालते फिरेंगे।'

मैंने खुश होकर उसका सिर थपथपा दिया। फिर मैंने उठकर पानी पिया। उसने बैठे-बैठे कहा : 'ला, मुझे पिला दे।'

'उठके पी ले।' मैंने कहा।

'पी लूंगी नासपीटे।' उसने मुस्कराकर कहा . 'आज तू ही न मेरी जूती उठा दे !'

मै खुश हुआ। मैने उसे पानी पिलाया। फिर मैंने बीड़ी सुलगाई। वह मेरे पास आ बैठी। मैने कहा : 'प्यारी ! आज की रात जागर मे बीत गई।'

'अभी तो सूका[1] नहीं उगा।'

'तू मुझे एक गीत सुना दे।'

'कौन-सा ?'

'वही, जिसमे तू गाती है कि बिरहिन की आग सताए...'

'आज तो मैं तेरी बगल में हूं। तू क्यों सुनना चाहता है ?'

'जानती है, आज की रात हमने कुछ नहीं किया।'

'मै समझती हूं जिन रातों किया था, वे अपनी न थी। आज तू मेरा है। उससे कोई मन नहीं मिल जाता है। प्रीत तो मन की होती है।'

'अच्छा, गाना गा दे।'

'तू मेरे संग ही गाना।'

उसने गाया : 'ऐ रे, मै आग में जली जा रही हूं, हाय मेरे बालम, तू कहां चला गया। पहाड़ के धौ सूख गए हैं। ऐसे मेरी चाहना भी सूख गई है। पर मेरा हिया देख, इसमें क्या है ? तू पर्वत पै धूनी रमाए बैठा है। जोगी ! आ मेरे मन की धूनी तो देख जा !'

मैंने मोटे स्वर में गाया : 'तेरी धूनी मुझे जलाती है तो तन जलता है, यह धूनी गलती है तो तन गलता है। प्यारी ! तेरे बिना मुझे जोग भी नहीं सुहाता।'

उसने कहा : 'ओ जोगी ! जब भराम रमाई है तो मन लगाके समाध लगा। अब पीछे न हट ! नहीं तो सब लुगाइयां मुझसे कहेंगी कि अपने प्यारे को भेगा बना लाई। यह डायन जादूगरनी है।'

मैंने गाया : 'प्यारी ! दुनिया मे कौन क्या है, कोई नहीं जानता। कोई किसी की जीभ नहीं पकड़ सकता। यह भसम नहीं है। तेरे गोरे अंगों की याद है। यह धुआं देख मुझे तेरे बालों की याद आती है। मैं तो जलकर मर जाऊंगा। कैसे करूं, यह मैंने कैसी बेड़ी अपने-आप अपने पांवों में डाल ली है।'

वह गाने लगी : 'प्यारे ! मैं जानती हूं, तुझे मुझसे प्रीत नहीं है। तुझे ना चमकती बिजलियों से सूनापन लग रहा। तू जब मोरनी के पास मोर नाचता देखता है तो तेरी हूक उठती है। हिरनी के पीछे दौड़ता हिरन तेरा काम जगाता है। ओ नाग के मतवाले ! तू मुझे प्रीत का धोखा क्यों देता है। तू तो फिर ऐसे ही चला जाएगा जैसे ये सावन के मेघ चले जाएंगे, फिर जब सरद आएगी तब मैं और आसमान दो ही तो धरती पर आंसू गिराने को रह जाएंगे।'

मैंने गाया : 'मुझसे कसम ले ले प्यारी ! अब की सरद पूनों में तुझे द...

1 शुक्र तारा

निहलाऊंगा और चुल्लू-चुल्लू वह दूध बिखरेगा तो चांदनी फैल जाएगी। तू मेरी कामिनी कैसी सुन्दर है, जैसे चंदा में से चीर के निकाली हो। मैं जोगी तो तेरे लिए बना हूं प्यारी! तू ही मेरी सब-कुछ है।'

सुर गूंजते गए। वह पतली आवाज़ और मेरी मोटी साथ-साथ गूंज उठी — 'आज प्रीत की रीत का निबाह हो गया। वह गोरी कैसी जिसका बलमा साथ न हो! तलवार सबको काटती है, पर म्यान को नहीं काटती। लौ काठ को भसम करती है, पर काठ लौ को झुकाती नहीं, उठाती ही रहती है। ओ प्रीत के दीवानो, यह बताओ, प्रीत में ढोला जलता है कि गोरी जलती है? कोई आज तक बता पाया है कि आग लकड़ी को पकड़ती है कि लकड़ी आग को पकड़ लेती है?'

हमारे गीतों ने सवेरा कर दिया।

8

सुखराम ने कहा था :

रुस्तमखां का मकान पक्का भी था, कच्चा भी। वह गांव का पुराना बाशिन्दा था। उसके पुरखे पुराने जमाने से ही गांव में रहते थे। वह बड़ा नमाज पढ़नेवाला आदमी था। पर हमेशा अफसरों की नाक का बाल बनकर रहता था। उसको बनियों से पैसा निकलवाने के हुनर में कमाल हासिल था। रजवाड़े के ठाकुरों को झुककर सलाम करता, पर मामूली ठाकुरों के सामने खाट पर बैठता। बामनों में गरीब देखा तो पंडितजी कहकर बन्दगी करता, पर अमीर को ससुरा पालागन करता था।

मुझे उसे देखते ही नफरत होती थी। वह लम्बा और चुस्त था। उसकी आंखों में चालाकी भरी रहती। वह देखते ही भांप जाता कि उसका आसामी कितने पानी में है। उसने एक बार फटे कपड़ों में आए रहमतअली रंगरेज़ को हर तरह से गिड़गिड़ाकर अपनी गरीबी को जताते देख ऐसी धौंस दी कि उस फटेहाल के पास से चालीस रुपये निकल आए। रुस्तमखां मूछों पर ताव देता और उसको देखकर नटों के छक्के छूट जाते।

नट मौका पड़ता, भीख मांगते, या गांव के ठाकुरों के यहां शहद पहुंचाते। वे दवाइयां बनाते। मैं भी रूखड़ी वालों में मशहूर था। एक दिन मैंने एक पटवारी के नीले बिच्छू के काटे को झाड़-फूंक करके, रूखड़ी लगाकर उतारा था, तब से लोग मुझे जानने लगे थे।

आज जब प्यारी और मैं रुस्तमखां के दरवाजे की तरफ बढ़े तो मुझसे चला नहीं जाता था। मेरे पांव रुके जाते थे, भारी हो गए थे। प्यारी घाघरा पहने थी। वह गन्दा था। उसकी चोली भी फटी हुई थी। ओढ़नी में थेगलियां लग रही थीं। घूंघट काढ़े थी। मुझे लगा, मैं खुद अपनी दुनिया को लुटाने के लिए जा रहा हूं। पर प्यारी के सामने बोलने की मुझमें सकत नहीं थी।

मैं ठिठक गया। सामने चौतरे पर जाकर बैठ गया। वह किसी पुरानी धरम-साला का था। प्यारी धूल-भरे दगरे पर बैठ गई।

'रुक क्यों गए?' उसने पूछा।

'मुझसे नहीं चला जाता।'

'क्यों?'

'मन नहीं करता।'

'तो मुझे भी नहीं जाने दोगे?'

'तेरी मर्जी! मेरे रोके से तू क्या रुकेगी!'

'अच्छा, तू ठहर। मैं आती हूं।'

वह चली गई। मै बैठा-बैठा लेट गया और फिर सो गया। घंटा-भर सोया होऊंगा कि मुझे एक लड़के ने आकर जगाया। वह बीड़ी पी रहा था। उसने कहा 'क्यो रे! तू सुखराम नट है?'

'हां, क्या है?' मैंने रुखाई से कहा।

'अरे, तुझे जमादार ने बुलाया है। चला जा उड़के। कहा, फौरन भेज दे।'

वह चला गया। मैं धीरे-धीरे पहुंचा।

दरवाज़ा पक्का था। फिर कच्ची जमीन पड़ी थी। पीछे एक छोटी-सी हवेली का-सा घर था। एक तरफ छप्पर मे घोड़ा बंधा था। दूसरी तरफ एक और छप्पर था, जिसमे रुस्तमखां मर्दाने का काम लेता था और पौरी की एक कोठरी की आड़ मे बाईं तरफ बाहर ही से दरवाजे वाला एक कोठा था, जिसके आगे छप्पर पड़ा था। चौथे कोने के छप्पर मे भैंस बंधी थी। कुछ दूर पर उसका पाड़ा खड़ा था।

मैं दरवाज़े पर रुक गया। पर गेहुंए रंग की डोमनी बैठी थी। उसने कहा: 'चले आओ।'

मै भीतर चला गया। वह बोली: 'भाग खुल गए। सरकार भीतर हैं। बुलाया है।'

मै भीतर चला गया। दुमंज़िला घर था।

ऊपर साफ घाघरा, साबुत चोली और नई ओढ़नी पहने प्यारी बैठी थी। उसके नीचे जाजम बिछी थी। मेरी तो उसे देखकर आंखें फट गईं। उसके होंठो पर पान की लाली थी। वह मुझे इतनी सुन्दर कभी नही लगी थी; और खाट पर रुस्तमखां लेटा था। मुझे देखकर बोला: 'आ गया सुखराम? यह तो तेरी बड़ी याद करती थी। बैठ जा।'

मै बन्दगी करके बैठ गया।

प्यारी ने सिर ढक लिया और मुझे विजय से देखा।

रुस्तमखां ने कहा: 'औरत तो तेरी वफादार है। कहती है, सरकार, मैं तो तब रहूंगी, जब मेरा सुखराम भी यहीं रहेगा। मानती ही नहीं। मैंने कहा, अच्छी बात है। पर देख, अब यह तेरी मालकिन है। समझा! नीचे के कोठे मे तू रहेगा। भैंस का ज़िम्मा तुझपर।'

मुझे लगा, मै मुर्दा हो गया हूं! मैं प्यारी का नौकर हूं!!

मैने कहा: 'सरकार! गरीब आदमी हूं। मुझपर इतनी दया की है, यही बहुत है। भाग ने यह औरत मुझे दे दी थी। इतनी खूबसूरत थी कि इसे तुम जैसों के घर जन्म लेना था, जहा आराम पा सके। भगवान ने सुन ली है। ठिकाना लग ही गया है। मुझे हुक्म दें तो चला जाऊं। मै दूसरी गृहस्थी बसा लूगा।'

प्यारी ने होंठ काटे। कहा: 'तू नही जाएगा। समझा!'

'तो क्या मै तेरी चाकरी करूंगा हरामज़ादी!' मैंने गुस्से से कहा।

रुस्तमखां बैठ गया। उसने कहा: 'अब मत कहियो कछु कुत्ते! मार-मारकर खाल उधेड़वा दूगा!'

'उधेड़वा दो सरकार!' मैंने कहा: 'पर जीते-जी मुझसे यह न होगा।'

प्यारी उठी। उसने पास आकर कहा: 'तो मैं यहा न रहूंगी सरकार! अपने कपड़े उतरवा लो। यह मुझे चैन से नहीं रहने देगा। रोज़ आऊंगी चली जाऊंगी। तुम्हारा तो नुकसान ही होगा पर यह मुझे सुखी नहीं देख सकता। यह तो नरक में ही मुझे ... चाहता है तो यही सही

रुस्तमखां चक्कर में पड़ गया। प्यारी ने अपने पुराने कपड़ों को हाथ लगाया। मैंने कहा : 'इन कपड़ों को मत छू प्यारी! तुझे सौगन्ध है मेरी। इन्हें छुए तो तू मेरी ल्हास छुए।'

प्यारी का बढ़ा हुआ हाथ रुक गया। उसकी आंखों में आंसू आ गए। कहा : 'तू चाहता क्या है दईमारे?'

'मैं चाहता हूं···' मैंने कहा : 'तू यहीं रह।'

'और तू नहीं रहेगा?'

'नौकर बनकर नहीं।'

'तो तू यहां सरकार के रहते मेरा खसम बनकर रहेगा? तुझे जरा भी शर्म नहीं! बड़े आदमियों की इज्जत का तुझे विचार ही नहीं। सरकार की इसमें नाक न कट जाएगी?'

रुस्तमखां ने बीड़ी सुलगाई। एक मुझे दी। मैंने भी सुलगा ली और धुआं छोड़कर आंखें मीचकर सोचने लगा। मैंने कहा : 'तू ठीक कहती है। प्यारी! यह नहीं हो सकता। एक म्यान में दो तलवारें एकसाथ नहीं रह सकतीं। जब हम कमीनों में ही जाहिरा यह नहीं हो सकता तो आप तो फिर बड़े आदमी हो। यहां वह कैसे हो सकता है?'

मैंने आंखें खोलीं। रुस्तमखां खुश नजर आया। उसकी शकल पर एक चालाकी उभर आई थी।

मैंने दोनों हाथ फैलाकर कहा : सरकार, आप न्याय करें। बताओ, मैं कैसे किसीको मुंह दिखा सकूंगा! आप ऐसा करो हजूर! मुझे चोरी लगाकर थाने में डाल दो। मैं जेल मे दिन काट लूंगा।'

इस समय रुस्तमखां ने प्यारी की तरफ देखा, जिसका मुंह मेरी बात सुनकर सफेद पड़ गया था। रुस्तमखां ने सिर हिलाकर कहा : 'नहीं, सुखराम, ऐसा कैसे हो सकता है! मैं बेइन्साफी नहीं कर सकता। बेईमानी तो मुझे छूकर नहीं गई। तूने कुछ किया नहीं, तो कैसे थाने मे बन्द कर दूं तुझे।'

प्यारी मुझे देख नहीं रही थी, जैसे जला देना चाहती थी। उसकी आंखों मे अंगारे भभक उठे थे। मैं उसको देख नहीं सकता था। मैंने उस तरफ से आंखें हटा लीं।

'सरकार!' मैंने कहा : 'आप मुझे दो दिन को थाने भेज दो। फिर रहम करके मेरी बोली लगवा दो। रोज हाजिरी दे जाया करूंगा। आपकी भी रह जाएगी, प्यारी की भी रह जाएगी। सरकार, मुझपर से भी बोझ उतर जाएगा।'

प्यारी खुश दिखाई दी। पर उस वक्त हम दोनों को नहीं सूझा कि क्या कर रहे हैं हम। मैं अपने को रुस्तमखां का बेपैसे का गुलाम बना रहा था। प्यारी ऐसे जाल मे फंस रही थी जिससे निकलने का कोई रास्ता नहीं था। अगर प्यारी भागती तो मैं जिन्दगी-भर जेल में सड़ता; पर उस वक्त हममें कोई सूझ नहीं थी।

रुस्तमखां मुस्कराया। उसने सिर हिलाया जैसे मछली फंस गई। उसके भीतर से शायद यह डर मिट गया था कि अब मैं प्यारी को कुछ दिन को उसके यहां बिठाकर फिर चोरी करके भाग निकलूंगा।

उसने कहा : 'अच्छा सुखराम! यह हो सकता है। तुझे दुनिया को दिखाने को पहले मेरी भैंस खोलनी होगी। फिर सब काम हो जाएगा।'

दूसरे दिन ही मैं उसकी भैंस हांक ले गया। गांव के बाहर मुझे गिरफ्तार किया गया। लोगों ने मुझसे हमदर्दी की कि बिचारे की कैसी आफत आई है। औरत

बेवफा निकली और अब जेल की नौबत आ गई। टीडी के अनारचन्द बनिए के मैंने पांव पकड़े। वह कटऊ का घी बेचता था। उसने जाकर मेरी सिफारिश की तो रुस्तमखां ने बोली लगवा दी। मेरा रास्ता खुल गया। लोग मुझपर तरस खाते, मैं मन ही मन उनपर हंसता। वे प्यारी को बेवफा कहते, मैं उससे और भी अच्छा समझता। दुपहर गया, रात तक वहीं रहता। प्यारी मुझे पौरी में बिठाकर अपने हाथ से अच्छे-अच्छे खाने खिलाती। वह खाना इतना अच्छा था कि मैं धीरे-धीरे सुख पाने लगा और भैंस का भी काम कर देता। पर अब मेरी एक भूख बढ़ गई।

देह से प्यारी मुझसे दूर हो चली थी। हमें पहले की-सी आजादी नहीं थी। हो भी नहीं सकती थी। प्यारी इतनी साफ रहती कि मैं उसके सामने अपने को गंदा महसूस करने लगता। जब कभी वह मेरे सीने पर सिर रखती तो मुझे उसके बालों में चमेली के तेल की खुशबू आती।

उसका गजब का निखार था। जितनी वह मुझसे दूर हुई जाती थी, उतना ही मेरा मन उसकी तरफ खिंचता जाता था। एक सबसे बड़ी चीज़ जो मुझे उसमें मिलती, वह थी उसकी शरम। वह अब लजाती थी। उसकी चाल में अब डर नहीं रहा था। हंसती थी तो पहले-सी हा-हा करके नहीं, वह दांत निकालकर हल्की आवाज करती।

उसकी नाक में बुल्लाक लटकने लगा था। मुझे उसे देखकर एक अजीब-सी बात लगती। प्यारी के बदन पर सोना आ गया था। उसकी दमक से वह अब कितनी अच्छी लगती थी। वह पान की पीक से रंगे होंठ और मिस्सी से काले पड़े मसूढ़ों से कितने बड़े घर की-सी औरत लगती थी, यह मैं अब समझ पाया था।

मैं दोपहर तक वहां पहुंच जाता। उस वक्त प्यारी घर में अकेली रहती थी। मैं शाम को चला जाता और अपने ही डेरे में सो रहता। मेरे पास कुछ और करनट आ बसे थे। हम सब घुल-मिल गए थे। ये लोग यहां सिर्फ चोरी करते थे। औरतें पराये मर्दों को फंसाती थीं। इन्हीं में एक कजरी थी। ठीक प्यारी के बराबर थी। उसका आदमी लोहपीटों की तरह काला था। उसे शराब इतनी ज्यादा पीने की आदत थी कि बयान नहीं; तिसपर अफीम भी चुराकर लाता था और शाम को पड़ा सवेरे उठता था। उसे जुए से मतलब था, और पैसे की जरूरत होती तो वह कजरी के सामने हाथ फैलाता। कजरी गोरी तो थी पर उसके गाल कुछ ज्यादा सूजे हुए थे। वह कमर के ऊपर हल्की और नीचे बहुत भारी थी। उसकी आंखें छोटी पर लम्बी थीं। नाक में बुल्लाक पहनती, आंखों में काजर पारती। बदन पर एक ढीली कुर्ती पहनती। उसको चलने में सदा ही ठुमकने की आदत पड़ गई थी। मैंने उसे कभी उदास नहीं देखा। हमेशा हंसती रहती थी।

अब प्यारी के पास जाने की कोशिश करता, तो वह बड़ी गंभीरता से पीछे हट जाती और मुझे अपना शरीर न छूने देती। मुझे धक्का लगता। मैं सोचता, क्या सच-मुच प्यारी अब सिपाही के घर बैठकर मुझे छोटा आदमी समझने लगी है? क्यों वह मेरे पास नहीं आती? अपने हाथ से खाना परोसती, हंसती, पर उसके होंठों पर एक फीकापन रहता, मुस्कराती तो दर्द कोनों पर कांपने लगता। मैं देखता, वह मुझे एकटक बिना पलक झपकाए देखा करती।

पूछती : 'वहीं सोता है?'

मैंने कहा : 'वहां और भी लोग आ गए हैं।'

प्यारी पूछती रही। एक-एक बात पूछ ली। फिर कहा : 'प्यारी के रहते कजरी से नाता न जोड़ना! मैं मर जाऊंगी।'

मैंने कहा 'पर मैं भी तो आदमी हूं तू मुझे अकेले में भी छूने नहीं देती अपने

को। तू सिपाही की हो गई है !'

प्यारी की आंखों में आंसू आ गए। मैं समझा नहीं। उसने उन्हें पोंछ लिया और कहा : 'यह भाग की बात है सुखराम। तू इसे छोड़। मैं किसी की नहीं हूं। तेरी ही हूं—तेरी ही।'

मैं इस बात को समझ नहीं सका। पर बात मेरे भीतर खटक गई। मेरे पड़ौसी करनट खूब मस्त रहते, क्योंकि वे मेरे साथ थे, और रुस्तमखां की दया थी, उनसे कोई कुछ न कहता; बल्कि दरोगाजी को जरूरत पड़ती तो उनमें से किसीको बुला लेते और सिपाहियों के जरिये समझा-बुझाकर बनियों की चोरी करवा देते। माल बंट जाता। गांव बाहर चामड के पीछे जुए का भी एक अड्डा पुलिस ने बनवा दिया था, जिसकी नाल का तीन-चौथाई दरोगाजी के हाथ में जाता था। कहा जाता था, किसी राजा के यहां एक दरोगा खवास था। इस नाई से सरकार खुश हो गए। उन्होंने कहा : 'मांग, क्या मांगना है ?' खवास ने कहा : 'अन्नदाता ! एक हवेली चाहिए। आपके द्वार से कुत्ते भी पेट भर के जाते हैं। फिर मैं तो आपका नमक-सेवक हूं।' राजा ने कहा : 'अच्छी बात है, हवेली बना ले। जा, तू भी पोल में घुस जा।' और उसे दरोगा बना दिया। और वह सचमुच एक साल में बड़ी हवेली का मालिक बन गया। किसानों और कास्तकारों से खूब पैसे ऐंठता था। कितनों ही को उसने फौजदारी की मामूली बातों में थानों में सड़ाया। एक के खून निकल आया, पर उसने दूसरी तरफ के लोगों से रिश्वत लेकर रपट नहीं लिखी। कहा, डाक्टरी मुआइना कराओ। अस्पताल गांव से सात मील था। वह अस्पताल चला। जेठ की चटकती धूप थी। राह में बेहोश हो गया। जब साथ के डाक्टर के पास ले गया तो डाक्टर ने फीस मांगी। वे लोग न दे सके तो उसने लिखा, मामूली चोट लगी है। वह आदमी मर गया। दरोगा की हवेली के आगे का पच्चीस-पच्चीस गज स्थान पत्थर की पट्टियों से पक्का हो गया।

गांव छूटा था तब अधूरा किला दूर हो गया था। इसीला और सौनो का साथ छूटा तो प्यारी का सहारा था। अब प्यारी के बाद घोड़ा और भूरा बस दो पास रह गए थे।

रात हो गई थी। मैं अपने तम्बू में लेटा था। बाहर किसी की पगचाप सुनाई दी। देखा कजरी थी।

'क्या है कजरी ?' मैंने लेटे-लेटे कहा।

'लो, खा लो।' उसने हाथ पर चार मोतीचूर के लड्डू रख दिए।

मैं अब खाने का लालची नहीं था।

'तू क्यों नहीं खाती ?' मैंने पूछा।

'मैं चार खा चुकी हूं।'

'इतने आ कहां से गए ?'

'आज हम बड़े वाले गांव गए थे, वहां गूजरों का कोई त्यौहार था। बंट रहे थे। बैठ गए। मिल ही गए।' उसने स्वर बदलकर कहा : 'क्यों अच्छे हैं न ?' फिर उसने कहा : 'खाए क्यों नहीं ?'

मैंने उसके आदमी के लिए कहा : 'फुर्री को दे दे न !'

'अरे, वह नसे में पड़ा है। मीठा लाएगा तो झगड़ा करेगा। सो गया है। अब तो सवेरे ही उठेगा। उस कम्बख्त का तो नाम भी न ले। तू खा ले।'

'कजरी ! मेरा पेट भर गया है। जगह नहीं है।'

'तुझे मेरी कसम ! तू उठके तो बैठ !' कहकर वह मेरी खाट पर बैठ गई और उसने मुझे पकड़कर बिठाया और मेरे कंधे छूकर उसने मेरे मजबूत सीने पर हाथ फेरा

और फिर कहा : 'तेरे लिए मैं रोज मिठाई लाया करूगी। सफेदी भी करे तो अच्छे मकान पर। क्या टूटे खंडहर का सजाना !' और उसने फिर अपना हाथ मेरे बाजुओ पर रखा और मेरा मांस दबाया। वह उस सख्त मांस को दबा न सकी तो उस पर उगलियां गडा दी और कहने लगी : 'औरत का दुनिया में क्या भरोसा ! तेरी लुगाई इतने पै भी तुझे छोड उस सिपाही के जा बैठी।' और उसने मेरी मोटी गठीली सख्त गर्दन पर उंगलियां फिराईं। मैंने लड्डू चखा। अच्छा था।

मैंने कहा : 'ले, दो तू खा ले।'

'तू ही खा ले सब।'

'अरी, खा भी ले !' मैंने कहा। उसने मेरी ओर मुंह खोल दिया। मैंने लड्डू बढाए। मुझे ध्यान ही नहीं आया। जब मैंने उसके मुह की तरफ हाथ न बढ़ाया तो वह खिसिया गई। उसने मुह मोड लिया। मैंने सोचा, बिचारी खिलाने आई है, इतनी चाहना है तो मुझे इसकी बेइज्जती नही करनी चाहिए। मैंने उसका मुंह मोड़कर एक लड्डू उसके मुंह में धर दिया। मुंह भर गया। वह हंस दी और लड्डू भरे मुंह से उसने कहा : 'है अच्छा ?'

'क्यों नही।' मैंने कहा।

दूसरा लड्डू भी खा चुकी। मै उठने लगा।

'कहां जाते हो ?' उसने कहा।

'पानी पी लू।'

'मैं लाती हूं। मेरे रहते तुम उठोगे ?'

वह उठ भी गई। पानी ले आई। मैंने लोटे में मुंह लगाकर पी लिया। फिर उसने पिया और मै लेटा तो बोली : 'हुक्का भर लाऊ ?'

मैने कहा : 'अरी, मेरे पास बीड़ी है।'

'अच्छा ठहरो, अभी आती हूं।' वह कहकर चली गई। दो मिनट में लौटकर आई तो हाथ में सिगरेट का पाकिट था।

बोली : 'लो, यह पियो।'

एक पैसे की चार वाली सिगरेटें थी।

मैने कहा : 'तू यह सब कहां से ले आती है ?'

'हाट मे मिली थी; मेले मे। पान वाले ने दी थी। चार पैसे दिए थे मैंने पहले महीने।'

'फिर तूने पी नही ?' मैंने पूछा।

'दो पी ली थीं। अकेले फिर सिगरेट पीने में मजा नहीं आया। सो कुर्री से छिपाके रख दी थी। हम-तुम पीएंगे।'

वह मेरा कितना खयाल रख रही थी ! मुझे अचरज हुआ। हम दोनों ने एक-एक सिगरेट सुलगाई।

कजरी ने कहा : 'सिगरेट पीने में खांसी नही आती मुझे। बीड़ी नहीं मिलती।'

'सिगरेट हल्की होती है।' मैने कहा।

मैने जमुहाई ली।

बोली : 'तुझे नींद आ रही है ?'

'नही।' मैने कहा।

'नही क्यो ? तू सो जा। मैं तेरे पांव दबा दूंगी।'

'क्या कहती है कजरी ! कुर्री जानेगा तो ?'

क्या कर लेगा मेरा मदुआ वह ? एक तो कमा के खिलाती हू फिर काहे की

दरबारी सहूंगी उसकी ?'

'मारेगा तुझे ।' मैंने कहा ।

'पिट लूंगी, पीटा जाएगा, मैं भी मारूंगी । पर तू मुझे पिटते देखकर चुप रह जाएगा ?'

मैंने कहा : 'नहीं, तुझे बचाऊंगा ।'

'बस ?' उसने कहा : 'यह नहीं कहा कि छुरी को दांत से धर दूंगा ।'

'मैं डरता था । क्या जाने, तेरा आदमी है, बुरा मान जाती ।'

उसने पलटकर कहा : 'तभी तो तेरी लुगाई छोड़ गई तुझे । तू बोदा है ।'

मैं चोट खा गया और सोचने लगा ।

उसने कहा : 'तो जाने दे । गम क्यों करता है ! चली गई तो चली गई । बेवफा थी । तू दूसरी क्यों नहीं कर लेता ?'

'नहीं कजरी ! वह मुझसे बहुत मुहब्बत करती है ।'

'इसमें क्या शक है !' कजरी ने कहा : 'आप तेल से पांव धोती है, तू बालों में पानी डालता है । वह गद्दों पर सोती है, और तू...' उसने हंसकर कहा : 'यहां सुरा के पास सोता है । दोनों ही तुम दो तरह के कुत्तों के पास सोते हो । यह बाला वफादार है, वह कटखना है ।' उसने स्नेह से मेरे सिर पर हाथ फेरा और अपनी उंगलियों को मेरे बालों में बार-बार उलझाती रही ।

'तुझे उसकी बहुत याद आती है ?' उसने पूछा ।

'बहुत ।' मैंने कहा ।

'अब तू उसे नहीं भूलेगा ?'

'शायद नहीं ।'

उसने एक लम्बी सांस ली ।

'उसे गए कितने दिन हुए ?'

'तीन महीने ।'

'तब से तू अकेला रहता है ?'

'हां ।'

'जाता है वहां तो मिलती है ?"

'हां, रोज ।'

'तभी तुझे उसने बांध रखा है । मैं समझ गई ।' उसने सिर हिलाया । फिर कहा : 'बड़ी जहरीली नागिन है कोई वह । दो घोड़ों पर चढ़ती है सुखराम, तुझपर हुकम चला रही है, हाजरी लगवा दी है सुसरी ने ।'

'गाली न दे उसे कजरी ।' मैंने कहा और बीड़ी निकाली ।

'कसम है...' उसने कहा : 'यह पियो तुम ।'

उसने सिगरेट मेरे सामने धर दी और कहा : 'यह सब तुम्हीं पी लो ।'

'पर तू तो बड़े चाव से अपने लिए लाई थी ?'

'पर अब क्या तुम्हें पिलाने में मुझे चाव नहीं है ?'

'तेरी मरजी ।' मैंने सिगरेट सुलगा ली ।

मेरे मुंह से धुआं निकलते देखकर उसने कहा : 'तुम्हारे दिल से भी ऐसा धुआं निकलता होगा उसके चले जाने से ?'

'क्यों ?' मैंने पूछा ।

'अरे वह कितनी खराब निकली ! तू तो यह समझता होगा कि दुनिया की हर औरत बेवफा होती है

'नहीं, मैं तो ऐसा नहीं सोचता।'

'नहीं सोचता न!' कजरी ने कहा।

'नहीं,' मैंने कहा : 'तू प्यारी को बुरा कहती है पर वह मुझे देखे बिना चैन नहीं लेती। देखने को बुलाती है मुझे।'

'बस, देखकर ही लौटा देती है?'

'हां।'

'देखकर? बस!'

'क्यों, तुझे विश्वास नहीं होता?'

'होता भी हो तो मैं कर नहीं सकती। करना नहीं चाहती।'

'क्यों?'

'फिर तुझे इच्छा नहीं होती? तू भी तो आदमी है!'

मैंने जवाब नहीं दिया। वह कहने लगी : 'कुर्री बुरा है। काला है, गंदा है कमजोर है। उसे छोड़ने की बात तो ठीक है। पर तू गोरा है, ताकतवर है और देखने मे कितना अच्छा लगता है। मैंने ऐसा एक ठाकुर का कुंवर देखा था। देखा था तो ठगी-सी रह गई थी। तुझे भी कोई औरत छोड़ सकती है तो उसका दिल पत्थर है, पत्थर! तूने कहा नहीं?'

'नहीं।' मैंने कहा : 'वह कहती है कि अगर मैं किसी और औरत से सम्बन्ध जोडूंगा तो वह मर जाएगी।'

'वाह!' कजरी ने कहा : 'क्या कहने इस मुहब्बत के! मुझे तो तू ही उल्लू का पट्ठा दिखाई देता है।'

'क्यों?'

'क्योंकि तू इसे मानता है। तेरी जगह मैं होती तो उसके मुंह पर इतने जूते लगाती कि दारी कि बत्तीसी झड़ जाती।'

'क्या कहती है कजरी!' मैंने चौंककर कहा।

'क्यों, क्या गलत कहती हूं?' उसने पूछा।

मैने धीरज से कहा : 'मरद में धीरज होता है, वह सह सकता है। औरत कम-जोर होती है, वह सह नहीं सकती।'

'अरे चल, बड़ा धीरज वाला बनके मेरे सामने बातें बना रहा है!' कजरी ने बायें हाथ को हवा में झटका देकर कहा : 'औरत कमजोर होती है! अरे, औरत का धीरज तू देखेगा? तेरे सात पीढ़ी के मरद पांव धो-धो के पी गए औरत के···समझा! ऐसे ही धीरज के होते तो औरत के जाए न होते। वह दरद चले तो मरद चकरघिन्नी हो जाए। समझा! तू उसका गुलाम है। बना रह। पर मुझसे हां में हां मत मिलवा। मैं नहीं हूं तेरी तरह बोदी कि अपनी उमर यों ही गंवा दूं।'

'तो तू चाहती क्या है कजरी?' मैने कहा।

'तू अभी तक नहीं समझा?' कजरी ने कहा।

'नहीं, तूने कहा ही क्या?'

'तो तुझसे कहना ही बेकार है।' कजरी ने चिढ़कर कहा और बोली : 'तुझे तो उसने कोरा कम्मर बना दिया है सूरे! तुझपे अब कोई रंग नहीं चढ़ेगा। सो तड़प। मैं तो चली।'

पर मैंने उसको दुःख पहुंचाना ठीक नहीं समझा। मैंने कहा : 'बैठ कजरी।'

वह बैठ गई। मैंने कहा : कजरी

क्या है?

'तू कल हाट जाएगी ?'

'चली जाऊंगी। तू भेजेगा ?'

'हां देख, यह ले।' मैंने हाथ बढ़ाकर एक कुल्लड़ उठाया और उसमें से पाच आने निकाले और उसके हाथ पर रखकर कहा : 'तू कल रबड़ी ले आना।'

उसने मेरी तरफ देखकर दांत पीसे और पाच चौका तांबे नाबे के टुकड़े, पूरी कोडी मेरे मुह पर फेंककर मारी। मेरी आंखें मिच गईं। पैसे अंधेरे में बिखर गए। मेरे मुंह पर चोट-सी लगी। मैंने हाथों से मुंह को दबा लिया।

'तू मुझे लड्डुओ के दाम दे रहा है। बेवफा के गुलाम !' उसने फुंकारा, 'तू समझा है कि मैं भी तेरी चहेली की तरह हूं! तू उसके टुकड़ों पै पल के साहूकार हो गया, और मेरी जान को…?'

फिर मेरे हाथो के बीच से हाथ डालकर मेरा मुह सहलाकर कहने लगी, 'लगी तो नही तेरे ?'

'नहीं।' मैंने मुस्कराकर कहा : 'तुझे गुस्सा आ गया ?'

'आएगा नही ? इससे अच्छा तो तू मुझे खूब कूट लेता।'

'तब तू खुश रहती ?' मैने पूछा।

'क्यों नही ? तेरा हाथ तो मेरी देह से लगता !' एक भीगी हुई लम्बी सास लेकर उसने कहा। मुझे अब चाह हो रही थी कि मैं कजरी की उदासी दूर कर दूं। पर प्यारी याद आ जाती थी। वह मेरे लिए इन्तजार करती है। पर वह मुझसे दूर हो गई है; दूर हो गई है। वह अब हममें से नहीं है। वह मुझे अपने-आपको छूने नहीं देती। वह मुझे अपने से अलग बिठाती है। बस खाना खिला देती है, जैसे कोई अपने कुत्ते को भरपेट खाना खिलाकर चाहता है कि वह उसके सामने दुम हिलाया करे। वह मुझे टुकड़े डालकर यह चाहती है कि मैं सानी के लालच में गैया की तरह नीयत थान पर आ जाया करूं, पर मुझे हरिया नही बनने देना चाहती। वह अपनी ही सोचती है। मेरा उसे क्या ध्यान है ?

बाहर भूरा गुर्रा रहा है। फिर चुप हो गया है। हवा फिर भी चल रही है। आसमान मे तारे छा रहे है। सन्नाटा छाया हुआ है। दूर-दूर तक अंधेरा है। यह छोटा-सा डेरा, कजरी और मैं, और चारों तरफ के डेरों मे और सोते हुए लोग।

कजरी ने कहा : 'क्यों सुखराम, एक बात कहूं ?'

मैंने कहा : 'कह तो।'

'बता देगा न ?'

'जरूर।'

'अच्छा बता, मैंने तुझे मारा तो तूने मुझे पलटके क्यों न मारा ?'

'तूने गलत समझकर मारा था कजरी। मेरा मतलब वह न था। मैंने तुझे खुश देखा। वह तेरी खुशी मुझे अच्छी लगी थी। मैंने उसे फिर से देखने के लिए तरकीब सोची थी।'

वह जैसे इसे सह नहीं सकी। उसकी आंखों मे पानी भर आया। उसने कहा 'तू मुझे खुश देखकर खुश होता है ?'

मैं जवाब नहीं दे सका।

उसने आतुरता से कहा : 'मुझे बता दे सुखराम !'

'होता हूं।' मैंने कहा।

'तू बहुत अच्छा आदमी है।' कजरी ने कहा : 'आदमी अच्छे [illegible] औरत मा बनकर कम से कम अपने बच्चे के लिए [illegible] नारी के

पर मरद दुनिया मे बहुत ही कम अच्छे होते है। तू भी अच्छा आदमी है। तभी तो प्यारी के जुलम सहता है। तू बडा भोला है।' कजरी ने आजिजी से पूछा . 'सुखराम . मै तेरे पास आके रोज रात को यहां बैठ जाया करूं ! तुझसे बातें कर जाया करूं ? तुझे बुरा तो नहीं लगेगा ?'

'नहीं,' मैने कहा। मुझे धक्का लगा।

कजरी ने कहा : 'मेरा बुड्ढा बाबा भी बड़ा अच्छा आदमी था। वह मुझे कहानियां सुनाया करता था। तू कहानियां-किस्से सुनाना नही जानता ?'

मुझे गुस्सा आ गया। मैने उसका हाथ पकडकर दबाया। उसने हंसकर कहा 'जोगी है तू —है न ! पर मुहब्बत का मारा जोगी है। मेरे पास एक तोता था, वह भी बडी राम-राम करता था।'

मैं अब अपने को संभाल नही सका। मैंने उसका हाथ मरोड़-सा दिया। तारे ढल चुके थे।

उसने कहा : 'तू चक्कू नही है, दरांत है। फल तुझपै आकर गिरे तब भले ही कट जाए, वैसे अपने-आप चक्कू की तरह तू फल काटना नही जानता।'

'तू बडी चंट है कजरी !' मैंने कहा।

'चंट हूं ! अरे, मुझे तो यह ताज्जुब होता था। ऐसा हो कैसे सकता है ?'

मैने देखा, वह बहुत खुश थी।

उसने कहा : 'अब जाऊं। कुर्री को होश आता होगा।'

'तू डरती है ?'

'डरती है मेरी जूती।' उसने कहा : 'सच कह, न जाऊ ?'

'चली जा। कल आएगी ?'

'पैसे दे दे, रबडी ले आऊंगी कल।'

'अब अंधेरे में पैसे ढूंढेगा कौन ?'

'अच्छा फिकर न कर। मैं लाऊगी तेरे लिए।'

'तू क्या खिलाना चाहती है मुझे ?' मैने पूछा।

'मै क्या चाहती हूं ! दुनिया मे हर औरत मरद के लिए चूल्हा क्यो फूकती है ? खिलाती है, पिलाती है, पालती है। मरद कुत्ता होता है, सुखराम, खिलाने वाले हाथ को चाटता है।'

'चल कुतिया।' मैंने चिढकर कहा।

वह हंसी और खुश-खुश-सी 'कल आऊंगी' कहकर चली गई

9

सुखराम ने कहा था :

प्यारी की हुकूमत अब शुरू हुई। एक रात निरोती बामन के घर में चुपचाप आग लग गई और उसकी औरत को पुलिस ने हिरासत में ले लिया। उसके कोई बच्चा नही होता था। शनीचर का दिन था। आग लगी तो यह कहा गया कि उसने रस्ती को जला देने को आग लगाई थी। कहा जाता था, जो इस तरह शाम शनीचर जगह-जगह आग लगाती है, उसके बच्चा हो जाता है। पर यह किसीको भी पुलिस ने कहने नहीं दिया कि टोटका दूसरों के घर पर ही उतरता है, अपने घर पर नही।

दूसरे हफ्ते खबर मिली कि दो ठाकुरों को हिरासत में ले लिया गया है उन्होंने लगान नही दिया था पता चला सरकार ने उनकी जमीन नीलाम पर चढ़ा दी और

वे सड़क के भिखारी हो गए।

तहसीलदार इकबाल बहादुर का इकबाल दूर-दूर तक फैलने लगा। जब मैं प्यारी के सामने बैठा तो वह खाट पर बैठी थी। वह पान खा रही थी।

उसने कहा : 'तूने कुछ सुना ?'

'क्या ?' मैने तलाश किया।

'निरोती के घर मे आग लग गई और ठाकुरों को सड़क का भिखारी बना दिया।' वह डरावनी हंसी हसी। उसमें बड़ा घमण्ड था, बड़ी फुनगन थी, जिससे मैं जलने लगा।

मैने कहा : 'प्यारी ! वे बाल-बच्चों वाले लोग है। अब क्या करेंगे ? उनकी औरतें क्या करेगी ?'

'जो मैं करती थी। दुनिया मे एक नहीं, कई सिपाही है। हुकुम उसका ही चलता है मेरे राजा, जो गद्दी पर बैठता है।'

मुझे कुछ अजीब-सा लगा। उसमें कितना जहर भर गया था ! उसने मुझसे कहा : 'तुझे तो किसी से बदला नहीं लेना है ? बता दे मुझे। उससे भी बराबर करा दूगी।'

'लेना है।' मैंने कहा।

'बता, कौन है ?'

'बता दूगा, पर बदला ले सकेगी ?'

'तू कह तो !'

'मेरे दो दुश्मन है। एक वह बड़ा जमींदार, जिसने मुझे पिटवाया था, दूसरा वह दरोगा जिसका तबादला हो गया, जिसके पास तू गई थी, जब उसने मुझे थाने मे बन्द कर दिया था।'

प्यारी का मुह स्याह पड़ गया। उसने कहा : 'तू मुझे चिढ़ा रहा है ?'

मैंने कहा : 'चिढ़ा नहीं रहा हू। बता रहा हू कि तू अभी हाथी तो क्या, घोड़े पर भी नहीं बैठी, गधे से खच्चर पै चढ़के ही तुझे इतना घमण्ड है ? जो मूरख हैं उन पर तू हाथ उठा सकती है ? बोल ! कल तेरा यह शेर सनसनाता पीपल के पेड़ से टंगा दिखाई देगा। चींटी मसल के पहाड़ की तरफ मत देख। प्यारी ! तू अंधी हुई जा रही है।'

प्यारी ने सिर झुका लिया। मैने कहा : 'जुलम के पांव कच्चे होते है। जिस-जिसने अत्याचार किए हैं, वे कितने दिन रहे है ? लोग कहते है, रावन मारा गया। उसने तीनों लोक जीत लिए थे। हिरनाकुस के सामने भगवान औतार लेकर आए थे। कोई अमर नहीं हो जाता। फिर तू काहे को पाप मोल ले रही है ?'

प्यारी ने आसू पोंछे। कहा : 'तो मैं यहां तुमसे पूछ ही के तो आई थी।'

'मैंने क्या जाना था, तू यह सब करेगी !'

'मैंने तो तुझसे आने के पहले ही कह दिया था।'

'मैं समझा था, तू इज्जत चाहती है ''गदेलों पै सोना चाहती है।'

'गदेले मुझे हराम है। पान खाती हूं तो पीक न थूककर लहू उगलूं, जो मैंने झूठ कहा हो। मेरा गदेला तो तू था। था नहीं, तू ही रहेगा भी।'

'फिर क्या था जो तुझे यहां खींच लाया ?'

'तेरा आराम।'

'चल, चल !' मैंने कहा-- 'मुझे ही सींग दिखाए और मेरी ही गैया।'

वह मेरी ओर अपलक होकर देखती रही फिर उसने धीमे से कहा आज

मुझे तेरा सुर बदला हुआ लगता है। बता सकता है, क्यों ?'

'तू कितनी बदल गई है, यह भी तैंने सोचा ?'

'मैं बदल गई हूं ! भला कह तो, मैं क्या बदल गई हूं ?'

'तू कहती है, तू मेरी है।'

'हूं।'

'पर कभी मुझे छूने भी नही देती अपने को।'

'मेरा दिल तो तेरा है।'

'तू दिल ही तो नहीं है, मेरी लुगाई भी तो है !'

वह जवाब न दे सकी। मैंने गुस्से से कहा : 'उसके लिए अब तू बड़े घरों की इज्जत रखने लगी है। रुस्तमखां जो है, वह सिपाही है। उसके साथ हुकूमत है। पर मेरे हाथ भी कटार है प्यारी ! जानती है। ऐसे दस रुस्तमखां की बोटी-बोटी करके चील-कौओं को खिला सकता हूं। तू समझती है कि मैं तेरा नौकर हूं। तू मालकिन की हैसियत पा गई है। मैं कभी तेरा यह दुरंगा खेल नहीं सह सकता। मैं तुझे सूरत नहीं दिखाऊंगा। कजरी ठीक कहती थी···'

उसने काटकर पूछा : 'क्या कहती थी वह ?'

'वह यही कहती थी, तू पत्थर-दिल है जो मुझे छोड़ गई है।'

'उस दईमारी का मन आ गया होगा तुझपै। देखा, गोरा-चिट्टा है।, ताकतवर है। और चाहिए ही क्या ! और वह कहती थी—यही न कि मैं तेरे साथ हो लूगी ?'

मैं अचकचा गया। मैंने यह कहा : 'यह तुझसे किसने कहा ?'

वह मुस्कराई। कहा : मैं तेरी रग-रग जानती हूं बलमा ! तू मुझसे उड़ कैसे सकेगा ? तेरे पर तो मैंने पहले ही कतर दिए है। तू नहीं मानेगा तो मैं तुझे जेल में डलवा दूंगी। मैं यह नहीं सह सकती कि तुझपै किसी और औरत का साया पड़े।'

मैंने तड़पकर कहा : 'चाहे मैं अकेला तड़पा करू ? आखिर मुझे यह महसूस कैसे हो कि तू मेरी लुगाई है ? तू पत्थर है। तू डायन है। तू दूसरों के घरों में आग लगवा रही है। मैं तेरा खून करवा दूंगा।'

उसमें कोई परेशानी दिखाई नहीं दी। उसने धीरे से कहा 'कजरी के साथ तू रोज सोता है। फिर भी तेरी आग नहीं बुझती है ?'

मैं हैरान रह गया।

पूछा : 'तू यह कैसे जानती है ?'

'जानती हूं, तूने मुझसे दगा की है।'

'कैसे ?'

'मैंने जो किया तुझसे कहकर, तूने जो किया मुझसे छिपाकर।'

मैं ठिठका-सा रह गया। मैंने कहा : 'पर मेरा मन उससे लगता नहीं। वह मुझे बहुत चाहती है, पर मेरी इच्छा नहीं बुझती। तू मुझसे दूर हो गई; मुझे यही अखरता है। मैं नहीं समझता था कि तू ऐसी बदल जाएगी। कजरी कहती थी कि औरत की चाल औरत ही समझती है। तू वैसे क्या यहां आ-जा नहीं सकती थी ? तू आके यहां बसी है क्योंकि तुझे सिपाही ने मोह लिया था। उस पर आंच न आए, इसलिए तू मुझे यों बहकाकर आई है, ताकि मैं बदला न ले सकूं···'

प्यारी सुनती रही, सुनती रही। अचानक वह चिल्ला उठी : 'चुप रह, नहीं तो अच्छा नहीं होगा। मैं तेरे सारे नटों के डेरों में आग लगवा दूंगी। मैं तेरी कजरी को जूतों से पिटवाऊंगी। मैं तुझे बाजार में घिसटवाऊंगी।'

मैं अचरज से देखता रह गया प्यारी शेरनी की तरह मुझे घूर रही थी

उसने कांपते स्वर में कहा : 'कजरी ! मै तेरी कजरी को तेरे हाथ [illegible] लूंगी। ढाढ़ें मारकर उसकी याद मे रोता रहेगा, बंधा रहेगा। [illegible] आएगी, और जब तू तड़पेगा तब मै हसूंगी, क्योंकि तू मेरे [illegible] है। तूने मे भरोसा नही किया। तूने मेरी चाहत का भरोसा नहीं किया। [illegible] तू समझा था। अब तू किसी और को दिल देकर मेरे पास आता है ?'

उसकी आखों में आंसू आ गए। वह रोने लगी। मै [illegible] था ! मै उसके पास चला गया। मैंने उसका मुंह अपने हाथों मे उठाया। पर उसने [illegible] कारकर कहा : 'मुझे छुए मत ! मुझे छुए मत !'

मुझे झटका लगा। मैं उठ खड़ा हुआ। द्वार की ओर [illegible], पर वह दौड़कर पहले ही वहां आ खड़ी हुई। उसने हाथ फैला लिए और कहा : '[illegible] रहा है ?'

मैं नहीं बोला।

'चला जा !' उसने कहा : 'मेरी लहास पर से [illegible] चला जा ! तू जा रहा है तो मै भी आज अपने कलेजे मे कटार भोंक लूंगी।'

मै फिर भी खड़ा रहा।

'तूने सुना नही, मै क्या कह रही हूं !'

'मै सुनना नही चाहता।'

उसने मुझे घायल आंखों से देखा।

'अच्छा !' उसने कहा : 'अब तुझे मुझसे [illegible] घिन हो गई है ?'

'चरित्तर न दिखा।' मैने बदला चुकाया : 'मुझे नहीं, तुझे मुझसे घिन हो गई है। तू मुझे छूने मे भी नफरत करती है।'

'करती हू।' उसने कहा : 'करती हूं।'

'प्यारी !' मैने पुकारकर पूछा।

'करती हू।' उसने मुंह फेरकर कहा : 'मै तुझसे नहीं, अपने आपसे घिन करती हूं। दर्द मुझे मारे डालता है। मैं तड़पा करती हूं। तुझे बताना नहीं [illegible] थी कि तुझे दुःख होगा। पर तू नही मानता। तेरे भले के लिए तुझसे दूर [illegible] थी। मै तुझे ही नहीं तेरी इस सुन्दर देही को भी प्यार करती हूं। मेरा तो [illegible] हो जाएगा। पर मैं तुझे बिगड़ते नही देख सकती। पर तू मुझपर भरोसा नहीं करता [illegible] जा, मेरी ही गलती है। अगर मै तुझे रोक भी लूंगी तो भी [illegible] आ सकती है ? जा, तू कजरी के साथ ही बस, और यहां से कहीं दूर [illegible] कि फिर तू मुझे ही भूल जाए, क्योंकि मै अब [illegible] नहीं जी सकूंगी।'

उसे चक्कर-सा आ गया। मैने उसे पकड़कर पलंग पर [illegible] दिया। पानी के छींटे दिए। वह होश मे आई।

मैने कांपते स्वर मे कहा : 'प्यारी !'

'हां, मेरे सुखराम !' प्यारी ने कहा : 'मेरा [illegible] काम करेगा ?'

'क्या ? तू कहेगी और मै मना करूंगा ?' मेरी आवाज में रोना भरा हुआ था [illegible] दिल धक्-धक् कर रहा था। यह कैसी अजीब बात थी ! प्यारी ने कहा : '[illegible] [illegible] तो नही कर देगा ?'

'तू एक बार कहके तो देख !' मैने हिम्मत दिखाई।

'एक बार मुझे अपनी कजरी दिखा देगा ?'

मै चिल्लाया : 'प्यारी !'

चिल्लाए मत [illegible] उसने उसी धीरज से [illegible] डर नही मैं उसे संग नहीं [illegible] मैं उससे कुछ नहीं कहूंगी

मैने सिर झुका लिया। कुछ देर सन्नाटा रहा। मैंने कहा : 'नही प्यारी ! मैं तुझे छोड़कर नही जाऊंगा। तू मेरा भरोसा कर। जो हो गया सो हो गया। मैं कजरी की तरफ मुड़कर भी नही देखूगा।' और मैंने धीरे-धीरे कहा : 'चल, हम और तू यहां से भाग चलें। हम इस रियासत मे नहीं रहेगे। गवरमण्ट में चले जाएंगे, वहां अंगरेजो का राज है। वहां कोई नही पकड़ सकेगा हमे।'

'क्यों ?' उसने कहा : 'वहां क्या सिपाही नहीं हैं ? पुलिस नहीं है ?

मेरी इच्छा हुई कि रो पड़ूं, और सचमुच मेरी आखों में आंसू आ गए। प्यारी ने कहा : 'ये आसू मजबूरी के है या प्यार के, सुखराम-? ये किस के हैं : तेरे या मेरे ?'

'तेरे है प्यारी।' मैंने उसका हाथ पकड़कर कहा।

'तू मरद होकर रोता है बावरे !' उसने मेरे सिर पर हाथ फेरकर कहा : 'तू ही हिम्मत हार जाएगा तो फिर मैं किसका सहारा लूंगी ? मैं तो औरत जात ठहरी। मेरी भला हिम्मत ही कितनी !'

मेरा मन घुमड़ आया था। आज बहुत दिन में वह फिर मेरे पास आ गई थी। आज हम दोनों खेतों के बीच की डौर ढह गई थी और हम फिर एक हो गए थे। आज डागर टूट गई थी और खेतों मे ढाने से ढेर-ढेर पानी बहकर इकट्ठा हो रहा था। आज मेरा और उसका प्यार उस गेहूं की तरह से निकल आया था, जो बैलो के खुरों से दाय मे चिर-चिरकर ऊपर की जाली फाड़कर निकल आता है। अभी तक मैं बांस पर नाच रहा था और जान के खतरे में झूल रहा था, पर अब मैं उसके पास धरती पर उतर आया था, जहा कोई सांसत और जोखम नहीं दिखाई देती थी। आज के बूकरा के बर-साने पर तूरा अलग, गेहूं अलग हो गया था।

उसकी आंखों मे उदासी दीख रही थी। और फिर उनमें एक प्यार था, प्यार जिसमें एक आस थी। वह मुझे इतनी भली लग रही थी।

'तू मुझे बदली समझता है ?' उसने पूछा।

मैंने उसको देखा। वह मुस्काई। फिर उदास हो गई।

'बोलता नही ?' उसने फिर कहा।

'मैं कह नही सकता।'

'क्यों ?'

'मेरी कुछ समझ में ही नहीं आता।'

'क्यों, अब भी मुझे नही समझता ?'

मैंने देखा, उसको बहुत दुख था। उसने उठकर बैठते हुए कहा : 'सुखराम !'

फिर वह चुपचाप कुछ सोचती रही। फिर कहा : तू जानता है, कसूर किसका है ?'

मैंने जवाब नहीं दिया।

'मेरा, मेरा है। जानती हूं। तू क्या समझेगा भला !' उसने कहा।

मुझे कजरी की याद हो आई जिसने कहा था कि मैं बोदा हूं। मैं अब भी तय नही कर सका था कि वह मेरा भला चाहती है या उसकी कोई चाल है।

'कजरी को ले आएगा न ?' उसने पूछा।

मैंने कहा : 'तू उसे पिटवाएगी तो नहीं ?'

'तू कैसा पास रहेगा ? जान पर न खेल जाया जाएगा तुझसे, जो मुझसे पूछता नामरद !' उसने धिक्कारकर कहा।

मेरे मन पर चोट पड़ी। मुझे लगा, वह मुझपर ताना कस रही है। कहीं मेरे इसी पोचपन की वजह से तो वह मुझे छोड नहीं आई है ? मुझे लगा यह सब मेरे मारे

। मैंने उसका हाथ पकड़ लिया और खड़ा हो गया। वह मेरी तरफ देखने लगी। उसे ताज्जुब हुआ। मैंने कहा : 'चल मेरे साथ।'

'कहाँ ?'

'जहाँ मैं कहूँ।'

वह खुश थी। कहा : 'जो न चलूँ तो ?'

'क्या कहा ?' मेरी आवाज उठी और मैंने एक चांटा दिया। वह उस चाटे के जोर से भहराई-सी झूम गई। 'फिर पूछेगी ?' मैंने कहा।

वह बोली : 'मरद तो यही होता है। तारे दिन में दिखाई दे गए। मजा आ गया।'

'और थोड़ा-सा मजा चखा दूं ?' मैंने पूछा।

'अब रहने दे।' उसने कहा, 'छोड़ तो सही।'

'अब नहीं छोड़ूंगा। चल मेरे साथ। तू और कजरी दोनों संग रहोगी।'

'तेरे मुंह में आग लगा दूं कढ़ीखाए!' उसने गुस्से में कहा : 'मेरे रहते कजरी! कौन है वह हरामजादी!'

'चुप रह!' मैंने कहा : 'बोलेगी तो हलक में हाथ डालके जबान खींच लूंगा! बड़ी आई सिपाई की रखैल! समझी रहियो। अब तक चुप था, तभी तक चुप था, मैं अपनी पर उतर आया तो कोई भी मुझे डर नहीं है, समझी! तू रहेगी कजरी के पास।'

'मेरी जूती रहेगी।' उसने हाथ से एक गन्दा इशारा किया।

'नहीं चलेगी ?'

'नहीं।'

'नहीं ?'

'नहीं।'

मेरे हाथ उठे और दायें-बायें उसे चांटे लगाए। उसने सिर पकड़ लिया और बोली : 'माफ कर मालिक! चलूंगी।'

मैंने हाथ रोक लिया। वह बोली : 'अरे, तू इन दिनों कैसे इतना मरद हो गया! मैं तुझे इतने दिन में आदमी न बना सकी, कजरी ने तुझे इतनी जल्दी ... ठाकुर से नट बना दिया? मुझे तो लगता है, उसने तुझ पर जादू कर दिया है। मैं चलूंगी। वह रंडी मुझे सौत बनाकर रखेगी कि बांदी!'

'वह रंडी है, तू कौन है? तू हजार मरद करती है, मैं दो लुगाई नहीं रख सकता?' मैंने ताव से पूछा।

'नहीं, तू झूठ कहता है। मैंने एक किया, मरद तू ही है। बाकी पैसा कमाने के लिए थे। उनको मैंने दिल नहीं दिया। पर तूने कजरी को दिल दे दिया है। मन नहीं बंटता ... है मेरे राजा, मन नहीं बंट सकता।'

वह सच कहती थी। मैं बैठ गया। वह अब खाट पर पांव फैलाकर रानी की तरह एक घुटना मोड़कर उसको दोनों हथेलियों में बांधकर बैठ गई। तभी बाहर रुस्तम खां ने खखारा। उस समय मुझे लगा, मैं डर गया हूं। मुझ में वह हिम्मत नहीं रही है, मैं मन ही मन कांप गया हूं। और तब मुझे उससे नफरत बढ़ी और मेरे भीतर यह खयाल पैदा हुआ कि मैं सामने से इस रुस्तमखां का सामना नहीं कर सकता। यह राजा का आदमी है। पर मैं पीछे से उसकी पसलियों में, कटार उतारकर उसे मार सकता हूं।

प्यारी ने कहा : 'अब तू जा। कल कजरी को ले आएगा न! बोल!'

मैंने कहा कजरी तेरी तरह हुकूमत की प्यासी नहीं है। जो मैं कहूंगा

करेगी। कल जरूर ले आऊंगा। वह मुझे चाहती है।'

'तभी तक चाहती है जब तक तू रात में उसके पास रहता है। मेरी तरह रहती तो चाह लेती ?'

'क्यों नहीं ?' मैंने कहा : 'उसे भी एक सिपाही के बिठाके देखूंगा। वह भी तेरी जैसी जालिम बनती है या नहीं।'

कहकर मैंने जवाब का इन्तजार नहीं किया। नीचे उतरकर भैंस की सानी करने लगा। प्यारी नीचे आ गई। हुक्का भरकर रुस्तमखां के सामने रखा। रुस्तमखां ने पुकारा : 'सुखराम !'

'हुजूर !' मैंने बंदगी की।

'बैठ जा।' उसने हुक्के की निगाली मुंह में लगाकर कहा। मैं बैठ गया। वह कुछ देर हुक्का गुड़गुड़ाता रहा, फिर धुआं मुंह से निकाला और कहा : 'एक काम कर सकेगा ?'

'क्या सरकार ?'

'तू कुछ दवा-दारू भी जानता है ?'

'सरकार जानता-वानता क्या, ऐसे ही थोड़ा-बहुत कर लेता हूं।'

'इधर आके यह जख्म तो देख !'

उसके पास जाकर मैंने देखा। पिंडली का जख्म था।

'क्या है ?' उसने पूछा।

'सरकार !' मेरे मुंह से निकला और मैंने प्यारी की तरफ देखा। प्यारी ने मुंह छिपा लिया।

'हां, हां।' रुस्तमखां ने कहा : 'उसे भी हो गई है।'

मुझे लगा, मैं पागल हो जाऊंगा। मेरी फूल-सी नाजुक कली को यह कीड़ा लग गया ! मैंने दोनों हाथों से सिर पीट लिया। रुस्तमखां मेरी तरफ ताज्जुब से देखता रहा।

'क्या हुआ सुखराम ?'

'तुम !' मैंने कहा : 'तुमने यह क्या किया रुस्तमखां ?'

मुझे खुद ताज्जुब हुआ कि मैं इतना निडर होकर उसका नाम किस तरह ले गया। पर मैं कहता गया : 'अगर तुम्हें यह सब था तो तुमने मेरी इस चांदनी से भी साफ, मोम से भी नरम औरत को हाथ कैसे लगाया ?'

'कौन जानता है, यह सब इसीकी देन न हो।' उसने कहा।

मैंने कहा : 'अबके कहा सो कहा, जो अब फिर कहा तो तेरे रुस्तम और खां को अलग-अलग कर दूंगा। समझा !'

मैं उठकर खड़ा हो गया। रुस्तमखां को डर लगा। उसने कहा : 'बैठ, बैठ ! सुखराम ! जो हुआ सो हुआ। अब इसका कोई इलाज है ?'

पर मेरा दिल रोने लगा था। मैंने प्यारी के पांव पकड़ लिये और कहा : 'तू मानुष नहीं है। तू देवी है। तू मेरी देवी है।'

वह रो दी। खुशी से रो दी।

वह मेरे लिए, मुझसे दूर रहती थी। वह मुझे बचाना चाहती थी। वह कितनी अच्छी थी, यह मुझे अब मालूम हुआ था। मैं कहना चाहकर भी कह नहीं सकता था। रुस्तमखां ताज्जुब से देख रहा था। मैंने जब आंसू पोंछे, तब भी मेरा दिल अपने भीतर ही भीतर पिघला जा रहा था।

ने घायल की तरह कहा सुखराम ! इसका इलाज कर दे तू प्यारी

को वापस ले जा। बीमारी ने मुझे बहुत तंग कर रखा है। अगर यह जाहिर हो गया तो मेरी नौकरी चली जायेगी। मै राह का भिखारी हो जाऊंगा। मैने लोगों पर बहुत जुल्म किए है। वे मुझसे चुन-चुनकर बदला लेंगे। पर तुझे मुझे बचाना ही होगा। यह सब मैंने तेरी प्यारी के लिए किया है। मैने इसीके लिए ठाकुरों मे दुश्मनी मोल ली है।'

और वह चुप हो गया। तो यह भी प्यारी के लिए यह सब कर रहा है !

'बहुत अच्छा।' मैने कहा 'मै इलाज कर दूंगा। पर तुमको मेरी बतलाई राह पर चलना होगा। खान-पान पर रोक लगानी होगी। अलोनी चने की रोटी खानी होगी। घी-वी कुछ नही। मै एक रसकपूर का नुस्खा जानता हूं। पर अलग रहना होगा।'

'मैं सब करूंगा।' उसने घिघियाकर कहा : 'पर इससे मुझे मुहब्बत हो गई है।'

मुहब्बत ! रुस्तमखां को प्यारी से मुहब्बत ! ! तो इस जादूगरनी ने इस बेमुरव्वत बेईमान को भी अपना कुत्ता बना लिया है ! मुझे उसकी ताकत पर अचरज हुआ।

मैने मंजूर कर लिया कि इलाज करूंगा। जब बाहर आया तो प्यारी ने कहा : कजरी को ले आना कल।'

मैंने सिर हिलाकर मंजूरी दी।

'वचन देके जा।'

'देता हूं।'

'और जो वह न आई तो ?'

'खेंचकर तेरे पांव पर ला पटकूंगा।'

'यह मैं नही चाहती।'

'तो ?' मैंने पूछा।

'वह मेरी दुसमन हो जायेगी।'

मैं सोच मे पड़ गया।

उसने कहा : 'प्यार से ले अइयो।'

'कोशिश करूंगा।'

'सुन तो · ' उसने रोका।

'क्या है ?'

'अब मुझ पर गुस्सा तो नही है ?'

'नही ! मैं तुझे दूर होते देखकर कुछ और समझता था। मैं खुद भूल गया था।'

उसने कहा : 'तूने यह नहीं सोचा कि मैं तुझे नहीं, तेरे तन को भी चाहती हूं। तू तो तेरा तन ही है न ! फिर उससे दूर रहने को अपना मन कितना न मारना पड़ता था !'

मेरा मन फिर भर आया।

'मैं अच्छी हो जाऊंगी ?'

'हो जाएगी जरूर। फिर मेरे साथ चली चलेगी न ?'

'जरूर, चली चलूंगी। तू कहेगा तो कजरी की बांदी बनकर रह लूंगी। उसने तब तुझे सुख दिया है जब मैं न दे सकी।'

उसके दिल मे कितना फैलाव था, यह मुझे महसूस हुआ।

'एक बार मै फिर से तेरी होना चाहती हूं, बलमा।'

पर यह तुझ छोड देगा ?

तू कल सरत रखना कि दवा तभी करूगा सड रहा है चुपचाप मान

इस विचार से मुझे बहुत संतोष मिला। प्यारी मुझे फिर मिल जाएगी। मैंने उसे देखा। वह एकटक भरी आंखों से मुझे देख रही थी। ऐसा लगता था, वह आंखों से बोल रही है। कितनी चमक रही थी वे आंखें!

धूपो चमारिन, जो भीतर घुसी आ रही थी, उसने देखा तो औरत औरत को झट से पकड़ गई। देखकर मुस्करा दी। प्यारी का ध्यान न गया। मैं समझ गया। चला आया।

10

सुखराम ने कहा था :

जिस वक्त मैं डेरे पर पहुंचा—नाच हो रहा था। कुर्री शराब के नशे में झूम रहा था और गोली शराब में धुत्त उसके साथ थी। कुर्री कजरी से कह रहा था : 'निकल जा, मेरे पास मत आ। गोली मेरी है। तू मेरी कोई नहीं।'

कजरी हंस रही थी। उसने कहा : 'गोली कानी है।'

'होने दे, तुझे क्या?' उसने कहा : 'आज से तेरा-मेरा रिश्ता-नाता गया। गोली शराब पीती है, तू मनहूस है। तू क्या जाने!'

कजरी हंसती रही।

एक ने कहा : 'क्यों री, तुझे गम नहीं?'

कजरी ने कहा : 'बंदर से पीछा छूटा। हंसू कि रोऊं?'

कुर्री ने कहा : 'साली बंदरिया है।'

कजरी फिर हंस दी।

एक ने पूछा : 'अब तू क्या करेगी?'

कजरी ने कहा : 'मुझे तो ऐसा मिलेगा, जैसा तुममें से किसीके पास नहीं है।'

'भला कौन है वह?'

'सुखराम!'

किसी ने कहा : 'वह रहा।'

सबने मुझे घेर लिया। कुर्री ने कहा, 'यह भी गधा है। वह भी गधी है। कर दो दोनों का ब्याह। मेरा गोली से कर दो।'

गीत शुरू हो गए। नटों का बुड्ढा पुरोहित आया। उसने हम लोगों का ब्याह कर दिया। गोश्त की गंध व्याप गई। नाच चलते रहे। शराब कुल्हड़ों में उंडेली जाने लगी। चुहल हुई।

रात के ग्यारह बजे थे। कजरी मेरे डेरे पर आ गई। मैं सोच रहा था—यह क्या हुआ? कजरी तो मेरी हो गई। आज उसने बालों में से निकालकर रेशमी चोली पहनी था। वह बड़ी अच्छी लग रही थी। सिर के तेल में महा गया था। वह कुछ

'चल, रहने दे।' उसने कहा।

'सच कहता हूं।'

वह हिली नहीं। कहा : 'क्या कहती थी ?'

'वही, कहती थी, कजरी को बसा ले।'

'अच्छा ही हुआ। सो अब वह वहीं रम गई ?

'नहीं, वह लौट आएगी।'

कजरी पै पहाड़ फटा : 'कहां ?'

'तेरे पास।'

कजरी रोने लगी।

'क्यों, रोती क्यों है ?'

'रोऊं नहीं ? इतने दिन में मन की चाह पूरी हुई, साथ ही आग भी लग गई।'

'पर वह तो तेरी बांदी बनकर रहने को तैयार है।'

कजरी ने आंखें पोंछ लीं। मैं पास बैठ गया।

कजरी ने कहा : 'यह नहीं हो सकता।'

'क्यों ?'

'वह बड़ी चालाक औरत है।'

'क्यों ?'

'क्यों ही क्यों पूछे जाएगा कि इस मगज से भी काम लेगा !'

'तू ज्यादा समझदार बनती है तो समझती क्यों नहीं ?'

'वह जान गई कि तू मुझे चाहता है, सो कहीं उसे छोड़ न दे, इसलिए उसने मान लिया।'

'मान तो लिया न !'

'पर वह अच्छी बनकर फिर तुझे लुभाएगी। मैं थोड़े ही दिनों में बुरी बना दी जाऊंगी और तुझे मुससे घिन हो जाएगी। रोज मुझसे तेरी गैरहाजिरी में लड़ेगी। मेरी गैरहाजिरी मे तेरी भली बनकर तेरे कान भरेगी। तू कच्ची मत का आदमी, तेरी नाव आंधी और पानी दोनों के वार कैसे सहेगी ? थोड़े दिन में ही वह मुझे पिटवाने लगेगी।'

'अरी, तू तो ऐसे कहती है, जैसे मेरी तुझसे प्रीत नहीं।'

मैंने उसे पास खींच लिया। उसने कहा : 'सुखराम ! कभी भी सुख नहीं मिलता. गरीबों को सुख नहीं मिलता : यह झूठ है। औरत को कभी चैन नहीं मिलता, क्योंकि औरत ही औरत की जड़ काटती है।'

'तू तो बावरी है।' मैंने कहा।

बाहर भूरा की हल्की गुरगुराहट सुनाई दी। फिर कुछ नहीं।

कजरी ने कहा : 'आज हम एक हुए हैं।'

मैंने कहा : 'प्यारी बड़ी अच्छी है। वह मुझे बहुत चाहती है। उसे बीमारी हो गई है सिपाही से। उसने मुझे बचा लिया।'

'समझा,' कजरी अब ने कहा : 'कि क्यों वह मेरी बांदी बनकर रहना चाहती है। अगर वह यह न कहे तो तू उसे छोड़ न देगा ?' वह हंसी।

'मैं उसका इलाज करूंगा। मैं इलाजी भी हूं, कजरी।'

'तब तो साफ ही हो गई ! उसे तुझसे इलाज भी तो करवाना है।'

कजरी की बात से मेरा मन कांप उठा। उसने मेरे माथे पर झूलते बालों को

कहा समझा या नहीं ? औरत की चाल को औरत ही पकड़ सकती है

सुखराम ! तू नहीं समझ सकता।'

मैं सोच मे पड़ गया।

सुखराम चुप हो गया था। मैं सोचने लगा।

सुखराम की उस उलझन की घड़ियां निस्सदेह कठिन थी। मै कल्पना कर कर रहा हूं कि उस समय वह घात-प्रतिघातों में किस प्रकार व्याकुल हो गया होगा। एक ओर वह त्यागमयी स्त्री थी, दूसरी ओर यह आसक्ति-भरी नारी थी, जिसने एक के समस्त गुणों को क्षण-भर मे ही अवगुण कहकर प्रमाणित कर दिया था। किन्तु आसक्ति किसमें नही थी ? जिस प्रकार एक ही फानूस के भीतर भिन्न प्रकार के रग दिखाई देते है, इस जीवन में एक ही समय भिन्न कोणों से आलोक को ग्रहण करने से भिन्न प्रकार की सृष्टि की जाती है ! और वह ममता का उज्ज्वल रूप अब फिर अपनी परिसीमाओं में बंद हो गया था। उस समय रात थी। अंधकार था। सुखराम के हृदय मे अशान्ति थी जैसे बहुत ऊंचे कगार की जड़ में बार-बार पानी आकर टकरा रहा हो, बिखर जाता हो, फिर टकराता हो, फिर बिखर जाता हो। वह अपनी अशिक्षित अवस्था मे अपने मन का विश्लेषण नहीं कर सकता। उसकी आंखों मे चिन्ता अपने उफान को जला चुकी है, उसकी आर्द्रता किनारे की सूखी पपड़ियों में आकर केन्द्रित हो गई है। वह उद्गारों की असीम उत्तेजना से काँपकर फिर चुप रह गया है जैसे विशाल पर्वत पर वृक्षों ने झकझोर लेकर अन्तिम अवसाद मे मौन ग्रहण कर लिया हो।

कजरी आज यौवन की अबाध उच्छृंखलता लेकर आई थी। परन्तु उसका वह खौलता पानी बर्फ की तरह जम गया है। अब वह भाप बनकर उड़ नहीं सकती, अपने ढक्कन को अपने धक्के से उड़ा नहीं सकती, अब वह ऐसा ताप चाहती है जो धीरे-धीरे उसे पिघलाकर बहा दे। और सुखराम को प्यारी की स्मृति हो आती है। वह प्रतीक्षा कर रही है। वह कमान से छूटे हुए तीर की तरह है जो किसी भी निशाने पर जमा नही, परन्तु हवा मे घूमता रहा, उसकी तेज़ी से उसीमें आग लग गई। सुखराम उस आग को बुझाकर उस तीर को फिर तरकस मे रख लेना चाहता है, पर अब तरकस के बाकी तीर उसे नही चाहते। क्यों ? अपने लिए ? या इसलिए कि यह तीर अब हार हार चुका है, उसने लक्ष्यवेध नही किया है ?

सुखराम मेरी भाषा को नहीं समझता। वह मेरी अभिव्यक्ति को नहीं जानता क्योकि मैं उसके फूल-से जीवन की पंखुरी को खुर्दबीन के नीचे रखकर उसे बड़ा करके देखना चाहता हूं। वह मरीज़ है, तड़पना जानता है; मै डाक्टर हूं, मै उसकी तड़पन का कारण जानता हूं, और नही जानता तो जानना चाहता हूं।

जीवन के द्वंद्वो ने ही सारी सत्ता को संभाल रखा है और कजरी, प्यारी और सुखराम, त्रिकोण बना रहे है। क्या वे अपनी वास्तविकता को झुठला रहे है ? क्या कजरी स्वार्थ से भरी है ? मुझे नही लगता। तभी सुखराम भी उसमें क्रुद्ध नहीं है।

रात को जलते हुए नक्षत्र जैसे कवि को प्रभात मे घास पर चमकाते नीहारों की की तरह गले हुए, पानी हुए-से दिखाई देते हैं, वैसे ही मुझे ये सारे द्वन्द्व एक और ठोस वास्तविकता की ओर बढते हुए दिखाई देते हैं। और इस समस्त व्यवधान को एक ही सूत्र ने बांध रखा है ! वह है आकर्षण। उसीकी भिन्न रूप की अभिव्यक्ति प्रेम, ममता, वासना, प्रजनन और जीवन है। यह आकर्षण दोनों ओर से शक्ति को निहित रखता है और वही उसके द्वन्द्व का मूल है। इस द्वन्द्व की प्रेरणा वासना है। और वासना कर्म की चेतना है जो अलगाव नहीं चाहती सायुज्य चाहती है

अथाह पिपासा वाली प्यारी की वे आंखे सुखराम को याद आ रही हैं वह उन

बलिदाती बासुरी के रन्ध्रों मे भरकर फिर निराकार से साकार बना सके।

परन्तु यह मेरा तर्क है; सुखराम का नहीं। मैं धूल को उड़ते देखकर उसकी उस शक्ति को भी देखना चाहता हूं जिसने जमे हुए कणो को बिखर जाने की गति दी है। मेरे आलोचक उद्भ्रान्त हो उठेंगे क्योंकि उन्होंने कभी गहराई से नही देखा। उन्होंने गति देखी है, किन्तु गति के प्रतिक्षण के उस सौंदर्य को नहीं देखा जो गति की गत्यात्मकता के प्राण हैं। वे अन्त को देखते है, उस माध्यम को नहीं देखना चाहते, जो अबूझ और अस्पष्ट रहकर भी इन भौतिकों का ही चेतन रूप से गुणात्मक परिवर्तन है। यदि हम इसे नही देखते तो जडवाद की हड्डियों की उंगलियों को ही हम सुन्दर कहने लगेंगे, उनपर चढ़े मांस और रक्त तथा त्वचा की मधुरिमा को नहीं देख सकेंगे, उनके स्पर्श की स्निग्धता को नही जान सकेंगे और उनके ताप के माध्यम से समस्त सत्ता की महाप्राण ऊर्जस्वित परितृप्ति को नहीं समझ सकेंगे, उस तृप्ति के आनन्द का आभास भी अनुभव नही कर सकेंगे।

आंखों में सारी सृष्टि अपना विकास प्रतिबिम्बित करती है और जब वह उसने रम जाती है तो अन्ततः फिर उनमे से आलोक विकीर्ण करने लगता है। वह आलोक ही प्रेम है, जीवन की अनन्त मर्यादा है। वह अपने भौतिक रूप में वैसा ही है जैसे सूर्य का आकर्षण है, जिसने पृथ्वी को अपनी ओर खींच रखा है, परन्तु पृथ्वी भी अपनी धुरी पर घूमकर, उससे टकराकर विनष्ट नही हो गई है। वह वैसे ही है जैसे करोड़ो तारो और ग्रहो का विशाल स्वर्गंगा का महाविराट् अपरिमेय चक्र लय गति से घूमता चला जा रहा है, घूमता चला जा रहा है, पर वे सब तारे अपनी-अपनी गतियो का ह्रास नही कर लेते, जीवित रहते है। और भौतिक के दूसरे रूप मे अर्थात् चेतन रूप मे यह महासृष्टि का उल्लास है, निरन्तर बढते रहने का चिह्न है, जैसे प्रभात की किरण मे मतवाला होकर सहस्रदल कमल अपने कोमल दलों को खोल देता है, जैसे उस समय भ्रमर गुंजार करता हुआ मंडराता है, जैसे प्रभात का शीतल समीर उसके स्वर्णिम पराग को जल पर बिखेर देता है, जैसे प्रत्येक अमरता क्षणिकता मे अपनी अमरता को निरन्तर प्राप्त करती चली जाती है।

प्यारी के नेत्रों में अभय है। वह संगमरमर की तरह खडी है। यदि वह अब सुन्दर न रहे और कुरूप हो जाए, तो भी वह बुरी नही लगेगी। वह जंगली औरत यदि अब सुसंस्कृत होकर अपने भावों को छिपाने योग्य भी हो जाए तो भी इस बूंद की अपराजित, अशोध्य, अजड़ित, अक्षय तरलता को विनष्ट नही कर सकेगी। वह प्यार की आंख है।

और तब सुखराम ने कहा था :

'कजरी की बात ने मुझमें शक पैदा कर दिया। मै बार-बार प्यारी की उन आंखों को याद करता, फिर कजरी की बात को सोचता। मैं अजीब दुविधा में फंस गया था। मेरी समझ मे नही आ रहा था कि क्या करूं। अन्त मे मैंने कहा : 'तू कल चलेगी ?'

'कहां ?' उसने पूछा।

'मेरे साथ।'

'पर कहां ?'

'प्यारी के पास।'

'क्यों ?'

'वह तुझे देखना चाहती है।'

क्यों ?

कहती थी जब वह सुख न दे सकी तो उस बखत जिसने मुझे सुख दिया है वह बहुत अच्छी ही होगी। उसे मैं देखूंगी।

कजरी ने कहा : 'बड़ी नागिन है; देखना चाहती है पहले कि मैं अच्छी हूं कि वह अच्छी है। लड़ाई शुरू करने के पहले ताकत भांपना चाहती है। तुमने क्या कहा ?'

मैंने कहा : 'ले आऊंगा।'

'क्या कहा ! ले आऊंगा !!' कजरी ने अचरज से कहा : 'मैं जाऊंगी ?

'क्यों ?' मैंने पूछा।

'वही क्यों नहीं आ जाती ? मैं तो नहीं चाहती, वही न देखना चाहती है मुझे ! कुआं प्यासे के पास जाएगा कि प्यासा कुएं के पास ?'

बात ठीक थी पर मैं क्या करता। कहा : 'तू जाके छोटी हो जाएगी ?'

'छोटी तो मेरी नानी भी न होगी, क्योंकि मैं अपने को बड़ा नहीं समझती, तभी तो उसने मुझे बुलवाया है। नट की लुगाई का क्या ! आ जाएगी यहां ! नट तो आएगा। वह ठहरी सिपाही की रखैल। वह कैसे आएगी यहां !'

कजरी की चोट से मेरा मन तड़प गया।

मैंने कहा : 'तू तो बात का बतंगड़ कर रही है।'

कजरी ने कहा : 'पर मैं और बात सोचती हूं।'

'क्या ?' मैंने पूछा।

'वह यह कि तूने उसकी हुकूमत के आगे सिर झुकाया है। तू उसे अपनी मालकिन समझता है। तू उसका नौकर है। मैं नटनी हूं। कैसी भी होऊं, किसीकी चाकर नहीं हूं। मुझसे जो काम कराएगा, वह तलवार के बल पर करा सकता है। मैं मन से सिर नहीं झुका सकती।'

'नहीं, मैं प्यार के मारे राजी हो गया था।' मैंने कहा।

'तब !' उसने कहा : 'तू तो मुझसे ज्यादा प्यार करता है ? तभी तो तू मुझसे उसके हुक्म पर चलने को कहता है। ऐसी ही बांदी बनेगी वह मेरी ?'

कजरी जहर-भरी हंसी हंस दी; मैं कुछ जवाब न दे सका। मुझे गुस्सा आ गया था। मैंने उसके कंधे पकड़कर कहा : 'मैं कुछ सुनना नहीं चाहता। तू चलेगी।'

'नहीं चलूंगी।'

'तू मेरी बात नहीं मानेगी ?'

'हजार मानूंगी। तेरी लुगाई बनी हूं; अपनी मर्जी से। तू कहे तो भूखी रहूं, प्यासी रहूं। तू सोता रह, मैं तेरे पांव दबाऊं। तू कहे कांटों पर चल लूं, जलती आग में हाथ दे दूं। पर तू मेरे लिए यह सब नहीं कहता। तू कहता है, मैं तुझे प्यार करूं और तू अपना दिल कहीं और लगा दे ! तू कहे कि मैं सौत को भी प्यार करूं, सो मुझसे नहीं होगा।'

मैंने उसे मारा। पर वह प्यारी की भांति नहीं दबी। उसने पिटकर कहा : 'यह तो तेरा हक है। तू मुझे सचमुच चाहता है। तभी तो तेरा कहना मैं नहीं मानती तो तुझे गुस्सा आता है। तू किसी पेड़ से कहे और वह न माने तो क्या तुझे गुस्सा आएगा ? तू क्या उसे मारेगा ? मुझे और मार ! तेरा हाथ लगता है तो मेरी जलन मिटती है। इतना मार कि मेरी ल्हास तेरे पांव पर लोट जाए। फिर तू मेरी बोटी-बोटी काट के चील-कौओं को खिला दीजो। मैं सदा तेरी ही रहूंगी। पर तू कहे कि मैं चलूं, सो मेरी जूती जाए। मैं न जाऊंगी। मेरे-तेरे ब्योहार हैं मेरा-तेरा समार है

वह निगोडी छिनाल बीच में कौन है ? मैं उसे कभी नहीं सह सकूंगी तू मेरा मरद है। तुझे मैं दिल दे चुकी हूं। तू उसे ले आ। मैं कुछ नहीं कहूंगी। तू मुझे नहीं चाहेगा तो जान दे दूंगी। उफ नहीं करूंगी। पर तू चाहे कि उसे भी मैं प्यार करूं, सो तू ऐसे समझ कि मैं तेरे भूरा का पांव तो चाट सकती हूं, पर उस नागिन के मुंह पै भी न थूकूंगी !'

मैंने अपने बाल नोंच लिये और सिर पर हाथ धरकर बैठ गया। मैंने कहा 'कजरी ! तू क्यों आई ? मैं अकेला रह गया था तो मैं सुखी था। तू आ गई। तूने मुझे अपने संग से लुभा लिया। तू मुझसे नहीं छूटती। प्यारी मुझे भूलती नहीं। मैं क्या करूं ?'

उसने कहा : 'कुछ भी हो। भले ही तेरी नकेल प्यारी की पूंछ में बंधी हो, पर मेरी नकेल तो तेरी पूंछ में बंधी है। तू कहे तो अभी चली जाऊं ?'

वह उठ खड़ी हुई। मैंने उसका हाथ पकड़ लिया। कहा : 'तू ऐसी पत्थर है ? मैं ही जान दे दूंगा।'

तब वह मेरे पास बैठ गई और उसने कहा : 'तू समझता है मैं डरती हूं ? चल, मैं भी साथ चलती हूं। एक-दूसरे के गलबांहीं डाले पहाड़ पर से हम-तुम कूद पड़ें। फिर कोई भी हमें कभी छुड़ा न सकेगा। अगले जनम में भी तू मेरा और मैं तेरी हो जाऊंगी। जनम-जनम तक फिर दोनों ऐसे ही साथ बने रहेंगे।'

सोचते-सोचते मेरा सिर फटने लगा; और अचानक मुझे याद आया---अधूरा किला। मैं उसका मालिक हूं। मैं ठाकुर हूं। मैंने कहा : 'औरत ! तू मेरे पांव की जूती है। कजरी और प्यारी, दोनों मेरी हैं। कजरी कहे कि मन की करेगी सो नहीं होगा। प्यारी भी मेरी होगी। मैं उसका इलाज करके ले आऊंगा। समझी ? दोनों, काले मुंडों की तुम दोनों पास रहोगी। अब कोई करनटों के पास नहीं रहेगा। मैं तुम दोनों को साथ लेकर बिदेश चला जाऊंगा। आपस में लड़ोगी तो मार-मारकर खाल उड़ा दूंगा। जो मैं कहूंगा सो चलेगा। वहां तुम दोनों जने-जने की नहीं, सिरफ मेरी होगी।'

कजरी मेरी बात समझी नहीं। उसने पूछा : 'फिर ?'

'मुझे अगर तू तनिक भी चाहती है···' मैंने कहा : 'तो तू कल प्यारी के पास चलेगी। वह बीमार है। उसने मुझे बीमारी से बचाया है। वह बुरी नहीं है। समझी ? और तेरे चलकर जाने में तो तेरे पांव की मेंहदी छूट जाएगी न···सो मैं प्यारी से तेरे पांव में महावर रचवा दूंगा। फिर तो तुझे गुस्सा नहीं है ? चलेगी ?'

कजरी जवाब न दे सकी।

उसने कुछ देर बाद पूछा : 'वह तेरे कहने से मेरे पांव में महावर लगा देगी ? वह तेरी इतनी मानती है ?'

'हां, वह मानती है। अगर वह नहीं मानेगी तो कल मैं उससे नाता ही तोड़ दूंगा।'

'तो मैं भी चलूंगी।' कजरी ने कहा : 'वह अगर हाथ-भर तेरा कहना मानती है, तो मुझे देखियो, डेढ़ हाथ तेरी कहन पर चलूंगी। तू कहे तो तलवार पर गर्दन धर दूं। यह बनैनी-बामनी मत समझ लीजो तू मुझे। दिल का सौदा है, देग लीजो। नटनी हूं। असल नटनी ! नटनी की नटनी ! करनटनी !'

मैंने उसे बांहों में भर लिया। सच, उस समय वह मुझे इतनी अच्छी मालूम हुई जितनी कभी नहीं लगी थी।

मैंने कहा : 'एक बात है !'

क्या ?'

'उसके पास अच्छे कपड़े हैं। वह साबन से नहाती है। चमेली का तेल डालती है। उसके पास सोने का गहना है। तेरे पास क्या है ? तुझे छोटा-छोटा नहीं लगेगा उसके सामने ?'

'क्यों ?' कजरी ने कहा : 'जो वह कमा सकती है, सो मैं कमा सकती हूं। भाग की बात है : उसे ग्राहक पहले मिल गया; मुझे भी मिल सकता है। पर हां, अगर तू उसे यह सब देता और फिर मुझे न देता, तो तेरे सामने ही उसका सीना फाड़कर मुंह लगा के उसका लहू पी जाती।'

'डायन !' मैंने कहा : 'चुड़ैल ! !'

हम दोनों हंस दिए। वह अब खुश थी। बताने लगी कि उसने चुड़ैल देखी तो नहीं, पर जरख पर एक औरत की हंसी जरूर सुनी है। जरख की चलते वक़्त की चटपट से उसने अन्दाज़ किया कि वह जरख ही होगा। पर घर की तरफ जा रही थी। वहां कोई सिद्ध साधु ठहरा हुआ था और भी जाने क्या-क्या उसने सुनाया।

वह सो गई। मैं पड़ा-पड़ा सोचता रहा···सोचता रहा। सिद्धियों की बातों से अब मेरा मन बहुत खिचता था। मैं सोचता रहा। कहा जाता था कि चुड़ैल नंगी होकर अमावस की रात की अंधियारी में जरख पर बैठकर मरघट जाया करती है। मेरा मन कहता था कि मैं भी सिद्धि करूं। कहते हैं मरघट जागता है तो भूत-परेत जिन्दा होकर दिखाई देते हैं, नाचते हैं। न जाने क्यों इस सबकी सोचकर आंखें मीचता तो एक चीज़ मेरे सामने आकर खड़ी हो जाती और वह था—अधूरा किला !

11

तब सुखराम ने कहा था :

सुबह मैं देर तक सोया रहा। कजरी ने मुझे जगाया। मैं उठ बैठा। हल्की धूप निकल आई थी। मैंने अपनी आंखें मींड लीं।

तब मैं उठा और बाहर चला गया। झील में जाकर नहाया। वहां से नंगे बदन लौटा। मेरी धोती गीली थी। मैंने अंगोछा पहन लिया और धोती निचोड़कर सूखने डाल दी। फिर बीड़ी सुलगाई। बैठ गया।

बूढ़ी रामा का नाती बीमार था। वह मुझे दिखाई दी।

मैंने पुकारा : 'कैसा है अब ?'

'मोतीझारा और ठंड दोनों का बुखार है; बचेगा नहीं।' बूढ़ी की आंखों में आंसू आ गए। उसने कहा : 'रात-भर आग जलाए रहे, फिर भी बर्राता रहा।'

'तूने किसीको दिखाया ?'

'किसे दिखाऊं ? बैद के पास ले गई थी। उसने दवाई दी थी। कुछ हुआ नहीं। सयाने ने कल झाड़ा था। तावीज दिया है। बांध चुकी हूं।'

'फिर भी कुछ नहीं हुआ ?'

'अरे !' बगल के डेरे से अधेड़ उम्र की रूपा ने निकलकर कहा : 'मैंने कहा था, खिरनी वाले बाबा की धूनी की राख मल दे; ले आ। पर इसने सुना ही नहीं।'

'वहां गई तो थी।' बुढ़िया ने कहा।

'फिर ?'

'बाबा पत्थर मारने लगा।'

'नहीं, मुझे तो वह मुट्ठी भरके दे देता !' रूपा ने कहा। उसकी आंखों के नीचे गड्ढे पड़ गए थे। उसने कहा : 'अरे, वह बड़ा महातमा है। पहुंचा हुआ है। उसने

तेरा इम्तिहान लिया था। तू कामयाब नहीं हुई। मैं तो कहती हूं, चुटकी-भर में आ बुखार छूमंतर हो जाएगा।'

'क्यों', बूढ़े पन्नू ने हुक्का पीते हुए कहा : 'सुखराम ! तू भी तो कुछ जानता है।'

मैंने कहा : 'काका ! यह सब मैं नहीं जानता। मैं तो मूता-गारी, फोड़ा-जखम वगैरह की बात जानता हूं। थोड़ा-बहुत बुखार का हाल बता सकता हूं, पर उतना नहीं। और कौन किसका इलाज करता है, काका ! सब अपनी तकदीर का खाते हैं, सब मारते किसान का खाते हैं।'

'बड़ा समझदार लड़का है।' काका पंच ने कहा और ढेर सारा धुआं उगलकर खूब खखारकर थूका और सांस फिर से आ जुड़ने पर कहा : 'इसकी अम्मी कहां है ?'

'अरे वह तो...' रूपो ने कहा : 'तीन दिन तीन रात जागी। फिर रहा न गया तो बोली : 'मरने दे हरामी को, दूसरा जन लूंगी। इसके पीछे क्या मर जाऊंगी ?'

'चिढ़कर कहा होगा।' पंचू ने कहा : 'कल मैंने उसे पीर के मजार पर दीया धरते देखा था।'

'अब है कहां वह ?'

'पड़ी होगी किसीके पास। कुतिया से अब भी न रहा गया।' रामा ने कहा। बूढ़ी गुस्सा हो गई थी।

उसी समय देखा —सामने से वह चली आ रही थी : रामा के बेटे की बहू। वह चल रही थी पर थकी इतनी थी, चार रात की जगार, कि लगता था कि सोते-सोते चल रही है। वह आई। उसने अठन्नी रामा की हथेली पर धर दी और कहा : 'एक ही मिल सका। इसका बाप कहां है ?'

'पता नहीं, कहीं जुआ खेल रहा होगा।'

'कुछ खाने को है ?'

'कुछ नहीं है। मैं दिन-भर की भूखी हूं। तू कहां रही रात ?'

'मैंने मजार पर मनौती मानी थी। मुझे बखत न मिला। एक अठन्नी कमा सकी। फिर मजार पर चली गई। मुझे नींद आ रही है।'

'तू भूखी सोएगी ?' बूढ़ी ने पूछा : 'जा, मटके में चने धरे हैं; चबा ले। मैं तो दांत के बिना खा न सकी। जब रहा न गया तो थोड़े कूटकर पानी के साथ फांक लिए थे... बस ही गया। बेटा देखा है अपना ?'

'क्या है ? सूअर मर जाए तो भला।' रामा की बहू ने कहा और रोने लगी। फिर जैसे वह थक गई थी। वहीं बैठ गई और सो गई।

मैं देखता रहा। उठकर भीतर डेरे में गया।

कजरी आज नहाई थी। उसका तमाम मैल धुल गया था। आंखों में काजल लगाया। बालों पर काठ की कंघी कर ली थी। बैठी थी। पैसे गिन रही थी।

'क्या कर रही है ?' मैंने पूछा : 'तेरे पास कुछ पैसे हैं ?'

'हैं तो, बीस आने हैं। क्या करेगा तू ?'

'मुझे दे दे।'

'क्यों ? करेगा क्या ? नहीं तो मुझसे पूछ, मैं क्या करूंगी ?'

'क्या करेगी तू ?'

'कपड़े लाऊंगी।'

'कपड़े ?'

'हां, अच्छे-अच्छे।'

'क्यों ?'

'मैं चलूंगी न तेरे साथ !'

'प्यारी के पास ?'

वह मुस्कराई।

'पर वहां कपड़ों की क्या जरूरत है ?'

'तूने ही तो रात कहा था।'

वह हंसी। 'देख', उसने कहा : 'कैसी मजे की बात होगी। प्यारी को तो मिले सिपाही से। मैं पहन के जाऊंगी तो समझेगी कि तैने बनवाए है मेरे लिए। कैसी कुढ़ेगी मन में ! मैं आप से किसी ढंग से कह दूंगी कि मैंने तो मना किया था, पर सुखराम न माना।'

मैं हैरत में रह गया।

'तू मिलने चलेगी कि लड़ने ?'

'मिलने।'

'पर यह तो लड़ाई का ढंग है।'

'अच्छा छोड़। तू पैसे क्यो मांग रहा था ?'

'अब जाने भी दे।'

'क्यों ?'

'कुल बीस आने तेरे पास हैं। बड़ी हविस है। अभी तो तुझे ही और पैसे चाहिए।' मैंने कहा।

'पांच रुपये और हो जाएं, मेरा काम हो जाएगा।'

'पर उनके मिलने में तो देर लगेगी।'

'तो क्या हो गया ! तीन दिन तेरी प्यारी ठहर नहीं सकती !

'पूछेगी तो आज ही। कह दूंगा, कपड़े बनवाती है कजरी।'

'ऐसा तू सांचाधारी हो गया कि एक बार मेरी लाज रखने को झूठ कह देने में ही तेरी बत्तीसी झड़ जाएगी ?'

'अच्छा, कह दूंगा, बीमार हो गई है।'

'बीमार पड़े मेरी सौत ! मैं काहे को पड़ूं ? सो ठाल ही दी है भगवान ने !'

'तो क्या कहूंगा मैं ?'

'कुछ कह दीजो। यों कहियो कि प्यारी, तेरे में पांव में महावर लगाने कजरी आ रही थी, पर मन बदल गया। बोली --फिर चलेंगे। सो तीन-चार दिन लगेंगे लाने में।'

'यह कह दूंगा तो मेरी बात छोटी पड़ जाएगी।'

'सो तो है।' कजरी ने कहा : 'कह दीजो, पांव में कांटा लग गया है।'

'यह ठीक है।' मैंने कहा।

'तू ही सोच··' उसने कहा : 'वह मेरे पांव मे महावर लगाएगी तो मैं नये कपड़े पहन के बैठूंगी उसके सामने ! हंसेगी नहीं वह मन में ! तेरी तो दो हैं। तू एक को अच्छी, दूसरी को ऐसी देख सकेगा ?'

'पर पैसे कहां से लाएगी ?'

'तुझसे न मांगूंगी ! पर तूने बताया नहीं !'

'क्या ?'

'तू पैसे क्यों मांग रहा था ?'

'जाने दे अब' मैंने कहा

'तुझे मेरी कसम !' कजरी ने कहा : 'तू सब पैसे ले ले, पर मेरा जी न दुखा। मुझसे अलगाव न रख।'

'मैं ला दूंगा तेरे लिए सब कजरी।' मैंने कहा : 'इस वखत एक रुपया दे दे।'

'ले।' उसने मेरे हाथ पर सोलह आने धर दिए।

'तूने पूछा नहीं, मैं इसका क्या करूंगा ?'

'कुछ भी कर; तू मालिक है।'

मैंने उसे प्यार से देखा। वह लजा गई।

मैंने कहा : 'मैं इसलिए जा रहा हूं कि रामा का नानी बहुत बीमार है। उसकी मां और दादी भूखी हैं, कुछ खा लेंगी। फिर बच्चे की दवाई-दारू आ जाएगी।'

और मैंने ताज्जुब से देखा कि कजरी ने मेरे पांव पकड़ लिये और कहा : 'तुझ-सा मरद मुझे मिला, मेरे भाग। तुझे छोड़ के प्यारी गई, पर तुझे छोड़ न सकी, उसका कारण अब समझ में आया। तू बड़ा अच्छा है। तू बड़ा नरमदिल है, सुखराम। लोग एक-एक पैसे के लिए दांती काटते हैं और तू इतना सीधा है! तू कितना अच्छा है सुखराम !'

मैंने उसे उठाया और कहा : 'कजरी ! यह दुनिया बड़ी जालिम है। मैं इतने दिन में एक बात समझा हूं कि गरीब की सबसे बड़ी मुसीबत है। तू तन क्यों बेचती है, जानती है ?'

'न बेचूं तो जिऊं कैसे ?' कजरी ने कहा : 'बचपन में ही आदत पड़ गई। तब मजा भी आता था सो वह गई, पर अब उसमें मन नहीं भरता। मैं चाहती हूं कोई मुझे अपनी कहे।'

'अच्छा, कजरी ! तू घर बैठ। मैं फिर कला-करतब दिखाकर मेले से कमाई करके आज लाता हूं। जूए के दो हाथ बैठ गए तो जरतारी उढ़ा दूंगा तुझे। तू मेरे रहते क्यों दुख उठाती है ? तू बैठ। मैं तेरा सिंगार अपने हाथ से करूंगा और तब ही प्यारी के पास चलेंगे।'

'यह नहीं सुखराम।' कजरी ने कहा : 'मैं मेले में जाऊंगी। नाचूंगी, गाऊंगी; जो मिल जाएगा, ले आऊंगी। वह नहीं करूंगी।'

मैंने स्नेह से उसे सीने से लगा लिया। कजरी की आंखों में आंसू आ गए। बोली : 'मरद तो वही है जो लुगाई को बचाके रखे; पर कुर्री भी एक था। तू इतना अच्छा क्यों है सुखराम ! तुझ-सा कहीं मैंने करनट नहीं देखा।'

'करनट !' मैंने कहा : 'मैं करनट नहीं हूं।'

कजरी को धक्का लगा। पूछा : 'तो क्या तू हममें से नहीं है ? कोई पराया है ? हमारी बिरादरी का नहीं है ?'

'सब हूं। मेरी मां करनटनी थी। पर मेरा बाप ठाकुर था।'

'अरे, उससे क्या हुआ ?' कजरी ने कहा : 'ऐसी तो कई नटनियों की औलाद है। जो नटनी का जाया है सो नट है।'

मैंने कहा : 'नहीं कजरी; मेरे साथ आ।' मैंने उसका हाथ पकड़ लिया और चल पड़ा। बाहर आकर मैंने सीधा रास्ता पकड़ा। रास्ते में मंगू मिला। मैंने कहा 'ओ मगू, ले यह सोलह आने। इसे बूढ़ी रामा को दे दे। बिनारी का नानी बीमार है।'

मंगू के हाथ पर जब पैसे पड़े तो आंखें कुछ चमकीं। मैंने कहा : 'दे दीजो, नहीं तो अच्छा न होगा।'

मंगू ने अपने मजबूत कंधों की तरफ देखकर कहा : 'अरे, क्या बातें करता है सुखराम पर तेरा कुछ हरज है अगर मैं अपने नाम से दे दूं ?

'क्यो ?'

'मैं चलूंगी न तेरे साथ !'

'प्यारी के पास ?'

वह मुस्कराई।

'पर वहां कपड़ों की क्या ज़रूरत है ?'

'तूने ही तो रात कहा था।'

वह हंसी। 'देख', उसने कहा : 'कैसी मजे की बात होगी। प्यारी को तो मिले सिपाही से। मैं पहन के जाऊंगी तो समझेगी कि तैंने बनवाए हैं मेरे लिए। कैसी कुढ़ेगी मन में ! मैं आप से किसी ढंग से कह दूंगी कि मैंने तो मना किया था, पर सुखराम न माना।'

मैं हैरत में रह गया।

'तू मिलने चलेगी कि लड़ने ?'

'मिलने।'

'पर यह तो लड़ाई का ढंग है।'

'अच्छा छोड़। तू पैसे क्यों मांग रहा था ?'

'अब जाने भी दे।'

'क्यों ?'

'कुल बीस आने तेरे पास हैं। बड़ी हविस है ! अभी तो तुझे ही और पैसे चाहिए।' मैंने कहा।

'पांच रुपये और हो जाएं, मेरा काम हो जाएगा।'

'पर उनके मिलने में तो देर लगेगी।'

'तो क्या हो गया ! तीन दिन तेरी प्यारी ठहर नहीं सकती !

'पूछेगी तो आज ही ! कह दूंगा, कपड़े बनवानी है कजरी।'

'ऐसा तू सांचाधारी हो गया कि एक बार मेरी लाज रखने को झूठ कह देने में ही तेरी बत्तीसी झड़ जाएगी ?'

'अच्छा, कह दूंगा, बीमार हो गई है।'

'बीमार पड़े मेरी सौत ! मैं काहे को पड़ूं ? सो आग ही दी है भगवान ने !'

'तो क्या कहूंगा मैं ?'

'कुछ कह दीजो। यों कहियो कि प्यारी, तेरे गे पांव में महावर लगवाने कजरी आ रही थी, पर मन बदल गया। बोली --फिर चलेंगे। सो तीन-चार दिन लगेंगे रंग लाने में।'

'यह कह दूंगा तो मेरी बात छोटी पड़ जाएगी।'

'सो तो है।' कजरी ने कहा : 'कह दीजो, पांव में कांटा लग गया है।'

'यह ठीक है।' मैंने कहा।

'तू ही सोच·· ' उसने कहा : 'वह मेरे पांव में महावर लगाएगी तो मैं ये कपड़े पहन के बैठूंगी उसके सामने ! हंसेगी नहीं वह मन में ! तेरी तो दो हैं। तू एक को अच्छी, दूसरी को ऐसी देख सकेगा ?'

'पर पैसे कहां से लाएगी ?'

'तुझसे न मांगूंगी ! पर तूने बताया नहीं !'

'क्या ?'

'तू पैसे क्यों मांग रहा था ?'

'जाने दे अब मैंने कहा

'तुझे मेरी कसम !' कजरी ने कहा : 'तू सब पैसे ले ले, पर मेरा जी न दुखा। मुझसे अलगाव न रख।'

'मैं ला दूंगा तेरे लिए सब कजरी।' मैंने कहा : 'इस वखत एक रुपया दे दे।'

'ले।' उसने मेरे हाथ पर सोलह आने धर दिए।

'तूने पूछा नही, मैं इसका क्या करूंगा ?'

'कुछ भी कर; तू मालक है।'

मैंने उसे प्यार से देखा। वह लजा गई।

मैंने कहा : 'मैं इसलिए जा रहा हूं कि रामा का नाती बहुत बीमार है। उसकी मां और दादी भूखी हैं, कुछ खा लेंगी। फिर बच्चे की दवाई-दारू आ जाएगी।'

और मैंने ताज्जुब से देखा कि कजरी ने मेरे पांव पकड लिये और कहा : 'तुझ-सा मरद मुझे मिला, मेरे भाग। तुझे छोड के प्यारी गई, पर तुझे छोड़ न सकी, उसका कारण अब समझ मे आया। तू बडा अच्छा है। तू बड़ा नरमदिल है, सुखराम। लोग एक-एक पैसे के लिए दाती काटते हैं और तू इतना सीधा है ! तू कितना अच्छा है सुखराम !'

मैंने उसे उठाया और कहा : 'कजरी ! यह दुनिया बड़ी जालिम है। मैं इतने दिन में एक बात समझा हूं कि गरीब की सबसे बडी मुसीबत है। तू तन क्यों बेचती है, जानती है ?'

'न बेचूं तो जिऊं कैसे ?' कजरी ने कहा : 'बचपन में ही आदत पड गई। तब मजा भी आता था सो वह गई, पर अब उसमें मन नही भरता। मैं चाहती हूं कोई मुझे अपनी कहे।'

'अच्छा, कजरी ! तू घर बैठ। मैं फिर कला-करतब दिखाकर मेले से कमाई करके आज लाता हूं। जूए के दो हाथ बैठ गए तो जरतारी उढ़ा दूंगा तुझे। तू मेरे रहते क्यों दुख उठाती है ? तू बैठ। मैं तेरा सिंगार अपने हाथ से करूंगा और तब ही प्यारी के पास चलेंगे।'

'यह नही सुखराम।' कजरी ने कहा : 'मैं मेले में जाऊंगी। नाचूंगी, गाऊंगी; जो मिल जाएगा, ले आऊंगी। वह नहीं करूंगी।'

मैंने स्नेह से उसे सीने से लगा लिया। कजरी की आंखों में आंसू आ गए। बोली : 'मरद तो वही है जो लुगाई को बचाके रखे; पर कुर्री भी एक था। तू इतना अच्छा क्यों है सुखराम ! तुझ-सा कहीं मैंने करनट नहीं देखा।'

'करनट !' मैंने कहा : 'मैं करनट नही हूं।'

कजरी को धक्का लगा। पूछा : 'तो क्या तू हममें से नही है ? कोई पराया है ? हमारी बिरादरी का नहीं है ?'

'सब हूं। मेरी मां करनटनी थी। पर मेरा बाप ठाकुर था।'

'अरे, उससे क्या हुआ ?' कजरी ने कहा : 'ऐसी तो कई नटनियों की औलाद है। जो नटनी का जाया है सो नट है।'

मैंने कहा : 'नही कजरी; मेरे साथ आ।' मैंने उसका हाथ पकड लिया और चल पड़ा। बाहर आकर मैंने सीधा रास्ता पकड़ा। रास्ते में मंगू मिला। मैंने कहा 'ओ मंगू, ले यह सोलह आने। इसे बूढ़ी रामा को दे दे। भिखारी का नाती बीमार है।

मंगू के हाथ पर जब पैसे पड़े तो आंखें कुछ चमकीं। मैंने कहा : 'दे दीजो, नही तो अच्छा न होगा।'

मंगू ने अपने मजबूत कंधों की तरफ देखकर कहा : 'अरे, क्या बातें करता है सुखराम पर तेरा कुछ हरज है अगर मैं अपने नाम से दे दूं ?

'सो कैसे हो सकता है?' कजरी ने कहा : 'मुंहजले की बात तो देखो!'

मैंने कहा : 'उसमें क्या फायदा है तुझे?'

मंगू झेंपा, बोला : 'मेरी लुगाई मर गई है, तू जानता है। रामा का बेटा बहू को तंग करता है। जरा कुछ लेकर देता रहूंगा तो वह मुझे मान जाएगी।'

कजरी ने कहा : 'अरे सांड के मांड! तू ऐसे लोगों से मांग-मांगकर लुगाई लाएगा!'

मंगू ने उसे देखा, फिर मेरी तरफ भिखारी की-सी आंखें उठाईं।

मैंने कहा : 'अच्छा मंगू, दे दे। अपनी तरफ से दे दे। तेरा घर बस जाए तो अच्छा ही है। पर मैंने ये पैसे कजरी से लिये हैं, सो तू चुका देना। वचन दे!'

'मैं वचन देता हूं।' उसने कहा।

'और ये सब रामा के बच्चे के लिए दे देगा!'

'हां।'

मंगू चला गया। कजरी मुझे देखने लगी।

'क्या देखती है!'

'तू कोई महातमा है?' कजरी ने पूछा।

'महातमा होता तो लोग मेरे पांव न पूजते?'

'आज मैं तुझे पूजूंगी।' कहकर उसने दोनों कानों पर हाथ रखकर अंगुलियां चटकाकर मेरी बलैयां लीं।

मैंने कहा : 'चल!'

'कहां?'

'चल, जहां मैं कहूं।'

कजरी चली। मैं लम्बे डग भरकर चला। पथरीला रास्ता था। एक कोस चलकर हांफने लगी। अगले आधे कोस पर संग रखने को भाग-भागकर चलने लगी।

नीचे नीले पत्थर बड़े-बड़े ढोकों से फैल गए थे जो पैरों को गरम लगते थे। कजरी बैठ गई। 'क्यों?' मैंने कहा।

'जरा सुस्ता लेने दे मुझे। कहां चल रहा है?' उसने कहा।

'तू चल तो सही!' मैंने उसका हाथ पकड़कर उठा लिया। मेरे मजबूत पंजे में एक झटके-से उठ आई।

'अच्छा, चलो।' उसने कहा : 'तू तो मरद है। बड़ी तेज चलता है। मुझसे तेरे साथ नहीं चला जाता।' वह अब भागने लगी। पर आधा कोस और चले, अब पहाड़ का तला आ गया था। हम ऊपर चढ़ने लगे। सामने पहाड़ का सिरा दिखाई दे रहा था। हम उस सीधी चढ़ाई पर चढ़ते रहे। कजरी थक गई। बोली : 'बप्पा री! पांव टूट गए। कैसी चलन है! तू बहुत जल्दी चलता है। मैं नहीं चल सकती।' सिरा आया तो बैठ गई। बोली : 'मैं समझती थी, पहाड़ इतना ही होगा। तेरी सौं, मैं कभी इतने नहीं चढ़ी थी। पर यहां तो अन्त ही नहीं लगता।'

मैंने कहा : 'पहाड़ ढलुआ होता है। नीचे से देखने की ऊंचाई से ऊपरी छोर नहीं दिखता। जहां नजर पहुंचती है, वहां ढाल की गोलाई आती है।'

'अब कितना और है?'

'चल तो सही!' मैंने कहा। कमर पर हाथ देकर उठाया।

फिर चलने लगे। पर अगली चढ़ाई···यह और भी कठिन थी। कजरी मेरे सहारे से चढ़ती गई पर बुरी तरह हांफ गई और सांस लम्बी भरने लगी। पत्थर पर ही लेट

बोली : 'दइया रे, फाड है कि अफन है !' उसने हांफते हुए कहा।

'थक गई ?' मैने कहा और इधर-उधर देखा। अभी पेड़ों की हरियाली आंख में आती थी। सो मेरा काम पूरा नहीं हुआ था।

वह बैठ गई। घुटनों के नीचे पांव की हड्डियों को दबाती रही। बोली : 'यही मार है, लहू इकट्ठा हो गया। दरद होता है।'

मैंने बैठकर बीडी सुलगाई।

'तू नहीं थका ?' उसने कहा।

'मुझे पुरानी आदत है पहाड़ पर चढ़ने की।' मैंने धुआं उगलकर कहा।

हवा वहां तेज थी। कुछ ठंडी भी थी। कजरी ने कहा : 'कैसा लगता है सब। नीचे देख। खेत कैसे रंगीन हरे-हरे हैं। चौका-चौका-से। कैसे छोटे-छोटे से हैं। नीचे से सब कित्ता बड़ा-बडा लगता है। यहां से देख सुखराम ! वे बैल देख ! पैर चल रही है। ऐसा लग रहा है जैसे बैल न हों, कुत्तों से भी छोटे हों।'

'अब चलती है कि बात बनाती है ?'

'तेरी सौं, मुझसे नही चला जाएगा।'

'अरी, तू तो जवान है !'

'ना, ना ! मैं तो बूढी हूं। अब तू जा। कहां जा रहा है ?'

'बस, तीन चढ़ान और हैं।'

'तीन !' वह फिर लेट गई।

'अच्छा !' मैंने कहा : 'तू मेरे कन्धे पर चढ़ जा।'

'अरे नही !' उसने लजाकर कहा : 'कोई देखेगा तो क्या कहेगा ?'

'क्या यहां की बात नीचे से दिखाई देती है ? एकदम छोटी। जैसे यहां से वहां की। देख, ये धौ के पेड़ नीचे से कितने छोटे-से लगते हैं ! ऊपर हमसे बड़े हैं।'

मेरे समझाने से वह मान गई। मैंने उसे कन्धों पर बिठा लिया। दोनों तरफ उसने टांगें लटका लीं और मेरा सिर पकड़ लिया। मैं धीरे-धीरे चढने लगा। वह मेरी ताकत पर ताज्जुब करने लगी।

जब वह चढाई खत्म हुई तो मैंने कहा : 'उतर बकरी।'

वह उतर गई; हंस दी। फिर उसने गले से एक तावीज उतारा और मेरे हाथ पर बांधने लगी।

'यह क्यो ?' मैंने कहा।

'यह मुझे मेरी अम्मां ने दिया था मरते बखत।'

मैंने देखा।

वह कहती रही : 'उसने कहा था : तेरा बच्चा हो तो उसके बांध दीजो, तेरी भी नजर न लगेगी उसे। तुझमें बड़ी ताकत है। मैने तभी बांधा है तेरे। कहीं तुझे नजर न लग जाए मेरी।'

'तो मैं तेरा बच्चा हूं ?' मैंने कहा।

ढोकों की छाया आ रही थी कजरी एक के नीचे बैठ गई और बोली बच्चा भी तो अच्छा लगता है जब मेरे बच्चा हो जाएगा तो तेरे हाथ से उतारके उसके गले

से पहले देख लेता हूं कि पत्थर मे मुझे संभालने का दम है कि नहीं; कहीं खिसक तो न जाएगा।'

'न, मैं न चढ़ूंगी।'

'अच्छा, तू मेरी पीठ पर चढ जा।'

वह मना करने लगी, पर मै न माना। मैंने उसे मशक की तरह पीठ पर उठा लिया और धीरे-धीरे चढने लगा। अबकी बार मै दोनों चढान एक ही बार में चढ गया। कजरी मिनमिनाती रही : 'ओ, तू तो आदमी नही है। कैसे सर-रार चढ़े जा रहा है। कही फिसल न जाइयो। हाय, ऐसे लटकाये जा रहा है मुझे! मेरे बदन मे दरद होता है।'

पर मैने उसे पहाड की चोटी पर पहुचकर पत्थर पर एकदम छोड़ दिया। वह धप् से गिरी और चिल्लाई : 'हाय मार डाला कढ़ीखाए ने। कुहनी फूट गई मेरी मैया!'

मै बैठ गया। मैं थक-सा गया था। मैंने कहा : 'कजरी!'

मैंने धीरे-धीरे हांफनी भरी और कहा : 'तू पूरी ढाई मन की ल्हास है। तेरी कसम! गधे पर लाद दी जाए, तो गधा रेंक के मर जाए। मेरी मैं ही जानता हूं। दिखती तो ऐसी फूल-सी है, पर आख की ओट करके उठाओ तो भूतनी-सी टांगें फैला देती है। पूरी ढुबाई है, पूरी।'

कजरी की आंखो में हंसी थी; चिढन भी थी। बोली : अरे, रहने दे! उठाया कहा मुझे! पाव तो पहाड़ पर छिलते-घिसटते आए हैं।- फिर भी मुझमे बोझ था, अच्छी कही। अपनी न कहेगा; पूरे लाला का-सा गट्ठर है।'

मैने कहा : 'और लो। इतनी भारी तो तब थी जब पांव धरती पै घिसटते थे भूतनी के। जो कहीं सारा बोझ मुझपै आ गया होता तो मेरे बाप और बाबा से भी नहीं उठती!'

हम दोनो हंस दिए।

दुपहर हो गई थी। चरवाहे दूर कहीं पहाड पर पुकार रहे थे। सामने के पहाड़ पर कई जगह गायें धौरी-धौरी-सी दिखाई दे रही थी। एक पेड़ के नीचे कुछ लड़के बैठे थे। कोई बांसुरी बजा रहा था।

'मेरे पैरो में बड़ा दरद हो रहा है।' कजरी ने कहा।

मैं पास बैठ गया। उसके पांव गोद में रखकर दबाने लगा।

'अरे, क्या करता है?' कजरी ने शर्मा के उठाते हुए कहा : 'तू नही थका?'

'अब थकान दूर हो गई है।'

'मेरी आंखें फूट जाए।' उसने कहा : 'जो तुझे मेरी नजर लगे।'

उसने मेरे पांव छुए, फिर कहा : 'मरद में बड़ा दम होता है--- क्यो?'

मैं मुस्कराया।

उसने फिर कहा : 'तभी तो उसका हुकम चलता है।'

'मैं तुझपर हुकम चलाता हूं! तभी तो तेरे पांव दबा रहा था। ऐसी गुलामी ेरी किसीने की है?'

'सो तो है।' उसने कहा : 'तू बड़ा घुन्ना है।'

'क्यों भला?'

'भीतरी मार मारता है।'

'क्या नुकसान किया है मैंने तेरा?'

'अरे, और क्या नुकसान करेगा तू? ऐसे उठाके लाया है बेदरदी से कि अंग-अंग ले हो गए हैं

मैंने हंसकर उसे देखा।

उसने कहा : 'मेरा बाप मेरी अम्मां से कहता था—मरद वही है जो औरत को दबाके रखता है। रोटी दे दो और बोटी दे दो। इनकी भूख मत रखो, पर फिर मीठे न बोलो, नहीं तो सिर पर चढ़ जाती है। औरत और आग बराबर है। सुलगते ही बुझा दो, नहीं तो ऊपर तक चाटती हुई, जलाती हुई चढ़ती चली जाएगी। तू मुझे क्यों नहीं दबाके रखता ?'

मैंने कहा : 'तेरी अम्मा कटखनी होगी। मेरी कुतिया तो पालक है। अपने आप बंधे बिना ही मेरे डेरे के द्वार पै बैठकर भौंकती है, तो मुझे जरूरत क्या ! जब सीधी उंगली घी निकले तो उंगलिया टेढ़ी क्यों करूं !'

कजरी ने कहा : 'यों कहेगा ? यों कह कि मेरा बाप धोबी था, पत्थर पै पछाड़ के धोता था, और तू धोबी का गधा है जो लादी लाद के चलता है !'

हम दोनों हंसे। मैंने कहा : 'अच्छी बात है।'

'क्या अच्छी बात है ?'

'इसीला कहा करता था कि लातों के देव बातों से सीधे नहीं होते।'

'सो ?'

'मुझे जब लात का देव मिला है तो बातों से काम नहीं लूंगा।'

'मुझे मारेगा ? तूने मारा तो था।'

'झूठी ! कब मारा था ?'

'बातों की मार मारी थी। यह चोट तो बदन पै लगती है, पर मन की चोट कसक के रह जाती है।'

'तू बड़ी बातूनी है। हमेशा कतरनी-सी चलती है जीभ तेरी। तेरी यह जीभ ही काटूंगा।'

'मुझे धक्का न दे दे यहां से, नासपीटे। तेरे हिये में सीरक पहुंच जाएगी। बता, मुझे क्यों लाया यहां ?'

मैंने देखा—दूर वह धूप में सुर्ख-सा चमक रहा था।

'क्या देख रहा है ?' वह मेरे पास आकर मेरी एकटक नजर को देखकर बोली।

'वही, जिसे दिखाने को तुझे यहां लाया हूं।'

'क्या है वह ?'

'अधूरा किला।'

'अरे; तुझपै पत्थर पड़ें।' कजरी ने कहा : 'कमबख्त ने इसे दिखाने को मेरी हड्डियां ढीली कर दी है ? नीचे ही कह देना, मैंने क्या देखा नहीं था पहले ? मैं सारी रियासत में घूमी हूं। इसे दिखाने को ही तैंने मुझे यह सफर दिखाया है ? तू पागल तो नहीं है ?'

'हां कजरी !' मैंने कहा : 'यह अधूरा किला मुझे पागल कर देता है।'

'मैं नहीं करती ?'

'नहीं। तू मुझे भाती है, यह मुझमें कंप जगाता है।'

'चला गया होगा इसमें ! कहते हैं, भूत रहते है। मेरा बाप कहता था, वह इसके नीचे चला गया था। वहां अंधेरा ही अंधेरा था। उसके खरचे पूरे हो नहीं पाते थे। उसने जगह-जगह पुरानी इमारत खुदाई थी कि कहीं धन निकले। बड़े-बड़े सियाने उसकी नौकरी में थे। किसीने कहा, इसके नीचे कई तैखाने हैं जिनमें बड़ी दौलत भरी पड़ी है। पर भीतर घुसते लोग डरते थे। मजूर [illegible] मुकर गए। राजा ने कहा गोली लगवा दूंगा। वे बोले तू मार ले। गोली से मरना भला भूतों से कौन।

'फिर ?' मैंने कहा।

'मेरा बाप तब अधेड़ था। मेरी अम्मा से बोला कि आता हूं। जो एक-आध भी माल हाथ पड़ गया, तो पौ बारह है; नहीं तो फिर नहीं सही।' अम्मा ने कहा : 'और जो तू मर गया तो?' मेरे बाप ने कहा : 'मरना एक दिन है ही। आज ही सही।' वह न माना। भीतर उतर गया। और लोग भी आये। उसने लौटकर बताया, 'भीतर बड़े तिबारे-तिबारे-से थे। पूरा महल-सा था। अंधेरा-अंधेरा। घुप्प अंधेरा, हवा गूंजती थी।'

मैं सुनता रहा। कजरी कहती गई : 'कुछ भी नहीं मिला। योंही घूम-घाम के लौट आए। छोर ही नहीं मिला। वहां पुरानी कचहरी में अभी तक पहले राजा के लिए हुक्का भरकर धरते हैं। सबेरे ऐसे मिलता है जैसे पिया हुआ हो।'

कजरी के नेत्र आश्चर्य से फैल गए। उसने फिर कहा : 'एक नाई का छोरा एक बार जाने कैसे घुसकर खजाने तक पहुंच गया। कहता था, वहां हीरे-जवाहरातों की ढेरियां लग रही हैं। बड़े-बड़े लोहे के जिरह-बख्तर टंगे हैं। कमानीदार बंदूकें धरी हैं। सोना तो यों ही पड़ा है कि उससे उठाए ईंटें न उठीं। इतनी भारी-भारी थीं वे सोने की ईंटें!'

मैंने कजरी के हाथ पकड़ लिये। उसने मुझे देखा। मेरी आंखें फटी हुई थीं। मैंने कहा : 'कजरी!'

वह डर गई। कहा : 'क्या है रे ?'

'वह सब मेरा है।'

'तेरा है ?' कजरी ने कहा और बोली : 'तेरा क्या, मेरे बाप का भी होगा!'

मैं नहीं समझा कि वह मजाक कर रही है।

मैंने कहा : 'तू जानती है कजरी! तू जानती है! वह मेरे बाप का भी था।'

'तेरे बाप का भी होगा!' कजरी ने कहा। अब मुझे महसूस हुआ कि वह मुझे ताना मार रही थी।

'सच कहता हूं कजरी! मैं इसी किले के असली मालिकों के ठाकुर खानदान में से हूं। मैं ही इस किले का असली मालिक हूं। मेरा बाप, मेरा बाबा, मेरा परबाबा और उसकी मां, बस यही इसे नहीं भोग सके। पहले हमारे पुरखे इस में राज करते थे। भाग ने हमें इससे दूर कर दिया।'

जब मैं कह चुका तो कजरी ठठाकर हंस पड़ी। उसका हास्य पहाड़ पर झनझनाता हुआ फैल गया। मेरा मन सिकुड़ गया। मुझे चोट पहुंची।

मैंने कहा : 'तुझे विश्वास नहीं होता ?'

'नहीं।' कजरी ने कहा। फिर गाने लगी—

'जब कभी भैंस के सींग पर ऊंट नाचा।'

और उसने पलटकर गाया—

'जब कभी ऊंट के सींग पर भैंस नाची!!'

'कजरी!' मैं गुस्से से चिल्लाया।

'क्या हुआ ? कजरी ने कहा : 'महाराज! तेरी बांदी तेरे सामने है। हुक्म दे। मच्छर की आंख निकाल के सामने हाजिर करूं।'

मुझे चोट लगी।

उसने कहा : 'अरे मेरे गंगुआ तेली, तू तो राजा भोज बन बैठा।' वह हंसती रही। उसने फिर कहा : तू मेरा राजा मैं तेरी रानी, तू है लंगड़ा मैं हूं कानी।

वह तो गा रही थी। फिर उसने उठकर ठुमका [illegible] कहा

'मेरी सौत के बिछिया बजें आधी रात,
ऐरी आग लगियो मेरे जोबन गात !'----

और अन्तिम स्वर खींचकर वह बेहूदे इशारे करके मटकने लगी। मुझे इतना गुस्सा आया कि मैंने उसकी तरफ से मुंह फेर लिया। पर उसने कूल्हे नचाना शुरू किया और गाया—

'मैं तो चढ़ी हूं पहार बलम मोहे
हरी हरी दीसै सकल संसार'''
बलम मोहे'''

मेरी आंखों में आंसू आ गए। कजरी रुक गई। पास आई।

उसने पूछा : 'अरे, तू रोता है ?'

मुझे चुप देखकर उसने कहा : 'क्यों, क्या हुआ ?'

'कुछ नहीं।' मैंने आंसू पोंछ लिये।

उसका मन भर आया। उसने मेरे हाथ पकड़ लिये।

'क्या यह सब सच है जो तूने कहा ?'

'सच है कजरी।'

'खा मेरी कसम।'

'तेरी कसम।'

तब उसकी आंखों में डर दिखाई दिया। उसने कहा : 'तो तू राजा है ?'

'हां कजरी ! राजा नहीं हूं। उस बंस से हूं।'

वह कुछ कह सकने में असमर्थ हो गई। चुपचाप बैठी रही; भौचक। मैंने ठकुरानी का किस्सा सुनाया; सब बताया। फिर भी वह घुटनों में सिर दिए बैठी रही। केवल आंखें उसने मेरी सूरत पर गड़ा रखी थीं।

मैं चुप हो गया। पूछा : 'क्या सोच रही है ?'

'यही कि तू राजा है।'

'तो ?'

'अगर तू राजा हो गया, क्योंकि भाग विचित्र है, तो तू मुझे भूल जाएगा !'

'क्यों ?'

'तब ठकुरानियां तेरी सेज सजाएंगी। तब तू कहेगा, नटनी हरजाई मेरी कौन है ?'

'पर मैं तो तेरे साथ हूं न !'

'लोग कहते हैं, संग का पाप लुगाई को लगता है, लोग को नहीं। सब जात यही कहती है।'

मैं हंसा। कहा : 'मैं क्या राजा हो गया हूं जो ऐसी भय खा रही है ?'

'भाग को कौन जानता है ! वह दूसरे पहाड़ पै तुझे छतरी दीखती है ?'

'हां-हां।'

'किसकी है ?'

'किसी साधु की होगी।'

'नहीं, वह नटनी की छतरी है।'

'नटनी की ?' मैंने पूछा।

'हां, एक नटनी ने [illegible] रस्सी बांधी थी। [illegible]

[illegible]

फिर क्या [illegible] ?

'नटनी सरत बाध चली ।'

'चली गई ?' मैंने पूछा ।

'आधे पहुंची ।' कजरी ने कहा . 'सो राजा डर गया । झट इशारा किया । राजा के आदमियों ने रस्सी काट दी । नीचे गिरी सो नटनी फट्ट मर गई । उसीकी याद में छतरी बना दी है ।'

'राजा बचन पलट गया ?'

'पर वह राजा था । कहीं तू भी पलट गया तो !'

'चल उल्लू की पट्ठी, तू तो शेखचिल्लिन है ।'

'जैसा मरद है वैसी ही लुगाई है ।' कजरी ने कहा . 'क्यों ?'

कोई एक कोस तो होगा इस पहाड़ से वह पहाड़ । इत्ती लम्बी रस्सी कहां से आई होगी ?'

'अरे वा रे !' उसने कहा · 'तू तो अकल का बड़ा मट्ठा है । कल झोपड़े में रहके राजा का सतखंडा कुआं देखकर कहेगा कि यह कैसे बनाया गया होगा । ओ दारी । एक कोरिन ने कहा था, लगता है महल के बीच में कुआं ऊपर से उतारा होगा ।' वह हंसी : 'भला बता, राजा के लिए कुछ मुस्किल है ?'

मैं जवाब न दे सका । कजरी ने कहा : 'सुखराम !'

'क्या है ?' मैंने पूछा ।

'राजा के पास धन होता है ?'

'हां, बहुत ।

'तो मेरे साथ चल ।'

'कहां ?'

'जहां मैं कहूं ।'

'बता भी !'

'तूने मुझे बताया था ?'

'पर तू मूरख है । तुझमें अकल नहीं है । पहले बता दे ।'

'हां, मैं मूरख ही सही । चल, वहीं चलें । हम किले के नीचे घुसेंगे । शायद हमें वह खजाना मिल जाए ।'

मेरी आंखें चौड़ गईं । मैं सोचने लगा । क्या यह हो सकता है ? कौन जानता है भगवान ने ही कजरी के मुंह से यह सुझा दिया हो ! वरना मेरे मगज में यह क्यों आया नहीं ? मैंने हनुमानजी को सोने का हार बोल दिया । कैलादारी मैया के लिए नगों की छतरी बोल दी । घाटे वाले भैरों को सवा मन चून की मनौती की । मन हल्का हो गया । लगा, बस अब मैं राजा हुआ । वह फौज बनाऊंगा । फतह करूंगा । मैंने कहा · 'कजरी ! तुझे और प्यारी को पीली कर दूंगा ।'

'तो तू प्यारी को ले आ ।' कजरी ने कहा ।

मुझे याद आया । कहा : 'तू उसे नहीं सह सकती ?'

'क्यों नहीं सह सकती ! तू तो कहता था, वह मेरी बांदी बनेगी । फिर उसे मेरे बराबर क्यों कहता है ?'

मैं हंस दिया । मैंने कहा : 'चल, भूख लग रही है ।'

'रोटी भी नहीं खाने दी तैंने । तैयार छोड़ आई थी ।'

'जल्दी चल ।'

हम पहाड़ से नीचे उतरने लगे वह फिसलने लगी तो मैंने उसका हाथ पकड़ लिया

'धीरे उतर लाली ।' मैंने कहा : 'सभल के पैर धर। कही कोई पत्थर सरक गया तो वह पीछे पहुंचेगा, तू पहले पहुंच जाएगी ।'

पर हम लोगों को उमसे आधी देर भी न लगी उतरने मे, जितनी चढने मे लगी थी ।

हम सीधे डेरे पहुचे ।

पहुचते ही सुना, रामा की मा और बहू रो रही है। बच्चा मर चुका है। हम दोनों को बुरा लगा। वह बच्चा बडा ऊधमी था, खूब खेलता था। जब किलकारी मारकर मोटे कुत्ते भूरा पर बैठ जाता था तब कितना अच्छा लगता था ! भूरा उसे काटता न था। वह भी उससे ऐसा ही रहता था जैसे जानता हो कि यह तो बच्चा है। इस वक्त दूर खडा हवा मे सिर उठाए कभी-कभी रोने लगता था ।

मै आगे बढा। मगू मिला ।

'क्या हाल है ?' मैंने पूछा ।

'मर गया बिचारा ।'

रामा की मां ने कहा : 'मगू बिचारे ने चार आने दिए। इस वखत एक वही काम आया ।'

मैने कहा : 'मगू, तूने चार आने दिए। मैंने तुझे रुपया दिया था ?'

मगू सकपका गया। रामा की मा और बहू बच्चे की लाश के पास बैठी थी। चौंक उठी ।

मगू ने कहा : 'तूने मुझे उधार दिए थे। जब मुझे चुकाने ही है तो तू कौन मुझे खर्च का रास्ता बताने वाला ! मै जैसे मर्जी होगी खरच करूंगा ।'

मैंने कहा : 'मगू, तू इतना कमीना है !

कजरी ने कहा : 'अरे, वनबिलाव-सी डाढें क्या चमकाता है ! तू इस बच्चे से न निभा सका, तू उसकी अम्मा से क्या निभाएगा ? यह तो इसीका बच्चा है ।'

रामा की बीबी खड़ी हुई। उसने कहा : 'अरे कलमुहे ! तेरा यह रंग था ।' उसने चवन्नी फेंककर मगू पर मारी . 'ले जा ।'

मगू ने पैसे उठा लिये और चलने लगा। उस वक्त मुझे बहुत ही गुस्सा आ गया। मैंने उसका कन्धा पकड़कर कहा . 'कहां चला कमीने ? लेके चल दिया सोलह आने, जैसे तेरे बाप की कमाई है ! तेरे लिए दिए थे ?'

मगू को अपनी ताकत पर नाज था। उसने कधा झटके से छुडाकर कहा . 'मेरे बाप की नहीं,' और कजरी की तरफ इशारा करके कहा . 'तेरी अम्मा की कमाई है ?'

कजरी भभकी और उसने उसका मुंह नोच लिया। उसने कजरी को हाथ मारा। कजरी गिरी कि मैंने बकरकर हमला किया। मगू और मै धड़ से धरती पर आ गिरे। हम दोनो की कुश्ती हो रही थी। कभी वह मेरे बाल पकड़ता, कभी मै उसे दे मारता। रामा की मा और बहू चिल्लाने लगी। नटो की भीड़ इकट्ठी हो गई। हम दोनो को ही तेज गुस्सा था ।

कजरी मेरी ताकत जानती थी। वह आराम से खड़ी गाली दे रही थी : 'हरामी है देखो सब लोग। इसने मुझे मारा। पर ठहरे रहो ! अभी मेरा मरद इसकी चटनी करके धर देगा ।'

मगू की मा ने कजरी को हाथ लगाके टोका। कहा : 'अरी, क्या सिपाही के जा बैठी सो ता ऊपर दिखाती है ?'

चल खुस हो कजरी ने दांत निपारकर बदर-सा मुह बनाया

'अच्छा रे, तुझ हकार हैं, तो ले सभाल।'

उसने छूरा फेंका। मैं उछलकर बच गया। अगर वह मेरे लगा होता तो पसली काट गया होता।

'देखा!' कजरी ने कहा: 'आदमी रे! बंदर की तरह उछल-कूद तो पहले ही हाथ से करने लगा।'

मैंने उसको उठाकर मगू की तरह ऊपर घुमाया। बोली: 'अरे परमेसुरे! माफ कर। छोड़ दे, तेरे पांव पड़ूं। कैसी मर्दानगी दिखा रहा है अपनी लुगाई पर। कोई सुनेगा तो हंसेगा। तेरी कसम! मर जाऊंगी। दया कर। मैं तेरी गैया हूं।'

मैंने उतारकर नीचे रख दिया तो बोली: 'बैल नहीं तो कहीं का!'

'फिर चटकी?' मैंने कहा।

'तू हाथ चला, तेरे हाथ है; मेरे जीभ है, मैं जीभ तो चलाऊंगी ही।'

मैं हंस दिया। वह भी।

उसने कहा: 'यह मंगू रात को तुझ पर जरूर कभी हमला करेगा।'

'टुकड़े कर दूंगा।'

'अरे, अंधेरे में कहीं पीछे से कटार घुसेड़ दे तो?'

'मैं लड्डू हाथ में भरके तो नहीं चलता!'

'मैं तेरे पाव पड़ती हूं। मेरी बात तो सुन ले।'

'अच्छा कह।'

'इसे तू जेल करा दे। पहले दो बार हो आया है। एक जरा-सी रपट में जाएगा, सासत मिट जाएगी।'

'नहीं।' मैंने कहा।

'तू नहीं जाएगा, तो मैं तेरे लिए प्यारी के पाव पकड़ूंगी। सौत मेरी आप बन्द करा देगी।'

मुझे लगा मैं पागल हो जाऊंगा। मैंने उसे हाथों में उठा लिया। कहा: 'कजरी, तुझे मेरा इतना खयाल आता है! तू मेरे लिए प्यारी के पांव छूने के लिए तैयार है?'

'सच कहती हूं।' उसने कहा: 'यह बातें छोड़, अकल की बात कर। थाने में खबर कर दे।'

मैंने कहा: 'नहीं कजरी! मंगू भी हममें से है। गलती कौन नहीं करता! मर्दों का खेल था। दो-दो हाथ हो गए। बात निबट गई। मुझे उससे कोई बैर थोड़े ही है। मंगू को असल में लुगाई चाहिए। उसका कोई इन्तजाम करना चाहिए।'

और अचानक डेरे के दरवाजे पर मंगू दिखा। शायद वह आड़ में खड़ा था। उसके हाथ में कटार थी। उसने वहीं फेंक दी और दौड़कर मेरे पांव पकड़ लिये।

मैंने उसे सीने से लगा लिया और कहा: 'मंगू! मैं और तू इतने मजबूत हैं कि पहाड़ हैं। पर जब हम-तुम लड़ते हैं, तो हम दोनों कमजोर हो जाते हैं।'

कजरी ने दांतों-तले उंगली दबा ली। सब नट द्वार पर आ गए थे। उन्होंने कहा: 'मंगू ने माफी मांग ली?'

मैंने बाहर आकर कहा: 'वह क्या मुझे मारने आया था?'

उन्होंने कहा: 'हां! वह आखिरी फैसला करने आया था।'

मैंने कहा: 'सुनती है। कजरी! वह मर्द है। सामने आया था फिर से। तू बेकार की बात करती थी। मैंने नहीं माना।'

भीड़ चुप थी।

मैंने मगू को सीने से लगाकर कहा . यह मेरा यार है हम लोग आपस में एक दूसरे के दुश्मन नहीं हैं ।'

मंगू ने कहा : 'मै फैसला करने आया था, पर सुखराम शेर है। मैं इसकी बात पै रीझ गया हूं। सुखराम मरद है।'

भीड चली गई। मंगू भी चला गया। मैं और कजरी रह गए। मैं खाट पर लेट गया। वह घडा लेकर गई। लौटी तो पानी के साथ एक बटेर ले आई।

उसे भुनने को रख दिया और बोली : 'रस्ते में वह खरहा पडा। पर सिर पर घडा धरा था, नहीं तो मार लाती। बड़ा अच्छा था। खाल बिक जाती। मांस मिल जाता। चलो सुखराम ! तुम भी कहना कि लुगाई भी बडी मस्तानी होनी है। बटेर को मारा निसाना। बस, वहीं औंधी हो गई।'

उसने पंख-पर समेटे और चोच के साथ बाहर फेंक आई।

जब बटेर पक गई तो मिर्च और नमक रखकर चाकू से काटकर पास ले आई।

मैंने खाई। बडी अच्छी थी।

''कैसी है ?' उसने पूछा।

मैंने चिढ़ाने को कहा : 'ठीक ही है।'

'ठीक ही है ! अच्छी नहीं है ?'

'हां, अच्छी ही है।'

'तो इस फूटे-से ढोल से अब बोल भी नहीं कढता ?'

'जैसी तू, वैसा मैं !'

'क्यों ?'

'तू मन की बात क्या सहज कहती है ?'

'कैसे !'

'कब चलेगी अब ?'

'कहां ?'

'प्यारी के पांव पड़ने।'

कजरी चिढी नहीं; मुस्कराई।

बोली : 'तू बडा वो है !'

'क्या है ?' मैंने पूछा।

'चुप्प !' उसने कहा : 'सारी बात पंचो की सिर-आंखों पै, पै परनाला यहीं बहेगा। तू राजा है। तू गरजने वाला नहीं. तू बरसने वाला है। मेरा गला सूख गया, पर तूने नही सुनी एक भी। अपनी ही टेक निभाई है। लूंगी मैं भी, बदला लिये बिना नहीं छोड़ूंगी। तू मेरे पाव पकड न घिघियाए तो मेरी जान नहीं।'

'तू कहे, अभी घिघियाने लगूं !'

'आज तो माफ कर। मेरे पांव वैसे ही टूट रहे हैं। और मत मारियो मुझे। अरे, साझ हो आई। लकडी बीन लाऊं जंगल से। रोटी बनानी है। कहीं ठीक वखत प रोटी नहीं हुई तो दईमारा फिर मारेगा मुझे।'

'कह ले, कह ले !' मैने कहा : 'आज तक मारा नहीं है तुझे। किसी दिन बताऊगा।'

कजरी हंसती हुई दांत पीसती भाग गई।

12

और सुखराम ने कहा था—

मैंने सवेरे के बखत अपना सामान इकट्ठा किया और कजरी को साथ लेकर दो और लड़कों को लेकर मेले की तरफ चल दिया। मेला उसी गांव में था जहां बाहर की तरफ हमारी बस्ती बसी हुई थी।

मैंने खेल दिखाना शुरू किया। खेल खूब जमा। और कजरी के नाच ने तो समां बांध दिया। जब वह कमर हिलाने लगी तो देखने वालों के मुंह से आहें निकल पड़ी। वह जिधर देखती, उधर लोगों की मण्डली झुक पड़ती। जब वह जाटनियों की तरफ नाची तो जाटनियों में कानाफूसी और हंसी होने लगी। कजरी ने उन्हें गंदे इशारे किए। वे हंस दीं।

एक जाटनी ने मुंह में फरिया देकर कहा : 'रंडी कैसी चमको है!'

कजरी ने पलटकर कहा : 'मैं चमको, तू चौदिस।'

और दूसरी कड़ी इतनी गंदी थी कि जाटनियों में झेंप पड़ गई। मरद चिल्लाने लगे। गांवों के छैलाओं ने कजरी को रुपये दिखाए। कजरी ने घूंघट काढ़ लिया और वह उधर चली गई। हाथ फैलाकर गाने लगी। उसने वह गीत गाए कि छैला शर्मा गए और रुपये उनके हाथों से कजरी निकाल लाई और मुझे दे दिए।

हमने खेल के बाद घूम-घूमकर चंदिया-पकौड़ियां खाईं। कजरी ने कहा : 'नुकती ले दे मुझे।'

हमने नुकती खाई। आज वह खुश थी। पास आकर कान में कहा : 'कित्ते पैसे हैं?'

'कजरी, चौदह रुपये हैं।'

'सच?'

'तेरी सौगंध।'

'मुझे लगै, भगवान् ने सुन ली।'

'चल, कपड़े खरीद ले।'

'तू चुन लीजो मेरे लिए।'

'तू अपनी पसन्द के देख लीजो।'

एक-एक रुपया मैंने छोरों को खाने को दिया। वे सामान लेकर डेरे चले गए।

मैंने कजरी के लिए कपड़े की दूकान पर कहा : 'बौहरे! फरिया दिखाओ।'

'लेओ। आओ!' बनिये ने कहा।

उसने हरा, पीला और काला रंग सामने रखा।

'कौन-सा लेगी?'

'मैं क्या जानूं।'

बनिये ने कहा : 'तीनों रंग फबेंगे। चाहे जौन-सा ले लो।'

'मैंने कहा : 'पीला दे दे।'

छींट का लहंगा लिया, रेशम की चोली।

शाम हो गई थी। मेला पतला गया था। हम मैदान के बाहर आए तो सामने नज़र पड़ी। अधूरा किला खड़ा था।

मैं और कजरी उसको देखकर ठिठक गए।

'कजरी!'

'क्या है ?'

'चलेगी !'

'तेरे संग तो मैं जम के भी यहां चली जाऊंगी !'

हम दोनों उतरते अंधेरे में किले की तरफ चल दिए। किला टूटा हुआ था। एक ओर अधूरा था, सो उसकी मरम्मत नहीं हुई थी। मैं और कजरी फुलवाड़ी से होकर गुजरे और बिलकुल सुनसान में आ गए, जहां गुञ्जान झाड़ियां थीं, पर हमारे पास रोशनी नहीं थी।

कजरी ने कहा : 'चल, अभी बाजार होगा।'

हम लौटे। कपड़े लिये, डंडा पेड़ से काटा। तेल खरीदा। पलीता बनाया और दियासलाई लेकर हम फिर वहीं पहुंचे। झील बराबर में लहरा रही थी।

मैंने कहा : 'कजरी, तू यहां ठहर, मैं भीतर देख के आता हूं।'

'नहीं, मैं नहीं रहूंगी यहां।'

'क्यों ?'

'मुझे डर लगता है।'

वहां ऐसा भयावना सन्नाटा था कि मुझे भी दहशत-सी पड़ गई। पर उस वक्त मुझे बुखार-सा था। मैंने एक हाथ में कटार ले ली, दूसरे में जलती मशाल। फिर मैंने कहा : 'कजरी !'

'क्या है ?'

'तू मसाल पकड़ ले।'

उसने मसाल पकड़ी। मैंने उसकी कमर में बायां हाथ डाल दिया। उसका डर कम हुआ। बोली : 'यहां एक बावरी है। उसमें तहखाने का रास्ता है। मेरे बाप ने बताया था।'

हमने कुछ ही देर में एक शिवाले के पीछे की बावरी को ढूंढ निकाला, जो घनी इमलियों के नीचे पड़ी थी। बावरी क्या थी, चौखाना कुआं था। एक तरफ से उसमें पैर चल सकती थी। दूसरी तरफ सीढ़ियां उतरती थीं। मसाल की फरफराहट में हमने देखा कि सामने के बायें तरफ छोटी-छोटी सी तिदरियां बनी थीं।

कजरी ने कहा : 'यहां बावरी का मेला जुड़ता है।'

'मैं देख चुका हूं।' मैंने कहा।

'पर मेरा बाप जितना जानता था, उतना तू नहीं जानता।'

'क्या कहता था वह ?'

'कहता था, यहां जिन्न आते हैं पून्यों के पून्यों।'

मुझे चैन आया। आज दौज थी।

'पास ही बड़े महाराज की समाध है।' कजरी ने कहा; 'वे यहीं रात को आते हैं। तेरे तो पुरखा हैं। तुझे थोड़े ही तंग करेंगे।'

'हां, कजरी, वे तो मुझे रास्ता बताएंगे।'

उस वक्त अंधेरे में कजरी ने मसाल जंगल की तरफ करके कहा : 'यहां बघेर आता है।'

उसका चेहरा सफेद पड़ गया था। मैंने उसे सीने से लगाकर अपना मुंह उसके माथे पर रगड़ा। उसे ढांढस बंधा। तभी बावरी में लगा, कोई छुन-छुनकर बिछिया बजी और हम चौंक उठे। तभी अंधेरे में कोई भारी आवाज में हंसा। कजरी ने कहा 'कोई इसमें है जरूर। कहते हैं, एक गुजरी इस बावरी में सास से तंग आके डूब मरी थी वह यहीं रहती है वह कांप रही थी

मैंने कहा : डर नहीं कजरी। हमारे पास आग है। कोई जानवर पास नहीं आ सकता। ला, मुझे दे मशाल, कहीं तू डर से छोड़ न दे।'

मैंने मशाल हाथ में ले ली। कजरी ने मेरी कमर पकड़कर दोनों हाथों से मुझे जकड़ लिया। फिर मैं आगे बढ़ा। कजरी मेरे साथ खिसकी।

'तू डरती है ?' मैंने कहा।

कजरी दूसरी तरफ देख रही थी। वह बोली : 'देख, देख ! गूजरी, गूजरी !'

उसका बदन पसीने से तर-बतर हो गया। अंधेरे में सामने एक खंभे की आड़ में दो पीली-पीली आंखें चमक रही थीं।'

कजरी ने कांपती आवाज़ में कहा : 'ओझल हो जा परमेसुरी ! तुझे गंगा निह-लाऊंगी।' लेकिन आंखें चमकती रहीं और एक बिल्ली निकल आई। कजरी ने कहा 'देखता है, बिल्ली बन के आई है। चली गई।'

उसने एक लम्बी सांस ली।

मैं सीढ़ियां उतरने लगा। अन्त में हमने साफ देखा कि पानी चमक रहा है। उसी समय कोई बड़ी जोर से चिल्लाया, जैसे बच्चा रोया हो और वह कोई बड़ा सा। पखेरू उड़ता हुआ दिखाई दिया। उसके फड़फड़ाने पंखों की चपेट से वहां की हवा हिल-हिल उठी। वह पखेरू नीचे को चहराया। कजरी के मुंह से चीख निकल गई।

जब वह सुस्थिर हुई तो हम आगे बढ़े। पर कजरी मुझसे लिपट गई। उसके दिल की धड़कन से हिलते सीने के कारण मैंने उसकी धड़कन को साफ सुना। अब जंगल से तेंदुओं और कुत्तों की और गांव से पुकारों की चोट-फेंट होने लगी थी। उससे सारी हवा डरावनी होने लगी थी। मैंने कजरी को आंखें भरकर देखा और कहा : 'अगर तू डरती तो काम कैसे चलेगा ?'

'मैं जानकर तो नहीं डरती !'

'तेरा बाप शेर था कजरी। तू उसकी बेटी होकर गोबर कर रही है। तुझसे सरजा नहीं जाता ?'

कहीं दूर बघेर की गुर्राहट सुनाई दे रही थी। कजरी कांपने लगी। मैंने कहा 'दूर है। झील पै पानी चाटने आया होगा कुत्ता।'

और मुझे उस वखत अपने बाप की याद हो आई, जिसने दो बघेरों से लड़ते हुए जान गंवा दी थी। मुझे बघेर से घिन हुई। इच्छा हुई कि एक बार उससे लड़ूं। मुझे फटकन हुई। कजरी को ढाढ़स हुआ। फिर हम एक अंधेरे छोटे दरवाजे के सामने पहुंचे। मैंने मशाल झुकाकर देखा। कमरे में जाले लगे हुए थे। उसकी हवा गंदी थी। मैं नीचे उतरा। कजरी मुझसे ऐसे लिपट गई कि कोई अनजान आदमी दूर से देखता तो समझता कि मैं चार पांव का जिनावर हूं। सच तो यों है कि वह जितना डरती थी, मुझे उतनी ही हिम्मत बढ़ती थी। वह औरत थी। मैं उसे चाहता था। और मैंने महसूस किया कि कि मैं असल में उसकी वजह से डटा हुआ था, वरना कभी का भाग गया होता।

हमारे कमरे में घुसते ही कई पटादीवलियों ने घुमड़कर चक्कर मारे और छुन-छुन करती बाहर निकल गईं। कजरी ने कहा : 'मेरा दम घुट रहा है।'

हम अगली कोठरी में घुसे। उसकी धरती खुद गई थी। मैंने देखा, वह कोठरी तीनों तरफ से बन्द थी।

'बाहर चलो।' कजरी ने कहा : 'यह रास्ता नहीं है।'

मैं नहीं हटा। मशाल की भूरी चमक में मैंने देखा कि धरती से एक सीढ़ी उत-रती है।

मैंने कहा : 'कजरी !'

क्या है ?

'देखती है ?'

'सिड्ढी है।'

'चल, उतरकर देखें।'

'नहीं, लौट चलो। हमें राजा नहीं होना है। हम नट ही अच्छे हैं।'

'चुप रह ! मेरे साथ मेरे पुरखों का देवता है। तू मेरे साथ है।'

'पर मैं नटनी हूं, वे मुझसे गुस्सा होंगे। तू ठाकुर है !'

'तूने सुना नहीं, गंगा का पानी, सूरज की धूप और औरत की कोई जात नहीं है। यह तीनों सबके लिए समान हैं। ठाकुर के लिए धरती और औरत एक-सी। जिसे पांव के नीचे दबा लिया सो अपनी, अपनी जात की।'

मैं सीढी उतरने लगा। बडी तंग जगह थी। मेरे पीछे कजरी थी। जब हम काफी उतर गए तो एक चौडा दासा पड़ा। कजरी बुरी तरह से चिल्लाई। उसकी घिग्घी बंध गई। मैंने देखा तो थर्रा गया। मेरे सामने हड्डी का ढांचा खड़ा था।

मैंने न जाने कैसे कहा : 'तू कौन है ?'

कोई जवाब नहीं मिला। कजरी मेरी इन्सानी आवाज को सुनकर कुछ हिम्मत पा सकी। मैंने मसाल के उजाले में देखा। वह ठठरी किसी रस्सी से टंगी थी। तो यह किसीको फांसी पर लटकाया गया है। ठठरी टंगी थी। मैंने कहा : 'कजरी ! यह भूत नहीं है। हड्डी का ढांचा है।' मैंने उसमें कटार मारी। हड्डियां खड़खड़ाईं और कटार पार हो गई। तो यह बहुत पुराना है !

मैंने कहा : 'न जाने कब से टंगा है।'

'न जाने तू कहां आ गया है !' कजरी ने कहा : 'मेरा बाप इस रास्ते की कभी नहीं कहता था।'

यह सुनकर मुझे बड़ी खुशी हुई। मैंने मुडकर कजरी को कटार वाले हाथ से कसकर उसका मुंह चूम लिया। कजरी में जान आई।

मैंने कहा : कजरी ! तेरा बाप क्या पा सका था ! कुछ नहीं। हम शायद ठीक रास्ते पर आ गए हैं।'

'सो तो ठीक है।' कजरी ने कहा : 'पर खजाने पर बाबा बैठता है। बली मांगेगा तो ?'

'तो अपनी बलि दे दूगा कजरी। अगर मेरा पुरखा मेरा खून मांगेगा तो मैं दे दूगा।'

कजरी ने कहा : 'भली कही। तू अपनी बलि दे दीजो, मैं डर के मारे मर जाऊंगी। इससे तो भली यही है कि तू मेरी बलि दे दीजो न ! तू राजा हो जाए तो मेरे लिए इससे बढ़कर और क्या होगा !'

उस वक्त मेरे मुंह से निकला : 'नहीं कजरी ! मुझे नहीं चाहिए यह हुकूमत। मुझे राजा नहीं बनना। मुझे तू चाहिए !'

कजरी का डर अब दूर हो गया। उसने अब लाज छोड़कर पहली बार मेरा मुंह ऐसे चूम लिया जैसे मैं औरत होऊं और वो मरद हो।

'मैं तुझे इतनी अच्छी लगती हूं ?' उसने कहा।

'बहुत अच्छी। तू मुझे प्यारी से भी बहुत अच्छी लगती है।'

कजरी में बिजली-सी दौड़ गई। उसने कहा : 'सच ?'

'सच कजरी।'

तो खड़ा क्यों है गिरा दे इस आगे बढ़

मुझे अपने ऊपर जो ताज्जुब हुआ था कि कब कजरी मुझे प्यारी से अच्छी लग गई थी, वह डूब गया और नया ताज्जुब हुआ उसकी हिम्मत देखकर। प्यारी मुझे प्यार करती थी पर अपने हैकार से मुझपर हावी थी। कजरी सिर्फ मेरी थी और कुछ नहीं। मैं दोनों के दिल का फर्क देख रहा था।

मैंने कटार से रस्सी काट दी। ठठरी गिर गई। हम आगे बढ़े। आगे एक लम्बा दालान-सा था। ऊपर से बूंदें गिर रही थीं। सीलन थी।

मैंने कहा: 'कजरी, ऊपर झील लगती है।'

'पानी ऊपर चल रहा है।'

'आवाज सुनाई देती है न ?'

'हां।'

हम बायें मुड़े। एक बड़ी कोठरी थी।

घुसने ही लगा, किसी ने नाक के सामने बन्दूक उठा दी।

मैं पीछे हट गया। मैंने कजरी को हटा दिया।

मसाल झुकाई। देखा एक ऊंची टिकटी पर बन्दूक धरी है। हम कमरे में घुसे। लगा, चारों तरफ आदमी खड़े थे। कजरी चिल्ला उठी: 'अरी दैया!'

उसकी आवाज गूंज उठी और लगा कि सारा किला हुंकार उठा—अरी दैया! अरी दैया!!

कजरी थरथरा गई। मैंने पास जाकर देखा।

वहां कई पुराने जमाने के कपड़े दीवारों पर टंगे थे। लम्बे-लम्बे। मैंने एक को छुआ तो वह राख-सा गिर गया।

'सब गल चुके हैं कजरी।' मैंने कहा।

उसने भी छुए। दो और गिर गए।

हम अगले कमरे में गए। वहां हथियार ही हथियार थे। मैंने एक तलवार उठा ली। कजरी ने कटार अपने हाथ में ले ली। हम दोनों की हिम्मत अब पहले से बढ़ गई थी।

हम जहां भीतर पहुंचे वहां औरतों के कपड़े टंगे थे। कजरी उन्हें आंख फाड़-कर देखने लगी। खूबसूरत चोलियां टंगी थीं। लहंगे टंगे थे। फरियां थीं। कमर के पटुए थे। कजरी ने छुए तो वही हाल। राख-से झड़-झड़कर गिर गए। जितना ही वह छूती, उतनी ही उनकी राख-सी बनती जाती। कजरी में जोश आ गया था। वह कुछ पा लेना चाहती थी। मेरी नंगी तलवार और उसकी कटार चमक रही थी। धीरे-धीरे वे सब कपड़े धरती पर गिर गए। वह जर्जर कपड़ों का ढेर था। कजरी के हाथ कुछ भी नहीं लगा था। उसे गुस्सा-सा आ गया था।

'जाने कब के हैं!' उसने कहा।

हम आगे बढ़े। एक बड़ा कमरा था। उसमें एक आला था, उसकी दूसरी तरफ लगता था, कोई धक्के मार रहा है। कजरी कांप गई। मैं भी डर गया। लगा, वह सब अब ढह जाएगा और हम वहीं चूर हो जाएंगे, दफन हो जाएंगे। हम आगे चले। ऊपर एक जीना चढ़ना है। हम वहां दौड़कर पहुंच गए। हम दोनों हांफ रहे थे। कजरी ने ने कहा: 'वह कौन था उधर ?'

'लगता था, नगाड़ा-सा बजा रहा है कोई।'

'उधर कुछ है जरूर।'

'पर उधर जाएंगे कैसे ?'

'कोई तो रास्ता निकलेगा ही।'

'यहां से तो बाहर निकलना भी कठिन हो जाएगा [illegible]।'

'चलो, लौट चलें।' कजरी ने कहा।

'पर कोई दौलत बाहर नहीं रखता कजरी। अब तो हम [illegible] के पास ही आ गए हैं।' अचानक कोई हंसा। डर के मारे हम लोगों के रोंगटे खड़े हो गए। हम [illegible]। सामने उजाला-सा था। वहां पहुंचकर देखा, एक छत [illegible] टूटी हुई, जिसके [illegible] और घनी घास उग रही थी। वहां से हमें देखकर एक उल्लू उड़ गया। [illegible] में जान आई।

'यही था!' कजरी ने कहा।

'यह कई तरह से बोलता है।'

'चलो, सुखराम! अब निकल चलें। मेरी तो भीतर घुसने की फिर हिम्मत नहीं होती।'

'पर यहां से जाएंगे कैसे?'

'यह तो झील है इधर।' कजरी ने झांका।

उस समय दूर फुलवाड़ी की तरफ हो-हल्ला हो रहा था। [illegible] आ रही थी। वे बहुत बुरी तरह से चिल्ला रहे थे। कजरी ने कहा: '[illegible] है?'

'पता नहीं।'

मैंने देखा। भीड़ दूर झील के किनारे आ रही थी।

'कजरी, भाग चलें। लगता है, किसीने हमला किया है। तू औरत है।'

'ये आदमी नहीं हैं मूरख! मुझे लगता है आसेब है। अभी आ जाएंगे।'

मैंने कहा: 'कजरी! तू मेरी कमर से अपनी कमर बांध ले।' उसने फरिया उतारी। मैंने धोती उतारी। लंगोट पहने रहा। कजरी से कहा: 'लहंगा उतार दे और फरिया काछ ले लांग लगा के।'

कजरी तैयार हो गई।

मैंने कहा: 'नये कपड़े इस लहंगे की झूल में दबाके बांध दे।

उसने बांध लिए। मैंने कहा: 'इसे अपने सिर पै बांध ले।'

और फिर मैंने धोती से उसे अपनी कमर में बांध लिया। उसके बाद मैंने घुमाकर मसाल झील पर फेंक दी। वह गिरी और भुक से बुझ गई। अंधेरा छा गया। अब आंख ठहरी तो देखा, तारे पानी में झलमला रहे थे। हमारे हाथ का हथियार जा चुका था। मैंने कहा: 'कजरी, तू कटार फेंक दे।'

और मैंने तलवार को दांतों से पकड़ा और दोनों हाथ [illegible] करके झील में कूदने को हुआ।

कजरी ने कहा: 'मैया, पार लगा दे।'

उस आवाज में मुझमें ताकत भर गई। मैंने गोता लगाया और फिर हम पानी में थे।

जब मैंने बाहर सिर निकाला तो पता चला कि कजरी तैरना जानती है। वह भी सांस रोक गई थी। वह मेरी पीठ पर ऐसी जमी थी जैसे [illegible] हो। वह पांव चला रही थी हम कुछ ही देर में सरकंडों के बीच आ [illegible]।

किनारे आकर मैंने और कजरी ने कपड़े सुखाने डाल दिए। सब भीग गए थे। कजरी ने कहा: 'तुमसे क्या लाभ!'

दो घंटे बीत गए [illegible] का रात भी [illegible] हम गीले कपड़े पहने [illegible] लौट चले

हवा ठंडी थी। काटे खाती थी। कजरी के दांत बजने लगे। हम दोनों भागने लगे। सामने से एक कुत्ता भौंकता हुआ बढ़ा। मैंने उसके मुंह में तलवार घुसेड़ दी। वह उसकी पूंछ की तरफ निकल गई। फिर हम जान तोड़कर भागे।

सूखा उगा नहीं था। जब डेरे पर पहुंचे, कपड़े उतार सूखने डाल दिए और हम दोनों खोर ओढ़कर आग जलाकर बैठ गए। मुझे लौट आया देखकर भूरा मेरे पास आ गया। मैंने उसे चिपटाया और उसकी पीठ पर हाथ फेरा। उसकी शक्ल से लग रहा था जैसे उसे बड़ी फिकर हो रही थी। मैंने कहा : 'अरे!'

जाकर देखा, घोड़ा चुप खड़ा था। मैं पास गया तो उसने मुंह फेर लिया। मैंने प्यार से उसका मुंह थपथपाया। कान के पास प्यार से चूमा। तब वह हल्के से हिनहिनाया। मैंने कहा : छोड़ गुस्सा। मुझे देर हो गई। माफ कर। तू भूखा है न?'

घास लाकर सामने डाली।

कजरी कंडे सुलगा रही थी।

'क्या बात है?' मैंने पूछा।

'अरे, मैं मरी जा रही हूं भूख से। यह दो सकरकन्दी भून लूं।'

सकरकन्दी जल्दी ही भुन गई। हमने छीलीं। खाईं। पानी पिया। फिर हम दोनों ठंड से चिपटकर सो रहे। हमारी खोर काफी न थी। हम दोनों की गर्मी ही एक दूसरे को ताप दे रही थी। मैंने काम न चलते देखकर खटिया पै गाड़े के नीचे खूब पुआल डाल ली और कहा : 'अब तो ईख के पत्ते लाने होंगे। नहीं तो इस जाड़े में मर ही जाएंगे।'

'सर्दी अभी इतनी नहीं है।' कजरी ने कहा : 'पानी की ठंड है। ताप ले और।'

'इतना तो ताप चुका।'

कजरी ने उठकर आग तेज की। एक ओर कजरी, एक ओर मैं। वह गाड़े में लिपटी, मैं खोर में लिपटा, दोनों सो गए। कुत्ता डेरे के द्वार पर बैठा रहा। हम खुले में आग के सहारे पड़े थे। डेरे में आग जल नहीं सकती थी। सवेरे जब आंख खुली तो धूप निकली ही थी। शायद दो घंटे ही सोए होंगे, पर थकान उतर गई थी। बड़ी गहरी नींद आई थी।

13

और सुखराम ने कहा था—

जिस वक्त मैं प्यारी के यहां पहुंचा एक अजीब बात थी। आज वहां हल्ला हो रहा था। रुस्तमखां बैठा था। उसके दो मुंहलगे गांव के लुच्चों ने धूपो चमारिन को पकड़ रखा था और जूते लगा रहे थे। प्यारी बघेरनी की तरह बफर रही थी। और तमाशा देख रहे थे। धूपो गाली दे रही थी। मुझे देखकर लुगाइयों ने कहा : 'आ गया नटनी का घरवाला। अब तो ठसक दिखाएगी?'

मेरी समझ में नहीं आया। मैंने रुस्तमखां को सलाम किया। उसने कहा : 'आ गया सुखराम! देखो इस हरामजादी को!'

धूपो की तरफ इशारा था। मैंने कहा : 'क्या बात है?'

धूपो चिल्लाई : 'तेरी नटनी की धौंस मैं सहूंगी? मुझसे ढेर कहेगी? सो मैंने इसका बाप उधेड़ा है?'

मेरे पांव के नीचे से धरती निकल गई। दावे और चक्खन उसे जुतिया र[illegible] थे

मुझे बड़ा बुरा लगा। मैंने कहा : 'छोड़ दो उसे!'

और बीच में खड़ा होकर मैंने धूपो को ढक लिया।

'ओ हो ठाकुर!' प्यारी ने कहा : 'तू न्याव करने आया है? हट जा बीच से!'

मैं चिल्लाया : 'प्यारी, तू अंधी हो गई है! औरत पर हाथ उठवाती है! और वह भी एक गरीब पर!'

'मुझे बचा ले बीरन!' धूपो ने मेरे पांव पकड़ते हुए कहा।

बांके बढ़ा। मैंने उसका हाथ पकड़ लिया। उसने छुड़ाने का जतन किया तो मैंने उसको झटका दिया। वह 'हाय माड्डाला' कहकर बैठ गया। लोग-लुगाई बड़ी जोर से हंसे। रुस्तमखां कांपते पांवों से उठ खड़ा हुआ। मैंने झपटकर उसका हाथ पकड़ लिया और कहा : 'सरकार, क्या करते हैं! मैं दवा लाया हूं। कल दिन-भर जंगलों में ढूंढता फिरा। भीतर चलिए।'

प्यारी ने घूरा। मैंने कहा : 'भीतर चल!!'

मेरी कड़क सुनकर वह भन्नाकर भीतर चली गई। मेरे साथ रुस्तमखां भीतर गया। मैंने कहा : 'लेट जाइए, मालिक, लेट जाइए।'

वह खाट पर लेट गया।

मैंने कहा : हुजूर को बुखार है और हुजूर बाहर बैठे थे! यह कैसी बात! जान है तो जहान है सरकार!'

'मैं तो लेटा था सुखराम। प्यारी का कुछ उस चमारिन से झगड़ा हो गया था। उसकी वजह से मुझे जाना पड़ गया।' उसने कमजोर आवाज में कहा।

'मैं तो सरकार, आंखें देखकर ताड़ गया था कि सरकार की हालत अच्छी नहीं है। प्यारी गुस्सा हो गई थी हुजूर?"

'हां, उसकी उस चमारिन से कहा-सुनी हो गई थी।'

'कुछ बात भी पता चली, सरकार?'

मेरी खुशामद और बुखार की कमजोरी ने उसे शांत कर दिया था। बाहर भीड़ छंट गई थी। धूपो चली गई थी। बांके चला था। चक्खन छप्पर बैठा था, बीड़ी पी रहा था। मैंने गोली खिलाई और रुस्तमखां के पांव पर लकड़ी रखके पट्टी बांधी। परहेज बताया और कहा : 'सरकार, अब आप अगर परहेज कर गए तो आपकी जवानी लौटेगी। और हुमसती जवानी। प्यारी को भी दे दूं दवा? हुक्म है?'

'हां-हां।' रुस्तमखां ने कहा : 'ऊपर चला जा।'

मैं ऊपर गया। प्यारी तमतमाई खाट पर बैठी थी। मैंने सामने बैठकर कहा : 'बन्दगी हुजूर!'

उसका होंठ फड़क उठा, जैसे वह रो देगी। फिर वह चिल्लाई : 'चला जा यहां से।'

'चला जाऊंगा।' मैंने कहा।

'अभी चला जा।' उसने कहा।

'अभी नहीं जा सकता। सरकार के पट्टी बांधने आया हूं। घंटे-भर तक उसका असर देख लूं। फिर चला जाऊंगा।'

प्यारी अचरज से देखती रही। मैंने कहा : 'सरकार कहते थे, यहां कोई और भी बीमार है। कौन है? गोली खा लेने से फायदा हो जाएगा। परहेज में गुस्सा न करना भी है। सब ठीक हो जाएगा। हूं!'

मैं नहीं खाती उसने कहा

खा भी ले अब ! मैंने कहा पहले गोली खा के पानी पी ले फिर मैं सब सुन लूंगा। तेरी तो सहने को ही पैदा हुआ हूं !'

मैंने गोली निकाली। उसके पास गया। उसने मुंह न खोला तो पहले मैंने पानी का लोटा लिया। उसे खाट पै गिरा के मैंने मुंह भींच के गोली डाली और पानी डाला। उसने गोली उगलने की कोशिश की तो मैंने एक ठोंसा दिया। गोली गले के नीचे उतर गई। फिर मैं अपनी जगह आ बैठा।

प्यारी की आंखों में आंसू आ गए। रोते हुए कहा : 'तूने मेरी नाक कटवा दी।'

'सो कैसे ?'

'धूपो को तैंने बचाया। तैंने उसे सह दी।'

'बिलकुल गलत।' मैंने कहा : 'दो लुच्चे उसे जूते मार रहे थे। मैंने छुड़वा दिया।'

'तुझे खबर है, क्या बात थी ?'

'जो बात थी सो मैंने देख ली। तुझे गुस्सा आ गया था, तूने पिटवा दिया। तुझे हुकूमत चढ़ी हुई है। आदमी-सा-आदमी तुझे नहीं सूझता। पुरबिनी वाले बाबा कहा करते हैं कि नीच सिर पै चढ़ा तो धूल डालता है। बरसाती नदी की तरह बहता है। बिजली की तरह धड़कता है। गिरता है। सूरज सदा एक-सा ताप देता है।'

'तो मैं नीच हूं ?'

मैंने कहा : 'प्यारी, तू है क्या आखिर ? नटिनी ही न ? और सो भी करनटनी। हरजाई ! अपने मरद के रहते, दूसरे के घर पर रखैल बनकर बैठी है। सो तेरी नाक कहां ? भगवान ने हमें नीच बनाया है, सो हम भोग रहे हैं। अब सूहर यों कहे कि न्हा-धो के मैं गैया हो गया, सो कभी हुआ है ?'

'और वह धूपो ढेड़नी ऊंच है ?' उसने पूछा।

'मरजाद रखती है। पत नहीं बेची उसने।'

'उनकी बिरादरी का नेम और है, हमारी का और है।' प्यारी ने कहा : 'इससे क्या है ? मैं कैसे नीच हो गई ?'

'यों कि तूने हुकूमत पाके जुलम किया। उसका कसूर क्या था ?'

'मुझे जवाब देती थी।'

'कैसे ?'

'मैंने कहा : तू बाहर का आंगन लीपा कर, सो बोली, सरकार कहेंगे तो सब करूंगी, पर नटिनी की नहीं सुनूंगी।'

प्यारी ने मेरी तरफ ऐसे आंखें निकालकर देखा, जैसे कह रही हो कि अब क्या कहता है।

मैंने कहा : 'तो तैंने क्या कहा ?'

'अरे, तू कोई पेसकार है जो मुझसे पूछ रहा है ऐसे ? मैंने कहा : जवाब न दे निगोड़ी ढेड़ ! इतने जूते लगवाऊंगी कि चांद गंजी हो जाएगी। बस, बकने लगी। मैंने पिटवाया सुसरी को।'

'बुरा किया।' मैंने कहा।

'क्यों बुरा किया ?'

'तू नहीं लीप सकती आंगन ?' मैंने पूछा।

'तेरे डेरे लीपूंगी। यहां नहीं लीप सकती।'

मैं हंसा। मेरी हंसी से प्यारी को चोट लगी। कहा : 'तुझे मुझपै अब हंसी आती है। कब कहां था ?'

'कल कजरी के साथ था।'

प्यारी की एकदम से सूरत उतर गई।

उसने संभलकर कहा : 'तू तो उसे लानेवाला था न!'

'परसों आएगी वह।'

'क्यों?'

'आ ही नहीं रही थी।'

'तू तो बचन दे गया था?'

'बचन अभी टूटा तो नहीं? परसों आएगी वह।' मैंने दुहराया।

रुस्तमखां ऊपर आया। पलग पर लेट गया। उसने कहा : 'तूने सुना सुखराम?'

'क्या सरकार?'

'परसों अधूरे किले पर जिन्नात आए।'

मेरे कान खड़े हुए। पूछा : 'कब?'

'अरे, बाजार में बड़ी चर्चा है। मालियों का कहना है कि कल आधी रात पीछे, मशाल की रोशनी किले पर दिखाई दी। माली फुलवाड़ी में इकट्ठे हुए। फिर मशालें जलने लगीं। लोग कहते हैं, सैकड़ों मशालें जल उठीं और उजाला हो गया। एक आदमी दिखाई दिया। फिर लोगों को देखकर जिन्नों ने मशालें फेंकना शुरू किया। एक फेंकी तो लोग भागे। एक न टिका। सुना है तूने?'

'नहीं मालिक, मैंने नहीं सुना। हमारे डेरों में तो यह खबर नहीं पहुंची। बड़े अचरज की बात है!'

मेरे दिमाग में उसी बखत खयाल आया : तो ये जिन्न, भूत, आसेब, क्या ये सब झूठ बात है! पर मैं इतनी जल्दी तय न कर सका।

रुस्तमखां ने कहा : 'सुबह लोगों ने देखा कि बड़े जमींदार साहब के कुत्ते के मुंह से पूंछ तक एक तलवार भुंकी हुई है। तूने देखा है न सुखराम! कितने जबर्दस्त किस्म का कुत्ता है! सरकार इसे बम्बई से खरीदकर लाए थे। नस्ल का अंगरेजी था। उसने कितने ही आदमियों को फाड़ दिया था। बड़ा खतरनाक कुत्ता था। जमींदार साहब का था तभी कोई न बोलता था। मुंह में किसी ने एक ही हाथ में पूंछ तक तलवार निकाल दी। वह काम आदमी का नहीं लगता सुखराम। तूने तो उस कुत्ते को देखा था?'

'देखा था सरकार! वह बड़ा कटखना था। एक दिन मेरे पीछे भी लग लिया था।' मैंने झूठ ही कहा था।

'और', रुस्तमखां ने मुझे देखकर कहा : 'अभी तो ताज्जुब की बात अब आ रही है।'

'सो क्या?' मैंने पूछा।

'तलवार अब की न थी। देखकर लगता था, कोई दो सौ बरस की है।'

मेरी ऊपर की सांस ऊपर और नीचे की नीचे रह गई।

'दो सौ बरस!' मेरे मुंह से निकला।

'हां, हां, उसपर खुदा हुआ था मूठ पर---महाराजा जितेन्दर सिंह! और वे भी कोई तभी के राजा थे। कहते हैं, उन्होंने इस किले को बनवाया था।'

मेरा सिर चक्कर खाने लगा था। पर मैं संभलने की कोशिश कर रहा था। मैंने बीड़ी सुलगाई। कुछ देर में मैं ठीक हो गया।

मैंने कहा : 'प्यारी, तो मैं परसों आऊंगा। ये गोलियां ले। एक-एक गोली सबेर दोनों खाकर पानी पीना यह रूखड़ी है इसे ज्यों का त्यों जखम पै बांधना इसके। ज्यादा खिंचे तो थोड़ा पानी का भभका देना नीम का कौरा डाल के ज्यादा सिकाई न

न करना। और दोनों जने अलग रहना। और परहेज में स्वाद के लिए भी नमक न खाना, नहीं तो कभी न जाएगी। इसे पालना मत। यह ऐसी आग है जो सात पीढ़ी तक जलती है। बच्चे बिना नाक के-से पैदा होते हैं। सरकार, इसे बैद लोग फिरंग रोग कहते हैं। यह साहब लोगों के साथ यहां आया था। पहले हमारे यहां नहीं था।'

मैं उठ खड़ा हुआ। प्यारी का जी घुट रहा था। वह मुझसे बहुत-कुछ कहना चाहती थी, मेरे बारे में, कजरी के बारे में, धूपो के बारे मे, बीमारी-हारी, और न जाने क्या-क्या। पर रुस्तमखां आ गया था। अब हम क्या बात कर सकते थे! सो प्यारी घुट गई थी। मै तमाम बातें किले की कहना चाहता था, पर अब कैसे कह सकता था! अब मेरी चाहना थी कि जल्दी से कजरी के पास पहुंचूं और उससे सब कह दूं।

मैंने कहा : 'सरकार! यह दवा इक्कीस दिन की है। मैं परसों तक की दे चला हूं। बाकी साथ ले आऊंगा तीन दिन की। गोलियां ताजी रहनी चाहिए।'

तब रुस्तमखां पलटा। बोला : 'अरे सुखराम, सुन तो!'

'क्या है सरकार?'

'देख, होशियारी से जाना।'

'क्यों सरकार?'

'वह बांके बड़ा बदमाश है, कहीं हमला न करे तुझपर।'

'सरकार के रहते हुए?'

'क्या बताऊं सुखराम! वह बड़ा कुत्ता है। यह नहीं सोचता कि उसे कभी खुदा के सामने भी जाना पड़ेगा। मुझे तो बड़ा डर लगता है।'

'सरकार बीमार है, ज्यादा न सोचें।' मैंने कहा : 'फिर तुम्हारा भी डर छूट जाएगा।'

प्यारी मेरी बात समझ गई। मुस्करा दी।

'उसकी,' रुस्तमखां ने कहा : 'असल में धूपो पर आंख है। उसने उसे एक बार छेड़ा भी था। सो वह गंडासा लेकर खड़ी हो गयी थी। तब से वह बदला लेना चाहता था।'

मैने प्यारी की तरफ देखा। वह नीचे देखने लगी। मैंने कहा : सरकार! आप हुकम दें तो लाके आपके सामने उसे पटकूं?'

'अरे नहीं सुखराम! वह बड़ा काइयां है। तू उससे अलग ही अलग भुगत लीजो। मेरा नाम न लीजियो।'

'तो तू आज मत जाना।' प्यारी ने कहा। वह डरी हुई थी।

'पहले की और बात है प्यारी।' मैंने कहा : 'यहीं खाता था। पर अब वह छूट गया। अब कजरी बैठी होगी।'

'अरे, तो तूने कर ली?' रुस्तमखां ने ऐसे कहा जैसे टंटा कटा।

'सरकार, हम लोगों मे क्या करना, क्या न करना? पेट भरने को, उमर काटने को सहारा ढूंढ़ते हैं। किया-नहीं किया बराबर है। हममें तो रोज करते हैं, रोज नहीं करते। आप लोगों में इसकी इतनी बात है।'

'एक जून तू यहीं खाया कर।' प्यारी ने कहा।

'खा लूंगा प्यारी। सरकार का दिया ही खाता हूं। अब ये बीमारी है तो इनपै बोझ क्यों बनूं?'

रुस्तमखां चुप था। प्यारी को भी चुप होना पड़ा। पर मैं उसके चेहरे को पहचान गया कि वह लहू का घूट पीके चुप रह गई है उसे ऐसा लग रहा था जैसे मैं उसके हाथ से निकल जा चुका हूं तभी मैंने आज उससे उखड़ी उखड़ी बातें की हैं

कहा तो मैं इस सरत पर रुस्तमखां का इलाज करने वाला था कि प्यारी को मांग लूंगा, कहा मैंने आज इस बारे में बात भी न की। पर मैं असल में डर रहा था। मुझे यही ताज्जुब था कि यह मेरी की हुई बेइज्जती पी कैसे गया। मैं जानता था। मैं जानता था बाके उसके पास जूए के अड्डो से माल लाता था। वह गांव का छैला था। जात का अहीर था, पर बनियों पर डोरे डाले रहता था, बनिये रुस्तमखां के डर से चुप रहते थे। कुछ या बहुत करके अपनी बदनामी से डरते थे, सो चुप रह जाते थे। धूपो ने फटकारा होगा साले को, और मैं यह भी समझ गया कि रुस्तमखां काम निकालने को चुप था। अगर काम न होता तो मुझे जूते लगवा देता।

मुझे प्यारी पर गुस्सा आ रहा था, पर मैं चुप रह गया। उसकी वजह से भी मैंने प्यारी को नहीं मांगा।

'सरकार,' मैंने कहा : 'हुकम हो तो अरज करूं।'

'क्या है सुखराम ! कह दिया कर न !' रुस्तमखां ने आंख मींचकर कहा।

मैंने कहा : 'सरकार, रुपये की जरूरत थी। दवा बड़ी महंगी है हुजूर।'

उसने एक रुपया प्यारी को दिया और कहा : 'दे दे इसे।'

वह लेट गया। मैंने प्यारी को इशारा किया। मैं नीचे आ गया। वह पीछे-पीछे आ गई। बाहर के छप्पर में चक्खन बैठा ही था।

प्यारी ने धीरे से रुपया दे दिया। मैंने कहा : 'रुपया तू ही रख। तुझे नीचे बुलाने को मैंने वहाना किया था।'

'तो अब ले जा न !' उसने कहा।

मैंने ले लिया। मैंने धीरे से कहा : 'परसों यहां कजरी आएगी। पर उसकी एक सरत है।'

'क्या ?'

'तुझे उसके पांवों में महावर लगानी होगी।'

'तूने मान लिया है ?' उसने मुंह फाड़कर पूछा, जैसे उसपर बिजली गिरी हो।

'हां।' मैंने कहा।

उसने गुस्से से होंठ चबाया और पटाक से मेरे मुह पर चांटा मारा। चक्खन ने देखा तो उठकर बैठ गया। बोला : 'क्या बात है ?'

'कुछ नहीं,' प्यारी ने कहा, और मुझसे बोली : 'अच्छी बात है बालम ! जला ले मुझे तू ! तेरे लिए उस हरामजादी के महावर भी रच दूंगी।'

वह पीछे हट गई और फूट-फूटकर रो उठी। मैंने बढ़कर उसे दिलासा देना चाहा, पर चक्खन ने पूछा : 'क्या बात है सुखराम ?'

'कुछ नहीं भइया, रूठ गई है।' मैंने कहा।

'क्यों ?'

'मैंने दूसरी कर ली है।'

'यह बात है !' चक्खन फिर लेट गया और उसने आंखें बन्द कर लीं। चक्खन गडरिया था। गायें रखता था। थोड़ा लुच्चा था, थोड़ा व्यापारी था। डरपोक अव्वल दर्जे का था।

मैंने धीरे से कहा : 'रो-रो के हिया हलकान मत कर प्यारी। मेरी बात तो सुन ले !'

उसने मुड़कर देखा, जैसे पूछ रही हो।

मैंने कहा वह तुझसे डरती है मैंने यह कहा है कि तेरी तरफ से उसका डर मिटा दूं तू तो उस दिन उसकी बांदी बनने को तैयार थी '

उसने जवाब नहीं दिया ऐसे देखा जैसे मैं उसपर बड़ा भारी अत्याचार कर रहा होऊं।

'तो मैं चलूं ?' मैंने कहा।

'जा।' उसने कहा : 'परसों ले आइयो। मैं भी तो देखूं, तेरी उस रानी को जरा।'

मैं बाहर आ गया। चक्खन के मुंह पर मक्खियां उसके होंठों के कोनों पर जमा हुए थूक पर भिनभिना रही थीं और उसके मुंह में घुसकर घबराकर बाहर निकल आती थीं। मैंने जाना, वह सोया हुआ था।

पल-भर मैंने सोचा और फिर आम डगरे पर लौट चला। फिर ख़याल आया, लौटा और प्यारी को बुलाकर एक लट्ठ मांगा।

'क्या करेगा ?' उसने डरकर पूछा।

'खून।' मैंने कहा : 'ला, जल्दी निकाल।'

वह ले आई। मैंने कंधे पर धरा और तब मुड़कर देखा। प्यारी ने कहा : 'अरे, कोई ऐसी-वैसी बात मत कर दीजो तू। मैंने जाने कैसे-कैसे सभाल के तुझे ठीक रखा था। मरा रोक हटते ही नट हो गया।'

'तू क्यों डरती है ?' मैंने कहा।

'डरूं नहीं। औरों के भी तो हाथ हैं।'

'दांत भी है।' कहकर मैंने मंगू के दांत के निशान दिखाए। प्यारी ने उंगली काट ली।

मैं चल पड़ा।

14

और सुखराम सोचता हुआ लौट चला।

आज वह नई दुविधा में पड़ गया था। उसे अपने ऊपर आश्चर्य हो रहा था। क्या वह सचमुच इतना बदल गया था कि आज कजरी के असर से वह प्यारी को अजीब-अजीब-सा लगने लगा था। क्यों वह कल तक इतना दबा हुआ था और अब उसके मन पर से वह तमाम अधिकार की वञ्चित अवस्था ऐसे ढुल गई थी जैसे बहुत बड़ी बाढ घिरी हो, जिसमें से पर्वत का शिखर फिर ठोस बनकर निकल आया हो, जिसपर चंदोए की भांति आकाश चक्कर काट रहा हो। वह समस्त जल, जो कल तक सबको डुबा रहा था, आज उसी पर्वत के चरण पर मर्मर-मर्मर कर रहा था।

प्यारी आई थी। लहंगा छींट का। उसके ऊपर उसके गोरे-गोरे हाथ उसकी सुरमई चोली की बांहों में से निकले हुए थे। सिर पर हरी फरिया थी। होंठ के ऊपर बुलाक हिल रहा था। फिर भी क्यों सुखराम उसे देखकर भी आज नहीं देख सका था। वह मन में से झांकनेवाला कौन था जो कल तक आंख बन्द कर लेने पर भी उस छोटे तन को विराट बनाकर भी मन में समा देता था ? प्यारी की अधिकारहीनता आज बार-बार लोटने लगी थी, धूलि में, धूलि में। उसकी आंखों में स्नेह था। स्नेह जो चिरतन जीवन की शाश्वत शक्ति है, जिसकी मादकता में ही दिगंतों में उज्ज्वल ज्योति विकीर्ण हो रही है, वही उसकी पुतलियों में आज फिर दोनों बांहें खोलकर सदा की भांति प्रतीक्षा करता हुआ खड़ा था। किन्तु वह आवाहन रुककर क्यों गया था ?

आज उलाहना ही दहलीज़ था जिसपर मान रूपी चरण धर वह उन्मादिनी

अपने प्राणों का आक्रोश अपने ही भीतर रोके रखी हुई थी भीतर गूंज उठती थी किन्तु बाहर आते-आते वह दृष्टि-सी स्निग्ध ही जाती। तीर दिखाई नहीं देता था, पर उसकी अनी न जाने कैसे हृदय में गंस रही थी भीतर, बहुत। उसे खींचकर निकालता था परन्तु विवशता कैसी विचित्र थी कि सुखराम जितना ही उसे खींचने का प्रयत्न करता, लहू तो दिल को भर रहा था उफन-उफनकर फैलता हुआ, पर लोहे की गाग निकलने का नाम नहीं लेती थी।

प्यारी हिरनी बनकर अब देख रही थी। शिकारी ने बीन बजाकर मोह लिया था। पर जब वक्त आया तो उसने हिरनी को मारा नहीं, छोड़ दिया। तन्मयता के बाद तड़प नहीं मिली।

वह अपना न्याय नहीं दे पा रही थी। वह पराये की रखैल थी। उसने ही तो सुखराम को निरीह जानकर छोड़ दिया था। क्या वह उसी जिन्दगी में अपने संकुचित दायरे के भीतर सुखी नहीं रह सकती थी? तृष्णा का चोर जो उसके भीतर ही भीतर था, आज उसकी प्रेम की दीवार में सेंध लगाकर अन्त में उसकी विश्वास रूपी गठरी पर ही हाथ डाल रहा था। और अब वह 'चोर-चोर' पुकारकर दूसरों की सहायता लेने की भी अधिकारिणी नहीं रह गई थी।

कजरी के आ जाने से उसमें द्वेष भड़का था। क्यों? क्या बिगड़ गया था प्यारी का? वह तन बांट सकती है पर मन नहीं बांट सकती। पर क्या मन सचमुच ही तन से बिलकुल अलग होता है? क्या तन की भूख भी मन की स्वीकृति को नहीं आत्मसात् कर लेती? तन में ही तो मन का आवेश प्रकट होता है।

किन्तु प्यारी यह नहीं जानती। वह तो सुखराम को जानती है। बाप मरा तब नैक न रोई, मां को उसने अलग कर दिया। अब तक अपने में भूली थी, अपने ही केन्द्र के चारों ओर उसने अपनी सत्ता की परिधि खींच रखी थी, किन्तु अब वह रेखा जो चारों ओर से अपने भीतर ही बन्द थी, अचानक सुखराम ने उसे एक ओर से खींचकर लम्बा कर दिया था और वह खिंचती ही चली आ रही थी, उसका जब अन्त ही दिखाई नहीं दे रहा था।

वह कह उठी थी कि सुखराम ने कजरी के लिए उसका अपमान किया था। कहते समय कितनी घुमड़ थी! उसको देखकर सुखराम को लगा था, जैसे पुरवैया के थपेड़ों से बादल झूमकर चमक रहे हों और बिजलियां पांवों पर लरज गई हों। वह आकाश का-सा अथाह दाह था, दाह था, क्योंकि दुख पाकर धरती के रस ने मरोर भरी थी।

और सुखराम ने मान लिया। उसने सिर झुका लिया था। क्या वह सचमुच अपराधी था? क्या उसने उससे विश्वासघात किया था? क्यों नहीं कह सका वह कि उसकी अपनी भी एक सत्ता थी, जो असंख्य मनुष्यों के बीच में उसकी अपनी ही थी। जिस प्रकार प्यारी का संसार उसको अपना केन्द्र नहीं समझता, वैसे ही सुखराम की दुनिया भी अपना केन्द्र उसे नहीं, केवल सुखराम को समझती है। परन्तु उसमें संकोच आ गया। वह नहीं कह सका।

पर कजरी ठीक ही तो कहती है। उसका मन आ गया। वह अपने मरद को छोड़ आई। और जब छोड़ा तो साल को दो टूक कर आई। अब उसके पीछे कोई उलझन नहीं, कोई ऐसी वफा नहीं, जो वह किसी दूसरे के पास धरोहर बनाकर रख आई हो। उसे न किसी से मांगना है, न किसीका दिया चुकाना है। अपने ही समर्पण में उसकी विजय का गौरव निहित है, क्योंकि उसने अपने को दिया है, दिया है केवल अपने लिए सुखराम को लेकर

यह आग सुखराम ने लगाई है। उसने दो पत्थरों को टकरा दिया है और आग की छिटकती चिनगी ने सुखराम को ही रुई बनाकर पकड़ लिया है।

परन्तु मन नहीं भरता। वह कौन-सी पुकार है जो निरभ्र दाह से पीड़ित आकाश को अपनी कुहू-कुहू से विदारित कर देती है, वह गरज से मेघों की प्रिय-प्रिय छाया में कान्तारों को प्रतिध्वनित कर देती है ? सुखराम नहीं जानता। वह भला करे भी तो क्या ? नहीं, यह आग उसकी अपनी लगाई हुई है। उसने क्या अनजाने ही प्यारी से बदला लिया है ? क्या उसने प्यारी को बताया है कि प्रेम क्या है ? वह जो अपने को मिटा देना है और जिसमें अपने किए की शक्ति का अनुभव ऐसा है कि अपमान नहीं हो सकता। उसे ग्लानि नहीं सता सकती, उसे अधिकारों की याचना नहीं करनी पड़ती। उसे बैल की तरह जुआ ढोकर सानी के लिए रंभाना नहीं पड़ता। उसके तो तितली के-से पंखों में फूलों का पराग अपने-आप चिपक जाता है।

कजरी आएगी। उसे घमंड होगा, पर मन में वह पानी-पानी होगी कि मुझे मेरा मरद दूसरी के पास लाया है। क्यों लाया है ? इसलिए कि वह अभी तक पहली को भूल नहीं सका है। गोया कजरी अब प्यारी की बांदी है। पर आना उसे पड़ेगा, क्योंकि सुखराम चाहता है। चाहता है कि इसके लिए कजरी प्यारी के पास जाए। कितना विक्षोभ भरेगा उसके मन में ! अपनी ही सौत के सामने जाकर उसे सिर झुकाना पड़ेगा। परन्तु इसमें क्या है ? उसके बाद क्या होगा ?

प्यारी महावर रचाएगी। कजरी खाट पर बैठेगी। उसके नंगे पांवों को प्यारी पहले धोएगी और फिर महावर रचाएगी। कैसा अजीब लगेगा वो सब ! कैसे बैठी रहेगी कजरी ? क्या उसमें इतना अहंकार है कि फिर भी पांव न हटाएगी ?

तलवार पर तलवार बजेगी और सुखराम बैठा उनकी झनझनाहट को सुनता रहेगा ? उस समय वह केवल दर्शक बनकर क्या रह सकेगा ? प्यारी के हाथों का जब कजरी के पांवों से स्पर्श होगा तब सुखराम क्या करेगा ?

सुखराम सोच नहीं पाया कि उसने यह क्या कर दिया।

प्यारी पर यह आघात कब होगा ? कैसे सहेगी वह ? और वह भी अब जब वह सिपाही के बैठी है ! सिपाही एक दिन वैभव का पुतला-सा दिखाई दिया था। पर प्यारी उस वैभव से हार क्यों गई ? आज वह उसका ही प्रायश्चित्त करेगी ?

किसलिए ?

सुखराम के लिए।

वह उसका कौन है ?

उसका प्रेमी है।

प्यारी उसका कहना न करे तो ?

सुखराम उसका नहीं होगा।

क्या सुखराम का प्यार आज शर्त पर जिन्दा रहना चाहता है ?

क्यों नहीं !

पर पहले तो ऐसा नहीं था।

उस समय प्यारी पर भी बंधन न थे।

पर प्यारी के बंधन तो सुखराम की रजामन्दी से हैं।

हुआ करें, पर वे उसे पराया बनाए हुए हैं।

पर सुखराम ने कजरी को करके क्या दगा न की है ?

नहीं।

क्योंकि वह मरद है ?

मरद होने से ही क्या वह यह हक पा जाता है ?

नहीं; उसने अपने अभावों को भरा है।

प्यारी का अपमान कराने के लिए ?

नहीं; प्यारी को जरूरत ही क्या है कि वह सुखराम की हर चीज में, हर बात मे अपना हाथ डालना चाहती है ?

वह उसे अपना समझती है।

जहां अपनापन है, वहां अपमान कहां है ?

पर कजरी सामान नहीं है, उसके भीतर भी स्त्री है।

तो क्या हुआ यदि एक स्वायत्त सत्ता दूसरी स्वायत्त सत्ता से अपना मूल्यांकन करने की तृष्णा रखती है ?

पर सुखराम ने इसे माना कैसे कि प्यारी कजरी के पांव में महावर रचेगी ?

ठीक ऐसे ही जैसे उसने प्यारी के द्वार पर कजरी को ला खड़ा करने की बात मान ली थी।

'बजमारी ने मोह लिया है। मेरा सांवरिया सलोना क्या जानता था !

न जानता हो, सो बच्चा नहीं था। पर जाने क्यों, कुछ कहता नहीं था।

कोठरी के द्वार बन्द थे। प्यारी ताला खोल आई थी।

कजरी ने पटों को खोल दिया।

प्यारी ने बन्द द्वार को देखकर भीतर की दौलत का अन्दाज़ किया था।

पर कजरी ने उस दौलत को हाथों में उठाया था और ढेर-ढेर हीरे-मोती की लड़ियों से अपने अंग-अंग को सजाया था।

प्यारी को क्रोध आने लगा। उसे अपने हाल पर गुस्सा आने लगा। वह कजरी के सामने ऐसे झुका दी जाएगी ! पर कजरी का इसमें दोष ही क्या है ! अगर वह खुद उसकी जगह होती तो क्या वह चली जाती कहीं ? अजी, जाती उसकी जूती। जूती नहीं, हवा के चलते झोंकों पर उसकी जूती की धूल भी नहीं जाती। पर कजरी तो आने को मान गई। सुखराम ने डांटा होगा।

रुस्तमखां पड़ा है। उसका जोश कहां है ! वह कितनी तकलीफ पा रहा है ! अपनी गलाज़त अब सड़ने लगी है। भगवान ने भी कितनी अच्छी तरकीब निकाली है। पराई औरतों से छेड़ा करो, तो सड़ा-सड़ा के मारता है। न होता सुखराम, तो गुगरा कुत्ते की मौत मरता। प्यारी तो दो लात देके चली जाती।

प्यारी क्यों आई ? इसी गन्दे कुत्ते को बड़ा आदमी समझ बैठी थी वह एक दिन, क्योंकि सिपहिया कड़ी-कड़ी आवाज में बोलता था, क्योंकि वह मनचाहे ढंग से नटों को गिरफ्तार कर लेता था। प्यारी ने सोचा था कि वह इसकी आग को अपने भीतर बुझाकर सारी बिरादरी का सिर उठा देगी ? क्या सिर्फ इतनी ही-सी बात थी ? नहीं !

क्या यह हवस थी ? क्या प्यारी सुखराम के ऊपर इसे मसूक समझकर आई थी ?

प्यारी का मन उबकाई लेने लगा। यह कितना बुरा है ! सुखराम कितना खूबसूरत है ! कितना खूबसूरत है !

प्यारी ने एक लम्बी सांस ली।

किसलिए ?

क्योंकि आज वे सुनहली रातें फिर उसके सामने घूम गई थीं, जब वह तम्बू के सामने खुले मैदान में अपने प्यारे के पास सोती थी किसी रानी से कम थी वह

कैसी अजीब बात है !

और जवानी सदा तो नहीं रहती।

फिर उसका घमंड क्या करना !

पर सब लुगाइयां करती हैं।

प्यारी जब भरी जवान थी तब दुनिया क्या उसे बड़ी मक्खी का शहद-भर छत्ता समझ अपने होंठों पर जीभ न फेरती थी ? मजाल थी, कोई सामने से टकरा जाए आकर। और वही रुस्तमखां अंधेरे मे चोर की तरह कम्बल ओढ़कर आया। प्यारी का हुक्म भटक गया। शहद से हाथ धो बैठी। अब तो मोम के मोल भी नहीं बिक सकती।

पर प्यारी चली कैसे जाए ?

मेरी बेइज्जती करेगी वह।

पूछेगी : 'कौन हो ?'

क्या कहेगी प्यारी ?

तेरी सौत हूं ?

सौत !!

प्यारी का सिर झन्ना गया। क्यों स्त्री एक और स्त्री को नहीं सह सकती ? मरद क्यों दूसरे मरद को नहीं सह सकता ?

कमीनों मे परख नहीं होती।

बड़ी जात वाले तो इसीपर सबको आंकते है।

उनके यहां तो पतबरता की इज्जत है।

और सच तो, नटनी और कुतिया मे फरक ही क्या है ?

पर मरद को दोस क्यो नहीं लगता ? भगवान ने ही तो मरद को मरद और औरत को औरत बनाया है। अपने-आप तो कोई बनके दिखा दे।

औरत ही औरत को दोस लगाती है।

प्यारी समझ नहीं सकी।

उसने उठकर पानी पिया। थोड़ी सुस्थिर हुई। उसने आंखें मींड़ लीं और अंगडाई ली। मुंह पर हाथ रखकर लेट गई। वह सोचना नहीं चाहती, पर विचार बार-बार आ जाता है। वह तो असल में थक गई थी। बहुत थक गई थी। क्यों ? क्योंकि वह चलना नहीं चाहती ?

बेइज्जती करेगी। क्यों ?

मेरा सामरिया उसका जो है। उसीकी बात की ज्यादा कदर है। तभी तो वह ऐंठेगी। पर ऐसा क्यों होता है ? क्या जवानी और तन ही सब प्यार की जड़ है ? ठीक ही तो है। मरद भी तो लुगाई के आने पर मां का कहना नहीं मानता। दूध पिला-पिला के दिन-रात एक करके पालती है अम्मां, पला-पलाया लेकर मौज उड़ाती है बहू; और फिर उसे भी अन्त मे एक दिन मां बनके यही अन्त देखना पड़ता है।

रुपया मेरे हाथ था तो मैं खरीदती थी, उसके हाथ है तो वह खरीदेगी। पर रुपया है किसका ? रुपया खरीदता है, प्यारी और कजरी नहीं। टके का भाव टका नहीं जानता, सौदागर जानता है। यहां टका सौदागर का मोल-तोल करता है। उल्टी रीत है।

प्यारी फिर सोचती है। क्या प्यारी उस धन की मोहताज होकर धनी हो गई है या यह भी उसकी एक दूसरे तरह की सदा से चली आती हुई मजबूरी में ही भूखी-प्यासी गरीबी ही है ?

कजरी क्या वैसी ही मजबूर नहीं है

है
फिर घमण्ड किसका ?
जगत का न्याय यही है !
मजबूरी ही न्याय की स्वतन्त्रता है।
पर उस मजबूरी में भी वह मालकिन है।
और प्यारी ?
कुछ नहीं ?
क्यों ?
क्योंकि वह तो तराजू पै चढ चुकी।
कजरी नहीं चढी सो जीत गई।

प्यारी गुलाम है। वह भी गुलाम है, जो अपने मन की नहीं कर सकता। बंधन उसे जकड़ लेते हैं और वह छटपटाता है।

पहले भी क्या वह मन की कर पाती थी ? कितनी मुसीबतें नहीं थीं तब ? चारों तरफ से बरसती थीं।

पर सब-कुछ रहते हुए भी उसमें कचोट नहीं थी। किसीका हाहाकार नहीं था। सब अपना था, अपना था, पराया उसमें कुछ भी नहीं था, न उसके होने की कोई गुंजाइश ही थी।

प्यारी ऐसी जगह रहती है जहां उसका मन नहीं मिलता। वह रुस्तमखां से नफरत करती है। उसीने उसके जवानी के फूल को जहर से बुझा दिया है। ऐसा जहर कि अगर इसे सुखराम सूंघ ले तो उसका भेजा तक सड़ जाए। तभी तो उसने छूने नहीं दिया अपना तन। कैसा-कैसा रिसाता था सुखराम उस बखत ! उसी बखत प्यारी ने सुखराम से कह क्यों न दिया ? तभी वह गलत समझा और कजरी का उसपर दांव चल गया। वरना उसकी क्या मजाल थी जो उसे फुसला लेती। पर मौका चुक गया। अब चिड़ियां खेत चुग गईं, तब पछताने से लाभ ही क्या है ?

प्यारी जी नहीं रही है, दिन काट रही है।

वह जीना चाहती नहीं।

भगवान अभी क्यों नहीं उठा लेता ? ऐसे ही आंखें मुंद जाएं तो क्या नुकसान है ? प्यारी को चैन पड़ जाएगा। सारी झंझट ही उठ जाएगी। कोई परेशानी नहीं रहेगी।

प्यारी आंखें मीचे पड़ी है। वह भगवान से प्रार्थना कर रही है—मुझे उठा ले। अपने पास बुला ले। दुख दे-देकर, मुझे जिला-जिलाकर न मार। मेरा पाप क्या है ? पराये मर्दों के संग सोई हूं तो तूने मेरी जात ऐसी बनाई क्यों जिसे कोई हक नहीं। तूने मुझे औरत बनाया क्यों ? तभी तो आज यह बीमारी भोग रही हूं।

रुस्तमखां कह रहा है : 'अल्लाह, मेरे गुनाहों को माफ कर। मैंने जो कुछ किया है, वह सब मेरी नापाक जिन्दगी की लम्बी-काली फेहरिस्त है।'

प्यारी सुन रही है। उस स्वर में एक व्याकुलता है, जैसे कोई तड़पते हुए नरक में से घुट-घुटकर बोल रहा है। आज यन्त्रणा फूट-फूटकर मवाद की तरह निकल रही है।

क्या वह दयनीय नहीं है ! क्या वह इस लायक नहीं कि कोई उसे उठाकर पानी पिला दे ! पर क्यों ? क्या उसने कभी प्यासे को दो बूंद पानी भी नहीं पिलाया है ? प्यारी सोचती है : भगवान ! तूने कैसा दण्ड दिया है ? थोड़ा-सा पाप किया था प्यारी ने कि वह इसके साथ आके रही थी सो भगवान ने उसका भी संग ही दंड दे दिया वह

अपने सुखराम को छोड आई थी, उसका नतीजा क्या उसे भोगना नहीं पड़ेगा ?

प्यारी करवट बदल रही है। रुस्तमखां फिर बड़बड़ाता है 'ऐ खुदा ! तूने मुझे किस कदर तकलीफ दी है। यह क्या तू नहीं जानता ? क्या मैं इसी लायक हूं। आह !'

फिर वह सर्द आह निकलती है और प्यारी के कानों के पास आकर मच्छर की तरह भनभनाने लगती है। प्यारी उसे नहीं सह सकती। वह उसे आराम नहीं करने देती।

प्यारी की देही तप रही है, पर वह नहीं महसूस करती। वह चादर ओढ़े है। और ओढ़कर लेटे रहना कितना अच्छा लग रहा है। चुपचाप, शान्त। हाथ-पैर डुलाना भी अच्छा नहीं लगता। वह बीमार है। पर वह रुस्तमखां का दुख देखकर खुश हो रही है। उसे लग रहा है कि उसका पाप घट रहा है।

रुस्तमखां भर्राए गले से कह रहा है : परवरदिगार ! तू रहमदिल है। मैंने सब गुनाह किए है, मैं मानता हूं। कोई ऐसा नहीं है जिसे मैंने अपना नापाक दिल लगाकर नहीं किया हो। फिर भी तेरा हाथ सबको पनाह देता है। मैंने रोज तेरे सामने घुटने टेके है, सिजदा किया है।'

प्यारी को लग रहा है, वह बहुत दीन हो गई है। उसके हाथ-पांव अब सुन्न-से हो गए हैं।

वह क्यों नहीं भगवान को पुकार रही है ?

रुस्तमखां जैसे पापी के मुंह से भगवान का नाम सुन-सुनकर प्यारी को लाज आ रही है। वह किस मुंह से भगवान से प्रार्थना करे ! वह तो अपने को पापिन समझती है।

क्यों ?

क्योंकि उसने सुखराम को छोड़ दिया था। प्यारी अपनी आंखें मींचकर अपने हाथों और पांवों को समेटकर छाती और पेट से लगा रही है। सारा शरीर गर्म है। गरम-गरम भभक में एक चैन है।

और रुस्तमखां हल्के-हल्के स्वर में कुछ गा रहा है—गा रहा है धीरे-धीरे। वह कुछ प्रार्थना कर रहा है। दुख भी कितनी अजीब वस्तु है ! उसमें इन्सान सिर्फ इन्सान रह जाता है। सुख में इंसान के फर्क शुरू होते है। वह धनी-गरीब बनता है, तन्दुरुस्त रहने पर दूसरों पर जुल्म करता है, पर दुख में बच्चे की तरह हो जाता है।

गाना उसके कोठे से निकलकर आता है और प्यारी को लगता है कि वह गाना बहुत दूर-दूर तक चलता जा रहा है। वह करुण पुकार उसके मन को सान्त्वना दे रही है। मरहम-सा लगाती हुई, सारी जलन को मिटाती हुई।

प्यारी को वह अच्छा लग रहा है। वह चादर से मुंह भी ढक लेती है। और फिर गर्म-गर्म सांसें चादर के भीतर ही भीतर भरती हैं और सब-कुछ गर्म हो जाता है। बिलकुल भभकता हुआ।

प्यारी खुश होती है। वह कितनी शान्त है। अब भी उसके अंगों में जलन है, पर धीरे-धीरे कम होती जा रही है। सुखराम की दवा ने फायदा किया है। वह कहता था, दवा के असर से भी बुखार आ सकता है। अगर बुखार तेज हो तो समझना चाहिए शर्तिया फायदा होगा।

तो क्या वह अच्छी हो जाएगी ? वह फिर स्वस्थ हो जाएगी, तब तो वह सिपाही को छोड़ देगी और सुखराम के पास ही चली जाएगी। तब वह कितना सुख पाएगी ? आनन्द फैल जाएगा

वह सोच रही है, सुखराम से वह क्यों बंधी है ? उसे यही क्या दुख है जो वहां जाकर सब ही सुख हो जाएगा ? यहां कम से कम उसकी हुकूमत तो है। वहां क्या है ? वहां मरद पुलिस की बाट जोहते है, औरतें भूखे बच्चों के लिए पराये मरदों की ! और फिर ! दुख ही दुख।

पर वहां सुखराम है। और इसीलिए वह वहां जाना चाहती है। सुखराम के पास वह रहना चाहती है।

यह उनके मन की बात नहीं है। दुनिया में बहुत-बहुत लोग होते हैं। सब तो सबको नहीं चाहने लगते ? यह क्या है जो सूप में फटके हुए दाने की तरह से अपने को भी जाने वाले के ही पास रखता है ! पास रहना ? पर पास रहने वाले सभी तो पसन्द नहीं आ जाते ? फिर जब मन रमता है तो क्यों ? और किसी एक की ही चाहना क्यों हो जाती है जो मन पर लकीर खींच जाती है ?

उसे उसके साथ बिताई हुई रातें याद आ रही है। एक-एक करके वे अनेक हैं। वे अंधेरी रातें, जब तारों को देखते-देखते बीत गईं। वे रातें, जब चांदनी में प्यारी उसको देख-देखकर मुस्कराती रही। वे बरसाती रातें जब हिनकोले खाता आसमान तबू के बाहर घहराया करता था, और वे रातें जब आग जलाकर दोनों उसके दोनों ओर आग तापते रहते थे। वे सब रातें कितनी अनबूझ थीं ! तब जैसे दुनिया में कुछ था ही नहीं। मन को सांसत ही नहीं थी। नींद पलकों के पंख दबाया करती और सपने बरौनियों के बिछौनो पर करवटें बदलते थे।

वह पहली रात कैसी थी !

प्यारी का दिल धड़क रहा है। वह रात ! वह शराब पीकर आई थी। भीतर इसीला और सौनो बात कर रहे थे। बाहर सुखराम उसे गोद में लिये बैठा था और ठंडी-ठंडी ओस गिर रही थी। उस दिन लगता था कि रात सदा ऐसी ही बनी रहेगी। तन का सम्बन्ध तो उसने और भी किया था, पर उस दिन उसके रोम-रोम में एक भीगी सिहरन थरथरा उठी थी। वह क्या थी ? वही तो सुखराम से उसकी प्रीत थी। सुखराम बचपन का प्यारा दोस्त था और अब वह उसका मरद है।

प्यारी करवट बदल रही है। विचार टकरा रहे हैं।

दुनिया में सब होता है। पर जब तक मन का मीत नहीं मिलता तब तक लोग कहते हैं, इसने दुनिया में कुछ देखा ही नहीं। लोग को लुगाई और लुगाई को लोग न मिले तो सब लोग यही कहा करते हैं कि अभी दुनिया की जानकारी हासिल नहीं की। और लोग आदमी का विश्वास भी तभी करते हैं जब वह अपने को अकेला नहीं कहता।

दूर कहीं घंटे बज रहे है। शायद किसी मन्दिर में भोग लग रहा होगा। भगवान अब आराम करेंगे, क्योंकि सुबह से शायद वे काम करते-करते थक जाते हैं।

प्यारी का मन विश्रांत हो उठा था। अब थकान बढ़ गई थी। उसने उठकर खाट पर पांव समेट लिए और दोनों हथेलियों पर सिर रखकर कुछ देर बैठी रही। आज वह चुप ही बनी रहना चाहती है।

और दुपहर की गहराई बाहर सुनसान रास्तों पर अब छाया के टुकड़े की तरह तिनके-पत्तों की छाया में जाकर बैठ गई थी। कोई चिड़िया कहीं अकेली बोल उठती थी। फिर घर्र-घर्र करके मानो वह उस सन्नाटे को तोड़ देने का यत्न करती थी और फिर चुप हो जाती थी।

सुखराम अपने जोश में चला गया है। वह जाकर कजरी से अब कहेगा। क्या कहेगा ?

प्यारी मान गई है

सुखराम मे इतनी अक्ल कहां जो वह यह सब सोच सके ? प्यारी सोचती है कि यह सब कजरी की चाल है। सुखराम ने तो उसमे चलने की जिद की होगी। कजरी ने अपनी हेठी समझकर पहले मना लिया होगा, बाद में सुखराम की जिद् देखकर सरत लगा दी होगी।

सौत बड़ी चालाक लगती है। मैं भी देखूंगी, उसमें ऐसा कितना पानी है।

पर प्यारी फिर लेट गई। मन को सन्तोष मिल रहा है। वह यह सोचकर निहाल हुई जा रही है कि सुखराम को उसका इतना ध्यान है ? कौन नही जानता कि दुनिया मे जब मरद दूसरी लुगाई ले आता है तब पहली को मुड़कर भी नहीं देखता ? सुखराम तो ऐसा नहीं है।

उसने फिर चादर ओढ़ ली। अब वह और कुछ सोचना नही चाहती। पड़ी है तो तरह-तरह की सोच-भरी यातना आ घेरती है। पर यादों मे ज्यादा प्यारा उसके पास सहारा ही क्या है ?

कोई नही।

प्यारी को याद आ रहा है।

निरदयी ने ले चलने की एक बात तक नही की।

कजरी जो बस गई है मन मे।

रुस्तमखां कराह रहा है।

प्यारी सुनती है तो वह चौक उठती है। उसे ऐसे लग रहा था, जैसे वह घर मे अकेली है। उसकी आवाज सुनकर उसे झटका लगा, जैसे क्या यह अभी तक जिन्दा है !

क्या वह इस खूसट से बंधी रहेगी ?

प्यारी को ग्लानि हो रही है। उसे लग रहा है कि वह बंधी हुई तोती की तरह पिंजरे मे फरफरा रही है, बार-बार चोंच मारती है, पर लोहे की तानों से चोंच टकरा-कर रह जाती है और नतीजा कोई नही निकलता।

रुस्तमखां कहता है : 'प्यारी !'

वह नहीं बोलती।

वह फिर कहता है : 'प्यारी ! सो गई ?'

वह नहीं बोलती।

फिर बडबड़ाता है : 'सचमुच सो गई।'

'क्या है ?' प्यारी औंघ में जवाब देती है : 'पुकारा था क्या ?'

'हां !'

'क्यों ?'

'पूछता था, सो गई ?'

'सोई नही थी।'

'मैंने दो बार पुकारा था।'

'झपकी आ गई होगी।'

रुस्तमखां चुप हो गया है।

प्यारी पूछती है : 'क्या काम है ?'

'कुछ नहीं।'

'वाह !' प्यारी कहती है : 'ऐसे भी कोई बुलाता होगा ! मैं समझी, जाने क्या हुआ

कहता है तू तो परेशान नहीं है ?

'नही।

'एक बात पूछूं प्यारी ?'

'पूछो।'

'अगर मैं मर गया तो ?'

'तो ?' प्यारी पूछती है।

'तो तू क्या करेगी ?'

वह भाग जाएगी। वह यही कहना चाहती है : वह कहती है : 'नहीं, तुम मरोगे नही। अभी और जिओगे।'

'अल्लाह तेरी उम्र बढाए प्यारी !' रुस्तमखां कहता है।

'फिर उमर बढाकर क्या करूंगी ? औरत तो तब तक जिये, जब तक जवानी रहे, वरना फिर कौन पूछता है ?'

रुस्तमखां चुप हो गया है। वह तर्क नहीं करना चाहता। प्यारी फिर कल्पना कर रही है कि वह फिर तारों-भरे आसमान के नीचे सोएगी। कोई उसके बालों की लटो को धीरे-धीरे सुलझाता होगा। वह हंस देगी ! लाज-भरी।

रुस्तमखां काटता है : 'प्यारी ! सुखराम की दवा अच्छी ही-सी लगती है।'

वह उत्तर नहीं देती। वह दूसरी कल्पना कर रही है। उस समय उसके पास लेटा हुआ कोई गबरू जवान होगा। और उसकी कैसी विवशता है कि जब वह सुख की कल्पना करती है तब वह कल्पना पुरुषहीन नहीं होती। क्योंकि समाज की विषमता से व्याकुल हुई भी इस स्त्री का हृदय अप्राकृतिक विकृतियों से ग्रस्त नहीं है। वह कुछ बढ़ी-चढ़ी बातें नहीं समझती, किन्तु वह मानवी है, केवल मानवी है। वह उसी अधिकार को चाहती है, जो जीवन की सहज पुकार है और उसे कौन नहीं रोकना चाहता ? सब उसे काटना चाहते हैं।

फिर वह गबरू जवान धीरे-धीरे सुखराम बन गया है।

उपचेतन के भीतर से जब भाव का तादात्म्य पूर्व-सञ्चित स्मृतियों से होता है तब मस्तिष्क में चित्र को बदलते क्या देर लगती है। एक-एक बदलाव आता है और फिर अपनी नई छवियों को धारण करके सब-कुछ को अपने में सराबोर कर देता है।

सुखराम !

वही गोरा युवक ! जिसकी आंखें सजीली हैं। जिसकी देही से देही सटाकर बैठने से लगता है, जैसे फूल के पास तितली बैठती है। प्यारी को तो इतना ज्ञात है कि उसे सुख होता है। कितनी अनबूझ भावना है वह सुख की ! वह क्या उसे समझा सकती है ? बस, इतना लगता है कि उसके बाद कुछ और बाकी नहीं रह जाता।

रुस्तमखां कराहता है।

प्यारी कहती है : 'फिर क्या हुआ ?'

'बड़ा दरद है।'

'मेरे भी तो है।'

'पानी !'

'प्यास लग रही है ?'

'हां प्यारी।'

प्यारी को झुंझलाहट आती है। उसे भी तो बुखार है। कह दे, आप ही उठकर पी ले। पर वह कह नहीं पाती।

वह उठती है। उसका जोड़-जोड़ दुख रहा है। अभी बुखार है। और अब सिर में [illegible] हो रही है पहले भी तो शांति थी। उस वक्त कुछ भी चाहना नहीं थी

पर उठनी है तो लहू फैल-फैल जाता है। वह खाट पकड़ कर सिर थाम लेती है। फिर आख खोलकर देखती है। सब-कुछ घूम रहा है। आखो के सामने पतंगे-से उड़ रहे है।

उसके पाव लड़खडा रहे है।

वह पानी भरकर गिलास ले जाती है।

'लो, पी लो।'

'ला।' रुस्तमखां घिघियाता है। प्यारी गिलास देती है। रुस्तमखां कुहनियां टेककर उठता है। उसका चेहरा दर्द से भयानक-सा हो गया है। पर प्यारी को उससे हमदर्दी नहीं होती। उसे वह ऐसा लगता है जैसा कोई बड़ा झबरा कुत्ता था, जिसने मीठा खाया, खाज हो गई और उसके एक-एक करके तमाम बाल झड़ गए, अब वह मैली घृणित खाल से मढा हुआ दुबला-पतला कुत्ता, जो कल तक दांत दिखाता था केवल पूछ हिला रहा है।

रुस्तमखा पानी पीकर लेट गया है।

प्यारी गिलास वहीं रखकर अपने कोठे मे आकर लेट गई है।

कितनी थकान है। इस तनिक-से उठने के कारण उसे चक्कर आ रहा है।

प्यारी रो रही है।

क्यों ?

वह नहीं जानती।

केवल इतनी अनुभूति है कि वह किसी बड़े अभाव के गड्ढे मे गिरी पुकार रही है। वह घुमड़न जब होंठो पर आती है, तो आंखो मे आसू फिर-फिर भर-भर आते है। कितनी लाचारी है! जिन आंखो से प्रेम की अरूप बौछार-सी होती थी, उन आंखो से दिल हुमक-हुमककर, पिघल-पिघलकर निकल रहा है। मन करता है, वह रोती ही रहे, रोती ही रहे। क्या है जिसके लिए मुस्कराहट होंठो पर आएगी, और फिर वह लौटे हुए मुसाफिर-सी मुस्कराहट रहेगी भी तो क्या अपनी यातना के पानी से फीकी न पड़ जाएगी ?

रुस्तमखा कह रहा है : 'प्यारी!'

वह सिसकना रोकती है।

'तू रो रही है ?'

'नहीं।'

वह आंसू पोंछ लेती है। और फिर उन लाल-लाल आंखों से देखती है। अब भी नीचे का होठ फड़क रहा है, जिसे दांतों से वह रोके-सी हुई है, जैसे मन अभी हल्का नहीं हुआ है, उसे रोने की भी इजाजत नहीं है, जैसे बरसता-बरसता पानी रुक गया हो, और उमस घिर आयी हो। अभी गगन मे कितने बादल छटपटा रहे है, किन्तु धरती की हवा का तापक्रम बढ़ गया है, जिसे छूकर वे मेघ ऊपर ही उठे हुए ठगे-से रह गए हैं।

'क्यो रोती है ?' रुस्तमखां पूछता है।

वह कहती है : 'दरद होता है।'

'रो नहीं, सब ठीक हो जाएगा।'

कितनी सान्त्वना है! कितनी समवेदना है! पर क्या उसमें वह आत्मीयता तब भी होती जब रुस्तमखा बीमार न होता ? यह तो जैसे एक भिखारी ने दूसरे भिखारी से कहा था कि भगवान तुझे भी भीख दे।

रुस्तमखा ने गिड़गिड़ाती आवाज मे कहा : 'ऐ खुदा! यह नीच कौम की औरत है, मगर तूने ही तो इसे नीच बनाया है। यह मेरी वजह से तकलीफ झेल रही है। इसे नजात दे इसे आराम दे इसका अपना तो कोई भी कुसूर नहीं है

क्या करे यह मन ? यह तो बिखरे अरमानों को समेट रखने के मोह में तमाम धूल ही इकट्ठी किए ले आ रहा है और धूल में मिले अरमान आज धूल नहीं लग रहे हैं।

हुकूमत की गुलामी बन गई है, हाथ उठाए थे कि प्यार का आलिंगन बांध ले पर हुआ क्या है ? वे उठे हाथ फंदों में फंसे रह गए हैं, बंधन में, आक्रोश की पराजय में···

जब वह कंजरों में जाती थी, तब वह खाने-पीने की शौकीन थी। कितनी ही बार उसने चोरी करती कंजरियों का साथ भी दिया है। उसे वह कंजरिया याद आई जो उसके बचपन के खतम होने के वखत जवान थी और जिसने दिल्लगी में ही उसे ऐसी बहुत-सी बातें बता दी थीं, जिन्हें सुनकर उसे उस वखत ताज्जुब होता था। वह ताज्जुब ही आगे चलकर उसे एक दिन सुख देने लगा था।

और वह पहला दोस्त उसे याद आया जिसके साथ पहली बार उसने शराब पी थी। तब वे दोनों नशे में झूम गए थे। इतना ही याद था और कुछ नहीं। और जो कुछ शेष था, उसे वह भूल चुकी थी। और उसे वह याद रखती भी कैसे ?

पर वह उसके पास रहता था। प्यारी ने ही उसे छोड़ दिया था। वह तो उसे चाहता था।

अगर वह उसके पास चली जाए तो ?

क्या कहेगी जाकर ?

मैं अकेली हूं।

पूछेगा, सुखराम कहां है ? क्या उसने तुझे छोड़ दिया ? तू तो मुझे उस दिन छोड़ गई थी न ?

अब वह उसे क्या याद रख सकेगा ! कितनी शराब पीता होगा ? दिन-रात जुआ खेलता होगा। हंसते-हंसते छुरा भोंक देना तो उसका सहज खेल था। वह कैसी गरगलाती आवाज में हंसता था। झूठ तो ऐसा बोलता था कि ईमान नहीं और जहां सिपाही देखा, कुत्ते की-सी दुम हिलाता था। मक्कारी उसमें कूट-कूटकर भरी थी। वह उसके पास जाएगी ?

जाने उसके पास कौन होगी ! और जो होगी वह न जाने कैसी खंखा लड़ाका होगी ! पर प्यारी को वह घृणित जीवन भी अच्छा लग रहा है। तब वह ऐसी घिरी हुई तो न थी। उसे बीमारी तो न थी। वह तब तड़पती न थी। और तब वह मस्त रहती थी। खाती थी, शराब पीकर नाचती थी, और उसके हर काम का एक मकसद होता था आनन्द लूटना। वह लुटने वाली भी अपने को लुटेरा समझती थी, मस्ती उसके सामने झूमती थी। वह जैसे तब बेहोश थी, बेहोश, मदहोश···

प्यारी का मन घुमड़ रहा है।

सुखराम उसे छोड़ गया है। जिसे उसने प्यार किया है वह पराई के पास चला गया है। वह सुख जो एक दिन प्यारी पाती थी, आज कजरी के हिस्से में चला गया है···

क्यों ?

क्योंकि वह सिपाही के पास आ गई है···

और रुस्तमखां दुआ कर रहा है—'अल्लाह ! रहम कर···'

रहम !! रहम !!!

किसपर ? इस कुत्ते पर !!

हे भगवान ! कभी नहीं। कभी नहीं।

और जीवन-पर्यंत सुख की खोज करने वाली मानवी तृष्णा का दाह प्यारी

को छटपटाहट से भर रहा है। कहां है वह अन्तस् की तृप्ति, जो ऐसे विभोर हो जाती थी कि होंठों तक भरी हुई प्याली की तरह प्याली छलका करती थी, और रूप के फेनो मे तरह-तरह की रंगीन छायाएं अपने असंख्य रूप लेकर चमका करती थीं।

वह सब अब कहां है? वह सब कहां चला गया है!!

आज वह सूनी पड़ी है!! अकेली पड़ी है!!!

अकेली! बेआसरा, बेसहारा, बेबुनियाद!! केवल अकेली!!!

प्यारी ने खाट की पाटी पर सिर दे मारा।

15

सुखराम की तबीयत कर रही थी कि वह लौट जाए। जब से वह चला आया है, उसे बराबर यह विचार आ रहा था कि उसने ठीक नहीं किया। उसने प्यारी से आकर ढंग से बात नहीं की थी। बात के जोश में कुछ भी रहा हो, पर अब अनुभव हो रहा था कि बहुत कसर रह गई थी। प्यारी से उसने ऐसी बेमनी बात कभी नहीं की थी। उसके मन का अपना चोर ही उसे डरा रहा था। उसकी इच्छा हुई वह लौट जाए और उसके पास जाकर बैठे। प्यारी बीमार है। क्यो न वह प्यारी को ढाढ़स दे?

उसे सहलाए। क्या उसका दुःख इससे हल्का नहीं हो जाएगा? उसने उससे यह तो कहा ही नहीं कि उसे ले जाएगा या नहीं? क्या वह जान-बूझकर इस विषय पर चुप हो गया था? क्या सचमुच उसे प्यारी अब अच्छी नहीं लगती? इस विचार पर सुखराम मन ही मन कांप उठा। प्यारी उसे अब प्रिय नहीं—यह कैसे हो सकता है?

आज उसे बड़ी चोट पहुंची होगी। उसकी आत्मा ने दुःख मे यह अनुभव किया होगा कि अब कजरी ने सुखराम के मन में उसकी जगह को घेर लिया है। और सुखराम ने सोचा कि अगर प्यारी रुस्तमखां के पास ही रह जाए तो क्या हरज है? वह खर्चा चलाएगा ही, और सुखराम दोनो की बीमारी को तो अच्छा कर ही देगा। न एक स्थान मे दो तलवारें रहेंगी, न झंझट ही होगा। किसलिए यह इतनी चिन्ता ग्रस्त रही है? पर अब दिमाग में प्यारी की तस्वीर बड़ी होने लगी। फैलने लगी...

उसने सोचा होगा, कैसा बेदरद है। पहले कितने वादे किया करता था। कहां गया वह प्यार! अरे, यही सुखराम प्यारी के इशारो पर नाचता था। क्या! और उसे विचार पीछे खींच ले गए। वह दिन याद आया जब सुखराम बाप और मां के मरने पर रोया था और इसी प्यारी ने उसे दुनिया में आसरा दिया था। उस दिन से वह आज तक यही समझती रही है कि वह सुखराम की मददगार है।

अब वह कजरी और प्यारी का मुकाबला करने लगा।

कजरी उसे अपना मालिक समझती है, मरद समझती है।

प्यारी उसे अपना मालिक और मरद शायद कुछ ही क्षण मे मानती है, वैसे वह समझती है, वही उसकी रक्षिका है। सुखराम में जैसे अकल नहीं है। जो कुछ संभाल रखा है, वह प्यारी ने ही।

दोनों अच्छी हैं, पर एक-दूसरी से कितनी दूर है।

सुखराम ने बीड़ी जलाई। धुआं उगला और फिर कश खींचकर उसे सीने मे भर लिया, जैसे वह अपना ध्यान दूसरी ओर लगाना चाहता था, सोचने से बात में गांठ पड़ती थी। वह उस उलझन को ढीले डोरे की ही तरह पड़ा रहने रहने देना चाहता है ताकि उसे यह भ्रम बना ही रहे कि जब चाहे उसे सुलझा लेगा चाहे सुलझा सके न

रहा।

फिर कजरी की वे प्रतीक्षा-भरी आंखें पीठ की ओर से बुलाने लगीं। और अब ध्यान में कजरी की वे उत्साह-भरी आंखें सामने से हेरने लगीं, जिनमें विश्वास का अखंड राज्य था कि ऐसी है कौन जो सुखराम को मेरे पास आने से रोक लेगी।

स्त्री के ये दो रूप सुखराम को एक गड्डप दे गए। और वह इन दो का केन्द्र है। दोनों का अपना है। क्या वह सचमुच किसी एक का भी है? या दोनों को छल रहा है? कहीं ऐसा ही तो नहीं है कि प्यारी में वह असल में ऊब गया है और कजरी की तरफ खिंचता जा रहा है। लेकिन ऐसा क्या हुआ? उसका पुरुष अब धीरे-धीरे अहं को प्रगत करता जा रहा था।

उसे दोनों ही दो धारों-सी लगीं। दोनों तेज, चमचमाती। वह भी प्यारी, पानीदार!

उसने रुस्तमखां के बारे में सोचा। पड़ा-पड़ा खाट पर खांसता रहता है न? क्या वह सदा ही ऐसा था? क्या आज भी वह भला बन गया है? नहीं। उसका मतलब है, इसलिए दबा हुआ है। कितना कमीना आदमी है!

और फिर विचार आया, इस दुनिया में पुलस क्यों रखी जाती है? वह दुनिया कितनी अच्छी होगी, जिसमें पुलस नहीं होगी।

और पुलस बड़े आदमियों की ही मदद क्यों करती है? चोर-लफंगों से बचाने के लिए। आदमी चोर और लफंगा क्यों हो जाता है? क्योंकि वह नीच होता है। पर आदमी को नीच कौन बनाता है? उसकी जात!

'मैं भी तो नीचों में ही हूं।' सुखराम ने फिर सोचा।

अगर पुलस-फौज न हो तो क्या दुनिया में नीचों का ही राज हो जाए? क्या हम नीचों में इतना दम है? और तब सुखराम ने नटों की तुलना की, गांव के बनिये-बामनों के सामने रख-रखकर तोला। ठाकुर जरूर नटों का मुकाबला कर सकते हैं। पर ऊंच जातों के दिल बड़े होते हैं। उनमें अकल है। हम लोग गंवार हैं, पढ़े-लिखे नहीं हैं। उजड्ड हैं। खूनी हैं।

तभी हमें दबाने को लोहे की जरूरत है।

क्या हम इतने खतरनाक हैं कि हमें दबाने को इतनी बड़ी फौज की जरूरत है?

पर विचार जीवन की यथार्थ विषमताओं में जनमा था। आया, चला गया, क्योंकि सुखराम के पीछे शिक्षा नहीं थी, समाज के विकास की वैज्ञानिक व्याख्या नहीं थी। अब वह उसी सामन्तीय संसार के ढांचे में सोचने लगा—'अगर मैं दरोगा बन जाऊं तो एक-एक साले को खोद के गड़वा दूं!'

'पर मैं दरोगा कैसे बन सकता हूं?'

'दरोगा तो पढ़ा होता है!!'

और फिर भाग्य भी तो है! तकदीर क्या मामूली बात होती है! चलते-चलते सुखराम रुक गया। दरोगाजी को बैठे पाया। वह सलाम करके खड़ा हो गया। सामने चन्दी बनिया बैठा था।

दरोगाजी ने कहा: 'हां भई, पढ़।'

बनिये ने पढ़ा: 'हजूर, राई तोला-भर, जीरा तोला-भर और हल्दी छटांक-भर,' और इसी तरह उसने समाप्त किया—'हजूर, तारीख 17 और चार आने की बुरी बात।'

दरोगाजी ने कहा: 'और पढ़।'

ब[illegible] फिर पढ़ा और [illegible] हिसाब के अन्त में चार आने की बुरी बात। फिर

गिना दी

दरोगाजी ने सिपाही से कह दिया था कि रोज मोदी से परचून और पसारठ का सामान ले आया करे, और सिपाही महीने के अन्त में बनिये को लाकर हिसाब पढ़वा देता था। पहला महीना आज बीत गया था। जब आठ दिन का हिसाब बनिया पढ़ गया तो दरोगाजी चौंके। बोले : 'यह चार आने की रोज बुरी वत्तु क्या है कम्बख्त !'

सिपाही ने कहा, 'हुजूर, मैं आपको तकलीफ न देकर रोज इस बनिये से ही चार आने मांग ले जाता था।

दरोगाजी ने कहा : 'मगर यह है क्या ?'

दरोगाजी कड़के : 'अबे, बनाता क्यों नहीं ?'

बनिये ने जोर से थूका, जैसे घिन लग आई हो और कांपकर कहा : 'बुरी वत्तु (वस्तु) हुजूर गोत्त (गोस्त)।'

एक ठहाका लगा। दरोगाजी ने कहा : 'लगा साले को जूते। हम जो खाते हैं, साला उसे थूककर बुरी बत्तु कहता है !'

बनिया घिघियाने लगा।

सुखराम जब चला तो उसे नये विचार आने लगे।

बड़े लोग इतना लड़ते नहीं। क्यों ? हम एक-दूसरे के छुरा घुसेड़ देते हैं ! वे लोग डरते हैं। क्या वे डरपोक हैं ? हां ! पर मालिक तो वे ही हैं। हुकूमत तो उनके ही हाथ में है। सुखराम तो उनके सामने कुछ भी नहीं है। जिन्दगी-भर उसे यों ही रहना है।

सुखराम फिर आगे नहीं सोच सका। उसे केवल अपने तम्बू के पास होने वाले नटों के झगड़े एक-एक करके याद आने लगे। वे लोग चोरी के माल के पीछे लड़ते हैं, औरतों के पीछे लड़ते हैं। सुखराम उनकी तरह क्यों नहीं है ? क्योंकि वह कभी उनमें मिलकर एक नहीं हो सकता।

यह तो ठीक नहीं है। आपस में लड़ना क्या अच्छी बात है ? और फिर कितनी जरा-जरा-सी चीजों के पीछे होती है यह लड़ाई।

नट ही तो हैं साले !

नट ! और सुखराम का ठाकुर जाग उठा। सचमुच वह क्यों बह गया है ? वह क्यों आज तक इनसे दूर नहीं हो सका है ? वह क्यों इन्हींके बीच में फंसा पड़ा है ! उसने तो इस तरह की कोई चोरी भी नहीं की। वह ठाकुर जो है। वह ठाकुर जो है !

'फिर हमें क्यों गिरफ्तार किया जाता है ?" वह बुदबुदाया।

किन्तु उसे किसीने भी उत्तर नहीं दिया।

उसने फिर कहा : हम जरायमपेशा हैं। हमारी कोई इज्जत नहीं है। कोई आसरा नहीं है, कोई हमारा मददगार नहीं है। अगर है तो भगवान् होगा, मगर भगवान् आदमी के बीच बोलता नहीं। मान लो, अगर यह मान लिया जाए कि उसने रुस्तमखां को बीमारी दे दी है, तो क्या यह जुल्म खतम हो गए ? नहीं। और प्यारी को किसलिए भगवान् ने इतना दंड दिया है ? वह तो इतनी बुरी न थी। लेकिन क्या सिपाही के बैठ के उसने हुकूमत का नशा नहीं किया ?

हमारे पास जमीन नहीं, कुछ नहीं।

आसमान के नीचे सोते हैं, धरती हमारी माता है।

हम घास की तरह पैदा होते हैं। रौंदे जाते हैं।

हमारी औरतों को पुलिस के सिपाही दूब समझकर चर जाते हैं। और फिर हमारे पास क्या है ?"

कुछ नहीं।

घूम-फिरकर सुखराम जहां से चलता, वहीं आ जाता। वह जीवन के कठोर सत्यों को वह परख तो लेता था, लेकिन मुक्ति की राह नहीं जानता था। और जानता भी कैसे? उसका चिन्तन छटपटाने लगता। अपनी ही सीमाओं पर विद्रूप करने लगता। वह फिर सोचने लगा।

बांके कितना नीच है!

और सुखराम को बांके पर गुस्सा आने लगा। उसकी हिम्मत न पड़ी कि अकड़ता। मैं आज उसे दिखा न देता अपना हाथ। वह साला कायर है। उसके बारे में सुखराम को घृणा से उबकाई आने लगी। कमीना! अपने को बड़ा आदमी समझता है। होगा अपने घर का। सुखराम क्यों दबेगा उससे? वह हाथ देता तो थूथड़ा लटक जाता।

सांड बना डोलता है। अपने को तीसमारखां समझता है। उसने सोचा होगा कि यह भी दब जाएगा यों ही। आंखें किस तरह निकाल-निकालकर घूरा था उसने!

और प्यारी ने उसका सहारा लिया था!

क्या प्यारी इतनी गिर गई है?

कमीने का संग होगा तो क्या अन्धी नहीं हो जाएगी? उस गरीबिनी को पिटवा रही थी।

सुखराम को अफसोस हुआ। उसने बांके की जरा ठुकाई क्यों न उड़ा दी उसी वखत? ठीक हो जाता हरामजादा!

पर बांके अकेला ही तो नहीं है। वह तो रुस्तमखां के बल पर ऐंठता है। रुस्तमखां का पिट्ठू है वह। और रुस्तमखां के पीछे सारी सरकार है। सुखराम डर गया।

अब वह चमरवारे में आ गया था।

चमरवाड़ा गांव के बाहर के हिस्से में था। उसके बाद फिर भंगियों के सूअर डोलते ही दिखाई देते हैं। वहां भंगियों की बस्ती थी। चमार ढेड़ कहलाते थे, पर भंगियों से उतनी ही नफरत करते थे, जितनी ऊंची जात वाले चमारों से। चमार ज्यादातर दिन में घरों के बाहर काम पर थे। उनमें से कई तो खेतों पर काम करने जाते थे।

उनके घर छोटे-छोटे थे, घिरावदार थे, छप्पर अनेक घरों पर डाले पड़े गए थे और देखकर ही अन्दाज होता था कि यह हिस्सा कितना दरिद्र था। कच्चे डगरों पर मोटे-मोटे पेट के नंगे बच्चे धूल में खेल रहे थे। चमारिनें मोटे कपड़े का घाघरा लहंगा पहनतीं और उनके माथे पर फरिया होती।

जब सुखराम वहां पहुंचा, उसने देखा, सन्नाटा छा रहा था। राह पर कुत्ते सो रहे थे। शायद वे इन्सान की दुनिया की रात-भर हिफाजत कर चुके थे। गांव के कुत्ते भी इन्सानों की जात की तरह जाति-भेद मानते हैं, तभी वे किसी दूसरे मुहल्ले के कुत्ते को नहीं आने देते।

छोटे-से मन्दिर के पास अन्धा बूढ़ा एक चमार एक छोटे-से चबूतरे पर पड़ा था। उसकी देही झुर्रियों से भर रही थी और काली चमड़ी सिकुड़ी हुई थी। उसके गात में मोटे-मोटे गुरियें थे। वह एक मैली-सी धोती कांछे हुए था। और खाट के पाये के सहारे उसका नारियल रखा था। नीम की हल्की छाया में वह ऊंघ गया था।

दुपहर का सन्नाटा नीम के पत्तों में खेल रहा था और घरों के निकले हुए ओटों पर फैलता हुआ कोठों में घुस जाता दीवारों पर बने सोना रूपन कुमारों के अतिरिक्त

कहीं-कहीं गेरू का हाथी भी बना हुआ था और पीपल के चार पत्तों का पेड़ भी चित्रित था।

कहीं-कहीं बिटौरे भी चित्रों से सजे हुए थे। उनके कंडों को कोई चुरा न ले जाए, इसलिए उनपर चित्र बना दिए गए थे। कहीं-कहीं कांटेदार बाड़ें भी लगाकर कूड़ा डालने की जगह बना दी गई थी, जिसकी शायद कभी भी सफाई नहीं होती थी और इसलिए ऊंची जात वाले चमरवारे का नाम गन्दी जगह के लिए प्रयुक्त किया करते थे। दरवाज़ों की छोटी-छोटी ऊंचाइयों में से घरों के भीतरी भाग दिखाई देते। वह लिपी हुई कच्ची धरती और दीवारों की नुमाइश थी। इन्सान की सारी जिन्दगी उन्हीं घरों में बीत रही थी और रहनेवाले उनसे बाहर निकलने की कल्पना भी नहीं करते थे। वे उसे ही शाश्वत सत्य समझते थे।

एक बंगला बीचोंबीच बना था। गांव में बड़ी पंचायत जुड़ती थी और दूर-दूर से आकर चमार उसके मैंचे को बाहर निकालकर उसपर पंचों को विराजमान कर देते और सामने बैठ जाते, फिर हुक्का चलता। चमारिनें घूंघट काढ़कर पीछे खड़ी रहती या बैठ जाती और पंचायन में फुसफुसाकर एक-दूसरी से बातें करतीं। पंचायत समाप्त होने हर ज़ोर-ज़ोर से गाली देकर आपस में लड़तीं। उस समय गाली का भेद कोई नहीं कर पाता। वे मर्दों की-सी गालियां देतीं। बच्चे उस समय हू-हल्लड़ करते और लाचार बूढ़े जो पड़े रहते, पड़ी जगह से शरम और हया की दुहाई देकर उन सबको रोकने का कोलाहल उठाते और परम्परा यों ही लड़खड़ाती हुई हल्ला बन जाती। शाम को जब मरद लौट आते, तब वे अपनी-अपनी बीवियों से मार-पीट करते या उनसे लाड़-दुलार करते। फिर दिन में औरतें एक-दूसरे की निन्दा करके चुगली करने को आ इकट्ठी होतीं। सुखराम जब वहां पहुंचा तो राह में उसको देखकर बाहर बैठी औरतों में बातें चल पड़ीं। जवान औरतों ने घूंघट खींच लिये, पर बेटियों ने ऐसा नहीं किया। वे तो गांव की छोरियां ठहरीं।

'ठहरो देवर!' एक पैंतालीस साल की औरत ने टोका।

'क्या है?' सुखराम ने पूछा।

'नैंक यहां आओ।'

सुखराम नहीं बढ़ा।

उसने कहा: 'डरो मत।'

'इसीसे बच गई आज!' दूसरी ने कहा।

औरतें सुखराम को घूरने लगीं। उनकी आदत होती है कि वे पराये मरद के सामने जबरदस्ती शरमाने लगती हैं, चाहे वह उनमें दिलचस्पी ले या नहीं ले।

'क्या बात है?' सुखराम ने पूछा।

पर उसको जवाब नहीं दिया गया। वे आपस में ही बातें करती रहीं। एक ने कहा: 'सिपाही अकड़ गया था?'

'अकड़ा तो बाके था।'

'यह कौन था जो बीच में बोला?'

'अरी, गरीब गरीब का साथ न देगा?'

'दिये, कौन बिना मतलब किसीका साथ देता है?'

सुखराम ऊबा। उसने कहा: 'अरी, गैल छोड़ो!'

'ठहर जा!' आवाज़ आई। मुड़कर देखा। उसके पीछे कुछ दूर पर खड़ी धूपो थी।

'कौन धपो!' उसने कहा।

हां रे डर क्यों गया ?

डरूंगा क्यों ?

औरतों को दिलचस्पी आई । उन्हें ... ठहरी विधवा। कौन जाने, क्या बात हो !

धूपो ने कहा : 'सुनो बहिनियो ! आज इस सुखराम करनट ने मेरी रच्छा की।'

'तो ये करनट है ?' एक ने हिकारत से कहा।

'हां है।' धूपो ने कहा। उसके स्वर में स्नेह और विश्वास ने ताना-बाना बुनकर एक नया वस्त्र तैयार किया था। उसकी आंखों में प्रगाढ़ ममता थी।

वह पास आ गई।

सुखराम ने कहा : 'तेरे लगी तो नहीं ?'

'क्यों न लगेगी सुखराम ?' उसने पूछा।

सुखराम इसका उत्तर नहीं दे सका।

धूपो ने कहा : 'एक बात पूछूं ?'

'पूछ।' सुखराम ने शंकित स्वर में कहा।

बोली : 'तेरी लुगाई है वह ?'

'कौन !' एक और औरत ने पूछा।

'वह प्यारी।'

'हाय, किसकी प्यारी ?' लुगाइयों ने ठट्ठा किया।

'पहले इसकी थी, अब सिपाही की है।'

'दईमारी हरजाई है।'

'तुझे लाज नहीं आती ?' धूपो ने सुखराम की आंख में झांका।

सुखराम उसका उत्तर नहीं दे सका। परम्परा यह कहती थी कि स्त्री पुरुष की सम्पत्ति है।

एक स्त्री ने कहा : 'दबती न होगी उससे !'

और फिर वे सब घूंघटों से बाहर हंसी। एक ने कहा : '... नटा उसकी लुगाई ऊपरचट्ट न होगी तो किसकी होगी ?'

'पर यह कुछ नहीं बोलता !'

'बोलेगा क्या ? जगत-जहान में जानी बात है !'

'नटों की इज्जत नहीं होती ?'

'अरी, नटनी की इज्जत की बात भली चलाई। ... क्या है ?'

'तभी तो ये लोग नीच हैं।'

सुखराम ने कहा : 'कौन नीच है, कौन ऊंच है, यह कोई नहीं जानता ... राम ने तो जनम से आदमी नीच नहीं होता, करम से होता है ... एक जगह से जनम लेते हैं, मरकर एक ठौर जाते हैं।'

हाय भैया ?' धूपो ने गाल पर हाथ बजाए : 'यह ... अरे, नटवा तो बड़े ज्ञान की हांक रहा है। मतलब की कह। लुगाई पराये के ... बाचने आया है !'

एक ठहाका लगा। सुखराम ने खिसियाकर कहा : 'मैंने तो इसलिए कहा था कि दुनिया तुम्हें भी नीच समझती है। तुम सब नीच हो।'

'नीच नहीं हैं हम करनट। नीच जात है। बस ! ... भगवान ने बनाया है। करमफल से जनम मिलता है और अपने-आप पुन्न से मानस-जनम ... ऊंची

जात मिलती है एक पचपन साल की औरत ने कहा जिसके कंधे पर उसकी नवासी चढ़ी हुई थी। नवासी की नाक बह रही थी और मैल उसकी आंखों के सूखने पर गालों पर जम गया था।

सुखराम सोचने लगा।

धूपो ने डांटा : 'काहे छेड़ती हो दारियो ! एक तो तुम्हारा भला करे, उस प तुम उसे खरी-खोटी सुनाओ !'

'तौ तू उसे घर ले जाके रोटी खिला दे न !'

'चटनी मुझसे ले जइयो।' दूसरी ने हंसके कहा।

'अरी, तेरी तो चटनी बनाऊंगी मैं।' धूपो ने मुस्कराके कहा : 'खबरदार, जो कुछ भी कहा ! भला मानुस है।'

'हां जी, लुगाई नहीं मानती तो क्या करे ?'

धूपो ने कहा : 'और तू किसी के संग हो ले तो तेरा ही वह क्या करेगा ?'

'कुछ नहीं।' एक और ने कहा : 'अब तू रांड हुई, तैंने 'एक' का संग न किया, तो तेरा किसी ने क्या कर लिया ?'

उसने 'एक' पर जोर दिया। धूपो झेंपी, खिसियाई और चुप हो रही। फिर कहा : 'मेरा क्या है ? ढलती उमिर है।

'वाके से तौ पूछ दारी !' किसीने छेड़ा।

एक आगे बढ़ आई और सुखराम से बोली : 'जीजा ! एक बात पूछूं ?'

'पूछ।'

'तैंने धूपो को बचाया, कहीं तेरी नीयत तो नहीं बिगड़ी इस पै ?'

सुखराम ने गम्भीरता से कहा : 'धूपो मेरी बहन है। जहान की साच्छी लुगाई की है तो धरम से, कह के। छिनाला मैंने, कोई कहे, कभी किया हो ! हम नीच जात हैं। हजार पाप करते हैं, करने पड़ते हैं, और हमसे कराए जाते हैं। पर ऐसा नहीं किया।'

'बडा धरमात्मा है।' एक ने कहा।

'धरम की बात मार, तभी तो लुगाई वहां बिठा दी है।'

औरतें हंस पड़ीं।

सुखराम इस चोट से आहत हो गया, परन्तु वह कुछ कह नहीं सका। बात पक्की थी। यह बात और थी कि नटों के नेम ही और थे।

'इतने दिन में बीरन मिला, तो करनट !' एक स्त्री ने व्यंग्य किया।

'भाग की बात है।'

'धूपो का छप्पर अब फटा।'

'अब तो तू खुस है ?'

धूपो ने कहा : 'सहज नहीं छोड़ूंगी दारियो। कह लो। पर यह मेरा बीरन है। जो बचाए सो बीरन। कोई जात हो, उससे क्या !'

'घर ले जाके मुंह मीठा नहीं कराएगी बीरन का ?'

'मुंह नोंच लूंगी तेरा !' धूपो ने पलटकर कहा : 'समझ रखियो। हंसी-छेड़ को और बात है। ऐसा बदला लूंगी जो याद करेगी। तुझे और प्यारी को एक धार पै मारूंगी।'

सुखराम ने कहा : 'तू माफ करना नहीं जानती ?'

'क्यों ?' धूपो ने कहा।

प्यारी ने तेरा क्या बिगाडा है ?'

'दैया ! उसीने तो मुझे पिटवाया है।
'मैं समझा दूंगा उसे।'
स्त्रियां हंस पड़ीं। कहा : 'अभी तेरा समझाना-बुझाना चल रहा है जीजा ?'
'अब जीजा क्यों कहती है ? धूपो तो यहां की बहू है। बहू का भैया तो साला लगेगा न ?'
वे फिर हंसी।
'प्यारी पै मुझे रोस नहीं।' सुखराम ने कहा।
'क्यों ?' धूपो ने पूछा।
'वह बेवकूफ है।'
'कैसे मूरख है ? बच्ची है ?'
'तभी तो दो-दो बन्दर नचा रही है।' किसी ने कहा।
'औरतबानी की अकल ही कितनी ?' एक अधेड़ स्त्री ने कहा : 'तू ठीक कहता है भइया। ठीक कहता है।'
सुखराम ने याचना की दृष्टि से देखा, जैसे उसके घायल हृदय को इससे आश्रय मिला हो। इस समय स्त्रियों ने व्यंग्य नहीं किया। अधेड़ स्त्री को काटना सहज न था। वह झगड़ालू भी थी और बुलन्द आवाज पीहर से लेकर ही आई थी। उसने फिर कहा : 'बैयर की हैसियत उसकी सेज से होती है। वह वहां सोती है। सो उसका दोष इसे क्यों देती हो ? न सब लोग भले होते है, न सब लुगाइयां। जिसका जैसा करम वैसा आचरन। फल सब भोगते है।'
इस बात मे शताब्दियो को भुला देने वाला अंधकार था। किसी ने उसे काटा नहीं। हवा मे गम्भीरता व्यापने लगी थी।
सुखराम ने धूपो से कहा : 'सच कह बहन ! तैने प्यारी को क्षमा कर दिया न ? तो फिर तुझे किस पै गुस्सा है ?'
'बता दूं ?'
'हां, बता दे।'
'पर फायदा ?'
'मैं तेरी मदद करूंगा।'
'वांके पर !'
'पर···'
'क्यों, डर गया ?'
'नहीं। सोचता हूं, उसके पीछे सिपाही हैं।'
धूपो ने रास-मण्डलियों में खेल देखे थे। बोली : 'भगवान ने द्रौपदी की लाज बचाई थी। बीरन बने थे। याद है ! भगवान् ने दूसरी बार रावण की लंका जलाई थी।'
'पर वे भगवान् जो थे।'
धूपो के नेत्र जलने लगे। बोली : 'दईमारा, मुझे वह दुनिया में मरद बिना अकेली जानता है !'
'तो कर ले न किसी को।' एक स्त्री ने राय दी।
'अरी, जा।' धूपो ने कहा : 'जूंओं के डर से क्या लहंगा छोड़ा जाए है ?'
'अच्छी बात है,' सुखराम ने कहा : 'तू कहेगी तो यही होगा। मैं उसकी खाल बेचने आऊंगा किसी दिन।'
मैं उधेडूंगी उस मरी हत्या को धूपो ने कहा और घिन से थूक दिया

औरतें हस दीं.

इस समय बूढ़ा गिल्लन हाट से आ गया था। उसे देखकर बहुएं सटकीं। उसने कहा : 'क्या बात हुई ?'

'कुछ नहीं।' घूंघट काढ़ के धूपो ने कहा।

सुखराम ने कहा : 'आज बांके ने धूपो पर हाथ उठाया था।'

'कहां ?'

सुखराम ने बताया। तभी जवान खचेरा आ गया।

'अरे, तुम अन्धे हो!' बूढ़े ने कहा : 'किससे टकरा रहे हो ? अब तो जमाना बदल गया है। जब हम छोटे थे तो इतनी बेगार देते थे!! अब तो तुम लोग सिर उठाते हो। कहीं कुछ होने को है ?'

खचेरा ने कहा : 'वा दादा! होने को क्यों नहीं है ? काम करेंगे तो दाम न लेंगे ?'

'बेटा, तुम्हें जनम से ही भगवान् ने नीच बनाया है।'

'काहे से नीच है ? बुरा काम करते है कुछ ?'

'भंगी काहे से नीच है ?'

'मैला उठाते है।'

'तुम मुर्दे की खाल नहीं खींचते ?'

'हम खींचते है, ठीक है। जो हम न खींचें तो बामन, ठाकुर हमारे चमड़े के चरस से पानी कैसे पिएं, दुनिया जूते कैसे पहने ?'

'जो भंगी मैला न उठाएं तो कोई सड़ांध से बच सकेगा ?' बूढ़े ने तर्क दिया। खचेरा उत्तर न दे सका। बोला : 'वो और बात है।'

'सो कैसे ?' बूढ़े ने कहा। उसकी मिचमिची-सी आंखों में एक बुझती हुई उम्र की लपट थी जिसे बरौनियों की काली-काली राख ने ढक-सा लिया था। उसका सिर घुटा हुआ था। वह कुछ झुक गया था। उसने कहा : 'अब दुनिया पहले-सी सुखी नहीं रही। आदमियों की नीयत फिर गई है। सबके मन में आग सी जला करती है। अब बिरादरी में पैसा पुजता है, पहले सब एक थे। अब तुम बड़ों को मूरख कहते हो, पहले हम उनकी इज्जत करते थे।'

खचेरा ने कहा : 'पर दादा! हम इतना काम करते है, और वे हमारी औरतों को छेड़ते हैं। हम बेगार दे लेंगे, पर बैयर पर जुलम नहीं सहेंगे।'

'अरे, तो कोई इज्जत थोड़े ही लेता था। बड़े आदमी सदा से छोटों को पिटवाते रहे है। लाला! तेरा बाबा तो मशहूर था। जब बड़े जमींदार के पास जाता था तो अंटी में रुपये लगाकर ले जाता था। भेज (लगान) मांगने पर कभी आपसे नहीं देता था। कहता था, "जूते लगवा दो, ले लो, नहीं तो मेरी फसल आगे खड़ी न होगी। जमींदार के पांव पकड़के घिघियाता था, मेरा सगुन मत बिगाड़ो महाराज! जमींदार तब जूता उसके सिर से छुआ देते, और वह हंसी-खुशी रुपये गिन देता। इसीसे तब धरती सोना उगलती थी। राजा का हक था। राजा लेता था। जूते के जोर से लेता था। हम अपने-आप नहीं देते थे। कहते थे, पहले साबित कर कि तू राजा है। तब कर दे तो पाने का हकदार होता था। अब वह सब कहां है ?'

राजाराम ने हां में हां मिलाई। बोला : 'तब जो बड़े आदमी थे, वे अब है ही कहां! अरे, मेरे बचपन में ही जमींदार के घर में सवा सौ जवान थे। खाते-पीते थे, मस्त थे, आठ आना महीना मिलता था। इशारे पै जान देते थे। अब जमींदार ही खाने के भूखे हुए कुल तीस नौकर हैं तब नगाड़े बजाके भोर कराते थे अब कहां हैं वे

वे ठठ पहले गद्दी होती थी तो गाए गाव के लोग मर जाते थे अब कहां है वह बात

राजाराम कोई साठ-एक बरस का था, पर पाठा था।

सुखराम चल पड़ा। मन में तरह-तरह के विचार उठ रहे थे। पुरानी दुनिया कुछ और थी। नई दुनिया कुछ और है। सब-कुछ क्यों बदलता जा रहा है ? अब अगर सब बदल जाएगा और राजा न रहेंगे तो सुखराम अबके किले का मालिक कैसे बनेगा ? कहते हैं, गोरमेण्ट में राजा नहीं है, हाकिम का राज चलता है।

थोड़ी ही दूर गया था कि उसके पास से एक लड़का भाग गया।

'अरे, क्या हुआ ?' सुखराम ने पूछा।

उसने कोई उत्तर नहीं दिया, बल्कि वह दोनों हाथों से अपना मुंह भी छिपाए हुए था। सुखराम का माथा ठनका। यह क्यों भागा ऐसे ? कहां जा रहा है ! उसने रुककर बीड़ी सुलगाई। सामने हनुमानजी की छोटी मूरत एक दीवार के आले में थी। उसे सिर झुकाया।

मोड़ पर पहुंचते ही सामने बांके मिला। उसको देख सुखराम समझ गया। यह लड़का इसे ही खबर देने भागा था। इधर गांव का भाग विरल रूप से ही बसा हुआ था। सुखराम ने बीड़ी फेंक दी और भौं उठाकर बांके की ओर देखा। बांके शेर की तरह खड़ा था। उसके हाथ में लम्बा लट्ठ था। सुखराम ने देखा, वह मुस्कराया। बांके जल उठा।

उसने लट्ठ उठाकर कहा: 'तो तू पहले ही से लट्ठ लेकर तैयार होके आया है ?'

'कौन नहीं जानता कि डरपोक आदमी हमेशा नजर बचाके हमला करता है।' सुखराम ने कहा : 'गांव में कुत्ता है, सियार है, बैल है, इनको ठीक करने को सब हाथ में लट्ठ पकड़ते हैं।'

'तो मैं कुत्ता हूं ?' बांके ने खिसियाकर कहा।

सुखराम ने कहा : 'मैंने नहीं कहा।'

'तो अब कह ले।'

बांके आगे बढ़ा।

'बांके, संभल जा !' सुखराम ने लट्ठ संभालकर कहा : 'तेरी खैर नहीं होगी। जानता रह।'

फिर लट्ठ पर लट्ठ पड़े।

बांके ने कहा : 'आज जाएगा कहां ?'

'जाऊंगा नहीं बेटा, भेजूंगा तुझे जमलोक।' सुखराम ने ललकारकर कहा।

बांके दबा और पीछे हटा। उसने ललकार देखा। सुखराम का लट्ठ माथे पर पड़ते-पड़ते बचा। एक आदमी बढ़ा।

'घेर लो !' बांके चिल्लाया।

हरहराकर उसके सठैत यार कूद आए। सुखराम अब बचाव के पैंतरे बदलने लगा। वह तेजी से कूद जाता।

सुखराम ने कहा : 'तू कायरों की लड़ाई लड़ता है। तुम एक-एक करके क्यों नहीं आ जाते ?'

बांके ने कहा : 'राजा क्यों फौज बनाते हैं ?'

'अरे, तू राजा हो गया कुत्ते !'

सभल देख

बांके ने लट्ठ घुमाया। सुखराम ने उसके साथी को आगे कर दिया। साथी गिरा। सुखराम हंसा। उस समय एक मालिन उधर से गुजर रही थी। उसने देखा तो चिल्लाई : 'अरे, बचाओ, बचाओ! हत्यारों ने एक को घेर लिया है! बचाओ, बचाओ! मारे डाले रहे हैं!'

उसकी पुकार सुनकर कुछ औरतें आ गईं।

बांके ने कहा : 'ले!'

लट्ठ पर लट्ठ बजा। सुखराम ने उसे लात दी। बांके गिरा। तभी चार लट्ठ बीच में बढ़े। सुखराम ने उनको लाठी पर रोक लिया। औरतों में खुशी की लहर दौड़ गई। मालिन चिल्लाई : 'वाह, वाह! कैसा मारा है!'

बांके के नेत्र अपमान से क्रूर और विकृत हो गए। वह उठ खड़ा हुआ। मालिन चिल्लाई : 'अरे, रहने दे। पहले धूल तो झाड़ ले।' औरतें हंस दीं। उसने फिर हमला किया, पर सुखराम ने वह जोर का हाथ मारा कि बांके की लाठी टूट गई। उसके माथे से पसीना बह आया। बांके पीछे हटा। पर सुखराम के सामने फिर सात लठैत आ गए। बांके गुस्से में दांतों के नीचे का होंठ काट चुका था। लहू आ गया था। सातों ने सुखराम को घेर लिया था। सुखराम पसीने में तर था। उसमें गजब की फुर्ती थी। वह बाघ की तरह उछलता था। और दो के पेट में लात मारते हुए उछल के जो उसने तीसरे के सिर को लाठी की चोट से फाड़ा, तो औरतों की टकटकी बंधी रह गई। एक तो सुखराम नट, चाहे जैसा लचक जाए, फिर उसकी ओर स्त्रियों की सहानुभूति, और बांके पर क्रोध, वह क्यों न इतनी हिम्मत कर जाता! तीन के गिरते ही जो चार थे कमर के नीचे मारने की कोशिश करने लगे। तब सुखराम ने वेग से लाठी घुमाई और एक की लाठी पांव से दबाकर दूसरे की पहुंची तोड़ दी। वह गिरा। दो बचे।

मालिन चिल्लाई : 'अरे वा! क्या मरद बच्चा है! बलिहारी जाऊं। नौन-मिर्च उतारूं। हाय-हाय, कैसा मरद है! दईमारे पांचों के ठट्ठ फाड़ के पापड़ बेल दिए।'

बांके चिल्लाया : 'जाने न पाए! घेर लो!' एक गिरे हुए का लट्ठ उसने उठा लिया और गरजने लगा : 'खबरदार, जो चला गया!'

मालिन ने छाती पीटकर कहा : 'अरे कायर! एक को घेर लिया सबने! फिर भी सेर को सवा सेर मिला है।'

सुखराम ने लट्ठ घुमा के दिया तो बांके की कमर पर पड़ा। अर्राकर बैठ गया। औरतें चिल्लाईं : 'और बोल!'

पर अब गिरे हुए लठैत उठ खड़े हुए थे। अब सुखराम फिर बचाव पर आ गया। नीचे गिरा हुआ आदमी चुपचाप चला गया था। इस समय वह लौटा तो उसके साथ पांच लट्ठबन्द और थे। सुखराम ने देखा तो उसकी हिम्मत टूटने लगी। तभी एक औरत चिल्लाई : 'हाय, कढ़ीखायों को नेंक सरम नहीं। मरे पुरखों की फौज भी बुला ली होती!'

मालिन गाली देने लगी : 'अरे, अपनी अम्मां के सारे यारों को ले आया! एकाध तो छोड़ आते!'

'सबका सराध एक संग ही कराओगे?'

पर वे चिंतित थीं। इतने आदमियों के सामने आखिर सुखराम कब तक टिक सकता था! परन्तु स्त्रियों के आश्वासन ने उसमें अपूर्व बल भर दिया था। वह बराबर लड़ता जा रहा था। यहां तक कि बांके की आंखें फट गईं। औरतों ने इशारा किया और एक लड़का भ गा

बाके ने इशारा किया। तीन लठैत पीछे ही सुखराम की पीठ की तरफ जाने लगे। एक औरत चिल्लाई : 'अरे नाहर ! तेरे पीछे गीदड़ चले।'

सुखराम चकरघिन्नी की तरह टूटा और उन तीनों को पीछे भागना पड़ा। बाके अब जन-सहानुभूति खो चुका था। वह चिल्लाने लगा : 'धिक्कार है ! तुम इतने लोग भी एक को नहीं घेर सके ! एक चोट तक नहीं आई उसने !'

सुखराम ने हंसकर कहा : 'बस बेटा, रो दिया ?'

थोड़ी ही देर हुई, चमार आने लगे। हो-हल्ला होने लगा। बांके चकराया। सुखराम ने झपटकर हाथ मारा। बांके का लट्ठ उड़ गया, उसके हाथ से छूट गया। वह चिल्लाया : 'छोड़ दे ! तेरी गौ हूं, तेरी गौ हूं।'

तभी चमार पास आ गए। मालिन चिल्लाई : 'आ गए। सुखराम के आदमी आ गए। सुखराम के साथी आ गए।'

चौंककर सुखराम ने उस ओर देखा। उसका ध्यान बंट गया। बांके ने खिसियाकर इशारा किया। उसके साथी भागने की फिकर में थे। तभी उन्होंने मौका देखा और वे चुपचाप झपटे। इससे पहले कि सुखराम संभल सके, उसके कन्धों और सिर पर एकदम सात लट्ठ पड़े।

सुखराम गिर गया। बांके और उसके साथी भागने लगे, पर चमार पास आ गए थे, लट्ठों पर लट्ठ बजे। अब बांके के साथियों की हिम्मत टूट गई थी। वे घबरा रहे थे, पर नजात नहीं थी ! चमारों के साथ धूपो थी।

मालिन चिल्लाई : 'अरे, कायर भागे !'

धूपो चिल्लाई : 'घेर लो, घेर लो। मेरे बीरन को मारा है, उसने मुझे बचाया। मेरी लाज तुम्हारी लाज है।'

चमार चिल्लाये : 'घेर लो !'

कोलाहल बढ़ने लगा।

चमारों ने घेर लिया। अब लठैतों को घेर लिया गया और भीड़ के भिचाव के कारण लठैत भिच्ची में आ गए और उन्हें लट्ठ चलाने तक की गुंजाइश नहीं रही।

धूपो चिल्ला रही थी : मेरे बीरन को मारा है। दुहाई है ! दुहाई है !'

चमारों को बांके पर क्रोध था ही। उन्होंने उन सबको खूब मारा। बांके को तो सबने मिलकर पंचायती माल बना लिया। जो देखो सो ही और कसके धुनना शुरू किया। बांके बिबियाया और चिल्लाया। उसके साथी तो पिट-पिटकर लहू-लुहान होकर भाग गए, पर बांके को नहीं जाने दिया गया। धूपो आ गई। बोली : 'भरो इसके मुंह में मट्टी।'

चुनांचे बांके के मुंह में मिट्टी भर दी गई और धूपो ने उसके मुंह पर ठोकर दी : 'बोल, उठाएगा हाथ ?'

एक चमार ने कहा : 'अरे, तोड़ दे साले के हाथ !'

बाके के हाथों को खचेरा ने उमेठ दिया। वह दरद से चिल्ला उठा।

'पकड़ पांय इसके और कह—भैया, माफ कर !' खचेरा चिल्लाया।

बांके नहीं बढ़ा तब एक ने कसके पीठ में लात दी। दूसरे ने जो लात दी सो आंख के पास लगी। वह लुढ़का। और चमारों ने उसे धूपो के पांवों पर डाल दिया। वह दरद से बेहोश-सा हो गया।

तब सबका क्रोध कुछ कम हुआ।

मालिन चिल्लाई अरी उसे तो देखो

धूपी ने देखा, सुखराम के सिर से लहू की धाराए बह रही थी . पुक्का फा के रो उठी—'बीरन···'

गिल्ला ने डांटा : 'क्यों रोती है, जीते को रो रही है ?'

बुढिया सुग्गो आई। वह मशहूर थी कि कहीं मिर्चमुंड बांध जाए तो सुग्गो जब अनटोके अपने बाल खोल खेत में टोटका करे तो सारी खुल जाए। उसने कहा 'मरा नहीं है।'

'बच जाएगा न ?'

'जरूर !'

'खाट लाओ, खाट !'

दौड़कर एक खाट लाई गई। उसपै उसे लिटाया। जब वे चले तो पचास चमार लट्ठबन्द आगे बढ आए।

बांके को होश आया। वह सरकने लगा। किसी का उस पर ध्यान न था। वह उठा और भाग गया। मालिन चिल्लाई : 'अरे, सांप जी गया ! फिर काटेगा।'

'अब के जला देंगे। काट के तो देखे।' खचेरा ने कहा।

खचेरा मूर्ख था। पर नया खून था। उसे गाव के चतुर-चौकस चौधरी लोग हमेशा भढी पर चढ़ाकर मुकदमों में फंसवा देते थे और उसे बिरादरी के लोगों तथा अन्य लोगों से लड़वा के उससे खूब पैसे खाते थे। पर वह सब-कुछ होने पर भी आदमी बुरा न था।

एक आदमी ने कहा : 'अरे, रुको। जब तक पहुंचोगे, सारा लहू निकल जाएगा। पहले पट्टी तो बांध दो।'

'रेशम जला के बांध दो !'

किसी नई बहू ने अपनी फरिया दे दी। अभी नई थी। चमारों ने कहा : 'पंचायत दे देगी इसे।'

वह मुस्कराई। कहा : 'अरे देखो, जैसी मैं बहू, वैसी जेठी (धूपो) बहू। जैसे उसकी इज्जत, वैसे मेरी इज्जत। मेरा कमेरा ला देगा मुझे।'

उसका पति, जो क्षणिक स्वार्थ में डावांडोल हो गया था, बोला : 'हां, हा ! जला दो इसे।'

फरिया जली। रेशम ने जलते में बदबू दी।

'असली नही है।' एक ने कहा।

'असली रेशम हमारे घर आता है ?' उसके पति ने कहा : 'यह तो इसका हठ था, सो मैंने कैसे न कैसे करके ला दी।'

राख बुझा के घावों पर लगाई गई। खून का तेजी से निकलना बन्द हो गया।

'रुक गया !'

खुशी की लहर दौड़ गई।

'अब इसे इसके घर पहुंचा दो। वहां इसके अपने लोग होंगे।'

'चलो, उठाओ।'

खाट उठा ली गई। पचासों लट्ठ अब खाट के संग-संग आगे-पीछे चले।

औरतों की कांय-कांय होने लगी। मालिन अब नायिका हो गई और उसने ज सुखराम के कमालों का वर्णन प्रारम्भ किया तो औरतों की छातियां हुमकने लगी। दिल उमगने लगा। मर्दों की आंखों में कुछ-कुछ ईर्ष्या के भाव व्यक्त हो गए, पर उनका दय अभिभूत था। वे मानते थे कि इतने आदमियों को झेल जाना मामूली बात कदापि नहीं थी मालिन तो फर्राटे से बयान कर रही थी

खबर दौड़ी मंगू आया वह बाजार में था उसके साथ चार आदमी थे।
कौन सुखराम ? मंगू ने पूछा
'हां, सुनते हैं, घायल हो गया।'
'किसने किया ?'
पर उत्तर मिलने के पहले ही वह भाग चला। रास्ते में चमारों से जा मिला। रोका और उसने कहा : 'लौट जाओ भइया। मैं ले जाऊंगा।'
'कौन मंगू !' एक ने कहा।
'अरे, आ गए इसके बिरादरी के नातेदार।'
'चलो, छुट्टी हुई।'
'सभल के ले जाना।'
'तुम फिकर न करो।'
'बड़ा खून निकल गया है।'
'कोई बात नहीं।'
चमार लौट गए। चलते वक्त खचेरा ने कहा : नाहर है बड़ा यह !'
'मैं जानता हूं।' मंगू ने कहा : 'नटों की नाक है।'
'कभी किसी की चोरी न की इसने।' दूसरे ने कहा।
'सोना है सोना !' एक ने कहा।
उनकी आंखों में पानी आ गया था। उन्होंने आंखें फेर लीं। खचेरा चला गया था।
मंगू और उसके साथियों ने खाट उठा ली।
'कहीं मर न जाए यह।'
'कई थे वे लोग।'
'अब तो राम-सहारा है।'
'अरे, वह तो आखिर है ही !'
सुखराम बेहोश पड़ा था। नट बतराने लगे—'कहीं बांके के आदमी फिर न टूट पड़ें ?'
मंगू ने कहा : 'अब के तो एक था, अब तो चार हैं।'
'मरते दम तक लड़ेंगे।'
'पर वह तो खूब पिटा है।'
'कहते हैं, उसकी आंख फूट गई।'
'खून से खाट की बान तक भीग आ गई थी।'
''अरे ?' मंगू ने कहा।
'क्या हुआ ?'
'लहू बन्द नहीं हुआ।'
'मालिन कहती तो थी कि चूक गया। इसका ध्यान बंट गया, इसने किसीको वैसे हाथ थोड़े ही धरने दिया था।'
'शेर है, तभी तो मैंने इसके सामने सिर झुकाया था।' मंगू ने कहा : 'इसका दिल भी बहुत बड़ा है। रामा की बहू इसकी बदौलत मेरी हुई, नहीं तो मेरी तो दुनिया ही सूनी हो गई थी।'
जब वे पहुंचे तब कजरी बैठी लहंगा सीं रही थी।
वह आज मगन थी—नया कपड़ा देखकर हरसा रही थी। इतने दिन बाद नये कपड़े पहनने की नौबत आई थी और यह उसके कमेरे ने खरीद के दिये थे

स्त्री को जब पति प्रेम से कुछ खरीदकर देता है तब वह बहुत प्रसन्न होती है। वह वस्तु अपनी कीमत के कारण नहीं, उसके पीछे होने वाले प्रेमी-हृदय, सौहार्द के कारण अत्यन्त प्रिय हो जाती है। वह उस रक्षक की सौगात नहीं होती, स्त्री का उसपर हक होता है। और अपने अधिकार की पूर्ति देखकर किसे आनन्द नहीं होता? जैसे बच्चा बिना हिचकिचाए अपने मां-बाप से जिद करके चीजें लेता है, तब क्या वह नहीं जानता कि वह अपनों से ही अपना अधिकार मनवा सकता है? बाहर वालो से तो वह जिद नहीं करता। पति और पत्नी का सम्बन्ध अपने शारीरिक सम्बन्ध के कारण इतना प्रिय नहीं होता, एक-दूसरे पर बलिहार जाने वाली भावना की शक्ति के कारण वह जितना पवित्र और महान हो जाता है! उस मेसब तरह के दु ख झेल जाने की अदम्य क्षमता होती है।

वह सोच ही रही थी।

प्यारी करेगी क्या?

उसका पिया अब कजरी को नये कपड़े दे!! हाय दारी! सुखराम को देख के रोएगी। थूथड़ा नोंच लूंगी उसका।

और कजरी प्रसन्न हो उठी। एक तो अपने घोड़े की तेज दौड़ अकेले मे देखना और दूसरे उसी घोड़े को दूसरे घोड़े के आगे निकल जाते देखना, दोनों में कितना भेद है? एक में आत्मसंतोष है, दूसरे में स्पर्धा का अहंकार भी तो है।

इस समय वह गृहिणी का गर्व लिये बैठी है। पाप की कमाई नहीं, उसके पति की कमाई है। इसमें कितना गौरव है! स्त्री इसमें अपनी मर्यादा समझती है।

कजरी सोचती है: जब सुखराम लौटेगा तो छिपा देगी यह सब। अभी से नहीं दिखाएगी उसे। जान ही लेगा तो चौंकेगा कैसे!

और कजरी कल्पना कर रही है। सुखराम कहेगा: चल, प्यारी से मिल आए। वह थोड़ा मना तो करेगी। फिर मान जाएगी। और फिर वह नये कपड़े पहनेगी। सुखराम अपनी भरी-भरी आंखों देखेगा। हाय दारी! कैसे खड़ी रहेगी वह बन-ठन के उसके सामने। लाज न आएगी उसे, मरी! घूंघट कर लेगी तुरन्त।

और सुखराम कहेगा: कजरी! तू तो बड़ी अच्छी लग रही है।

कजरी कहेगी: हाय चलो, तुम्हें सरम नहीं। वहां जेठी पूछेगी, तुम्हें अबेर क्यों हुई, तो कह दूंगी, तेरा खसम मुझे छोड़ता था, कैसे आती मैं जल्दी!

कजरी हंसी। अकेले में भी वह प्रसन्नता से खिलखिला पड़ी। तब मजा आ जाएगा। प्यारी सफेद पड़ जाएगी। होगी तो दारी मलूक ही। नहीं तो ये बलमा ऐसे भोले न थे, जो अभी तक चिपके पड़े रहते। पर खूब जलेगी। जलै, मेरी जूती से! मुझे डर किसका? मैं क्यों न पहनूंगी ये नये कपड़े। कपड़ों की खातिर मैंने किसी खसम को तो न छेड़ा! अब वह भी कैसा?

और उसने आंख मूंदकर कल्पना की। सुखराम!! पुरुष! पराक्रम! परन्तु उसके सामने झुका हुआ। जैसे एक शेर उसके पास आकर पालतू हो गया हो। वह विभोर हो उठी।

तभी कोलाहल सुनाई दिया।

16

मंगू और उसके साथियों ने खाट उतार दी।

मगू ने पुकारा कजरी

'अरे, कौन है ?' कजरी ने पूछा।

'बाहर आ जरा।' उसके गले से भर्राया स्वर निकला।

'वहीं से कह न, मैं कपड़े सी रही हूं।'

मंगू ने अत्यन्त दु ख से कहा : 'बेला बीती जा रही है। जल्दी बाहर आ।'

कजरी बाहर आई। सब चुप खड़े थे।

कजरी ने देखा।

खाट के आगे वे लोग खड़े थे। वह एकदम खाट देख न सकी।

'अरे, बोलते क्यों नहीं ?' कजरी ने कहा और आश्चर्य हुआ। मंगू ने अपने साथियों की तरफ देखा। उन सबने सिर झुका लिये।

'अरे, चुप क्यों हो ?' कजरी झल्लाई : 'मरों के मुंह किसीने सीं दिए है, कि जीभ एंठ गई है जो बोल भी नहीं कढ़ता। ऐसे चुप खड़े हैं जैसे बाप फूक के आए हैं।'

वह समझी नहीं थी। तब मंगू ने इशारा किया पीछे की ओर। वह बढ़ी। खाट पर कोई चादर से ढका पडा था। चादर खून से भीग रही थी। कजरी के मन मे आशंका जाग उठी। कौन है यह ! ! वही तो नहीं ! ! !

वरना ये लोग इसे क्यों लाते ?

उसने चादर हटा दी। सुखराम अब भी बेहोश था। अब वह उतना पीला नजर नही आ रहा था, जितना रेशम जलाके भरने के पहले दीखता था। कजरी की आंखें फट गईं। उसने उसके होंठों पर हाथ फेरा, फिर आंखें छुईं। मरा नहीं था। सांस चल रही थी।

'किसने किया यह ?' उसने कठोर स्वर से पूछा।

मंगू आगे आया। कहा : 'घबराती क्यों है ?'

पर उसने नहीं सुना। कहा : 'मैं क्या पूछती हूं !'

'सब बताता हूं। सब बताता हूं !'

एक नट ने कहा : 'बताबा-बतूवी फिर हो लेगी। नैंकस, तू जा के चंदन को ले आ। तुरन्त पट्टी बंधनी चाहिए, वरना ठीक नहीं होगा।'

'ठीक बात है।' दूसरे ने कहा : 'लुगाई फिर रोने लगेगी। उसमें मौके की अकल कहा !'

नैंकस भाग चला। तब मंगू ने बताया :

'बांके और उसके आदमियों ने !' कजरी ने कहा।

'हां।' साथ के दूसरे नट ने कहा।

'तू सच कहता है ?'

'अरी, क्यों मूरख बनती है।'

'तुमने बचाया नहीं ?'

'मैं बाजार मे था।'

कजरी ने होंठ काटा : 'बांके' उसके मुंह से निकला। उसकी आंखों से जैसे चिनगारियां निकल रही थीं।

बांके के साथ कई लोग थे।' साथ के नट ने कहा।

'बांके !' कजरी ने फिर दुहराया।

'अरे, बांके-बांके बके जा रही है।' मंगू ने कहा : 'कुछ इसे भी तो देख !'

कजरी चौंकी। उसने सुखराम का मुंह कांपते हाथ से छुआ; जैसे वह डर रही थी। वह ऐसी स्तब्ध थी जैसे उसपर वज्र गिर गया हो

मगू ने कहा जरा अपना हाथ तो देख अब

कजरी को तब ध्यान हुआ उसने हाथ खोलकर देखा फिर मगू की तरफ देख कर दयनीय स्वर में कहा : 'इसका कित्ता खून बह गया है !'

और तब वह रोई। उसका वह हृदय-विदारक करुण क्रन्दन हाहाकार करता हुआ सबके हृदय को हिलाने लगा। यह रोदन आत्मा की गहराइयों मे छिपे सौंदर्य का तप-तपकर, गल-गलकर गिरने वाला रूप था। इसमें सांसारिक जीवन के आकर्षण की अखण्ड शक्ति थी, वही जो जीवन की स्वाभाविक मुक्ति है। मंगू उसके रुदन से काप उठा। आज वह उस क्षण कितनी असहाय बन गई थी ! उसकी हिचकी आज उखड रही थी, वह कितना प्यार उंडेले दे रही थी, मुक्त, दोनो हाथ खोलकर अपने सर्वस्व पर अपनी सत्ता का अह मिटा रही थी। अथाह वेदना आज सुहाग का मोह बनकर मानवीय आदर्शों की बेल को अपने जीवन के अमरत्व से सीच रही थी। उस आसू, उस रुदन, उस हाहाकार मे मनुष्य के हृदय के सारे पर्दों को फाड़ जाने वाली शक्ति थी। वह ऐसे रोई, जैसे अपनी कल्पना का महल ढहते देखकर कोई चीत्कार कर उठा हो। वह आवाज़ ऐसे पुकारने लगी जैसे घोंसलों पर बिजली गिरते देखकर शून्य में फटफटाते पक्षी ने आहत रोर उठाई हो।

मंगू की आंख भीग गई। कहा : 'रो नही कजरी !'

कजरी ने कहा : 'रोऊं नहीं मंगू ! !'

'रो ले री, रो ले।' रामा की बहू ने कहा। सब नट आ गए थे। चर्चा चल पडी थी।

'हम बांके को देख लेंगे।' एक ने कहा।

तभी चंदन मेहतर आ गया। वह सुन आया था। उसके आने पर कजरी उठकर खडी हो गई। उसने कातर दृष्टि से चंदन को देखा और उसके पांव पकड़ के कहा 'तू मेरा बाप है चंदन ! अपनी बेटी का सुहाग बचा दे !' वह रो पडी।

चंदन ने कहा : 'अरी, मरी क्यो जाती है ! अभी देख तो लू ज़रा।'

रामा की बहू ने कजरी को हटा लिया। कजरी उसके कंधे पर सिर धरे खडी रही। चन्दन ने देखा। नब्ज़ देखी। कहा : 'कोई डर नहीं है। ज़रूर बच जाएगा।' उसके कहने की देर थी कि कजरी ने चन्दन का पाव छू लिया। तम्बू मे दौड़ गई। जो पैसे थे इकट्ठे किए, फिर उनमें से दो रुपये निकाल लाई और कहा : 'तू मेरा बाप है। मै तुझे क्या दूगी। जो तू देगा उसका मोल सात-सात जनम तेरी नौकरानी रहके चुकाऊ तो न चुके। यह ले ले काका, फिर मेरा कमेरा ठीक हो जाएगा, तो तेरे घर मिठाई भेजूगी।'

'कोई बात नही बेटी।' चन्दन ने कहा : 'अब तू परे हट। मुझे दवा बाँधने दे।'

चन्दन अपना काम करने लगा। कजरी दूसरे वस्त्र लाई। सुखराम को तम्बू मे साफ खाट पर लिटाया गया। धोकर वह खाट चमरबारे में पहुंचा दी गई।

चन्दन चला गया। धीरे-धीरे सब भीड छट गई। सुखराम कुलबुलाया। रामा की बहू ने पानी पिलाया। वह आंखें मूंदकर सो रहा।

कजरी की साँस लौटी।

'कित्ते थे ?' उसने पूछा।

'कई थे।' मंगू ने कहा।

'आज तू न होता तो मैं तो मर ही गई थी, मंगू।' उसने उसके पांव छू कर कहा। वह नही बता सकती थी कि सुखराम के लिए वह कितनों के पैर छू सकती थी।

'अरे, क्या करती है!' मंगू ने कहा : 'तेरा मरद ही है यह, या मेरा भी कुछ है ? मेरा उस्ताद है

मंगू ने बीड़ी सुलगाकर कहा : 'कजरी ! यह नाहर है।'

'अरे नहीं।' कजरी ने दांत निकाल दिए। उसका सुख छिपा नहीं।

रामा की बहू ने कहा : 'अब रपट तो करा दो थाने में।'

'क्या होगा ?' मंगू ने कहा। उसके स्वर में एक व्यथा तो थी, परन्तु उसमें लापरवाही बहुत थी, जैसे यह बेकार की बात है।

'अरे, क्या चुपचाप रह जाएगा ?' वह चौंकी।

'दरोगा बांके की ओर है। जानती है न ?' मंगू ने पूछा।

कजरी ने कहा . 'दइया ! यह तो घायल है।'

मंगू ने कहा : 'वही लुगाइयों वाली बात ! बांके घायल नहीं है ?'

'सो तो है।' रामा की बहू, यानी अब मंगू की बहू ने कहा।

मंगू ने कहा : 'वह जरूर थाने गया होगा। रुस्तमखां तो ठेठ उसीका आदमी है। उसीके बल पर तो वह अकड़ता है।' उसकी बात ने कजरी की अग्नि को और भी भड़का दिया था। मंगू ने कहा, 'अस्पताल ले जाते तो डाक्टर रिश्वत मांगता। जब तक उससे रुपयों की तय होती, तब तक तो इसका दम निकल जाता। और तुमने तो इसका खून भी बन्द करवा दिया।'

'तेरी जीब जल जाए फूटे मुंह के।' कजरी ने काटा।

रामा की बहू ने कहा : 'और यही क्या जरूरी था कि वह फिर भी ठीक ही लिखता। वह तो रिस्वत मांगता। बुधुआ की क्या तुम्हें याद नहीं है ?'

'याद क्यों नहीं है ?' मंगू ने कहा : 'वे गरीबों की बातें नहीं है।'

'तो कोई रास्ता नहीं ?' कजरी ने कहा।

'अभी तो नहीं है।

'तब ?'

'मामला ठंडा पड़ जाने दे।'

'फिर ?'

'अरी, फिर मैं भी नटनी का जाया हूं।' कहकर मंगू हंसा। रामा की बहू ने कजरी के सिर पर हाथ फेरा और कहा : 'घबराती क्यों है ? तू सोचती होगी, तू अकेली ही है ? क्यों ? इसका बदला लेना चाहिए न ? जरा इसे ठीक हो जाने दे। पहला मुकाम तो ये है। फिर मंगू और सुखराम दो हैं। दो ! समझी ! और मैं और तू दो है।'

'अरे बांके किला-सा है !' मंगू ने इशारा किया कि वह उसे यों ही छुरा भोंक देगा।'

'अरी, बड़ी जालम है ये भी।' रामा की बहू की आवाज में गर्व था : 'ठहरी रह।'

'मैं नहीं ठहरूंगी।' कजरी ने कहा।

'तो क्या करेगी ?' मंगू चौंका : 'थाने जाएगी ?'

कजरी ने कहा : 'मंगू, तू एक काम करेगा !'

'काम फिर करूंगा। पहले यह बता। थाने गई तो दरोगा पिटवाएगा, बन्द कर देगा और फिर तू लुगाई ! सहज न छूटेगी। और फिर इसकी देख-भाल कौन करेगा ?'

'अरे, मेरी तो सुनता नहीं !'

'सुन ले न !' रामा की बहू ने कहा।

'क्या ? कह !' मंगू बोला।

'मैं जाती हूं।'

'कहां ?'

अभी नहीं बताऊंगी

'और तू न लौटी तो तुझे ढूंढ़ेंगे कहां ?'

'मैं आप आ जाऊंगी।' कजरी उठ खड़ी हुई। उसने एक कटार आंचल में छिपा ली। वह बिल्कुल शांत थी। उसने तम्बू के द्वार पर आकर कहा : 'ओ बहन! तू जइयो नहीं। इसको देख। मैं आती हूं।'

'पर कहां जाती है ?' मंगू ने टोका।

'टोक नहीं, मैं ऐसी जगह जाती हूं जहां मुझे डर नहीं।'

'तू जानती है ?' रामा की बहू ने पूछा।

'मुझे भरोसा है।' उसके स्वर में विश्वास था।

'तेरी मर्जी।' मगू ने सिर हिलाया और हथेली घुमा दी।

कजरी चली। कहां जा रही है ? पर उसे वहां पहचानना ही कौन है ? कोई नहीं। ऐसी अनजानी कितनी ही लुगाइयां उस गैल चलती हैं। मुंह ढक लेगी, और क्या।

शाम आने लगी थी। गाएं लौट चुकी थीं। दगरों की धूल अब धीरे-धीरे शान्त होने लगी थी। मन्दिरों में झालर और घंटे बजने लगे थे। फुलवाड़ी अंधेरे को पहले हरियाली में बसा रही थी। और उससे बह-बहकर छायाएं काली-काली-सी नीचे उतरी आ रही थीं। वह सफेद महल के पीछे दगरे से उतर आई।

और फिर वह अन्त में रुस्तमखां के द्वार पर ठहर गई।

पहले डर लगा। फिर जी कड़ा किया और भीतर घुस गई।

प्यारी उस समय बाहर आई थी और लौटकर भीतर जा रही थी। अब उसका बुखार उतर चुका था। वह शान्त थी।

उसने देखा कि धुंधलके में एक औरत भीतर आई है। समझी नहीं। यह कौन हो सकती है ? क्या रुस्तमखां ने कोई नया इन्तजाम अभी से कर लिया है ? उसे विक्षोभ हुआ। आगन्तुका और निकट आ गई थी।

दोनों ने एक-दूसरी को देखा।

नटनी !!

प्यारी का माथा ठनका।

पूछा : 'तू कौन है ?'

कजरी ने कहा : 'तू प्यारी है न ?'

'हां, क्यों ?'

'मैं कजरी हूं।'

'कजरी !!!' प्यारी के मुंह से निकल ही तो गया : 'तू यहां ?'

'हां, क्यों ? डर गई ?'

'डरूंगी और तुझसे ?' उसने घृणा से कहा।

'मुझसे क्यों डरेगी भला ? तू बड़ी आदमिन है।

'अच्छा, मुंह मत लग।' प्यारी ने कहा : 'काम क्या है, ये बता।'

'बता दूंगी रानी।' कजरी ने कहा : 'नैक हिया कड़ा कर ले।'

'क्यों ?'

'बात तेरी मरजी से हुई है न ?'

'मैं समझी नहीं।'

'और कजरी को क्रोध आ रहा था। वह इतनी दूर से आई है। और यह औरत उसे डांट रही है! उसका विक्षोभ उसके भीतर उफनने लगा। प्यारी ने देखा—कजरी सुन्दर थी। और कजरी ने देखा—प्यारी आकर्षक थी। दोनों ओर घृणा घुमड़ रही थी परन्तु कजरी का हृदय पानी भरा बादल था। प्यारी सुलगते काठ सी धुआं दे रही

थी। दोनों की पैनी दृष्टियां टकराईं और उससे जो आग निकली वह साकार रूप बन-कर सुखराम की याद बन गई। यह केन्द्र ढूंढकर अनन्त समुद्र में डूब गई।

'जैसी सुनती थी, वैसी ही है।' कजरी ने कहा।

'क्या सुनती थी तू ?'

'जो वे कहते थे।' कजरी ने कहा।

'कौन ?'

'तेरा खसम !' कजरी ने कहा।

'और तेरा कौन है वह ?'

'अरे, कोई हो, तुझे मतलब !'

प्यारी को गुस्सा आया : 'कहती क्यों नहीं ? क्यों आई है ?'

'आई हूं कि तेरी प्यास बुझ गई ?'

'क्या मतलब ?'

'ओहो, बनती तो यों है जैसे जानती नहीं। मैंने सब सुन लिया। तूने पिटवाया था न धूपो को ? उसने रोका था। उसका तूने ऐसा बदला लिया !'

'कैसा बदला, कजरी ? धर्म की सौगन्ध, मुझे बता दे।' उसका स्वर थर्रा गया था।

'बांके ने सुखराम को घायल कर दिया।' कजरी ने कहा : 'बांके ने कई आद-मियों को लेकर उसपर हमला किया। वह खूब लड़ा, पर बिचारा अकेला था। उन्होंने धोखे से मार दिया। और अब वह बेहोस पड़ा है, तब से। कहां जाऊं, क्या करूं ?' कजरी रो पड़ी। प्यारी के दांतों ने उसके नीचे के होंठ पर गड़कर खून निकाल दिया। वह बड़ी मुश्किल से अपने को रोक सकी।

'क्या कहा ?' उसने फिर पूछा।

'मैं सच कहती हूं।' कजरी ने कहा।

'फिर लहू रुका कि नहीं ?'

'रुक गया। अब तो पट्टी बंधवा दी है मैंने।' कजरी ने आर्द्र स्वर में कहा।

'बहुत लहू बहा है ?' प्यारी ने कांपते कंठ से पूछा।

कजरी ने हाथ फैलाकर भयातुर होकर कहा : 'सैरों बह गया है अल्लल-अल्लल। इतना लहू बहा है कि कह नहीं सकती।'

प्यारी स्तब्ध खड़ी रही।

कजरी कहती रही : 'पहले तो मैं डर गई।'

प्यारी ने नहीं सुना।

कजरी कहती गई : 'मुझे लगा, सब उजड़ गया, पर नहीं, नहीं, भगवान ने सुन ली।'

कजरी रोई। उसकी हिचकी बन्द नहीं होती थी। दुख अब फिर इकट्ठा हो गया। एक सुननेवाला मिला तो सब उगल गई। पूछा : 'तूने ऐसा क्यों किया, प्यारी ! तेरा खसम ही तो था ! गुस्सा था तो मुझे कत्ल कर देती। वह तो बिचारा बड़ा भोला भाला आदमी है। उससे भी तूने बैर कर लिया !'

प्यारी द्वार की देहली पर सिर फोड़ने लगी। कजरी समझी नहीं। भट-भट, भट करके सिर लगा, वह चौखट काठ की थी। एकदम फटकर सिर से खून नहीं निकला।

कजरी घबराई उसने उसे पकड़ लिया प्यारी फिर अपना सिर पटकने को छु ने का प्रयत्न करने लगी।

'क्या करती है ?' कजरी ने कहा।

'मुझे मर जाने दे।' प्यारी ने कहा : 'तू मुझे जालम समझती है। अगर वह यही सोच लेगा तो मैं जीकर भी क्या करूंगी इस दुनिया में ? मुझे तू मर जाने दे। अगर मेरे मरने से वह जी उठे तो मैं सुहागन हो जाऊंगी कजरी, मुझे छोड़ दे।' उसने रोते हुए करुण कण्ठ से कहा : 'छोड़ दे, मैं पापन हूं।'

कजरी ने नहीं माना।

उसने कहा : 'तू बैठ !'

प्यारी बैठ गई। दोनों हाथों में सिर पकड़ लिया और सोचने लगी। उसने धीरे-धीरे कहा : 'अच्छा ! लेकिन उसने तो कुछ नहीं कहा ?'

'नहीं।' कजरी ने कहा।

'मैं क्या करूं ?' प्यारी ने अपने-आप से कहा। वह जैसे बहुत ज्यादा थक गई थी और वह सोच में पड़ी हुई भूली-सी दूर देखती रही। हठात् उसमें एक विश्वास-सा जागा। उसने सिर उठाया। कजरी चौंकी। उसके मुख पर एक चमक आ गई थी। कजरी के कन्धे पर हाथ धरकर प्यारी ने उसी तरह आकाश की ओर देखते हुए कहा : 'तू जा कजरी।'

कजरी ने सुना, विश्वास न हुआ।

'जा ! कुछ नहीं किया तूने ! रंडी !' घृणा और क्रोध से विकृत मुख से कजरी ने कहा। उसको लगा जैसे प्यारी की आत्मा मर चुकी है जो सब कुछ सुनकर भी उस सबको पी गई है ! यह प्रेम करती है अपने सुखराम से ? यही है इसका प्रेम ! यही है इसका उसके लिए दर्द ! कितनी बेवफा औरत है !

प्यारी ने उसके मुंह पर पटाक से चांटा मारा। उसका हाथ जैसे अनजाने ही उठ गया था। वह सह नहीं सकी थी। इसकी यह मजाल कि मुझसे यह ऐसे शब्द कह जाए ! इसका इतना साहस कैसे हुआ ? जानती नहीं कि प्यारी कौन है ?

कजरी ने उसका मुंह नोच लिया। दोनों को ही अपनी-अपनी जगह गुस्सा था। और प्यारी के मन में क्रोध था कि यही है वह जिसने सुखराम को छीन लिया है। यही है वह जिसने मेरे बाग को उजाड़ दिया है। और कजरी को लग रहा था, प्यारी कमीनी औरत है जिसमें हया और गैरत नहीं जो एक पतित स्त्री है, जिसकी भावनाओं की भी हत्या हो चुकी है, जो इस योग्य ही नहीं कि उससे किसी प्रकार की भी बात की जा सके।

दोनों में मार-पीट बढ़ गई। कजरी इस समय प्यारी से निश्चय ही अधिक स्वस्थ थी। उसने प्यारी को दबा लिया, मगर प्यारी खिसियाई हुई थी। उसने उसके बाल पकड़कर खींचे। कजरी की आंखों में पानी आ गया। प्यारी का मुख क्रोध से तमतमा रहा था। इस शोरगुल की आवाज भीतर भी पहुंच गई, जिसे सुनकर रुस्तमखां निकला।

रुस्तमखां कजरी को नहीं पहचानता था। पहले तो वह समझ नहीं सका। पर प्यारी को कमजोर पड़ते देखकर वह भर्राई हुई आवाज में आगे बढ़कर चिल्ला उठा : 'पकड़ो इस हरामजादी को !'

उसकी आवाज सुनकर कजरी कांप उठी। प्यारी में ताकत-सी आ गई। परन्तु उसने झपटकर कजरी को अपने दायें हाथ में पकड़कर अपनी शरण में लेते हुए कहा : 'खबरदार !'

रुस्तमखां चौंका। कजरी और भी अधिक।

'हाथ न लगाना इसे !' प्यारी ने कहा।

'यह कौन है ?' रुस्तमखां ने पूछा।

'कोई हो, तुम्हें मतलब ?' प्यारी ने हांफते हुए कहा।

कुछ लोग आ गए थे।

रुस्तमखां के मन में क्रोध था। बोला : 'बेवकूफ ! तू तो इससे पिट रही थी।'

'मेरी मरजी। मैं पिट लूंगी। पर लुगाइयों के बीच तुम क्यों बोलते हो ?'

सब ठिठक गए।

तो फिर रुस्तमखां ने कहा : 'चूपो के वक्त यह क्यों नहीं कहा था ?'

'वह भी मेरी मरजी।' प्यारी ने कहा : 'वह चमरिया थी, यह मेरी बिरादरी की है। नटिनी है। इसकी-मेरी बात घर की है।'

रुस्तमखां इसका जवाब नहीं दे सका। ग्रामीण तर्क में और नागरिक तर्क में भेद होता है। लोग बोले : 'ठीक कहती है।'

कजरी समझी नहीं।

रुस्तमखां भीतर चला गया। लोग दूर हो चले। फिर भी दो-एक आदमी खड़े रहे और अब आपस में बातें करने लगे।

एक ने पूछा : 'ये कौन ?'

'क्यों ? तू क्या करेगा जानके ?'

पूछने वाला चकराया। दूसरे लोग हंस दिए। कजरी उस समय मुस्करा दी।

'क्या लोग है !' प्यारी ने कहा : 'चल री उधर।'

कजरी ने कहा : 'जाने दो, माफ करो।'

दोनों हंस दीं। लोग झेंपे। अजीब बात हो रही थी। यह तो दोनों दूध-पानी-सी घुल-मिल गईं।

कोने में ला के प्यारी ने कहा : 'तू जा। मैं बांके से बदला लूंगी।'

'क्या करेगी ?'

'जो कर सकूंगी।'

'मुझे भरोसा नहीं होता।'

'मेरी सकत पर कि नीयत पर ?'

'सकत पर।'

'अभी तूने देखा ही क्या है ?'

कजरी ने कहा : 'तू जेठी है। मैं तेरे पांव छूती हूं।'

प्यारी प्रसन्न हुई। कहा : 'तू छोटी है। तू मुझसे लड़ेगी तो क्या मैं अपना घर लुटा दूंगी ?'

'मेरे हाथ टूटें, तुझ पै उठे। मेरी आंखें फूटें जिन्होंने डाह की। अब समझी, तूने उसे कैसा लट्टू कर रखा है अपने पर। दारी, तू बड़ी वो है। मैं तेरी क्या बराबरी करूंगी।' कजरी ने मगन होकर कहा। उसके स्वर में ममता थी।

प्यारी ने कजरी को छाती से लगा लिया। दोनों एक-दूसरी की ओर देखती रहीं। उन नयनों में कितनी गहराई थी, कितना प्रसार था ! जैसे दोनों हाथ फैलाकर आकाश धरती पर झुककर टिक गया हो और धरती घूमती हुई आकाश की ओर उठी आ रही हो। कजरी का हाथ पकड़कर प्यारी ने स्नेह से कहा : 'तू अब जा। वह अकेला होगा। उसके पास रहियो। उसे अच्छा कर दीजो। भला ! देख, ठीक से देख-भाल करियो, नहीं तो मार-मार के खाल उधेड़ दूंगी।'

कजरी ने स्नेह की बात को समझ लिया। परन्तु उसे यह अधिकार सहज ही स्वीकार नहीं हुआ इसका मतलब तो था कि कजरी का अपना कुछ नहीं वह तो

देख भाल करने के लिए है और प्यारी ही स्वामिनी है उसके मन ने यह स्वीकार नहीं किया। उसने तिनककर उसका घूरकर उत्तर दिया : 'अरी नहीं, तू ऐसी देख भाल वाली थी तो चली न आती छोड़ के !'

प्यारी समझ गई कि चोट ठीक बैठी।

उसने कहा : 'सो क्या हुआ ?'

कजरी ने कहा : 'तुझे फिकर ही होती तो उसका संग-साथ छोड़ देती तू ! कभी नहीं लाडो।'

'मैं ही न आती तो डाइन, तू उसे छू लेती !' प्यारी ने फिर उसे तोला।

कजरी इसका उत्तर सहज ही नहीं दे सकी। यह तो सच था। अभी भी तो सुखराम के मन मे गांस थी। उसे कजरी क्या उसके भीतर से निकालकर दूर करने में समर्थ हो सकी थी ? उसने एक पराजित-से, पर उद्धत स्वर में ही जवाब दिया : 'भाग किसने देखा है ?'

प्यारी को अपने बल का अनुमान हुआ।

उसने कहा : 'भाग की बात ही है जो तू आ गई।'

'तू तो भाग से ऊपर है ?'

'हूं तो नहीं, पर अब डावांडोल हूं।'

'तो मेरा भाग देख जल रही है ?'

'अरी, बड़ी भाग वाली है तू !' प्यारी ने कहा।

फिर दोनों का वैमनस्य जाग उठा। और जिस तरह मन मे मिठास आई थी, वहां अब खटास आ गई। पर वह अब बाह्य थी क्योंकि गहराई में वह नहीं रही थी।

कजरी ने व्यंग्य किया : 'देख, मेरा मरद कैसा है, और ये तेरा कैसा है !'

अब प्यारी आहत हुई। उसने पानी-पानी होकर कहा 'यह मेरा मरद नहीं है। मेरा बन्दर है।'

'अरी जा।' कजरी ने चुटकी ली : 'तू इसकी बंदरिया बनके नहीं रह रही है ?'

प्यारी की आंखों में आंसू आ गए। यह सचमुच उसके मन के घाव को बेदरदी से लोहे की कील से कुरेद दिया गया था। तो यह वह तेल में भीगी हुई रुई की बाती थी, जिसमें आग बनकर कजरी लग गई और सुखराम के मन के दिये मे नया ही उजाला हो गया। वह और कोई उत्तर नहीं दे सकी।

'रोती क्यों है ?' कजरी ने पूछा।

'रोती तो नहीं।' प्यारी ने आहत स्वर से कहा : 'छोटी है, छोड़े देती हूं।'

उसके स्वर में ममता थी या ईर्ष्या, या अधिकार या उपेक्षा, या क्या था, कजरी नहीं समझ सकी। पर आंसू निर्बलता के प्रतीक थे। स्त्री के जिन आंसुओं से पुरुष पिघलता है, स्त्री उनमें विजय प्राप्त करती है। वह खुद जिस हथियार को तलवार की तरह आंखों की म्यान से निकालकर गालों पर चमकाती है, वह क्या उसके दांव-पेच नहीं जानती ? कजरी को सुख हुआ। कहा : 'नहीं तो सूली लगवा देती ?'

'मैं कहती हूं तू जा !' प्यारी ने मुंह छिपा लिया।

कजरी मुस्कराई। कहा : 'जाती हूं। रोके भेजेगी ? और वह आएगा तो उससे मेरी चुगली करेगी ? उससे मुझे पिटवाएगी तू ?'

प्यारी हंस दी। कहा : 'तू बड़ी चंट है।' फिर कहा : 'अरे, अंधेरी घिरी आ रही है। तू अब जल्दी जा।'

'जाती हूं।' कजरी ने कहा : 'रास्ते में किसी ने छेड़ा तो ?'

'तू डरती है ?'

'क्यों नहीं डरूंगी ? एक तू ही जवान है ? कहीं किसी सिपाही की मुझपर नज़र पड गई तो ?'

प्यारी फिर चोट खा गई। कहा : 'परमेसुरी, अब तू जा। डरती भी है, और जाना भी चाहती है। मैं क्या करूं ?'

'अपने लिए नहीं डरती, जेठी ! फिर उसके पास कौन रहेगा ?'

'मैं जाऊं ?' प्यारी ने उलाहना दिया।

'और जाके बीमारी दे आऊं ?' कजरी ने कहा।

प्यारी का मन छार-छार हो गया। वह क्या करे ? सच ही तो कहती है। अब वह क्या इस योग्य रही है ? नहीं। सुखराम को वह अपनी-जैसी अवस्था में पहुंचा दे !

कजरी की विजय हो गई थी। अब उसने उसका हाथ पकड़कर कहा : 'जेठी !'

प्यारी ने हाथ छुड़ा लिया। कजरी मुस्ककराई। कहा : 'जेठी ! तुझे मैं ले जाऊंगी। तेरे संग बड़ी जोर की रहेगी। उसे भी अच्छा कर दूंगी और तू भी अच्छी हो जाएगी। अरी, क्यों घबराती है ? समझ ले, दो बहनें हैं हम-तुम, सौत हो गईं तो क्या हुआ ? तू लडकी है, मैं भी लड़की हूं।'

'तेरी डाह तुझे अंधा बना रही है।' प्यारी ने कहा : 'मैं फिर सुन लूंगी। इस बखत उसके पास जाना जरूरी है। तू जानती है मैं नहीं जा सकती, फिर तू क्यों बखत बरबाद कर रही है ?'

'कोई डर नहीं है।' कजरी ने कहा : 'वह ठीक हो जाएगा अब, पर बांके की बात याद है न ?'

'याद है। उसे तू क्या याद दिलाएगी ?' प्यारी ने गर्व से कहा।

कजरी ने उसकी आंखों को देखा। अब उनमें एक चमक थी। उसे देखकर कजरी मन ही मन डर भी गई, पर बोली नहीं। देखकर झुक गई, और कजरी बाहर निकली।

प्यारी भीतर चली गई। अब कजरी का मन उछल रहा था। देख ली सौत ! है तो पानीदार, पर कुछ फिकर नहीं है। अज्ञात का भय कितना भयानक होता है ! पहले उसके मन में कितना अधिक डर था, अब वह क्यों नहीं है ?

रास्ते में चमरवारे में पहुंची तो सुना वे औरतें खड़ी आपस में बतरा रही थीं। कभी वे सब एकसाथ बातें करने लगती थीं, तब कांय-कांय के अतिरिक्त कुछ भी सुनाई नहीं देता था। पर बीच-बीच में सुखराम का नाम सुनाई देता था। कजरी को कौतूहल हुआ। रुककर सुनने लगी। जाने क्या बात हो रही है ! एक तो स्त्री जाति ही दूसरे की बात सुनने की शौकीन होती है, फिर गांव की स्त्री को तो इसके बिना चैन नहीं आता। लडकपन में मर्द भी इसी आदत का शिकार होता है, पर फिर उसकी आयु के साथ उसका अहं बढ़ता जाता है और वह दूसरों के बारे में इतनी सुनने की आवश्यकता का अनुभव नहीं करता, जितनी अपने बारे में। कजरी ने देखा, औरतों में बड़ी हलचल थी।

एक ने कहा : 'ऐ भटू ! इत्ते लोगों ने खड़े-खड़े घेरा उसे, मगर मजाल कि लाठी देह पै लगने दी हो। यों फिरकनी-सा बन गया बीच मैदान में। देखने को लगता कि अब दो टूक हो जाएगा, पर वह लचक मारता कि आंखें संग काढ़ के ले जाता, मैं तो हिरानी-सी रह गई। दैया रे दैया !'

दूसरी ने कहा : 'अरी ! परके लाठी चली तो दोनों ओर के ज्वान यों भहरा-भहरा के गिरे। सौगंध है, वैसी लड़ाई देखके तो चित्त हो गई। आज तो कोई बांके को देखता होय कैसी-कैसी दांतों मींच भींच के खिसियाया पै एक न चली

उसने से हाथों से इंगित किया, जिसे देखकर औरतें ओर स हस

पड़ी।

तीसरी बोला, और फिर, आदमी भला है। अपना मतलब नहीं था।

दूसरी ने कहा : 'आय राम! गाम की बहू की इज्जत की बात ठहरी। ईमा
वा मानुस कैसे चुप रह जाता?'

'अरी! नहीं होते सब ऐसे।' तीसरी ने कहा : 'अपने खेत छोड़ के दूसरे का भ
जिनावर चर जाए, लोग कहैगा, भई हम काहू की आत्मा न दुखाए अपने जान, कुछ भ
हो।'

पहली ने कहा : 'वह बीर है भाएली! बीर है!'

'बेसक।' दूसरी ने कहा।

तीसरी ने कहा : 'मुझसे मालिन बोली थी।'

'वह तो वहीं थी।'

'हां, उसने सब देखा।'

'बजमारी ऐन मौके पै जाने कहां से आंखें ठंडी करके चली गई। मैं तो देख ह
नहीं पाई।' यह कोई और थी और उसके स्वर में सच्चा अफसोस-सा था।

कजरी की छाती फूल गई। जी किया रो पड़े। पर अपने को रोका। फिर भ
हंसी होंठों पर थिरकने लगी। अब मन तो मानता ही नहीं। अपने को रोके तो कैसे
आखिर रोक न सकी। आगे बढ़कर पूछ ही तो बैठी : 'किसकी बात करती हो?'

औरतें चौंकीं।

'अरे, कोई नटिनी है।' एक ने कहा।

'तुझे क्या?' दूजी ने पूछा।

'बता दो मैना।' तीसरी ने कहा।

'अरी, सुखराम को जानै है?' एक ने पूछा।

'न जानैगी ये?' एक और ने कहा : 'वह तो इसीकी बिरादरी का है।'

'तुझे क्या लगी सबको?' किसीने पूछा।

'हाय, वह मेरा मरद है।' कजरी ने लाज से मुंह ढक लिया।

'ऐं ऽऽ!!' स्त्रियों में दुःख की लहर दौड़ गई।

'बड़ा घायल हुआ है वह।'

'जानूं मैं।' कजरी ने कहा : 'कोई डर नहीं है। बच जाएगा।'

'तुझे कर लिया है उसने?' एक बोली।

कजरी ने कहा : 'नहीं, मैंने कर लिया है उसे।'

'वह तो एक ही बात है।' और स्त्रियां ठठाकर हंस पड़ीं। वे कजरी के उस
गौरव के अनुभव की ओर ध्यान नहीं दे सकीं, जो कर्तृत्व को अपने हाथ में लेकर उसप
प्रशंसा चाहता था। कजरी कहना चाहती थी कि वह उसका अपना चुनाव था।

कजरी को बेसुधी-सी छा गई थी।

'वह बड़ा मरद है।' उसने विभोर स्वर में कहा।

'हाय दैया!' एक औरत ने कहा : 'क्या कह रही है! तुझे लाज नहीं आती
कहीं ऐसी बात कही जाती होगी?'

वह क्या कह रही थी, और हठात् उसका क्या अर्थ लगाया गया, वह स्पष्ट
नहीं समझी। परन्तु औरतों ने फिर अट्टहास किया। तब कजरी की समझ में आय
और वह घूंघट खींचकर हंसते हुए बोली : 'हाय बेसरम! क्या बकती हो? मैं क्या क
रही थी?'

औरतों की चुहल शुरू हो गई थी। वे बकने लगीं और गांव की परम्परा

अनुसार असाहित्यिक शब्दों का प्रचार भी हुआ और कजरी को उसमें आनन्द आया।

'तेरे बड़े भाग नटिनी।' एक ने कहा : 'तैंने भर पाया।'

'हां जीजी। मुझे अब कोई हिर्स नहीं।'

औरतों में ईर्ष्या पैदा हुई। एक स्त्री कहती है कि वह पूर्ण तृप्त है, यह क्या कुढ़ने की बात नहीं है? जात की नीच, रहने को घर नहीं, पर मन इतना बड़ा है?

पर कजरी को इस समय यह सब नहीं व्याप रहा। इस समय वह इन छोटे दायरों के ऊपर है। वहां तक ये सब लोग पहुंच ही नहीं सकते।

और प्रेम के अभिन्न गौरव की आस्था उसके मन में अब अपना विकास करने लगी। अपना प्रभुत्व व्याप्त करने लगी। उसके स्पर्श में एक अद्भुत चेतना जाग रही थी।

कजरी लौटी तो पांव उड़ रहे थे।

जब डेरे पहुंची तो अंधेरा-सा था। रामा की बहू वहां नहीं थी। हृदय धक-सा रह गया। बिलकुल सन्नाटा छा रहा था। क्या हुआ? रुक गई। भीतर घुसने की हिम्मत नहीं पड़ी। पर कब तक रुकी रहती। आखिर साहस करके घुसी। उसकी हल्की पदचाप सुनकर खाट पर कोई हिला। और अंधेरे में ही कजरी ने सुना। कोई धीमे पर दृढ़ स्वर से पूछ रहा है—

'कौन?'

कजरी ठिठक गई। वह सुखराम का स्वर था। वह तो होश में आ गया था! एक मुर्दा जिन्दगी फिर करवट बदलकर उठी तो उसे देख सारा जहान गुलगुला बनकर अब अंगड़ाइयां लेने लगा। कजरी का हृदय आनन्द से स्तब्ध हो गया।

'मैं हूं।' उसने कहा।

उसकी आवाज धीमी और सहिष्णु थी। वह अपनी सत्ता का अस्तित्व जैसे दुहरा रही थी। वह अपनी प्रेम की परिधि फिर जैसे उसके चारों ओर खींच रही थी।

सुखराम ने धीमे से कहा : 'आ गई!' फिर कहा : 'आ जा, यहां आ जा मेरी कजरी!'

वह रो पड़ी। उसने उसके पांव पकड़ लिये। सुखराम उसके सिर पर बायां हाथ फेरने लगा।

'रो नहीं कजरी।'

'नहीं रोऊंगी।'

'आज मैं बच गया।'

'छि:, क्या कहता है!'

'सच कह, तू डरती न थी?

'डरती तो थी।'

'कि कहीं मर न जाए?'

उसने सुखराम के मुंह पर हाथ रख दिया।

'तू मुझे रुलाता है।'

'औरत का दिल बड़ा नरम होता है। तेरा भी है।'

'सबके लिए नहीं, पर तेरे लिए मुझे जाने क्या हो जाता है, मैं समझ ही नहीं पाती।'

'क्या हो जाता है तुझे?'

तू ठीक हो जाएगा कजरी ने कहा बलमा!

उसने संकोच छोड़कर पुकारा उस शब्द का गीलापन सुखराम को छू गया

वह समझा पर उसे सिर्फ उसकी अव्यक्त सी अनुभूति हुई वह यह नहीं समझा कि वह आत्मा से आत्मा ने बात की थी। उसमें केवल एक हुमक-सी व्यापी और गर्व का उन्माद बनकर वह हंसी और उसे कुछ अजीब-अजीब-सा लगा।

सुखराम ने अपने क्षीण स्वर से उसको आश्वासन देते हुए हाथ फिराकर कहा 'हां कजरी ! तू है तो मैं नहीं मरूंगा।'

कजरी को ऐसा लग रहा है जैसे उसने बात नहीं की है, एक बड़ा भारी सत्य कहा है, ऐसे जैसे पत्थर पर लकीर खींच दी है। मनुष्य ऐसी प्रतिज्ञा करता है. परन्तु वह नहीं जानता कि उसका अभी इस बात पर अधिकार नहीं हुआ है, परन्तु समवेदना सबल चाहती है और संबल-प्राप्ति आत्मविश्वास की चरमोन्नति है।

उसके सीने में सिर रख के कजरी ने कहा : 'तेरे बिना मैं कैसे जिऊंगी !' और उसने ऊपर हाथ उठाकर कहा : 'हे भगवान् ! जात में नीच बनाया, मैंने कुछ नहीं माना। मेरे करम का फल था। मैंने पाप किया है, उसका बुरे से बुरा दंड भोग लूंगी, पर एक भीख मांगती हूं। मेरी अर्थी उठे तो भी मेरा सुहाग बना रहे। मैं इसके पीछे दुनिया में बची न रह जाऊं।'

'क्या कहती है कजरी ?'

सुखराम ने बात बदली : 'तुझे कैसे मालूम हुआ सब ?'

'मगू ने कहा था।'

'उसकी बहू यहीं बैठी थी।'

'मैं छोड़ गई थी उसे। वह कब गई ?'

'पता नहीं। मैं सो गया था।'

'तुझे नजर नहीं लग गई होगी ?' कजरी ने कहा।

'सो कैसे ?' सुखराम ने पूछा।

'लुगाइयों का बस चले तो तुझे खा जाएं।'

सुखराम झेंपा। कहा : 'क्या बकती है !'

'अरे, बकती हूं ? दारी ऐसी छाती फूला-फुला के तेरे गुन गा रही है।' कजरी ने कहा।

'कहां ?'

'क्यों, लगा न सुनने ? मैं तो पहले ही डर रही थी।'

'ऐसा हाथ टूटा सुसरी के। कहती है आप, और टोकती है आप।'

'क्यों न कहूंगी ! पराई औरतें तुझमें दिलचस्पी लें तो मैं सुनूंगी नहीं ? पर तू कैसे उनकी ओर बोलेगा ?'

'मैं किसकी तरफ बोला हूं री ?'

'तेरा क्या है ? तू पहले प्यारी का था, अब मेरा हो गया। अब कोई और आएगी तो उनका हो जाएगा ?'

'तू ऐसा कहती है ?' सुखराम ने कहा . 'प्यारी तो तेरे नाम को कोस-कोस के पानी पीती होगी। वह नहीं बुरा मानती होगी तेरे आने से ?'

'क्यों ? मैंने उसे क्या दुख दे दिया है ?'

'नई आने वाली तेरे बारे में यही कहेगी।'

'कौन आने वाली है ?' कजरी ने चौंककर पूछा।

'कोई हो।'

'दारी आके तो देखे डेरे में। नलियां न हिला दूं !'

'और प्यारी जो तेरे से यही करे तो ?'

'करके तो देखे।'

'तो चित्त भी तेरी, पट्ट भी तेरी। और वह भी तब, जब सूत न पौनी, कोरी से लठालठी।'

दोनों हंस दिए।

मन हल्के हो गए।

'बांके का खून पीऊंगी मैं।' कजरी ने कहा।

'पी लीजो, पानी पिला दे पहले।'

कजरी झेंपी। इतनी सस्ती टाली गई थी।

कहा : 'तुझे मेरा विश्वास नहीं। तुझसे पिट लेती हूं तो तू समझता है, मैं सचमुच दब जाऊंगी? बोदी हूं?'

'तू दबी है मुझसे? मुझे दबा रखा है तूने उल्टा।'

'क्या बकते हो?' कजरी ने लजाके हाथ नचाके कहा : 'उतना लम्बा-चौड़ा आदमी है, और मुझे दोष देता है!'

सुखराम हंस दिया। कजरी उठी और रोटी ले आई। कहा : 'भूख तो लगी होगी!'

17

रात हो गई थी गहरी और गहरी। हवा चलने लगी थी, जो दूर तक के झुरमुटों में मटरगश्ती करती। पेड़ उसकी ठंडी पकड़ से बचने के लिए फहराते और पत्ते इधर-उधर छिपने का यत्न करते। दूर आसमान में तारे हल्के-हल्के-से झलमला रहे थे। गीदड़ों की हुआं-हुआं कर्कश स्वर से गूंजती। फिर भूरा भौंकता, फिर कभी घोड़ा सुमों से धरती को खूंदता। और फिर वही काली निस्तब्धता ऐसे द्वार में घिरके लगती जैसे वह डेरा नहीं, एक स्याही की बड़ी दवात थी।

सुखराम ने कहा : 'कजरी!'

कजरी लेटी हुई कुछ सोच रही थी। आवाज सुनते ही चौंककर उठ बैठी। पूछा : 'क्या है? पानी लाऊं?'

'नहीं, मेरे पास आ!'

उस आवाहन का सामीप्य कजरी के तार-तार को छू गया। और उस निकटता की भावना ने उसकी नींद को दूर भगा दिया। उसे लगा, वह उससे दूर रहकर कुछ भूल कर उठी थी।

कजरी पास आ गई। कहा : 'मैं तो यहीं थी। सोचा, शायद तू सो गया है, इससे जग न जाए कहीं।'

वह यह प्रमाणित करना चाहती थी कि वही वह दूर नहीं थी। वह उससे दूर हो ही नहीं सकती। फिर पूछा : 'क्यों बुलाया था?'

'ऐसे ही!'

कितना स्नेह था उन शब्दों में!

'अब चैन है?' कजरी ने पूछा।

'हां, पहले से अच्छा हूं।'

बाहर आहट हुई। कजरी बाहर गई। सुखराम ने सुना, बाहर दो व्यक्ति बातें कर रहे थे। वह उनकी बात नहीं सुन सका क्योंकि स्वर दबे हुए थे।

पूछा : कौन है?

आह ! कजरी ने कहा।

सुखराम ने धीरज धारण किया।

रामा की बहू आई थी। कजरी उसे देखकर रिन्झाई। उसने उसे उचाट-भरे स्वर में पूछा : 'कैसे आई ? तू छोड़ के कहां चली गई थी ?'

'अरी, मैं बैठे-बैठे उकता गई। सोचा, कुछ मतलब का काम ही कर लाऊं।'

'क्या कर लाई ?'

रामा की बहू ने हाथ बढ़ाया। कजरी ने गौर से देखा। रामा की बहू दबे स्वर मे बोली : 'यह तीतर लाई हूं।'

'तीतर ! रात को ! !'

'हां।'

'कहां से ?'

'जंगल से !'

'इस रात में जंगल गई थी ! ! !'

'खिला दे। खून बढ़ेगा !'

कजरी का मन गद्‌गद हो उठा। उसने दोनों हाथों से उसके गाल छुए, जैसे स्नेह टपका पड रहा था। वह इस अंधेरी में जंगल मे से तीतर मारकर लाई है, यह क्या सहज काम है ! हृदय घायल था ही, अब तो पानी-पानी हो गया। स्नेह की शक्ति की तो कोई सीमा ही नहीं।

'हलुआ मिल जाता तो अच्छा होता।' रामा की बहू ने कहा : 'पर हमारे घर कहा होगा। सो ही मैंने सोचा था। वह उस वक्त सो रहा था, तो मैं चली गई थी।'

'अरी, तू क्यों बताती है ऐसे ?' कजरी ने झेंपकर कहा : 'मैं क्या कोई यों थोड़े पूछती थी !'

'अच्छा देख ! भून के दीजो।'

कजरी की आंखों में नमी आ गई।

रामा की बहू चली गई। कजरी ने भीतर आकर भून के खिलाया। गद्‌गद स्वर से उस समय रामा की बहू के गुन गाए। सुखराम भी कृतज्ञ हुआ।

कजरी सोचने लगी।

'क्या सोच रही है ?' सुखराम ने पूछा।

'कुछ नहीं।'

'सच बता, तुझे मेरी कसम।'

'सोच रही थी, तेरे लिए हलुआ कहां से लाऊं ?'

'चिन्ता न कर। कल मुझे जंगल में ले चलियो। मैं आप अपना इलाज कर लूंगा।'

'कल तू चल लेगा ?'

'अरी, कल तक तो काफी बल आ जाएगा मुझमें।'

'हाय, मुझे आग लग जाए।' कजरी ने कहा। 'कहीं मुझे मेरी ही नजर नहीं लग जाए।'

'अगर तेरी ही नजर मुझे न लगेगी कजरी, तो फिर देखेगा कौन ?'

'अरे, तुझे देखने वाले तो पचासों हैं, पर मुझे तेरे बिना कौन देखेगा ?'

बात मुड़ गई।

'बांके का मैं खून करूंगा।' सुखराम ने कहा।

'फांसी लग जायेगी।'

'तो क्या चुप बैठा रहूं ?'

'तू चला जायेगा तो मेरा क्या होगा ?'

सुखराम चिन्ता में पड़ गया। क्या उसे उस प्रेम ने बांध नहीं दिया था ? मनुष्य का मूलभूत सुख क्या है ? भूख, प्यास, यौन तृष्णा को मिटाना। परन्तु इन्हींको समाज की व्यवस्था जकड़ती है। यह मूलाधार एक-से रहते हैं, उनके बाह्य बदलते हैं। परन्तु सुखराम यह कैसे समझे ? और सचमुच यदि मनुष्य इनको ही छोड़ दे तो जीवन में आनन्द ही क्या है ? आनन्द ! ! और जो समस्त बन्धन हैं ! इन भूखों को मिटाने के लिए आदमी अपने को समाज से अलग तो नहीं कर लेता ? इन्हींके लिए समाज है। अतः जो मूलाधार है, वही उसका बाह्य भी है।

कजरी ने कहा : 'तू अकेला तो नहीं है ?'

'पर कजरी, यों तो वह पीस खाएगा।'

'उसका भी परबन्ध करेंगे।'

'सो कैसे ?'

'जैसे मंगू ने कहा था।'

'थोड़े दिन बाद...'

'क्या ?'

वह बात पूरी न कर सकी। सुखराम ने कहा : 'नहीं, नहीं, कजरी ! पुलिस सबको पकड़ ले जाएगी। कौन नहीं जानता, अब मेरी-उसकी दुश्मनी है ? फिर तेरी बेइज्जती करेंगे !'

'मेरी कौन-सी इज्जत है जो ! दुनिया मुझे मानती ही क्या है ? मैं वैसे पापिन हू मेरे बलमा ! तेरी भलमनसाहत ही है कि तू मुझे भी इज्जत देता है !'

'मजबूर की मजबूरी से फायदा उठाकर उन्होंने तुझपर जुल्म किया है कजरी। पाप मन से होता है। मन से तो तूने पाप नहीं किया।'

कजरी ने कहा : 'नहीं सुखराम, पाप पाप है। औरत का पाप कोई माफ नहीं करता। नहीं तो यह रीत क्यों बनती !'

'ठीक कहती है।' सुखराम ने कहा : 'पर कहीं कुछ ठीक नहीं है जरूर। मेरा मन बार-बार यही कहता है।'

दोनों चुप हो गए। वह मौन नहीं था, वह एक संघर्ष था, जिसकी अभिव्यक्ति अपने अज्ञान के कारण अवरुद्ध हो गई थी। सुखराम उस गुत्थी को सुलझाना चाहता था। जिधर बढ़ता था उधर ही संस्कारों के बन्धन मकड़ी की तरह घेरकर जाला बुनने लगते थे।

'मैं गई थी।' कजरी ने कहा। और सुखराम की ओर घूरकर देखा, जैसे वह उस पर होने वाली प्रतिक्रिया को देख रही थी। सुखराम समझा नहीं। उसने जिज्ञासा से देखा और वह कुछ चौंका भी, क्योंकि कजरी ने बात को रहस्यमय ढंग से शुरू किया था। उसके मन में कुछ आशंकाएं जाग खड़ी हुईं। उसने धीरे से कहा : 'कहां ?'

कजरी के मुख पर एक शरारत थी, जैसे उसे परख रही है और जैसे डाली पर लगा फूल आप-से-आप खिल जाए कि भौंरा चक्कर में पड़ जाए, कजरी ने वैसे ही, ठठाकर हसकर सुखराम की ओर से मुंह फेरकर एक मस्त स्वर में कहा : 'रुस्तमखां की चहेती के पास।'

सुखराम को लगा, जैसे वह धरती पर नहीं है। पुकारा : 'कजरी ?'

'क्यो पुकारते हो तुम्हारे पास ही तो बैठी हू ?' उसने फिर मुस्कान को रोककर कहा।

'तू गई थी ?' सुखराम ने दोहराया।

वह उसे अपनी भरी-भरी आंखों से देखती रही, जैसे आंखें नहीं थीं, जाल थी, जिन्होंने सुखराम को चारों ओर से फांस लिया था और अब जाल खिंचने लगा था सुखराम विह्वल-सा पड़ा था।

उसे विश्वास न हुआ।

पूछा : 'कब गई थी ?'

'जब तू बेहोश पड़ा था।'

'तभी रामा की बहू को छोड़ गई थी ?'

'हां।'

'सच ?' सुखराम ने कहा और फिर अपनी आंखें फाड़कर वह उसकी ओर घूरता रहा, ऐसे देखता रहा जैसे कजरी के भीतर से, बाहर वह आर-पार देख सकता था। मानो उसके भीतरी भावों को भी वह ऐसे देख पा रहा था, जैसे उसके अंगों को। मानो भाव भी साकार बन गए थे, और वे सब उसके अपने थे।

'कजरी !' सुखराम ने भर्राए स्वर से कहा। कजरी ने देखा, उसका ग्लानि कंठ शब्दों को उगलने में असमर्थ-सा हो गया। वह स्नेह ऐसा था जैसे हरसिंगार ने अप [illegible] गरिमा न झेल सकने के कारण अपनी डालियों से फूल बरसा दिए हों।

वह रो दिया।

कजरी आगे आई।

कहा : 'रोता क्यों है ?'

सुखराम ने उसका हाथ पकड़ लिया और अवाक् देखता रहा और फिर धीमे से बुदबुदाया-सा बोला : 'तू गई थी ?'

उन दोनों शब्दों का अर्थ था एक व्यक्तित्व, एक स्नेह की पराकाष्ठा की अभिव्यक्ति, एक अतीत का भास्वर अनुभव, और तीनों में जो समर्पण था, वह एकमात्र भाव बना। वह भाव था विजय, उन्निद्र, जीवन्त···जागरित—

'हां, तू नहीं मानता ? उससे पूछ लीजो।' कजरी ने कहा।

सुखराम को इससे अधिक क्या गवाही मिल सकती थी ! उसका सिर कजरी की महानता के सामने झुक गया।

'क्या सोच रहा है ?' कजरी ने टोका।

'कुछ नहीं।'

'मुझे बता दे।'

'कैसे मिली वह ?'

'क्यों, तुझे चैन नहीं आ रहा है ?' वह मुस्कराई।

'कजरी, मेरी अच्छी कजरी !' सुखराम ने कहा : 'मुझे बता दे।' और उसने प्रार्थना-भरी दृष्टि से देखा।

कजरी ने सब सुनाया। उसने जो समझा था, सब कह सुनाया : 'मैं गई थी। [illegible] चौंकी। पहले अकड़ी। मैंने भी खूब सुनाई। मैंने कहा, तूने पिटवाया है उसे। [illegible] सिर फोड़ने लगी। मैंने कहा, बदला ले। बोली, क्या करूं। मैंने डांटा तो मुझसे [illegible] उसका वह आ गया मुआ। पर सौत ने बचाया। फिर मैं चली आई।'

कजरी के सुनाने में सुखराम क्या समझा, क्या नहीं, पर वह खुश हुआ। [illegible] यह सान्निध्य, यह आपसी वैमनस्य का अन्त अच्छा लग रहा था। कहा: '[illegible] वह ब्याह [illegible] हुई थी ?'

कजरी के छुरी-सी लगी।

बोली, 'रूठी थी।'

'रोई होगी ?'

'पुक्का फाड़ के।'

'फिर तूने मनाया होगा ?'

'मेरी फरिया तो उसके आंसू पोंछने में इतनी गीली हो गई कि वहीं निचोड़ के सुखा दी, दूसरी उससे मांग के पहन आई हूं।'

सुखराम शिथिल हो गया।

'तू हंसी करती है कजरी! इस बखत भी हंसी आती है ?'

'इस बखत तो हंसी करूंगी ही। अब तो तू सीधा हो रहा है।'

'तू गुस्सा हो गई है ?'

'मैं गुस्सा क्यों होऊंगी ? तुझे मुझसे क्या ? यह तो न पूछा कि तू गई, तेरी इज्जत तो नहीं बिगड़ी वहां, सौत ने डांटा तो नहीं, तुझे डर न लगा होगा वहां तो कुछ नहीं, मर्दुआ पूछता है, वह कैसी थी ? रोती थी तो आंखों में ढुलके आंसू का कमल बनता था या नहीं ?'

सुखराम ने देखा. दीवार थी, और नहीं थी।

'बुरा न मान कजरी।' कजरी से उसने याचना के स्वर में कहा।

'अरे, बड़ा भोला है तू, मैं जानती हूं। घूम-फिर के उसे लाने के लिए, मेरे मुंह से कहाना चाहता है तू ? सौत बड़ी अच्छी है!'

सुखराम ने व्यंग्य को समझकर भी तरह दे दी और कहा : 'तेरी निभ जाएगी उससे ?'

'मेरी तो तुझसे निभेगी।' कजरी ने कहा : 'तेरे पास एक घोड़ा है, भूरा कुत्ता है। वह भी रह लेगी। मेरा क्या है ? कुत्ते को रोटी और घोड़े को घास डालती हूं, उसे भी दो कौर डाल दूंगी।'

सुखराम उसके परिवर्तन को समझ गया। बोला : 'अरी, तू भी उसीके स्वर में बजने लगी! मैं उसकी असलियत जानना चाहता था। अब तू जो कहती है, उससे मेरा भरम दूर हो गया। जब उसने तेरा ही दिल हिला दिया, तो सचमुच ही वह बड़ी व्याकुल होगी।'

कजरी का मन किया, उसके मुंह पर चांटा मार दे। पर वहां पट्टी बंधी थी। रोने लगी।

सुखराम ने कहा : 'अरी, क्यों रोती है उसके लिए ?'

कजरी का मन घायल हो गया। आज उसने सुखराम का यह नया रूप देखा था। छलिया सब समझ रहा है, पर बात कैसी बना रहा है, जैसे बड़ा भोला हो!

'तू बड़ी पत्थर है वैसे।' सुखराम ने अपने-आपसे कहा : 'तू समझती होगी, मैं कुछ समझ नहीं रहा हूं और जाने-अनजाने ही तेरी तरफ सब-कुछ धकेल रहा हूं। अरी, मैं सब समझता हूं कि वह रोने-धोने किसके हैं। प्यारी की ओर जाएगी, बतराएगी, पर तुझे तो एक बात है। मैं कुछ न कहूं। और फिर मेरे लिए लोनी जाने कैसे हो जाती है। हे बिधना! तिरिया चरत्तर को कौन समझे! भला कोई बात है! जिस ऊंट के नकेल डली होती है, वह भी राह के पेड़ों के पत्तों को को खाता-चबाता जाता है, पर बेटा सुखराम, तुम्हें वह भी हक नहीं। चले जाओ सीधे। खबरदार, जो कहीं इधर-उधर देखा, नहीं तो लाड़ी रोने बैठेगी।'

कजरी हंस दी।

वह सब दूर हो गया वह जैसे कुछ हुआ ही नहीं था अब रात और घनी हो

गई थी, हवा चल रही थी। ऐसा लगता था जैसे कोई बहुत मजबूत लम्बा चौड़ा आदमी बहुत कसे कपड़े पहने अंगों को हिलाने में हांफ-सा रहा हो।

'दरद होता है ?' कजरी ने पूछा।

'सिर में नही है।'

'चंदन है अच्छा हकीम ?'

'रूखड़ी जानता है वह।'

'और कंधे मे पीर है ?'

'थोड़ी-थोडी।'

'तुम सोओगे नहीं ?'

'अभी संझा बाद तो जगा हूं।

'पर तुम्हे ज्यादा बात नहीं करनी चाहिए। लोग कहते हैं।' कजरी ने कहा, जैसे उसे स्वयं इस बात पर विश्वास नहीं था। उसने स्वर को बदलकर व्यंग्य मे कहा : 'दईमारे पांच थे।'

'कितने ही थे।'

'तुझे खबर न थी ?'

'मुझे शक तो हुआ था, लाठी ले ली थी।'

'फिर ?'

'सबने हमला किया।'

'तुझे शक ही हुआ था तो तू उस बखत न जाता! कौन तेरी नाक कटी जाती थी!'

'तू क्या समझे, यह मर्दों की बात है।'

'अरे नहीं, तू बड़ा मरद है। ऊंट पहाड के नीचे आया नहीं...।'

'एक-एक करके आ जाते सामने।' सुखराम ने बिना सुने कहा।

'अच्छा, तू दो-चार को मार डालता, फिर ?'

अब सुखराम उत्तर न दे सका। उसे यह बात अच्छी नहीं लगी। उसने विषयान्तर किया। पर कजरी अप्रभावित रही।

सुखराम ने उस दिन प्यारी की और रुस्तमखां की बातें सुनाईं। कजरी ने सब सुना, और कहा : 'एक बात का वादा करेगा ?'

'क्या ?'

'तू करे तो कहूं।'

'पहले सुन तो लूं।'

'अच्छा, तो तू अब मेरी पहले सुनके तब बचन भरेगा ? तुझे मुझ पर इतना भी विश्वास नहीं ? मुझे कुछ नहीं कहना है!'

सुखराम ने कहा : 'कजरी! हम गरीब कमीन हैं। हम लोग करें भी क्या खाते है ? सब-कुछ हमसे अलग है। मैं यह सब क्यो सोचता हूं, तू जानती है ?'

'नहीं।'

'मैं अधूरे किले का मालिक हूं।'

कजरी ने दूसरी बात को टाल दिया और कहा : 'तू होगा कमीन, मैं तो नहीं हूं।'

'नहीं कजरी, नहीं कहने से तो काम नहीं चल जाता! तू थोड़ा गांव की ओर देख। किसान होता है ? गरीब है, भूखा है, पर उसे भी बोहरा उधार देता है, उसकी भी इज्जत है। हम सबसे गए-बीते कुत्तों से भी बदतर हैं। हम नट क्यों हैं कजरी ?

'क्योंकि हमने नटनी के पेट से जनम लिया है ?'

'हमने ऊंची जातों मे जनम क्यों न लिया ?'

'यह तो भाग की बात है।'

'मानुस देह पाई है हमने, तो फिर हम पर इतने जुलम क्यों होते हैं ?'

कजरी ने कहा : 'जुलम किस पर नहीं होता ? पुलिस पर, बौहरे पर, जमींदार पर ! बाकी किसे चैन है ? और जो जुलम करता है, वह कहता है, पेट के लिए करता हूं, बीवी-बच्चों के हेत करता हूं। सुखराम, दुनिया से पेट जुलम कराता है। और जहां दो दाने इसमें पड़े तो देही गरमा जाती है, फिर तो उड़ने की सूझती है। जो कुछ है, ऐसा ही देखती आई हूं। पहले भी ऐसा ही था। आगे भी ऐसा ही रहेगा। पता नहीं, यह सब क्यों होता है ? पर क्यों भी हो, रहना है तो रहेंगे ही। मरद सब-कुछ कर सकता है, औरत तो नहीं कर सकती ? तू अच्छा हो जा। हम परदेस चले चलेंगे। मुझे एक नया जूता चाहिए, यह वाला तो अच्छा नहीं है। मुझे करी मिला था ! देख के हंसता था। कहता था : कजरी, मेरे बखत ऐसी जूती नहीं पहनी तूने, अब कैसे पहनती है ? मैंने कहा, तू तो बेसरम था, अब मैं वैसी नहीं रही। वह कहने लगा : भगवान् ने सांप-बिच्छू-बघेर को जिसमें बसेरा दिया है, ऐसे हम जंगल हैं, उसीकी लकड़ी तू कुल्हाड़ी का बेंट बनेगी ? —मैं चली आई।'

कजरी उठी और मटके में से ढूंढ़कर कुछ लाई। उसने कुछ निकालकर कहा : 'ले।'

'क्या है ?'

'सिगरेट है।'

'तू लाई है ?'

'हां, आज दुपहर ले आई मैं।'

दोनों पीने लगे।

सुखराम ने कहा : 'तूने पहली रात पिलाई थी।'

कजरी शरमा गई। कहा : 'हाय, तुझे सब याद है ! मैंने कहा न था, तू नाना है, सब तुझे याद हो गया।'

मन हल्के हो गए।

'तू सो जा।' कजरी ने कहा।

और फिर सुखराम सो गया। कजरी उसे एकटक देखती रही। वह अब दूसरी सिगरेट पी रही थी। आज सिगरेट पीने में मजा आ रहा था। वह जोर से कश खींचती और ढेर-ढेर धुआं उगल देती। सुखराम की आंखें बन्द थीं। भूरा डेरे के द्वार पर आकर बैठ गया था। वह जागरित था। कजरी पाटी के ऊपर हाथ धरे बैठी थी। घोड़ा शान्त खड़ा था, सो गया था। उसकी कोई हलचल सुनाई नहीं दे रही थी। अंधेरा आवाज करता था, डेरे पर भर्र-भर्र करता था, और फिर हवा भागने लगती थी।

सवेरे आंख खुली। सुखराम ने देखा, उजाला-सा हो गया था। पास के पेड़ पर चिड़ियां चहचहा रही थीं। समस्त वसुधरा पर आलोक का मंथर जागरण एक नवीन स्फुरण भर रहा था। अब भूरा द्वार पर ही सो रहा था। घोड़े की खूंद प्रारम्भ हो गई थी क्योंकि मक्खियां जग चुकी थीं, जिन्हें वह पूंछ से उड़ाता था। सुखराम की चेतना लौटी और उसने मुड़कर देखा। देखा तो आंखें टगी रह गईं।

खाट की पाटी पर सिर धरे वह सो गई थी। कजरी वहीं उठंग गई थी। सुखराम ने नहीं उसे लगा वह थक गई थी और वहीं झपकी ले गई थी पर अधिक समय नहीं लगा जैसे बगल म मा अपने बच्चे को लेकर सोते मे भी बच्चे की

एक मामूली लम्बी सांस सुनकर ही जाग उठती है और एक बार चारों ओर देख लेती है, उसी प्रकार उस समय कजरी अपने-आप ही जाग उठी और उसने आंखें खोल दीं। सुखराम को लगा जैसे कजरी की आंखें नहीं खुलीं, सूरजमुखी खुल गया था।

'तू सोई नहीं कजरी ?'

कजरी ने एक अंगड़ाई ली और सशब्द मुख से ढेर-ढेर हवा छोड़ते हुए कुत्ते की तरह अंग-अंग को कुलबुलाया, आंखें मींडी और फिर सिर ढंककर बैठी रही। और फिर जैसे उसे याद-सा आया, उसने सुखराम की ओर देखकर पूर्ण विश्वास दिलाने वाले स्वर में सिर हिलाकर मुस्कराते हुए कहा : 'क्यों, क्या हुआ ? मैं तो सो गई थी, खूब सोई।'

वह फिर हंस दी। सुखराम को लगा, वह दबा नहीं था, उठ गया था। वह खाट पर पड़ा था, पर कजरी के रात के जागरण में वह नींद के पर्दों के पार उतर गया था। वहां, जहां केवल चेतना का अधिकार है, तन्मयता का ओज है।

कजरी मुस्करा रही थी। कितनी अतंद्र थी वह। निश्छल और मादक, पुलकित। उसकी पलकें भारी थीं। वह फिर भी स्फुरित थी। क्योंकि इकाई की सार्थकता उसके निजत्व में बिन्दु बनकर उसकी अपनी आत्मस्वीकृति में नहीं है, वह है उसके सिंधुत्व में, उसकी लय में, उसके महापद्म की-सी संख्या बनने में, जहां नील और शंख के व्यापकत्व के परे, दल इतने असीम हो जाते हैं कि उनका कहीं अंत ही नहीं होता। वे चाहे जितने बन सकते हैं, उनका सौन्दर्य कभी भी समाप्त नहीं होता, क्योंकि वे कितने भी क्यों न बन जाएं, उनकी पुनरावृत्ति उनकी कोमलता का प्रसार ही होती है।

'मैं बड़ा सुखी हूं कजरी।' सुखराम ने विभोर स्वर में कहा। अब वह कुछ कहना नहीं चाहता। मनुष्य की यह संतृप्ति उसकी वेदना के कटकर गिरने पर होती है। एक उसका समाज-पक्ष है, एक व्यक्ति-पक्ष है। सुखराम का व्यक्ति इस समय समाज की समस्त विषमता में भी संबल का अभिमान कर रहा है।

'क्यों ?' कजरी पूछती रही।

क्यों का अर्थ है कि मैं जानती हूं, तू मेरी ही बात मुझे फिर सुना दे क्यों कि मैं लहर हूं, तू किनारा है। मुझे वह बता कि जब मैं तेरे पास आती हूं, तब तू मुझे चाहता है या नहीं ?

सुखराम ने गम्भीर स्वर से कहा : 'मैं क्या कहूं, मैं नहीं जानता, कुछ नहीं जानता। मुझे तू मिली है। बस और कुछ नहीं।'

अभिलाषा का अन्त अपनी पूर्णता में नहीं है, वह तो आदान-प्रदान से आता है। यह संसार मूलतः यातना नहीं है, दुःख नहीं है। यह तो एक बड़ी सुन्दर रचना है, जो दिन-दिन निखार लाती चली जा रही है। जैसे शैशव से यौवन तक सुन्दरता का विकास होता है, यह सब वैसा ही है। इसमें यातना बनाई है मनुष्य की विषमता ने। इस संसार में प्रकृति जो दुःख लाती है, वह बार-बार सुख की पूर्णता को विकसित करने के लिए। किन्तु मनुष्य ने इस तरह अपने को बंधन में बांध लिया है कि वह प्रकृति के सहार को अभी तक अपने मनोरम चित्र के अनुकूल बनाने का समय ही नहीं पा सका है। यहां मां बेटे पर जीवन वारकर उसे मनुष्य बनाती है। वह स्नेह कितने तोड़ने की शपथ खाई और कौन उसमें सफल हो सका, यह सारा संसार अपने आधार-रूप में प्रेम है, आकर्षण है, नवीन सृजन है। उसीके न होने पर यहां अभावात्मकता की अनुभूति जागरित होती है।

कजरी ने कहा : 'मैं रात कहते-कहते भूल गई थी। वचन दे कि तू लड़ाई, मार-काट नहीं करेगा। सच मुझे वह सब भाता नहीं

'मैं जानकर तो कुछ नहीं करता।'

'मैं जानती हूं। पर उनसे बचकर रहे तो कैसा हो?'

'उनसे बचकर कोई रह सका है?'

कजरी चिन्ता में पड़ गई। कुछ देर बाद उठकर वह जंगल चली गई। सुखराम उठकर बैठ गया। अभी तक जोड़-जोड़ दुखता था। पर कष्ट कासा नहीं है। उठकर चला। अरे, वह तो चल लेता है! तब क्या डर है? दूर कजरी आती हुई लगी। जल्दी से खाट पर आ लेटा। वह देखेगी कि चल रहा है तो जाना कि चल दिया क्या! बुरा मानेगी। बीमारी और अशक्ति में मनुष्य चाहता है, कोई उसकी सेवा किया करे। उससे सहानुभूति दिखाया करे।

कजरी डेरे मे घुसी तो उसके हाथ में हिरनी का छोटा-सा बच्चा था।

'बड़ी मुसकिल से पकड़कर लाई हू।' कजरी ने कहा।

'अरे, यह तो ज़िन्दा है!' सुखराम ने कहा। वह उठ बैठा। अचानक द्वार पर देखा। हिरनी खड़ी थी। निर्भय भी थी, अपने लिए। शंकित थी, अपने छौने के लिए। उसकी आंखें बड़ी-बड़ी, निर्मल, गहरी और अटूट वेदना की अनुरक्ति का उनमें उजागर सम्मोहन! कितनी याचना है उसमें! वह जैसे पशु नहीं है; ममता का मानवीय रूप उन आखों में जीवत है, वह सृष्टि के मूल आकर्षण का प्रतीक बनकर भाषा के परे अभिव्यक्त हो रहा है। हृदय तक पहुंचने वाली अव्यक्त ध्वनि जैसे गहन अन्तराल में से अखण्ड होकर उठ रही है। वह निर्धूमि गरिमा साधनाओं की युगान्तव्यापी समाधि का अन्तिम जयलाभ है, जो आज समस्त यातनाओं का तपःपूत स्वरूप है। वह दोनों हाथ खोलकर पुकार उठने वाली तन्मयता है जो पूछ रही है कि संसार में यह अपहरण की निठुरता किसलिए सृजन की चेतना पर कुठाराघात करती चली आ रही है? दूर-दूर तक महकते हुए कुसुमो के पराग पर उड़ने वाले भौरों की लोलुपता को देखकर जैसे वसन्तश्री अपनी अनिन्द्य महिमा मे नतशिर होकर पूछ उठी है कि तुम क्यों आज अपनी सत्ता की विषमता को भूल नही जाते? हृदय का उद्वेग अदम्य समर्पण हो गया है, बलिदान की गाथा आज जैसे जौहर की लपटों से सुहागिनों के मगलगीत बनकर गा रही हो, और समस्त व्यवधानों के परे जननी अपनी ममता के लिए महाकाल के सामने सिर देख उठी है, जैसे एक दिन सावित्री ने सत्यवान् को ले जाते हुए महिषारोही यम को रोक दिया था।

'छोड़ दे इसे कजरी।' सुखराम ने दीन स्वर से कहा। वह उस हिरनी की आखों की तरफ देखने में असमर्थ हो गया था। कितनी भीगी हुई करुणा थी उसमें! कितना अजस्र उफान-भरा स्नेह था। उन पुतलियों में! जिनमें से उसका मन आर-पार दीख रहा था।

'क्यों?' कजरी ने कहा। वह चौंक उठी थी: 'बड़ी मुश्किल से तो पकड़ाई में आया है। इसकी खाल बेच दूंगी। और बड़ा अच्छा रहेगा यह तेरे लिए।'

'देख, इसकी मा आई है!' सुखराम ने उसकी बात न सुनते हुए कहा। कजरी ने मुड़कर देखा। हिरनी खड़ी थी। उस समय हिरनी ने कजरी की आखों में देखा। स्त्री, शाश्वत जननी को, दूसरी शाश्वत जननी, महामाता ने देखा।

कजरी ने बच्चा छोड़ दिया। बच्चा डरा हुआ-सा था। वह बढ़ा और मा के पास चला गया। फिर उसने शरीर फरफराया, जैसे दासता के स्पर्शों को हवा में बहाए दे रहा हो। हिरनी ने अपने बच्चे को सूंघा। वह सकुशल था। हिरनी को विश्वास हो गया बच्चा फिर जैसे सशक्त हो गया सुखराम चुप देखता रहा कजरी को बड़ा अच्छा लगा —वह मा-बेटे का मिलन कितना सन्तोषी था कितना पुण्य था ऐसे ही

अनेक खंडो पूर्णों की पुनरावृत्ति से एक पूर्ण बनता है जो अपने भीतर समस्त सुख को आत्मसात कर लेने की चरम सामर्थ्य रखता है

हिरनी बढ़ आई। बच्चा उसके साथ था। अब जैसे दोनों को कोई डर नहीं था। कजरी समझ नहीं सकी। सुखराम अवाक् था। अब यह भाग क्यों नहीं जाती? अब तो इसे पकडकर नहीं रखा है। वह बडी-बड़ी काली आंखों से देखती हिरनी एक-एक पग धरती पास आ रही है। उसके नेत्रों में विश्वास के नक्षत्र जग उठे हैं, जैसे अंधेरे आकाश मे तूफान के पथ-प्रदर्शक काले मेघों को फाड़कर निकल आए हों।

उसने कजरी का हाथ चाटा। कृतज्ञता! यह वाणी के क्षुद्र बन्धनों में नहीं पडी है। यह चेतना का चेतना से वार्तालाप है। सृष्टि की आत्मा का संवेदन है। अब भय कैसा! अब जैसे दोनों एक दूसरे के पास आ गए हैं, इतने पास कि दोनों के व्यवधान दूर हो गए है। अज्ञान, ईर्ष्या और हिंसा का ही भय था, वह स्नेह के द्वारा ऐसे दूर हो गया है, जैसे अंधेरे घर में किसीने अपने हृदय मे स्नेह के बल पर आग लगाकर उजाला कर दिया हो।

कजरी रो पडी। और ये आंसू कितनी करुणा और आनन्द का सम्मिश्रण लिये हुए है। दोनों ओर की तन्मयता एक हो गई! राग से रागिनी मिलकर झूमने लगी है, यह अमर संगीत के प्रवहमान मुखरित आनन्द का प्रारम्भ है, कजरी की आंखों से बहते हुए आसू कितने हर्षों के कल्पों को अपने भीतर समाए हुए है। और हिरनी कितनी तन्मय, मुग्ध, अपने-आपको भूली हुई खडी है। सुखराम देख रहा है, उसे लग रहा है जैसे यह दुनिया कोई और है, जिसमें सुख ही सुख है, प्रेम ही प्रेम है, यह सब कितना अच्छा है, कितना कोमल है और इसमें कितनी अधिक शक्ति है!

सुखराम ने कहा: 'देखती है। दया से दुनिया मिलती है। जिनावर है।'

वह और कुछ कह नहीं सका। कजरी ने मुडकर उसकी ओर देखा और आखें पोंछ लीं। वह मुस्करा दी।

कहा: 'बिचारी!'

हिरनी चली गई थी।

आज एक नई बात हो गई थी। सुखराम कजरी और हिरनी की आंखों के बारे मे सोच रहा था।

कजरी चिन्ता में पड़ गई थी। सुखराम ने देखा, हिरनी धीरे-धीरे जंगल के छोर पर पहुंच गई थी और कुलांचें मारकर भीतर पेड़ों में छिप गई थी। पर कजरी चुप बैठी रही।

'क्या हुआ?' सुखराम ने पूछा।

'एक बात सोचती हूं!' कजरी ने कहा

'क्या भला?'

'तू तो बनिया की-सी बात करता है?'

सुखराम हंसा। उसके हास्य में व्यंग्य था।

'क्यों!' कजरी ने पूछा।

'तू मुझसे पूछती है कजरी,' सुखराम ने हाथ हिललाकर व्यंग्य से कहा: 'बनिया पानी छानकर पीता है बावरी, पर लहू अनछाणा पीता है।'

दोनों हंसे। उनकी आवाज सुनकर घोड़ा हिनहिनाया।

'घास डाल आई?'

'अरे, मैं तो भूल ही आई।'

देख बुला रहा है

'तू ऐसी दया की बात करता है। हम फिर मांगेंगे क्या ?'

'तूने भी तो दया की थी !'

'क्या करूं ! उसकी आंखें देख मैं डर गई। जैसे कह रही थी कि तू क्या मां न बनेगी ?'

'सब भगवान् देखैगा बावरी।' सुखराम ने कहा।

कजरी ने पूछा : 'भगवान् यही देखैगा कि बांदे और उनके साधिनों को भी देखैगा !'

'उनको मैं जो देखूंगा।'

'तुझे कसम है मेरी, जो फिर गया।'

सुखराम हंसा। कजरी चिढ़ी हुई-सी चली गई।

लौटी तो बटेर मार लाई।

आग सुलगाकर भूनी।

इस समय दया किसीको नहीं थी। न ऐसा कोई सवाल उठ रहा था, न कोई शंका ही थी।

कजरी कह रही थी : 'रामा की बहू मंगू के साथ बाजार गई है। मुझसे मिलकर ही नहीं गई। सारे डेरों में खामोसी है।'

'क्यों ?'

'आज मेला है न पहाड़ी पर।'

'हम चलते तो कमा लाते।'

'जरा सकल तो देख ले सीसे में !'

'मैंने क्या ये कहा कि अभी चली चल !'

कजरी नौन ले आई।

कहा : 'खा ले।'

सुखराम ने खाई। पूछा : 'तू नहीं खाएगी ?'

'पहले तू खा ले !'

सुखराम ने खाकर कहा : 'बड़ी स्वाद की है।'

और हाथ पकड़कर कजरी को बिठा लिया और कहा : 'तू भी खा ले। तुझे सौगन्ध है।'

दोनों ने खाई। पानी पिया। फिर सन्तोष से आंखें नचाईं। और दोनों ने तृप्ति के अन्तिम प्रदर्शन के रूप में उंगलियां चाटीं और फिर उपसंहारस्वरूप दोनों ने डकार ली। दोनों हंसे।

इसी समय बाहर खड़-खड़ हुई।

'अरे, कौन है ?' सुखराम ने कहा।

'मैं हूं परनाद। मजा आ गया।' बाहर से आवाज आई। कजरी ने कहा : 'वही है।'

मंगू आया। बोला : 'बाजार में बड़ा शोर है।'

'क्यों ?'

'ऐसी खबर उड़ रही है कि...'

कजरी ने चिढ़कर कहा : 'अच्छा पहले भौंक ले, फिर बता दीजो।'

मंगू बोला : 'लुगाई में अकल नहीं होती, सुखराम ! तूने इसे बहुत सिर चढ़ा रखा है। मैं होता तो जूती के नीचे दबाके रखता।'

कजरी ने कहा निकल यहां से चल

क्या हुआ ? मंगू ने हंसकर कहा सुन तो काली मैया

सब हंस दिए

'क्या, हुआ क्या ?' कजरी ने पूछा।

'मजा आ गया।' मंगू ने कहा : 'बाके मारा गया।'

'मारा गया ! !' दोनों चौंके।

'पता नही चला अभी ?' मंगू ने कहा : 'किसने मारा, यह नही पता।'

'तो क्या खून कर दिया ?' सुखराम ने कहा।

'अजी नहीं। वह क्या सहज मरेगा ?'

'तो झगडा हुआ होगा ?'

'मरा तो पहले ही था।'

'वह लडा भी क्या होगा ? क्या कहते है लोग ?'

'बाके को किसीने छुरी गोद दी।'

कजरी ने सुना तो आखें फट गई। और आश्चर्य से मिला हुआ कौतूहल अब जाग उठा। पूछा : 'फिर ?'

'फिर कुछ नही मालूम।'

'तूने पूछा नही ?'

'पूछता किससे ?'

'पुलिस मे सनसनी होगी ?'

'मुझे लगी नहीं।'

'बाके का पुलिस से जाहिर रिश्ता क्या ? वह तो रुस्तमखा का आदमी है ! वह खुद बीमार पडा है।' सुखराम ने कहा।

मंगू ने पूछा : 'कैसी तबीयत है ?'

'ठीक है।'

'शाबास उस्ताद ! मैं होता तो कभी का सुरग चला गया होता !'

कजरी खिल-खिल हसी।

'क्यों ?' मंगू चिढ़ा।

'तू और सुरग जायगा ?' कजरी ने हाथ उठाकर कहा।

'तू तो जायगी !' उसने व्यग्य किया।

पर कजरी हारी नही। कहा : 'जहां यह (सुखराम) जायगा, वही मैं जाऊंगी।'

'ओक्खो !' मंगू ने कहा : 'देखा उस्ताद ! कैसी पडाइन की-सी बतरा रही है। नटिनी ठहरी, सुरग जाएगी !'

'क्यो ?' सुखराम ने कहा : 'अजामिल सुरग गया था, व्याध गया था, तो कजरी क्यो नही जा सकती ?'

'देखो उस्ताद ! फिर तुम लुगाई की तरफ बोलने लगे। जादू ही ऐसा होता है।'

'तभी तो,' कजरी ने कहा : 'सवेरे-सवेरे बाजार गया ले के उसे ! रात जूती लगाई होगी उसने, यह ला दे, वो ला दे। पूछ, मैं कभी इससे कुछ कहती हूं ?'

सुखराम ने कहा : 'अब बता दूं कजरी !'

'अरे, चुप रह तू !' कजरी ने कहा : 'अब उधर मिल गया !'

यों दिल्लगी होती रही। जब मंगू चला गया तो कजरी ने कहा : 'तूने सुना ?'

'क्या ?'

'बाके को किसी ने गोद दिया।'

'हां।'

'समझा कुछ ?'

'नहीं तो !'

'गधा कहीं का ! यह काम मेरी सौत का है !'

'तुझे कैसे मालूम ?'

'मैं नटनी हूं। नटिनी की जात मुझसे पहचानी न जाएगी ?'

'यह हो सकता है !' सुखराम ने अविश्वास से कहा। उसे जैसे छोर पकड़ने में देर लगी। फिर वह रुका और कहा : 'तो वह मुझे चाहती है कजरी ?'

'अरे, तो अहसान करती है कुछ ? मरद अच्छा हो तो लुगाई की चाकरी देखके भी अचरज करता होगा ?'

'तेरी कसम, तुम दोनों लड़ोगी तो बहुत।'

'अच्छा !!' कजरी ने कहा : 'मैं ही तो लड़ाका हूं !'

'वह क्या कम है तुझसे ?'

'दारी क्या ठहरेगी मेरे सामने।'

'यही तो कहता हूं मैं भी।'

कजरी रूठी।

'क्या बात हुई ?' सुखराम ने कहा।

'मेरे तो करम फूटे।'

'क्यों ?'

'तेरी तो मुझे थाह ही नहीं मिली।'

'लड़ती रहना, मुझे तो चुप रहने में लाभ है।'

'अरे, जा।' कजरी ने कहा : 'धिक तुझे ! तू बैठकर लड्डू खाएगा जो तुझसे दो भी न दबेंगी !'

'मेरे बाबा के पांच थी।'

18

बांके गुस्से से भरा हुआ था। आज उसका अभिमान चूर-चूर हो गया था। आज तक कभी ऐसा नहीं हुआ था। लोग उससे दबते थे। वह भयानक आदमी समझा जाता था। उससे एक बार रूपा दरजी अकड़ा था तो उसने उसकी टांगें तुड़वा दी थीं। बाद में मुकदमा चला। बांके साफ बच गया। उसकी उस्तादी से उसपर जुर्म साबित करने वाले गवाह ही डर के कारण जो कहना चाहते थे, उससे उल्टी बात कह गए थे। उसका प्रभाव था, क्योंकि वह पुलिस के पालतू लोगों में था, जिसके जरिये पुलिस के पच्चीस काम चलते थे। बांके उन आदमियों में था जो जूते के बल पर दबते हैं। वह अपनी कमजोरी का बदला दूसरे की कमजोरियों में चुकाता था। वह नून-कमीन था। इस समय की पिटाई ने उसकी हरामजदगी के सांप को फुफकारों से भर दिया।

वह सीधा रुस्तमखां के पास पहुंचा। उसे और कहां जाने की सूझती। सीधा तर्क था। उसकी राय में सुखराम का सम्बन्ध प्यारी से था। और प्यारी के लिए रुस्तमखां जिम्मेदार था। और यह उसकी राय में रुस्तमखां की ज्यादती की हद थी कि उसकी ऐयाशी के नतीजे में वह एक करनट और चमारों से पिटे, सारा गांव उसके मुंह पर थूके। जिसके नाम से सब लोग, बड़े कहलाने वाले, रास्ता काट जाएं, उसे इन नीचों से मुंह की खानी पड़े। उसका मन कर रहा था कि किसी तरह वह सुखराम को कुचलकर रख दे। एक-एक चमार की खाल उधेड़वाकर चमारियों से ज़िना करे और उनके घरों में आग

नगधाकर तूफान चलाए

रुस्तमखां लेटा था। उस समय उसने आंखें बन्द कर रखी थीं और शिथिलकाय पड़ा-पड़ा वह कुछ सोच रहा था। बीमारी में मनुष्य का हृदय दृढ़ नहीं होता। वह तरह-तरह की कल्पनाएं किया करता है। और भय उसमें बढ़ जाता है क्योंकि रोग उससे लड़ता है और उसकी सारी शक्ति रोग से लड़ते-लड़ते ही समाप्त हो जाती है बाकी वह भविष्य के सुख के विषय में लगा देता है।

बुखार उतर गया था। इससे उसको सुकून था, मगर सुस्ती और भी ज्यादा थी। और सारे दर्दों के इस समय शान्त हो जाने से उसमें एक उदासी की जगह, एक विश्रांति की भावना थी। वह चादर ओढ़कर चुपचाप लेटा था। चारों तरफ सन्नाटा था। शाम आ रही थी। दिया तक नहीं जला था। अभी-अभी वह भीतर आया था, क्योंकि प्यारी से मिलकर कोई चली गई थी। वह जाने कौन औरत थी। कमजोरी व्याप रही थी। अतः वह अपने अपमान पर अधिक ध्यान नहीं दे पा रहा था।

प्यारी ने दिया जलाया। उसे फिर कमज़ोरी लग रही थी। वह कोठे में जाकर पड़ रही। एकदम ठंड-सी लगने लगी। पहले तो लगा, अब दम ही कलेजे में आकर इकट्ठा हो गया है, धीरे-धीरे उसकी हालत सुधरने लगी।

रात हो गई थी। अब अंधेरा कोठों के भीतर से निकलकर आंगन में आ गया और न जाने कहां से अब बाहर भी ढेर-ढेर इकट्ठा हो गया था। प्यारी के हाथ का पौरी में रखा दीपक उस सारे अंधेरे को टिमटिमाकर देख लेता और अपने भीतर से निकलती रोशनी की हल्की चादर को फैलाता-सा, सिमेटता-सा खुद कांपने लगता। बाहर के रास्ते पर अब लोगों की चहल-पहल कम होती जाती थी।

प्यारी को अभी हरारत थी। नीचे आवाज गूंजी।

'बांके!'

'उस्ताद!!' और फिर फफकने की आवाज गूंजी।

'अबे, क्या हुआ?'

फिर कोई रो उठा।

प्यारी ने सुना तो आ गई।

बांके उसे देखकर रोना भूल गया। उसे अपने ऊपर लज्जा हुई। एक औरत के सामने रोना उसे मंजूर नहीं था।

'क्या हुआ?' प्यारी ने पूछा।

'कुछ नहीं', रुस्तमखां ने उसे टालने को कहा। पर बांके के लिए यह विष हो गया। उसने चिढ़कर कहा: 'कुछ नहीं! मैं इत्ता कह गया और तुम्हारे मुंह से निकला है, कुछ नहीं!!'

'रो साले! औरत के सामने रो!' रुस्तमखां ने कहा।

प्यारी मुस्कराई। कहा: 'बता, मुझे तू। क्या बात हुई?'

बांके ने कहा: 'तेरा वह है न?'

'मेरा कौन है?'

'खसम तेरा।'

प्यारी व्यंग्य से रुस्तमखां की ओर देखकर हंस दी।

रुस्तमखां के आग लग गई। डाट के बोला: 'ठीक से बोल बांके!'

'अब तुम भी फिर गये मुझसे उस्ताद!' बांके ने घृणा से मुख विकृत करके कहा, जैसे इससे बड़ा विश्वासघात कोई और नहीं हो सकता।

'क्या भना प्यारी ने कहा तू जुए की नाल लाए, रूपोली कोरिन पै तैंने

फटा जाता था [illegible] की ओर भाग गए [illegible]। [illegible]। समस्त
अहीर की सेना लेके इस [illegible] के तून [illegible] की [illegible], तो [illegible], मेरे मुंह में
धूल भर दी थी [illegible] ! [illegible] आया था तो तो मुझे
खाए कि तू [illegible] हो गया था। [illegible] !'

'मैं तेरा कत्ल कर दूंगा !' बांके ने फुंकार दिया।

प्यारी हंसी। कहा : 'कत्ल कर दूंगा ! अभी रो-रोकर कह रहा है न !'

'मालूम है, मुखराम को मैंने किनारे लगा दिया ?'

उस समय रुस्तमखां ने समझा, यह [illegible]। पर वह हंसी और कहा : 'उसे
किनारे लगा आया तो यहां आके क्यों मझधार में डूब गया ? तू तो [illegible] कुत्ता है,
कुतिया का जाया !'

'देखो उस्ताद !' बांके चिल्लाया।

रुस्तमखां ने कहा : 'साले, अब क्यों चिल्लाता है ? मैं पहले ही कहता था, मौके
मत। तब तो साला भेड़िया बन गया था गीदड़ ! औरत ने [illegible] है और यहां
साला रोके भागा है। और फिर जब तू मार ही आया तो यहां क्यों रोता आकर ? क्या
तेरा यहां कोई बाप मर गया था ?'

'कौन जाने !' प्यारी ने मुस्कराकर कहा।

'तू कहां था ?' रुस्तमखां ने कहा।

'मैं···तो···' बांके अटका।

'अब फिर मर गई साली।' प्यारी ने कहा।

'तू क्यों···' बांके ने कहा।

'अब मैं नहीं बोलूंगी तुझसे।' प्यारी ने कहा : 'इसे कहना कि यों ही
गुटरगूं करता रहेगा।'

रुस्तमखां ठठाकर हंसा।

प्यारी ने कहा : 'अच्छा, तू जा रहा था, फिर···'

'फिर ?' रुस्तमखां ने कहा।

'फिर सबने घेरा, उस्ताद !' बांके ने कहा : 'पकड़ के साले को मारा !'

'तू अकेला था ?'

'नहीं, हम कई थे।'

'वह अकेला था ?'

'हां, उस्ताद।'

'फिर ?'

'मारा उसे।'

'फिर रोता क्यों है ?'

प्यारी ने कहा : 'सांड है तो क्या, है तो गौ का पूत।'

'चमारों ने दगा की वरना उसकी तरफ से क्या डर था ? उसे तो हम मार ही
चुके थे। उन्होंने घेर लिया। वे लट्ठबंद थे, और कई थे। धूपो ने मेरे मुंह में मिट्टी
भरवा दी।'

उसकी आंखों से चिनगारियां निकलने लगीं। प्यारी तभी मुस्करा दी। पर उस
समय वे दोनों नहीं देख सके।

'बड़ी हिम्मत हुई है उनकी !' रुस्तमखां ने कहा।

उसके स्वर में आशंका थी पर वह जैसे सोच नहीं पा रहा था

प्यारी ने पूछा घूपो के इशारे पर वे लोग थे ?

बांके ने कहा : 'धूपो ने सुखराम को बीरन कहा और उसका बदला लेने को लोगों को उकसाया।'

प्यारी को धूपो पर गुस्सा था। पर अब वह बांके को देखकर गल गया था। इस समय धूपो के प्रति उसमें स्नेह जाग उठा। वैसा ही जैसे अपनी ननद को मुसीबत में देखकर अच्छे हृदय की स्त्री में उत्पन्न होता है। वह कल्पना करने लगी : सुखराम को उसने बीरन कहा। आखिर क्यों ? क्योंकि सुखराम ने उसे अपना जरूर कहा होगा ! देखे की बात जो है कि सुखराम ने धूपो को बांके से पिटते हुए छुड़ाया था।

बांके ने सुखराम का खून बहाया था ! यह प्यारी के भीतर भरने लगा। कजरी से की हुई बातें अब याद आने लगीं। उसने कहा था कि प्यारी को बदला लेना है। पर वह बदला कैसे ले सकेगी ? इसने सुखराम के ऊपर हमला किया था। उस तरफ तो जैसे इसका ध्यान ही नहीं, न रुस्तमखां ने इस बात पर ध्यान दिया कि यह भी बुरा था।

क्या यह इसे छोड़ देगी ?

क्या वह बांके को छोड़ देगी ?

नहीं ! !

शब्द फिर टकराया : नहीं, नहीं !

प्रतिशोध लेना होगा। आंखों में चित्र दौड़ने लगे। दूर से कल्पना दिखाने लगी। सुखराम बेहोश था, वह आगे की बात तो नहीं जानती थी। कजरी की बात याद थी कि खतरा नहीं है। वही एक सबल था। वही तो इसको ताकत दिए हुए था और उसीके बल पर अब तक वह बांके को छेड़ती रही है। सुखराम का खून बह गया है। वह जंगल में निराश्रित एक स्त्री के सहारे पड़ा है और यहां ये भेड़िये फिर खूनी साजिश कर रहे हैं ! क्या यह इन्सानियत है ? नहीं, नहीं...

प्यारी को चक्कर-सा आ गया। किवाड़ पकड़ लिया, पर उसने शीघ्र ही अपने को संभाल लिया। इस बीच में वे लोग अपनी बातों में लगे रहे, अतः उसके मन की बात को वे लोग समझ नहीं सके। रुस्तमखां ने मुड़कर कहा : 'अरी, तू सो क्यों नहीं जाती जाकर, थक जाएगी।'

'चली जाऊंगी।' उसने कहा।

'तू अब चाहता क्या है ?' रुस्तमखां ने पूछा।

बांके ने सिर पकड़ लिया। फिर पूछा, 'यह मुझे ही बताना पड़ेगा ?'

'नहीं तो अब मुझे इलहाम होगा ?'

'कह ही दूं।'

'तू कहे तो पहले शीरनी बंटवा दूं।'

'छेड़ लो उस्ताद ! वक्त की बात है।'

'अबे, कौन-सा वक्त तेरा था जो हमारा न था। अलबत्ता यह बता कि जो हमारा वक्त था, वह क्यों हमेशा तेरा बनके रहा था ?'

'मैं बहस नहीं करता, सुखराम को हथकड़ी डलवा दो।'

रुस्तमखां ने प्यारी की तरफ देखा। वह देखना उसकी चाल थी। वह स्वयं इस समय इस विचार से सहमत नहीं था, क्योंकि सुखराम उसका इलाज कर रहा था और सुखराम की मृत्यु का अर्थ था अन्ततोगत्वा उसकी अपनी मृत्यु, और वह भी तड़प-तड़पकर। इस समय उसे पहले के मुकाबले में चैन भी था।

प्यारी ने कहा : 'मुझे क्या देखते हो ?'

तू बता यह क्या कहता है ?

यह कहता है, तुम सुनते हो।

'पर मैं तुमसे पूछता हूं।'

'मैं तो रोकती नहीं, पर न्याय की बात करो।'

'वह क्या ?'

प्यारी ने बांके की ओर देखा और पूछा : 'तूने हमला किया था ?'

'किया था।' बांके ने कहा।

'फिर ?'

बांके कह नहीं सका।

प्यारी ने ही पूछा : 'तू अकेला नहीं था न ?'

'नहीं।'

'तूने तो अपना जोर उसपर अजमा लिया।'

'हां।'

'फिर ?'

बांके दूसरी बार उस 'फिर' का उत्तर नहीं दे सका।

प्यारी ने पूछा : 'सुखराम घायल हुआ ?'

'हुआ।' बांके ने कहा।

'फिर क्यों उससे बदला चाहता है ?'

'मैं भी तो घायल हुआ हूं।'

'तो तू क्या जानता नहीं है कि तू पहाड़ से टकरा रहा है ?'

'मैंने उसे बता दिया आज।'

'तो अब तेरी चूड़ी क्यों खनक रही है जो घिग्घी बांध के हिमायती के पास आकर दुम हिला रहा है ?'

प्यारी का तर्क ठीक था। गांव में बहस ऐसे ही चलती है। पर बांके भी गांव वाला था। उसने उसी परम्परा में अपनी बात को ही बेमतलब नहीं माना, पर बार-बार कहकर उसी पर अड़े रहने की टेक सीखी थी, वह कह उठा

'पर सुखराम ने तो मुझे मारा !'

'बराबर की हो गई।' रुस्तमखां ने फैसला दिया।

'सो कैसे उस्ताद ?' बांके ने पूछा।

बात बिलकुल साफ थी। पर बांके की राय में बराबर की बात तब होती, जब उसकी मूंछ ऊपर ही उठी रह जाती।

प्यारी को और कुछ तो सूझा नहीं। उसे तो केवल अपने सुखराम की रक्षा का ध्यान था। सो उसने उसे बहुमत से भिड़ाकर अटका देने में ही कल्याण समझा। कहा : 'चमारों ने अड़गा डाला। उनसे बदला ले।'

'बस !' बांके ने कहा।

'और इनसे पूछ।' प्यारी ने कहा।

रुस्तमखां तैयार नहीं था। उसने बात टालने को ही कहा : 'अरे, तेरी आंख में भी चोट आई है ?'

बांके ने आंख पर हाथ रखा। इतनी सूजी थी कि बन्द हो गई थी। बायां हाथ दरद कर रहा था। अंग-अंग में अब दरद महसूस हुआ। अब तक वह जोश में था, अतः क्रोध ने उसे पागल बना दिया था। पर एक बात ने उसे वस्तुस्थिति का परिचय करा दिया। और जितनी ही उसने अशक्ति अनुभव की उतनी ही उसकी खीझ भी बढ़ती गई

उसने कहा : 'तो बोलो उस्ताद !

रुस्तमखां कुछ कहना चाहकर भी जल्दी कुछ सोच नहीं पाया। [illegible] पर बांके को गुस्सा आया।

क्षण-भर रुक रुस्तमखां ने कहा : 'ठीक है। प्यारी ठीक [illegible] कर।'

बांके ने कहा : 'तो उस्ताद ! तुम्हारे लिए मैंने इतने [illegible] किए, [illegible] का बदला यह मिला ! मैंने तुम्हारे लिए नजीरखां की बेवा बहिन को फंसाया, तुम्हारी [illegible] मन उसका महल गिरवाया, तुम्हारे वास्ते मैंने उसके बच्चे को ठिकाने लगाया !'

प्यारी ने आखें फाड़कर पापों को सुना। रुस्तमखां का चेहरा [illegible] पर बांके आवेश में कहे जा रहा था : 'तुम्हारे हुकम पर मैंने [illegible] सेंध लगाई, तुम्हारी बात का मोल समझकर मैंने जुए के अड्डे में [illegible] तुम्हारा [illegible] निगाह के लिए कलार भीकम की तिजोरी को तोड़ा।'

बांके आवेश में था। उसने फिर कहा : 'जिसने तुम्हारे लिए [illegible] म कमन चौधरी की भैंस बांधकर उसकी चोरी की झूठी गवाही दी और [illegible] म जाकर उसके बदन पर बूरे का पानी छिड़का और चींटियों [illegible] जिसने रात-रात-भर इस बात की चौकीदारी में गुजार दी कि तुम पराई औरतों [illegible] छिनाला कर सको, जिसने तुम्हारे लिए मनसुखलाल किसान के [illegible] आग दी और जिसके बच्चे तड़फ-तड़फकर भीख मांगते फिरे, जिसने चमारों [illegible] लिए लूट मचवा दी, क्योंकि चमारों ने तुम्हें रिश्वत देने से इन्कार कर दिया था, तुम उसी को आज यह थोथा जवाब दे रहे हो !'

रुस्तम गुस्से से कांप रहा था। प्यारी यह आश्चर्य से देख रही थी। और रुस्तमखां चिल्लाया : 'खबरदार जो बोला। साले बड़ा सिद्धजी बनता है। हलक में हाथ डालकर जबान खिंचवा लूंगा कमीने कुत्ते ! जरा-सी तपिश पाते ही भाफ की तरह भड़क उड़ा ! हरामजादा सूअर का बच्चा ! आज तक तैंने जो बदमाशियां की हैं उनसे तेरी [illegible] की ! मैंने, कि तेरी अम्मा के किसी यार ने ! अहसानफरामोश ! नालों के गन्दे कीड़े ! मैं न होता तो तू जेल में चक्की पीस-पीसकर दुहरा हो गया होता। आज जो हाथ उठा-उठाकर तू मेरे सामने बोल सका है, इन हाथों में पटसन बंटते-बंटते गड्ढे पड़ गए होते !'

वह अपनी आवाज चढ़ाकर उसे दबा चुका था। इसका दूसरा [illegible] था, प्यारी पर अपनी शराफत की झिल्ली चढ़ाना। पर प्यारी का मन घृणा से [illegible] हो चुका था। इस समय उसने बहुत ही चतुराई से कहा : 'क्यों इस दोगले के मुंह लगते हो ? यह क्या है जो इसे तुमने कुत्ते की पूंछ की तरह नहीं समझा ! बीमार हो, आराम करो। यह तो असल में तुम्हारा दुश्मन है। चाहता है, तुम बीमारी में ही काम करो और फिर पड़ रहो, ताकि इसका मुझपर दांव चल जाए। मैं कहती थी, आने दो, आने दो। आज कहती हूं, इससे कह दो, मुझे अगर इसने बुरी नीयत से कभी अकेले में देखा, तो अच्छा न होगा।'

रुस्तमखां पागल-सा उठ खड़ा हुआ।

उसने कहा : 'क्यों बे ! ये बात है ? तूने सोचा कि यह तो बीमार है ही; और सुखराम जेल में पहुंच जाए, फिर प्यारी मेरी है ?'

उसने एक लात बांके के घायल हाथ में दी, बांके चिल्लाकर गिर गया। वह रोने लगा। प्यारी ने रुस्तमखां को पकड़ा और कहा : 'मैं कहती हूं, तुम क्या करते हो ? यह इस लायक नहीं कि तुम इसे पांव से भी छुओ। हरामी तुम्हारा ही नमक खाता है, तुम्हारे ही ऊपर बुरी आंख रखता है'

रुस्तमखां ने कहा : 'प्यारी, तू जा ! सो जा।'

'तुम तो सो जाओ।'

'मैं भी सोऊंगा।'

प्यारी ऊपर आ गई। कुछ देर बाद उसे लगा, नीचे धीरे-धीरे बातें हो रही थीं। उसे आश्चर्य हुआ। यह क्या ? आखिर रहा न गया। [illegible] और धीरे-धीरे वहीं पहुंची और ऊपर से सुनने लगी। [illegible] परम विस्मय हुआ कि दोनों जघन्य अब मित्रों की तरह बातें कर रहे हैं।

कान लगाकर सुना।

रुस्तमखां कह रहा था : 'अबे, मैं उसकी बात से फौरन समझ गया था। [illegible] चरित्तर दिखा रही थी। हरामजादी अब पारसाई पर उतरी थी।'

प्यारी ने दृढ़ता से पत्थर पकड़ा। वह इस कदर चौंक गई थी।

बांके ने कहा। 'उस्ताद !' और फिर गद्गद होकर कहा : 'उस्ताद !'

रुस्तमखां ने कहा : 'पर तू भी उल्लू का पट्ठा है।'

'क्यों ?'

'पहले मान जा, बहस न कर !'

'अच्छा उस्ताद, मानता हूं। मैं उल्लू का पट्ठा, मेरा बाप भी उल्लू का पट्ठा था।'

रुस्तमखां ने कहा : 'उसके सामने तू वह सब क्यों बक गया ?'

'गलती हो गई उस्ताद।' उसने एक कान पकड़ा, फिर दूसरा हाथ भी कान की तरफ बढ़ाया, पर दर्द के मारे कराहकर रह गया, और हाथ को सहलाने लगा। उसके मुख पर नई आशा दिखाई दे रही थी।

प्यारी ने फिर सुना।

'ताजा मामला है। चुप हो जा।' रुस्तमखां ने कहा। फिर वह सोच में पड़ गया। बांके ने अत्यन्त उत्सुकता से पूछा : 'फिर क्या करूं उस्ताद ?'

रुस्तमखां ने कठोर स्वर से हाथ का इशारा करते हुए घृणा से कहा : समझा ? फिर किसी दिन सुखराम पर हाथ साफ कर लीजियो। कानों-कान खबर भी न होगी।'

प्यारी के रोंगटे खड़े हो गए। पसीना चूना गया। क्या आदमी इतना कमीना भी हो सकता है ? क्या वह इतनी गहराई तक भी गिर सकता है ?

'समझा ?' रुस्तमखां ने कहा।

'हां, उस्ताद।

'देख ! आजकल वह मेरा इलाज कर रहा है।'

'कर तो रहा है।'

'जरूर फायदा करेगी वह दवा, आदमी इस मामले में तो जानकार है। उसने वादा किया है, और मुझे लगता है मैं अच्छा भी हो जाऊंगा। मगर उसका मुझे डर नहीं है। मुझे तो इसका खटका है—यह छिनाल भी तो उसे भूली नहीं है।'

'तुमने सिर चढ़ा रखी है।' बांके ने कहा। और कुछ रुककर उसने फिर कहा :

'उस्ताद, अब तो यह भी बीमार है ?'

'है तो।'

'फिर इसे निकालो। मैं कोई नई ला दूंगा।'

'अबे, इसीकी बदौलत तो वह मेरा इलाज कर रहा है !'

प्यारी चुपचाप खड़ी रही। गिरती तो संभव है सिर फट जाता क्योंकि नीचे पत्थर की पटिया बिछी थीं। उसने नीचे देखा। इच्छा हुई इस घृणित संसार में जीने से

नाम ही क्या ? मर क्यों न जाए ? पर नहीं, ये लोग भयानक हैं। बांके अभी तक कमीनी बातों का जाल बुन रहा है। उसे तो जीना ही होगा।

रुस्तमखां ने कहा : 'उस धूपो के पीछे पड़ा है। वह दो बच्चों की मां है।'

प्यारी के कान खड़े हुए।

बांके ने कहा : 'बात ही ऐसी है उस्ताद।'

'बेकार परेशान है तू।'

'उस्ताद, रहा नहीं जाता मुझसे। औरत ना कर दे, यह सुनना मेरी ताकत के बाहर है।'

उसके स्वर में घृणित वासना ऐसे बोल रही थी, जैसे बिच्छू अपना डंक मार रहा था। रुस्तमखां ने बड़ी भलमानसाहत से समझाते हुए उससे नर्म आवाज में कहा : 'पर उसमें कुछ हो भी तो।'

बांके की हंसी सुनाई दी। और फिर उसने गुंडेपन से एक आख से देखते हुए कहा : 'उस्ताद, उसमें ना तो है। न-न करती को कुचलके, बाद में उसे देखके हंसने में बड़ा मजा आता है।'

उस वाक्य को सुनकर प्यारी के रोम-रोम में आग लग गई और उसे ऐसा लगा जैसे वह जली जा रही थी। वह उस विकराल कुरूपता की पराकाष्ठा को देखकर डरी नहीं। उसने दांत पीसे और पत्थर पर ही उसकी मुट्ठियां तन गईं और पेशी-पेशी घृणा से कठोर-सी हो चली। उसकी आंखों में खून छलक आया, खून ! उसकी इच्छा हुई कि वह बांके को काट-काटकर फेंक दे।

रुस्तमखां ने कहा : 'तो साली को कभी जंगल में घेर लीजो। आजकल अरहर खड़ी है।'

प्यारी ने इसे भी सुना और उसने मन-ही-मन कहा : 'एक दिन तुझे भी देख लूगी। मैं भी नटिनी हूं।'

तभी रुस्तमखां ने कहा : 'तू घर न जाना।'

'क्यों।'

'अबे, खतरा है।'

'फिर क्या करूं ?'

'बाहर का दरवाजा बन्द कर ले और छप्पर में सो जा- --वहां।'

बांके ने कहा : 'उस्ताद !'

'क्या है बे ?'

'मरा जा रहा रहा हूं।'

'बहुत चोट आई है ?'

'तुम्हारे पांव पकड़ता हूं।'

'क्यों आखिर ?'

'एक अद्धा मिल जाता।'

'थोड़ी-सी बची रखी है उस आले में। जा, ले ले।'

फिर लगा, अब वे अलग होंगे। प्यारी उसी रास्ते से अपने कोठे में लेट रही। रुस्तमखां भीतर कंबल लेने आया तो वह उसे सोती हुई मिली। उसने निश्चय करने को धीरे से पुकारा : 'प्यारी !'

वह न बोली।

'सो गई।' वह बुरबुराया और उसने जोर से आवाज दी। प्यारी जैसे हड़बड़ाकर उठी।

-कुण्डा चढ़ा ले । उसने कहा ।

रुस्तमखां बगल के कोठे मे चला और प्यारी ने कुण्डा चढ़ा लिया । कुछ देर बाद उसने खिड़की से देखा। बाहर छप्पर में बांके खाट पर बैठा पी रहा था और अपने जख्मों पर शराब मल रहा था । और कभी-कभी कराह उठता था ।

प्यारी उसे खड़ी-खड़ी देखती रही। अपमान का गुबार उठने लगा और फिर सुखराम के शरीर से टपकता हुआ लोहू उसकी आंखों के सामने समुद्र की तरह हिलोरें लेने लगा। प्यारी को लगा, सारी दुनिया उस लहू से भीगकर लाल हो गई है। कजरी कह रही है : प्यारी, बदला ले । तेरे सामने मौका है ! इसे चूक न जा ।

सुखराम घायल लेटा है !! वह बदला नहीं ले सकता, न उस पर कोई शक कर सकता है। कजरी बैठी है पास !!! उसके ऊपर किसी की आंख नहीं जा सकती !!! और वह दूर !!! वह खुद सुखराम से दूर है !!

हृदय हाहाकार कर उठा ।

दूर है !! दूर है !!! क्यों ? रुस्तमखां की वजह से । इसी कमीने की वजह से । वह तो रोक नहीं सकता !! वह चली जाएगी ! वह सुखराम के पास ही जाएगी ! पर क्या ऐसे ही चली जाएगी ? नहीं !! वह बदला लेगी !! और इस कमीने आदमी को सदा के लिए मिटा देगी जो पाप का भरा हुआ घड़ा है !! प्यारी इसमें से आती दुर्गन्ध को सूंघती है तो उसका भेजा सड़ने लगता है !!! वह उसे सह नहीं सकती !!

प्यारी की रगों में लहू तेजी से दौड़ने लगा । कनपटियां गर्म हो गईं । वह आज इसे मिटा देगी !!

कल सवेरे इसकी लाश पर सब थूकेंगे ! कौन जान सकेगा कि यह काम उसने किया है !! वह सिपाही के पास है !! उस पर कौन शक करेगा !!

आधी रात हो गई थी। प्यारी खिड़की से उतरी। उसने धीरे से एक पाव निकाला। फिर दूसरा। फिर मुंडेर पर खड़ी हो गई। उसके मुंह में दांत भिंचे हुए थे। उसने कुछ दूर मुंडेर का सहारा लिया। और आगे बढ़ी। फिर वह जब कोने पर आ गई तो दीवार छोड़ दी और झुककर उसने सामने छप्पर पकड़ा और उस पर धीमे से पाव जमा लिया। अब एक दम गिरने का तो भय नहीं था। वह धीरे से आहट लेती रही। बांके सो रहा था। सामने का द्वार बंद था। रुस्तमखां भीतर था। प्यारी छप्पर से झूलकर नीचे उतर गई। अंधेरे में खड़ी रही। जब उसे विश्वास हो गया कि कोई नहीं देख रहा है, तब दीवार के सहारे-सहारे आगे बढ़ी। वह नितान्त दृढ़ थी। यह नहीं कि उसमें किसी प्रकार का भी भय हो।

उसने आंचल मे हाथ डाला और कुछ चीज बाहर निकाली। और अब उसके हाथ में कटार थी। वह एक बार बांके की ओर देखती, फिर अपनी कटार की ओर।

उसने सांस रोक ली और चारों ओर देखा। कुछ नहीं। आकाश में धुंधले तारे टिमटिमा रहे थे। अंधेरी लौट-लौटकर काली हो गई थी और एक डरावनापन छा रहा था।

बांके सो ही रहा था। वह थक गया था। इस समय उसे सामने देखकर प्यारी को लगा कि जीवन की बहुत बड़ी कुरूपता उसीके हाथों समाप्त हो जाएगी। बांके ने करवट ली। वह डर गई। हृदय धड़क उठा। वह एकदम दीवार से सट गई।

वह दो क्षण-चुपचाप खड़ी रही। आहट लेती रही। कोई आवाज नहीं आई तब वह निश्चित हुई। फिर उसमें साहस भर आया। फिर उसकी घृणा उसे उत्तेजित करने लगी। वह अब केवल एक ध्यान की ओर केन्द्रित होती जा रही थी जैसे उसके शरीर का रोम रोम प्रतिहिंसा की मूर्तिमान ज्वाला बन गया था।

फिर वह झपटी अब वह क्रोध और आवेश से भर रही थी उसने कटार वाला हाथ ऊपर उठा लिया और झटपट उस पर वार किया। मुट्ठे तक छुरा उसके हाथ में घुस गया। वह चिल्लाया लेकिन प्यारी ने उसके मुंह पर हाथ धरकर जोर से दबा दिया और इससे पहले कि अंधेरे में वह पहचाने या उठे, उसने उसकी आंख पर अपना घुटना मारा और छुरा खींचकर निकाला और कसके एक हाथ मारा और बांके अन्धा हो गया और फेन-सा उसके मुंह से निकल आया। अब वह चिल्लाया नहीं। उसमें मुड़ने का भी दम न था। प्यारी ने फिर छुरा गड़ाकर बाहर खींच निकाला, और फिर तीसरा हाथ मारा।

पर तीनों वार दर्द वाले कंधे में लगे। वह अंधेरे में यह नहीं जान सकी। वह यही समझी कि काम हो गया है। अतएव उसने छुरा उसीके कपड़े मे पोंछ दिया। पर वह मूठ तक भीगा था। रक्त टपकना बन्द हो गया तो छुरा उठा लिया। पहले ही वार में बांके नींद में चिल्लाकर बेहोश हो गया था। अतः वह उसे पहचान ही नहीं सका। बांके की सांस फंसी-फंसी सी चल रही थी। उसने देखा कि वह दम तोड़ रहा था और प्यारी को फिर वहां भय-सा लगा।

प्यारी भागी। दीवार के सहारे आ गई और फिर इधर-उधर देखकर छप्पर पर चढ़ी। फिर कोठे की खिड़की में आई और भीतर उतर आई। आते ही पहला काम यह किया कि छुरा पोंछा और उधर जहां लकड़ियां, कण्डे और कूड़ा पड़ा रहता था, उनके भीतरी भाग में उस कपड़े को फेंक दिया।

और ओढ़कर सो रही।

बाहर रुस्तमखां का स्वर सुनाई दिया : 'अरे, कौन है !'

कोई नहीं बोला।

फिर पुकारा : 'यहां कौन बोल रहा था अभी ?'

प्यारी ने सांस रोक ली।

'कोई नहीं है।' रुस्तमखां ने कहा : 'दरवाजा बन्द है। साला नींद में भी लड़ रहा है।'

दरवाज़ा बन्द होने की आवाज़ आई।

प्यारी उठी। उसने खिड़की से देखा। खाट पर बांके पड़ा था, यहां से साफ दिखाई दे रहा था। उसमे तनिक भी यह भाव नहीं था कि उसने मनुष्य की हत्या की थी। उसे तो यही लग रहा था कि उसने किसी बड़े क्रूर, विकराल, जघन्य, बर्बर पशु की हत्या की है, जिसे मार डालने में किसी भी प्रकार का दोष नहीं था।

फिर वह सोचते-सोचते खाट पर लेट गई। आज शरीर फूल का सा था। अब वह बीमार नहीं लग रही थी। उसने इतने दिन में जैसे अपने पापों का प्रायश्चित्त कर लिया था। कजरी के साथ पली हुई उस खानाबदोश करनटनी को आज बहुत दिन बाद ऐसा लगा कि वह स्वतन्त्र हो गई है। उसे कोई डर नहीं है।

उसे स्वयं इसपर ताज्जुब हो रहा था कि उसने इस सफाई से कटार चलाई कसे। आज जाने कितने बाद ऐसी नौबत आई थी। आखिरी वार जब उसने कटार चलाई थी तो भी वह कई बरस की बात है। तब इसीला जिन्दा था। सनको हुंस दी थी। कुछ नहीं, एक गुड़ की भेली के पीछे किसी नटिनी से लड़ाई हो गई थी। वह उस चुन-कर खा गई थी। उस दिन बड़ी मुश्किल से बीच-बचाव हुआ था। सुखराम ने सुना था तो पूछा था, कहीं लगी तो नहीं। बस और कुछ नहीं। सच तो यह है कि वह पहले था ही सीधा। प्यारी इस बात को सोचने लगी कि कजरी के साथ उसकी कैसे पटेगी।

अच्छा बांके तो मर गया !

अब
सवेरे रुस्तमखां को पता होगा तो सोचेगा ! कहीं मुझे न पकड़े !
सो कैसे पकड़ेगा ? मैं संग न रहूंगी। मैं बीमार भी रही हूं। कुण्डी भीतर से बन्द थी। मैं बीमार भी हूं।
न जाने और भी ऐसे ही वह क्या-क्या सोचती रही कि उसे नींद आ गई और आज कैसे वह घोड़े बेचकर सोने वाले सौदागर को [illegible] आ गई थी ! [illegible] सुपना [illegible] नहीं आया।
रात का अंधियारा अब [illegible] खिड़की पर हवा के झोंकों के साथ [illegible] रहा था। सुनसान पर कुत्ते भौंकते थे और सनसनाती हवा दूर-दूर [illegible] फैल जाती थी।
रुस्तमखां भी सो रहा था। उसकी नींद टूटी थी और बुखार के बाद की कमजोरी ने उसे ऐसा गिराया कि वह बहुत गहरी नींद में बेहोश-सा [illegible] गया। चारों ओर प्रशान्त अंधकार था। और कुछ नहीं। नितान्त निरवता के साम्राज्य में एक शब्द भी सुनाई नहीं देता था।
दो घंटे बाद शायद बांके को होश आया। दर्द के मारे वह मरा जा रहा था। गला सूख गया था। हलक में से आवाज नहीं निकल रही थी। कुछ देर पड़ा रहा। जब प्यास बहुत तेज हो गई तो वह रुक नहीं सका। अपने [illegible] हाथ का बड़ी मुश्किल से सहारा लेकर वह लड़खड़ाकर उठा, हालांकि इतने में ही उसका प्राण आकर कण्ठ में एक-सा हो गया, क्योंकि पुरानी चोट पर नई चोट ने गजब ढा दिया था। [illegible] उस लगा। वह चक्कर खाकर गिर पड़ेगा। बड़ी ही मुश्किल से धीरे-धीरे घसीटता हुआ किसी तरह आगे बढ़ा और उसने द्वार खटखटाया
रुस्तमखां सो रहा था। और बांके के लिए मुसीबत थी कि हाथ [illegible] नहीं उठते थे।
भर्राए स्वर में पुकारा : 'उस्ताद ! उस्ताद !!'
उस आवाज के कीड़े दरवाजों की संधों में घुस गए और रुस्तमखां के कानों में [illegible] जा घुसे, जैसे वे उनके लिए बने हुए पुराने बिल थे।
रुस्तमखां जाग गया। उसे डर लगा। यह कौन आवाज है, आज तक [illegible] सुना नहीं। वह कांप गया।
'कौन है ?' उसने पूछा।
बांके ने अपने भर्राए स्वर से कहा : 'खोलो दरवाजा, तुम्हारा बांके हूं। मैं हूं [illegible]।'
बांके का स्वर दूसरा था। रुस्तमखां कमजोर था ही। उसे विश्वास नहीं हुआ। [illegible] उसने टालने के लिए लेटे ही लेटे उसके घाव पर नमक छिड़का : 'क्या है बे ? [illegible] क्यों नहीं ?'
बांके के आग लग गई। एक तो पीड़ा और फिर यह विचार कि उठकर [illegible] खोलने में कष्ट होगा, इसलिए टाल रहा है। उसने चिढ़कर कहा : 'मरा जा [illegible] हूं उस्ताद ! कोई छिपके मार गया मुझे तो।'
'कौन मार गया ?'
'अब यह मैं क्या जानूं ? कोई तुम्हारा ही आदमी रहा होगा।'
'क्या बकता है ?' रुस्तम ने डांटा : 'मेरा आदमी ! होश में है कि साले लाल दू[illegible] आकर ? बहुत शराब पी गया लगता है। सो जा ! जा !'
बकता हूं या दम निकला जा रहा है [illegible] बांके धम से वहीं बैठ गया और कहने

लगा : 'दो लात तुम भी दे लो,' वह रो रहा था : 'मैं तो मरूंगा हो, यहीं जान दे दूंगा। तुम्हारे ही दरवाजे से मेरी ल्हास निकलेगी।'

रुस्तमखां डर गया। उसे लगा, सचमुच कुछ गड़बड़ हो गई। लाचार बुरा मानता हुआ उठा। अभी तक उसके हृदय में बांके के रोदन से तनिक भी संवेदना पैदा नहीं हुई थी। और नींद बिगड़ने का उसे बड़ा मलाल था। आखिर लालटेन लेकर निकला।

बांके ने उसके पांव पकड़ लिये और रोया : 'मुझे क्यों मरवा दिया तुमने? मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा था? बदला लेना था तो अभी! तुमने इस कदर जुलम किया, मालिक!'

'क्या है बे?' रुस्तमखां चौंककर हट गया। फिर कुछ रुककर बात समझ कर, रोशनी कन्धे के पास ले जाकर गौर से देखा। बांके भयभीत-सा खड़ा हो चुका था। उसका शरीर कभी-कभी डर से कांप उठता था।

बांके के कंधे पर गहरे निशान थे।

'अबे, ये तो तीन निशान हैं?' रुस्तमखां ने कहा।

बांके रोया।

'रोता क्यों है? मर्द होकर रोता है?'

'उस्ताद, इस मर्दानगी से औरत होना अच्छा था।'

'पर हर बार कटार बेदरदी से खींची गई है और उसमें जख्म काफी भीतरे हो गए हैं।'

'उस्ताद, तुमने मुझे इसीके लिए रोका था!'

'अबे, क्या बकता है यह?' रुस्तमखां ने चौंककर कहा।

'फिर कौन आया था?'

'जरूर कोई आया है।'

रुस्तमखां आंगन में कूद आया।

'कौन है उस्ताद?'

'कोई नहीं।'

'दरवाजा भी बन्द है। कोई आता भी कहां से?'

'यही तो मैं भी सोचता हूं।'

'उस्ताद, तुम सोचते रहना। अब तो तुम्हारे यहां की खाटें भी कटारें भोंकने लगीं। मरवा दिया तुमने।' वह फिर कायरों की तरह रोने लगा। वह सचमुच इस जालिम से डर गया था।

सुबह देखा, प्यारी की तरफ के छप्पर में कुछ भी नहीं था। जहां से वह जल्दी में चढ़ी थी, फूंस खिंच आया था।

'इसका मतलब है, हमलावार इधर से आया था!' रुस्तमखां ने कहा।

उस तरफ नसरवारा था।

बांके ने दूसरे हाथ से मूछों पर हाथ फेरा और कहा : 'जरा हाथ ठीक हो ले तो एक एक को···'

वह गुस्से के मारे कह नहीं सका।

प्यारी आज उठी तो देह हल्की थी। उसका मन प्रसन्न था। जैसे ताजी-ताजी बाड़ी को खा जाने वाली सेही को मारकर किसान को आनन्द आता है। और दूसरे दिन वह अपनी सब्जियों को देखता है कि सेही की अनुपस्थिति में उसकी सब्जी कितनी बढ़ गई है उसी प्रकार प्यारी ने आंगन में खिल्की स देखा

वहां कोई नहीं था। उसे आश्चर्य हुआ। हो सकता है रुस्तमखां भीतर से आया हो। पर मरे को उठाने से फायदा ही क्या!

उसने मुंह धोया और नीचे उतर आई। देखा, कोठे में बांके बैठा था। रुस्तमखां गंभीर था। दोनों को चुप देखकर प्यारी ने कहा : 'क्या हुआ?'

'देख!'

प्यारी ने देखा। बाल-बाल बच गया था। वह कांपी। कहा : 'हाय, किसी बड़े निर्दई की लाग है?'

'कोई चमरवारे का आदमी था।' बांके ने कहा : 'देख, यह छप्पर...'

प्यारी अब कांप उठी। वह समझ गई कि निर्दोषों पर वज्र गिरेगा।

19

गोली खतम होने को आ गई। और रुस्तमखां की तन्दुरुस्ती पहले से कहीं अच्छी हो गई थी।

उसने कहा : 'तू कैसी है?'

प्यारी ने कहा : 'अच्छी हूं। तुम कैसे हो?'

'फायदा तो मुझे भी है।'

'फिर और क्यों नही मंगवाते किसीको भेजकर?'

'भेजूं किसे?'

प्यारी ने कहा : 'अरे, इतने आते-जाते हैं। किसीसे कह दो। सुखराम टाल थोड़े ही सकता है।'

'पर मैं सोचता हूं, वह भी तो घायल है।'

'तो क्या हुआ!' प्यारी ने कहा : 'गोली बनाने में क्या लगता है! मैं वहां थी, तब तो यों ही बना-बनाके बांटा करता था लोगों को। मैं देखती न थी तब?'

रुस्तमखां ने कहा : 'तब ठीक है, मैं देखता हूं।'

'तुम समझते नहीं, इस इलाज में लगातार दवा पहुंचने का ही गुन है!'

'सो तो मैं जानता हूं।'

'अरे, खाक जानते हो। अभी कहते थे, आदमी नहीं है।'

प्यारी की मीठी-मीठी बातों से रुस्तमखां चक्कर में आ गया। वह समझ न सका।

चक्खन आ गया था।

'क्यों चक्खन,' प्यारी ने कहा : 'जमादार की तन्दुरुस्ती कैसी है?'

'बहुत अच्छी है।' चक्खन ने तारीफ में कहा।

प्यारी ने आंख से इशारा किया और बोली : 'लो देखो, मैं न कहती थी चक्खन! तुम्हारे जमादार दवाई नहीं खाते।'

'तुम्हें मेरे सिर की कसम है जमादार!' चक्खन वफादार ने कहा। मुंह-जबानी हमदर्दी में वे गांव में सबको हराते थे।

'तू चला जा चक्खन!' प्यारी ने दयनीय स्वर में कहा। अब वह अपनी दवा चाहती थी। जीवन के प्रति एक नया विश्वास आ गया था। सुखराम से मिलने का यही रास्ता रह गया था।

'कौन मैं?' चक्खन चौंका उसे अब लगा कि वह गलती कर गया है पर अब मौका हाथ से निकल चुका था

'क्या, तू डरता है ?' प्यारी ने कहा।

'चला जाऊंगा। पर कहीं मारेगा तो नहीं ?'

'मारेगा ?' प्यारी ने आश्चर्य से पूछा। जैसे चक्खन-जैसा वीर और ऐसी ओछी बात कहे। भला प्यारी उसे कैसे मान ले ! वह तो ऐसा सोच भी नहीं पाती।

'कम्बख्त में राक्षस का बल है।' चक्खन को अपनी जान की पड़ी थी। उसे इसके ताज्जुब से क्या लेना-देना था। वह अब अपने आगे-पीछे की सोच रहा था। सच तो यह था कि वह ऐसे ही काम को काम कहता था जिसमें कुछ लाभ होता दीखता था। परोपकार को वह सबसे बड़ी मूर्खता कहा करता था।

'तू भी तो यादों छत्री है। चक्खन !' प्यारी ने कहा। और उसकी ओर गहरी दृष्टि से देखा जिसमें हिराकत भरी थी। चक्खन वह दृष्टि सह नहीं सका। वह दृष्टि नहीं थी, चुनौती थी।

एक तो अहीर क्षत्री बन गया ? फिर औरत की बात ! मरद हजार कहे तो बन्दर भगाने न जाय। औरत का मौका आए तो चीते तक के सामने अड़ जाय ! एक ही चोट काफी रही। चक्खन खड़ा हो गया। बोला : 'मैं जाता हूं।'

जब वह सुखराम के डेरे पर पहुंचा तो सुखराम सो रहा था।

'क्यों, सुखराम यहीं रहता है ?'

'हां।' कजरी ने पूछा : 'तुम कौन हो ?'

'मैं चक्खन हूं।'

'चक्खन हूं !' कजरी ने कहा, 'तहसीलदार हो, दरोगा हो, लाट साहब हो कि नाम से ही मैं समझ जाऊंगी ? क्या काम करते हो, बताओ !'

'अरी, मैं रुस्तमखां का भेजा हुआ हूं।' चक्खन झेंप और खिसियाकर कहा।

'कौन रुस्तमखां ?' वह जानबूझकर बनी।

'वही सिपाही, जिसकी आजकल सुखराम की बहू रखैल है।' उसने व्यंग्य किया।

'अरे, तो !' कजरी ने कहा : 'पहले क्यों न कहा, कि तू मेरी सौत का नौकर है !

'ऐ-ऐ, होश से बोल !' चक्खन ने कहा : 'नौकर होगा कोई और ! मैं तो दवा लेने आया हूं।'

'कैसी दवा ?'

'रुस्तमखां ने मगाई है।'

कजरी ने हाथ उठाकर डेरे के भीतर इशारा किया और कहा : 'वह सो रहा है।'

'कौन ?'

'सुखराम ?'

'अरी, तो वह जागेगा नहीं ?'

'देर में सोया है।'

'अरी, चल-चल, जगा दे उसे ! क्या जमाना आ गया है !' चक्खन ने कहा : 'तू कौन है ?'

'मैंने कहा तो,' कजरी ने कहा : 'तेरी मालकिन की सौत हूं।'

कजरी उसके पास चली गई।

'देख, फिर तूने वही कहा,' चक्खन बोला : 'तुझमें बिलकुल तमीज नहीं। कैसे बोलती है !'

अच्छा तो तू उसका काम क्या करता है ?

वह मेरा दोस्त है

कौन [illegible]

तू क्या काम करता है

'मैं यादों छत्री हूं।'

'ठाकुर!!' कजरी ने कहा : 'बड़े भाग!'

अब चक्खन का साहस बढ़ा। उसने हाथ उठाकर कहा : 'भीतर जाकर इसे जगा दे?'

'तेरे बाप की नौकर हूं जो...!' कजरी ने कहा।

'बाप रे, बड़ी लड़ाका औरत है!'

'औरत होगी तेरी लुगाई! समझा? मुझसे और न कहियो।'

चक्खन सकते की-सी हालत में पड़ गया। कजरी ने कहा : 'क्यों रे! इधर-उधर का काम करता डोलता है, [illegible] महीना में तुझे यहां मिल ही जाता होगा? और कौन किसीसे बिना पैसे बात करता है, जब टुकड़ों के मुहताज हो रहे हैं।

'बोलती कैसे है?'

चक्खन ने कहा और बैठ भी गया; परन्तु उसमें अब घोर अपमान जाग रहा था। गांव वाले सुनेंगे तो कहेंगे कि नट के द्वार पर बैठा रहा, इतना भी [illegible] नहीं रहा कि नट हुकुम पर काम करते। और कजरी सामने अभी टेढ़ी भौंह तान कर खड़ी थी।

वह जोर से बोला : 'मैं कहता हूं...'

'चिल्लावै मत, अब जागेगा। बड़ी देर में सोया है।' कजरी ने और जोर से कहा। चक्खन कायर आदमी। दब गया।

थोड़ी देर और बैठा रहा। कजरी भीतर में गई तो उसे लगा हुआ कि अब यह उसे जगा देगी। विचार आया कि बिना जोर-जबर के सीधे से काम निकलता ही नहीं। जब तक चुप बैठा था सुनती ही नहीं थी, अब बोला तो गई भीतर। पर कजरी बाहर आ गई।

'तो मैं क्या बैठा रहूंगा?' उसने कहा।

कजरी भीतर फिर चली गई। [illegible] की ओर पीछे की तरफ से जाकर घोड़े का दाना दी। घोड़े पर हाथ फेरा और बच गया। खाने लगा तो फिर सामने आ गई। चक्खन का धीरज अब टूट गया। कजरी को देखकर कहा : 'तो क्या यहीं समाध लगा दूं?'

'चला जा। मैंने कब बैठने को कहा?' कजरी ने उत्तर दिया और फिर भूरा की कठौती धोने लगी। भूरा ने कहीं दूर से अपना इन्तजाम होते देखा तो तुरन्त आ गया। मोटा और मजबूत कुत्ता देखकर चक्खन जरा सोच में पड़ गया। कुत्ता आया और उसने चक्खन की बगल में खड़े होकर देखा और जैसे आगन्तुक का स्वागत किया, उसकी पीठ की तरफ सूंघा। चक्खन को लगा कि अब काटा। कुछ पीछे [illegible] खातिर बहाने के लिए चक्खन ने पीठ घुमाई और कंधे के पीछे झांका। कुछ नहीं था। चेतना लौटी।

'मैं जगा लूं?' चक्खन ने उठते हुए कहा। वह उठा तो इसलिए था कि कुत्ते के बवाल से बचे। परन्तु कजरी समझ गई। मन-ही-मन मुस्कराई। समझ गई, बड़ा भारी पोच है। परन्तु बोली कुछ नहीं। कुत्ता और पास आया। चक्खन जरा और आगे बढ़ा। खीझकर बोला : 'तू तो कुछ सुनती ही नहीं।'

'तू समझा होगा अकेली हूं? तेरे-जैसों के लिए तो मैं ही बहुत हूं।' [illegible] उत्तर दिया

मूरा : कजरी ने आवाज़ दी।

कुत्ता गुर्राया। उसके गले से भारी आवाज़ निकली। चक्खन बैठ गया।

कजरी ने कहा : 'आ बेटा !'

मूरा पास आया। उसने रोटी के टुकड़ों को खाना प्रारम्भ किया। मोटे और बड़े कुत्ते को काम में लगा देखकर चक्खन को चैन आया। खा-पीकर कुत्ता फिर मटर-गश्ती पर निकल गया।

चक्खन बैठा ऊब गया।

अब वह बुड़बुड़ाया : 'मैं पहले ही कहता था। पर वह मानता ही न थी। मुझे ही भेज दिया। सवेरे-सवेरे काम का वखत ! और यह मुसीबत !'

असल में किस्सा यह था कि चक्खन अपने ढोर रात को खोल देता और वे ठाकुर के खेतों को चरते। अगर कोई किसान उसके हरया ढोर को किसी तरह पकड़ भी लेता और कांजीहौस छोड़ भी आता तो चक्खन रुस्तमखां की सिफारिश ले आता और [illegible] मुंशी उसके जानवर छोड़ देता। आज सवेरे अपने दो ढोरों को छुड़वाने की सिफारिश करवाने आया था। वर्ना खामखाह एक रुपया ठुकता। इसलिए वह [illegible] चलने को [illegible] तैयार हो गया था। अव्वल तो बेगार। और फिर काम भी [illegible] ही लिया [illegible] मुसीबत।

कजरी ने आग में घी डाला।

पूछा : 'सवेरे-सवेरे निकला होगा।'

'और क्या ?' उसने कुढ़कर कहा : 'हमने कभी तहसीलदार का भी इन्तजार नहीं किया।'

'अरे भूखा होय तो रोटी दूं।' कजरी ने कहा।

'अरे चल नटिनी ! तेरे हाथ का खाऊंगा मैं ?'

'क्यों, यहां कौन देखता है ?' कजरी ने कहा। 'मेरे संग तो लाला —बाभन, [illegible], ठाकुर सब खा चुके हैं।'

'सच ?' चक्खन ने कहा : 'कौन-कौन ?'

'क्यों, तू क्यों जानना चाहता है ?'

'अरे नहीं। ऐसे ही।' चक्खन ने कहा : 'मुझे क्या ? पर बुरी बात है। यहां धरम की बात करते हैं, यहां सब खा-पी जाते हैं।' उसने सिर हिलाया।

कजरी मुस्कराई। कहा . 'तू ही डरता है।'

'सो कैसे ?'

'मैं कहती हूं, अभी गरम-गरम ठोकी है···'

'नहीं-नहीं, राम-राम,' चक्खन ने कहा 'यह तो धरम का फेर है। नहीं तो नटिनी की इतनी हिम्मत !'

'हिम्मत की न पूछ।' कजरी ने कहा : 'यह तो मन की बात है। अब मन ही [illegible] है। तुझी पै आ गया। तभी तो उसको जगाती नहीं।'

चक्खन की आंखें फट गईं। कहा : 'क्या कहती है ?'

'मैं कहूं,' कजरी ने लाज से घूंघट-सा करके कहा : 'मेरे संग [illegible] जनम [illegible] लेगा न ?'

'क्यों नहीं !' चक्खन हंसा।

'इसमें धरम नहीं जाता तेरा ?' कजरी ने मुंह खोला।

'अरी, ये और बात है।' चक्खन ने कहा।

'क्यों ?' कजरी कुढ़ी

चक्खन ने कहा : धरम तो कम्म के ऊपर होता है। और उसने विजय की दृष्टि से उसकी ओर देखा, जैसे स्त्री को पराजित करने में देर ही कितनी लगती है। परन्तु कजरी ने कहा : 'तेरी भैन-बेटी ने ही तुझे यह धरम सिखाया होगा ?'

चोट मर्म पर पड़ी। चक्खन तिलमिला गया। कजरी मुस्कराई। चक्खन जवाब न दे सका। वह सकते की-सी हालत में पड़ गया था। कहां तो गया था ! पर अब बैठना भी असम्भव था। इतनी करारी चोट पड़ी थी कि उसकी अन्तरात्मा तक को झकझोर डाला गया था। उसकी जघन्यता इतनी नग्न थी कि वह उसे देखकर स्वयं ही लज्जित हो उठा था। उधर स्वार्थ था। दोनों ढोर उसकी ओर देख रहे थे। फिर सिपाही का क्या ठीक ! कहीं बिगड़ गया तो !! एक ले-दे के सहारा है, वह भी टूट जाएगा। इसी कशमकश में उसके कुछ क्षण बीत गए। तब वह अन्त में निराश होकर चिल्लाया : 'मैं जा रहा हूं। समझी ! कह दीजो अपने खसम से कि मैं नहीं रुकता।'

'चला जा, चिल्लावै मत !' कजरी ने कहा : 'वह तेरे बाप का नौकर नहीं है।'

'देख, तू ठीक से बोल, नहीं तो···।'

'नहीं तो तू मुझे सूली दे देगा न ?' कजरी ने कहा : 'फिर तो चिल्ला के देख !'

सुखराम की नींद खुली। उसने सुना, कोई चिल्ला रहा था : 'हरामजादी ! नटिनी ! तू समझती है, मैं तुझसे डर जाऊंगा ?'

'गाली मत दीजो मैं कहती हूं।' कजरी का स्वर सुनाई दिया। वह स्वर कठोर था।

सुखराम उठा। बाहर एक आदमी खड़ा है। मुंह देखा। चक्खन था। सुखराम को हंसी आ गई। चक्खन गुस्से में है और मुंह चला रहा है और देखा, कजरी हाथ में जूता लिये खड़ी है।

'अब के दे गाली !' कजरी ने कहा।

'तू ही तो बकती थी।'

'मैं कब बकी, बोल···'

चक्खन चिल्लाया : 'मैं कहता हूं···'

'मैं कहती हूं पुकारै मत !' कजरी ने कहा : 'वह सो रहा है। अच्छा नहीं होगा। कह दीजो अपने सिपाही से, जेल में डाल दे। रह लेंगे सब ! समझा ! हमारे पास जमीन-जैजात नहीं कि डर जाए। जान है तो जहान है। यहां हैं तो यहां हैं, नहीं तो कहीं और हैं। धरती अपनी नहीं, घर नहीं, पर नींद अपनी है, समझा ! उसे हमसे कोई नहीं छीन सकता। गोली लेनी है तो पड़ा रह। नहीं लेनी है, हम खबर भेज देंगे कि गोली क्यों नहीं मंगाते। कोई आदमी क्यों नहीं भेजा आज तक !'

'और मैं जो आया हूं !!' चक्खन ने पूछा।

'अरे कौन है ?' सुखराम ने कहा।

वह बाहर आया तो कजरी मुंह पर घूंघट डाल भीतर चली गई। चक्खन को लगा कि अब पिटा। उसने सुना तो था कि वह घायल हो चुका था। पर भय की तो सीमा नहीं होती। उसके पौरुष की अमूत गाथाएं सुनकर उसका दिल पहले ही कमजोर हो चुका था। अब कहीं नींद टूटने से तो बाहर नहीं निकला है ? फिर भी जी कड़ा करके खड़ा रहा और कहा : 'मैं हूं चक्खन !'

'कैसे आए भाई ?'

चैन पड़ा। जान में जान आई। बोला : 'यह तुम्हारी औरत···'

वह कह नहीं पाया था कि कजरी फिर बाहर टूटी : 'फिर तूने मुझे औरत कहा ?

दवा सुखराम . दवा अक्खन गिड़गिड़ाया।

सुखराम ने डांटा : 'कजरी !'

कजरी भीतर चली गई।

कुछ देर बाद जब सुखराम भीतर आया तो उसने देखा, कजरी खाट पर पड़ी-पड़ी हंस रही थी।

'अरी, क्या बात है आज ? क्यों हंस रही है ?' उसने पूछा।

'हंसूंगी नहीं ?' उसने धीमे से कहा, 'बड़ी देर से मैंने इससे बक-बक की है।'

'क्यों भला ?'

'कहता था, जगा दे !'

'तूने जगा क्यों न दिया ?'

'सो क्यों जगा देती !' कजरी ने हंसकर कहा : 'ऐसा-ऐसा खिसियाया है कि कह नहीं सकती।'

'तू बड़ी मक्कार हो गई है !'

'तेरी कसम ! तैने बना दी है।'

'मैंने ? यह भी मेरा कसूर है ?'

'बिल्कुल ! जब से तेरा संग हुआ है, मुझे डर नहीं लगता। चाहे जिगमें भकड़ जाने की इच्छा होती है।'

जब सुखराम ने फेंटा सिर पर धरा, तो वह चौंकी।

'क्या बात है ?' उसने पूछा।

'अरी, वह आया है न ?'

'तो तू जंगल जा रहा है दवाई लेने ?'

'हां। न जाऊं ?'

कजरी ने उत्तर नहीं दिया। उसके मुख का आह्लाद ऐसे हट गया, जैसे किसी पत्थर तोड़ने वाले की सख्त उंगलियों ने गुलाब की पंखुड़ी को मसलकर फेंक दिया हो। उसकी आंखों में विषाद की गहरी छाया उतर आई और फिर उसमें एक तरलता कांप उठी। सुखराम ने देखा, वह रो रही थी।

'क्यों रोती है ?' उसने पूछा।

कजरी ने मुंह छिपा लिया। अभी वह जिस खाट पर पड़ी-पड़ी अकेली हंस रही थी, वहीं वह पड़ी-पड़ी रो रही थी। अचानक ही आकाश में निकला हुआ इन्द्रधनुष ढक गया और काले-काले बादल घुमड़ आए। सुखराम को आश्चर्य हुआ। फिर पूछा।

परन्तु कजरी ने उत्तर नहीं दिया। उसके मन में कचोट थी। वह स्वतन्त्रता की भावना खो गई। उसे महसूस हुआ कि वह निरीह थी। उसका सबल ही निरीह था। क्यों ? क्या वह डरती है ? डरे क्यों नहीं ? स्त्री और बच्चा अपने को एकदम आज़ाद समझ सकते हैं ? पर वह तो जिम्मेदारी नहीं भूल सकता। अगर वह भी बड़े लोगों को जवाब दे उठे, तो उसे तो कोई दया करके छोड़ नहीं देगा।

किन्तु यही तो वह सब नहीं था जिसने उसे रुलाया था। न जाने कहां एक छोटी-सी ईर्ष्या की अनी थी जो हृदय के भीतर गड़ी हुई कसमसा रही थी। उसी के कारण तो जा रहा है, अन्यथा वह जाता ही क्यों ? पर क्यों न जाए वह ? जाता है तो जाए, अपनी भी उसे चिन्ता नहीं। वह अपने से ऊपर रखता है उसे ? यानी मैं तो कुछ हूं ही नहीं।

सौत का यह प्रभुत्व उसकी आत्मा को झकझोर उठा। उसको लगा, वह निराधार है उसका अपना कोई नहीं है कोई नहीं है सब होने वाले झूठ हैं

'चला जा, लौट के न आयो !' कजरी ने कहा। उसके स्वर में असीम घृणा थी। सुखराम ने सुना तो उसके दिल पर धक से चोट हुई। वह क्या करता? वह देख ही रहा था कि उसमें कितना परिवर्तन कितना शीघ्र आया था। क्या वह स्वयं उसके लिए जिम्मेदार नहीं है! उसीके कारण तो यह सब हुआ है। उसका मन भीतर ही भीतर व्याकुल हो उठा।

'क्या कहती है कजरी?' उसने अचकचाकर पूछा।

'क्या कहती हूं? तू नहीं समझता?' कजरी ने प्रतिवाद किया। 'मैं क्या अपने लिए कहती हूं? आखिर मुझे अपना कोई खयाल नहीं?' कजरी की बात में कितनी सचाई थी! सुखराम इसका अन्दाजा नहीं लगा सका। कजरी ने ही फिर कहा, 'मैं अपने स्वारथ की बात ही कहती होऊं, सो बात नहीं है। तू ही क्यों नहीं सोचता, क्या तू इस लायक है कि इस हालत में जंगल जाकर अपना काम अपने-आप कर आए?'

'कल भी तो गया था!' उसने कहा।

'तू गया था। पर साथ में मैं था, वह थी, मैं थी। तू अकेला तो न था!'

कजरी की बात ठीक थी। सुखराम कुछ देर को चुप ही रहा। बाहर चकरान घबरा रहा था। सुखराम ने धीरे से कहा, 'कजरी! मैं क्यों जाता हूं, जानती है?'

कजरी ने मुंह फेर लिया। वह मान था। युगों से पति-पत्नी के प्रेम का एक आनन्द बनकर यह झूठा युद्ध रहा है, जिसमें जान-बूझकर लड़ा जाता है, और फिर अपने मुंह से कहने को, बार-बार उसी बात को दुहराने के लिए ऐसा स्वांग रचा जाता है। बुरा मानना हो मान जाओ, अपनी बला से—यह भाव इसमें नहीं रहता। इसमें यह है कि तुमने ऐसी बात कही ही क्यों जो मुझे अच्छी नहीं लगी! परन्तु यह मान नहीं था।

कजरी ने देखा, सुखराम कुछ और कहना चाहता है।

सुखराम ने कहा: 'वह बीमार है!'

बस! और कुछ नहीं। कजरी की कल्पना ठीक निकली। उसी के लिए जा रहा है यह। यह उसके सामने अपने को कुछ नहीं गिनता, यानी मुझे कुछ नहीं गिनता। मेरी सत्ता क्या है? उसके सिलसिले में ही कजरी की अहमियत है, बीच में से कहीं से शुरू होती है, बीच में ही कहीं जाकर खतम हो जाती है। प्यारी ही आदि है, वही अन्त है, सुखराम उसका एक माध्यम है।

'प्यारी बीमार है।' कजरी ने कहा, 'जानती हूं, तुझे उसकी बड़ी फिकर है। पर जितना ध्यान तुझे उसका है, उसमें थोड़ा भी अगर...'

वह कह न सकी। रो पड़ी। अपने लिए वह अपने-आप कैसे कहे, जब उसका कमेरा ही उस पर ध्यान नहीं देता!

सुखराम पास आ गया। कहा: 'कजरी!'

'क्या है!!'

'मुझे तेरा क्या ध्यान नहीं?'

कजरी चुप हो गई है।

'मुझे उसका इलाज करना है।'

'तो कर।'

'तू नाराज है?'

'क्यों होऊंगी? यह तो अच्छा ही है। कल को अगर मैं बीमार पड़ गई, तो मन से भले ही नहीं पर दिखावे को तू यह सब मेरे लिए भी करेगा ही

क्यों क्या तुझे मुझ पर भरोसा नहीं?

नही कजरी ने कहा

सुखराम देखता रहा

कजरी ने कहा : 'चल। मै चलती हूं तेरे साथ।'

'कहां ?'

'जंगल मे।'

'क्यों, चक्खन है तो सही।'

'अरे, यह पहले ही भाग जाएगा।'

फिर कजरी ने कहा : 'चक्खनसींग।'

चक्खन ने कहा : 'क्या है ?'

'जंगल चल रहे हो ? मै चलूंगी भला।'

चक्खन झेंपा। डरा भी। बोला : 'मैंने क्या कहा है तो !'

'तो क्या मैं कुछ कहती हूं ?'

बाहर आ गए। तीनों चले।

कजरी ने कहा : 'क्यों चक्खन ! इसे लौटा द ?'

चक्खन कांप गया। सुखराम ने गूढ दृष्टि से उसे देखा। वह घबराया। बोला मै यही बैठा रहता हूं। तुम लोग लौट आओ।'

'क्यों ?' कजरी ने कहा : 'तू क्यो नही चलता ?'

'मैं यही ठीक हू।'

'अरे, चल भी।' कजरी ने कहा : 'यह बडा भयानक है। अभी चाहे तो यहीं कतल कर दे।'

'राम-राम !' चक्खन ने कहा : 'हाय ! हाय ! मर गया !'

और बैठ गया।

'अरे, क्या हुआ ?' सुखराम ने कहा।

भइया,' चक्खन ने कहा : 'मुझसे चला नही जाता, बड़ी जोर की मोच आ गई है। हाय, घर तक कैसे पहुंचूंगा ?'

कजरी ने कहा 'अरे, यह तो मामूली-सी बात है। कह तो, कहां दर्द है !'

उसने झूठे को ही कहा : 'यहां।'

कजरी ने कसके उसके टखने में लात दी। चक्खन लोट गया। सुखराम की हंसी छूटी। पर वह दाब गया। कहा : 'अब तो मोच ठीक हो गई होगी ?'

'अभी दरद है।' चक्खन ने कहा।

'तो कजरी, फिर से उतार।'

'नही परमेसुरी !' चक्खन ने घिघियाकर कहा : 'अब उतरी ही समझ।'

'क्यों चक्खनसींग,' कजरी ने कहा : 'धर्म कहा से कहां तक होता है ?'

'चोटी से एड़ी तक।' चक्खन ने कहा।

'तब उठ।' कजरी ने कहा : 'अब मत छेड़ियो किसीको। कोई नहीं मारे डालता है तुझे। जल्दी चल।'

सुखराम पूरी बात तो नहीं समझा। पूछा : 'क्या, बात क्या है ?'

'कुछ नही। ऐसे ही।' चक्खन ने कहा और दयनीय दृष्टि से कजरी को देखा।

कजरी ने कहा : 'जंगल आ गया। जल्दी दवाई ले ले। फिर चल।'

धूप बढ़ गई थी।

जंगल से लौटे तो सुखराम ने कहा : 'कजरी !'

'क्या है ?'

इसे पीस दे पहले । गोली बना दूं ।'

'ला ! दोनों दे दे ।'

कजरी ने रूखड़ी ली और कहा : 'चक्खन, एक काम करेगा ?'

उसकी मीठी आवाज सुनकर चक्खन बोला : 'कहके तो देख !'

'देख ! मेरा हाथ घिरा है ।' कजरी ने कहा : 'जरा घोड़े के आगे घास सरका आ ।'

चक्खन फिर मारा गया । लाचार गया । लौटा तो कजरी ने कहा : 'चक्खन, तू बड़ा अच्छा आदमी है । मैं ही मूरख हूं जो तुझ-जैसे भले आदमी को मैंने इतनी खरी-खोटी सुनाई ।'

'अरे, क्या कहती है ?' चक्खन ने कहा ।

'तू मुझे माफ कर दे चक्खन ! नहीं तो मुझे मन में गांस गड़नी रहेगी । तुझसे मैंने काम और करा लिया ! तुझे बुरा लगा होगा ?'

'बिल्कुल नहीं ।' चक्खन ने कहा : 'तू कैसी बात करती है ! काम तो तूने बताया ही नहीं ।'

'अच्छा, तो एक डोल पानी खींच ला न कुएं से ।'

चक्खन चला गया । फिर मन में खिजलाया । कजरी ने फिर काम पर लगा दिया । पानी लाकर रखा तो कहा : 'ले, बस !'

'अरे, तू तो बुरा मानता है ।'

चक्खन रूठा हुआ था । बोला नहीं ।

'मै तो जानती थी ।'

'क्या ?'

'तू गुस्सा है । तूने मुझे अभी माफ नहीं किया ।'

चक्खन ने कहा : 'अब तुझे कैसे समझाऊं ?'

कजरी ने रूखड़ी पीस के सुखराम के लगा दी ।

'यह क्या ?' चक्खन ने कहा : 'तूने वह वाली नहीं पीसी ?'

'हाय, कैसा आदमी है !' कजरी ने कहा : 'जरा खबर नहीं । इतना चलके आया है, उसका मुझे खयाल ही नहीं ।'

'पर वह क्यों नहीं पीसी ?'

'अरे, तू बढ़-बढ़कर बोला है फिर ! ऐसा ही बड़ा खैरख्वाह है तो तू ही न पीस ले । धरी है सामने । मुझे तो बहुत काम है । काम हम करें, वाहवाही तू लूटे !'

वह भीतर चली गई । लाचार चक्खन ने रूखड़ी पीसी । सुखराम मुस्कराता रहा और वहीं बैठकर हुक्का पीता रहा ।

भीतर से कजरी निकली । चक्खन पीस चुका था ।

'बड़ी देर हो गई !' कजरी ने कहा ।

चक्खन ने देखा और कहा : 'हाय, मैं तो मर गया !'

चक्खन की व्याकुलता देखकर सुखराम ने गोली बनाना प्रारम्भ कर दिया और जल्दी ही बना दीं । जब चक्खन चलने लगा तो कजरी ने टोका : 'सुनो ठाकुर साब !'

'क्या है ?'

'रोटी तो खाते जाओ ।'

चक्खन भाग चला । सुखराम ने डांटा : 'क्या बकती है ?' वह हंसकर भीतर चली गई और कुछ देर में ही रोटी ले आई

कजरी सोचने लगी
'क्या सोचती है ?' सुखराम ने पूछा।
'कुछ भी नहीं।
'तुझे कसम है, बता दे।'
'सोचती हूं, तू प्यारी के लिए इस हाल में भी गया था।'
'नहीं जाना चाहिए था ?'
कजरी ने उत्तर नहीं दिया।
'यों सोच,' सुखराम ने कहा : 'कि मैं बैद बनके गया था। सबको चंगा करना धरम है कजरी।'
'मुझे धरमात्माओं से डर लगता है।'
सुखराम हंसा।
कजरी ने नकल की—'ह ह ह...'
सुखराम खिसिया गया। पूछा : 'क्यों हंसती है ?'
'हंसती हूं कि रोती हूं। अकल के मट्ठे! अगर तुझे कुछ हो गया तो मैं कहां जाऊंगी, क्या करूंगी ? प्यारी मुझे रोटी दे देगी! तू तो उसके पीछे डोल, मैं तेरे पीछे-पीछे डोलूं। तैंने मुझे अच्छा बेवकूफ बना रखा है। साबास रे छैला! भला मैंने तुझे चुना।'
'तू क्यों डरती है कजरी !' सुखराम ने कहा : 'मैं जानता हूं।'
'क्या जानता है ? तेरे लिए मैंने किया ही क्या है जो तू उसका जोर मानेगा।'
'वाह! ये तू क्या कहती है! तैंने मेरे लिए क्या न किया ?'
'क्या किया है, बतइयो।'
'कुर्री को छोड़ा कि नहीं!'
वह हंसी, फिर लज्जा से उसका मुख आरक्त हुआ और फिर वह फूटकर रो पड़ी। यह उसका अपमान हुआ था।
'अरे, मैंने तो दिल्लगी की थी।' सुखराम ने कहा।
कजरी नहीं बोली। पर आंसू पोंछ लिये।
फिर उसने कहा : अच्छा, 'तुझे अपने पर घमंड हो गया है!'
'कैसा ?'
'तू समझता है कि तू ही है सब कुछ! बड़ा मलूक बनता है ? अकल के मट्ठे! तेरी मलूकाई भी तब तक है, जब तक मैं आंख की अंधी हूं। समझ रख। मैं चली जाऊंगी तो जानता है क्या होगा ?'
'क्या होगा ?'
'जो मेरे आने के पहले हुआ था। प्यारी-जैसी लुगाई ही तेरे लिए ठीक है, जो नकेल भी डाले रहे, और उल्लू भी बनाए।'
सुखराम ने हाथ उठाकर कहा : 'दया कर परमेसुरी। दया कर। मैं हार गया। अब रोटी तो खा लेने दे।'
वह मुंह फेरकर बैठ गई। खा-पीकर सुखराम उठा तो खाट पर लेट गया। वह आई और पांव पकड़कर बैठ गई।
'क्या बात है ?' सुखराम ने कहा और पांव खींच लिया। कजरी फिर रोने लगी। सुखराम ने कहा : 'आखिर रोती क्यों है ?'
वह रोती रही। बोली नहीं। फिर उसने घिग्घी बांध कर कहा : 'मन करता है, तुझे छुरियों से गोद-गोद के मारूं'

सुखराम ने उसका सिर अपनी छाती में छिपा लिया।

20

फागुन आ गया। नई कल्पना पुलकित हो उठी। चारों तरफ एक नवीन जीवन का संचार हो गया। कहीं पर्वतों पर अब पत्थर तक अपनी सूनी [illegible] पर नव-नव स्पंदनों से विभोर हो उठे और मैदानों पर उनकी वासना का [illegible] आ गया। फागुन की हवा मीठी भकोरे ले-लेकर चलने लगी। लहर फैल गई। पीपल पर [illegible] लाल पत्तियां निकल आईं। पांवों के पास से हवा ने उसके सूखे पत्तों को दूर-दूर [illegible] दिया और नया पेड़ ऐसा हिल-हिलकर चमचमाने लगा कि खिरनी लजा गई। [illegible] कहा कि देखो, मुआ कैसा इतरा रहा है कल तक नंगा-नगा रो रहा था। और हाय [illegible] ही फागुन भी [illegible] ही गया।

चैताई की आने वाली बहार भी कैसी जादूगरनी है कि एक ओर अपने गर्म-गर्म सांस छुला दिए कि बूढ़े-बूढ़े से पेड़ों पर भी जवानी फूट पड़ी, और अपने नर्म-नर्म पत्तों को हिला-हिलाकर कसमसाने लगे। और अब कौए नहीं, पत्तों के रंग में रंग मिलाकर खेलने वाले तोते उसमें बैठते, फिर पांत बांधकर टांय-टांय कर [illegible] जाते, और उसी हरियाली में जाकर खो जाते, लय-से हो जाते।

पीली कम्मर का भौंरा नटों के छोरे पकड़ते फिरते। भौंरा जाड़े-भर पेड़ों के कोटरों में छिपा रहता। अब जो निकलता तो गुन-गुन गुंजार करता फूलों की प्यालियों से नया-नया रस लेता और परागों में लोटकर विहार करता और फिर अपने गीतों में प्रिया की पगध्वनि को गुंजरित कर उठता।

मधुमक्खियां निकल आई थीं। फिर नया कहना सुना रही थीं। भज-बज करती, एक-दूसरे के पीछे भागती, और किसी बहुत बड़े पेड़ की डाली पर बड़ा-सा छत्ता तैयार करने में लग जातीं। उनके आसपास से तितलियां उड़ जातीं और पंख फरफराकर इशारे कर जातीं।

रात को ढोल बजते। गांववाले मिल-जुलकर गीत गाते। कड़ी उठने के पहले हा हे-हे करके फिर गीत की लय पकड़ लेते और उनका गीत गहरे पानी पर तैरती भारी नाव की तरह छपक-छपक करता और बहने लगता। फसलें तैयार खड़ी थीं। सरसों के खेत हंस रहे थे। जौ के रेशमी खेतों में अब पकन शुरू हो गई थी। गेहूं कांधों तक आ [illegible] था और अरहर के ऊंचे-ऊंचे खेतों में एक सुनहली छाया धीरे-धीरे शाम को उतरती, राह के अंधेरे में डूब जाती। ढेर-ढेर कांस के किनारे खड़े पूले अब मैले पड़ गए थे।

हवा प्यारी-प्यारी चलती और अंगों को एक नई तड़प दे जाती, जैसे वह एक कसौटी थी जिस पर घिस-घिसकर जवानी में वासना का निखार आता। नये-नये फूलों की गंधों पर बेल की नई गन्ध कांपती और फलहीन बेरों के पेड़ों में फरफराती। और फिर फुलवारी में अजीब-अजीब समां खिलता।

गांवों में काम बढ़ गया था। खेती का इंतजाम था। अब गर्मी बढ़ी है। अब फसल पकेगी। रखवाली का काम बढ़ गया है। चोरों की बाढ़ आ रही है। उधर दिन उठने में कहीं ब्याह रचे जा रहे थे, कहीं सुहागनें रात-रात गाती थीं, और अब जो क्वारे लड़के इधर-उधर चलते थे तो उनके कांधे उमंग से भर उठते थे। और आंखों का ज्वार छोरियों के [illegible] पर जाकर टकरा रहा था। जंगल बगर [illegible], [illegible] हुमक उठे मानुस की तो बा[illegible] था!

मामे [illegible] गया था [illegible] और प्यारी भी [illegible] एक

नाम ही क्या ? मर क्यों न जाए ? पर नहीं ये लोग भयानक हैं बाके अभी तक कमीनी बातों का जाल बुन रहा है। उसे तो जीना ही होगा।

रुस्तमखां ने कहा : 'उस धूपों के पीछे पड़ा है। वह दो बच्चों की मां है।'

प्यारी के कान खड़े हुए।

बाके ने कहा : 'बात ही ऐसी है उस्ताद।'

'बेकार परेशान है तू।'

'उस्ताद, रहा नहीं जाता मुझसे। औरत ना कर दे, यह सुनना मेरी ताकत के बाहर है।'

उसके स्वर में घृणित वासना ऐसे बोल रही थी, जैसे बिच्छू अपना डंक मार रहा था। रुस्तमखां ने बड़ी भलमानसाहत से समझाते हुए उससे नर्म आवाज में कहा : 'पर उसमें कुछ हो भी तो।'

बांके की हंसी सुनाई दी। और फिर उसने गुंडेपन से एक आंख से देखते हुए कहा : 'उस्ताद, उसमें ना तो है। न-न करती को कुचलके, बाद में उसे देखके हंसने में बड़ा मजा आता है।'

उस वाक्य को सुनकर प्यारी के रोम-रोम में आग लग गई और उसे ऐसा लगा जैसे वह जली जा रही थी। वह उस विकराल कुरूपता की पराकाष्ठा को देखकर डरी नहीं। उसने दांत पीसे और पत्थर पर ही उसकी मुट्ठियां तन गईं और पेशी-पेशी घृणा से कठोर-सी हो चली। उसकी आंखों में खून छलक आया, खून ! उसकी इच्छा हुई कि वह बाके को काट-काटकर फेंक दे।

रुस्तमखां ने कहा : 'तो साली को कभी जंगल में घेर लीजो। आजकल अरहर खड़ी है।'

प्यारी ने इसे भी सुना और उसने मन-ही-मन कहा : 'एक दिन तुझे भी देख लूंगी। मैं भी नटिनी हूं।'

तभी रुस्तमखां ने कहा : 'तू घर न जाना।'

'क्यों।'

'अबे, खतरा है।'

'फिर क्या करूं ?'

'बाहर का दरवाजा बन्द कर ले और छप्पर में सो जा - वहां।'

बांके ने कहा : 'उस्ताद !'

'क्या है बे ?'

'मरा जा रहा रहा हूं।'

'बहुत चोट आई है ?'

'तुम्हारे पांव पकड़ता हूं।'

'क्यों आखिर ?'

'एक अद्धा मिल जाता।'

'थोड़ी-सी बची रखी है उस आले में। जा, ले ले।'

फिर लगा, अब वे अलग होंगे। प्यारी उसी रास्ते से अपने कोठे में लेट रही। रुस्तमखां भीतर कंबल लेने आया तो वह उसे सोती हुई मिली। उसने निश्चय करने को धीरे से पुकारा : 'प्यारी !'

वह न बोली।

'सो गई।' वह बुदबुदाया और उसने जोर से आवाज दी। प्यारी जैसे हड़बड़ाकर उठी

'कुण्डा चढ़ा ले ।' उसने कहा।

रुस्तमखां बगल के कोठे में चला और प्यारी ने कुण्डा चढ़ा लिया। कुछ देर बाद उसने खिड़की से देखा। बाहर छप्पर में बांके खाट पर बैठा पी रहा था और अपने जख्मों पर शराब मल रहा था। और कभी-कभी कराह उठता था।

प्यारी उसे खड़ी-खड़ी देखती रही। अपमान का गुबार उठने लगा और फिर सुखराम के शरीर से टपकता हुआ लोहू उसकी आखों के सामने समुद्र की तरह हिलोरें लेने लगा। प्यारी को लगा, सारी दुनिया उस लहू से भीगकर लाल हो गई है। कजरी कह रही है : प्यारी, बदला ले। तेरे सामने मौका है ! इसे चूक न जा।

सुखराम घायल लेटा है !! वह बदला नहीं ले सकता, न उस पर कोई शक कर सकता है। कजरी बैठी है पास !!! उसके ऊपर किसी की आंच नहीं आ सकती !!! और वह दूर !!! वह खुद सुखराम से दूर है !!

हृदय हाहाकार कर उठा।

दूर है !! दूर है !!! क्यो ? रुस्तमखां की वजह से। इसी कमीने की वजह से। वह तो रोक नहीं सकता !! वह चली जाएगी ! वह सुखराम के पास ही जाएगी ! पर क्या ऐसे ही चली जाएगी ? नहीं !! वह बदला लेगी !! और इस कमीने आदमी को सदा के लिए मिटा देगी जो पाप का भरा हुआ घड़ा है !! प्यारी इसमें से आती दुर्गन्ध को सूंघती है तो उसका भेजा सड़ने लगता है !!! वह उसे सह नहीं सकती !!

प्यारी की रगों में लहू तेजी से दौड़ने लगा। कनपटियां गर्म हो गईं। वह आज इसे मिटा देगी !!

कल सवेरे इसकी लाश पर सब थूकेंगे ! कौन जान सकेगा कि यह काम उसने किया है !! वह सिपाही के पास है !! उस पर कौन शक करेगा !!

आधी रात हो गई थी। प्यारी खिड़की से उतरी। उसने धीरे से एक पाव निकाला। फिर दूसरा। फिर मुंडेर पर खड़ी हो गई। उसके मुंह में दांत भिंचे हुए थे। उसने कुछ दूर मुंडेर का सहारा लिया। और आगे बढ़ी। फिर वह जब कोने पर आ गई तो दीवार छोड़ दी और झुककर उसने सामने छप्पर पकड़ा और उस पर धीमे से पाव जमा लिया। अब एक दम गिरनें का तो भय नहीं था। वह धीरे से आहट लेती रही। बांके सो रहा था। सामने का द्वार बंद था। रुस्तमखां भीतर था। प्यारी छप्पर से झूलकर नीचे उतर गई। अंधेरे में खड़ी रही। जब उसे विश्वास हो गया कि कोई नहीं देख रहा है, तब दीवार के सहारे-सहारे आगे बढ़ी। वह नितान्त दृढ़ थी। यह नहीं कि उसमें किसी प्रकार का भी भय हो।

उसने आंचल में हाथ डाला और कुछ चीज बाहर निकाली। और अब उसके हाथ में कटार थी। वह एक बार बांके को ओर देखती, फिर अपनी कटार की ओर।

उसने सांस रोक ली और चारों ओर देखा। कुछ नहीं। आकाश में धुंधले तारे टिमटिमा रहे थे। अंधेरी लौट-लौटकर काली हो गई थी और एक डरावनापन छा रहा था।

बांके सो ही रहा था। वह थक गया था। इस समय उसे सामने देखकर प्यारी को लगा कि जीवन की बहुत बड़ी कुरूपता उसीके हाथों समाप्त हो जाएगी। बांके ने करवट ली। वह डर गई। हृदय धड़क उठा। वह एकदम दीवार से सट गई।

वह दो क्षण-चुपचाप खड़ी रही। आहट लेती रही। कोई आवाज नहीं आई तब वह निश्चिन्त हुई। फिर उसमें साहस भर आया। फिर उसकी घृणा उसे उत्तेजित करने लगी वह अब केवल एक ध्यान की ओर केंद्रित होती जा रही थी जैसे उसके शरीर का रोम रोम प्रतिहिंसा की मूर्तिमान ज्वाला बन गया था।

फिर वह झपटी । अब वह क्रोध और आवेश से भर रही थी । उसने कटार वाला हाथ ऊपर उठा लिया और झटपट उस पर वार किया । मुट्ठे तक छुरा उसके हाथ में घुस गया । वह चिल्लाया लेकिन प्यारी ने उसके मुंह पर हाथ धरकर जोर से दबा दिया और इससे पहले कि अंधेरे में वह पहचाने था उठे, उसने उसकी आंख पर अपना घुटना मारा और छुरा खींचकर निकाला और कसके एक हाथ मारा और बांके अन्धा हो गया और फेन-सा उसके मुंह से निकल आया । अब वह चिल्लाया नहीं । उसमें मुड़ने का भी दम न था । प्यारी ने फिर छुरा गड़ाकर बाहर खींच निकाला, और फिर तीसरा हाथ मारा ।

पर तीनों वार दर्द वाले कंधे में लगे । वह अंधेरे में यह नहीं जान सकी । वह यही समझी कि काम हो गया है । अतएव उसने छुरा उसीके कपड़े में पोंछ दिया । पर वह मूठ तक भीगा था । रक्त टपकना बन्द हो गया तो छुरा उठा लिया । पहले ही बार में बांके नींद में चिल्लाकर बेहोश हो गया था । अतः वह उसे पहचान ही नहीं सका । बांके की सांस फंसी-फंसी सी चल रही थी । उसने देखा कि वह दम तोड़ रहा था और प्यारी को फिर वहां भय-सा लगा ।

प्यारी भागी । दीवार के सहारे आ गई और फिर इधर-उधर देखकर छप्पर पर चढ़ी । फिर कोठे की खिड़की में आई और भीतर उतर आई । आते ही पहला काम यह किया कि छुरा पोंछा और उधर जहां लकड़ियां, कण्डे और कूड़ा पड़ा रहता था, उनके भीतरी भाग में उस कपड़े को फेंक दिया ।

और ओढ़कर सो रही ।

बाहर रुस्तमखां का स्वर सुनाई दिया : 'अरे, कौन है !'

कोई नहीं बोला ।

फिर पुकारा : 'यहां कौन बोल रहा था अभी ?'

प्यारी ने सांस रोक ली ।

'कोई नहीं है ।' रुस्तमखां ने कहा : 'दरवाजा बन्द है । साला नींद में भी लड़ रहा है ।'

दरवाजा बन्द होने की आवाज आई ।

प्यारी उठी । उसने खिड़की से देखा । खाट पर बांके पड़ा था, यहां से साफ दिखाई दे रहा था । उसमें तनिक भी यह भाव नहीं था कि उसने मनुष्य की हत्या की थी । उसे तो यही लग रहा था कि उसने किसी बड़े क्रूर, विकराल, जघन्य, बर्बर पशु की हत्या की है, जिसे मार डालने में किसी भी प्रकार का दोष नहीं था ।

फिर वह सोचते-सोचते खाट पर लेट गई । आज शरीर फूल का सा था । अब वह बीमार नहीं लग रही थी । उसने इतने दिन में जैसे अपने पापों का प्रायश्चित्त कर लिया था । कजरी के साथ पली हुई उस खानाबदोश करनटनी को आज बहुत दिन बाद ऐसा लगा कि वह स्वतन्त्र हो गई है । उसे कोई डर नहीं हैं ।

उसे स्वयं इसपर ताज्जुब हो रहा था कि उसने इस सफाई से कटार चलाई कैसे । आज जाने कितने बाद ऐसी नौबत आई थी । आखिरी बार जब उसने कटार चलाई थी तो भी वह कई बरस की बात है । तब इसीला जिन्दा था । मनको हुंग दी थी । कुछ नहीं, एक गुड़ की भेली के पीछे किसी नटिनी से लड़ाई हो गई थी । वह उसे चुराकर खा गई थी । उस दिन बड़ी मुश्किल से बीच-बचाव हुआ था । सुखराम ने सुना था तो पूछा था, कहीं लगी तो नहीं । बस और कुछ नहीं । सच तो यह है कि वह पहले था ही सीधा । प्यारी इस बात को सोचने लगी कि कजरी के साथ उसकी कैसे पटेगी ।

अच्छा बांके तो मर गया !

अब !!

सवेरे रुस्तमखां को पता चलेगा तो चौंकेगा ! कहीं मुझे न पकड़े !

सो कैसे पकड़ेगा ? मैं सच न फंसा दूंगी। मैं तो ऊपर सो रही हूं। कुण्डी भीतर से बन्द थी। मैं बीमार भी हूं।

न जाने और भी ऐसे ही वह क्या-क्या सोचती रही कि उसे नींद आ गई और आज कैसे वह घोड़े बेचकर सोने वाले सौदागर की तरह सो गई थी ! उसे एक सपना तक नहीं आया।

रात का अंधियारा अब उसकी खिड़की पर हवा के झोंकों के साथ आ रहा था। सुनसान पर कुत्ते भौंकते थे और सनसनाती हवा दूर-दूर तक कांपती हुई-सी फैल जाती थी।

रुस्तमखां भी सो रहा था। उसकी नींद टूटी थी और बुखार के बाद की कमजोरी ने उसे ऐसा गिराया कि वह बहुत गहरी नींद में बेहोश-सा लेट गया। चारों ओर प्रशान्त अंधकार था। और कुछ नहीं। नितान्त नीरवता के साम्राज्य में एक शब्द भी सुनाई नहीं देता था।

दो घंटे बाद शायद बांके को होश आया। दर्द के मारे वह मरा जा रहा था। गला सूख गया था। हलक में से आवाज नहीं निकल रही थी। कुछ देर पड़ा रहा। जब प्यास बहुत तेज हो गई तो वह रुक नहीं सका। अगले गाबुन जाथ का बड़ी मुश्किल से सहारा लेकर वह लड़खड़ाकर उठा, हालांकि इतने में ही उसका प्राण आकर कण्ठ में एकत्र हो गया, क्योंकि पुरानी चोट पर नई चोट ने गजब ढा दिया था। वह लगा। उस लगा। वह चक्कर खाकर गिर पड़ेगा। बड़ी ही मुश्किल से धीरे-धीरे घसीटता हुआ किसी तरह आगे बढ़ा और उसने द्वार खटखटाया

रुस्तमखां सो रहा था। और बांके के लिए मुसीबत थी कि हाथ ठीक से नहीं उठते थे।

भर्राए स्वर में पुकारा : 'उस्ताद ! उस्ताद !!'

उस आवाज के कीड़े दरवाजों की संधों में घुस गए और रुस्तमखां के कानों में जा घुसे, जैसे वे उनके लिए बने हुए पुराने बिल थे।

रुस्तमखां जाग गया। उसे डर लगा। यह कौन आवाज है, आज तक इसे सुना नहीं। वह कांप गया।

'कौन है ?' उसने पूछा।

बांके ने अपने भर्राए स्वर में कहा : 'खोलो दरवाजा, तुम्हारा बांके हूं। मैं हूं बांके।'

बांके का स्वर दूसरा था। रुस्तमखां कमजोर था ही। उसे विश्वास नहीं हुआ। [illegible] उसने टालने के लिए लेटे ही लेटे उसके घाव पर नमक छिड़का : 'क्या है बे ? सोता क्यों नहीं ?'

बांके के आग लग गई। एक तो पीड़ा और फिर यह विचार कि उठकर दरवाजा खोलने में कष्ट होगा, इसलिए टाल रहा है। उसने चिढ़कर कहा : 'मरा जा रहा हूं उस्ताद ! कोई छिपके मार गया मुझे तो।'

'कौन मार गया ?'

'अब यह मैं क्या जानूं ? कोई तुम्हारा ही आदमी रहा होगा।'

'क्या बकता है ?' रुस्तम ने डांटा : 'मेरा आदमी ! होश में है कि साले लात दूं [illegible] आकर ? बहुत शराब पी गया लगता है सो जा जा

बकता हूं या दम निकला जा रहा है बांके धम से वहीं बैठ गया और कहने

लगा : 'दो लात तुम भी दे लो,' वह रो रहा था : 'मैं तो मरूंगा ही, यहीं जान दे दूंगा। तुम्हारे ही दरवाज़े में मेरी ल्हास निकलेगी।'

रुस्तमखां डर गया। उसे लगा, सचमुच कुछ गड़बड़ हो गई। लाचार बुरा मानता हुआ उठा। अभी तक उसके हृदय में बांके के रोदन से तनिक भी संवेदना पैदा नहीं हुई थी। और नींद बिगड़ने का उसे बड़ा मलाल था। आखिर लालटेन लेकर निकला।

बांके ने उसके पांव पकड़ लिये और रोया : 'मुझे क्यों मरवा दिया तुमने? मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा था? बदला लेना था तो अभी! तुमने इस कदर जुलम किया है मालिक!'

'क्या है बे?' रुस्तमखां चौंककर हट गया। फिर कुछ रुककर बात समझकर, रोशनी कन्धे के पास ले जाकर गौर से देखा। बांके भयभीत-सा खड़ा हो चुका था। उसका शरीर कभी-कभी डर से कांप उठता था।

बांके के कंधे पर गहरे निशान थे।

'अबे, ये तो तीन निशान हैं?' रुस्तमखां ने कहा।

बांके रोया।

'रोता क्यों है? मर्द होकर रोता है?'

'उस्ताद, इस मर्दानगी से औरत होना अच्छा था।'

'पर हर बार कटार बेदरदी से खींची गई है और इससे जख्म काफी नीचे तक गए हैं।'

'उस्ताद, तुमने मुझे इसीके लिए रोका था!'

'अबे, क्या बकता है यह?' रुस्तमखां ने चौंककर कहा।

'फिर कौन आया था?'

'ज़रूर कोई आया है।'

रुस्तमखां आंगन में कूद आया।

'कौन है उस्ताद?'

'कोई नहीं।'

'दरवाज़ा भी बन्द है। कोई आता भी कहां से?'

'यही तो मैं भी सोचता हूं।'

'उस्ताद, तुम सोचते रहना। अब तो तुम्हारे यहां की खाटें भी कटारें भोंकने लगीं। मरवा दिया तुमने।' वह फिर कायरों की तरह रोने लगा। वह सचमुच उस जालिम से डर गया था।

सुबह देखा, प्यारी की तरफ के छप्पर में कुछ भी नहीं था। जहां से वह नटनी चढ़ी थी, फूस खिंच आया था।

'इसका मतलब है, हमलावार इधर से आया था!' रुस्तमखां ने कहा।

उस तरफ चमरवाड़ा था।

बांके ने दूसरे हाथ से मूंछों पर हाथ फेरा और कहा : 'जरा हाथ ठीक हो ले तो एक-एक को ···'

वह गुस्से के मारे कह नहीं सका।

प्यारी आज उठी तो देह हल्की थी। उसका मन प्रसन्न था। जैसे तरकारी-भाजी बाड़ी को खा जाने वाली सेही को मारकर किसान को आनन्द आता है। और दूसरे दिन वह अपनी सब्जियों को देखता है कि सेही की अनुपस्थिति में उसकी सब्ज़ी कितनी बढ़ गई है, उसी प्रकार प्यारी ने आंगन में निकलकर देखा

वहां कोई नहीं था। उसे आश्चर्य हुआ। हो सकता है कि गिरा भीतर ले आया हो। पर मरे को उठाने से फायदा ही क्या!

उसने मुंह धोया और नीचे उतर आई। देखा, कोठे में बांके बैठा था। रुस्तमखां गंभीर था। दोनों को चुप देखकर प्यारी ने कहा: 'क्या हुआ?'

'देख!'

प्यारी ने देखा। बाल-बाल बच गया था। वह कांपी। कहा: 'हाय, किसी बड़े निर्दई की लाग है?'

'कोई चमरवारे का आदमी था।' बांके ने कहा: 'देख, वह छप्पर...'

प्यारी अब कांप उठी। वह समझ गई कि निर्दोषों पर वज्र गिरेगा।

19

गोली खतम होने को आ गई। और रुस्तमखां की तन्दुरुस्ती पहले से बहुत अच्छी हो गई थी।

उसने कहा: 'तू कैसी है?'

प्यारी ने कहा: 'अच्छी हूं। तुम कैसे हो?'

'फायदा तो मुझे भी है।'

'फिर और क्यों नहीं मंगवाते किसीको भेजकर?'

'भेजूं किसे?'

प्यारी ने कहा: 'अरे, इतने आते-जाते हैं। किसीसे कह दो। हुकुम टाल थोड़े ही सकता है।'

'पर मैं सोचता हूं, वह भी तो घायल है।'

'तो क्या हुआ!' प्यारी ने कहा: 'गोली बनाने में क्या लगता है! मैं वहां थी, तब तो यों ही बना-बनाके बांटा करता था लोगों को। मैं देखती न थी तब?'

रुस्तमखां ने कहा: 'तब ठीक है, मैं देखता हूं।'

'तुम समझते नहीं, इस इलाज में लगातार दवा पहुंचने का ही गुन है!'

'सो तो मैं जानता हूं।'

'अरे, खाक जानते हो। अभी कहते थे, आदमी नहीं है।'

प्यारी की मीठी-मीठी बातों से रुस्तमखां चक्कर में आ गया। वह समझ न सका।

चक्खन आ गया था।

'क्यों चक्खन,' प्यारी ने कहा: 'जमादार की तन्दुरुस्ती कैसी है?'

'बहुत अच्छी है।' चक्खन ने तारीफ में कहा।

प्यारी ने आंख से इशारा किया और बोली: 'लो देखो, मैं न कहती थी चक्खन! तुम्हारे जमादार दवाई नहीं खाते।'

'तुम्हें मेरे सिर की कसम है जमादार!' चक्खन वफादार ने कहा। मुंह-जबानी हमदर्दी में वे गांव में सबको हराते थे।

'तू चला जा चक्खन!' प्यारी ने दयनीय स्वर में कहा। अब वह अपनी दवा चाहती थी। जीवन के प्रति एक नया विश्वास आ गया था। सुखराम से मिलने का यही रास्ता रह गया था।

'कौन मैं?' चौंका उसे अब लगा कि वह गलती कर गया है पर अब मौका हाथ से निकल चुका था

'क्या, तू डरता है ?' प्यारी ने कहा।

'चला जाऊंगा। पर कहीं मारेगा तो नहीं ?'

'मारेगा ?' प्यारी ने आश्चर्य से पूछा। जैसे चक्खन-जैसा वीर और ऐसी ओछी बात कहे। भला प्यारी उसे कैसे मान ले ! वह तो ऐसा सोच भी नहीं पाती।

'कम्बख्त में राक्षस का बल है।' चक्खन को अपनी जान की पड़ी थी। उसे इसके ताज्जुब से क्या लेना-देना था। वह अब अपने आगे-पीछे की सोच रहा था। सच तो यह था कि वह ऐसे ही काम को काम कहता था जिसमें कुछ लाभ होता दीखता था। परोपकार को वह सबसे बड़ी मूर्खता कहा करता था।

'तू भी तो यादो छत्री है। चक्खन !' प्यारी ने कहा। और उसकी ओर गहरी दृष्टि से देखा जिसमें हिराकत भरी थी। चक्खन वह दृष्टि सह नहीं सका। वह दृष्टि नहीं थी, चुनौती थी।

एक तो अहीर क्षत्री बन गया ? फिर औरत की बात ! मरद हजार कहे तो बन्दर भगाने न जाय। औरत का मौका आए तो चीते तक के सामने अड़ जाय ! एक ही चोट काफी रही। चक्खन खड़ा हो गया। बोला : 'मैं जाता हूं।'

जब वह सुखराम के डेरे पर पहुंचा तो सुखराम सो रहा था।

'क्यों, सुखराम यहीं रहता है ?'

'हां।' कजरी ने पूछा : 'तुम कौन हो ?'

'मैं चक्खन हूं।'

'चक्खन हूं !' कजरी ने कहा, 'तहसीलदार हो, दरोगा हो, लाट साहब हो कि नाम से ही मैं समझ जाऊंगी ? क्या काम करते हो, बताओ !'

'अरी, मैं रुस्तमखां का भेजा हुआ हूं।' चक्खन झेंप और खिसियाकर कहा।

'कौन रुस्तमखां ?' वह जानबूझकर बनी।

'वही सिपाही, जिसकी आजकल सुखराम की बहू रखैल है।' उसने व्यंग्य किया।

'अरे, तो !' कजरी ने कहा : 'पहले क्यों न कहा, कि तू मेरी सौत का नौकर है !

'ऐ-ऐ, होश से बोल !' चक्खन ने कहा : 'नौकर होगा कोई और ! मैं तो दवा लेने आया हूं।'

'कैसी दवा ?'

'रुस्तमखां ने मंगाई है।'

कजरी ने हाथ उठाकर डेरे के भीतर इशारा किया और कहा : 'वह सो रहा है।'

'कौन ?'

'सुखराम ?'

'अरी, तो वह जागेगा नहीं ?'

'देर में सोया है।'

'अरी, चल-चल, जगा दे उसे ! क्या जमाना आ गया है !' चक्खन ने कहा : 'तू कौन है ?'

'मैंने कहा तो,' कजरी ने कहा : 'तेरी मालकिन की सौत हूं।'

कजरी उसके पास चली गई।

'देख, फिर तूने वही कहा,' चक्खन बोला : 'तुझमें बिलकुल तमीज नहीं। कैसे बालती है !'

'अच्छा, तो तू उसका काम क्यों करता है ?'

'वह मेरा दोस्त है !'

'कौन दोस्त है ? कलमुँहा ! वह तो सिपाही है। उसकी-तेरी क्या होगी ? तू क्या काम करता है ?'

'मैं यादों छर्वा हूं।'

'ठाकुर !!' कजरी ने कहा : 'बड़े भाग !'

अब चक्खन का साहस बढ़ा। उसने हाथ उठाकर कहा : 'भीतर जाकर उसे जगा दे ?'

'तेरे बाप को नौकर हूं जो···!' कजरी ने कहा।

'बाप रे, बड़ी लड़ाका औरत है !'

'औरत होगी तेरी लुगाई ! समझा ? मुझसे और न कहियो।'

चक्खन सकते की-सी हालत में पड़ गया। कजरी ने कहा : 'क्यों रे ! इधर-उधर का काम करता डोलता है रुपया-पैसा महीना में तुझे वहां मिल ही जाता होगा ? और कौन किसीसे बिना पैसे बात करता है, सब टुकड़ों के मुहताज होते हैं।'

'बोलती कैसे है ?'

चक्खन ने कहा और बैठ भी गया; परन्तु उसमें उसे घोर अपमान लग रहा था। गांव वाले सुनेंगे तो कहेंगे कि नट के द्वार पर बैठा रहा। इतना भी दबदबा नहीं रहा कि नट हुकुम पर काम करते। और कजरी सामने अभी टेढ़ी खीर बनकर खड़ी थी।

वह जोर से बोला : 'मैं कहता हूं···'

'चिल्लावै मत, जग जाएगा। बड़ी देर से सोया है।' कजरी ने और जोर से कहा। चक्खन कायर आदमी। दब गया।

थोड़ी देर और बैठा रहा। कजरी डेरे में गई तो उसे ढाढ़स हुआ कि अब यह उसे जगा देगी। विचार आया कि बिना जोर-जबर के नीचों से काम निकलता ही नहीं। जब तक चुप बैठा था सुनती ही नहीं थी, अब डांटा तो गई भीतर। पर कजरी बाहर आ गई।

'तो मैं क्या बैठा रहूंगा ?' उसने कहा।

कजरी भीतर फिर चली गई। भीतर उसने डेरे के कोने में पड़ी घास इकट्ठी की और पीछे की तरफ से जाकर घोड़े को डाल दी। घोड़े पर हाथ फेरा और जब घास खाने लगा तो फिर सामने आ गई। चक्खन का बांध अब टूट गया। कजरी को देखकर कहा : 'तो क्या यहीं समाध लगा दूं ?'

'चला जा। मैंने कब बैठने को कहा ?' कजरी ने उत्तर दिया और फिर सूरा की कठौती धोने लगी। सूरा ने कहीं दूर से अपना इन्तज़ाम होते देखा तो तुरन्त आ गया। मोटा और मजबूत कुत्ता देखकर चक्खन जरा साध में पड़ गया। कुत्ता आया और उसने चक्खन की बगल में खड़े होकर देखा और जैसे आगन्तुक का स्वागत किया, उसकी पीठ की तरफ सूंघा। चक्खन को लगा कि अब काटा। कुछ पीछे सूरा की खातिर बहाने के लिए चक्खन ने पीठ खुजाई और कंधे के पीछे झांका। कुछ नहीं था। चेतना लौटी।

'मैं जगा लूं ?' चक्खन ने उठते हुए कहा। वह उठा तो इसलिए था कि कुत्ते के बवाल से बचे। परन्तु कजरी समझ गई। मन-ही-मन मुस्कराई। समझ गई, बड़ा ही पोच है। परन्तु बोली कुछ नहीं। कुत्ता और पास आया। चक्खन जरा और आगे गया। खीझकर बोला : 'तू तो कुछ सुनती ही नहीं।'

'तू समझा होगा अकेली हूं ? तेरे-जैसों के लिए तो मैं ही बहुत हूं।' कजरी ने उत्तर दिया

चक्खन ने कहा : 'धरम तो करम के ऊपर होता है।' और उसने विजय की दृष्टि से उसकी ओर देखा, जैसे स्त्री को पराजित करने में देर ही कितनी लगती है। परन्तु कजरी ने कहा : 'तेरी मैन-बेटी ने ही तुझे यह धरम सिखाया होगा ?'

चोट मर्म पर पड़ी। चक्खन तिलमिला गया। कजरी मुस्कराई। चक्खन जवाब न दे सका। वह सकते की-सी हालत में पड़ गया था। कहे तो क्या कहे ! पर अब बैठना भी असम्भव था। इतनी करारी चोट पड़ी थी कि उसकी अन्तरात्मा तक को झकझोर डाला गया था। उसकी जघन्यता इतनी नग्न थी कि वह उसे देखकर स्वयं ही लज्जित हो उठा था। उधर स्वार्थ था। दोनों ढोर उसकी ओर देख रहे थे। फिर सिपाही का क्या ठीक ! कहीं बिगड़ गया तो ! ! एक ले-दे के सहारा है, वह भी टूट जाएगा। इसी कशमकश में उसके कुछ क्षण बीत गए। तब वह अन्त में निराश होकर चिल्लाया : 'मैं जा रहा हूं। समझी ! कह दीजो अपने खसम से कि मैं नहीं रुकता।'

'चला जा, चिल्लावै मत !' कजरी ने कहा : 'वह तेरे बाप का नौकर नहीं है।'

'देख, तू ठीक से बोल, नहीं तो···।'

'नहीं तो तू मुझे सूली दे देगा न ?' कजरी ने कहा : 'फिर तो चिल्ला के देख !'

सुखराम की नींद खुली। उसने सुना, कोई चिल्ला रहा था : 'हरामजादी ! नटिनी ! तू समझती है, मैं तुझसे डर जाऊंगा ?'

'गाली मत दीजो मैं कहती हूं।' कजरी का स्वर सुनाई दिया। वह स्वर कठोर था।

सुखराम उठा। बाहर एक आदमी खड़ा है। मुंह देखा। चक्खन था। सुखराम को हंसी आ गई। चक्खन गुस्से में है और मुंह चला रहा है और देखा, कजरी हाथ में जूता लिये खड़ी है।

'अब के दे गाली !' कजरी ने कहा।

'तू ही तो बकती थी।'

'मैं कब बकी, बोल···'

चक्खन चिल्लाया : 'मैं कहता हूं···'

'मैं कहती हूं पुकारै मत !' कजरी ने कहा : 'वह सो रहा है। अच्छा नहीं होगा। कह दीजो अपने सिपाही से, जेल में डाल दे। सह लेंगे सब ! समझा ! हमारे पास जमीन-जैजात नहीं कि डर जाएं। जान है तो जहान है। यहां है तो यहां हैं, नहीं तो कहीं और हैं। धरती अपनी नहीं, घर नहीं, पर नींद अपनी है, समझा ! उसे हमसे कोई नहीं छीन सकता। गोली लेनी है लो पड़ा रह। नहीं लेनी है, हम खबर भेज देंगे कि गोली क्यों नहीं मंगाते। कोई आदमी क्यों नहीं भेजा आज तक !'

'और मैं जो आया हूं ! !' चक्खन ने पूछा।

'अरे कौन है ?' सुखराम ने कहा।

वह बाहर आया तो कजरी मुंह पर घूंघट डाल भीतर चली गई। चक्खन को लगा कि अब पिटा। उसने सुना तो था कि वह घायल हो चुका था। पर भय की तो सीमा नहीं होती। उसके पौरुष की अमूत गाथाएं सुनकर उसका दिल पहले ही कमजोर हो चुका था। अब कहीं नींद टूटने से तो बाहर नहीं निकला है ? फिर भी जी कड़ा करके खड़ा रहा और कहा : 'मैं हूं चक्खन !'

'कैसे आए भाई ?'

चैन पड़ा। जान में जान आई। बोला : 'यह तुम्हारी औरत···'

वह कह नहीं पाया था कि कजरी फिर बाहर टूटी फिर तूने मुझे औरत कहा ?

दे ना सुखराम ! दे ना [illegible] गिड़गिड़ाया

सुखराम ने बोला : 'कजरी !'

कजरी भीतर चली गई ।

कुछ देर बाद जब सुखराम भीतर आया तो उसने देखा, कजरी खाट पर पड़ी-[illegible] हँस रही थी ।

'अरी, क्या बात है आज ? क्यों हँस रही है ?' उसने पूछा ।

'हँसूगी नहीं ?' उसने धीमे से कहा, 'बड़ी देर से मैंने इससे बक-बक की है ।'

'क्यों भला ?'

'कहता था, जगा दे !'

'तूने जगा क्यों न दिया ?'

'सो क्यों जगा देती !' कजरी ने हँसकर कहा : 'ऐसा-ऐसा खिसियाया है कि [illegible]ह नहीं सकती ।'

'तू बड़ी मक्कार हो गई है !'

'तेरी कसम ! तैंने बना दी है ।'

'मैंने ? यह भी मेरा कसूर है ?'

'बिल्कुल ! जब से तेरा संग हुआ है, मुझे डर नहीं लगता । चाहे जिससे अकड़ [illegible]ने की इच्छा होती है ।'

तब सुखराम ने फेंटा सिर पर धरा, तो वह चौंकी ।

'क्या बात है ?' उसने पूछा ।

'अरी, वह आया है न ?'

'तो तू जंगल जा रहा है दवाई लेने ?'

'हाँ । न जाऊँ ?'

कजरी ने उत्तर नहीं दिया । उसके मुख का आह्लाद ऐसे हट गया, जैसे किसी [illegible]त्थर तोड़ने वाले की सख्त उंगलियों ने गुलाब की पंखुड़ी को मसलकर फेंक दिया हो । उसकी आँखों में विषाद की गहरी छाया उतर आई और फिर उसमें एक तरलता काँप उठी । सुखराम ने देखा, वह रो रही थी ।

'क्यों रोती है ?' उसने पूछा ।

कजरी ने मुँह छिपा लिया । अभी वह जिस खाट पर पड़ी-पड़ी अकेली हँस रही [illegible]ी, वहीं वह पड़ी-पड़ी रो रही थी । अचानक ही आकाश में निकला हुआ इन्द्रधनुष ढक [illegible]या और काले-काले बादल घुमड़ आए । सुखराम को आश्चर्य हुआ । फिर पूछा ।

परन्तु कजरी ने उत्तर नहीं दिया । उसके मन में कचोट थी । वह स्वतन्त्रता की [illegible]ावना खो गई । उसे महसूस हुआ कि वह निरीह थी । उसका संबल ही निरीह था । [illegible]यों ? क्या वह डरती है ? डरे क्यों नहीं ? स्त्री और बच्चा अपने को एकदम आज़ाद [illegible] समझते हैं ? पर वह तो जिम्मेदारी नहीं भूल सकता । अगर वह भी [illegible] लोगों को [illegible]वाब दे उठे, तो [illegible] कोई [illegible] नहीं देगा ।

किन्तु यही तो वह [illegible] नहीं था [illegible] था । न जाने कहाँ एक [illegible]ोटी-सी ईर्ष्या की अनी थी जो हृदय के भीतर गड़ी हुई कसमसा रही थी । उसी के [illegible]ारण तो आ रहा है, अन्यथा वह आता ही क्यों ? पर क्यों न आए वह ? जाता है तो [illegible]ाए, अपनी भी [illegible] नहीं । वह अपने से [illegible] रखता है उसे ? यानी मैं तो कुछ [illegible] ही नहीं ।

सौत का यह प्रभुत्व उसकी आत्मा को झकझोर उठा । उसको लगा, वह निरा-[illegible]ार है । उसका अपना कोई नहीं है । कोई नहीं है । सब होने वाले झूठे हैं ।

'चला जा, जीत के न आयो!' कजरी ने कहा। उसके स्वर में असीम व्याकुलता थी। सुखराम ने सुना तो उसके दिल पर धक से चोट हुई। यह क्या हुआ? वह देख ही रहा था कि उसमें कितना परिवर्तन कितना शीघ्र आया था। क्या वह स्वयं उसके लिए जिम्मेदार नहीं है! उसीके कारण तो यह सब हुआ है। उसका मन भीतर ही भीतर व्याकुल हो उठा।

'क्या कहती है कजरी?' उसने अचकचाकर पूछा।

'क्या कहती हूं? तू नहीं समझता?' कजरी ने प्रतिवाद किया : 'मैं क्या अपने लिए कहती हूं? आखिर मुझे अपना कोई ख्याल नहीं?' कजरी की बात में कितनी सचाई थी! सुखराम इसका अन्दाजा नहीं लगा सका। कजरी ने ही फिर कहा : 'मैं अपने स्वारथ की बात ही कहती होऊं, सो बात नहीं है। तू ही क्यों नहीं मानता, क्या तू इस लायक है कि इस हालत में जंगल जाकर अपना काम अपने-आप कर आए?'

'कल भी तो गया था!' उसने कहा।

'तू गया था। पर साथ में संग था, वह थी, मैं थी। तू अकेला तो न था!'

कजरी की बात ठीक थी। सुखराम कुछ देर को चुप हो रहा। बाहर सक्खन घबरा रहा था। सुखराम ने धीरे से कहा, 'कजरी! मैं क्यों जाता हूं, जानती है?'

कजरी ने मुंह फेर लिया। वह मान था। युगों से पति-पत्नी के प्रेम का एक आनन्द बनकर यह झूठा युद्ध रहा है, जिसमें जान-बूझकर लड़ा जाता है, और फिर अपने मुंह से कहने को, बार-बार उसी बात को दुहराने के लिए जैसे स्वांग रचा जाता है। बुरा मानना हो मान जाओ, अपनी बला से—यह भाव उसमें नहीं रहता। उसमें यह है कि तुमने ऐसी बात कही ही क्यों जो मुझे अच्छी नहीं लगी! परन्तु यह मान नहीं था।

कजरी ने देखा, सुखराम कुछ और कहना चाहता है।

सुखराम ने कहा : 'वह बीमार है!'

बस! और कुछ नहीं। कजरी की कल्पना ठीक निकली। उसी के लिए जा रहा है यह। यह उसके सामने अपने को कुछ नहीं गिनता, यानी मुझे कुछ नहीं गिनता। मेरी सत्ता क्या है? उसके सिलसिले में ही कजरी की अहमियत है, बीच में से कहीं से शुरू होती है, बीच में ही कहीं जाकर खतम हो जाती है। प्यारी ही आदि है, वही अन्त है, सुखराम उसका एक माध्यम है।

'प्यारी बीमार है।' कजरी ने कहा, 'जानती हूं, तुझे उसकी बड़ी फिकर है। पर जितना ध्यान तुझे उसका है, उससे थोड़ा भी अगर…'

वह कह न सकी। रो पड़ी। अपने लिए वह अपने-आप कैसे कहे, जब उसका कमेरा ही उस पर ध्यान नहीं देता!

सुखराम पास आ गया। कहा : 'कजरी!'

'क्या है!!'

'मुझे तेरा क्या ध्यान नहीं?'

कजरी चुप हो गई है।

'मुझे उसका इलाज करना है।'

'तो कर।'

'तू नाराज है?'

'क्यों होऊंगी? यह तो अच्छा ही है। कल को अगर मैं बीमार पड़ गई, तो मन से भले ही नहीं पर दिखावे को तू यह सब मेरे लिए भी करेगा ही'

क्यों क्या तुझे मुझ पर भरोसा नहीं?

'नहीं।' कजरी ने कहा।

सुखराम देखता रहा।

कजरी ने कहा : 'चल ! मैं चलती हूं तेरे साथ।'

'कहां ?'

'जंगल में।'

'क्यों, चक्खन है तो सही।'

'अरे, यह पहले ही भाग जाएगा।'

फिर कजरी ने कहा : 'चक्खनसींग।'

चक्खन ने कहा : 'क्या है ?'

'जंगल चल रहे हो ? मैं चलूंगी भला।'

चक्खन झेंपा। डरा भी। बोला : 'मैंने क्या कहा है भौ !'

'तो क्या मैं कुछ कहती हूं ?'

बाहर आ गए। तीनों चले।

कजरी ने कहा : 'क्यों चक्खन ! इसे लौटा दूं ?'

चक्खन कांप गया। सुखराम ने गूढ़ दृष्टि से उसे देखा। वह घबराया। बोला : 'मैं यहीं बैठा रहता हूं। तुम लोग लौट आओ।'

'क्यों ?' कजरी ने कहा : 'तू क्यों नहीं चलता ?'

'मैं यहीं ठीक हूं।'

'अरे, चल भी।' कजरी ने कहा : 'यह बड़ा भयानक है। अभी चाहे तो यहीं कत्ल कर दे।'

'राम-राम !' चक्खन ने कहा : 'हाय ! हाय ! मर गया !'

और बैठ गया।

'अरे, क्या हुआ ?' सुखराम ने कहा।

'भइया,' चक्खन ने कहा : 'मुझसे चला नहीं जाता, बड़ी जोर की मोच आ गई। हाय, घर तक कैसे पहुंचूंगा ?'

कजरी ने कहा : 'अरे, यह तो मामूली-सी बात है। कह तो, कहां दर्द है !'

उसने झूठे को ही कहा : 'यहां।'

कजरी ने कसके उसके टखने में लात दी। चक्खन लोट गया। सुखराम को हंसी आई। पर वह दाब गया। कहा : 'अब तो मोच ठीक हो गई होगी ?'

'अभी दरद है।' चक्खन ने कहा।

'तो कजरी, फिर से उतार।'

'नहीं परमेसुरी !' चक्खन ने घिघियाकर कहा : 'अब उतरी ही समझ।'

'क्यों चक्खनसींग,' कजरी ने कहा : 'धर्म कहां से कहां तक होता है ?'

'चोटी से एड़ी तक।' चक्खन ने कहा।

'तो उठ।' कजरी ने कहा : 'अब मत छेड़ियो किसीको। कोई नहीं मारने वाला है तुझे। जल्दी चल।'

सुखराम पूरी बात तो नहीं समझा। पूछा : 'क्या, बात क्या है ?'

'कुछ नहीं। ऐसे ही।' चक्खन ने कहा और दयनीय दृष्टि से कजरी को देखा।

कजरी ने कहा : 'जंगल आ गया। जल्दी दवाई ले ले। फिर चल।'

धूप चढ़ गई थी।

जंगल में लौटे तो सुखराम ने कहा : 'कजरी !'

'क्या है ?'

'इसे पीस दे पहले । गोली बना दूं ।'

'ला ! दोनों दे दे ।'

कजरी ने रूखड़ी ली और कहा : 'चक्खन, एक काम करेगा ?'

उसकी मीठी आवाज सुनकर चक्खन बोला : 'कहके तो देख !'

'देख ! मेरा हाथ घिरा है ।' कजरी ने कहा : 'जरा घोड़े के आगे घास सरका आ ।'

चक्खन फिर मारा गया । लाचार गया । लौटा तो कजरी ने कहा : 'चक्खन, तू बड़ा अच्छा आदमी है । मैं ही मूरख हूं जो तुझ-जैसे भले आदमी को मैंने इतनी खरी-खोटी सुनाई ।'

'अरे, क्या कहती है ?' चक्खन ने कहा ।

'तू मुझे माफ कर दे चक्खन ! नहीं तो मुझे मन में गांस गड़ी रहेगी । तुझसे मैंने काम और करा लिया ! तुझे बुरा लगा होगा ?'

'बिल्कुल नहीं ।' चक्खन ने कहा : 'तू कैसी बात करती है ! काम तो तूने बताया ही नहीं ।'

'अच्छा, तो एक डोल पानी खींच ला न कुएं से ।'

चक्खन चला गया । फिर मन में खिजलाया । मुसरी ने फिर काम पर लगा दिया । पानी लाकर रखा तो कहा : 'ले, बस !'

'अरे, तू तो बुरा मानता है ।'

चक्खन रूठा हुआ था । बोला नहीं ।

'मै तो जानती थी ।'

'क्या ?'

'तू गुस्सा है । तूने मुझे अभी माफ नहीं किया ।'

चक्खन ने कहा : 'अब तुझे कैसे समझाऊं ?'

कजरी ने रूखड़ी पीस के सुखराम को लगा दी ।

'यह क्या ?' चक्खन ने कहा : 'तूने वह वाली नहीं पीसी ?'

'हाय, कैसा आदमी है !' कजरी ने कहा : 'जरा खबर नहीं । दना नलके आया है, उसका मुझे खयाल ही नहीं ।'

'पर वह क्यों नहीं पीसी ?'

'अरे, तू बढ़-बढ़कर बोला है फिर ! ऐसा ही बड़ा गैरख्वाह है तो तू ही न पीस ले । धरी है सामने । मुझे तो बहुत काम है । काम हम करें, वाहवाही तू लूटे !'

वह भीतर चली गई । लाचार चक्खन ने रूखड़ी पीसी । सुखराम मुस्कराता रहा और वहीं बैठकर हुक्का पीता रहा ।

भीतर से कजरी निकली । चक्खन पीस चुका था ।

'बड़ी देर हो गई !' कजरी ने कहा ।

चक्खन ने देखा और कहा : 'हाय, मैं तो मर गया !'

चक्खन की व्याकुलता देखकर सुखराम ने गोली बनाना प्रारम्भ कर दिया और जल्दी ही बना दी । जब चक्खन चलने लगा तो कजरी ने टोका : 'सुनो ठाकुर साब !'

'क्या है ?'

'रोटी तो खाते जाओ ।'

चक्खन भाग चला । सुखराम ने डांटा : 'क्या बकती है ?' वह हंसकर भीतर चली गई और कुछ देर में ही रोटी ले आई

जरी सोचन ल गी

'क्या सोचती है ?' सुखराम ने पूछा ।

'कुछ भी नहीं ।'

'तुझे कसम है, बता दे ।'

'सोचती हूं, तू प्यारी के लिए उस हाल में भी गया था ।'

'नहीं जाना चाहिए था ?'

कजरी ने उत्तर नहीं दिया ।

'यों सोच,' सुखराम ने कहा : 'कि मैं बैद बनके गया था । सबको चंगा करना है कजरी ।'

'मुझे धरमात्माओं से डर लगता है ।'

सुखराम हंसा ।

कजरी ने नकल की—'ह ह ह...'

सुखराम खिसिया गया । पूछा : 'क्यों हंसती है ?'

'हंसती हूं कि रोती हूं । अकल के मट्ठे ! अगर तुझे कुछ हो गया तो मैं कहां जाऊंगी, क्या करूंगी ? प्यारी मुझे रोटी दे देगी ! तू तो उसके पीछे डोल, मैं तेरे पीछे-पीछे डोलूं । तैंने मुझे अच्छा बेवकूफ बना रखा है । साबास रे छैला ! भला मैंने तुझे ...ा ।'

'तू क्यों डरती है कजरी !' सुखराम ने कहा : 'मैं जानता हूं ।'

'क्या जानता है ? तेरे लिए मैंने किया ही क्या है जो तू उसका जोर मानेगा ।'

'वाह ! ये तू क्या कहती है ! तैंने मेरे लिए क्या न किया ?'

'क्या किया है, बनाओ ।'

'सूरी को छोड़ा कि नहीं !'

वह हंसी, फिर लज्जा से उसका मुख आरक्त हुआ और फिर वह फूटकर रो ...ी । यह उसका अपमान हुआ था ।

'अरे, मैंने तो दिल्लगी की थी ।' सुखराम ने कहा ।

कजरी नहीं बोली । पर आंसू पोंछ लिये ।

फिर उसने कहा : अच्छा, 'तुझे अपने पर घमंड हो गया है !'

'कैसा ?'

'तू समझता है कि तू ही है सब कुछ ! बड़ा मलूक बनता है ? अकल के ...! तेरी मलूकाई भी तब तक है, जब तक मैं आंख की अंधी हूं । समझ रख । मैं ...ना आदमी तो जानता है क्या होगा ?'

'क्या होगा ?'

'जो मेरे आने के पहले हुआ था । प्यारी-जैसी लुगाई ही तेरे लिए ठीक है, जो ...न भी पाले रहे, और उल्लू भी बनाए !'

सुखराम ने हाथ उठाकर कहा : 'दया कर परमेसुरी ! दया कर । मैं हार गया । ...ा रोटी तो खा लेने दे ।'

वह मुंह फेरकर बैठ गई । खा-पीकर सुखराम उठा तो खाट पर लेट गया । वह ...ठ और पांव पकड़कर बैठ गई ।

'क्या बात है ?' सुखराम ने कहा और पांव खींच लिया । कजरी फिर रोने ...ी । सुखराम ने कहा : 'आखिर रोती क्यों है ?'

वह रोती रही । बोली नहीं । फिर उसने हिचकी बांध कर कहा : 'मन करता है, ...ई छोरियों ग गोद गोद के मारूं

सुखराम ने उसका सिर अपनी छाती में छिपा लिया।

20

फागुन आ गया। रुई ऊष्मा पुलकित हो उठी। सारी धरती में नवीन जीवन का संचार हो गया। कैसे दूर पर्वतों पर अब पत्थर तक अपनी सूनी पसलियों पर नव-नव स्पंदनों से विभोर हो उठे और मैदानों पर उनकी वासना का ताप छा गया। फगुनौटी झकोरे ले-लेकर चलने लगी। लहर खिल गई। पीपल पर नई नई लाल पत्तियाँ निकल आईं। पांवों के पास से हवा ने उसके सूखे पत्तों को दूर-दूर उड़ा दिया और नया देखा हिल-हिलकर चमचमाने लगा कि खिरनी लजा गई। उसने कहा कि देखा, मूआ कैसा इतरा रहा है, कल तक नंगा-नंगा रो रहा था। और हाय ऐसे ही फागुन भी बौरा ही गया।

जाड़े की आग वाली बहार भी कैसी जादूगरनी है कि एक बार अपने गर्म-गर्म सांस फूला दिए कि बूढ़े-बूढ़े से पेड़ों पर भी जवानी फूट पड़ी, और अपने नर्म-नर्म पत्तों को हिला-हिलाकर कसमसाने लगे। और अब कौए नहीं, पत्तों के रंग में रंग मिलाकर खेलने वाले तोते उनमें बैठते, फिर पांत बांधकर टांय-टांय कर उड़ जाते, और कभी हरियाली में जाकर खो जाते, लय-से हो जाते।

नीली कम्मर का भौंरा लटों के छोरे पकड़ते फिरते। भौंरा जाड़े-भर पेड़ों के कटोरों में छिपा रहता। अब जो निकलता तो गुन-गुन गुंजार करता फूलों की प्यालियों से नया-नया रस लेता और परागों में लोटकर विहार करता और फिर अपने गीतों में प्रिया की पगध्वनि को गुंजरित कर उठता।

मधुमक्खियां निकल आई थीं। फिर नया कहना सुना रही थीं। बज-बज करती, एक-दूसरे के पीछे भागती, और किसी बहुत बड़े पेड़ की डाली पर बड़ा-सा छत्ता तैयार करने में लग जातीं। उनके आसपास से तितलियां उड़ जातीं और पंख फरफराकर इशारे कर जातीं।

रात को ढोल बजते। गांववाले मिल-जुलकर गीत गाते। कड़ी टूटने के पहले ही हे-हे करके फिर गीत की लय पकड़ लेते और उनका गीत गहरे पानी पर तैरती भारी नाव की तरह छपक-छपक करता और बहने लगता। फसलें तैयार खड़ी थीं। सरसों के खेत हंस रहे थे। जौ के रेशमी खेतों में अब पकना शुरू हो गई थी। गेहूं कांधों तक आता था और अरहर के ऊंचे-ऊंचे खेतों में एक सुनहली छाया धीरे-धीरे शाम को उतरती, रात के अंधेरे में डूब जाती। ढेर-ढेर कांस के किनारे खड़े पूले अब मैले पड़ गए थे।

हवा प्यारी-प्यारी चलती और अंगों को एक नई तड़प दे जाती, जैसे वह एक कसौटी थी जिस पर घिस-घिसकर जवानी में वासना का निखार आता। नये-नये फूलों की गंधों पर बेल की नई गन्ध कांपती और फलहीन बेरों के पेड़ों में फरफराती। और फिर फुलवारी में अजीब-अजीब समां खिलता।

गांवों में काम बढ़ गया था। खेती का इंतजाम था। अब गर्मी बढ़ी है। अब फसल पकेगी। रखवाली का काम बढ़ गया है। चोरों की बाढ़ आ रही है। उधर दब उठने में कहीं ब्याह रचे जा रहे थे, कहीं सुहागिनें रात-रात गाती थीं, और अब जो क्वारे लड़के डगर पर निकले थे तो उनके कांधे उमंग से भर उठते थे। और आंखों का ज्वार छोरियों के कानों पर जाकर टकरा रहा था। जंगल बगर गए, काग हुमक उठे, मानुस की तो बात [illegible] क्या।

बांके नन्दन [illegible] गया था [illegible] और प्यारी भी ठीक हो गए थे [illegible] एक

या जीवन ही मिला था, जिसकी उन्हें आशा भी नहीं थी।

प्यारी अब नई हुमस में थी। उधर नीम पर निबौली आती थी, इधर प्यारी को ,खराम की याद आती। आसमान में बादल आते और सफेद-सफेद-से चिलककर झूमा रते। ठंडी-ठंडी हवा मन को सांत्वना देती।

उसकी चाह थी अब सुखराम आए। वह उसे देखे। कैसी लगती है वह! उसमें या बिगड़ा है? कुछ नहीं। बिल्कुल ठीक ही है। और क्या वह अब भी अच्छा नहीं आ होगा? अब न आने का तो उसने बहाना बना रखा है। जान-बूझकर नहीं आता। कजरी ने नहीं आने दिया होगा? पर वह सचमुच नहीं आया था। और बसन्त के हलते ढाक उसे जब छत से दिखाई देते, तो लगता कि सारी धरती घायल हो गई है, सुलग रही है। रात को ढेर-ढेर तारे देखती है तो अच्छा नहीं लगता। हवा हिये में लगती है, तो सूना-सूना लगने लगता है। क्या है जो चैन नहीं आता! उधर मोगरा महकता तो सांस को बांध लेता, रात की रानी की गन्ध आती तो बिस्तर पर बैठ जाती और फिर गुलाब की पंखुड़ियों को सबेरे देखती तो उनपर पड़ी ओस की बूंद को चमकती हुई पाकर, उसकी बड़ी-बड़ी आंखों में आंसू छलक आता। सारी हरियाली उसे घुमड़ते हुए धुएं-सी लगती। जो करता, सब तोड़ दे, सब गिरा दे और चली जाए। तितलियों की तरह भागती फिरे। छोकर तक में रंग बदल गए, क्या इस जीवन में रंग नहीं बदलेगा! और मोरों की तरफ देखती तो भरे-भरे रंगीन पंख यों सतरंगिनी बिछा देते कि पहाड़ी को-सी शाम शायद याद आती, उनकी नीली गर्दन जब दबती तो श्यामल वसुन्धरा की स्फुरित उमंग नाचने लगती पर सब कुछ काटे खाता। वह नहीं आया। और नए-नए नीबू निकल आए, बबूल तक फूट आए, और आक तक में कपकंपी आने लगी, पर प्यारी का मन वैसा ही रह गया। पीले-पीले कपड़े पहनकर कनेर के पास खेलती जवान औरतों की ठिठोलियां भी मन्द पड़ गई। चूड़ियों की झनक भी रोज़ की बात पड़ गई। और ठुमकते अंगों की बेताबी भी अपनी बेकली को छोड़ चली, गीत गुजार बनकर डूब चले, पर वह नहीं ही आया।

चक्खन दवा ले आता। उसे ही प्यारी और रुस्तमखां खा लिया करते। उधर अभी सुखराम के पांव में चलने में कुछ दरद बाकी था। चक्खन प्यारी को बताता था, 'कजरी खूब मालिश करती है। सुखराम कहता है 'जोर से मल।' 'और कित्ती जोर से मलूं, दैया रे! थाने का खरैरा ले आऊं?' वह कहती।'

प्यारी सुनती तो मन मसोसकर रह जाती। उनकी वह रस-भरी बातें उसके दिल को दरार दे जातीं। वह उसे बहुत-बहुत चेष्टा करके भरने की कोशिश करती। उसे कजरी से इतनी जलन न थी। दुख था अपने दूर होने का, अपने अभाव का। वह देखती। पीपल की ऊंची-से-ऊंची फुनगी पर लंगूर चढ़ जाता और चुन-चुनकर कोंपलें खाता। इतनी ऊंचाई पर भी चढ़कर वह गिरता नहीं। पर जब प्यारी का मन वहां चढ़ता तो वह भहराकर गिर पड़ता।

सबसे बड़ी विषमता थी तन की और मन की। मन अब मन से डांवांडोल हो उठता, पर परिस्थिति के बंधन थे। वह ऐसी थी जैसे फूल के खिलने पर किसी ने कह दिया था कि झूम मत। वह फूल कैसे कहे कि मैं अपने-आप नहीं झूमता, मुझे कोयल की मदभरी पुकार कंपा देती है।

वह दिन-दिन-भर बैठी सोचती रहती। रुस्तमखां से जैसे उसे अब कोई संबंध ही न था। वह उससे घृणा करती। अब वह सारा दोष सुखराम पर ही रखती थी। क्यों वह आकर मुझे नहीं ले जाता? रुस्तमखां अब फिर शराब की हल्की चुस्कियां लेने लगा था। जब वह थाने से आता तो प्यारी बीमार बन जाती। वैसे अक्सर उसके

राम आता और दोनों आपस में बातें किया करते ।

उस दिन रुस्तमखां और बांके में बातें हो रही थीं । प्यारी को कौतूहल हुआ । छिपकर सुनने लगी ।

'क्यों उस्ताद, अब तो बिल्कुल ठीक हो गए हो ।'

'मुझे तो ऐसा लगता है ।'

'तुम्हारी वे ठीक हो गई ?'

रुस्तमखां ने कहा : 'हो ही गई लगती है सुसरी ।'

'क्यों, कैसे उखड़े-उखड़े बोल रहे हो ?'

'औरत है बेवफा ।'

'मैंने पहले ही कहा था । नटिनी है । नटिनी का क्या भरोसा ! तुम भी बसा बैठे ।' बांके ने कहा : 'अब भगा दो न ।'

'नहीं, अभी उसमें दम है बांके । पहले वह बात तय कर ।'

'मैं तैयार हूं ।'

रुस्तमखां ने इशारा किया और कहा : 'अभी ठहर जा जरा ।'

'क्यों ?'

'अच्छा, तू धूपो से शुरू कर ।' रुस्तमखां ने कहा : 'पर एक बात है । किसी को पता नहीं चले ।'

'नहीं, इसका तो मैं ध्यान रखूंगा ।'

'और मुझे तेरी एक बात पसन्द नहीं ।'

'क्या ?'

'पहले देख जरा, वह भीतर यहीं है कि ऊपर है ? मुझे उससे डर लगता है ।'

प्यारी ने सुना तो आड में हो गई । फिर वह सोचने लगी । धूपो ! ! उसकी तो आफत आएगी ही । पर प्यारी करे भी तो क्या ? सुखराम तो आता नहीं । और आए भी तो उसे प्यारी क्यों बतायेगी ? फिर किसी झंझट में फंसना पड़ेगा । दुनिया में सैकड़ों लोग हैं, सैकड़ों लुगाइयां हैं । सबका ठेका थोड़े ही ले लिया है ।

दुपहर का समय था । धूप अब बैठने लायक नहीं रही थी । प्यारी अपने कोठे में बैठी थी । नीचे चक्खन था । कुछ आवाज सुनाई दी : 'अरे, ठीक हो गई ?'

'हां भइया । अब कोई बात नहीं ।'

प्यारी को कौतूहल हुआ । खिड़की के पास जा खड़ी हुई । रुस्तमखां जा रहा था । प्यारी ने देखा—सुखराम आया था ।

रुस्तमखां चलने लगा ।

'ठीक हो गए ?' सुखराम ने कहा ।

'हां, बिल्कुल ।'

'नहीं, कसर रह गई है अभी ।' सुखराम ने सिर हिलाकर कहा ।

'अच्छा, फिर बात करूंगा,' उसने जाते हुए कहा । वह चिन्ताग्रस्त था ।

पीछे कजरी थी ।

तब तो सचमुच ले आया है । अब कौतूहल तो था नहीं, मिल तो पहले ही चुकी थी । पर उन दोनों की जोड़ी खूब फबती थी । कजरी बड़ी अच्छी लग रही थी । कपड़े नये थे । सुखराम की तन्दुरुस्ती अब पहले से भी अच्छी लग रही थी । जाने क्यों, प्यारी को लगने लगा कि वह खुद अच्छी नहीं है । और वह रसहीनता की भावना पर विजय नहीं पा सकी । उसे एक प्रकार की निराशा हुई और चोट से भाव रिक्त हो गए

मन को धक्का लगा उसे लगा वह कमजोर हो गई।

बीमार बनकर लेट गई।

कजरी और सुखराम ऊपर आए।

'कौन है ?' प्यारी ने कहा।

'अरी, मैं हूं।' सुखराम ने कहा।

'कौन ? तू ?' प्यारी ने बैठकर कहा : 'अच्छा ! मैं तो समझी थी, तू यहां है नहीं।'

'क्यों ?'

'कभी आया ही नहीं।'

'जानती नहीं तू, मैं चोट खा गया था।'

'खबर तो पड़ी थी। पर इतने दिन लग गए तुझे ?'

अभी तक उसने जान-बूझकर कजरी पर ध्यान नहीं दिया था। कजरी ने इस-र चिंता नहीं की थी। वह इधर-उधर देखकर कोठे का मुआइना करने में लगी थी। खराम ने, और प्यारी ने दोनों ने ही इस चीज़ को देखा। उसके भोलेपन पर सुखराम स्कराया। प्यारी उस मुस्कराहट को देखकर खीझ उठी और उसने सुखराम की ओर ायल दृष्टि से देखा, 'जैसे तू मुझे यों सता रहा है !' परन्तु सुखराम ने उस ओर से ाख हटा ली और कहा : 'कजरी !'

कजरी चौंकी। कहा : 'क्या है ?'

'क्या देख रही है ?'

'कुछ नहीं।' कजरी ने झेंपकर कहा।

'देख, यह तेरी जेठी है।'

'पांव लागूं !' कजरी ने व्यंग्य से कहा और प्यारी के पावों को ठकुरानियों ही नकल पर घुटनों तक सहलाया, ऊपर से नीचे, तीन-चार बार। प्यारी का चेहरा झेंप से सुर्ख हो गया। पर क्या करती, कहा : 'भाग बढ़ें। सुहाग रहे। दूधों नहाए, पूतों ,ले।'

फिर प्यारी ने सुखराम से कहा, 'बैठ !'

सुखराम धरती पर बैठ गया। कजरी खड़ी रही।

'यह है तेरी कजरी ?' प्यारी ने कहा।

'क्यों कैसी है ?'

'अच्छी है।' प्यारी ने कहा।

कजरी ने हंसकर माथा ढांक लिया।

सुखराम ने कहा : 'देखा तूने ?'

कजरी ने मुंह फेर लिया। वह प्रसन्न थी। बोली : 'क्या कहता है तू ! मुझे लाज आती है।'

प्यारी ने भौं चढाईं, माथे पर बल पड़ गए और उसने सुखराम की ओर सिर हलाया। पर सुखराम विचलित नहीं हुआ। बोला : 'बैठ जा कजरी। खड़ी ही रहेगी ?'

'अरे, मै तो भूल ही गई थी कहना।' प्यारी ने कहा।

'मैं तो बिना कहे ही बैठ जाऊंगी जी।' कजरी ने कहा। उसमें जैसे कोई ाका नहीं थी। निश्चिन्त थी। मस्त थी। ऐसा लगता था जैसे सारे फाल्गुन-चैत उसी मे आकर इकट्ठे हो गए थे।

'आ मेरी सौत, यहां बैठ।' प्यारी ने खाट पर बैठने का इशारा किया।

उसने सोचा था, वही हुआ। प्यारी ने चोट की : 'मांग के पहने तो क्या पहने !'

यह प्रमाणित हुआ कि कजरी ने मांग के पहने हैं। कजरी कुछ क्षुब्ध हुई। : 'अपनों से मांगना नहीं होता। जो मांगने में हिचक जाए, समझो, उसने पराया समझा है।'

प्यारी तिलमिला गई। तभी कजरी ने कहा : 'हम तो ऐसे कपड़े कभी-कभी ते हैं बीबी ! तुम तो नित पहनती हो !'

'उससे क्या ?' प्यारी ने कहा : 'बात तो बनाने की थी।

'तो क्या जिसने भी बनवा दिए, वही क्या बड़ा वो हो जाता है ?'

कजरी ने रुस्तमखां की ओर इंगित किया था। प्यारी समझ गई और हिल । वह दोनों ओर से हार गई थी। उसकी इच्छा थी कि सुखराम बीच में बोले। वह तो बिल्कुल चुप बैठा था, जैसे है ही नहीं। यह उसे बहुत खटका, उसे लगा कजरी की तरफ है, न बोलकर उसका साथ दे रहा है। मेरे सामने लाकर बिठा दी यों तो मुझपर अहसान कर दिया और रही बात संग की, सो वह छोटी की ही ओर । परन्तु उसने उधर से दृष्टि हटा ली और कहा : 'क्या हो जाता है, सो तो मैं नहीं नती, पर इसमें भाव तो बना ही रहता है।'

'भाव की कहती हो, मैंने भाव-तोल की बात तो नहीं की जेठी।'

प्यारी को गुस्सा आया, पर पी गई। कहा : 'करनी भी तो उससे लाभ क्या ता ! वह तो समरथ के काम है, हर किसीके नहीं।'

कजरी ने टक्कर दी : 'तभी तो मैं ऐसी गैल नहीं चलती जहां अपने गधे की दी अपने-आप ढोनी पड़े।'

'और वह भी,' प्यारी ने पैंतरा-बदला : 'जब अपनी जगह गधा ही ले ले।'

कजरी को लगा, हार जाएगी। उसने कहा : 'ऐसा तो छोड़ के ही चलती हूं, नुस की खोज सहज नहीं होती जेठी।'

बात पलट गई। सुखराम ने देखा वह अभी भी अड़ी हुई थी। वह आज तक स तरह की जली-कटी सुन नहीं सका था। उसे बड़ा आनन्द आ रहा था, जैसे दोनों ाथों से दो फुलझड़ियां जलाकर कोई बालक निकलती चिनगियों को देखकर प्रसन्नता देखता रह जाता है !

प्यारी हिल उठी। कहा : 'जिसे खोज के मानुस समझा है, क्या जाने वह मानुस हो।'

'अब यह तो तुम ही बता सकती हो ! मैं ऐसा क्या जानूं !' कजरी का तैयार उत्तर था। प्यारी आर्त हो उठी। उसने फिर सुखराम की ओर देखा, पर वह उस समय र्दन झुकाए सिर खुजा रहा था। उसे सुखराम पर बड़ा गुस्सा आ रहा था। पर कजरी ने उसकी आंखों को ताड़ लिया था। कहा : 'जेठी ! बादल का क्या भरोसा ! वह तो हवा के होके रहे हैं।'

'तो हवा भी किसकी होके रही है छोटी ! आई, बह गई। टिक के नहीं रहती।' प्यारी ने कहा।

'यही तो मैं कहती थी कि दगा दे जाती है। बड़ा सहारा लो, फिर दूसरे की बगिया में जा के झूमती है।

प्यारी छटपटा उठी। कजरी ने और चोट दी : 'हवा तो उतनी ही अपनी जो सांस में चली जाए।'

'चली जाए तो भली। पर हमने तो सबको सांस छोड़ते ही देखा।'

कजरी ने हंसकर कहा छोड़के फिर सींची तो क्या न आई ?

प्यारी को न सूझा। वह उठी और बोली : 'मैं अभी आती हूं।'

कजरी ने कहा : 'कहा जाती हो ? बैठो। इतने दिन में तो आई हूं। फिर भी ऊब गई। कहो तो चली जाऊं ?' और यह कहकर सचमुच वह उठी।

'क्या करती है ?' प्यारी ने हाथ पकड़कर कहा, 'तू जाए तो तुझे मेरी कसम।' कजरी बैठ गई। प्यारी भी बैठ गई। तब मुस्कराकर प्यारी ने कहा : 'भूल ही गई थी। तेरे महावर लगा दूं, यही सोचकर उठी थी।'

अब कजरी ने सुखराम की ओर देखा। उसे शरम आई। पर सुखराम ने उससे भी आंख बचा ली। प्यारी ने भी यह देख लिया। कहा : 'क्यों, अब जाऊं ?'

'राम-राम, क्या कहती हो !' कजरी ने पराजित होकर कहा।

प्यारी ने छेड़ा : 'लाज आती है ?'

कजरी ने कहा : 'तुम जब छेड़ती ही हो तो मैं क्या करूं। मैंने क्या ऐसा कहा था ?'

प्यारी को आनन्द आया। उसने व्यंग्य से उसे वेधने के लिए फिर कहा : 'क्यों तेरे मरद ने कहा था मुझसे तो, मैं क्या अपने-आप जान गई थी !'

कजरी इस बात से बहुत झेंपी। परन्तु उसने अपने-आपको संभाल लिया और कहा : 'तुम कहती हो तो मान लेती हूं। पर एक बात पूछती हूं। मेरे मरद से तुम्हें क्या ?'

प्यारी इस उत्तर के लिए तत्पर नहीं थी। उसे इस प्रश्न से अपने समस्त अधिकारों को छीना जाते हुए देखकर एक चुनौती-सी लगी और वह आत्मरक्षार्थ अपनी समस्त लज्जा छोड़कर एकदम भभकती हुई-सी कह उठी : 'वह मेरा भी तो है !'

क्षण-भर के लिए सुखराम और कजरी के नेत्र मिले। प्यारी ने इसे देख लिया। लाज से पानी-पानी हो गई। अपनी ही सौत से उसे आज यह क्या कहना पड़ गया था ?

'फिर अपना कहती क्यों नहीं ?' कजरी ने मुस्कराकर कहा।

प्यारी का मन अब भी हलका नहीं हुआ। उसे लगा जैसे कजरी उसपर दया कर रही थी। उसे यह स्वीकृत नहीं हुआ। उसने बात बनाने को कहा, 'कहीं तुझे बुरा न लगे।'

कजरी हंसी। उसके स्वर में बड़प्पन था, बल्कि उसने अभिमान तक को छू लिया था। उसका यह रूप देखकर स्वयं सुखराम तक चौंक उठा।

'भली कही', कजरी ने कहा : 'मेरे बुरे का ही तुम्हें बड़ा ध्यान है न ?'

'क्यों, तू मेरी छोटी नहीं है ?'

कजरी इस अचानक के स्नेह की टक्कर को झेल नहीं सकी। आखिर प्यारी ने अपने बड़प्पन से उसे पराजित कर दिया। और कजरी चाहकर भी उसका उत्तर नहीं दे सकी।

सुखराम हंसा। कहा : 'बस यों ही चलती रहेगी या उसका कभी अन्त भी होगा ?'

'मैं तो कुछ नहीं कहती।' कजरी ने कहा, 'तू भी उसकी ही ओर बोलने लगा ?'

मैं तो चुप बैठा हूं

प्यारी हां। कहा कुछ भी हो कजरी हक तो मेरा ही पहले है तू तो

पास आता और दोनों आपस में बातें किया करते।

उस दिन रुस्तमखां और बांके में बातें हो रही थी। प्यारी को कौतूहल हुआ। छिपकर सुनने लगी।

'क्यों उस्ताद, अब तो बिलकुल ठीक हो गए हो।'

'मुझे तो ऐसा लगता है।'

'तुम्हारी ये ठीक हो गई?'

रुस्तमखां ने कहा : 'हो ही गई लगती है सुसरी।'

'क्यो, कैसे उखडे-उखडे बोल रहे हो?'

'औरत है बेवफा।'

'मैंने पहले ही कहा था। नटिनी है। नटिनी का क्या भरोसा! तुम भी बसा बैठे।' बांके ने कहा : 'अब भगा दो न।'

'नहीं, अभी उसमें दम है बांके। पहले वह बात तय कर।'

'मैं तैयार हूं।'

रुस्तमखां ने इशारा किया और कहा : 'अभी ठहर जा जरा।'

'क्यों?'

'अच्छा, तू धूपो से शुरू कर।' रुस्तमखां ने कहा : 'पर एक बात है। किसी को पता नहीं चले।'

'नही, इसका तो मैं ध्यान रखूंगा।'

'और मुझे तेरी एक बात पसन्द नही।'

'क्या?'

'पहले देख जरा, वह भीतर यही है कि ऊपर है? मुझे उससे डर लगता है।'

प्यारी ने सुना तो आड़ मे हो गई। फिर वह सोचने लगी। धूपो!! उसकी तो आफत आएगी ही। पर प्यारी करे भी तो क्या? सुखराम तो आता नही। और आए भी तो उसे प्यारी क्यों बतायेगी? फिर किसी झझट मे फंसना पड़ेगा। दुनिया में सैंकडो लोग हैं, सैंकडों लुगाइयां है। सबका ठेका थोडे ही ले लिया है।

दुपहर का समय था। धूप अब बैठने लायक नहीं रही थी। प्यारी अपने कोठे मे बैठी थी। नीचे चक्खन था। कुछ आवाज सुनाई दी : 'अरे, ठीक हो गई?'

'हां भइया। अब कोई बात नहीं।'

प्यारी को कौतूहल हुआ। खिड़की के पास जा खडी हुई। रुस्तमखां जा रहा था। प्यारी ने देखा—सुखराम आया था।

रुस्तमखां चलने लगा।

'ठीक हो गए?' सुखराम ने कहा।

'हां, बिल्कुल।'

'नहीं, कसर रह गई है अभी।' सुखराम ने सिर हिलाकर कहा।

'अच्छा, फिर बात करूंगा,' उसने जाते हुए कहा। वह चिंताग्रस्त था।

पीछे कजरी थी।

तब तो सचमुच ले आया है। अब कौतूहल तो था नहीं, मिल तो पहले ही चुकी थी। पर उन दोनों की जोड़ी खूब फबती थी। कजरी बड़ी अच्छी लग रही थी। कपडे नये थे। सुखराम की तन्दुरुस्ती अब पहले से भी अच्छी लग रही थी। जाने क्यों, प्यारी को लगने लगा कि वह खुद अच्छी नहीं है। और वह रसहीनता की भावना पर विजय नहीं पा सकी उसे एक प्रकार की निराशा हुई और चोट से भाव रिक्त हो गए

मन को धक्का लगा। उसे लगा, वह कमज़ोर हो गई।

बीमार बनकर लेट गई।

कजरी और सुखराम ऊपर आए।

'कौन है ?' प्यारी ने कहा।

'अरी, मैं हूं।' सुखराम ने कहा।

'कौन ? तू ?' प्यारी ने बैठकर कहा : 'अच्छा ! मैं तो समझी थी, तू यहां है ही नहीं।'

'क्यों ?'

'कभी आया ही नहीं।'

'जानती नहीं तू, मैं चोट खा गया था।'

'खबर तो पड़ी थी। पर इतने दिन लग गए तुझे ?'

अभी तक उसने जान-बूझकर कजरी पर ध्यान नहीं दिया था। कजरी ने इस-पर चिंता नहीं की थी। वह इधर-उधर देखकर कोठे का मुआइना करने में लगी थी। सुखराम ने, और प्यारी ने दोनों ने ही इस चीज़ को देखा। उसके भोलेपन पर सुखराम मुस्कराया। प्यारी उस मुस्कराहट को देखकर खीझ उठी और उसने सुखराम की ओर घायल दृष्टि से देखा, 'जैसे तू मुझे यों सता रहा है !' परन्तु सुखराम ने उस ओर से आंख हटा ली और कहा : 'कजरी !'

कजरी चौंकी। कहा : 'क्या है ?'

'क्या देख रही है ?'

'कुछ नहीं।' कजरी ने झेंपकर कहा।

'देख, यह तेरी जेठी है।'

'पांव लागूं !' कजरी ने व्यंग्य से कहा और प्यारी के पावों को ठकुरानियों की नकल पर घुटने तक सहलाया, ऊपर से नीचे, तीन-चार बार। प्यारी का चेहरा झेंप से सुर्ख हो गया। पर क्या करती, कहा : 'भाग बढ़ें। सुहाग रहे। दूधों नहाए, पूतों फले।'

फिर प्यारी ने सुखराम से कहा, 'बैठ !'

सुखराम धरती पर बैठ गया। कजरी खड़ी रही।

'यह है तेरी कजरी ?' प्यारी ने कहा।

'क्यों कैसी है ?'

'अच्छी है।' प्यारी ने कहा।

कजरी ने हंसकर माथा ढांक लिया।

सुखराम ने कहा : 'देखा तूने ?'

कजरी ने मुंह फेर लिया। वह प्रसन्न थी। बोली : 'क्या कहता है तू ! मुझे लाज आती है।'

प्यारी ने भौं चढ़ाईं, माथे पर बल पड़ गए और उसने सुखराम की ओर सिर हिलाया। पर सुखराम विचलित नहीं हुआ। बोला : 'बैठ जा कजरी। खड़ी ही रहेगी ?'

'अरे, मैं तो भूल ही गई थी कहना।' प्यारी ने कहा।

'मैं तो बिना कहे ही बैठ जाऊंगी जी।' कजरी ने कहा। उसमें जैसे कोई शंका नहीं थी। निश्चिन्त थी। मस्त थी। ऐसा लगता था जैसे सारे फाल्गुन-चैत उसी में आकर इकट्ठे हो गए थे।

'आ मेरी सौत, यहां बैठ।' प्यारी ने खाट पर बैठने का इशारा किया।

परन्तु कजरी सुखराम के पास बैठ गई। उसने प्यारी की बात को सुनकर भी जैसे उसपर ध्यान देने की आवश्यकता नहीं समझी। वह तो अपने मन की करेगी। उसकी प्रत्येक अंग-भंगिमा में प्रकट होता था कि वह प्यारी की उपस्थिति में बिल्कुल प्रभावित नहीं है। उसका यह व्यवहार प्यारी को अच्छा नहीं लगा।

'क्यों, वहां क्यों बैठी तू?' प्यारी ने आर्त्तस्वर से कहा। उसके शब्दों में आतुरता तो थी, परन्तु उससे भी अधिक था अपमान के अनुभव का प्रकटीकरण, कि तूने मेरी हुक्मउदूली किस कारण की है, और वह भी मेरे ही घर में! मेरे ही सामने!!

'मेरी जगह इसीके पास है।' कजरी ने दांत निकालकर कहा।

'ठीक बात है।' प्यारी ने कहा। सिर हिलाया। जैसे कहना चाहकर भी कह नहीं रही है। वह मन की घुटन उस समय सुखराम से छिपी नहीं रही। प्यारी की दृष्टि में वह बड़ी थी, उससे उच्च थी, परन्तु कजरी ने वनफूल की भांति सिलमा-सितारों की उपेक्षा कर दी थी।

'अरी, तू बड़ी बातून है।' प्यारी ने हंसकर कहा। वह जैसे बात को मजाक में टाल देने की चेष्टा करने लगी। सुखराम ने सोचा, चलो, यह अच्छा हुआ, वर्ना दोनों अपनी-अपनी जगह पत्थर हैं। परन्तु कजरी को चैन नहीं आई। उसने अपने सिर का कपड़ा ठीक किया और पांवों के बिछियों को कुछ ठीक करने के बहाने दिखाते हुए उससे कहा: 'गरीब आदमी है। तुम ठहरीं मालकन। हम यहीं ठीक हैं। खाट पर बैठूंगी तो सोभा थोड़े ही लगेगी। डेरे पर भी धरती ही है, सो यहां आकर आदत क्यों बिगाड़ूं? ये बचन दे कि वहां भी बिठाए रहेगा तो बैठ जाऊं। नहीं तो फायदा ही क्या? अपना मन ही छोटा होगा।'

प्यारी चिढ़ी। कहा: 'वहीं बैठ। तेरी मर्जी! मैं क्या करूं? तुझे मुझपर भरोसा ही नहीं,'

'भरोसा नहीं होता तो उस दिन कैसे चली आती? तुमने कहा तो मैं मान नहीं गई थी?'

सुखराम ने बीड़ी जलाई। उसने धुआं छोड़ा और अब उसे इन दोनों की बातचीत में मजा आया। उसने सोचा कि पहले हो लेने दो। आखीर में देखी जाएगी। सो ऐसा बैठ गया जैसे बड़े भारी सोच में डूब गया था। उसके मन में दोनों को जांचने की जिज्ञासा जागरित हो गई थी।

प्यारी ने कहा: 'सुखराम! छोटी के भाग सदा बड़े।'

'जेठी के भाग किससे कम हैं?' कजरी ने कहा।

'मेरा क्या है! हूं, नहीं हूं।'

'न होके तो यहां तक ले आई।'

'क्यों आना अच्छा नहीं लगता?'

'अच्छा नहीं लगता, तो बिना बुलाए अकेली क्यों आती पहले?'

'वह और बात थी।'

'वह भी उसीकी बात थी, जिसकी बात आज है।'

प्यारी ने सुखराम की ओर देखा और व्यंग्य से उससे कहा: 'देख रही हूं सब! कैसे कपड़े हैं, मुझे तो तैंने नहीं बनवाए।'

'तूने कभी मांगे थे?' कजरी ने कहा।

प्यारी चुप हो गई उसने की तरफ देखा पर उसने ढेर सारा धुआं मुंह के सामने उगल लिया था उसका मुंह दिखा नहीं कजरी को थी

जो उसने सोचा था, वही हुआ। प्यारी ने चोट की : 'मांग के पहने तो क्या पहने!'

यह प्रमाणित हुआ कि कजरी ने मांग के पहने है। कजरी कुछ क्षुब्ध हुई। कहा : 'अपनों से मांगना नहीं होता। जो मांगने में झिचक जाए, समझो, उसने पराया ही समझा है।'

प्यारी तिलमिला गई। तभी कजरी ने कहा : 'हम तो ऐसे कपड़े कभी-कभी पहनते हैं बीबी! तुम तो नित पहनती हो!'

'उससे क्या?' प्यारी ने कहा : 'बात तो बनाने की थी।

'तो क्या जिसने भी बनवा दिए, वही क्या बड़ा वो हो जाता है?'

कजरी ने रुस्तमखां की ओर इंगित किया था। प्यारी समझ गई और हिल उठी। वह दोनों ओर से हार गई थी। उसकी इच्छा थी कि सुखराम बीच में बोले। पर वह तो बिल्कुल चुप बैठा था, जैसे है ही नहीं। यह उसे बहुत खटका, उसे लगा वह कजरी की तरफ है, न बोलकर उसका साथ दे रहा है। मेरे सामने लाकर बिठा दी है, यों तो मुझपर अहसान कर दिया और रही बात संग की, सो वह छोटी की ही ओर है। परन्तु उसने उधर से दृष्टि हटा ली और कहा : 'क्या हो जाता है, सो तो मैं नहीं जानती, पर इसमें भाव तो बना ही रहता है।'

'भाव की कहती हो, मैंने भाव-तोल की बात तो नहीं की जेठी।'

प्यारी को गुस्सा आया, पर पी गई। कहा : 'करती भी तो उससे लाभ क्या होता! वह तो समरथ के पास हैं, हर किसीके नहीं।'

कजरी ने टक्कर दी : 'तभी तो मैं ऐसी गैल नहीं चलती जहां अपने गधे की लादी अपने-आप ढोनी पड़े।'

'और वह भी,' प्यारी ने पैंतरा-बदला : 'जब अपनी जगह गधा ही ले ले।'

कजरी को लगा, हार जाएगी। उसने कहा : 'ऐसा तो छोड़ के ही चलती हूं, मानुस की खोज सहज नहीं होती जेठी।'

बात पलट गई। सुखराम ने देखा वह अभी भी अड़ी हुई थी। वह आज तक इस तरह की जली-कटी सुन नहीं सका था। उसे बड़ा आनन्द आ रहा था, जैसे दोनों हाथों में दो फुलझड़ियां जलाकर कोई बालक निकलती चिनगियों को देखकर प्रसन्नता से देखता रह जाता है!

प्यारी हिल उठी। कहा : 'जिसे खोज के मानुस समझा है, क्या जाने वह मानुस न हो।'

'अब यह तो तुम ही बता सकती हो! मैं ऐसा क्या जानूं!' कजरी का तैयार उत्तर था। प्यारी आर्त हो उठी। उसने फिर सुखराम की ओर देखा, पर वह इस समय गर्दन झुकाए सिर खुजा रहा था। उसे सुखराम पर बड़ा गुस्सा आ रहा था। पर कजरी ने उसकी आंखों को ताड़ लिया था। कहा : 'जेठी! बादल का क्या भरोसा! वह तो हवा के होके रहे हैं।'

'तो हवा भी किसकी होके रही है छोटी! आई, बह गई। टिक के नहीं रहती।' प्यारी ने कहा।

'यही तो मैं कहती थी कि दगा दे जाती है। बड़ा सहारा लो, फिर दूसरे की बगिया में जा के झूमती है।

प्यारी छटपटा उठी। कजरी ने और चोट दी : 'हवा तो उतनी ही अपनी जो सांस में चली जाए।'

'चली जाए तो भली। पर हमने तो सबको सांस छोड़ते ही देखा।'

कजरी ने हंसकर कहा : 'छोड़के फिर खींची तो क्या न आई?

प्यारी को न सूझा। वह उठी और बोली : 'मैं अभी आती हूं।'

कजरी ने कहा : 'कहां जाती हो ? बैठो। इतने दिन में तो आई हूं। फिर भी ऊब गई। कहो तो चली जाऊं ?' और यह कहकर सचमुच वह उठी।

'क्या करती है ?' प्यारी ने हाथ पकड़कर कहा : 'तू जाए तो तुझे मेरी कसम।' कजरी बैठ गई। प्यारी भी बैठ गई। तब मुस्कराकर प्यारी ने कहा : 'भूल ही गई थी। तेरे महावर लगा दूं, यही सोचकर उठी थी।'

अब कजरी ने सुखराम की ओर देखा। उसे शरम आई। पर सुखराम ने इससे भी आंख बचा ली। प्यारी ने भी यह देख लिया। कहा : 'क्यों, अब जाऊं ?'

'राम-राम, क्या कहती हो !' कजरी ने पराजित होकर कहा।

प्यारी ने छेड़ा : 'लाज आती है ?'

कजरी ने कहा : 'तुम जब छेड़ती ही हो तो मैं क्या करूं। मैंने क्या ऐसा कहा था ?'

प्यारी को आनन्द आया। उसने व्यंग्य से उसे बेधने के लिए फिर कहा : 'क्यों तेरे मरद ने कहा था मुझसे तो, मैं क्या अपने-आप जान गई थी।'

कजरी इस बात से बहुत झेंपी। परन्तु उसने अपने-आपको संभाल लिया और कहा : 'तुम कहती हो तो मान लेती हूं। पर एक बात पूछती हूं। मेरे मरद से तुम्हें क्या ?'

प्यारी इस उत्तर के लिए तत्पर नहीं थी। उसे इस प्रश्न में अपने समस्त अधिकारों को छीना जाते हुए देखकर एक चुनौती-सी लगी और वह आत्मरक्षार्थ अपनी समस्त लज्जा छोड़कर एकदम भभकती हुई-सी कह उठी : 'वह मेरा भी तो है !'

क्षण-भर के लिए सुखराम और कजरी के नेत्र मिले। प्यारी ने उसे देख लिया। लाज से पानी-पानी हो गई। अपनी ही सौत से उसे आज यह क्या कहना पड़ गया था ?

'फिर अपना कहती क्यों नहीं ?' कजरी ने मुस्कराकर कहा।

प्यारी का मन अब भी हल्का नहीं हुआ। उसे लगा जैसे कजरी उसपर दया कर रही थी। उसे यह स्वीकृत नहीं हुआ। उसने बात बदलने को कहा : 'कहीं तुझे बुरा न लगे।'

कजरी हंसी। उसके स्वर में बड़प्पन था, लेकिन उसने अभिमान तक को छू लिया था। उसका यह रूप देखकर स्वयं सुखराम तक सोच रहा।

'भली कही', कजरी ने कहा : 'मेरे बुरे का ही तुम्हें बड़ा ध्यान है न ?'

'क्यों, तू मेरी छोटी नहीं है ?'

कजरी इस अचानक के स्नेह की टक्कर को झेल नहीं सकी। आखिर प्यारी ने अपने बड़प्पन से उसे पराजित कर दिया। और कजरी चाहकर भी उसका उत्तर नहीं दे सकी।

सुखराम हंसा। कहा : 'बस यों ही चलती रहेगी या इसका कभी अन्त भी होगा ?'

'मैं तो कुछ नहीं कहती' कजरी ने कहा 'तू भी उसकी हां और बोलने

'बांसुरी के दो छेदों मे कभी एक-सा सुर नहीं निकलता।' सुखराम ने कहा।
'अच्छा तो तू सांस फूंक के मजा ले रहा था अब तक ?' कजरी ने कहा।
'मैं समझी थी, तुझे ये समझा-बुझा के आया है।' प्यारी ने कहा।
'ये मुझे क्या समझाएगा,' कजरी ने कहा : 'तुम्हे ही भर गया होगा पहले।'
'अरे बाप रे ?' सुखराम ने कहा : 'दोनों मिल गईं। अब मैं बुरा फंसा।' दोनों लजा गईं।
'तुम बीमार हो ?' कजरी ने कहा।
'हां !' प्यारी ने उत्तर दिया।
'क्या हुआ है ?'
'ऐसे ही।' उसने उपेक्षा से कहा।
'बड़े आदमियों की तो तबियत खराब ही रहती है। यहां घूमना-फिरना तो होता नही होगा ?'
'कुछ नही।'
'फिर बताओ, हाथ-पांव न चलेंगे तो रोटी पचेगी कैसे ? जिस रोटी को निगलने को दांत कटाकट करने पडते है, वो क्या वैसे ही हजम हो सकती है !'
'यह तो भाग की बात है। मुझसे आराम से क्या और लोग नही रहते ?'
'तो उन्हें बचपन की वैसी ही आदत होती है। अब हम हैं, पर पत्थरतोडा की बराबरी तो नही होती, जो जेठ की दुपहर मे पहाड पर बैठकर धूप में पत्थर कूटा करती है।'
प्यारी सोचने लगी। कजरी सच कहती थी। उसने कहा : 'मैं भी यही सोचती हू ?'
'फिर सोचकर क्या करती हो ?'
प्यारी ने सुखराम की ओर देखा।
कजरी ने कहा : 'तुम्हारी वो बीमारी तो गई ?'
प्यारी का चेहरा सफेद पड़ गया। लाज से आंखें नीची हो गईं। उसने हाथो मे मुह छिपा लिया पर फिर भी रो ही पड़ी। इतनी लज्जा उसे कभी नही आई थी। यह ग्लानि थी। सौत के मुंह से एक दिन यह सवाल भी सुनना पड़ेगा, यह उसे भी उम्मीद नही थी। परन्तु उसने आंखें पोंछ लीं और सिर उठाकर कहा : 'नटिनी हूं न ? आई, चली गई।'
'तुम तो ऐसे कहती हो', कजरी ने सांत्वना दी : 'जैसे यह नटिनी को ही होती है। अरे, मुझे हो जाती तो क्या ये मुझे छोड़ देता ?'
सुखराम ने कहा : 'अरे, यह तो होता ही है। इन्सान है, हारी-बीमारी लगी ही रहती है, इसके लिए रोना-धोना क्या ?'
प्यारी का मन हल्का हो गया। मुस्कराई।
कजरी ने कहा : 'तूने समझा होगा, मैंने बुरी नीयत से कही थी।'
'समझी तो यही थी।'
अब तो नहीं सोचती
नही प्यारी ने ममता से उसकी ओर देखा कजरी को वह दृष्टि अच्छी

प्यारी ने कहा : 'मुझसे बात कर तू । उसे क्यों बीच में लाती है ? व॰ कह रहा है ? आपसे बनती नहीं तो उसे खदेड़ती है । मुझसे अपनी जल छोटी । वह तो बिचारा चुप बैठा है । कहे देती हूं, खबरदार, उससे कुछ न का

कजरी ने उसका व्यंग्य भी देखा और स्नेह भी देखा । उसे लगा, व झगड़ा है जो ऊपर तक नहीं जा सकता । परन्तु उसे यह समाधिकार बुरा लग

'क्यों न कहूंगी ? मेरा वह है । तू नहीं ।' उसने हठात् कहा ।

यह आकस्मिक परिवर्तन था । बल्कि कजरी भी जल्दी में कह गई थ यह कहना नहीं चाहती थी । परन्तु तीर हाथ से निकल चुका था । अब वह व सकती थी । अधजल गगरी कभी-न-कभी छलककर बाहर भी जा गिरती है ।

प्यारी को चोट पड़ी । गुस्सा आया — कहे, निकल जा यहां से ! परन्त नहीं सकी । अपमान पी गई । पूछा : 'तू मेरी कोई नहीं ?'

'हूं क्यों नहीं ?' कजरी ने झेंपकर कहा ।

'ये तेरा हो है ?' प्यारी ने पूछा ।

'तेरा भी तो है ।' कजरी को कहना पड़ा ।

'फिर अभी तो तू कहती थी कि तू मेरी कोई नहीं है ? कैसे कहा तेरे बोल ? मैं जवाब मांगती हूं ।'

'धरती उसकी जो जोते, वैसे राजा लगान वसूल करता है बन्दूक के सो तू कर ले । मैं क्या रोकती हूं !'

फिर दोनों ने एक-दूसरी की ओर देखा । उस दृष्टि में एक रहस्यगर प्रदान हुआ ।

सुखराम ने कहा : 'बस ?'

'और क्या ?' प्यारी ने कहा : 'अच्छी है । मुझे पसन्द आई ।

'तुझे कैसी लगी ?' सुखराम ने कजरी से पूछा ।

कजरी ने कहा : 'तुझे क्या ? सीधे बाएं हाथ से कभी पंजा लड़ा ? । अंगूठे एक ही ओर झुकते हैं ।'

प्यारी चुप हो गई । मुस्करा दी ।

सुखराम ने कहा : 'सच कह प्यारी, बीमार है ?'

'नहीं ।'

'तू मुझसे छिपाती तो नहीं !'

'नहीं ।'

वह मुस्कराती रही । पूछा : 'बिसराम नहीं हुआ क्या ?'

'हो गया । फिर क्यों पड़ी है ?'

'देखती थी, तुम दोनों पूछते हो या नहीं ।'

कजरी ने कहा : 'चलो, रहने दो ।'

सुखराम ने हंसकर कहा : 'कजरी पूछती है, अच्छा है ।'

दोनों हंस दीं ।

चलने की बात हुई । कजरी ने उठकर कहा : 'तो अब हम जाएं ?'

सुखराम भी उठ खड़ा हुआ । परन्तु प्यारी उठी । उसने कजरी का ह लिया और जिद करके कहा : 'कहां जा रही है अभी से तू ? ये कौन है र जाए ? कुछ खाये नहीं जाएगी ? मैं वैसे न जाने दूंगी !'

मैं नहीं खाऊंगी कजरी ने कहा

क्या नहीं खाएगी तू ?

'मैं अपना खाऊंगी, कै अपने मरद का।'

'मैं तेरी कोई नहीं ?'

'तू तो है, ला, अपना खिला। ये तो तू पराए का ही खिलायेगी।'

'पराया सही, पर है मेरी कमाई! और तू अपना खाने की कहती है, सो तू ही कहां से ले आती ?'

कजरी ने कहा : 'अच्छा, अच्छा छोड। हाथ है कि लोहा है। बड़ा जोर है तुझमें जेठी।'

'जोर है ? अब तो मुझमें बल ही नहीं रहा।'

'किसी दिन लड के देख लेना।' सुखराम ने कहा।

'अरे, तू कुछ ले आ न,' प्यारी ने कहा : 'कुछ मीठा मुंह करा दूं इसका।'

'तू न जइयो।' कजरी ने कहा।

प्यारी ने कहा : 'मैं कहती हूं, जा। उसका मुंह क्या देखना है!'

सुखराम ने कहा : 'जाता हूं कलमूंडियो, लडती क्यों हो ?'

सुखराम चला गया।

दोनों बैठ गईं। बाहर दुपहर का सन्नाटा छा रहा था। कभी-कभी दूर बाजार का कलरव-सा हल्के स्वरों से हवा पर मचल जाता और अपनी उत्सुकता के कारण कोनों के अंधेरे से अठखेली करने लगता। कोठे में साधारण सामान था। कजरी उसे देखती। वह उससे प्रभावित नहीं हुई थी। वह सोच रही थी कि इस सबमें ऐसा क्या सुख है जो प्यारी ने यहां आकर रहना पसन्द किया ? उसने सोचा शायद वह अभी इस सबका सुख समझती नहीं है। क्योंकि वह कभी ऐसी जगह रही नहीं है, क्या जाने इसीसे यह सब अभिरुचि के अनुकूल-सा प्रतीत नहीं होता। उसके अपने झोंपड़े में इसकी तुलना में अधिक स्वतंत्रता है परन्तु उसे ऐसा लगा जैसे यहां बैठी है तो लगता है वह घर में बैठी है। वहां बैठी है तो लगता है, घर उसके चारों ओर खड़ा है। पहली अवस्था में मनुष्य परिस्थितियों से दबा हुआ है, दूसरी अवस्था में वह उनका स्वामी है। यह सब छोड़ने में मनुष्य अटक सकता है, वह सब छोड़ने में रुकने का सवाल ही नहीं उठता। इस सबको बनाने के लिए पैसा चाहिए, उस सबको बनाने के लिए मेहनत चाहिए। और यही दोनों का भेद है। यह अवस्था कर्जा चुकवाती है, वह अवस्था अपना कर्जा उतार देती है।

प्यारी उसे कनखियों से देख लेती थी और सोचने लगती थी। सुखराम के जाने के बाद यह सन्नाटा छा गया है। प्यारी फिर से बात शुरू करना चाहती है। पर क्या कहे वह ? यह वह सोच नहीं पा रही है। अभी तक तो कटाछनी चली। पर अब कजरी से उसे ऐसा कुछ भी कहना ठीक नहीं है, जिससे कजरी को बुरा लगे। वह उसके रूप को देख रही है। अच्छी है। और फिर उससे जो उसका सम्बन्ध जुड़ा है वह कितना विचित्र है! पर उससे प्यारी को घृणा क्यों नहीं होती ? वह स्वयं इसे सोच नहीं पा रही है। है तो यह सौत ही। और सौत तो आटे की भी अच्छी नहीं होती। फिर भी हृदय कैसा आकर्षण अनुभव करता है!

प्यारी ने कजरी की ओर घूरकर देखा और जैसे उसने बात करने का मसाला ढूंढ़ लिया। कजरी प्रस्तुत हो गई और उत्सुकता से देखने लगी।

'तू उसे आने नहीं देती ?' प्यारी ने कहा।

'मैं क्यों रोकूंगी उसे ?' कजरी ने कहा।

'फिर वह क्यों नहीं आता ?

उसका मन न करता होगा

'यह कैसे हो सकता है ? वह तो तुझे यहां ले आया। जरूर तू मुझसे झूठ कहती है।'

'आप पूछ लीजो उससे !' कजरी ने फिर कहा। प्यारी को सन्देह हुआ। उ निश्चयात्मकता में उसके प्रेम के आधार हिल गए। परन्तु उसे फिर भी संशय बना हु रहा। उसने सोचा, क्या यह हो सकता है ? क्या उसे कजरी जलाने के लिए ही तो य नहीं कहती ?

'तू मुझे यह जताती है कि वह तुझे ज्यादा चाहता है ?' प्यारी ने कहा। परन्तु उसके स्वर में करुण याचना थी जिसे वह किसी भी प्रकार छिपा नहीं पाई थी। सचमुच उसके मर्म पर आघात हुआ था। क्या सुखराम ही यहां नहीं आना चाहता ? फिर आया ही क्यों है ? मुझे जलाने ?

कजरी विजयनी की तरह हंसी।

प्यारी सोच रही थी। तभी वह कभी मुझे संग ले जाने की बात नहीं करता। यों आता है, उठता-बैठता है तो क्या ? पर फिर उसने इलाज जो किया है, उससे क्या है ? वह तो बहुतों का इलाज करता है। नहीं, नहीं, पर वह मुझे चाहता है। कहा : 'कजरी, तूने पहले क्यों नहीं बताया ?'

'क्यों ? मैं क्यों बोलती ?' उसने पूछा।

'मैं भूल में थी कजरी।' प्यारी ने दूर देखते हुए कहा।

'कैसी भूल जेठी ?'

'जेठी न कह, प्यारी कह। मैं तेरी कोई नहीं हूं, यह तू जानती है। फिर मुझे क्यों सताती है ?'

'मैंने क्या कह दिया है ऐसा ?' कजरी ने कहा।

'कुछ तो नहीं।' प्यारी ने आंखें पोंछी।

'तू आप पाले के बाहर आके छू गई और वो बोले तो मैं क्या करूं ?' कजरी ने कहा : 'तुझे अक्ल नहीं ! मूरख, रोने बैठ गई। अरे, मैं तो दिल्लगी करती थी। अगर वह न आना चाहता, तो मुझे लाता ? एक बात पूछूं प्यारी ?'

'पूछ।' उसने लजाकर कहा।

'तू उसे बहुत मानती है ! है न ?'

प्यारी ने लाज से सिर झुका लिया और मुंह फेरकर धीरे से कहा : 'कजरी ! अब मैं समझ गई। तूने बातों से ही उसे छकाया है।'

'किसे ?'

'सुखराम को।'

'वह तो बड़ा भोला है !!'

'उसमें अकल ही कहां है !'

'उसने मुझे छकाया, मैं छक गई जेठी। वह तो ऐसा चतुर है कि मैं कह नहीं सकती।'

दोनों बैठ गईं। दो दृष्टिकोण अब पास आ गए थे।

'मैं तो उसे नचाती थी पहले।' प्यारी ने कहा।

कजरी ने कहा : 'अब नचा के देखियो ! कैसा चालाक हो गया है।'

'सच !' प्यारी ने कहा। उसे विश्वास नहीं हुआ।

'तूने देखा नहीं, कैसा हमें लड़ाके हंस रहा था ?'

'अरे दैया ! तू ठीक कहती है। अरे ! मैं आई।'

प्यारी उठी। चूड़ियां लाई

'यह क्या है।'

'तेरे लिए ली थी।' प्यारी ने कहा : 'ला, मुझे हाथ दे।'

कजरी के मुख पर संकोच आया।

'क्यों सकुचाती है?' प्यारी ने पूछा।

'थोड़ा डर लगता है।'

'क्यों?'

'यह अच्छी जो है।'

'तो क्या तेरे लिए बुरी वाली लेती! कैसे तेरे गोरे-गोरे-से तो हाथ है। दुनिया में छोटी की ही कदर होती है। मेरी तो तब तक है जब तक तेरी सेवा कर सकूं। मैं तो तेरी चाकरी करूंगी।'

'हाय जेठी! मैं तो तेरी बांदी हूं। तू क्या कहती है। मुझे लाज आती है।'

चूड़ियां पहनाईं। देखी। कजरी ने भी देखी और हाथ आंचल में छिपाने लगी।

'क्यों छिपाती है?'

'वह आता होगा न!'

'तो?'

'देखेगा।'

'तो क्या कर लेगा? वह कहेगा तो लौटा दूंगी।'

'नहीं, तुम समझीं नहीं।' उसने झेंपकर कहा।

प्यारी हंसी। कजरी ने प्यार से देखा।

'तुझे मुझसे घिन नहीं?' प्यारी ने कहा।

'नहीं!' कजरी ने कहा।

'क्यों?'

'क्या जानूं!'

'अब लगी बड़ी भोली बनने।'

'सच, मैं नहीं जानती जेठी।'

'पर तू नहीं जानना चाहती कि तू मुझे कैसी लगती है?'

'नहीं।'

'क्यों?' अप्रतिभ होकर प्यारी ने पूछा।

'मैं जानती जो हूं।'

'क्या?'

'तुम मुझे चाहती हो।'

'तुझे कैसे मालूम?'

'तुम मुझे मीठा खिलाने को मंगाती हो। चूड़ी पहनाती हो। फिर भी मुझे डर रहने की कोई गुंजाइश है?'

उसकी बात में सरलता थी। प्यारी प्रसन्न हुई; और कहा : 'और जो मैं कहूं कि यह सब दिखावा है, तो तू क्या करेगी?'

कजरी ने कहा : 'तुम झूठ कहती हो।'

'क्यों? कोई सौत को चाहती होगी?'

'चाहती क्यों नहीं?' कजरी ने कहा, पर वह सकते की-सी हालत में पड़ गई। कजरी को अस्थिर जानकर प्यारी ने उसका हाथ पकड़कर कहा : 'कैसी अच्छी लगती है तू

कजरी लजाई

'तुमसे तो अच्छी नहीं हूं।'

प्यारी हंसी। कहा : 'अच्छा !'

दोनों हंस दीं। बहुत-सा स्नेह आया, बैठ ही गया। चारों आंखों में बिछा, मन में उतरा, रग-रग में पुलक हुई। बड़ी शान्ति फैली और फिर विश्राम खेलने लगा, घुटनों पर चलते बालक की तरह, आनन्ददायी, सुखदायी...

'तू मुझे चाहती है कजरी ?'

'जलती तो नहीं, पर चाहती हूं।'

'तू मुझे यहां से ले चलेगी ?'

'मुझे तो वह ले जाएगा कि से ?'

'क्यों ? तू चाहे तो वह छोड़ देगा ?'

'मैं ऐसा चाहूं तो मुझे मौत आए।'

'तू अच्छी है, कजरी ! बड़ी भोली है।'

'लगी बताने मुझे। मैं भोली हूं तो तू कौन है ?'

'मैं तेरी जेठी हूं।'

'तुझे मैं जरूर ले चलूंगी।'

दोनों गले मिलीं।

कजरी ने कहा : 'हाय, उससे न कहियो।'

'क्या ?'

'कि हम-तुम मिल गई हैं अब।'

'तू कहेगी तो मैं कहूंगी।'

सुखराम ने कलाकन्द लाकर धर दिया। और कहा : 'अच्छा भई, यह भी अजीब बात रही।'

कजरी ने पूछा : 'कौन-सी ?'

'यहां सुलह हो गयी है।'

'तू गया सो ही लड़ाई बंद हो गई।'

'हां,' सुखराम ने कहा : 'लड़ाई जैसे मेरे पीछे ही है।'

'और है ही क्यों ?'

'क्या बेवकूफ है ! भला ये भी कोई बात है ? तू चाहे तो मैं अभी चला जाऊं ?'

'खाएगी नहीं,' प्यारी ने कहा : 'मैं खिलाऊंगी।

'मैं नहीं खाती।' कजरी ने कहा, 'ये बोलता कैसे है ?'

'कैसे बोलता हूं ?'

'कजरी ठीक कहती है।' प्यारी ने कहा, सुखराम ने आंख अधमिची करके सिर हिलाया। प्यारी की ओर देखा, फिर कजरी की ओर। प्यारी ने उठकर कजरी के मुंह में कतली रखी।

कजरी खाती रही, प्यारी खिलाती रही।

'अरी,' सुखराम ने कहा : 'यह सब खा जाएगी, कुछ अपने लिए भी तो बचा ले।'

कजरी ने कहा : 'तू न खाएगा? सच कहता है, मैं सब खा-पीकर चट कर जाती।

'खा ले, मुझे अच्छा लगता है।' प्यारी ने कहा, 'तुझे खिलाने में सुख होता है।'

'अरी रहने दे, वह सुन रहा है।' कजरी ने कहा।

'सुनकर जलेगा बिचारा।' प्यारी ने कहा।

'इसका खेल खतम जो हो गया है।' कजरी ने उत्तर दिया।

सुखराम का दिन उछल रहा था

'कोई नई मुसीबत ?' सुखराम ने कहा।

'नई तो मैं हूं।' कजरी ने कहा : 'अब मैं ही मुसीबत लगने लग गई न ? मैंने पहले ही कहा था जेठी। इसका कुछ भरोसा नहीं। तुम्हारे रहते मुझे ले आया अभी जाने कितनी पलटन लाएगा !'

'ठीक कहती है,' प्यारी ने कहा : 'लुगाई जो करती है मजबूर होकर, पर म' जो करता है सो मस्त होकर, उसको कोई रोक नहीं।'

'न कोई भरोसा है जेठी।'

'ठीक है जी।' सुखराम ने कहा : 'दिल का क्या किसीने ठेका लिया है ?'

'ऐसा भी बजारू न बन।' प्यारी ने कहा।

कजरी ने कहा : 'नसैनी पर चढ़कर कोई चले, और ऊपर का डंडा धोखा दे जाए तो उसका पांव कहां टिके ?'

'नीचे के बांस पर।'

'तो मैं वही हूं।'

प्यारी ने कहा : 'यही है बड़ी बातून। जरा-सी है, पर देख तो, कैसी सरौते-सी इसकी जीभ चलती है।'

सुखराम ने कहा : 'तेरी पट गई इससे ?'

'बिल्कुल नहीं।' कजरी ने कहा।

सुखराम ने कहा : 'अच्छा, अब चलेगी कि यहीं रहेगी ?'

कजरी उठ खड़ी हुई। दोनों गले मिलीं। सुखराम ने देखा। अभी कुछ विश्वास नहीं हुआ।

उसने देखा, प्यारी के नेत्रों में आंसू थे।

'रोती क्यों है ?' कजरी ने कहा।

'ऐसे ही', प्यारी ने कहा।

कजरी ने सुखराम से कहा : 'देखा तूने, जेठी रोती है।'

'क्यों ?' सुखराम ने कहा।

'कहती है, मैं यहां कब तक रहूं ?'

'यह तो आप आई थी।'

'भूल किससे नहीं होती ?'

'तू ले चलना चाहती है ?'

'हां।'

'तो ले चल।'

'पर वह सिपहिया जो है !'

'सो तो है ही।'

'फिर ?'

प्यारी ने कहा : 'उससे नहीं कहना ये कुछ।'

'मैं कहूंगा।'

'अभी तू बीमार बनी रह।' कजरी ने कहा।

प्यारी ने उसके सिर पर हाथ फेरा। कहा, 'सो न डर।'

सुखराम ने कहा : 'क्यों, अब तो मुझपे सक नहीं रहा न ?'

प्यारी ने खीझकर कहा : 'सता ले मुझे तू।'

सुखराम हंसा कजरी ने कहा भुरा न मान जेठी मैं सब ठीक कर लूंगी

अब कब आओगे ? जाकर याद भूल जाना कोई तुमसे सीखे

कजरी ने कहा : 'मैं तो इसे रोज याद दिलाती थी।'

सुखराम ने कहा : 'अब नहीं आएंगे। ऐसे मैं इसे हर बार यहां लाने को नये कपड़े कहां से लाऊंगा ? बड़ी जिद्द करती है ये।'

वे हंस दिए। कजरी झेंप गई। प्यारी ने स्नेह से कहा : 'छोटी भी तो है।'

'अच्छा, अब चलूं।' कजरी ने कहा।

प्यारी ने कहा : 'फिर आयेगी न ?'

'बुलाओगी तो सौ बार आऊंगी।'

चलती बेला कजरी ने मुस्कराकर कहा : 'अबकी बार महावर रचाना न भूलना।'

21

शाम हो गई थी। ढोर लौटने लगे थे। उनके पैरों से उठी धूल अब नाक में घुसने लगी थी। जगह-जगह धुआं उठ रहा था और कसैलापन फैल रहा था। उतरता अंधेरा झीनी चादर डाल चुका था, जिसमें से निकलकर उड़ते हुए पक्षी ऐसे लगते थे जैसे किसी जाल से बचकर निकले जा रहे हों। और मंदिरों के घंटे बजते हुए उस वातावरण को अब और भी बोझिल बना रहे थे।

धूपो दीना भड़भूजे की बहू से भीतर बातें कर रही थी। दोनों की बात का जैसे कोई अन्त ही नहीं था। धूपो अब प्यारी और बांके को भूल चुकी थी। बांके को पिटवाकर उसकी प्रतिहिंसा मिट चुकी थी। जीवन अब फिर सुस्थिर-सा चलता चला जा रहा था। बातों जब में कुछ देर हो गई तभी दीना आ गया। दीना की बहू ने सिर ढक लिया।

दीना बाहर ही बैठ गया। उसके साथ कुछ आदमी भी थे। दीना बच्चों का भी दोस्त था, क्योंकि किस्से-कहानी सुनाया करता था। उसके चौंतरे पर वे भी अपना यथोचित स्थान पाते थे।

उनकी बातें सुनकर धीरे से बहू ने कहा : 'बस, अब बैठ गए। रोटी-पानी की कुछ फिकर ही नहीं ?'

धूपो को अपने पति की याद आ आई। उसने कहा : 'ऐ भाभी ! नैक बाहर वालों से भी मिल लेने दिया कर।'

बहू ने कहा : 'बस ! यहां रोटी ठंडी हुई जा रही है।'

दीना कीर न था, न मलाह। वह मुसलमान था। बाहर जात-पांत की बातें हो रही थीं। उसने कहा : 'सुनो, मैं किस्सा सुनाता हूं।'

दीना ने कुछ प्रार्थना-सी पढ़ी और जो अपने स्वर को खींचकर कहना प्रारम्भ किया तो सब पर जादू-सा छा गया।

धूपो को मजा आया। बोली : 'ऐ भाभी ! मैं भी सुनूंगी।'

दीना की बहू मुस्कराई। कहा : 'सुनाता तो ऐसा है कि उठने नहीं देता। सुन ले। बैठ जा न !'

'हाय, पर अबेर हो जाएगी !'

'क्या देर होगी ऐसी !' वह उसपर अपने पति के हुनर का असर डालकर अपना रोब डालना चाहती थी। अतः उसने रोका। परिणामस्वरूप धूपो बैठ गई। दीना की बहू भी काम छोड़ कर उसके पास ही आ बैठी।

बाहर समां बंधा हुआ था सबके मुंह पर उत्सुकता थी

दीना कह रहा था कुदरत का खेल देखिए क्यों न यमन के बादशाह की तबी

यत करती है कि वह मक्का को हज्ज करने जाए ? वह अपने लड़के को लेके चला, और शा'त्र, क्योंकि लड़की को लेके जाने का रिवाज़ नहीं, सो उसे वह क्यों न घर ही छोड़ जाए ? वह तो गया उधर, और इधर उसके वजीर की नीयत बिगड़ गई, मचल गई; क्यों ? क्योंकि शहजादी कैसी मलूक है, कित्ती खूबसूरत है जिसका बयान नहीं। हंसती है तो फूल झड़ते है। जिधर देखती है उधर उजाला हुआ जाता है, और कमर है उसकी कि छल्ले में से निकल जाए, पर नेक इतनी कि आंखों में सील झलका करे। और भाइयो ! वजीर उससे जाके कहता है कि भई शहजादी, तू हमारे पास आ। वह कहती है कि तू मेरे महलात से अपने महल में जा। मैं तुझे जवाब भिजवा दूंगी। उस वखत तो वह चला आया, मगर हुस्न के चोट खाये को चैन कहां ! उसके तो जहर बुझ गया है, सो हवस की सांपन-सी लफलफा के फुफकार मारती है, और दिल अब हाथों-बल्लियों उछल रहा है। क्या करे वह, क्या नहीं करे, यों सोचने मे उसकी अकल पर चढ़कर शैतान कहता है कि उठ और काबू कर। वह क्या आपमें झुककर आएगी ? आखिर रात आती है, चंदा निकलता है तो वजीर को शहजादी का मुंह दिखाई देता है, सो क्यो न वह राह आए जिसमें वजीर उसके महलात की तरफ बढ़ चले और उधर क्यों न तिखण्डे पै बैठी शहजादी उसे अपने दरपन मे देख करके न सोचने लगे कि भाई, अब मैं करूं तो क्या करूं ! बाप तो दूर, भाई तो उसके साथ, मैं अकेली, जात औरत की, पर ऐसे जो मैंने पत गंवा दिया तो फिर बेकार रहना है, क्योंकि खुदा क्या नही देखता; सो फाटक तो करवा दिए बन्द और नौकरों से कहके ऊपर से पत्थर गिरवा दिए। बस, वजीर पै गिरे वे पत्थर, तो क्यो न वह चुटीला हो जाए, अपने घर आ पड रहे।

'कुदरत की बात कि बादशाह और शहजादा क्यों न तभी लौट आएं। वजीर बडी खिदमत करता है। बादशाह कहता है कि मेरे मंतरी ! तेरी यह क्या हालत हुई है, बोल। मंतरी कहता है, हुई को भूलो मेरे बादशाह ! क्या करता है ? पर कैसे मान जाए ! तो मंतरी बोला कि तेरी लड़की का चलन खराब है सो हजार मना किया था तो पिटवाया मुझे।

'आहा, बादशाह होते कच्चे कानों के, खुशामद के पाबन्द, मंतरी होते बिच्छू के डंक। सो कुंवर को हुकुम मिला, जाके उस लड़की के टुकड़े कर दो, जिसने हमारी नाक कटवाने का जतन किया।

'वह कुंवर चला। पर दिल नहीं मानता।'

धूपो का हृदय मग्न हो गया था। कैसी कहानी सुनाता है !

'भाभी !' उसने कहा : 'आदमी बड़ा इलमदार है।'

'दिमाग है दिमाग।' उसकी बहू ने कहा।

'बेशक !' धूपो ने स्वीकार किया। उसकी इस स्वीकृति से दीना की बहू को बडी तृप्ति हुई।

और दीना अब हाथ उठाकर कह रहा था : 'चलता है तो पांव नहीं उठते। कैसे उठे ? कुंवर को याद आती है। भई बचपने मे हम खेले हैं। तो पहले मैं देख तो लूं कि यह ठीक बात है क्या ? पहुंच कै देखा तो शहजादी पाक बस्तर बैठी कुरानशरीफ पढ रही है, और उसके पहुंचने के बखत उसके मुंह से निकलता है—इज्जते मन सहुतवां और जिल्लते मन सहुतवां। गोया मतलब क्या कि हे अल्लाह, तू ही इज्जत का देने वाला है। और तू ही जिल्लत का भी देने वाला है। अहा, कैसी बात सुनी कि कुंवर का दिल रोने क्यों न लगे। वह कहे, मुझे पापिन नहीं लगती, पर शहजादी कहती है, तू बाप का हुकुम मान मुझे चाक कर दे। वह मुझ पर शक करता है। बीरन मेरी बात मान। शहजादा कहता है कि नही और कहता है कि ला मुझे अपना काम करने दे और

आलीशान और बड़ी कीमती लकड़ी का बक्स लेके उसमें उसे बिठा के नदी में छोड़ दिया। लड़की बह निकली क्योंकि बकस में करामात है कि डूबेगा नहीं, उठेगा नहीं, दरिया पर चल बहेगा।...'

धूपो की आंखें खुली-सी रह गईं। कैसा आश्चर्य था! वह कल्पना कर रही थी कि शहज़ादी बक्स में क्या सोचती हुई वही चली जा रही होगी। डूबती, उतराती, बहती।

दीना की बहू ने लम्बा सांस छोड़ा। धूपो ने मुड़कर देखा। वह शान्त बैठी थी। धूपो फिर सुनने लगी।

दीना ने खांसा और फिर कहा :

'और उधर देखिए कि चीन का बादशाह खबर भेजता है कि मेरा कुंवर जवान हुआ है, सो हे यमन के बादशाह! तू अपनी लड़की भेज दे। हम शादी रचाएंगे। क्या कुदरत कि बात न मानिए कि इधर चिट्ठी गई, उधर क्यों न बक्स बहता हुआ नदी से चीन पहुंचा और क्यों न चीन के शहज़ादे का शिकार खेलते हुए उधर आकर उस बक्स को देखना हुआ।

'उसने इशारा किया। चटपट मल्लाहों ने कूदके संदूक बाहर निकाला। बढ़ई बुलाए। सो खाती की सदा की आदत है कि कुछ बनाने के पहले कुल्हाड़ी को लेके ठोक-कर देखते है। जो बक्स ठुका तो भीतर से आवाज़ आई : नैक हौले-हौले, संभल के।

'यह तो खाती का सुनना हुआ और डर के मारे उसका सिर पर पांव रखके भागना हुआ। कुंवर ने जो संदूक तुड़वाके देखा तो आशिक हो गया, और शहज़ादी ने देखा तो मन ही मन रीझ के आंखें झुका लीं। कुंवर सोचता है कि ऐल्लो! हम तो यमन जा रहे थे। चलो, लाख-पचास हज़ार रुपए बचे। लड़की खुद घर आ गई। यों महलों में ले जाके निकाह पढ़वाया और चैन से रहने लगे। उसका नाम! लड़की के पेट से एक लड़का भी हो गया।'

धूपो इस कल्पना पर प्रसन्न हुई। कहा : 'चलो, अच्छा हुआ।'

दीना की बहू ने कहा : 'किस्मत की बात है।

'सो तो है ही। भला बताओ!'

'अरे क्या थी, क्या हो गई!'

'यों न कहेगी भाभी, कि क्या हुई और फिर क्या हो गई।'

'अरी, मै इसी से तो कहती थी।'

दोनों की बात खतम नहीं हुई थी कि बाहर बैठे लोगों की आवाज़ आई—'अहा-हा! क्या बात कही है!'

दीना ने गौरव से चारों ओर देखा और सिर की टोपी को ज़रा और आगे की तरफ झुका लिया और दो-चार जो खड़े थे, उन्हें भी हाथ से बैठ जाने का इशारा किया और उनको जगह ढूंढ़ते देखकर अपने पास वालों से उसने इशारे से कहा कि जगह कर दो।

बच्चों के चेहरों पर प्रसन्नता थी, आश्चर्य था। कुछ के मुंह फटे गए थे। वे अवाक् सुन रहे थे। उन्हें कथानक की क्षिप्रगति अपने साथ बहाए ले जा रही थी।

दीना पटाखे भी बनाता था और भाड़ भी भूंजता था। गांव में उसको बहुत लोग पसन्द करते थे, क्योंकि ठाल का वक्त उसके यहां खूब आसानी से कट जाया करता था। और दीना की ऐसी रईस तबीयत थी कि अतिथि को चिलम पर चिलम पिलाता जाता था पर ऊबता नहीं था उसकी इस आदत से उसकी बीवी परेशान थी लेकिन दीना है कि टेव ही नहीं छोड़ता।

उसने कहा : 'अब देखिए ! कुदरत की बात है। उधर शहज़ादा एक दिन कोरी-बारे में जाता है तो वहां एक कोरी से एक कोरिन यों बतया रही है कि शहज़ादा ठिठककर सुनने लगा। कोरिन कह रही थी कि सुन मेरे समधी ! जो तू बादशाहों का सा करना चाहै तो कत्ल कर ले, पर जो बिरादरी वालों का सा करना चाहै, तो मैं तब ही करूंगी जब मेरी कुहनी मुंह मे आ जाएगी।

'और वह बात कुंवर के मन में गंस के रह गई। देखिए ! बादशाह का कुंवर क्यों तो उधर जाए और क्यों ये सुने कि उसे चिंता व्याप जाए, और लौटे तो वह मन ही मन सोचने लगे कि भई कुंवर, यह कोरनियों ने क्या गजब के अलफाज बोल दिए। यह तो दरयाफ्त करने लायक बात है। बस, उसने जाके खटपाटी ले ली, तो सब हाजिर होके पूछने लगे कि कुंवर सा'ब, बात तो बताओ। जो उसने बताई तो फौरन हुकम हुआ कि कोरी और कोरिन दरबार में हाजिर किए जाएं। अब कोरी और कोरिन थर-थर कांपे कि भई, बादशाह जाने क्या कर डालेगा। कुंवर बोला कि भई, डरो मत, पर ये बताओ कि ये तुमने क्या कही कि बादशाहों-सा करो तो अब कर लेओ, पर जो बिरादरी-सा करो, सो तब, जब कुहनी मुंह में आ जाए ! कोरी-कोरिन बोले कि हुजूर ! मारो चाहे छोड़ो, पर सांच को आंच कहां ! बात तो यही है। बादशाहों के ब्याह में तो छोरी घर-बैठे आ गई ! सो न रुपैया उठा न धेला, निकाह पढ़वा लिया, चट काम हो गया। बिरादरी में तो ब्याह होय तो क्या न होय ?

'वे कहके चल दिए। कुंवर जाके यमन शहज़ादी की तस्वीर देखता है तो वही सूरत है, जिससे निकाह पढ़ा था, तो कहता है कि मंतरी ! तुम इसे इसके बाप के पास ले जाओ और हम इससे अब ब्याह-बरात से ब्याह करेंगे। शहज़ादी अपने बच्चे को लेके चली तो राह में अब देखिए कि कुदरत का खेल है, मंतरी की जात ही खराब, वह बड़ा बदमास, उसकी नीयत बदल हुई। और जो तम्मू गड़े, तो बोला कि शहज़ादी, मेरे मन की हवस पूरी कर। शहज़ादी ने कहा : मुझे बाप के घर पहुंच जाने दे, तो मैं जवाब दूंगी। पर लश्कर तो हट के पड़ा था, वजीर बोला : अभी कर। सो नजर बचाके शहज़ादी लपकके तम्मू के ऊपर चढ़ गई। वजीर बोला : कै तो नीचे आ, नहीं तो मैं तेरे इस बालक को मारता हूं। वह बोली : पत मेरे हाथ है जालम। मारना-बचाना अल्लाह के हाथ है। सो तू भले ही मार ले। वजीर ने, हाये-हाये, बच्चे को कतल कर दिया। और अंधेरे में शहज़ादी फट तम्मू से बाहर कूद के जंगल में दुबक गई। लश्कर-पलटन मे ढुढार मची, पर कोई न मिला, तो सब लौटे और वजीर ने जाके कह दिया कि हुजूर ! वह तो बदनीयत औरत थी। अपने बच्चे को खा गई डायन। जाने कहां चली गई।

'ओहो ! कुंवर के गम की थाह नहीं। बड़ी उसे चाह थी उसकी, सो ऐसा धक्का पहुंचा कि दिल हीरे-सा तड़का। और गुस्से मे सवार यमन के बादशाह के पास भेजे कि हम तेरी लड़की ब्याहने आते हैं, कै तो तैयार रह कि जंग करेंगे। यमन का बादशाह चक्कर में पड़ा। वजीर ने देखा, कौन-सा वजीर ! वही जिसके मारे शहज़ादी काठ के संदूक में बहाई गई थी, मौका पा गया। बोला : हजूर, आपकी-मेरी बेटी में फरक ही क्या। मेरी लड़की ब्याह दें हजूर। सो यमन बादशाह ने मंजूरी दे दी। अब तो बरात की तैयारी हुई तो चीन की राजधानी में हल्ले गूंजने लगे, पर शहज़ादी पहुंची तो फकीर का भेस बना लिया और शहर बाहर एक मंदिर में रहने लगी। आते-जाते में बाबा डडौत, बाबा बंदगी, बाबा राम-राम की तो, खबर कुंवर तक भी पहुंची, सो वह भी वहां पहुंचा।...'

आसमान में तारा निकल आया था। झाड़ियों की उठी हुई टहनियों के पीछे यह ऐसा लग रहा था जैसे कोई चमकदार मच्छर किसी मसहरी के पीछे कुलबुला रहा हो

और अपना रास्ता निकाल सकने में असमर्थ हो गया हो।

धूपो ने उसे नहीं देखा। अब तो उसका ध्यान केन्द्रित था। उसे क्या मालूम था कि अंधेरा अपनी पर्तें गहरी करने लगा था। बाहर लोगों का जमाव था ही। और दीना की बहू बगल में बैठी कह रही थी . 'हाय अल्ला ! क्या से क्या हो गया ?'

'अरी, ये ही खेल हैं इस दुनिया में।'

'देख तो क्योंकर पार होती है !'

'और डूब गई तो ?'

पर दीना की बहू को इतना अंदाज़ था कि कथा होगी सुखांत ही। दीना ने पैतरा बदला और जैसे नरम स्वर से कहा :

'कुदरत की बात, क्यों न शादी की खबर उस फकीर के भी पास पहुंचे, कि सवेरा होए, कुंवर आए तो वह लड़की, अब फकीर बनके बोले कि बाबा सा'ब, रात-हमने एक ख्वाब देखा।

'कुंवर कहता है कि साईं सा'ब, कुछ हमें भी बताओ !

'फकीर कहता है कि अरे नहीं भई ! ख्वाब-ख्याल की बात है, कहीं लग न जाए दिल, बात है, सो यह तो यों ही रहने दो।

'पर कुवर कहता है कि नहीं साईं सा'ब, बतानी ही होगी।

'तो फकीर कहता है कि भाई, तू मानता नहीं तो सुन कि हमने यों देखा कि एक बादशाह अपनी लड़की को छोड़ हज्ज करने चला। लड़की पर वजीर फिदा हो गया। लड़की न मानी तो बादशाह के लौटने पर उसने झूठ-चुगल करके लड़की को बदनाम किया, तो लड़की के भाई ने उसे काठ के बकस में रख बहा दिया और उधर एक शहजादा क्यों न पहुंच जाए जो लड़की को निकाल के उससे निकाह कर ले। बस, इतना ही रहने दे, क्योंकि ख्वाब-ख्याल की बात है, कहीं दिल न लग जाए। दिल की बात है, सो यह तो बस अब यों ही रहने दो बाबा सा'ब !

'पर कुंवर के तो खिचके चुभी है, वह कहता है कि नहीं साईं सा'ब ! और सुनाओ।

'कि नहीं बाबा सा'ब, अब इत्ती ही रहने देओ।'

'कि नहीं सा'ब !'

'तो जब यों दो-दो हुई और कुंवर ने जिद् करी तो फकीर कहता है—कुदरत की बात है। एक कोरिनिया के कहने पै कुंवर ने लड़की को मां-बाप के घर भेजा और रास्ते में लड़की पै मंतरी की नीयत बदल गई और वह पत बचा के भागी, उसने बच्चा माड़डाला। बस ! अब रहने दो बाबा सा'ब। क्योंकि ख्वाब-ख्याल की बात है, कहीं दिल न लग जाए।

'तो कुंवर ने कहा कि साईं सा'ब, आपको मेरी बरात में चलना होगा ही। और कहो।

'बस बाबा सा'ब।' लड़की ने कहा, अब हम रमते जोगी। खैर तू कहता है तो चले चलेंगे।

'चुनांचे बरात चढ़ी। वजीर की लड़की आई तो फकीर कहता है कि यमन की शहज़ादी से तस्वीर मिला के तो देख !'

'ओहो ! क्यों न कुंवर तस्वीर मिलाके देखता है। हनेरे की। यह नूर कहां ? यह हुस्न कहां ? कहां ये दूध का धोया-सा रंग, कहां काजल-सी जुलफ ! हाय-हाय ! यह क्या हुआ ? वह सदी पछाड़ खा के गिरा सो लोग कहन लगे कि साईं साय यह क्या हुआ ? भभूत डाल के मंतर पढ़ो यह तो इकला कुंवर है मां-बाप की छाती फट

, कुछ करामात दिखाओ। और देखिए, कुदरत का खेल कि फकीर कहता है कि
तो पत का जोर है कि कुंवर उठके बैठके कहता है कि मैं कहां हूं ?'
'और साईं का भेस उतार के शहजादी कहती है—मुझे पहचान……देखा तो
खिल उठा। निकाह पढ़वाया, ढोल-तासे बजे, फिर लेके लौटा तो वह-वह पटाखे
'

शायद दीना अब इस कल्पना में मग्न था कि उसके ही हाथ के पटाखे छूट रहे थे
स कदर माल बिक रहा था कि दीना मालामाल हो गया था। रुपयों का ढेर लग
ा। उसने क्षण-भर को आंखें मीच ली और जब खोली तो देखा, सब मुग्ध-से बैठे थे।
आर दीना ने कहा—गाने ही-सा गाया—

गोरी ढोला मिल गए, पूछें कुसल कि छेम।
पत की कथा सुनात हूं, पत नारी को नेम !

22

शाम ढल रही थी। उस वक्त सूरज की किरनें लम्बी-तिरछी होकर चली गई
ाखिर अपने घर जा रही थी। सुखराम बाहर बैठ गया।
'तू भीतर जा।' उसने कहा।
'मैं अकेली जाऊं?' कजरी ने चौंककर पूछा।
'उसमें हरज क्या है ?' उसने निश्चिन्त स्वर से उत्तर दिया।
'पर तू ही यहां क्या करेगा ?'
'अरे, लुगाइयों में मेरा क्या काम ?'
कजरी भीतर चली गई। प्यारी आ गई।
प्यारी ने कहा : 'मेरी कजरी !' वह बड़ी प्रसन्न हो उठी थी।
'हाय, आ तो रही हूं !' कजरी ने लजाकर कहा।
'मैं तो लेने आई हूं।' उसने मुग्ध होकर कहा।
'चल, रहने दे !' स्नेह ने स्नेह को संभाल लिया। और हाथ में हाथ डाले हुए
ाती हुई दोनों भीतर चली गईं।
रुस्तमखां बाहर से आया था। देखा, द्वार के पास सुखराम बैठा है।
'सलाम हुजूर !' सुखराम ने कहा।
'सलाम। अच्छा है भाई !'
'दुआ है सरकार की।' सुखराम ने कहा। रुस्तमखां चारपाई पर बैठ गया।
'बैठ जा सुखराम।' उसने कहा।
'हां बैठा हूं।' सुखराम ने कहा। और वैसे ही हुक्के से चिलम उठा ली और उसे
में से भर लाया। फिर पहले पी-पीकर सुलगाया और जब ढेर-सा धुआं निकला
के पर चिलम रखकर रुस्तमखां की तरफ सरका दिया। रुस्तमखां ने चिलम का
और निगाली मुंह से लगाई।
'क्यों सरकार, अब कैसी तबियत है ?'
'मैं तो ठीक ही हूं।'
'नहीं सरकार।' रुस्तमखां की आंखों में घूरते हुए उसने कहा। 'अभी ठीक नहीं
ीने-भर में लौट आएगी।'
लौट आएगी ? ा थर्रा गय
ठीक है ने कहा अगर यकीन नहीं तो फिर देख लेना

'तो फिर क्या करूं ?'

'साल-भर अलग रहना पड़ेगा ।'

'शराब से भी ?'

'नहीं, उधर रोक नहीं ।'

'तू आदमी हुनर का तो है ।' रुस्तमखां ने कहा : 'इस मियाद को कम नहीं कर सकता ?'

'आप कर सकते हो ।'

'सो कैसे ?'

'नीयत साफ रखना ।'

रुस्तमखां खिसिया गया । परन्तु उसको चारा नहीं था । पर उसे उसकी बात में सन्देह अवश्य हो गया । पहले तो कहता था कि जल्दी ठीक हो जाओगे । हो न हो, उसने जान-बूझकर ही यह पद लगाई होगी ।

कुछ देर बातें करके वह भीतर चला गया ।

पुकारा : 'कजरी !'

उसने पूछा : 'क्या है ? तुमने उससे कहा ?'

'अभी नहीं । रंग दे दिया है ।'

रुस्तमखां ने उठकर सुना, वह कह रहा था : 'मानेगा नहीं, लगता है ।'

'ये माने, इसका बाप !'

रुस्तमखां लौट आया । वह समझ गया था ।

सुखराम ने कहा : 'कजरी, मैं जाता हूं ।'

'कहां जाएगा ?'

'बजार, सामान ले आऊं ।'

'बहुत देर बाद न आइयो, कहीं बैठ जाय वहीं बातों में ।'

'हां हां, चुप रह !' उसने कहा ।

कजरी लौट गई ।

प्यारी ने पूछा : 'कौन था ?'

'सुखराम था ।'

'क्या कहता था ?'

'तुम्हारी पूछता था ।'

'ऊपर नहीं आ सकता था वह ?'

'जाने की कहता था ।'

'क्यों, जल्दी क्या है ?' प्यारी ने कहा ।

'घर पहुंचेंगे नहीं ?'

'यहीं बैठने में देर हो जाएगी ?'

'पराया घर नहीं है क्या ?'

प्यारी रूठी । कजरी समझ गई । कहा : 'मैं ताना नहीं मारती ।'

'तो क्या कहती है ?'

'सच कहती हूं । तुम बताओ, यहां तुम आजाद हो ?'

प्यारी ने स्पष्ट कहा : 'नहीं ।'

'मैं जानती थी, तब मैंने गलत कहा ?'

नहीं

फिर तुम क्यों रूठी ?

'मुझे ले चलो।' प्यारी ने कहा।

'उससे बात तो कर लें पहले।'

'रुस्तमखां से? वह न माना तो?'

'सुखराम जाने।'

कजरी का उत्तर सुनकर वह सोच में पड़ गई।

अब उसे लगने लगा कि वह बहुत बड़ी भूल कर गई है।

चक्की से पीसते जाओ, पीसते जाओ, हजारों के पेट भर देगी, पर उसीका पाट उठाकर गले में डाल लो, गर्दन तोड़ देगा। यही हाल प्यारी का हुआ। उसे बहुत कोफ्त हुई। कहा: 'मैं क्या सोचती थी, क्या हो गया!'

कजरी नहीं समझी। पूछा: 'क्यों?'

'यह मरा, जी का जंजाल हो गया।'

जैसे फिर वह अपने-आप बड़बड़ाने लगी: 'कौन कहता है मैं चुप रहूंगी। नहीं! वह मुझे रोकने वाला है कौन?···मैं तो नटिनी हूं···नटिनी! कौन रोक सकता है···'

उस समय वे अवरुद्ध कपाट जैसे खुलने लगे। शरीर के भीतर जगह-जगह जेलखाने थे, जिनपर भावों की भीड़ ने हमला किया, स्वार्थों के पहरेदार आगे आए, दोनों में मुठभेड़ हुई, स्वार्थ रौंद दिए गए और जेलखाने के दरवाजे अर्रा-अर्राकर टूटने लगे।

'क्या कहती है?' कजरी ने पूछा।

प्यारी बड़बड़ाती रही, 'मैं आप आई थी···आप जाऊंगी। जेल में डाल देगा उसे? डाल दे। मेरा क्या है? कतल कर दूंगी हरामी का····'

प्यारी को जैसे आवेश था।

उसने कहा: तू तो तैयार है?'

'हां।' कजरी ने कहा: 'पर डरती हूं।'

'क्यों? मैं सौत हूं, इससे?'

'नहीं, ये रोकेगा।'

'नहीं, नहीं रोकेगा ये।'

'मैं नहीं मानती।'

'मत मान, पर मैं कहती हूं।'

'तुम कहती हो, वह क्या कहेगा?'

'कुछ कहे!'

'और जो रोकेगा तब?'

'मैं रुकूंगी कब?' प्यारी ने कहा। उसके स्वर में ऐसा घोर विश्वास था कि कजरी चौंक उठी। वह नितांत निर्भय दिखाई दे रही थी। जैसा तूफान में से निकला हुआ पक्षी आकाश में विजयी स्वर से चिल्लाकर उड़ रहा हो और महाशून्य के वृक्ष पर उड़ने चला रहा हो। आज उसके नीचे समुद्र है, पर वह बिल्कुल विचलित नहीं है।

'रोकेगा तो?' कजरी ने संदेह से पूछा। और वह इसके साथ ही इसके आगे-पीछे की सारी बातों को सोच रही थी। झगड़ा ही उसकी आंखों के सामने आकर खड़ा होता था। उसकी समझ में नहीं आता था कि कैसे इस सबका अंत मिल सकेगा।

'बांदी तो नहीं हूं।' तभी प्यारी ने कहा। उसकी आंखें तीखी दृष्टि से सब कुछ जैसे बेध देने की चेष्टा कर रही थीं।

'सो उसकी मजाल!' कजरी ने कहा।

मैं सेंध लगाके भाग जाऊंगी प्यारी ने कहा

परन्तु यह सेंध का नया प्रयोग था। फिर मुस्कराकर धीमी और मीठी आवाज़ खिलखिलाकर कजरी हंसी।

'क्यों, ऐसा क्यों?' प्यारी ने पूछा।

'भला बताओ,' कजरी ने कहा, 'कोई चोर है! अब तक चोर सेंध लगाकर माल ले जाते थे, अब माल ही चोर की दीवार में सेंध लगाने लगा।'

प्यारी भी हंसी। पर वह माल का नाम सुनकर झेंप गई। उसने बहुत लज्जित स्वर में धीरे से कहा: 'चली जा, तू!'

'सच जेठी! तुम्हें कोई दगा दो!' कजरी ने कहा: 'मैं मरद होती तो तुम्हें कभी नहीं छोड़ती।' वह फिर हंसी।

'तू बड़ी नमको है।' प्यारी ने कहा।

'देख लेना। बस यही झगड़ा है।'

'तो मैं अपना मुंह झुलस लगी। फिर तो न देखेगा कोई मेरी ओर!'

'फिर सुखराम देख लेगा?' कजरी ने पूछा।

'क्यों नहीं?' प्यारी ने उत्तर दिया।

'ओहो!' कजरी ने कहा: 'जैसे वह दूसरी मट्टी का बना है।'

'नहीं कजरी, उसका दिल और है।'

'होगा जेठी। पर मरद मरद ही होता है। अरे, जब हमारा दिल अच्छे की खोज करता है, तो वह अच्छी क्यों न ढूंढे!'

दोनों हंस दीं।

'अच्छा,' प्यारी ने पूछा: 'बुरी शकल का आदमी क्या करे?'

'भगवान ने क्या बुरी औरतें नहीं बनाईं?' कजरी ने पूछा।

'तुझे अपने रूप का घमंड है कजरी?'

कजरी ने केवल समर्पण की दृष्टि से देखा। वह कुछ नहीं कह सकी। उसी समय रुस्तमखां आया।

प्यारी ने अपने को संभाला। अस्त-व्यस्त बैठी थी, ठीक से बैठी। और उत्सुकता से उसकी ओर देखा। रुस्तमखां ने कहा: 'क्या कर रही है?'

'बात करती थी।'

'किससे?' और रुस्तमखां ने मुड़कर देखा। उसे अपनी ओर देखते हुए पाकर अदब के लिए कजरी ने घूंघट काढ़ा, पर वह एक झलक देख ही गया। रुस्तमखां की तृष्णा को कचोट पहुंची। वह पूरी तरह देख सकने में असमर्थ रहा, इसका उसके दिल में मलाल रह गया। पहले तो टालने का यत्न किया। पर वह कमजोर तबियत का आदमी था। आखिर रहा न गया।

'कौन है यह?' उसने पूछा।

कजरी ने सिर नहीं झुकाया था। घूंघट में से ही देख रही थी सामने की दो उंगलियों की दरार में से। वह इन दोनों का पारस्परिक सम्बन्ध देखना चाहती थी। वह उस आदमी को देखना चाहती थी जिससे प्यारी को इतनी घृणा थी।

'कजरी है।' प्यारी ने कहा।

'वह कौन?'

'मेरी सौत!' प्यारी ने दृढ़ता से कहा।

रुस्तमखां कट गया। तो यह स्त्री अपने को अभी तक सुखराम की ही स्त्री मानती है, गोया वह कोई है ही नहीं। उसने चोट की: 'सुखराम के नाते, कि मेरे?'

'अपना मुंह देख लेने में' प्यारी ने कहा: 'लाज नहीं आती तुझे?'

रुस्तमखां उसके उस कठोर उत्तर को सुनकर सकपका गया। सारी ऐंठ हल्की पड़ गई। झेंपकर कहा : 'अरे, तू तो नाराज होती है! मैं तो मजाक करता था।'

'उसके लिए मैं क्या नही थी?' प्यारी ने कहा।

रुस्तमखां ने तिरछी आंख से कजरी को देखा और चला गया। इस समय उसके दिल पर गहरी चोट पड़ी थी। वह जानता था कि यह स्त्री मेरा प्रभुत्व औरों की तरह कभी भी स्वीकार नहीं कर सकती। और यह उसका सोचना सत्य भी था। स्त्री कभी अपने पति के रुआब में नही रहती। इज्जत करती है, सब तरह से सेवा करती है, अगर वह विद्वान होता है तो उसकी कद्र भी करती है, पर वह सदा कंधे से कंधा भिड़ाकर चलने की बराबरी करती है, उसका प्रभुत्व नही मानती। और कभी वह स्वीकार नही करती कि उसका आदमी उसकी आज्ञा के बिना किसी भी स्त्री से आजादियां लेने की हिम्मत करे। परन्तु रुस्तमखां का आहत हृदय इसका बदला चाहने लगा। उसकी कुरूपता अब साकार होने लगी। जैसे गंदे ढेर मे सूअर अपना लम्बा मुंह डालकर बड़ी से बड़ी गंदगी को खोजते समय चबर-चबर करता हुआ, उस गंदगी में धंसते हुए उस सबसे अपने को ढंक लेता है, उसका कमीनापन उसी तरह फरेब की गलाजत में धस-धसकर ढंकने लगा।

कजरी ने उसके चले जाने पर कहा : 'तुझसे भी इसका जी नही भरा?'

'क्यों?' प्यारी ने पूछा।

'टेढ़ी आंख से देख गया है मुझे! कह दीजो, आंख टेढ़ी ही रह जाएंगी।'

'नहीं, तू ऐसी फूलनदेई है!'

'सो कहां? मुझे चाव नहीं।'

परन्तु प्यारी की घृणा अब बढ़ गई थी। इतना कमीना आदमी है यह, बस यही उसके भीतर घूम रहा था। उसने और भी बुरे आदमी देखे थे, जिन्होंने उसके शरीर से खिलवाड़ किया था, पर कहीं न कहीं उनमें भी दर्द था, इंसानियत थी। और इन लोगों में? कुछ नहीं। न भगवान का डर है, न आत्मा का। किसी तरह की इन पर कोई रोक ही नही। और कजरी के अन्तिम वाक्य का एक व्यंग्य उसे चुभा। जैसे वह यहां शौक पूरे करने आई थी और उसने क्या किया? कुछ नहीं। वह कैद में है। उसके हाथ-पांव नहीं चलते। वह कितने बुरे लोगों में आ गई है!

कजरी ने कहा : 'बुरा मान गई?'

'नहीं तो।' प्यारी ने चौंककर कहा।

'फिर चुप क्यों हो गई?'

'ऐसे ही।' फिर उसने बात बदलने की खातिर मुस्करा दिया और कहा कुछ नही। कजरी उसे देखती रही। कुछ देर यों ही बीत गई। तब प्यारी ने बात चलाने को कहा : 'कुछ खाएगी?'

'नही।' कजरी ने सिर हिलाया।

'अच्छा, पान खा ले।'

'अच्छी न लगूंगी।' उसने बनकर कहा।

'क्यों? देख तो कैसी पीक रचैगी तेरे!' प्यारी ने पानदान खींच लिया और बैठकर हाथ पर पान साफ करने लगी। उसकी वह मुद्रा देखकर कजरी पर प्रभाव पड़ा। ऐसी बैठी है जैसे कोई बड़े घर की हो, ऊंच जात की। उसके मन में यह विचार कौंधकर समा गया। पर उसने उसे अपने से दूर फटकार देने के लिए उसी संकोच को क्रमशः रखकर कहा : 'अरे नहीं।'

प्यारी ने उस अर्द्ध (उत्तर की उपेक्षा करके उसकी ओर न देखते

हुए, पान पर चूना लगाया और कत्था टटोलते हुए उसी स्वर में कहा : 'ऊंहूं !' और हंसी। कजरी शर्मा गई। पान तैयार करके उसने हाथ बढ़ाकर सामने करके कहा : 'खा भी ले न।'

कजरी ने पान ले लिया और सलाम किया। यह उसकी आदत थी। उसने सदैव किसी ऊंचे दरजे के व्यक्ति से पान पाया था और उसके लिए उसे सलाम करने की मर्यादा रखनी पड़ी थी।

'मैं तो खा लूं। पर···' वह कहते-कहते अटक गई। वह उस समय मजाक करना चाहती थी लेकिन प्यारी उस समय गंभीरता से अपने भविष्य के बारे में सोच रही थी। इस समय उसके मुंह से एक अड़ंगा सुना तो उसने उसे ही पकड़ पाया और कुछ चौंककर उससे पूछा : 'पर कैसी ?'

कजरी समझी, सौत टटोल रही है। उसने मुड़कर मुंह पर आड़ करके मुस्कराहट दिखाने की चेष्टा करते हुए पहले तो मौन धारण किया और जैसे बहुत अटक रही है, कहा : 'वह छेड़ेगा फिर ?'

प्यारी समझ गई कि वह सुखराम के विषय में बात से आई थी। उसने देखकर भी उसकी मुद्राओं का अर्थ नहीं समझा। उसे लगा, वह व्यंग्य कर रही थी और वह उसके वैभव के प्रति था। उसने शंकित होकर आंखें गड़ाकर उसकी ओर देखा और कहा : 'क्या कहेगा ?'

कजरी को हंसी आ रही थी। उसने एक दिन पान खाया था तो सुखराम ने छेड़ा था। वह उसी सुखद कल्पना में डूबी हुई थी। इस समय उसने ठिठोली में ही कह दिया : 'यों कहेगा ही कि अब तू भी चली क्या ?'

प्यारी का मन झंकार उठा। कजरी का वाक्य उसके तीर-सा लगा। इसका मतलब यह हुआ कि सुखराम मन में उससे इस बात से नाराज अवश्य है कि वह एक दिन उसे छोड़कर चली आई थी ! तो फिर वह इसे कहता क्यों नहीं ? उसने सहमे स्वर में पूछा : 'ऐसा कहता है वह कभी ?'

उसकी अब समझ में आ रहा था कि वह क्यों अभी तक उसे ले जाने की बात नहीं कहता है। परन्तु वह निश्चित नहीं हो सकी थी, तभी उसने अन्तिम प्रश्न किया था।

'क्यों नहीं।' कजरी ने उसी मस्ती से कहा।

प्यारी के हृदय से जैसे रक्त बह निकला और उसे लगा कि अब यह रक्त रुकेगा नहीं। वह व्यर्थ ही जान दे रही थी। अब सुखराम के संग जाकर भी क्या करेगी !

प्यारी सुस्त हो गई। वह सोच रही थी, क्या मैं यहां रह जाऊं ? नहीं। यह नामुमकिन है। फिर ? कहीं भाग जाऊं ? कहां ? पर अगर मैं फिर भी उसी के पास रहूं तो क्या कभी उसका गुस्सा दूर नहीं हो जाएगा ? हो सकता था, पर कजरी के रहते क्या ऐसा हो सकेगा ?

'लाओ दे दो।' प्यारी ने हाथ बढ़ाया।

'क्या ?' कजरी ने पूछा।

'पान।'

कजरी समझी नहीं।

कहा : 'मैं नहीं देती। तुम बुरा मानती हो।'

नहीं रहने दे प्यारी ने कहा और हाथ बढ़ा ही रहा कजरी ने हाथ देखा और मुख देखा।

'क्यों ?'
'वह तो बुरा मानता है न ?'
'अरी मैं तो दिल्लगी करती थी !'
'सच कह कजरी, तू मुझे तंग करती है !'
'तेरी सौगन्ध भाई।'
कजरी ने पान खा लिया।
उस समय शाम गहरी से घनी हो गई।
'हाय, अंधेरी हो गई !' कजरी ने कहा।
'बत्ती कर देती हूं।' प्यारी उठी।
'लाओ, मैं कर दूं।'
'काम न कराऊंगी तुझसे।'
'क्यों ?'
'तू नहीं समझती। यह पराया घर है !'
कजरी ने कहा : 'देखो जेठी, मैंने इसलिए थोड़े ही कहा था ? पर मैं ताना नहीं मारती।'
वह लालटेन ले आई। चिमनी साफ की। तेल डाला। बत्ती उकसाई, जला दी। रोशनी फैली।
कजरी ने कहा : 'हाय राम ! कैसी जल उठी !'
प्यारी मुस्कराई।
कजरी ने कहा : 'जेठी, मुझे बताओ। ये कैसी जली ?'
'डेरे में जलाएगी क्या ?'
'हां जला लूंगी। सो न समझना।'
प्यारी ने हंसकर कहा : 'तो मंगा ले पहले।'
कजरी ने लालटेन उठा ली। गर्म नहीं हुई थी तब तक। कहा : 'नटिनी हूं। समझ लो यह डेरे पहुंच गई। अब कहो।' फिर कहा : 'दैया, ये तो जलने लगी !'
'धर दे, नहीं टूट जाएगी।'
'क्यों जेठी,' उसने रखकर कहा : 'हवा स बुझती तो नहीं होगी ?'
'नहीं बुझती।'
'बड़े दिमाग का काम है।' कजरी ने कहा : 'दुनिया में कैसी-कैसी चीजें हैं ! पर हमको नहीं।' और जैसे याद आ गया, बोली . 'दो बरस हुए मैं राजधानी गई। वहां मैंने राजा के महल को देखा बाहर से। रानी खड़ी थी वहां। आहा ! कैसी नरम और खूबसूरत थी ! सच जेठी, मैं उसके सामने कर दी जाऊं तो ऐसा लगे जैसे किसी ने गोरी गैया के बगल में कीच में से निकाली भैंस खड़ी कर दी हो। तो मैंने देखा बाहर ऐसे-ऐसे...' उसने हाथ फैलाकर बताया : 'हंडों में बत्ती जल रही थी, सतरंगी। मेरी तो टिकटिकी बंध गई। कैसी शान थी ! रात में दूध का-सा उजेला छा रहा था।'
'वे बड़े लोग ठहरे।'
'सो तो है ही,' कजरी ने कहा। फिर सिर हिलाया, जैसे वह अभी तक हंडे देख रही थी।
'कजरी, एक बात पूछूं !' प्यारी ने पूछा।
'पूछो।'
तूने उसे बना किस तरह लिया।'
अरे चलो कोई सुनेगा

'कजरी बता दे।'

कजरी हंसी। कहा : 'यह भी कोई पूछने की बात है ?'

'बता भी।'

मन ने मन को पहचाना।

प्यारी चिंता में पड़ी। उसने उससे फिर कहा : 'कैसे कजरी, बताती क्या नहीं ?'

कजरी चुप रही।

प्यारी ने कहा : 'तब वह अकेला रहता था। तुझे तभी तो मिला था वो ! तू उससे मिली कैसे ?'

'अरे मन आ गया और क्या ?'

प्यारी को सन्तोष न हुआ। पूछा : 'फिर ?'

'फिर ब्याह हो गया।' कजरी ने कहा।

प्यारी ने फिर डुबकी लगाई और सबन की तरह मछली के लिए चोंन डाल दी : 'तेरा आदमी कैसा था ?'

'क्यों पूछती हो ?'

'वैसे ही।'

'तो जो सोचती हो न, वह सच है।' कजरी ने बड़े दृढ़ विश्वास से कहा : 'बहुत बुरा था।'

'तुझे मारता था ?'

'नहीं, कमाना पड़ता था। शराब पीता था ?'

'फिर ?'

'फिर क्या ? यह नहीं पीता था क्या ? मैंने छुड़ा दिया।'

प्यारी ने कहा : 'मैं तो पीती थी। तू नहीं पीती ?'

'यही कभी-कभी, और क्या ?'

'तो तैंने इसे इसीसे चुना ?'

'फिर क्या ? मैंने सोचा कि यह अच्छा है और क्या ?'

'नट तो पीते हैं कजरी। इसमें बुरा क्या ?'

'बुरा तो वह जो बिरादरी न माने, वैसे सब अच्छा। पर मैंने कभी अच्छा नहीं पाया उसे। झगड़ा कराती है। मेरा पहला आदमी पीने के लिए बुरे से बुरा काम करने को तैयार हो जाता था। एक दिन एक के कफन के पैसे चुराकर शराब पी गया।' वह कह नहीं सकी। फिर कहा : 'मेरे पड़ोस में बचपन में एक चिकुवा खटीक भेड़ चराने आता था। एक दिन एक बगर कसाब के साथ आया। उसके संग हेकावाली दो कंजरियां थीं और एक दिल्ली का सरक-सरैयां खटीक था। शराब पी और खूब लड़े। हेकावाली कजरियां भाग गईं और सरकसरैयां मारा गया। चिकुवा और बगर कसाब को फांसी लगी। अब देखो। हेकावाले कंजरों का क्या ठिकाना है ? मेहतर का भी वे जूठा खाते है।

'सच,' प्यारी ने कहा : 'यह कम्बख्त है ही ऐसी चीज ! पर मुंह से एक बार लग जाए तो छोड़ी नहीं जाती।'

'एक सिकलीगरनी कहती थी : चाकर, तिरिया, चबैना, मुह, लागै तो दोस सो सच ही है- ऐसी ही ये शराब है।'

कजरी तेरा बाप था वह नहीं पीता था ?

मेरी मां भी पीती थी

'फिर तूने कैसे छोड़ दी ?'

'बचपन से ही ऐसी हूं।'

'मुझमें तुझ-सी अकल नहीं कजरी।'

'अकल मुझमें कहा ? अकल तो ब्याह के बाद मरद देता है। मुझे न दे सका। उसने दी। फिर ये खून से राजा ठहरा।'

'तू मानती है उस बात को ? उससे लाभ है कुछ ?'

'लाभ न हो, बात तो मानने की ही है। क्या यह टीक और नटों-सा है ? और नटो में इतनी अकल और इतनी सराफत कहा ?'

'अरी ये तो पोच ही है। मार-पीट कभी नहीं करता था।'

'ऐसा मारता है,' कजरी ने कहा : 'कि फिर हाड़ दुखने लगते है।'

'अरी चल सौत,' प्यारी ने कहा : 'आखें निकाल लूगी जो नजर लगाई।'

'तुझे कभी मारा उसने ?'

'बस एक बार।'

'तो वह तुझे चाहता नही।'

'तेरा मुह जला दूंगी।'

'जला दे, सांच को आच क्या ?'

'तेरी समझ में तू उसके मन की है, मैं नही हूं ?'

परन्तु कजरी ने इसका उत्तर नही दिया। मुस्करा दी। और बात वही हल्की पड़ गई।

और नीचे रुस्तमखां अब उद्विग्न हो रहा था। आखिर मामला क्या है ? आज बाके क्यो नहीं आया ? इस वक्त तक तो आ जाया करता था। एक चक्कर लगा ही जाता था। कोई गड़बड़ तो नहीं कर बैठा ? पर वह पोच है। जो करेगा सो पहले पूछ कर।

बाहर आंगन मे देखा। भैस पगुरा रही थी और कुछ नही था। द्वार के बाहर देखा। वही गाव का सन्नाटा छा रहा था और कुछ नहीं। भीतर आकर बैठ गया। पर चैन नहीं आया। यह ऊपर आ बैठी है और फिर उसके सामने अप्रिय बातें हो गई थीं। उसने क्या सोचा होगा ? यही कि प्यारी रुस्तमखां को डांटकर रखती है ?

तभी खिलखिलाहट की आवाज सुनाई दी। किसी बात पर दोनों स्त्रियां जी खोलकर हंस उठी थीं। उसे लगा, वे दोनों उसी पर ठठाकर हंसी हैं। जी किया, धड़-धड़ाता ऊपर चला जाए। उसे निकाल दे। पर फिर प्यारी !

और अजीब औरत है !!

सौत से प्यार !!

ज़रूर दाल में काला है। सुखराम कह भी तो रहा था कुछ। पख लगाने का क्या मतलब ?

रुस्तमखां फिर सोच में पड़ गया और दोनों हाथों में सिर थामकर बैठ गया। विचारों की तल्लीनता में वह यह नहीं सोच सका कि वह वास्तव में अंधेरे में बैठा है। उसे तो कहीं भी उजाला दिखाई नही दे रहा था। वह थानेदार का मुंहलगा आदमी। उसका दबदबा है और वह सब प्यारी ने ऐसे समाप्त कर दिया, जैसे कुछ था ही नहीं। कैसे हुई इसकी इतनी हिम्मत ?

और स्पर्धा का पिशाच अब रुस्तमखां के दिल में मरोड़े पैदा करने लगा, जिन्होने उसे उद्भ्रान्त कर दिया।

मेरे बारे मे कुछ कहता था ? प्यारी ने कहा

'कुछ नहा ।' कजरी भोली बन गई ।

'कुछ नहीं ?' प्यारी चिढ़ी ।

'हां, कहता था, प्यारी अच्छी है ।' कहा, जैसे याद आ गया हो ।

'बस ?' उसने सिर हिलाया ।

'और क्या सुनना चाहती है तू ?' उसने कुरेदा ।

'कुछ नहीं ।' प्यारी बनी ।

'तो फिर मेरा सिर क्यों खाती है ?'

'तू जानती ही क्या है जो ?' उसने उसपर चोट की ।

'मेरी बात वो मानता है, बस इतना जानती हू ।'

'वह तो बस तेरा चाकर है ।'

'सो मैं कहती तो मुझे तेरे द्वार लाना ?'

'दिखाये की बात है छोटी ।'

'अब तुझे विश्वास ही न हो तो मै क्या करूं !'

उसके स्वर में ईमानदारी थी । उसमे एक आत्मीयता झलक रही थी और प्यारी को ढांढस बधा ।

बोली : 'दुनिया बड़ी खराब है कजरी । इसमें भरोसा कर लो तो लोग भरोसा नहीं करने दें ।'

'सच कहती है तू । लुगाई को तो फूंक-फूंक के पांव धरना चाहिए । इसमे जात की भी बात नहीं ।'

'सो तो है । कदर कही नहीं है । जनम लेने का दण्ड भरना है । मैं जानूं, कैसी रहे, जो एक दुनिया हो जिसमे लोग न हों ।'

दोनों हंसने लगी । कजरी ने कहा : 'ऐसा भी है एक मुलुक ।'

'कौन-सा ?'

'कहते हैं, कजरी वन में ऐसा ही है । जोगी कहते हैं ।'

'किसीने देखा है ?'

'नहीं, मैंने तो नहीं देखा । पर वे ऐसा गाते है । तू पूछती है, सो क्या वहा जाएगी ?'

'तू चलेगी ?'

'अरे, वह आया नहीं !' उसका उत्तर कजरी ने यह दिया ।

'तू क्या जाएगी ! घड़ी-घड़ी उसकी याद करती है ।'

'चली भी जाऊंगी मैं । ऐसी नहीं फंसी हुई मै । एक दिन मुझे क्या मरना न होगा ?'

'आता होगा वह, काहे बुरी बात बोलती है !'

कजरी हरषा गई । कहा : 'झूठ कहती हूं ! कोई अपने संग कुछ ले गया है ? बडे-बड़े राजा है, राज है, पर अकेले जाते है सब ।'

'अबेर हो जाएगी ।' प्यारी ने टालते हुए कहा ।

'कजरी ने कहा : 'मैं पहले सोचती थी, पर एक दिन मैंने देखा, एक लुगाई के इधर हाथ पीले हुए उधर रांड हो गई । बस तब मे डर बैठ गया है ।'

'कैसा ?'

'अरे तुम बोले जाती हो ! वह तो आया ही नहीं !'

हाय गेज तो रहती है एक दिन की अबेर म जी उल्टा हो गया और धीरे ग हंसकर प्यारी न कहा अभी बाबाओं की-सी बात कर रही थी हाय

ासा पलट गया ? मैं भी पहले शराब पीती थी तो सोचती थी, बस आज पं
ा पिऊं तो हराम। यह नशा भी शराब से किसी तरह कम थोड़े ही है।'
'हाय तुम बड़ी वो हो, तुम्हें लाज नहीं !' कजरी ने कहा : 'मैं तो सोचती थी
गया !'
'होगा क्या ? बैठ गया होगा कहीं।'
'पहले तो न बैठना था।'
'वह तो ऐसा बैठता था कि पहले दो-दो दिन में घर आता था। अब तूने उस
दू कर दिया है थोड़े दिन से।'
'कह लो, बड़ी हो। मैं क्या कुछ कह सकती हूं ?'
'बोल ! बड़ी तो हूं, पर सौत भी तो हूं। बड़ी सीधी है न तू ?'
रुस्तमखां बेचैन हो रहा था। ये बातें समाप्त होने को ही नहीं आ रही थीं और
मन में वहम हो गया था। वह जानना चाहता था कि आखिर मामला क्या है जो
क घुसफुस हो रही है। ऊपर जाना चाहता था, पर हिम्मत नहीं पड़ती थी।
रुस्तमखां ने पुकारा : 'प्यारी !'
'आई !' उसने कहा।
वह गई। रुस्तमखां ने उसकी ओर देखा। कोई परिवर्तन दिखाई नहीं दिया।
हुक्का भरा। जाकर रखा। हुक्के में दो दम मारे। कहा : 'तवा नहीं बदला ?'
'बदल दिया। पीके देखो।'
'ये क्यों आई है ?' रुस्तमखां ने पूछा।
'वैसे ही।'
'अब भेज दे उसे।'
'क्यों ?'
'अरी कब तक बातें करोगी ?'
'जब तक मन चाहे।'
'अब रंग बदले हुए हैं।'
'मेरे कि तेरे ?'
'तूने उसके सामने कैसे बात की ?'
'कैसे की ? तूने कैसे की ?'
रुस्तमखां चौंका। कहा : 'तूने उसे सौत कहा था ?'
'है तो कहूंगी नहीं ?'
'तू उसकी बीवी है कि मेरी ?'
'ब्याहता उसकी, रखैल तेरी।'
'शर्म नहीं आती तुझे ?'
'अगर सरम ही आती तो आती तेरे पास ? और अगर सरम का मेरी कोई मोल
ो तू मुझे पकड़वा सकता था, यों कह सकता था कि आ जा, नहीं तो तेरे उसे
डलवा दूंगा ? अगर सरम है तो अपनी बिरादरी में ले जाएगा मुझे ? वह तो
है सो तेरे पाप पाप नहीं ? मेरे पाप पाप हैं ? सरम अगर तुझमें होती तो घर
नहीं रहता, दुनिया में यों छिनाला करता ?'
'तूने नहीं किया ?'
'मैं कमीन, अनपढ़, नीचों में नीच, जात की नीच, बिरादरी के मेरे नेम नीच,
भूखी-नंगी। तुझमें क्या कसर थी जो ऐसा किया ? उस दिन तेरा चिटठा तेरे
के ने सुनाया था न ? जुआ पकड़ तेरा कानून तू उसमें घूस खाके मुटाए फिर

मुझे सरम की दुहाई दे रहा है बेसरम ! मैंने हज़ार किया, पर मैंने ये तो नहीं कहा कि तेरी भली लुगाइयों से होड़ है। जगत जानता है उतरी-फुतरी हूं, पर तू तो अभी भला .ना डोलता है।'

रुस्तमखां क्रुद्ध हो उठा, कहा : 'आग मे न खेल प्यारी !'

'तेल मे भिगो के बंट दूंगी आग वाले ! आंखें दिखाता है मुझे ? तिरिया हठ न जगा। तेरी सारी फागुन-चैत की सावन-भादों में बहा दूंगी। बन्द करवा दे। कोई फांसी तो होगी नहीं। छूट के जने-जने से कहके तेरे मुह पै थुकवाऊंगी।'

और वह बिना रुके पांव पटकती हुई ऊपर चली गई। रुस्तमखां चुप हो गया। चाल सोचने लगा। उसकी समझ में न आया।

पर प्यारी जब ऊपर पहुंची तो शान्त थी, जैसे कुछ नहीं हुआ था। मन में उथल-पुथल अवश्य मच रही थी। वह खुद सोच रही थी कि अभी तक सुखराम क्यों नहीं आया। उसमे भय भी था, परन्तु ऊपर से दृढ़ बनी रही।

प्यारी लौटी तो कजरी ने कहा : 'आया नहीं ?'

'नही।'

'इत्ती देर कहा लग गई अरी ?'

'अरी तो मरी क्यों जाती है !'

'मैं अकेली कैसे जाऊंगी ?'

'जाने को तू अकेली आधी रात जा सकती है, पर उसे देखकर तुझे डर लगने लगा है। कहनावत मसहूर ही है कि गाड़ी देख के लाड़ी के पांव फूलने लगते है।'

'मुझे डर लगता है।'

'किसका ?'

'तेरे सिपाही का। अकेली गैल है। वैसे तो हम वहां जंगल मे रहते है। जिनावर का डर नहीं, मुझे मानुस का भय है।'

'मेरे रहते ? तुझे यहा डर है ?'

और फिर कहा : 'अरे भूल हो गई।'

'क्या ?'

'नीचे अंधेरा है।'

'बत्ती धर आऊं ?'

'तू नहीं, नीचे वह है। मैं जाऊंगी। नहीं तो फिर तुझे घूरेगा।'

कजरी ने प्रेम से देखा। प्यारी ने अंधेरे में से दूसरे कोठे मे लालटेन निकाली। कहा : 'आ जा सीख ले।'

'तुम जलाओ। मैं देखूंगी।' वह पास बैठ गई।

प्यारी ने कहा : 'पहले मेरा हाथ भी जल गया था।'

प्यारी ने दूसरी लालटेन जलाई। नीचे ले गई। रुस्तमखां लेटा हुआ था।

कहा : 'चलो याद तो आई।'

'वह आ गई है न !' प्यारी ने कहा।

'गई ?' उसने पूछा।

'नहीं।'

'आज बड़ी सलाह हो रही है !'

'कैसी ?' प्यारी ने पलटकर कहा।

'नहीं। वैसे ही कहना था।' रुस्तमखां ने टाला।

प्यारी नहीं बोली रुस्तमखां को गुस्सा आया फिर बदला हुआ देखकर

पकारू

'कब जाएगी ?' उसने पूछा ।
'चली जाएगी अब ।'
'आज बहुत बैठी !'
प्यारी मन मे चिढ़ी । पर कहा : 'हां ।'
'पर आखिर क्यों ?'
'उसका कमेरा नही लौटा है अभी ।'
'कौन ?'
'सुखराम ।'
'तो वह इसे लेके आया था ?
'हां ।'
'कहां गया वह हरामजादा ?'
प्यारी ने शांति से कहा : 'फिर तो कह !'
रुस्तमखां सन्नाटे मे आ गया । कहा : 'फिर कहूं तो क्या कर लेगी ?'
'तुझसे तो कुत्ता भी भला ।'
'क्या बकती है तू !'
'कितनी बडी बीमारी से तेरा इलाज किया, फिर भी उसे गाली देता है
'अच्छा ! तो तेरा मन डोल रहा है !'
'सो न डरा, आजाद हूं ।'
'मुझे जानती है ?'
प्यारी ने ज्वाला भरे नेत्रों से देखा । कहा : 'मुझे जानता है ?'
नटिनी ! हरजाई !' वह व्यंग्य से हंसा ।
प्यारी ने कहा : 'बस !'
रुस्तमखां चिल्लाया : 'घर मेरा है !'
'और चिल्ला !' प्यारी ने कहा ।
रुस्तमखां झल्ला उठा ।
कजरी ने वह स्वर सुना । झगड़ा-सा लगा । पहले तो डरी । फिर दबे प
ई और छिपकर सुनने लगी ।
रुस्तमखां ने कहा : 'मैं तुम सबको थाने में बन्द करवा दूंगा ।'
प्यारी ने कहा : 'दांत टूट जाएंगे सूअर के बच्चा ! क्या समझा है तूने
न्द करवाएगा ? करवा के तो देख ! थाने तक पहुंच जाएगा ? लुगाई
हा है । पर तूने कभी देखा नहीं ।'
और उसके हाथ में कटार चमक उठी । रुस्तमखां डर गया ।
'गोद-गोद के मारूंगी । कुत्ता बना रह, नहीं तो याद रख । मैं हूं नटिनी
ग आई तो लोहू पीके बुझाऊंगी ।'
रुस्तमखां ने उसका वह भयानक रूप कभी नहीं देखा था । प्यारी गुस्से
।
रुस्तमखां ने चाल खेली : 'अरे ! तू तो बिगड़ उठी । मैं तो वैसे ही कहर
प्यारी ऊपर चली । कजरी पहले ही चढ़ गई । उसके आने पर कज

क्या हुआ ? कजरी ने कहा
कुछ नहीं

'नीचे जोर-जोर से किससे बातें कर रही थी ?'

'सिपाही से ।'

'क्यों ?'

'सिर उठा रहा था कमीना । वही कुचल दूंगी । समझता है अकेली हूं ।'

'अकेली ? और मैं कैसी हूं ?'

'तू डरती नही ?' प्यारी ने कहा।

'डर और नटिनी को ?' कजरी ने कहा ।

प्यारी कुछ लेने गई । और लाकर उसने कजरी को देकर कहा : 'यह अपने पास धर ले ।' फिर कहा : 'मेरे पास यह है ।'

देखा, कटार थी । कजरी ने कहा : 'इसकी जरूरत आ गई ?'

'अभी आ जाएगी ।'

'क्यों ?'

'बात खुल गई ।'

'तूने जल्दी कर दी ।'

'नही कजरी, देर हो गई है ।' प्यारी ने कहा और फिर द्वार की ओर शंकित दृष्टि से देखा । कजरी का मुख कठोर हो गया ।

23

बांके जब जूए के अड्डे से उठा तो जेबें नोटों से भरी थीं । आज वह खूब जीता था । उसका दिल खुला था । यारों की जिहें हुई और कसमों के लंगर डाले गए, पर बांके का जहाज अपने पाल खोल चुका था, अतः वह नहीं रुका ।

वह आज बड़े जोश में था । आज वह कैसे जीत गया इतना कि स्वयं अपने ऊपर आश्चर्य हो रहा था । उसे विश्वास नहीं होता था । आज, उसने सोचा, भगवान की उसपर कृपा अवश्य है । अभी वह इसी तरह मगन होकर चला जा रहा था कि उसके कान में आवाज आई : 'हाय लुगाई की जात ! कितने न जुलम सहे, पर पत के सहारे सब जीत गई । भाभी, जिसमें पत नहीं उसका जीना हराम ।'

बात धूपो ने कही थी । गली के मुक्कड़ तक दीना की बहू पहुंचाने आ गई थी ।

'हां,' दीना की बहू ने कहा : 'बांकी की तो घरउजाड़ू होग ।'

'अच्छा तो मैं चलूं ?'

'अब अंधेरी हो गई ।'

'बस जरा खेत गई और आई ।'

'हां आ, जा ।'

धूपो चली । जलते हुए चिराग देर हो जाने का इशारा करने लगे थे । कुत्ते राहों पर चहलकदमी कर रहे थे । दूर चूल्हा पर कुछ लोग बैठे हुक्का पी रहे थे । धूपो रास्ता काटके गली में से निकली और घरों के पिछवाड़े होकर झाड़ियां पार कर गई और फिर कच्चा गढ़ आ गया, जो एक समय गांव वालों की शत्रुओं से रक्षा करने के लिए बनाया गया था, और जिसकी आज गांव की औरतें शत्रु थीं, और ढेर-ढेर मिट्टी इसीलिए कट गई थी कि उससे वे चौका-चूल्हा करती थीं ।

सब तरफ नीरवता छा रही थी । गांव से बाहर आते ही वह कसैला धुआं एकदम ठसक भरी हवा में बदल गया। चैत की रात थी। अजीब सिहरन लिए हुए धूपो को वह हवा अच्छी लगी और उस हवा में से एक सूरत पैदा हुई। वह उसका मृत पति था

पर वह विचार आया और चला गया।

जब वह दगरा पार करके खेत में घुसी तो उसे लगा, कोई दूर चल रहा है। धूपी ने सोचा कोई मुसाफिर होगा। जल्दी-जल्दी घर जा रहा होगा। रात भी तो हो चली है। अरे वह अकेली है! उसे डर भी लगा, परन्तु फिर सोचा, डरने की बात ही क्या? पहले क्या वह इस तरह कभी नहीं आई? वह आगे बढ़ी।

और वह आदमी बांके था, जो उसके पीछे-पीछे लगा-लगा आ रहा था। वह उतावला था। उसकी क्रूर वासना ने जीवन में कभी अपने स्नेह को आदान-प्रदान की सहिष्णुता से स्वीकार नहीं किया था। वह लुटेरे की प्रवृत्ति का आदमी था। वह आज तक जो कुछ करता था, उसकी राय में वह सब अपहरण करने पर ही उसे प्राप्त होता था। अतः उसका हृदय कठोर हो चुका था, जैसे उसपर पत्थर की परतें जम गई थीं, जिनमें से कोई हरा पौधा पैदा नहीं होता था। धूपो को उसने एकान्त में देखा तो उसकी विभीषिका जाग उठी। उसके शरीर की कल्पना करते-करते वह भेड़िये की तरह पागल हो उठा, जो भेड़ को देखकर उन्मत्त हो उठता है।

बांके धीरे से दूसरे रास्ते से जाकर खेत में उतर गया। पर अचानक खेत मे खच-खच की आवाज आने लगी। बांके को जूड़ी-सी चढ़ने लगी। उसने सोचा शायद यहां आदमी है। यह तो बहुत बुरा हुआ। इच्छा हुई लौट जाए, परन्तु जैसे भिट में से लोमड़ी ने सिर निकालकर देखा, उसी तरह टोह लेने के लिए उसकी पिपासा ने झांका और कहा: आज का मौका फिर नहीं मिलेगा। अकेली पा गई है। और बेफिकर चली आई है। कौन जाने कितने दिन में ऐसा वक्त आए। और फिर चैत की रात। हवा की बची-खुची फरफराहट। यह फिर गर्मियों की लू में बदल जाएगी। खेत कट-कटाकर मैदान पड़ जाएंगे। यह खेती भी पिछाही होने के नाते रह गई है। और पन्द्रह दिन तो उजाले पाख में ही निकल जाएंगे। वह अब ठंडे दिमाग से आगे-पीछे की सोचने लगा।

विचार आए। अरे, वे आदमी थे कि ढोर! कहीं कोई सांड़ न घुस आया हो, और बांके बेकार डर रहा हो। चलकर देख क्यों न लिया जाए? वह पास जाने लगा।

सामने दो आदमी-से लगे, जो उसे देखकर खेत की आड़ में हो गए।

बांके ने धीरे से कहा: 'कौन है?'

खच्च-खच्च बन्द हो गई थी।

'तुझे क्या?' एक ने फुसफुसाया।

'देख-देख।' दूसरे ने कहा।

'हम क्या डरते हैं?'

बांके ने चौंककर कहा: 'कौन, ठाकुर चरनसिंह और हरनाम!'

दोनों बाहर निकल आए। उनके हाथों में हंसिया थे। वे दोनों एक गरीब गड़रिये किसान का खेत सफा कर रहे थे। ठकुरात का दबदबा था। गड़रिये का बाप मर गया था, बच्चा छोटा था, वरना उसे ही अपनी गैरहाजिरी में खेत पर भेज देता। खुद सोरो गया था, बाप के फूल लेकर। और बहू उसकी बीमार। सो खेत भगवान के सहारे पड़े थे। और ठाकुरों ने भगवान की कभी इतनी चिंता नहीं की थी। पेट के वे भी भूखे थे। शेर बनते थे, क्योंकि हर ठाकुर अपने को सिंह कहता है, पुलिस में नौकरी करने की बात को अपने शेरपन की इन्तिहा समझता है। ये दोनों शराबी थे, अपने से कमजोरों को सताते थे और प्यारी ने इन दोनों को जब चोट दी तो बराबर कर दिया था। तब से इनकी रुस्तमखां और उसके साथियों से दुश्मनी हो गई थी।

'हां हम हैं' एक सिंह ने कहा 'तुझे सिपाही ने भेजा होगा?'

चला जा चुपचाप दूसरे ने कहा वरना फेर देंगे

बांके समझा। कहा : 'अरे क्यों बिगड़ते हो!'

और क्योंकि तीनों ही एक-एक तरह के गुनहगार थे, इसलिए तीनों की आवाजें दबी हुई थीं। तीनों जानते थे कि पाप की आवाज को उठते ही जरा पकड़ लेती है और फिर एक-एक झोंका भी सवाल बन जाता है। बांके को लगा, अब काम असंभव हो गया। इन दो के रहते हुए कुछ नहीं हो सकता। उस ओर आया। मन मसोसकर रह गया। तो वह चली जाएगी? तब उसकी जघन्यता ने पासा फेंका। कहा : और वह! यहां से लौटना ठीक नहीं है। उसकी भीरुता ने पूछा : तो क्या करूं?

तब उसके अवसरवाद ने सिर उठाकर कहा : मौका बार-बार नहीं आता। मौका हीरे-मोती से भी अनमोल है। जो उसे चूक गया, वह कुछ भी नहीं पा सकता।

वह चलने लगा।

चरनसिंह ने मूछों में से गरगलाया : 'कहां जाना है?'

'थाने में?' हरनाम ने कहा।

'जैसे तब तक तुम बैठे ही रहोगे यहां?' बांके ने धीमे स्वर से कहा।

दोनों आदमी पास आ गए। उन्हें बात दूसरी ओर मुड़ती हुई दिखाई दी।

'तू कहां जा रहा है!' हरनाम ने कहा।

'क्यों?' बांके ने खेतों पर नजर डाली : 'तुम क्या जानना चाहते हो?'

'तू सिपाही का यार नहीं है?' चरनसिंह ने कहा।

'हूं।' बांके ने कहा : 'पर मैंने तो तुमसे कभी दुश्मनी नहीं की।'

'तो क्या तू मौके पर उसकी ओर नहीं होगा?'

'तुम सिपाही के यार होते, तो छूट पाते?'

'नहीं।' हरनाम ने कहा।

बांके ने कहा : 'प्यारी ने तुम्हें नुकसान पहुंचाया था। मैंने तो नहीं?'

'नहीं।' हरनाम ने कहा : 'हम क्या जानें?'

'पर तू इस वखत यहां क्यों है?'

'मैं प्यारी की इस सहेली के पीछे आया हूं।' वह झूठ बोला।

'सो कौन?' चरनसिंह ने पूछा।

'धूपो चमारिया!' उसने धीरे से कहा।

'झूठा!' हरनाम ने कहा : 'धूपो ने तुझे पिटवाया था, उससे बदला लेने आया है, कहता क्यों नहीं?'

'यह सच है, पर क्यों पिटवाया था? मैंने रुस्तमखां के कहने से धूपो को पीटा था। धूपो का पिटना प्यारी को बुरा लगा। उसने अपने पुराने मरद सुखराम को इशारा करके रुकवा दिया। तब सिपाही के कहने से मैंने सुखराम पर हमला किया था।'

दोनों ठाकुर सोचने लगे।

'सुखराम के दिन गए', बांके ने कहा : 'प्यारी का भी डेरा उठा समझो। इस वखत मेरी मदद करो तो सिपाही से तुम्हारा याराना हो जाएगा और प्यारी से भी बदला ले सकोगे।'

'तो क्या धूपो का तू कतल करेगा?' चरन ने पूछा।

'नहीं। और गहरी मार देना चाहता हूं, जो औरत कभी नहीं भूलती, और फिर हमेशा के लिए सिर झुका जाती है।'

'धूपो रांड-बेवा है। उसका कोई नहीं है न?' हरनाम की शराफत ने आखिरी कोशिश की थी।

बांके ने कहा : 'तू मूरख है। नटिनी की सहेली कभी भली हो सकती है? और

फिर आजकल तूने कहीं सुना है कि कोई औरत बिना मरद के रहती है ? सोच के देख !

'तो फिर क्या करना होगा ?' चरनसिंह ने समर्पण किया।

हरनाम ने कहा : 'जो तैंने दगा की तो ?'

बांके ने कहा : 'गांव थोड़े ही छोड़ दूंगा, और तुम मर न जाओगे।'

'बता, धूपो कहां है ?' चरनसिंह के पशु ने कहा : 'है तो अच्छी।'

'खेत में उधर से आई है।'

'उधर तो कुआं है, वहां रखवारे होंगे।'

'उधर नहीं,' बांके ने कहा : 'उधर !'

'चलो ! उधर कोई नहीं।'

तीनों बढ़े।

एक ने कहा : 'काम खतरनाक है। जो कहीं बात खुल गई और काम भी न हुआ तो कहीं के न रहेंगे।'

बांके ने कहा : 'डरते हो तो लौट जाओ। मैं अकेली काफी हूं।'

'डरता नहीं, सोचता हूं।'

'सोचना-विचारना है तो सबेरे तक आ जाना।'

तीनों रुक गए, क्योंकि बांके ने इशारा किया।

'क्या है ?' चरनसिंह ने धीमे से पूछा।

'वह रही उधर !' बांके ने कहा।

चरनसिंह बोला : 'अकेली है।'

तीनों छिप गए।

चरनसिंह ने कहा : 'पहले कौन जाएगा ?'

हरनाम ने कहा : 'बांके, तू जा।'

'तुम पीछे से आओगे ?' बांके खीझा।

'तीनों संग जाएंगे तो राजी न होगी।' चरनसिंह ने कहा : 'एक-एक का जाना ठीक रहेगा।'

.ांके बढा। पर दिल कांप रहा था। कायर का हृदय बड़ा कमीना होता है वह हमला करता है और देखता है। अगर टक्कर की चोट आ बैठती है तो बस भाग ही नजर आता है।

धूपो वहां खड़ी थी।

'कौन है ?' आहट सुनकर उसने मुड़कर कहा।

'मैं हूं बांके।' बांके बढा।

'क्यों आया है ?' उसने दृढ़ स्वर से पूछा।

बांके भीतर ही भीतर कांप उठा। उस स्वर में एक पवित्रता थी, जिसे सुनकर दोनों ठाकुर भी थर्रा उठे। जैसे बिच्छू जैसे छोटे कीड़े को मारने के पहले भी आदमी कुछ सतर्क हो जाता है, वैसे ही वे भी उस अकेली स्त्री को देख हृदय में डांवांडोल हो गए। उसकी आवाज ने उनको डराया। डर ने उन्हें निराशा दी। निराशा ने उन्हें क्रोध दिया और क्रोध ने उन्हें अंधा बनाया और उनके भीतर की वासना ने जैसे डंके पर चोट दी।

'मैं कहती हूं, धूपो ने कहा : 'क्यों आया है ! चला जा अपनी गैल। अकेली न समझियो मुझे। तेरे लिए मैं अकेली बहुत हूं। कमीन, नहीं तो ! अंधेरी रात देखकर चला आया !'

बांके आगे बढा

'खबरदार !' धूपो की आवाज कड़क उठी।

बांके ने कुछ नहीं कहा। झपटकर उसे पकड़ लिया। दोनों ठाकुर घबराने-से लगे। एक ने कहा : 'गधा है।'

'एकदम टूट बैठा।'

'पहले की लाग-डांट है इसकी।'

धूपो छूट के भागी।

बांके ने कहा : 'ठहर मुसरी ! जाती कहां है···'

उसने उसे फिर पकड़ा। धूपो ने चिल्लाने को मुंह खोला ही था, ठाकुर ने आगे बढ़कर उसका मुंह दबा लिया। धूपो ने उसका हाथ काट खाया। एक लात दी जो कि लगी तो डगमगा गया। तभी तीसरे आदमी ने उसे पटक के दे मारा। खेत में गिरी। चोट-सी आई, पर हरियाली में बहुत नहीं लगी। उठकर भागने की चेष्टा की। मुंह खोला ही था कि मुंह में कपड़ा ठुंस गया, फिर वे तीनों भयानकता से हंसे। धूपो ने अन्तिम चेष्टा की, किन्तु वह छूट नहीं सकी।

अंधियारा और घना हो गया और कोई भी तारा जैसे उसकी पर्तों को हटाने और काटने में असमर्थ हो गया। खेतों में हवा सनसनाने लगी। और दूर-दूर तक आकाश में भागती फिरती। यातना-सी कर उठती। और फिर जैसे आत्मीयता का चीत्कार करती हुई रोने लगती। खेत हिलते, और कांप उठते। उनकी अपनी सत्ता आज लज्जा से डूब रही। कुएं की उदासी निकलकर अब उसकी जगत पर पड़े चरस में भर गई। और चरस से पानी की जगह विवशता गिर रही थी। अब कौन उसे पिए? कोई पक्षी नहीं उड़ता। कोई आवाज नहीं आती। और नीरवता जब स्थापित है तो समय अनंत हो गया है। उसकी परिधि का न विकास है, न कोई अन्त लगता है। एकदम ऐसा लगता है जैसे आस्मान एक चाकू है, लोहे का —जंग लगा, जिसने धरती को काट डालने के लिए अपने को तेज कर लिया है। उसके फलक से जो टकराएगा वही दो टूक हो जाएगा। शायद इसीसे सब भाग गए हैं, और गांव दूर है। वहां कोई आवाज नहीं पहुंच सकती। चाहे अन्तरात्मा पुकारे या बीभत्स। धुआं अब फैल चुका है। और कुछ नहीं। उसके बाद एक उन्माद है और वह यह कि छप्परों पर एक निस्तब्धता छा गई है। उसकी प्रतिस्पर्धा करता हुआ कभी-कभी, कहीं दूर, कहीं अज्ञात नेपथ्य में कोलाहल होता है, फिर डूब जाता है। उसके बाद पानी में डूबते हुए पत्थर की तरह बुदबुदों-से तारे निकल आते हैं। आकाश में एक कंपन होता है जैसे आंखें झपट रही हैं, चारों ओर आग-आग-सी दिखाई देती है, फिर बस गहरा, बहुत गाढ़ा अंधेरा-सा रह जाता है। और फिर एक बहुत बड़ी लाश-सी दिखाई देती है, पड़ी हुई चुपचाप। कुछ क्यों नहीं चल उठता, कुछ क्यों नहीं जग उठता! सब आज चेतन की जगह जड़ क्यों हो गए हैं! क्यों सबकुछ मर गया है? जो ये खड़े हुए हैं, क्या ये सब देख सकते हैं? उनसे पूछने पर वे स्वयं क्या उत्तर दे सकते हैं? नहीं। फिर ये सब नष्ट क्यों नहीं हो जाते? उनकी जब कोई सार्थकता ही नहीं तो फिर साक्षी बने से क्यों लगते हैं!! यह सब विवशता की स्वीकृति है और मन का भय है। इसका ही शाश्वत अवरोध है। यह युगांत का बंधन है। और अंधेरा और गहरा हो गया है। उसकी गहराई नहीं कट सकती। इस्पात को मोम की तरह बीच में से खंड-खंड किया जा सकता है, ठंडे इस्पात को पिघलाया जा सकता है, पर यह अंधकार हजार हजार बरसों के अंधकार की तहों को अपने में समेटे से रहा उसे कोई नहीं काट सकता

जब वे तीनों भाग गए तो धूपो लहराकर उठी। वह धूल से भर गई थी। अपमान और विक्षोभ की भीषणता ने उसे ग्रस लिया था। जैसे धार्मिक पुजारी अपने सामने ही पवित्र देव-प्रतिमा को आततायी की ठोकर से गिरकर चकना-चूर होते देखकर भी कुछ नहीं कर पा सकने से बावला हो जाता है, धूपो भी वैसे ही पागल-सी हो उठी। उसे चारों ओर अंधेरा-सा दिखाई दे रहा था। मन की अतलांत लहरों में एक ही जघन्यता का विष भर गया था। पाप!! अपमान फटा पड़ता था। वह सब बाह्य नहीं, पर समस्त गहराइयों से प्रतिहिंसा-प्रतिहिंसा पुकार रहा था। वह कातर की तरह असंख्य पांव गड़ाने लगा, अंग-अंग में जलन भरने लगा। वह गुस्से से कांप रही थी। गुस्सा एक रस्सी की तरह था, जिसमें अपमान और विक्षोभ के बल पड़ते थे, और गुथ-गुथकर प्रतिशोध को दृढ़तर करते जाते थे। वह निर्मम आक्रमण उसे ऐसे कुचल गया था जैसे किसी उन्मत्त सेना ने हरी-भरी राजधानी में कत्लेआम कर दिया था और अब धूल का कण-कण बदला लेने के लिए दहकता अंगार बन जाना चाहता था। वह ऐसा क्रोध था जिसकी कोई अभिव्यक्ति नहीं, क्योंकि वह पातिव्रत्य को खंड-खंड होते हुए देख चुकी थी। वह दारुण यातना पिघले हुए सीसे की तरह उसके भीतर भर गई थी और उसके रोम-रोम से फूट निकलने के लिए लहू को गरम करके जलाने लगी थी।

क्यों न पोखर, कुएं में डूबके मर जाए? कैसे जी सकेगी वह? किस तरह किसीको मुंह दिखा सकेगी वह? पर पाप फिर भी नहीं मिटेगा। और फिर सत्य ने गर्जन किया। और धूपो के मन में घुमड़न-सी उठने लगी। जैसे प्रचंड मेघराशि अपने खरतर वज्रों की प्रताड़ित हुंकार के साथ समस्त वसुन्धरा को आप्लावित करने को झूमती हुई भीषणता के साथ थपेड़े मारती हुई बढ़ी चली आती है।

जिस प्रकार एक दिन भरी सभा में नंगी की जाने वाली द्रौपदी ने अपने दारुण स्वर से चीत्कार कर-करके समस्त महापुरुषों के पौरुष को धिक्कारकर प्रतिज्ञा की थी कि वह उस दिन ही खुले बालों को बांधेगी जिस दिन वह कौरवों के लहू से उन्हें भिगो लेगी, वैसे ही धूपो ने प्रतिज्ञा की कि वह बांके की बोटी-बोटी काटकर फेंक देगी।

लाज के लिए स्त्री दबकर रहती है, पर जब लाज ही लुट गई तो इस दुनिया में ही क्या रहा! लाज है तो दुनिया है। और लाज के लुटेरे से स्त्री को कितनी जबर्दस्त घृणा होती है, यह इसीसे स्पष्ट था कि वह साधारण स्त्री भयानक हो उठी! जैसे एक दिन रक्तबीज की सत्ता को निःशेष करने के लिए महाप्रचण्ड चामुण्डा ने पृथ्वी से आकाश तक मुख खोलकर उसको बार-बार चबा-चबाकर समाप्त कर दिया था, उसी तरह धूपो भी बांके को जड़-मूल से नष्ट करने के लिए उठ खड़ी हुई। जैसे पाप-भरी लंका को धू-धू करके जलवाने के बाद माता वैदेही एक दिन स्वयं अग्नि में कूद पड़ी थी, उसी तरह धूपो भी आग में कूदने के लिए तैयार हो गई।

अपमान का विक्षोभ सिंह की भांति भय की चट्टानी गुहा में से सिर निकालकर कठोर गर्जन कर रहा था।

वह अपमान की भावना उसके भीतर ऐसी फूट पड़ रही थी, जैसे जेठ की उत्तप्त दुपहर में भयानक गर्मी से भरी धूल की आंधी बिखर जाने के लिए हर-हरा उठती है।

उसके दिमाग पर चारों ओर से हथौड़े का प्रहार हो रहा था। वह इस समय सब कुछ भूल गई थी। वह नीच जाति की स्त्री थी, परन्तु शताब्दियों से गौरव का संस्कार उसमें जीवित था, और वह उसीके अहंकार पर आज तक जीवित रह सकी थी और आज वही संस्कार समुद्र की प्रचंड लहर की तरह घुमड़ने लगा था। ऐसा लगता था जैसे समुद्र अपनी मर्यादाओं को लांघ जाएगा।

अपमान क्रोध विक्षोभ के बाज अब प्रतिहिंसा का विकराल महावृक्ष

रह गये थे। ग्लानि की आंधी चलने लगी थी, काली, अंधेरी। और वह दुर्दमनीय वृक्ष अपनी हजार-हजार शाखाएं अनन्त आकाश में फैलाता चला जा रहा था, जैसे आज वह नहीं रुकेगा। जन्म-जन्मान्तर तक जीवित रहने की भावना ने उस एक जीवन के प्रति होने वाले मोह को क्षीण तन्तु की भांति तोड़ दिया, और वह निष्कम्प दीपशिखा के समान जल-जलकर अपने जीवन को गलाने वाली, युगान्त की महावह्नि की प्रचण्ड ज्वाला की भांति महाशून्य में लपलपाती हुई-सी महासमुद्र तक को सोख लेने के लिए जैसे आज फिर बढ़ चली। मन के भीतर के चोर जब भागे तो मन की खुली धरती पर उसकी लज्जा का ढेर बचा रह गया, पर अब वह उसकी राय में अस्पृश्य हो चुका था। उस समय अंधेरे आकाश, टिमटिमाते तारों और उजड़ी धरती पर वह ऐसी दिखाई दी, जैसे भयानक धुएं में उजड़े अंगारों के नीचे मूर्तिमान प्रतिहिंसा कायरता के शव पर खड़ी थी।

वह अदम्य अभिमान था! वह स्त्री का अस्तित्व था जो उठ खड़ा हुआ था, वह अपमान जो उसे दारुण यन्त्रणा देकर उसके हृदय की जलती आग पर सेंक रहा था, जैसे वहीं नरक की समस्त परिधियां आकर एकत्र हो गई थीं। और तब धूपो का रौद्र अभिमान ज्वालामुखी की भांति फूट निकला, आग फैलने लगी, चारों ओर झकझोर देने वाला दाह फैल चला, जिसमें संसार को हिला देने की शक्ति थी।

वह गांव की ओर भाग चली। और वह भयानकता से चिल्ला रही थी, 'दुहाई है, दुहाई है!' गरज रही थी। उस समय उसके हृदय में भयंकर उन्माद था। उसके वस्त्र दौड़ने में खिसक गए। फट-से गए। वह भूमि में गिरी, और जब उठी तो धूलि उसके चारों ओर लग गई थी।

और पागल भिखारिणी की-सी उस स्त्री के हृदय में जो प्रतिहिंसा का प्रलय गर्जन कर रहा था, उसका अनुमान करना उसी के बस की बात है जिसने समुद्र को आलोड़ित-विलोड़ित होने देखा है, या जिसने महिषासुर-मर्दिनी चामुण्डा की गिरा पर चढ़कर भीषण राक्षसों से युद्ध करने की कल्पना की है जिससे मर्त्यलोक और ब्रह्माण्ड कांपने लगे थे; वह भी जीवन के गौरव की गाथा थी, वह भी मनुष्यता की उसी अपराजित गरिमा की प्रतिध्वनि थी, जिसकी चोट आज धूपो के हृदय में जगमगा उठी थी। नारी की सत्ता अपने पूर्ण रूप में विकसित होकर प्रचण्ड निनाद कर रही थी, अपने अधिकार मांग रही थी!

धूपो गांव पहुंची तो लोगों को लगा जैसे भूतिनी रुदन हा-हा करती हुई चली आ रही है, परन्तु उसमें वात्याचक्र का-सा भीषण उद्दाम वेग है। वह चिल्ला रही थी। उसका दारुण आर्त्तनाद सुनकर लोगों के रोंगटे खड़े हो गए। वह सिंही लुटी हुई-सी पुकार रही थी जैसे फूटते हुए ज्वालामुखी भी से समुद्र तक को गुंजा देने वाला नाद निकलकर प्रचण्ड निनाद कर रहा था।

परन्तु उसके जीवन में एक नया विश्वास था। वह अभय थी। उसके मुख पर पाप नहीं था। जीवन पुण्य था, जैसे सत्य की मर्यादा के स्तर पर स्तर जमकर आज लपटपूर्ण स्फटिक की भांति निखर आए थे। गांव के अंधेरे में वह चीत्कार ऐसे कांप गया जैसे सौदामिनी, नीलकुहक में रास्ता दिखाती हुई झंकारती हुई बढ़ती चली जाती है। और लोग उसके पीछे-पीछे ऐसे खिंचे चले आए जैसे उसमें चुम्बक था जो जीवन के भारी लौह को भी अपने साथ खींचे चला जा रहा था। उनकी समझ में नहीं आया कि यह निरभ्र आकाश में अचानक धूमकेतु कैसे उग आया, जो सबको अपनी भयानक शंका-कुलता से उत्पीड़ित किए दे रहा था।

वह सीधी [illegible] रे म आई उसका क्रन्दन हृदयों को दहलाए दे रहा था

उस अकाल भेरी-निनाद को सुनकर सब आगे बढ़ आए और धूपो धरती पर लोटने लगी। और कुर्री की भांति विकल चीत्कार करने लगी। उसको देखकर स्त्रियों के भीतर दहशत जाग उठी। बच्चे स्तब्ध हो गए :

एक ने कहा : 'अरी क्या हुआ ? क्या हुआ ?'

पुकार उठी : 'क्या हुआ !'

उसने पुकारा : 'ओ पंचो ! आओ !'

और हृदय के भीतर से निकलती हुई वह ध्वनि, वह मर्म को छूने वाली दिव्य जागरण की मनुहार, वह झकझोरकर जगा देने वाली स्पर्धा, जब उनको छूने लगी तो सब चिल्लाए : 'बोल ! क्या हुआ !'

आवाज गूंज गई। परन्तु धूपो सांपिन-सी धूल में फन पटकती हुई लोटती रही। और कभी-कभी उसके गले से वह भयानक आवाज निकलती कि सब थर्रा उठते।

'भूत है, देवता आ गया है।' किसी ने कहा।

'नहीं-नही,' धूपो ने आंखें पागलों की तरह फाड़कर गर्जन किया : 'नहीं ! कौन है यहां ? आओ ! पंचो ! मेरा न्याय करो।' वह जैसे बहुत कुछ कहना चाहती थी, परन्तु क्रोध से कह नहीं पा रही थी। चमार इकट्ठे होने लगे। एक-एक करके सब वहीं आ गए और भीड़ की मर्मर धीरे-धीरे कोलाहल बन गई और सबकी अटूट उत्सुकता अब हाथ पसारकर कौतूहल का अंत मांगने लगी। परन्तु धूपो को जैसे यह सब ज्ञान नहीं था। स्त्रियां बड़े आश्चर्य से देख रही थीं। बच्चे डर गए और सहमे-से चुप हो रहे। बड़ों की आवाजें अब बढ़ने लगीं। रात के अंधेरे में लगा जैसे साक्षात् अंधेरा स्थिर होकर अब आवाज करने लगा था।

सुखराम ने भीड़ देखी तो वहीं चला गया। उसे बाजार में देर हो गई थी। वह आज एक तमोली से मिला था जो अहमदाबाद से आया था। वह अपने किस्से सुना रहा था और सुखराम भी चाव से सुन रहा था, सोच रहा था कि क्यों न प्यारी और कजरी को लेकर वहां चला जाए और मिल में नौकरी करे। वे दोनों भी मजूरी कर लेंगी और मजे में वक्त कटेगा। परन्तु यह कोलाहल देखकर वह समझा नहीं। अंत में वह भी भीड़ मे चला गया।

उस समय धूपो खड़ी हो गई और उसने दोनों हाथों से छाती पीटकर कहा : 'हाय मैं मर गई, हाय मैं लुट गई। तुम देखते रहे मैं बरबाद हो गई। हाय···'

उसकी यह 'हाय' इतना कठोर हाहाकार बनकर निकली कि स्त्रियों के नेत्र सजल हो गए। उसके एक बच्चे ने पुकारा : 'अम्मा···'

तब वह हंसी, और भीषण स्वर में हंसी। उसका वह विकराल हास्य सुनकर बच्चा डरकर, चिल्लाकर रो पड़ा। और गिल्ला चिल्लाया : 'क्या हुआ धूपो ! कहती क्यो नहीं ?'

'कहूंगी ! नहीं,' धूपो चिल्लाई : 'मैं आज कुएं में डूबूंगी जाकर ! मेरा मुंह काला है। मुझे मत देखो, मुझे मत देखो···'

बच्चा तभी पास आ गया। उसने मां के पास आकर उसे छूने को हाथ बढ़ाया। तभी धूपो चिल्लाई : 'मुझे मत छुओ, मुझे मत छुओ, मुझे पाप छू गया है, मुझे पाप बींध गया है, मेरी देही फुंकी जा रही है, मुझे मत छूओ, तुम सब जल जाओगे, जल जाओगे !'

'क्यों, क्यों ?' की पुकार उठी।

'तुममें हिम्मत है ?' धूपो ने कहा।

बोल कहके देख **भीड़ गरजी**

'कहूंगी फिर, पहले सौगन्ध दो। भगवान की सौगन्ध दो। अपना मरा की सौगन्ध दो। अगर मां के दूध की लाज है तो मुझे सौगन्ध दो।'

सौगन्ध! अर्थात् मर मिटने की अन्तिम प्रतिज्ञा। यह क्यों? ऐसा क्या हो गया?

'देते हैं बोल!' खचेरा ने कहा।

सुखराम आगे बढ़ा। भीड़ भिचबदार थी। परन्तु सब पर जादू-सा छा रहा था। तब धूपो ने जोर से कहा: 'मुझे तुमने वचन दिया है!'

और वह अट्टहास कर उठी, जैसे वह मुट्ठी खोलकर चिल्ला रही थी: 'अब देख लूंगी!' अब भीड़ का साहस कगारे पर आ गया था। वह हंस रही थी या किनारे पर बार-बार टकराकर थहर उठने वाली सर्वनाशिनी उत्ताल तरंग थी?

सुखराम चमत्कृत-सा देख रहा था। 'धूपो! क्या हुआ धूपो को! ऐसा रूप तो उसका कभी नहीं देखा था! आज यह कैसे बोल रही है! और सब क्या पूछ रहे हैं! वह ऐसी क्यों हंस रही है!'

यह हंसी थी या रोदन की अन्तिम सीमा थी जहां विषाद ही अपनी चरम अभिव्यक्ति में आनन्द की प्रतारणा कर रहा था? वह जैसे घोर गर्जन करने वाली जाह्नवी की भांति उन्नत गिरिशृंगों पर से पृथ्वी पर गिर रही थी! वह हंसी उसके हृदय के मन्थन की वह रोर थी, जिसके फेनों में समस्त समुदाय उस समय ढका-सा गया था।

'धूपो!' खचेरा चिल्ला उठा।

परन्तु धूपो डरी नहीं। उसमें आज कोई संशय ही नहीं रहा था। उसने कहा: 'दुहाई है। आज से मरते दम तक मेरे बच्चे पंचों के हाथ।'

बच्चे अपना नाम सुनकर रो उठे।

कौतूहल तड़कने लगा।

भीड़ चिल्लाई: 'क्या हुआ?'

स्त्रियां पुकारीं: 'बात कह पहले।'

'क्या बात हुई? क्या बात हुई!' की पुकार असंयत स्वर से बार-बार गूंज उठी।

धूपो ने अपने बाल नोच लिए और उसकी फरिया सिर से गिर गई।

'पहले कहो। धरम की न कहती होऊं तो कहना।' धूपो ने ललकारकर कहा।

'बोल!' खचेरा ने कहा। उसकी आवाज धूपो के वेग के सामने कांप गई। सबने उस स्त्री का उठता हुआ व्यक्तित्व देखा। वह जैसे आग का एक अंगार था, जो जब बोलता था तो लपट की तरह चमक उठता था।

'बचन देओ।' उसने गरजकर कहा। उसका वह अमानुषिक रौद्र स्वर सुनकर चमारों की भीड़, जिसमें कई लोग इधर-उधर से आ इकट्ठे हुए थे, एक स्वर से चिल्ला उठी---'दिया!' जैसे आज उन्हें और कोई डर नहीं रहा था। वह एक शब्द गांव के घरों पर बजा और 'दिया-दिया' की गूंज फिर-फिर हृदयों में प्रतिध्वनित होने लगी, जैसे वह स्वर अब घर-घर पुकारने लगा, धूलि में से निघात उठने लगी, आकाश दहाड़ने लगा और अनन्त निरवधिव्यापक होकर वह शपथ का दान अपनी सार्थकता के कारण विजय की पताका-सा फहराकर ठहर गया।

'अब कह।' एक तरुण ने कहा।

स्त्रियों ने घूंघट खोल दिए, जैसे कारागार की भारी जंजीरें झनझनाकर टूट गई हों और समस्त बन्दी ने अभिमान से अपना शीश उठा दिया हो।

अब बहन को नहीं मुझे कुए में डूबने दो धूपो ने कहा तुम्हें सौगन्ध है

मेरी लोथ की सौगंध है, मैं जी नहीं रही हूं, मैं मर गई हूं। जो तुमसे बोल रहा है, वह मेरा भूत है, वह तुमसे कहने आया है कि मैं पापिन नहीं हूं। मैं पापिन नहीं हूं...' और वह फिर चीत्कार करने लगी।

'बोलती है कि नहीं!' खचेरा चिल्लाया।

'मैं कहूंगी, मैं कहूंगी...' परन्तु उस समय तक भीड़ अत्यन्त आतुर हो उठी और जिसके जो मन में आया वही चिल्लाने लगा। अब एक क्षण का भी विलम्ब असह्य हो उठा था। उसका समवेत स्वर अब एक असंयत प्रकार का हो-हल्ला हो उठा।

धूपो ने देखा तो कांपने लगी।

गिल्ला बढ़ा। कहा: 'ठहरो भाइयो! सुनने दो!'

कई लोग चिल्लाए। जब सब शान्त हो गए तो धूपो ने ऐसे कहा जैसे वह कचहरी में थी: 'तुम्हारे सामने तुम्हारा भइया मुझे ब्याह कर लाया था?'

'लाया था।'

'वह कहां गया?'

'वह, भगवान ने बुला लिया।'

'उसके बाद मेरा कौन है?'

'हम हैं। बिरादरी है।'

'और जो मैं किसीसे रांड होके दीदा लड़ा के पाप करूं तो?'

'हम तेरी खाल उधेड़ेंगे।'

'और जो मैं पापन नहीं होऊं तो?'

'तो तेरे लिए हमारा खून हाजिर!'

'अम्मां!' एक बड़ा बच्चा चिल्लाया और धूपो की ओर रोते हुए भागा। धूपो ने सिर पीट लिया, और चिल्लाई: 'हटा लो इसे! मुझे छू लेगा तो इसके पाप बढ़ जाएगा।'

स्त्रियों ने बच्चा रोक लिया।

धूपो की वेदना जैसे असह्य हो गई थी। ममता की इस ठोकर ने उसे पहले से भी पागल बना दिया। उसने दांतों को भींच लिया। वह सचमुच उस विक्षोभ और क्रोध से पागल-सी हो गई थी।

'धूपो!' खचेरा गरजा।

'तुमने वचन दिया है!' धूपो ने आंखें फाड़कर कहा: 'तुमने सौगंध खाई है।'

'हां।' खचेरा ने कहा।

'तो उठाओ तेगा!' उसने लोह पर प्रचण्ड घन जैसा प्रहार करते हुए-से स्वर में कहा: 'मैं तो मरूंगी। मेरे बच्चों से कह देना कि उनकी अम्मां बेदाग थी। उसने कभी पाप नहीं किया।'

'किसने किया है तुझसे पाप? किसने तेरी इज्जत को मिटाया है?' खचेरा उन्मत्त-सा झपटा।

'मेरे साथ बांके और दो आदमियों ने खेतों में जबर्दस्ती की है, मेरी इज्जत लूटी है, मैं जब तक लड़ सकी, लड़ती रही, पर वे तीन थे...'

'बस!' खचेरा ने कहा।

धूपो ऐसे खड़ी थी जैसे अग्नि की लपटों और बरसते बाणों के बीच में वानरों से घिरी एक पवित्र माता वैदेही लंका के अहंकार को कुचलवाने को उठ खड़ी हुई थी। उसके वे शब्द ललकार की तरह पुकारने लगे—उठ और बदला ले! मां के लिए उठ! मां के लिए कमीनों और नीचों के विरुद्ध उठ अहंकार तो रावण तक का धूल में मिल

गया।

और धूपो अब पागल की तरह खड़ी होकर देख रही थी। शान्त, निर्द्वन्द्व ! फिर भी भयानक ! जैसे वह टूट पड़ने के पहले बादल ने आकाश में घुमड़कर ऊर्ध्व श्वास खींचा था, जिससे वनान्त तक के महातरुओं में एक प्राणव्यापी लहर-सी व्याप्त हो गई थी। उस समय उसके मुख पर अक्षय पवित्रता थी।

विक्षोभ गरजने लगा। लहू में बिजली कौंधने लगी। गुस्सा थपेड़े देकर हाहाकार कर उठा और हाथ सन्नद्ध होने के लिए आतुर हो उठे। अपमान की भीषण विभीषिका ने प्रतिध्वनित होकर आत्मसम्मान की मर्यादा को ऐसे बार-बार कचोटा जैसे किसी सोते हुए केहरी में ठोकर दी, जिसने अयाल फटकारकर वज्रनाद किया और बदला लेने के लिए प्यासा-सा उठ खड़ा हुआ। वह नारी की जीवन्त सत्ता की मर्यादा का प्रश्न था।

सुखराम ने बढ़कर कहा : 'तू सच कहती है, धूपो।'

उसका स्वर कठोर था। मुखाकृति गम्भीर थी। उस समय लगा जैसे पहाड़ की चट्टान काटकर उसकी एक-एक पेशी बनाई गई थी। धूपो ने उसे देखा तो उसकी चेतना घहरा उठी। उसने आत्मविश्वास को ऊंचा करके अपने कांपते स्वर में पूछा : 'कौन ?'

'मैं हूं सुखराम !' उसने वैसे ही उत्तर दिया। वह अब भी वैसा ही पत्थर दिखाई दे रहा था।

'तूने मुझे बहिन कहा था !' धूपो ने अनियन्त्रित वेदना को झंकारते हुए कहा। उसकी यातना अब सजीव प्रतिशोध बनकर खड़ी हो गई थी। नारी अपने गौरव के लिए भीख नहीं, अपना अधिकार मांग रही थी, जिसने सबकी अन्तरात्मा के भीतर कौंधती हुई ज्वाला देदीप्यमान कर दी थी।

'कहा था।' सुखराम ने कहा। आज वह बोला नहीं था, उन दोनों शब्दों में उसका अतीत, वर्तमान और भविष्य एक साकार प्रतिज्ञा बनकर उठा था। वह दृढ़ता उसकी अपराजित मानव की जयध्वनि के समान उठ रही थी, जिसके चारों ओर मौन की पताका ने अपनी सारी तहों को खोल दिया था।

'ला अपना लहू दे मुझे। मैं तेरा बदला लूंगा!' सुखराम ने आर्त परन्तु अविचलित स्वर से कहा। मानो आज अंगारे से हवा के झोंके ने कहा था कि आ, तेरी भस्म उड़ा दूं। मेरे कंधों पर बैठ, मैं ब्रह्माण्ड को भस्म करने वाला तूफान हूं, तू मेरी रग-रग पर प्रचण्ड लपट बनकर अपना ताण्डव नर्तन कर।

'मैं दूंगी बीरन।' धूपो ने आर्त निनाद किया। वह आगे बढ़ी और उससे कहा :

'बीरन ! तू मेरे लिए उठा है ?'

'नहीं !' सुखराम ने कहा : 'तू तू नहीं है। तू इज्जत है, और तू हमारी आन है। मैं आन की इज्जत के लिए लोहू मांगता हूं।'

'एक को नहीं, मैं सब पै छींटा दूंगी।' धूपो ने कहा : 'मैं डरती नहीं बीरन !' उसने छाती पीटी।

सुखराम के अंतस् में जो बवंडर था अब वह सबके भीतर उठ रहा था। एक-एक को जैसे झकझोर करके वे शब्द जगा रहे थे। प्रलय के महासिन्धु के विक्षोभ पर जैसे सर्वनाश ने अपनी रौद्र पगध्वनि की थी।

खचेरा आगे आया। उसने कहा : 'यह किस तरह हुआ ?'

परन्तु उसको जवाब देने से पहले ही धूपो की ओर से स्त्रियां आगे बढ़ आईं जैसे अब सेनापति के बाद सैनिक नंगी लेकर जान देने को मैदान में आ गए थे

और घूंघट क्या खोला था, जैसे सिर से उन्होंने कफ़न बांध लिया था।

एक औरत ने कहा : 'अरे उसके कीड़ा पड़ें। उसकी यह मजाल !'

वह एक बहू थी। पर उस समय समस्त व्यवधान हट गए थे। उसने चिल्लाकर कहा : 'धूपो की नहीं, हमारी इज्जत लुट गई।'

उसके शब्दों ने आग में घी डाल दिया।

दूसरी बोली : 'अरे किसकी इज्जत ? जहां मर्द कायर वहां लुगाई काहे को धरम की दुहाई दे !'

उसके शब्द लोह के सहस्र फलकों की तरह छितर गए और एक-एक के हृदय में गड गए, जिन्होंने उनको आर्त्त कर दिया।

तब औरतें चिल्लाईं : धिक् है रे तुम्हें ! धिक् है !'

'बोल मत !' खचेरा ने पुकारा।

अरे तुम्हारी बहू-बेटियों की इज्जत लुटै।' उसी अधेड़ स्त्री ने तीखी आवाज से कहा : 'और तुम हाथ पै हाथ धरे बैठे रहो। चूड़ी पहन के बैठ जाओ।'

भीड़ हुंकार उठी।

'बदला लेंगे।'

और उस कोलाहल को दबाकर धूपो चिल्लाई : 'पंचो ! मैं हुकम मांगती हूं। मैं सती होऊंगी।'

'सती !!'

'पुलस आ गई तो ?' भय हुआ। यह क्या बकती है ?

'नहीं। नही।' भीड़ चिल्लाई : 'हम बदला ले लेंगे। तू मत डर।'

परन्तु एक बुड्ढे ने कहा : 'नहीं, तू सती नहीं हो सकती।'

'मैं होऊंगी।' धूपो ने कहा : 'मेरी क्या इज्जत है ?'

'अरी रहने दे इज्जत वाली !' किसी ने भीड़ में से चिल्लाकर कहा : 'तुझ जैसी गाव में कितनी नहीं हैं !'

उस समय धूपो की आंखों में खून उतर आया। उसने कहा : 'मेरे सामने आके कह !'

'कौन बोला !' खचेरा चिल्लाया।

परन्तु कोई सामने नहीं आया।

धूपो गरजी : 'कौन कहता है मैं पापिन हूं ? मेरा क्या दोष है पंचो ? मैंने अपने-आप तो कुछ नहीं किया !'

किसीने दूसरी ओर से कहा : 'ताली एक हाथ से नही बजती।'

धूपो विकराल हो गई। उसने गला फाड़कर चिल्लाते हुए कहा : 'कायर ! क्यों सामने नहीं आता !'

पर सामने कोई नहीं आया। भीड़ में से रोष का स्वर उठा : 'धूपो बेदाग है। धूपो पापिन नहीं है।'

'तो मैं सती ही होऊंगी,' धूपो ने कहा : 'मेरा यही प्रासचित्त है। मेरे पुरबिले जन्म के पाप का मुझे दण्ड दिया उसने, तो मैं उसका दण्ड उतारूंगी।'

'नहीं।' बूढ़ा फिर बोला : 'तू सती नहीं, पर धर्म की बात और है।'

'सो कैसे ?' एक तरुण ने पूछा।

'बेटा, लुगाई है, इसे दोस तो लग ही गया।'

तरुण ने बहस की : 'पर इसका पाप क्या है ?'

दोस हो न हो पाप तो लग ही गया पुरखा पत्ती से जो होता चला आया है

[illegible] सकता है ?'

[illegible] उठा रही थी। उस दारुण अपमान [illegible] जैसे मदान्ध हाथी ने सहस्रदल कमल को [illegible]। उसका हृदय उसके व्यंग्य से शतविक्षत होकर लहू-लुहान हो गया। [illegible]

'[illegible]!' धूपो ने कहा : 'तू मुझे पापिन मानता है, तू मुझे पापिन मानता है...'

और जैसे उसके मुंह से क्रोध से शब्द निकलना भी असंभव हो गया। वह फड़कने लगी और तब सामने की एक पत्थर की दीवार से उसने इतनी जोर से सिर को [illegible] दिया कि सिर खिल गया और लहू की धार फूट निकली, गर्म-गर्म लहू से वह भीग गई और नीचे गिर गई। लहू की धारा धूलि में बह निकली और बहकर जम गई और वह मर गई।

उसकी पुण्यगाथा अब रक्त से लिखी पड़ी थी। निर्दोष स्त्री ने समाज के बंधनों को अपने [illegible] के बलिदान में भिगो दिया था, जिसमें स्त्री को अधिकार नहीं दिए गए।

उस समय भीड़ रोने लगी। वह अपनी पवित्रता प्रमाणित कर गई थी। उसने कहीं भी भय और कातरता का प्रदर्शन नहीं किया था। वह इस समय ऐसी पड़ी थी जैसे पर्वतों के ऊपर फूटती हुई जीवनदायिनी ऊषा थी, दिव्यात्मा की भांति वह मुस्करा उठी थी।

'वह देवी थी,' सुखराम चिल्लाया : 'अरे देवी रूठ गई !'

उसके उस वाक्य को सुनकर वह भीड़ चौंक उठी। उन्हें लगा, सचमुच वह देवी थी। वह उन सबसे ऊंची थी, क्योंकि वह भीत से लड़कर जीत गई थी।

मृत्यु को उसने क्रीड़ा बनाकर अपनी गरिमा के पांव के नीचे कुचल दिया था।

'मैया ! मैया !' करके भीड़ चिल्लाने लगी। उस पराभूत ओज में वे उसे प्रणाम करने लगे।

बुड्ढा भगत आगे आया और उसने अपने गंभीर वृद्ध मुख को उसके सामने झुकाया और उसके चरणों की धूल अपने सिर पर चढ़ा ली। उसे देखकर भीड़ समझा कि आज कोई बहुत बड़ा काण्ड हो गया है।

सुखराम का सिर फटने लगा। उसके सामने धूपो का शव पड़ा है। उस नारी का, जिसके बच्चे बिलख रहे हैं, अनाथ हो गए हैं; जिसपर यदि वहां अत्याचार हुआ था, तो यहां उसके अपने कहे जाने वालों ने पहले से भी भयानक अत्याचार किया था। और वह कितनी भव्य स्त्री थी, जिसने झुककर चलना ही नहीं सीखा, वह पवित्र थी'''।

और तभी बच्चे रो उठे : 'अम्मा ! अम्मा !'

सुखराम ने धूपो का खून लिया और माथे पर लगाया और वह ऊंचे सुर में चिल्लाया : 'मां ! तू मां है। तू सिंह चढ़ने वाली है। आज तेरी यह दसा !'

उसके कांपते हुए स्वर को सुनकर सब फिर हिल उठे।

'अरे बांके, महिषासुर !' खचेरा चिल्लाया।

उस समय लगा जैसे महाकाली की असंख्य भुजाएं कांपने लगीं और उनमें से भयानक आग पैदा होने लगी और लगा, त्रिभुवन उस क्रोध को संभाल सकने में असमर्थ हो जाएंगे। उस भयानक ज्वाला का वह स्फुरित निर्घोष उस भीड़ में पर्वतों की भांति साकार होकर सिर उठाने लगा

धूपो के बच्चे रो रहे थे उनके सामने उनकी मां की लाश पड़ी थी वे उससे

चिपट-चिपटकर चिल्लाते थे, पर मां तो मरी पड़ी थी, वह तो नहीं बोलती। अभी तो बोल रही थी, अब चुप क्यों हो गई है ?

उनका वह हृदय-विदारक क्रंदन सुनकर छाती फटी जाती थी। छोटावाला बालक अपनी अबोध-निर्मल पवित्र आंखों मे आंसू भरे हुए उस लाश को बार-बार अम्मां-अम्मां कहकर पुकार रहा था, जैसे आज वह ममता के बल पर फिर मृत शरीर को व्याकुल करके जीवित कर देने का हठ ले बैठा था।

धूपो की पड़ोसिन ने छाती पीटी और गाया : 'अरी तू चली गई, तैंने पाप नही किया, पाप हमने किया जो तुझे मरते देखकर भी चुप खड़ी रहीं, अभागिन...।'

तब बूढी रमझो बाहर आई और अपने कांपते स्वर से गा उठी : 'अरी बहू ! तू चली गई, जवानी में कमेरा छोड़ गया, और तूने कभी मन नही डिगाया, हाय आज तू भी चली गई, और वे राच्छस, उनका सत्यानास जाए, जिन्होंने तुझ पै हाथ उठाया...।'

उस समय स्त्रियों ने रोते हुए गाया : 'चली गई, चली गई, तेरा राजा पहले गया। ओ सती, तू किस रानी से कम थी, जो बिरादरी के माथे पै लहू का चंदन लगा के चली गई...!'

चमार कांपने लगे। गुस्से से उनके मुंह से बोल कढ़ना कठिन हो गया था। कायरों तक में जोश था।

सुखराम ने कहा : 'बाके, मै तेरा लहू पिऊंगा...।'

परन्तु वह कह नही सका। उसका गला रुंध गया। वह धूपो के बच्चों को उस समय मां के शव से चिपटकर चिल्लाते हुए देखकर दहल गया। वह भीड़ उस समय अत्यन्त विचलित हो गई थी।

कुछ क्षण वे निस्तब्ध खड़े रहे। सोचते रहे। कुछ मिनट बीत गए। तब धीरे से गिल्ला ने कहा : 'आज भवानी जगी थी। सो गई।'

'नहीं, सोई नही है। जगा रही है।' सुखराम ने कहा।

किसीने उसका उत्तर नहीं दिया। अब धीरे-धीरे वे एक-दूसरे के मुख की ओर देखने लगे थे, और आंखों में अपने-अपने संकुचित स्वार्थों के चोर झांकने लगे थे। कुछ चाहते थे कि इसे फूंक-फांककर खत्म किया जाए और पुलिस में रपट करवा दी जाए; पर हिम्मत नहीं पड़ती थी। अभी कैसे कह दें ! कहीं कायर कहला गए तो ?

सुखराम ने चारों ओर देखा और कहा : 'तुम लोग चुप क्यों हो ?'

'चुप कहां हैं ?' एक ने कहा : 'पंचों को बुलाओ और आगे का फैसला करो। क्या करना है।'

सुखराम आहत हुआ। वह सोचने लगा। अगर नटों में कोई ऐसी गुस्से की बात हो जाती तो अभी तक वे हमला कर चुके होते, फिर की फिर देखी जाती। पर इसका कारण है कि वे किसी से दबते नहीं। डरते है, झुके रहते है, पर जब उन्हें गुस्सा आता है तो जानवर की तरह टूट पड़ते है। ये लोग कभी जानवर नही बनते, तो ये कभी आदमी भी नही बनते। कायर हैं।

सुखराम विक्षुब्ध हुआ।

खचेरा ने कहा : 'सजाओ, भवानी की अर्थी सजाओ। वह रानी थी ! वह वैसे ही नही जाएगी। वह पुन्नात्मा थी। वह देवी का औतार थी।'

स्त्रियों में उसके वचन से सहानुभूति जाग उठी। वे काम में लग गईं।

'धिक्कार है तुम्हें,' सुखराम ने कहा : 'अब भी नही जागे तुम !'

'मगर हम करें क्या ?' एक ने पूछा।

अरे चसके बाके को काट डालें

'फिर पुलिस आएगी ?'

इस बात ने कई लोगों पर असर किया।

सुखराम ने कहा : 'आज मुझे मौका दो। मैं अकेला उसे काट डालूंगा।'

'फिर तू क्या बच जाएगा ?'

'क्या हो जाएगा ? फांसी ही न ?'

'तू तो नट है, भाग के जंगल में जा छिपेगा, हमारा क्या होगा ? हमारे तो घर यहीं हैं। हम कहां जा सकेंगे ?'

किसी पर आंच नहीं आएगी। अगर मैं मारूंगा तो पुलिस मुझे पकड़ेगी। वचन देता हूं कि धूपो का बदला मैं जरूर लूंगा।'

'अपना बदला ही जो कहू।'

'कैसे ?'

'तुझे भी तो मारा था उसने।'

'सो भी इसी के कारण।'

'तेरी दूसरी लाग क्या थी ?'

'कहे देता हूं, तुम लोग कायर हो।'

'बाल-बच्चों की तरफ क्या देखें नहीं ? गले घोंट दें सबके ?' एक और आदमी ने कहा।

'खून हुआ है तो सरकार देखेगी। जुरम हुआ है तो कानून क्या मर गया है ?' एक चौथे ही व्यक्ति ने कहा।

सुखराम ने देखा। वे धीरे-धीरे हिम्मत हार रहे थे।

'यह सब रुस्मतखां की वजह से हुआ है।' खचेरा ने कहा।

'तो चलो उससे पूछें।' गिन्ला ने कहा।

'पूछोगे क्या ?' सुखराम ने कहा।

वही बुड्ढा जिसने धूपो परपिन कहा था, बोला : 'तुम लोग जवान हो, समझते नहीं। समझे ! जोश में हो। पर सरकार एक-एक को भून डालेगी। और गेहूं के साथ घुन भी पिसेगा। बांके को पुलिस में दे दो। जो हुआ वह तो हो ही गया।'

भीड़ को यह बात जंची। वह सब जोश ठंडा-सा पड़ चला।

'बांके को ढूंढ़ना होगा।' एक ने कहा।

'कहां होगा वह ?' दूसरे ने कहा।

'कहीं छिप रहा होगा।'

'पर जाएगा कहां ? हम उसका खून नहीं करेंगे, पर उसे अब इस लायक तो नहीं छोड़ेंगे कि फिर वह ऐसा काम कर सके।'

सुखराम को घृणा हुई। पर अकेला क्या कर सकता था ! स्त्रियां भी अब हल्की पड़ रही थीं। उनके अपने-अपने स्वार्थ जाग उठे थे।

चमार भेज दिए गए। उन्होंने बांके को ढूंढ़ना शुरू किया।

सुखराम गंभीर खड़ा रहा।

खचेरा ने उसकी आंखों में झांका। कहा : 'तू क्यों घबराता है ? ये सब डरपोक हैं। मैं और तू तो हैं।'

खचेरा की बात से सुखराम को चैन मिला। कहा कुछ नहीं, देखता रहा।

'फिर कभी देख लेंगे।' खचेरा ने कहा, और आगे की ओर बढ़कर बोला, 'लाश कहां है ?'

लाश सज गई। चमारों ने उस पर फूल डाले। वह ऐसी मन को बहलाने वाली

बात थी, जैसे महावट की आस में आसमान ताकने वाले किसान ने अन्त मे गिरती ओस को ही गनीमत समझा था कि चलो, न कुछ से यह ही भली।

वहां धूपो के परिवार का कोई व्यक्ति नहीं था। अतः उसके लिए उमड़ा हुआ ज्वार उतना दृढ़ नहीं था। उसके बच्चे अब भी बिलख-बिलखकर रो रहे थे। बड़ी कठिनाई से उन्हें उनकी मां से अलग किया। उनका रोना सुनकर औरतें रोती थीं और आसू पोंछती जाती थीं। पर पंचों का मन चौकन्ना था। धरम-दुहाई देकर वह पंचो पर उन्हे छोड़ गई थी। कैसे होगी!

उस समय खचेरा ने कहा। 'हम जाते है।'

'कहां?' गिल्ला ने पूछा।

रुस्तमखां के यहां।'

'क्यों?

'बांके वहीं होगा।'

सुखराम ने सोचा। कजरी और प्यारी भी वही हैं। कहीं प्यारी धूपो की लाश देखकर खुश हुई तो! तो क्या वह उसे कभी माफ कर सकेगा? कभी नहीं।

खचेरा के हाथ में लट्ठ दिखाई दिया। उसने कहा: 'जिसे डर हो लौट जाए!'

दस आगे बढ़े, फिर बीस, फिर पच्चीस, फिर सौ, फिर भीड़ हो गई।

खचेरा ने कहा: 'उठाओ! भवानी को उठाओ!'

उन्होंने अर्थी उठा ली, और पुकारा: 'राम नाम सत्त है ···'

सुखराम संग-संग चला। उसकी इच्छा हुई, धूपो के बच्चो को ले ले और पाल ले। पर वह करनट था! बिरादरी की बात है। उस जैसे नीच जात को चमार अपने बच्चे देंगे ही क्यों?

आवाज़ उठी: 'सत्त बोलो गत्त है···'

सुखराम ने खचेरा से कहा: 'मरघट जाते हो?'

'नहीं।' उसने कहा।

'तो फिर जै क्यों बोलते हो?'

'गांव-भर में खबर फैल जाएगी ऐसे।'

'वहां लाश पुलिस को देनी होगी।'

'नहीं देंगे।'

'और अगर उन्होंने मांगी तो?'

खचेरा ने लट्ठ उठाकर कहा: 'तो लहू लेंगे और देंगे···'

उसकी आवाज़ डूब गई, क्योंकि पुकार उठी: 'राम नाम सत्त है।'

24

बांके की छाती फूल उठी। आज उसकी वह कठिन घड़ी पार हो गई थी। उसे पैशाचिक आनन्द था। धूपो का सतीत्व खण्डित करना उसे सबसे बड़ा काम दिखाई दे रहा था। अब क्या करेगी सुसरी! जब मिलेगी तो आंख कैसे मिलाएगी! सारे गाव मे खबर तो फैल ही जाएगी। मज़ा रहेगा। खूब चर्चा चलेगी।

वह सीधा रुस्तमखां के पास पहुंचा। रुस्तमखां भरा बैठा था। उसने उसे देखा, पर बैठा रहा। परन्तु उसके क्रोध को आज बांके नहीं देख पाया। वह तो हर्षोन्मत्त हो रहा था। रुस्तमखां ने देखा कि आज वह खुश था। उसका भी माथा ठनका। आखिर बात क्या है? बांके झूमकर से एकदम लिपट गया उस्ताद उसने कहा

जैसा जो कुछ उसने किया था, वह लाकर उसके चरणों पर समर्पित कर दिया था
उसकी वे अलमस्त आंखें, वे फड़कती हुई मूछें, वे गर्म-गर्म सांसें, उन सबने रुस्तमख
का क्रोध भगा दिया। उसे एक मबल मिल गया। उससे वह मन की सारी बातें क
सकता था।

'क्या हुआ बे ?' उसने कौतूहल से पूछा, जैसे अपना बड़प्पन रखते हुए भी व
उसकी किसी नयी हरकत का रस लेना चाहता था। उसने स्वयं कभी उसे इतना प्रसन
नहीं देखा था।

'मज़ा आ गया।' बांके ने कहा और उसकी आंखें सुखद कल्पनाओं के कारण
मुंद गईं और वह आंखें मींचकर ही मूछों पर ताव देने लगा। रुस्तमखां के भीतर ज्वा
सा उठ आया। उसने कहा : 'क्यों बे, ऐसा मज़ा अभी तक आ रहा है ?'

'तुम्हारी दुआ है उस्ताद।' उसने पैरचम्पी की।

'क्या हुआ आखिर ?' रुस्तमखां ने पूछा।

बांके ठठाकर हंसा। उसका वह हास्य नीचे से ऊपर चढ़ा। प्यारी चौंक गई।

'क्यों, क्या हुआ ?' कजरी ने धड़कते दिल से कहा।

'बांके आया लगता है।'

कजरी समझी नहीं। फिर अट्टहास सुनाई दिया। मदमत्त। विभोर-सा। आतंक-भरा। प्यारी ने सुना तो धीरे से कहा : 'कजरी !'

'क्या है ?'

'मैं नीचे जाती हूं। तू संभलकर बैठ।'

'मैं भी चलूंगी साथ। यहां अकेली मैं नहीं रहूंगी।'

'अच्छा चल, एक से दो भली।'

दोनों धीरे-धीरे नीचे उतर आईं। बांके और रुस्तमखां को कुछ पता नहीं चला।

दोनों छिपकर सुनने लगीं। उन्होंने दरवाजे की संधों में से झांका।

रुस्तमखां ने कहा : 'आज जूआ बहुत जीता क्या ?'

'सो तो है ही।' कहकर उसने जेब से नोट निकालकर रुस्तमखां के सामने पटक दिए।

रुस्तमखां की आंखें फट गईं।

'सब ले लो उस्ताद, सब तुम्हारे हैं आज।' बांके ने हाथ उठाकर कहा।

'बात क्या हुई ? बता तो।'

'राजा मेरे, सब तुम्हारे कदमों की मेहर है। आज मुझे ना न करना। सब ले लो। तुम्हें अपने बांके की कसम।'

लाचार रुस्तमखां को वे रुपये लेने पड़े। कहा : 'अबे तू है बड़ा जिद्दी। अब सब मुझे ही दिए दे रहा है।'

'तुम क्या मुझसे कुछ अलग हो उस्ताद !' बांके ने कहा : 'आज चूपो, उस्ताद ! चूपो।'

और फिर उसने कहकहा लगाया।

प्यारी ने गौर से सुना।

'तेरी मुराद पूरी हो गई ?' रुस्तमखां ने पूछा।

'जरूरत से ज्यादा उस्ताद।'

'वाह, क्या बात है ! किस्मत वाले।' रुस्तमखां ने कहा और एक आह छोड़ी से हम न हुए।

'आग लगती है मेरे दिल को उस्ताद ! यह ठंडी सांस क्यों ली तुमने ? जवाब दो।'

'यों ही।' रुस्तमखां ने कहा।

'अरे हम समझ गए उस्ताद ! अब तुम चाहो जब कहो, लाकर उसे हाजिर कर दूंगा।'

'सो कैसे ?'

'अब वह क्या मुझसे आंख मिला सकती है !'

'सो तो है।' रुस्तमखां ने पारखी की तरह कहा।

बांके ने कहा : 'उस्ताद, इसके फेर में मैं साल-भर से था। सुसरी मक्खी नहीं बैठने देती थी।'

'प्यारी इससे नाराज थी।'

'वह जाने, उसका काम जाने। पर मैं नटिनी का तरफदार हो गया था उस दिन, जानते हो क्यों ? मैंने सोचा, साली को जरा दो-चार हाथ जड़ दूं। मुझे डराती थी पहले। कहती थी, कह दूंगी सबमें।'

'तूने रुपया न दिया होगा ! एक-आध दे देता। चमरिया ही तो थी। मान जाती।'

'नहीं उस्ताद ! बुरा न मानना। नटिनी और चमरियों में फरक होता है। बड़े घर की औरतें तो आने नहीं देतीं, पर कहीं चंगुल में आ गईं तो बदनामी के डर से चुप लगा जाती हैं। पर यह तो अपने को बड़ी पारसा बनती थी। रुपया ! एक की कहते हो ! दस का नोट देना था, मेरे मुंह पर फेंक गई।'

'और अब तो मुफ्त में काम हो गया !' रुस्तमखां पशु की-सी आंखों को लिए हंसा। बांके ने फर्माबर्दार की तरह सिर झुकाया और पैर पकड़ लिए, 'तुम्हारी रहम-करम की बात है उस्ताद ! वर्ना हम क्या थे !'

कुछ रुककर उसने कहा : 'पर एक कसर रह गई उस्ताद।'

'वह क्या ?'

'मैं अकेला नहीं था।'

'तो !' वह चौंका।

'मेरे साथ दो आदमी और थे !'

प्यारी के रोंगटे खड़े हो गए।

'कौन ? कौन थे ?' रुस्तमखां ने पूछा।

'बताने में डरता हूं।'

'क्यों ?'

'वे तुम्हारे दुश्मन थे।' बांके ने कहा : 'पर अब मैंने खाई पाट दी, उस्ताद ! वे थे हरनाम और चरनसिंह !'

रुस्तमखां चौंक उठा, इतना कि दिखाई दे गया कि वह हिल उठा है।

प्यारी ने गुस्से में होंठ काटे। कजरी ने उसकी ओर मुड़कर देखा और कान में पूछा : 'कौन हैं ये ?'

'ठाकुर हैं।' प्यारी ने कान में ही कहा।

'तुम जानती हो ?'

'हां, मैंने दोनों को कुचलवाया था।'

वे भी मिल गए इससे ?

हां

'हां ।' तभी बांके ने कहा : 'पहले मैं भी डरा । तुम्हारे चोरी से उस दिनी गड़ाप्ने का नेम काट रहे थे ।'

'अच्छा, तो जिसका बाप मर गया है । जो उसके फूल-फूल लेके गंगा गया है ।' रुस्तमखां ने कहा : 'खूब ! खूब मौका हाथ लगा तुमने । फिर तुम्हें गांव में ही मिले होंगे । वे तुमसे कैसे मिल गए ?'

'पहले तो' बांके ने कहा : 'मैंने सोचा, मामला चौपट हो गया । पर फिर मैंने अकल से काम लिया । मैंने कहा : सुनो प्यारी की सहेली है । और मैंने तुम्हारे कहने से प्यारी की सहेली को पीटा । प्यारी ने अपने सुखराम से उसे बचवाया । फिर तुम्हारे कहने से मेरी सुखराम के साथ लड़ाई हुई । मैंने कहा, उस्ताद को तुमसे अब कोई दुसमनाई नहीं । वह तो उस प्यारी का फेर है । उस्ताद, लुगाई का बाट था । दोनों के घाव कच्चे । दोनों मिल गए ।'

रुस्तमखां ने हंसकर कहा : 'ये तूने अच्छा किया । मुझ पर से सारा इलजाम हटाकर नटनी और उसके यार पर डाल दिया । बल्कि ठाकुरों से दुश्मनी न मोल लेना चाहता ही नहीं था । यह सब इसी हरामजादी की वजह से हुआ था । क्या बताऊं ? उस वक्त मैं इसपर अंधा हो गया था ।'

कजरी ने प्यारी की तरफ देखा ।

प्यारी ने देखा तो देखती रही ।

'सुना ?' कजरी ने कहा ।

'सुन रही हूं ।' प्यारी ने कहा ।

कजरी ने कहा : 'तुझे बदनाम किया है ।'

प्यारी के नेत्र जल रहे थे । कहा : 'मैं भी इसे देख लूंगी ।'

कजरी ने कहा : 'ठाकुरों को तूने पिटवाया था ?'

'अरे मैंने कुचलवा दिया था ।'

'छोड़ !' तभी रुस्तमखां ने कहा : 'फिर वे लोग बाद में क्या कहते थे ?'

'पांव पकड़ते थे ।'

'क्यों ?'

'अब उस्ताद, मैं कैसे समझाऊं ?' बांके ने नम्रता से कहा । वह जैसे शर्मिन्दा था ।

'अच्छा फिर ?' रुस्तमखां की वासना उस घृणित कथा को विस्तार से सुनना चाहती थी ।

बांके ने इंगित किया ।

'आक्खाखा...' करके रुस्तमखां हंसा । रुककर कहा : 'यार ! क्या बताएं । वे दोनों बड़े जालिम हैं । काम के हैं । पर जब से यह साली नटिनी आई है, तब से उनसे बैर बंध गया है ।'

'और उस्ताद गुनाह बेलज्जत ।'

'बिल्कुल ख्वाहमख्वाह !'

'अब कहो मर्द हूं ?' बांके ने पूछा ।

'सौ बार !'

'पर उस्ताद, वह छुरा मेरे किसने मारा था ।'

'कजरी ने मुड़कर देखा । प्यारी मुस्करा दी । कजरी ने उसके कंधे पर स्नेह से हाथ धर दिया ।

बांके ने कहा : 'मुझे तो इस नटनी पर शक होता है

प्यारी और कजरी के कान खड़े हुए।

'वह क्यों? वह तो ऊपर थी।' रुस्तम खां ने कहा।

'अरे उस्ताद। नटनी है। उसे ऊपर-नीचे कूदने से क्या देर लगती है। यह जात तो बिल्लियों की है।'

'यही मैं भी सोचता हूं। आखिर कौन आ सकता था।'

'उस्ताद! चमारों ने तो बदला मुझे मारकर ले ही लिया था!'

'वे नीच जात। यही क्या कम था जो सिर उठा गए इतना। पर अब तूने उन से अच्छा बदला ले लिया है।'

'उस्ताद बदला नहीं, एक ठिकाना वक्त-बेवक्त के लिए हो गया। वह बेवा है।'

रुस्तमखां सोच में पड़ गया।

'क्यों उस्ताद! फिकर में कैसे पड़ गए?'

'फिकर मुझे न होगी तो किसे होगी बांके, मेरे जांनिसार।' रुस्तमखां ने कहा और सांस ली।

'कह दो उस्ताद।'

प्यारी और कजरी ने ध्यान से सुना। रुस्तम खां आज की, अपनी प्यारी से जो बात हुई थी सुना गया, पर इतना और जोड़ा कि मैंने उसे भी खूब डांटा। कजरी ने प्यारी को देखा। प्यारी ने कहा: 'आखीर में झूठ बोल गया। कमीन, डरके चुप हो गया था तब।'

'तो तूने मुझसे न कहा।'

'मैंने सोचा तू डर जाएगी।'

रुस्तमखां ने कहा: 'अब क्या किया जाए?'

'अकड़ी हरामजादी! उसकी ये मजाल!!'

'सुखराम का भरोसा है उसे।'

'उस्ताद, मैं तो उसे भी···हां।' उसने हाथ से चाक करने का इशारा किया।

'कर ही दे यार।'

'कर दूंगा, मारो हाथ। आज ही।'

लेकिन रुस्तमखां ने हाथ नहीं मारा।

'पर आज उसकी दूसरी लुगाई साथ है।' उसने कहा।

'कहां?'

'ऊपर है।'

'तुमने देखी?'

रुस्तमखां ने मुस्कराकर देखा।

'कैसी है?' बांके ने पूछा।

'कहां यार? बना तो रहा हूं। देखने की कोशिश की थी, तभी तो वह बिगड़ गई। औरत औरत की बड़ी दुश्मन होती है।'

प्यारी ने कजरी का हाथ दबाया।

'कैसी भी हो। होगी तो जवान ही?' बांके ने कहा, जैसे उसने पूरे चित्र की कल्पना कर ली थी और अब उसकी अप्रत्यक्ष पुष्टि चाहता था। रुस्तमखां ने सिर हिलाया।

'अरे सो तो नटिनी है।' उसने कहा- जैसे नटिनी होने का अर्थ ही कामुकता का होना था उसके नेत्रों में एक चमक सी आ गई थी उसने सोचकर

सिर उठाया और फिर रुस्तमखां की आंखों में रहस्य-भरी दृष्टि डाली।

'उस्ताद, आज मजे ही मजे नजर आते हैं।' उसने कहा।

'इतनी जल्दी भी सिर न उठा।' रुस्तमखां ने धीरज से काम लेने की सलाह दी और दुश्मन को कमजोर न समझने की राय दी।

'आज तो पौआ खोल दो। कलेजी ले आऊं? अरे यार! तुम यहां बैठे रहो, मैं सारे गांव का यों नचा दूंगा, यों!' उसने चुटकी बजाई और पैसे के लिए हाथ फैला दिया।

'लो जा! बोतल भी ले आइयो।' उसने पैसे देकर कहा : 'जल्दी आइयो।'

'ये गया, ये आया।'

वह उठ खड़ा हुआ। रुस्तमखां चारपाई पर लेट गया और उसने दोनों हाथ की कुहनियां उठाकर हथेलियों पर सिर रख लिया।

प्यारी और कजरी ने देखा।

प्यारी ने कहा : 'तो सुखराम की इससे बात हो चुकी है?'

'हां।'

'तू जानती थी?'

'हां।'

'फिर मुझसे कहा क्यों नहीं?'

'फिर तू चिढ़ती कैसे?'

बांके गया। प्यारी ने कहा : 'तू बड़ी निरदयी है।'

'सौत जो हूं।'

'पर अब तूने सुना!'

'हां।'

प्यारी ने कहा : 'अब?'

'अब क्या, कुछ नहीं।'

'ये उसपर छिपकर हमला करेगा।'

'इसका बाप कुछ नहीं कह सकता।'

प्यारी की समझ में नहीं आया।

कजरी ने कहा, 'इसपर तो मेरा मन आ गया है।'

उसकी बात सुनकर प्यारी कांप उठी। क्या हो गया इसे? इतने नीच पर? कजरी का! यह औरत है!! यह सुखराम की वफादार है!! इसमें इतना जहर है! उसको उबकाई-सी आने लगी। पर कजरी निश्चिन्त खड़ी थी।

'इसपर?' प्यारी ने धीरे से कहा। उसके उस धीमे स्वर में भी उसकी घृणा अव्यक्त नहीं रही। कजरी मन ही मन मुस्कराई और फिर उसके होंठों पर भी वह प्रकट हो गई। प्यारी के नेत्रों में आश्चर्य आ गया।

'बांके पै?' कजरी ने गर्दन नचाकर कहा।

'कजरी!!!' स्वर दबाकर उसने कहा, जैसे क्या बक रही है! और शायद जोर से बोलने का मौका होता तो वह उसे मार भी बैठती।

कजरी ने कहा : 'इसीने मेरे खसम का लहू बहाया है न?'

प्यारी समझी। सान्त्वना हुई। मन हर्षातिरेक से भर गया। कहा : 'हां।'

'तुझे याद है, मैं आई थी?'

'कैसे भूल जाऊंगी!'

पर तूने क्या किया था तब?

'मैंने बदला लिया था। तीन बार कटार भोंकी इसके। पर बदकिस्मती से तीनों बार कंधे में लगी। निशाना चूक गया, वरना बराबर हो गया होता पापी उसी वखत!'

'तो फिकर क्यों करती है?' कजरी ने कहा और प्यार से उसने प्यारी का मुंह चूम लिया।

'क्या करती है?' प्यारी ने कहा।

'तू सचमुच मेरी सौत है।' कजरी ने कहा।

प्यारी ने कजरी का हाथ स्नेह से दबाया।

तभी बांके लौट आया।

बोला: 'उस्ताद! कुछ चमारों में शोर तो हो रहा है।'

'होने दे यार! साली रो रही होगी, और क्या!'

'उसका कोई अपना तो है नहीं।'

'नहीं, सो डर नहीं। और होता तो मैं साले को मुंदा देता।'

'अरे तुम ऐसे जरा-जरा से काम करोगे, उस्ताद!' बांके ने कहा और दो बड़ी बोतलें निकालकर सामने रखीं, एक सिगरेट का हाथी छाप पैकेट रखा और कलेजियां रख दीं। रुस्तमखां ने ललचाई आंखों से देखा और होंठों पर जीभ फिराई।

'अबे इतनी क्यों ले आया?' उसने पूछा।

'एक से क्या काम चलता?'

'क्यों!'

'खूब पियो उस्ताद। आज की रात कतल की रात है। आज मैंने धूपो जीती है, आज सुखराम को जीतूंगा और फिर उसकी नटिनी को तुम्हारा गुलाम बना दूंगा।'

'किसे, दूसरी को भी!' रुस्तमखां ने ललचाकर पूछा।

'तुम इसारा करो।'

'पर बात फैलेगी फिर? दोनों का यहां रहना ठीक नहीं।'

'तो पहली को चटका देना!'

प्यारी और कजरी ने एक-दूसरे के हाथ दबाए और उन दोनों ने देखा कि दोनों के हाथों में कटारें नंगी हो चुकी थीं। दोनों ही मुस्कराईं।

बांके ने एक बोतल उठा ली और कहा: 'मसालेदार लाया हूं उस्ताद!

शोर की आवाज से डाट खुली और उसकी बदबू व्याप गई। लाल-लाल बोतल में से शराब गिरने लगी। फेन छलक आए और फिर बैठ गए।

'लो कलेजी लो।' बांके ने कहा।

एक चक्खी तो रुस्तमखां को अच्छी लगी। बोला: 'कल्लन से लाया होगा! बनाता अच्छी है।'

'उस्ताद, अब तो तुम ठीक हो गए?' बांके ने कुल्हड़ देकर कहा: 'पियो!'

रुस्तमखां ने पी तो मजा आया। वह तो उन लोगों में था जो शराब की याद में झूमते थे, पीना तो जन्नत में तशरीफ ले जाने के बराबर था।

'बिल्कुल। बिल्कुल ठीक हो गया हूं।' रुस्तमखां ने कहा, जब वह जहरीली मस्ती भीतर बोलने लगी: 'बिना इसके मजा नहीं आता, यार बांके। सबको बराबर कर देती है यह। क्या खूब चीज है!'

'फिर तुम्हारा मन इस नटिनी से न भरा?' बांके ने आधा कुल्हड़ पीकर कहा।

कलेजी ल ।ने कहा

तुम खाओ

'अरे प्यारी!' [illegible] और [illegible] : '[illegible] मैं तू [illegible] रहा हूं। [illegible] नहीं!'

[illegible] उसका स्वर भारी था।

[illegible], हम तुम्हारी [illegible] है।' उसने धीरे-धीरे कुल्हड़ [illegible] लिया और फिर दोनों के [illegible]। फिर [illegible] की ओर [illegible] दी। और बांके ने दूसरी बोतल [illegible]।

कजरी ने प्यारी को [illegible] मुंह की [illegible]।

कजरी ने कहा : 'क्यों?'

प्यारी ने कहा नहीं। गुस्से से होंठ फड़कने लगे।

कजरी ने कहा : 'धीरज धर!'

'कब तक?' प्यारी की आतुरता पुकार उठी।

कजरी ने कहा : 'प्यारी, तू नहीं। पहले मेरा हाथ [illegible]।'

प्यारी चकित हुई। कहा : 'क्या करेगी?'

'मिलूंगी।'

'किससे?'

'तू कहे उसीसे।'

'अभी ठहर जा।' प्यारी ने घबराकर कहा।

दूसरा कुल्हड़ पीकर रुस्तमखां ने कहा : 'बड़ी तेज लाया है रे।'

'उस्ताद! मैंने कहा ही था।' बांके हंसा। वह अब झूमने लगा था। उसने दूसरी बोतल खोली।

'नहीं, बस अब नहीं।' रुस्तमखां ने कहा।

'अरे वाह उस्ताद!' उसने कहा : 'तुम तो चुल्लू बांधकर पिया करते थे पहले।'

उसकी इस प्रशंसा के सामने रुस्तमखां भला क्या कह सकता था! कुछ लोग इसीमें कमाल समझते हैं कि इतनी शराब पीना भी ठाठ का, या कोई बड़ा भारी काम है। अपने-अपने दायरे हैं, किसीके बड़े, किसीके कम।

'फिर भी, फिर भी,...' रुस्तमखां ने कहा, पर बांके ने कुल्हड़ भर दिया। रुस्तमखां ने पिया तो बेहोश-सा वहीं लोट गया और बांके ने कहा : 'अरे उस्ताद! एक कुल्हड़ और लो।'

पर उस्ताद थे कहां! वे तो नशे में झूम गए थे। इस वक्त उन्हें पता ही नहीं था कि वे थे कहां।

बांके शराब के नशे में चूर था और उसने सिगरेट सुलगाकर धीरे से गुनगुनाया। कजरी बढ़ी।

प्यारी ने कहा : 'क्या करती है?'

'तू ठहर।'

'मैं न जाने दूंगी।'

'अरी मान भी तो जा!'

'क्या करेगी?'

'इसका मन रखूंगी।'

'और फिर क्या होगा? बात छिपेगी कैसे?'

'फिर की फिर देखी जाएगी।'

प्यारी लाचार हो गई

बांके ने गाया : 'हो गोरी तोरी बड़ी-बड़ी अंखियां···'

तभी उसे लगा, सामने का द्वार हल्के से खुला। उसने देखा। वहां कोई औरत थी। वह औरत मुस्करा रही थी। बांके नशे में था। उसे विश्वास नहीं हुआ। जल्दी में उसने बची हुई भी गले में उतार ली और फिर देखा। वह तो अब भी मुस्करा रही है ! कौन है ?

आंख मीड़कर देखा। वही है। सिर झूम रहा था, पर अब वासना अन्धा करने लगी। शराब के नशे में कमाल होता है कि आदमी जहां पांव धरना चाहता है, वहां नहीं धर पाता। पहले यह दिमाग उड़ाती है, फिर पांव उखाड़ देती है। वह उठा तो डगमगाया।

स्त्री ने इशारा किया, इधर आओ।

वह बोला : 'अरे···तु···तु···'

पर स्त्री ने बोलने से मना किया। इशारा किया कि चुपचाप आ। उसने होंठ पर उंगली रख ली। जैसे वह नहीं चाहती कि दस्तमखां जान जाए।

शराब के नशे में बांके समझा कि प्यारी है। प्यारी ही उसे बुला रही है। वह डगमगाता हुआ बढ़ा। कजरी ने द्वार धीरे से खोल दिया और उसे भीतर करके फिर वैसे ही द्वार बन्द भी कर दिया।

बांके के कन्धे पर हाथ रखकर उसने धीरे से पूछा : 'उसने देख तो नहीं लिया ?'

'नहीं।'

'मुझे उससे डर लगता है।'

'अरे वह साला मेरे रहते क्या कर सकता है !' बांके ने झटका लिया तो गिरते-गिरते बचा। डगमगाते पांवों से संभलकर खड़ा हुआ और उसने उंगली उठाकर पूछा : 'तू कौन है ?'

उसके मुंह से शराब की बदबू आ रही थी जिसको सूंघकर कजरी का मन उबकाई से भर-सा गया। वह बड़ी तेज बदबू थी। पर वह मुस्कराई। उसने नैना नचाकर उससे तनिक दूर हटकर, बड़े नखरे के साथ घूंघट-सा खींचकर कहा : 'कजरी !'

बांके ने सूरज सुनार से लेकर एक बार 'भूतनाथ' पढ़ा था। उस समय उसे लगा वह किसी तिलस्मी शय के सामने आ गया है। नशे में वह सब भूल गया था। उसने दो कदम लड़खड़ाकर चलने के बाद अपने को संभाला और भर्राए स्वर में पूछा : 'कौन कजरी ?'

'हाय, तुम मुझे नहीं जानते ?'

'नहीं,' उसने उंगली हिलाते हुए कहा : 'बिल्कुल नहीं। तू कोई परी है !'

'सुखराम की नई लुगाई हूं।' कजरी ने कहा।

बांके चौंक उठा। 'ऐं !' उसने कहा।

'सच कहती हूं, मैं तो उसी दिन से तुम्हारी तलाश में थी, जिस दिन से तुमने सुखराम को मारा था। देखना चाहती थी कि वह मरद कौन है।'

'अरे वा प्यारी !' उसने विभोर होकर कहा : 'तू परी नहीं है, औरत है !'

'और क्या !' कजरी ने कहा : 'सो आज देखा, और जैसा सोचा था वैसा ही पाया।'

'सच है ?' वह आगे बढ़ा।

'भीतर चल। ऊपर। यहां तो यह देख लेगा।'

'कौन देख लेगा ?'

दिखाई।

'[illegible] है। अभी अपनी सुनाई [illegible] था।'

'मेरा दुश्मन [illegible] आ गया है।' कजरी ने कहा। '[illegible] मारेगा?'

'[illegible] मारूंगा, मैं [illegible]।' कह कर [illegible] गया। [illegible]

'तू नहीं अच्छी है!' बांके ने कहा।

[illegible] प्यारी [illegible] है? [illegible] रहा था, [illegible] और [illegible] था। [illegible] थी, जैसे वह [illegible] है। [illegible] नहीं थी, जैसे वह [illegible] नीरा था। बांके को यह [illegible] था।

प्यारी समझी नहीं। परन्तु उसकी [illegible] कहती थी कि देख, आगे क्या होता है, देख। वह यह तो जानती थी कि कजरी उससे बुरी तरह पेश आदमी पर नया करती, वह यह नहीं मान पाती थी।

कजरी जब उसे पास ले आई तो प्यारी [illegible], प्यारी आड़ में हो गई। कजरी उसे कोठे में ले गई और [illegible] में से हल्की-सी हंसी सुनाई दी। प्यारी की जिज्ञासा बढ़ गई। वह अपने को रोक नहीं सकी। यह असम्भव था। वह पीछे-पीछे गई।

कजरी ने कहा : 'लो आ गए, ऊपर!'

'हां प्यारी!' और बांके ने इठलाकर उसका हाथ पकड़कर अपनी ओर खींचने की चेष्टा की।

कजरी ने हंसकर हाथ छुड़ा लिया और कहा : 'बांके, मेरा हाथ पकड़ा है, अब छोड़ तो न देगा?'

'कभी नईं (नहीं), कभी नईं!' बांके ने कहा।

'अच्छा! तो सुखराम का कतल करना होगा।' कजरी ने मुस्कराकर कहा।

'मैं कर दूंगा प्यारी, आज रात को ही कर दूंगा।'

'वह तो बड़ा ताकतवर है, जानता है न?'

बांके ने क्रोध गाली दी। कजरी हंस दी। कहा : 'तू लेट जा।'

और सहारा दिया। बांके खाट पर लेट गया। उसने कहा : 'यहां आ। मेरी बात सुन।'

'सुन रही हूं। एक बात पूछूं?'

'दो बात पूछ।' बांके ने कहा। पर नशा उसकी आंखों को आराम दे रहा था।

'तू सुखराम का कतल करेगा कैसे?' कजरी ने पूछा।

'आ प्यारी! मैं उसे छुरियों से गोद-गोद के मारूंगा।'

हठात् कजरी ने फुरती से तकिया उसके मुंह पर रखा और जोर से दबाया। प्यारी ने देखा, बांके छटपटाया। उसने शायद हाथ भी चलाए। पर वह शिथिल था। तब कजरी के हाथ में कटार चमकी और उसने बांके को बार-बार छुरी से गोद-गोद के मारा और तीन बार मूठ तक उसके दिल में उसने छुरी घुसेड़ दी और फिर पेट से दो बार भुक-भुक की और जब बांके बेजान-सा दिखाई दिया तो उठ खड़ी हुई और उसने घृणा से उसके मुंह पर थूका और ऐसी ठंडी मरगलानी हंसी हंस उठी कि अगर वहां कोई होता तो थर्रा उठता। पर प्यारी पास चली आई और उसने तकिया हटाकर बांके का मुंह खोल दिया। देखा और कजरी की ओर देखकर धीरे से मुस्कराई।

'मर गया।' ऐसे कहा जैसे कोई कुत्ता मर गया हो और फिर मुंह पर तकिया पटक दिया। उसका मुख मृत्यु की यंत्रणा से विकराल हो गया था। वह पाप का पुंजीभूत स्वरूप इस समय मरा पड़ा था। उसका वह दंभ, वह अधन्यता, वह बर्बरता, वह क्रूरता, सब इस समय मिट्टी का ढेर बनकर पड़े थे। रावण के मरने पर लोगों ने यह तो भी शोक किया था कि हा! ऐसा महान् विद्वान यदि ठीक राह पर चलता तो क्या न कर देता! परन्तु बांके नीच था, उसके लिए ऐसा कहने वाला भी कोई नहीं था।

कुछ क्षण तक आवेश रहा। फिर वह चला गया। कजरी मुस्करा रही थी।

'अरी कटार पोंछ ले।' प्यारी ने कहा।

कजरी ने चादर से कटार पोंछ ली और साफ हो गई तो उसे चूम लिया और म्यान में रख ली और कपड़ों में छिपा ली। कहा: 'जेठी, तू न देती तो मैं क्या करती?'

प्यारी संभली। कहा: 'तूने तो चिल्लाने भी न दिया इसे?'

'इसने भी तो धूपो का मुंह बन्द कर दिया था।'

प्यारी ने प्रशंसात्मक रूप मे सिर हिलाया।

कजरी ने उपेक्षा से कहा: 'मौका नहीं था, वरना मैं इसे ऐसे मारना नहीं चाहती थी। यह तो काट-काट के नमक भर-भर के गला देने लायक था। मुझे संतोष न हुआ।'

'हाय राम!' प्यारी ने कहा।

कजरी ने कहा: 'डरती है?'

'नहीं।' प्यारी ने कहा।

'फिर तेरा मुंह फक क्यों है?'

'सोचती हूं, लाश कैसे ठिकाने लगेगी?' प्यारी ने कहा, जैसे बांके के मरने के बारे में उन दोनों को कोई बात नहीं करनी थी, वह जैसे कोई बात ही नहीं थी। मर गया, मर गया। उसके बारे में क्या सोच! अब तो अपनी फिकर थी।

'तू मेरी जेठी है।' कजरी ने कहा: 'तू नहीं डर सकती, यह मैं जानती हूं। तू मेरी सौत है, भला तू डर जाएगी, तो फिर दुनिया में हिम्मत किसमें रहेगी?'

प्यारी ने मुग्ध दृष्टि से देखा, जैसे वहां कोई विभीषिका नहीं थी। कजरी ने ही कहा: 'तैंने पापी के घर रहकर पाप किया है जेठी, वह पाप तैंने अपने-आप धो दिया।'

'कैसे?' प्यारी ने कहा।

कजरी अपनी आंखें फाड़कर धीरे से हंस दी। वह हास्य सचमुच डरावना था। प्यारी ने कहा: 'कैसे कजरी? मुझे बता।'

'जो तैंने इससे बदला लिया था। वह तो भाग की बात है जो यह तब बच गया। कमीन! धूपो की मरजाद बिगाड़कर आया था; मुझे-तुझे बदनीयती से देखता था और कहता था, सुखराम को छुरियों से गोद-गोद के मारूंगा! देख जेठी! बांके अब कहां है!'

'मैं तेरे चरन छूती हूं। तू सचमुच सुखराम के जोग है, मैं कहां?'

'सो क्यों?' कजरी ने कहा।

'तू उमर में छोटी है, पर मन में बड़ी है। तेरे अन्दर कितना बड़ा दिल है!' उसने पांव पकड़ लिए।

'नहीं प्यारी, उठ।' कजरी ने कहा: 'तू मेरी जेठी है, और तू ही रहेगी। मैं क्या, बिधना भी इसे नहीं मिटा सकता। मैं हत्यारी हूं, और तू तो सीधी है अभी!'

'मैं तो हत्या से बच ही गई थी।' प्यारी ने खेद से कहा। कजरी मुस्करा दी और उसने खून से प्यारी के माथे में लकीर खींचकर कहा तू मेरे बलमा की हो गई

[illegible], वह मैंने [illegible] और [illegible] रह गई। प्यारी [illegible] आश्चर्य में [illegible]।

[illegible] वे दोनों [illegible] आ गई थीं।

'कजरी, [illegible]'

'[illegible]!' कजरी ने कहा : 'अभी [illegible] बाकी है। [illegible] छोड़कर भाग चलें ?'

दोनों ने एक-दूसरे की ओर रहस्यमय [illegible] और एक झटके में अब वे एक-दूसरे के आलिंगन में बंधी थीं। वह [illegible] था, जिसे देखकर ही उन दोनों के आत्म-विश्वास का परिचय मिलता था। भयानक, परन्तु फिर भी पूर्ण, पूर्ण फिर भी [illegible]।

'कजरी, पाप धुल गया।'

'पर पूरा नहीं।' कजरी ने सिर हिलाकर कहा।

'तो फिर ?'

'जो मैं कहूं तो तू वह कर।'

'क्या ?' प्यारी ने पूछा।

'इसे और मिटा दें।'

'फिर ? लोग हमें न ढूंढ़ेंगे ?'

'दोनों शराब पिए हैं। दोनों ने एक-दूसरे का खून कर दिया, बस दुनिया यही समझेगी।' कजरी ने राय दी।

'और हम दोनों को ढूंढ़ेंगे ?' प्यारी ने प्रश्न किया।

'किसे खबर है, मैं यहां हूं ?' कजरी ने पूछा।

'पर मेरी तो खबर है।'

'अरे नटिनी का क्या ? भाग गई।'

'कहां भागेगी तू ?'

'डेरे चलेंगे।'

'वहां पकड़े जाएंगे।'

'तो परदेस चलेंगे। हम क्या जमीन से बंधे हैं ?'

'सो तो है।' प्यारी ने कहा।

'एक काम कर।' कजरी ने उत्तर दिया और धीरे-धीरे उससे कुछ कहा। प्यारी हंस दी। कहा : 'यह ठीक है।'

कजरी ओट में बैठ गई।

प्यारी ने अपने कपड़े फाड़े, फिर बाल बिखरा लिए, जैसे वह छीना-झपटी से उठी है।

पूछा : 'ठीक है ?'

'शाबाश।' कजरी ने कहा।

प्यारी नीचे गई। रुस्तमखां बेहोश पड़ा था। उसको दीन-दुनिया की कुछ भी फिकर नहीं थी। प्यारी खड़ी देखती रही। फिर पास गई और हिलाया।

वह नहीं जागा तब उसने जोर से सिर हिलाकर कहा : 'अरे सुनता है !'

रुस्तमखां ने कहा : ऍंऽऽऽऽ और फिर करवट बदल ली

प्यारी के सामने समस्या हो गई। उसने उसके मुंह पर शराब की बोतल कुछ उडेल दी। और उसमें एक नयी भभक भर गई। प्यारी अपने को रोक न सकी। बोतल मुंह की तरफ उठाई ही थी कि सामने से आवाज आई—'उंहु!'

प्यारी लज्जित हो गई। कजरी देख रही थी। उसने बोतल की बाकी शराब भी उसके मुंह पर उंडेल दी और झकझोरकर कहा : 'उठ गधे, उठ।'

शराब के नशे में ही झूमता हुआ रुस्तमखां बैठ गया। उसने कहा : 'क्या है? तू कौन है?'

'मैं हूं प्यारी।' उसने जोर से कहा।

'क्या है?' वह झूमते हुए बोला।

'अरे कितनी पी गया है तू?' प्यारी चिल्लाई।

कजरी ऊपर गई।

'अरे क्यों चिल्लाती है तू? तू मेरी कौन होती है?'

प्यारी ने कहा : मैं तेरी कोई नहीं, पर तू तो मेरा ही है?

रुस्तमखां को दूर से आते इन शब्दों ने फिर सुला दिया।

फिर उसने रुस्तमखां को जगाया।

वह नहीं बोला। प्यारी हताश हो गई। समझ मे नहीं आया, क्या करे। कजरी देर होते देख फिर नीचे आई। इशारे से पूछा। उसने कहा इशारे से—जागता नहीं। उसने इशारा किया—खूब हिला दे। प्यारी ने इशारा किया—हिला-हिला के हार गई, और सिर पर ऐसे हाथ रखा जैसे मर गया। कमबख्त उठता ही नहीं। कजरी चक्कर में पड़ी। पास बुलाया।

'क्या है री,' कजरी ने कहा : 'तुझसे जगाया भी नहीं गया?'

'ढोर है पूरा।' प्यारी ने कहा : 'ठोकर दूं?'

'अरी नहीं।' कजरी ने कहा। फिर कुछ धीरे से कहा। प्यारी प्रसन्न हुई। वह आ गई। और उसके पास बैठ गई। उसने धीरे से एक गीत की कड़ी छेड़ी और पतली आवाज का वह नटों वाला गीत कोठे में गूंजने लगा। रुस्तमखां अब भी बेहोश था, पर बहुत कुछ नशा उतर चुका था। कुछ ही देर में उसमें जागरण के आने वाले चिह्न दिखाई देने लगे। वह अब सिरदर्द से भर गया था।

प्यारी बिफर गई।

चिल्लाई : 'सुनते हो?'

'कौन है?' वह चौंका।

प्यारी रोने लगी। उसका रोदन सुनकर रुस्तमखां सिर पकड़कर बैठ गया।

'मैं नहीं सह सकती,' प्यारी चिल्लाई : 'मैं नहीं सह सकती!'

'ऐं!' रुस्तमखां ने कहा और फिर दोनों हाथों से सिर पकड़ लिया, और आंखें एकदम मीच लीं जैसे वह रोशनी नहीं सह सकता था।

प्यारी रोती रही।

'क्या हुआ?' रुस्तमखां ने कहा।

'मुझे मार डालो।' उसने कहा।

'आप ही जो मर जा।'

'मैं तो मर जाती, पर तुम्हें तो मुसीबत में नहीं छोड़के जा सकती?' प्यारी ने कहा। रुस्तमखां ने घबराकर देखा और उसका हाथ पकड़ लिया। वह डर गया था।

'ऊपर बांके ने कजरी को पकड़ लिया है।' प्यारी ने कहा।

किसने? वह पुकारा

'बांके ने।'

[illegible]

[illegible] क्या [illegible]?'

[illegible] प्यारी ने [illegible]।

[illegible]

[illegible]

'तुम तो नशे में थे [illegible]...'

'मैं नशे में था?'

'उसने कहा ही [illegible] तुम्हें [illegible] है, आग नहीं थी उसमें...'

'कहां है वह?'

'ऊपर।'

'राम!'

'पर जाकर भी क्या होगा!'

'होना था सो तो हो गया।'

'क्या हो गया?'

'तू नहीं जानता, सुखराम खूनी है। वह मुझे और बांके को अब मार के छोड़ेगा।'

रुस्तमखां घबरा गया। बोला : 'क्यों?'

'वह बदला न लेगा?' प्यारी ने कांपकर कहा : 'मुझे डर लगता है, मैं तो यहां नहीं रहूंगी... मैं भाग जाऊंगी...'

वह बाहर भागी।

रुस्तमखां ने कहा : 'ठहर, ठहर प्यारी! मैं बांके का खून कर दूंगा...' पर वह नशे में लड़खड़ा गया।

प्यारी लौटी।

'ऊपर चल।' रुस्तमखां ने कहा।

'मुझे डर लगता है। तू आगे चल। उसने मुझे बहुत मारा है। कहता था, सुसरी, तेरे सिपाही को भी बराबर कर दूंगा...।'

'अरे उसकी ये मजाल!' उसने फौलादी गालियों की बौछार की और आगे बढ़ा। प्यारी पीछे चली।

उस समय बाहर से कोलाहल-सा सुनाई दिया, जिसे सुनकर प्यारी चौंक उठी। यह क्या है? उसको सुनकर कजरी भी चौंक उठी। उससे रहा नहीं गया। वह खिड़की से देखने लगी। लगता था भीड़ बढ़ी आ रही है। पर केवल कोलाहल के सिवाय और कुछ दिखाई नहीं देता था कि यह सब क्या है। कभी-कभी रुस्तमखां का नाम सुनाई दे जाता था।

उसके मस्तिष्क में तेजी से विचार आने लगे। क्या ये सब चमार हैं? क्या ये धूपो का बदला लेने आये हैं? पर अब ये किससे बदला लेंगे? बांके तो मरा पड़ा है। तो क्या अब बात खुल जाएगी? प्यारी और वह दो ही तो हैं। और फिर सुखराम भी पास नहीं है : 'क्या होगा अब?'

वह यह भूल गई कि रुस्तमखां को लेकर प्यारी ऊपर आ रही है।

'कहां है वह?' रुस्तमखां ने ऊपर खड़े होकर कहा।

कजरी मामी उस भीड़ को देख वह घबरा गई, उसको यह ध्यान नहीं रहा

था कि कौन है। वह द्वार पर पहुंची तो रुस्तमखां से टकराई। पर रुस्तमखां संभाल गया। उसने कहा : 'कौन है ?'

'यह कजरी है।' उसने फिर कहा।

'छोड़ दे मुझे।' कजरी ने फूत्कार किया।

'भागती कहां है ?' रुस्तमखां ने उसे पकड़ लिया। और कहा : 'बांके कहां है ?

'भाग गया शायद।' प्यारी ने कहा।

परन्तु कजरी उस समय भूल गई। उसके मुह से निकला : 'वह पड़ा है।' और रुस्तमखां पुलिस का पुराना घाघ, फौरन समझ गया कि वह जरूर लाश होगी।

प्यारी आगे बढ़ी।

कजरी जोर लगा रही थी। परन्तु रुस्तमखां ने उसे दृढ़ता से पकड़ लिया था।

'कहां जा सकती है तू मेरे हाथ से कुनिया ? तूने उसका खून किया है !' उसका नशा उतर-सा गया था।

'छोड़ दे।' कजरी ने कहा।

'फिर खून किसपर चढ़ेगा ?'

'खून मैंने नहीं किया। वह अपने-आप मर गया है।' कजरी ने कहा।

'अरी जा हरामजादी। फांसी लगवाऊंगा तुझे।'

'छोड़ दे मुझे !' कजरी चिल्लाई।

बाहर हो-हल्ला अधिक सुनाई दिया। आवाजें आने लगी : 'रुस्तमखां, रुस्तमखां ! कहां है ? बाहर निकल !'

उन आवाजों को सुनकर वह चौंक गया। उसका ध्यान बंटा हुआ देखकर कजरी ने उसका हाथ काट खाया और इतनी जोर से दांत गचकाए कि वह उसे सह न सका। पंजा ढीला पड़ गया। कजरी छूटी, परन्तु उसने दूसरे हाथ मे पकड़ लिया और काटे हुए हाथ से उसने उसके मुंह पर जोर-जोर से आघात किए।

प्यारी बढ़ी।

चिल्लाई : 'छोड़ उसे !'

'अरी चल कुतिया !'

प्यारी गुस्से से बढ़ी। वह झपटी, पर सिपाही तैयार था। प्यारी झुकी, रुस्तमखां ने उसके लात दी और वह हंसा।

बाहर अब शोर और बढ़ गया था। ऐसा लगता था, मकान को सामने से घेर लिया है और सब बुरी तरह चिल्ला रहे हैं। कजरी उस कोलाहल से डरकर घात करने की चिन्ता में थी।

प्यारी के पेट में चोट पड़ी। बैठ गई। उसकी आंखों के आगे कुछ पतंगे-से नाच गए। पर यह अवस्था कुछ ही देर रह सकी।

कजरी और रुस्तमखां अब लड़ रहे थे। वह पुरुष था, अतः बलिष्ठ था, परन्तु स्त्री में इस समय जीवन-रक्षा का प्रश्न था। वह अपनी पूरी ताकत लगाकर लड़ रही थी। उसने उसे धक्का दिया। रुस्तमखां दीवार से टकराया। कजरी छूट गई और झटके से अलग हो गई।

इससे पहले कि वह कटार निकाल सके, रुस्तमखां झपटा।

प्यारी उठी। दर्द तो था, पर अब वह चल सकती थी।

रुस्तमखां ने कजरी की ओर देखकर हाथ फैलाए, जैसे बाज अब चिड़िया को दबा लेना चाहता था। कजरी के हाथ में गिलास आया। उसने रुस्तमखां के सिर पर निशाना मारा पर वह चौकन्ना था बच गया गिलास दीवार मे जाकर

भरी-भरी आंखों से एक-दूसरी को निर्निमेष होकर देखती रहीं।

दोनों हंसीं। फिर दोनों ने प्यार से एक-दूसरी को भेंटकर मुंह चूम लिए। दोनों खुशी से रो रही थीं। आज जैसे दोनों के दिल एक हो गए थे। लोहे की दीवारें गल गई थीं।

'कजरी!' स्नेह से प्यारी ने कहा और उसका मुख बार-बार स्नेह से चूम लिया, जैसे किसी बच्चे का मुख हो।

बाहर भयानक कोलाहल था।

कजरी ने कहा : 'उठ जेठी! जल्दी कर!'

प्यारी उठी : 'क्या है?'

'लोग आ गए हैं। अब वे इन्हें ढूंढेंगे।'

'अरे!' प्यारी के मुंह से निकला।

'एक काम कर। उठ। चल हाथ बंटा मेरे साथ।'

उन्होंने बांके को खाट के ऊपर टेढ़ा करके डाल दिया। एक कटार उसके सीने में भोंक दी और उसके पास ही रुस्तमखां को औंधा करके पटक दिया और एक कटार उसकी पसली में घुसेड़ दी।

'ठीक है।' प्यारी ने कहा। दौड़कर गई। शराब की बोतलें उनके पास डाल दीं।

कजरी ने कहा : 'प्यारी, भाग।'

खिड़की से देखा। भीड़ लहरा रही थी।

'कहां से भागेगी?' प्यारी ने घबराकर कहा।

'हाय, अब मरे!'

बाहर चमारों का विक्षोभ फूटा पड़ता था। भीतर मकान में घुसते हुए डर लगता था, आखिर सिपाही था, और बाहर कोई निकल नहीं रहा था। दरवाजा खुला हुआ था। और भीतर बिल्कुल सन्नाटा दिखाई दे रहा था। कभी-कभी खिड़की पर कोई छाया-सी आती थी जो हल्की रोशनी में दिखाई देती थी। नीचे के कोठे के दरवाजे की संधों से भी आलोक की लकीर निकल रही थी, पर कोई दिखाई नहीं देता था। क्या बात है जो कोई निकलता ही नहीं। एक लड़का भेजकर तलाश कर लिया गया था कि रुस्तमखां थाने नहीं गया है। तब वह कहां जा सकता था! यदि वह डरकर घर में छिपा होता तो घर का दरवाजा खुला क्यों होता! भीतर घुसकर देखते हुए यह डर लगता था, कि कहीं किसी आड़ में से बैठा हुआ रुस्तमखां बन्दूक न चला दे। और भीड़ कितनी भी बड़ी क्यों न हो, अपनी-अपनी जान की फिकर हर आदमी को लगी रहती है। दूर से कहना आसान है कि अगर हजार की भीड़ हो और उसपर दस आदमी गोली चला रहे हों, तो भीड़ उनपर बढ़ती चली जाए और उन्हें घेर ले, समाप्त कर दे। ऐसा भी होता है, मगर तब, जब भीड़ को अपनी प्राणरक्षा इसके अतिरिक्त कहीं दिखाई नहीं देती। उस समय मनुष्य अपनी जान पर खेलकर अपने अस्तित्व की रक्षा करने की चेष्टा करता है। अब प्रश्न यह था कि बढ़े कौन?

जो खास लोग थे उनकी इच्छा रक्तपात की नहीं थी। वे सिर्फ बांके को अच्छी तरह खोदना चाहते थे, ऐसे कि उसकी टांगें तोड़कर उसे घूरे पर फेंक दिया जाए। और इसी प्रकार जब कोलाहल बढ़ता ही गया तब खबर फैलने लगी। अनेक इधर-उधर के लोग आकर इकट्ठे होने लगे। उनकी प्रश्नोत्तरी से कोलाहल ऐसे बढ़ गया, जैसे बरसाती पानी एकत्र होकर प्रचण्ड हो उठता है

सुखराम ने तभी देखा कि भीतर एक छाया खिड़की पर है वह भीतर व

सकता था, परन्तु भीड़ में वह सबके साथ रहना चाहता था। भीड़ अब भी बाँके के विरुद्ध थी, करनमसा के विरुद्ध तो नहीं थी। ठाकुरों के बारे में लोग जानते नहीं थे। केवल इतना ज्ञात था कि बाँके के साथी थे। अगर वह भीतर जाता है तो कुछ लोग ताना जरूर कसेंगे। वह समझ गया था कि [illegible] और प्यारी की बात [illegible] गई होगी, पर डरने के लिए उसे कोई आवश्यकता दिखाई नहीं दे रही थी। उसका कोई क्या बिगाड़ेगा? वह यह जानता था कि करनमसा भीतर है, परन्तु निकल नहीं रहा है।

अचानक उसकी निगाह एक आदमी पर पड़ी जो घर के बाईं तरफ धीरे-धीरे खिसक रहा था, चौकन्ना-सा। सुखराम ने देखा और फिर आँखें हटा लीं। ऐसे जाने कितने इधर-उधर चल रहे थे, आ-जा रहे थे। भीड़ अपनी अविरल ध्वनियों से अब और भी घनी और डरावनी हो गई थी।

सुखराम की दृष्टि मुड़ी तो उसने देखा, वह जो बाईं तरफ पहुँच चुका था, इधर-उधर देख रहा था और कुछ टोह ले रहा था।

सुखराम ने टाला। पर जितनी ही कोशिश करता, उतनी ही जिज्ञासा बढ़ती और फिर उसका भय साकार हो गया। वह व्यक्ति आड़ में हो गया। भीड़ गरजने लगी, और फिर एक हल्की-सी रोशनी हुई। सुखराम समझा नहीं। वह व्यक्ति निकला, धीरे-धीरे आया पर उसके आने के बाद उसके पीछे हल्का उजाला-सा दिखाई दिया। और वहाँ कुछ क्षण में ही छप्पर सुलगता हुआ दिखाई दिया। आग लग गई थी। वह व्यक्ति भागा। सुखराम ने पहचान लिया।

वह निरोती के पीछे भागा। तो इस बामन ने दूसरों के झगड़े से फायदा उठाकर अपना काम निकालने का कमीनापन किया है! इसे प्यारी ने रगड़वाया था। उसका बदला आज फूटकर निकला है! यह चाहता है, चमारों पर आग लगाने का दोष आ जाए और यह बेदाग बच जाए! सजा दोनों को मिल जाएगी और निरोती बामन मूँछों पर तेल मलता रहेगा।

गाँव में हल्ला मच उठा। आग को फौरन हवा ने पकड़ लिया। वह आग हवा के हाथों में ऐसी छटपटाने लगी जैसे किसी परियों की कहानी के जोगी ने अदृश्य होकर किसी कमीनी, रूप बदलकर रहनेवाली जादूगरनी को बाँधकर पकड़ लिया हो और वह अब हर प्रयत्न करके हारती हुई छटपटा रही हो।

सारा गाँव इकट्ठा हो गया। यह तो साफ लगता ही था कि चमार आज बगावत पर उतर आए थे और उन्होंने ही सिपाही के घर को फूंकने के लिए निडर होकर आग लगा दी थी। पर ऊँची जाति के लोगों को यह चीज भयानक लग रही थी। इसके क्या अर्थ हुए? ये सब इकट्ठे होकर चाहे जिसके घर में आग लगा देंगे? फिर सरकार किसलिए है? और उनमें से कई लोगों ने पुलिस-थाने में भी सूचना पहुँचा दी। दरोगा जी अपनी शय्या में ऐसे उठे जैसे कुम्भकरण जगा हो, जो अब जाने कितनी ही भेड़ों को समूचा ही खा जाएगा।

आग अब छप्पर पर सुलग रही थी और हवा ने जो झाड़ू लगाई तो ऐसे फैल गई जैसे बर्तन में से दूध फैल जाता है। सारा छप्पर आग से ऐसे ढक गया जैसे सोने का हो गया हो, जिसमें से लाल-लाल लपटें रक्त से भीगकर ऐसे भाग निकलीं जैसे रण-भूमि में लोहू से भीगे हुए सिपाही भागने लगते हैं। वह आग हवा की चर्खी पर घूमी और जब अपने अंगों को फैलाकर लड़ते हुए साँड़ों की तरह थरथराने लगी, तब उसने हवा को दस-बीस चोट बढ़कर अधर में ऐसी घुमा-घुमाकर मारीं कि हवा सामने के छप्पर पर जा टिकी, पर आवेश में ही लपटें सामने आ चढ़ीं। वह छप्पर भी धधक उठा चैत की सूनी रात उस आग से हिलने लगी

भीड़ ने देखा तो एक बार खुशी से चिल्लाई : 'जय भवानी ! तेरा परताप है कि पापी का घर जल उठा।' किसी बुड्ढे ने कहा : 'सती का गुस्सा है।'

परन्तु और लोगों की समझ में आया कि यह काम देवी नहीं है, और इसका परिणाम बहुत भयानक होगा। अब वे अपनी ओर से कमजोर पड़ गए थे। परन्तु अब भागने का अर्थ था कि पाप हमने ही किया है।

सुखराम भाग रहा था।

वह चिल्लाया : 'मैंने तुझे देख लिया है कायर ! तू दूसरों पर दोष लगाकर छिपना चाहता है ? मैं सबसे कह दूंगा'''।'

परन्तु वह भूल गया कि उसका विश्वास करेगा कौन ? निरोती रुका नहीं। उसने मुंह ढाप लिया था और न जाने किस गली में से होकर वह अदृश्य हो गया।

सुखराम ने घृणा से कहा : 'कायर !'

विक्षोभ उसे खाने लगा। पापी सामने आया और हाथ से निकल गया। वह क्षीणकाय बामन जाने कैसे इतना तेज़ दौड़ गया ! सच तो यह था कि उसकी जान की बाजी थी। अगर वह नहीं भागता तो मारा जाता। अब तो निश्चय ही मुसीबत चमारों पर आएगी। दुनिया कितनी कमीन है ! यह सोचकर वह सिहर उठा। एक स्त्री के अपमान का बदला लेने को लोग आए थे, इसी बीच में यह निरोती आ गया था, जैसे अकाल से लड़ने को आदमी ने बांध बनाया हो और चूहे ने बिल बनाकर उस आप्लावित जल-राशि से आदमी को ही डुबा दिया हो।

वह कुछ देर किंकर्तव्यविमूढ-सा खड़ा रह गया। उस घर में आग लग गई है, अब बढ़ गई होगी !

पर हठात् उसके मुंह से एक चीत्कार निकल गया : 'उस घर में कजरी और प्यारी हैं। वे दोनों उस घर में घिरी हुई हैं। वे जल जाएंगी।'

सुखराम भागा। अब वह एकध्येय, एकचित्त हो गया था। उसे लगा, सारा संसार जल रहा था और चारों ओर लपटें ही लपटें छा रही थीं। कजरी और प्यारी उनमें डरी हुई खड़ी थीं। सुखराम का आवेश इतना भयानक था कि वह तीर हो गया।

जब वह वहां पहुंचा तो धुआं घुमड़ने लगा था। आग अब कभी भालों की दीवार की तरह सीधी खड़ी हो जाती और फिर हवा के विरुद्ध अपने हजारों हाथों में तलवारें लेकर दायें-बायें चलाती और कभी-कभी जब हवा कहीं हटने का उपक्रम करती तो तीरों की बौछार की तरह उस जगह टूटती और फिर वहां सिंह की भांति शिकार को फाड़कर उसके लाल-लाल रक्त को बहा देती। वह ज्वालाओं का समूह जब बढ़ा, तब भैंस ने प्राणपण से चेष्टा करके खूंटा समेत रस्सी उखाड़ ली और भागी। वह सामने की दीवार से टकराई और फिर द्वार की ओर भागी और भीड़ पर निकल आई। आगे वाले दो-चार व्यक्ति उससे टकराकर घायल हो गए और भैंस भीड़ फाड़कर भागती हुई चली गई। घायल व्यक्तियों का चीत्कार शीघ्र ही नये कौतूहल में डूब गया।

धूपो के शव को चमारों ने कंधे पर उठा रखा था। खचेरा गम्भीरता से देख रहा था। वृद्ध लोग श्रद्धा से पास खड़े थे। चमारिन आ गई थी। आंखें हर्ष और आतंक से वे उस भीषण अग्नि को देख रहे थे। रुस्तमखां के घर में अच्छाई यही थी कि उसके घर के दोनों ओर घर नहीं थे, ज़रा दूर पर बने थे ! और रुस्तमखां की गैरहाजिरी में किसी को आग बुझाने की ज़रूरत नहीं महसूस हो रही थी। कौन अपने बाप का घर जल रहा था ! उससे सभी को घृणा थी।

कोई आग बुझा नहीं रहा था, पर आग अब जिन्दगी को बुझा रही थी और अब वह निर्घोष करती हुई नाचने लगी थी जैसे चण्डिका ने अपना भीषण पात्र उठा

दिया था। उसके कारण उजाला फैल गया था।

दरोगा जी ने देखा तो हाथ के तोते उड़ गए। यह तो भयानक का-सा नजारा था। उन्होंने दीवान जी से पूछा : 'मामला क्या है ?'

दीवानजी ने कहा : 'हुजूर ! चमार नाराज हो गए हैं। फिसाद पर आमादा हैं। किसी चमारिन पर किसी ने जिना-बिल-जब्र कर दिया बताते हैं।'

'तो इससे क्या हुआ,' दरोगा जी ने कहा : 'यह तो जुर्म है कि आग लगा दी।'

थाने के सिपाही आ गए थे। पर वे समझदार लोग थे। उनकी जिन्दगी में रोज ही ऐसे खतरे पड़ते थे। एक सिपाही सुना रहा था कि एक बार कलकत्ता में आग लगी थी तब दमकलें फौरन आ गई थीं और देखते ही देखते आग पर काबू पा लिया गया था। पर गांव में वे आराम कहां ! यहां वह कैसे आग बुझा सकते थे। सिपाहियों ने स्वीकार किया कि सरकार यहां चाहे तो दमकलें रख सकती है, मगर उसको गांवों की इतनी परवाह ही कहां ?

अब दरोगाजी दूर खड़े आग का मुआयना कर रहे थे। उन्होंने कहा : 'भीड़ भगा दो।'

धुएं के मारे जो अभी इन्तजार कर रहे थे, अब आगे बढ़े। सिपाही चिल्लाए। 'भाग जाओ ! भाग जाओ !'

परन्तु जिस आवाज को सुनकर धरती कांपती थी, आज उसका कोई असर नहीं पड़ा। सिपाही फिर चिल्लाए और उन्होंने आगे वालों को धक्का देना शुरू किया। चमार हटने लगे, परन्तु पीछे की भीड़ आगे दबाव डाल रही थी।

चमारों पर डंडे बरसना शुरू हो गया था। उस अचानक आघात से वे चौंक उठे। कोलाहल बढ़ गया। उनकी समझ में आ गया कि दमन शुरू हो गया है। पर क्या वे डर जाएंगे ? नहीं। उनकी एक औरत की बेइज्जती की गई और फिर उनपर यह हमला !

डंडों से आगे के लोगों के सिर फट गए। उनके माथे से रक्त बहने लगा। संघर्ष शुरू हो गया। सिपाही अधिक नहीं थे, गांव के थानों पर अधिक रहते भी नहीं। वहां तो 'राज' से लोग वैसे ही डरते हैं। वे इसी आतंक में दबे रहते हैं कि इनके पीछे एक और बड़ी शक्ति है, जो कुचल देती है।

चमार क्रुद्ध थे। वे भी टूट पड़े।

एक चमार ने एक सिपाही को धक्का दिया। धूपो की लाश लेकर दस आदमी मरघट भेज दिए गए, ताकि लाश पुलिस के हाथ न पड़े, कहीं भवानी की चीराफाड़ी करके अन्त में मिट्टी खराब न की जाए। और बाकी लोग वहां मुकाबिला करने को रुक गए।

भीड़ अर्राई। सिपाही लड़खड़ा गए। पीछे नारा लगा—'भवानी की जै।' कोलाहल हो उठा।

खचेरा ने एक सिपाही को उठाकर फेंका। वह दरोगा पर गिरा। दरोगा जी चारों खाने चित हो गए। और चिल्लाए : 'हाय मार डाला !'

इस दरोगा से लोगों को वैसी ही नफरत थी, जैसे और दरोगाओं से होती है। दरोगा अपने पेट की खातिर, दूसरों के स्वार्थों के लिए, रात-रात-भर कुत्ते की तरह ईमान बेचकर, तब कहीं अपना और अपनी बीवी और अपने बच्चों का पेट पालता है, तनख्वाह की कमी को रिश्वतों से पूरी करता है, और दिन-रात सलाम करके जब अफसरों के सामने भेड़ बन चुकता है तब जनता के सामने शेर बनकर निकलता है, वह बिचारा इतना दयनीय होकर इतना घृणित बनता है पर लगान की जोर-जबर में

वसूली करते वक्त जुल्मों की नई-नई ईजाद, रिश्वत लेने के नये-नये हथकंडे, लोगों से व्यक्तिगत बातों के बदले निकालने की नई-नई तरकीबें, यह सब हर दरोगा में अलग-अलग पैमाने की होती हैं। और वह अपने काम में जितना माहिर होता है, उतना ही लोग भी उससे नफरत करते हैं।

इस समय वह गिरा कि भीड चिल्लाई : 'घेर लो!'

दरोगा और सिपाही लोग घेर लिए गए। अब दरोगा जी ने पगडी उतार ली और चिल्लाने लगे : 'दुहाई है, मेरी पगडी तुम्हारे पांव पर है, बाल-बच्चे वाला हूं, माफ कर दो, अब ऐसा कभी नहीं होगा···'

उस वक्त दरोगा का एक ही मतलब था, निकल भागो, वरना कहीं इन लोगों ने मार डाला तो सरकार तो बनी रहेगी, लेकिन अपने राम नहीं रहेंगे। बाद में तो हमी देख लेंगे···

दरोगा चिल्लाया : 'दुहाई है···'

सुखराम आग में धंस पड़ा। छप्पर अर्राया और आगे के टुकड़े खंड-खंड होकर गिर गए। सुखराम उस ताप से झुलस गया। कोई चिल्लाया : 'अरे मर जाएगा···'

पर वह झपटकर चौखट पर आ गया। धुआं उसकी आंखों में लगा। उसने आंखों पर हाथ रख लिए। कसैला धुआं था। सांस से भीतर गया तो चक्कर-सा आ गया। सामने से रास्ता बन्द हो गया था। देही जैसे हार रही थी। वह आंख मीचकर आग के ऊपर से कूदा। भीतर आ गया। धुएं ने अंधेरा कर दिया था। उसी समय चौखट भरभराकर गिर गई। और वह आग दग-दग, दग-दग की आवाज़ पर अंकुश की मार से चिंघाडते हुए हाथी की तरह बढ़ रही थी, और उसकी सूंड में लोहे की भयानक आघात करने वाली ज़ंजीर की तरह, अंगारों की चमडी जलाने वाली पांत बार-बार लुढकने लगती थी। वह अग्नि अब एक भयानक पीली गहराई बनकर हाहाकार करके गिरते पत्थरों को खाए जा रही थी।

सुखराम क्षण-भर को रुक गया। चौखट के भीतर से लपट भीतर पहुंचने लगी, जैसे हजारों मुंह वाला सांप जीभ लपलपाता हुआ भीतर बढता आ रहा था, लहराता हुआ, थरथराता हुआ। सुखराम एक ओर हो गया। अब लपट ने दीवारों पर हाथ रखे तो टंगे कपड़े भय से जल उठे। कोठे रूपी छिपकली के मुंह में फंसा हुआ अंधकार रूपी कीड़ा छटपटाने लगा था और अग्नि की वह ज्वाला बाहर की एक सांपिन की जिह्वा बनकर उसे कभी-कभी चाटती, फिर जैसे वह कीड़ा अब दोनों ओर से युद्ध करने लगा हो।

सुखराम ने आंखें खोलीं। वह ऊपर की ओर भागा। अभी जीने तक आग नहीं पहुंच सकी थी। यहां उसे चैन-सा आया।

जिस समय सुखराम पहुंचा, कजरी और प्यारी खड़ी-खडी डर से कांप रही थी।

प्यारी रो रही थी। वह कह रही थी : 'कजरी! तू मेरे संग बेकार आकर फंस गई।'

कजरी ने कहा : 'मरना है तो संग मरेंगे जेठी। पर वह न जाने कहां होगा?'

'यह हूं तो!' सुखराम ने कहा।

कजरी और प्यारी उससे चिपट गईं उनके मुंह से हर्ष का चीत्कार निकला वे दोनों हंस उठीं

कजरी ने कहा : 'अब मैं नहीं डरती जेठी। भले ही मर जाऊं।'

प्यारी ने कहा : 'नहीं कजरी! तुम दोनों भाग जाओ।'

समर्पण और रक्षा के दो भाव दोनों के भेद थे।

अब वे रोने लगीं। सुखराम समझा नहीं। जैसे चारों ओर की जगी हुई आग कुछ नहीं रही। उसके ऊपर भी एक सत्य था। वे आंसू उस अतीत आनन्द के थे जो आज कहला नहीं सकते थे। वह एक अद्भुत क्षण था कि सुखराम आश्चर्य में क्षण-भर के लिए उस मृत्यु के आने की आवाज़ को भूल गया, जिसका अन्धकार अभी तक नीचे के कमरे में लहरा रहा था, और गजगम्य हहर रहा था।

'क्या हुआ?' सुखराम ने पूछा।

कजरी ने कहा : 'आज हम संग मरेंगे।'

सुखराम समझा नहीं। पर उसने देखा, वह डरती नहीं थी। उसने मृत्यु पर भी जैसे साहसिका की भांति प्रेम के बल पर विजय प्राप्त कर ली थी। वह उल्लास से बैठ गई और घुटनों तक उसने लहंगा उठा दिया और अपनी नंगी टांगें सामने फैलाकर अत्यन्त गर्व और आनन्द के साथ उसने और देखा और मृत्युञ्जय स्वर में विभोर होकर कह उठी : 'देख बलमा, जेठी ने मेरे महावर लगाया है, इसके खून से।'

'खून!!'

देखा, रुस्तमखां मरा पड़ा था।

तभी प्यारी ठुमककर बढ़ आई और उसने सिर झुका दिया। 'इधर भी तो मेरे रसिये', प्यारी ने कहा : 'छोटी ने मेरे, बांके के लहू से, टीका लगाया है।'

सुखराम व्याकुल था। उसकी आग बुझ गई। उसके गुस्से का बदला ले लिया गया था। और वह भी दो अबलाओं ने लिया! वह क्या जानता था कि अबला भी कभी-कभी कितनी विकराल हो जाती है, जब उससे और आगे सहन नहीं होता।

देखा, दोनों की लाशें पास-पास पड़ी थीं। कटारें घुसी थीं।

'मर गए!' सुखराम ने कहा।

और वह वाक्य सब कुछ कह गया, जैसे कोई विशाल इतिहास उसके दो ही शब्दों में समाप्त हो गया हो।

कजरी ने कहा : 'आग!!'

प्यारी पीछे हटी। सुखराम चौंका। उसने देखा, वे घिरे हुए थे।

आग खिड़की पर सामने आ गई थी। वह सोच रहा था, जिसलिए यह सब कोलाहल था, उसका अन्त यहां पड़ा हुआ है। दोनों मरकर भी कितने घृणित लग रहे हैं। इसी आदमी का उसने इलाज किया था।

'आग!!' प्यारी चिल्लाई।

हठात् सुखराम जागा। वह बाहर का कोलाहल, अग्नि की हरहराहट और प्यारी की पुकार! सुखराम चिल्लाया : 'भागो!'

दोनों स्त्रियां असहाय-सी देखती रहीं। तब वह बढ़ा। पीछे का जंगला दिखाई दिया। उसमें से आदमी उतर सकता था। वह उसे ठोकरें मारने लगा। प्यारी दौड़कर बगल के कोठे से एक हथौड़ा ले आई। सुखराम ने उसे तोड़ दिया। फिर जोर लगाकर उसे उखाड़ दिया।

सुखराम ने कहा : 'धोती है?'

'नहीं साफा है', प्यारी ने कहा।

'ले आ ।'

वह तीन चादर ले आई। उन्होंने शीघ्रता से उन्हें बटकर लम्बी रस्सी-सी बनाया और फिर सुखराम ने उसपर लालटेन बुझाकर, जगह-जगह तेल छिड़क दिया। रस्सी कसके एक पत्थर से बांधकर बाहर लटका दी और कहा : 'कजरी, उतर !'

कजरी सर्र से उतर गई।

'उतर गई ?' सुखराम ने पुकारा।

'हां। आ जाओ।'

प्यारी, तू उतर।'

'नहीं, पहले तू उतर।'

कजरी आज्ञा पर चली थी, परन्तु प्यारी नहीं मानी। वह आज्ञा अब भी दे रही थी। सुखराम ने झल्लाकर कहा : 'मैं कहता हूं, तू उतर जा !'

प्यारी की आंखों में पानी छलक आया।

परन्तु सुखराम ने ध्यान नहीं दिया।

प्यारी को उतरना पड़ा। नीचे जाकर रो पड़ी।

'क्या बात है ?' कजरी ने पूछा।

'वह तो वहीं रह गया।'

'वह भी आ जाएगा।' कजरी ने कहा : 'वह कोई बच्चा है !'

'अरी, बेवकूफ है।'

'बेवकूफ न कहियो। सुन लेगा तो ऐसा मारेगा कि याद करेगी !'

तभी सुखराम उतर आया। तीनों ने चैन की सांस ली।

चलने लगे तो कजरी ने कहा : 'अरे इसे तो जला दो।'

नीचे से चादरों में आग लगा दी। लपट सांपिन-सी ऊपर चढ़ती चली गई।

तीनों एक घूरे की आड़ में आ गए।

'अब क्या होगा ?' प्यारी ने कहा।

'अब तो हम आजाद है।' कजरी ने कहा।

सुखराम ने कहा : 'अभी नहीं। अभी खतरा है।'

'फिर ?'

'अब यहां से चलना चाहिए।'

'पर जाएंगे कहां ?'

'मैं नहीं जानता।'

'अब तू न जानेगा तो काम कैसे चलेगा ?'

वह सोच में पड़ गया। उधर कोलाहल अब भी हो रहा था। यहां सन्नाटे में से वह स्वर बड़ा भयानक-सा लग रहा था। कजरी उसे अवाक्-सी देख रही थी।

प्यारी ने कहा : 'तू झुलस तो नहीं गया ऊपर से आते में ?'

'नहीं।' सुखराम ने कहा।

'आज मैं जनमहारी, मैं तो समझी थी, जल के दोनो यहीं मर जाएंगी।'

'सच जेठी,' कजरी ने कहा : 'मैं तो डर गई थी।'

आग धधक उठी और फिर छत पर दिखाई देने लगी थी। जिस जंगले में से ये आए थे अब उसमें से कभी-कभी झल्ल-सी निकलती थी और हवा पर लौट जाती थी। उस समय रात गगन आक्रोश से चिल्लाने लगी थी क्योंकि आग की अधरे पर जैसे धुआंधार कर रही थी

वे भाग चले। खाई और झाड़ियां पार कीं। यहां तक तो कोई डर नहीं था। उसके बाद एक सड़क का सिलसिला था। उसके बाद वे तीनों एक दूसरे के पास पहुंचे। उसे पार करके असली मुसीबत आई। वहां भी सिपाही थे। सुखराम रुक गया। तब वे उस समय फिर बाएं हाथ को मुड़े और भागे। कुछ दूर चलने पर कोल की हुर-हुर सुनाई देने लगी। वे अब गांव से बाहर आ गए थे। जब वहां कोई नहीं दिखा तब वे आगे बढ़े। उस तीसरे रास्ते पर सामने से गीदड़ भाग जाते थे। वे उन्हें डराते-भगाते हुए अन्त में फुलवाड़ी में पहुंचे।

घने वृक्षों की छाया में वे रुक गए।

'क्यों क्या हुआ ?' कजरी ने पूछा।

सुखराम गांव की ओर देख रहा था।

'भागते चलो, अभी खतरा पार नहीं हुआ।'

सुखराम भविष्य की चिन्ता कर रहा था। सारा उत्तरदायित्व मूलतः उसी पर तो था। अब कहां जाएं ? जो कुछ हो गया है वह सब कितना भयानक था ! और कितना सुख दे रहा था !

पर फिर भी चैन नहीं था। क्योंकि उसके पीछे एक आतंक की भावना निहित थी।

प्यारी ने कहा : 'चमारों पर जाने क्या बीतेगी !'

'मेरे सामने वहां बरसने लगे थे।'

'फिर ?'

'दरोगा भाग गया था। उसके बाद मैं यहां आ गया, मुझे मालूम नहीं।'

अचानक बंदूकें चलने की आवाज़ आई।

प्यारी ने कहा : 'पीछे फिर पुलस आई हो।'

'गोली चल तो रही है।' कजरी ने कहा।

सुखराम कांप उठा। कहा : 'और आज बहुत-से बेकसूर आदमी मारे जाएंगे।'

उसकी बात सुनकर दोनों स्त्रियां थहर उठीं।

वे तीनों फुलवाड़ी से जंगल में घुस गए। चारों ओर भयानकता छा रही थी। सन्नाटा था। फुलवाड़ी के पेड़ों पर स्निग्धता थी। यहां के वे ऊबड़-खाबड़ रास्ते और सुनसान पेड़ देखकर एक भय सा-सा आभास होता था। झाड़ियां वहीं सघन थीं। देखते ही भ्रम होता था कि इनके पीछे कोई न कोई खूनी जानवर ज़रूर छिपा होगा।

कजरी और प्यारी के हाथ नंगे थे। सुखराम के पास कटार अवश्य थी। उस समय सुखराम ने बल लगाकर दो हरी, पर मज़बूत डालियां एक पेड़ में से काटीं, जो डंडों का काम दे सकती थीं और वे दोनों को दे दीं। वे फिर चलने लगे, परन्तु प्यारी बैठ गई, पेट पकड़कर।

'क्या हुआ ?' सुखराम ने आतुर स्वर में पूछा।

'उसने इसके पेट में लात दी थी।'

'बांके ने ?'

'नहीं, रुस्तमखां ने।'

'पास चली गई होगी ?'

'नहीं, मुझे बचाने आई थी।'

सुखराम बैठ गया। कजरी ने कहा : 'बहुत दर्द होता है ?'

अभी तक तो न था प्यारी ने कहा अब होने लग गया है

आह उसके मुख से निकला और वह क्षण भर के लिए वहीं लेट गई

कजरी ने उसका सिर उठाकर गोद में ले लिया।

पर सुखराम ने कहा : 'यहां तो जगह ठीक नहीं है, प्यारी। हमें यहां से भाग चलना चाहिए।'

'चलो।' प्यारी दर्द में भी उठ बैठी।

कजरी ने कहा : 'पर तू चलेगी कैसे ?'

'जहां तक हो सकेगा चलूंगी, नहीं चल सकूं तो वहीं छोड़ जाना।'

'क्या मतलब ?' कजरी ने कहा : 'देखा तूने !' उसने सुखराम से कहा : 'क्या कहती है !'

सुखराम ने कहा : 'मैं क्या जानूं भला।'

'तू इसे पीठ पै धरके ले चल न !' कजरी ने कहा।

'तू ले चलेगा ?' प्यारी ने चौंककर कहा। उसे जैसे उसके बल में संशय था। कजरी ने ऐसे देखा जैसे प्यारी पर उसे दया आ रही हो। उसके विचार में वह निरीह थी। इतने पास रहकर भी यह कुछ नहीं जानती। सचमुच ये दोनों कभी एक-दूसरे के पास आए ही नहीं। यह सारा खिचाव, यह सारी लगन तो बचपन की प्रीत है। हो ही जाती है। प्यारी अपने को सुखराम से अकलमंद समझती है। बड़ा भी समझती है। तभी वह उसे एक दिन छोड़कर चली गई थी। पर आदत तो अब भी वही पुरानी पड़ी हुई है।

सुखराम ने शरमाकर सिर झुका लिया। असल ताकतवर मर्द अमूमन अपने ऊपर घमंड नहीं करता। सच तो यह है कि वह अपनी ताकत असल में पूरी तरह से जानता ही नहीं।

कजरी ने कहा : 'अरी ये तो मुझे पीठ पै धर के पहाड़ पै चढ़ गया था।'

उसके स्वर की उस प्रशंसा से प्यारी चौंक उठी। उसने अचानक ही पूछा : 'कब ?'

उस स्वर में एक कौतूहल था कि जाने कब का इतिहास है जो तुमने मुझे आज तक नहीं बताया है। और उसकी समझ में आया कि उसकी अनुपस्थिति में जाने क्या-क्या हुआ होगा।

'फिर बात करियो,' कजरी ने कहा : 'तू चली चल अब। कोई परमेसुरा इधर आ गया तो आफत हो जाएगी। यों पकड़े जायेंगे कि रात को जंगल में बैठे क्या चोरी करने की टोह ले रहे थे ? बस इत्ता-सा बहाना है। और यह दो खून क्या हो गए हैं, काले पानी ही पहुंचेंगे तीनों।'

कजरी ने प्यारी की कमर पकड़ के झटके से उठा दिया और सुखराम ने उसे पीठ चढ़ा लिया। प्यारी ने गला पीछे से पकड़ लिया और निढाल होकर सिर एक ओर कंधे पर टिक गया। कजरी ने कहा : 'मौत न बनाए भगवान। मरैगी, पर पहले कुढ लेगी।'

प्यारी मुसकरा दी।

'धूं-धूं' की आवाज़ गूंज उठी।

'यह क्या है ?' प्यारी ने पूछा।

सुखराम गांव की ओर देखने लगा।

कजरी ने कहा : 'वही है, और क्या ? अभी खतम नहीं हुआ है शायद। क्यों ? दूर बन्दूकें चलने की आवाज़ आ रही है न ?'

'हां' सुखराम ने कहा : 'चमार भागे न होंगे' उन्हें बहुत गुस्सा था।'

पर अब तो धूपो ही न रही

सुखराम ने कहा : 'अरी मरी ओ नट ! ' और एक लम्बी सांस ली। उस क्षुब्ध स्थिति में तीनों क्षण भर के लिए [illegible] हो गए। वह [illegible] और पवित्र याद थी। वह अपने आपमें [illegible] पूर्ण था [illegible] जीवन [illegible] है, जिसमें समर्पण के अतिरिक्त कुछ नहीं होता।

आसमान में अब आग की लपटें नहीं दिखाई देती थीं, पर एक उजाला सा गांव वाले हिस्से की ओर दिखाई देता था। वहां जैसे कोई बिखरी भट्ठी सुलग रही थी।

और वह जो गोलियां चल रही थीं, वे अत्याचार का यह भीषण प्रतीक थीं। लोहे की गोलियां इंसान की जिन्दगी को खाए जा रही थीं। वह जीवन, जिसे जन्म देने के लिए माता अनेक कष्ट उठाती है और कठिनाई से पालती-पोसती है, वह इस तरह नष्ट कर दिया जा सकता था कि जैसे वह सब व्यर्थ था। यदि इसी जीवन को सुधारा जाता तो इस पृथ्वी पर न जाने कितना ज्ञान होता! परन्तु यह चिन्तन सुखराम का नहीं था। वह केवल एक संवेदना में आता था।

अधूरा किला अब काला-काला-सा खड़ा था। उसके ऊपरी भाग पर कभी-कभी उस आग की दूर से पड़ने वाली चमक खेल जाती थी। इसी धरती पर हुए असंख्य नाटकों में से एक [illegible] का पर्दा बना हुआ वह ऐसे खड़ा था जैसे अब उसका इतना ही मूल्य था कि उसके सामने से नवयुवक के पात्र निकल जाएं।

सुखराम ने प्यारी को पीठ पर बिठाकर भागना शुरू किया। कजरी साथ भागने लगी। वह थोड़ी दूर भागकर ही हांफ गई।

बोली : 'बजमारा कैसे लिए उड़ा जा रहा है ! मुझे उठाना था तो पग-पग पर कोसता जाता था।'

सुखराम हंस दिया।

प्यारी ने कहा : 'जलै मत कजरी ! मैं तेरे पांव धो-धो के पिऊंगी।'

'मर न जाऊंगी मैं,' कजरी ने कहा : 'तूने मुझे ऐसी बेहया समझा है क्या ? मुझे सौगन्ध है जो मैं तेरे पांव दबाके न सुलाऊं तुझे। मैं तो तेरे पैताने सोऊंगी जेठी।'

'नहीं कजरी,' प्यारी ने कहा : 'तू खेल-कूद ! बाकी सब काम मैं करूंगी। तुझे रोटी भी न ठोकने दूंगी।'

'मेरा यह हक न छीन जेठी।' कजरी ने कहा : 'मरद की जात बड़ी मतलब की होती है। वह उसे नहीं चाहता जो चूल्हे के सामने नहीं गलती। ऐसी चालाक न बन।'

'मैं तो तेरे आराम की कहती हूं कजरी।'

'आराम तो भला जेठी, पर पेड़ की जड़ धरती और लुगाई की जड़ चूल्हा। जो ऐसे नहीं चलती, तब तो बस मरद उसे मन-बहलावे का खिलौना समझने लगता है। रोटी खिलाओ तो गुन मानता है और सिर झुकाता है। सानी करके धर दो, चुपचाप जुआ ढोता रहेगा।'

'अरी जा।' सुखराम ने कहा : 'तुझे मैंने असल में सिर चढ़ा लिया है बहुत।'

'सुनती है जेठी !' कजरी ने कहा : 'तेरे नाम की धौंस देकर मुझे दबा रहा है, और मौका पड़ेगा तो मेरे नाम की धौंस देकर तुझपै अहसान करेगा ये ! मैं कहती न थी, बड़ा चालाक है ?'

'मैं तो अब भगत हो जाऊंगा !' सुखराम ने हंसी की : 'सब छोड़ जाऊंगा। ऐसा मुझे घेर लिया है तुम दोनों ने !'

'सो न डरा,' कजरी ने कहा : 'बगुला अगर भगत बनैगा तो भी बिलैया बिल्ली मर्गा न नहीं छोड़गी

वे हंस दिए

'तू बड़ी बातून है।' प्यारी ने कहा : 'तूने बातों से ही जीत रखा है सब।'

'फिर तू वही बात दुहराने लगी !' कजरी ने कहा : 'मैं इत्ता कम बोलती हूं, तेरे अदब के मारे !'

प्यारी फिर हंसी। कहा : 'राम रे ! यह तो तब हाल है जब अदब से तू कम बोलती है। क्यों छोटी, कहीं अदब उठ गया तो तू कितना बोलेगी ?'

सुखराम रुक गया। कजरी रुककर ज़ोर-ज़ोर से हांफने लगी थी। सास इकट्ठी कर रही थी।

'बाप रे,' सुखराम ने कहा : 'अभी एक-डेढ़ कोस का घेर है।'

'सीधे जाते तो कभी के पहुंच जाते।' कजरी ने कहा।

'पर कोई देख लेता तो ?' प्यारी ने कहा।

'पुलस में सीधे बन्द।' सुखराम ने कहा : 'फिर वह हंटर पडते ! उन्होंने तो सोचा होगा कि सब मर गए, पर ठठरियां तो उन्हें दो ही मिलेंगी। शक न होगा ?'

'तो क्या हम डेरे में नहीं रह सकते ?' कजरी ने पूछा : 'हम तो किसीसे कुछ नहीं कहते ?'

'अरी अब तू किसी से कह या मत कह। खून तो हो ही गया।'

'नहीं, पुलस पकड़ेगी तो मैं कह दूंगी—मैं नहीं जानती।'

'अहा, बड़ी भोली है तू ! फिर कहेगी न, तब क्या होगा जानती है ?'

'नहीं तो।'

सुखराम ने कहा : 'फिर दरोगानी तुझे हलुआ-पूरी परोस के देगी। तू खा लेना। फिर क्या होगा जानती है ?'

'ऐ मरने दे सबको। हम क्या बंधे है, यहां से भाग जो चलें।' कजरी ने कहा। 'जहां से मेरा बाप आया था, हम वहीं जो चले जाएं। डांग के पूरब में गुजराती नट है, उनके आगे पहलवान नट हैं, हम उनके आगे करनटों में जा छिपेंगे। करनटों की बस्ती तो ऐसी है कि वहां कोई डर ही नहीं। एक बार चलकर देख तो सही। वहां तो ऐसे लोग हैं जो तुझे अधूरे किले का मालक बनवाने को जान की बाजी लगा दें।'

'वहां कोई नहीं आएगा ?' सुखराम ने पूछा।

'आएगा कौन ? पहाड़ है, जंगल है, वहां पुलस वाले डर के मारे नहीं जाते। एक गया था तो मारा सुसरे को खूब। ऐसा पिटा ! ऐसा पिटा !! और फिर नटों का राजा हमें सरन देगा !' प्यारी ने कहा : 'वहां के गूजर हैं। चाहे जिसकी भैंस खोल लाएं। राजा को रुपया देते है तो चौधरी पहाड़ के नीचे उतरता है, दरोगा-तहसीलदार सब भैया-भैया कहते हैं। दिन-दहाड़े गोली चलती है, वहां नहीं चलती किसीकी। राजा के लिए सब जान देते हैं। पर भीतरी मामलों में सब आज़ाद हैं।' और कजरी ने लम्बी सांस लेकर कहा : 'हाय, मैं तो थक गई। ज़रा सुस्ता लें न ?'

'तो ठहरो,' प्यारी ने कहा : 'मैं बताऊं। कजरी, मैं चल लूंगी, तू इसकी पीठ पै आ जा।'

प्यारी ने बहुत ही ईमानदारी से कहा था। उसे लग रहा था कि कजरी सचमुच थक गई होगी।

'ऐसा हाथ दूंगा,' सुखराम ने कहा : 'सुसरियों ने पीस खाया। मैं तो चक्की के पाटों में आ गया। तुम दोनों को बारी-बारी से लादूं, सो तुम्हारा गधा हूं ?'

'अच्छा, अच्छा।' कजरी ने कहा : 'रहने दे। मुझपर अहसान न कर ! एक का ही गधा बना रह वहां तक तो तुझे बुरा नहीं लगता न ? मैं तो वैसी ही भली

तीनों हंस दिए परन्तु थी सुखराम ने कहा तुम दोनों यहीं रहो

। अपना बकस ले आता हूं डेरे से ।'

उसमें चित्र था ठकुरानी का ।

'पर हम रहेंगी कहां ?' प्यारी ने कहा ।

कजरी ने कहा : 'अच्छा तुम बैठो । मैं बकस ले आती हूं डेरे से ।'

'तू डरेगी तो नहीं ?' सुखराम ने कहा ।

'भला क्यों न डरूंगी !' कजरी ने कहा : 'तू ही तो एक नाहर रह गया है जगत में !'

कजरी चलने लगी । कहा : 'यहीं रहना । अभी आती हूं ।'

'अरी सुन,' सुखराम ने कहा : 'ये कटार ले जा ।'

'वह कटार लेकर चली गई ।

कुछ देर बाद प्यारी धरती पर लेटी हुई कराह उठी ।

'क्या हुआ ?' सुखराम ने पूछा ।

'दरद होता है ।'

'अब भी होता है ?'

'हां ।'

'कहां ? बतइयो !'

'यह देख, यहां ।'

प्यारी ने उसका हाथ पकड़कर पेट पर जगह बताई ।

'कैसी नरम जगह है !' सुखराम ने कहा । फिर उसने कहा : 'औरत का पेट धरती माता की तरह होता है । उसपर वही लात दे सकता है, जो बिल्कुल जिनावर हो । आज से नहीं, सदा से ही मानुस इस कोख की इज्जत करता आया है, क्योंकि यह भगवान को अपनी दुनिया की दया दिखाती है । प्यारी !'

वह बोली : 'क्या है ?'

'ठीक हो जाएगी, बिल्कुल ।' सुखराम ने कहा : 'तुझे याद है ! मेरी मां कितनी अच्छी थी । वह मेरे लिए मर गई थी ।'

और तब प्यारी को वह पहला दिन याद आया । उस समय वही तो थी जो अपने बाप से उसके लिए मचल गई थी । और फिर उसने उसी संरक्षण को स्थापित करके अपनी आकांक्षा का प्रसार किया था ।

वह आंख मींचकर सोचती रही । सुखराम ने अब बीड़ी सुलगाई और प्यारी को भी एक बीड़ी दी । दोनों धुआं उड़ाते हुए सोचते रहे । अब रात ढलने लगी थी । आकाश में असंख्य तारे दिखाई दे रहे थे । और हवा अब कम हो चली थी ।

कजरी आ गई । सिर पर बक्स था, पीठ पर एक बोरी थी । वह हांफ रही थी ।

'इसमें क्या है ?' प्यारी ने कहा ।

'जो अच्छा सामान था सब बटोर लाई हूं ।' कजरी ने कहा : 'फिर मिलता न मिलता । मैंने तो खाट भी तोड़कर इसमें डाल ली है । अब ठोकते ही बन जाएगी ।'

देखा सचमुच उसमें से पाटियां निकल रही थीं

तू तो' प्यारी ने कहा बड़ी जोरदार है

25

चलते-चलते सुखराम ने पूछा : 'कजरी ! तुझे वहां किसीने देखा ?'

'किसीने नहीं।' कजरी ने कहा : 'मैं दबे पांव गई। जानती थी, जो देखेगा सो ही पूछेगा।'

'मंगू था।'

'मुझे तो नहीं मिला।'

'घोड़ा क्या किया ?'

कजरी ने कहा 'घोड़ा खोल दिया मैंने।'

सुखराम को दुःख हुआ। पूछा : 'भूरा कहां गया ?'

'वह मिला नहीं। पुकारा भी। कहीं इधर-उधर ही गया होगा।'

'अब लौटेगा तो ढूंढेगा।'

'जरूर ढूढ़ेगा।' प्यारी ने कहा : 'वह बड़ा अच्छा है। और कुत्ते वफा में कमाल करते हैं।'

सुखराम सुनता रहा। बोला : 'उसे मैंने बड़े प्यार से पाला था। पर वह अब बुड्ढा भी हो गया है। एक-आध साल ही जिएगा और रात-रात-भर रखवाली करता था। मैं तो चैन से सो जाया करता था। पर डेरे के कपड़े की बाकी का क्या हुआ ?'

'सब गला-गलाया तो था।' कजरी ने कहा : 'उसमें से क्या ले आती ?'

पहाड़ की चढाई शुरू हो गई थी। चारों ओर ढोके खड़े हुए थे। कजरी ने बक्स उतारकर धर दिया।

'क्यों ?' सुखराम ने कहा।

'मुझसे नहीं चला जाता।'

'अरी तू थक गई ?'

'अच्छा, मैं जैसे मानुस नहीं हूं। मैं थक ही नहीं सकती।'

सुखराम ने कहा : 'वह देख, सामने देखती है ? वहां जरूर कोई आसरा होगा। मुझे लगता है, वहां जरूर कोई है। वहां तक चली चल न ?'

'नहीं। वह क्या कम दूर है ?'

'फिर कैसे होगी ?' सुखराम ने कहा : 'बड़ी जल्दी थक गई तू ?'

'जल्दी थक गई ? पहले तो भगाया मुझे। फिर डेढ़ कोस गई, डेढ़ कोस आई, तमाम सामान लादा और अब फिर चल, फिर चल। जिसपर सारी लदाई मेरे ही सिर पर।' उसने बच्चे की तरह रूठकर सिर हिलाया। सुखराम मुस्कराया। कजरी ने कहा : 'मुझसे नहीं चला जाता, नहीं चला जाता।' कजरी ने रोष से स्पष्ट कर दिया।

'ठीक कहती है तू।' प्यारी ने कहा।

'तो तू उठा ले न !' सुखराम ने कहा।

'मैं उठा लूंगी। जित्ता चल सकूंगी उत्ता चल लूंगी।' प्यारी ने कहा : 'तू समझता है मैं हरा[illegible]न हूं ?'

प्यारी बढ़ी।

कजरी ने कहा : 'क्या है ?'

'ला इसे मेरे मूंड पर धर दे।'

'धर दूं ?' कजरी ने सिर हिलाया।

'तेरी सौगन्ध मैं ले चलूंगी।'

'रहने दे परमेसुरी। आग तो अपने को खोया नहीं जाता, बलम खोएगी ?'

'तू यह समझ कि मैं बल पा गई हूं।'

'क्यों ?'

'अब मैं कहती हूं।'

'अच्छा।' कजरी ने कहा : 'तू यह समझती है कि मैंने जलन के मारे कहा था! तू है ही कमीन।' वह रो दी। प्यारी ने बुरा न माना। जवाब नहीं दिया। स्नेह से उसके सिर पर हाथ फेरा। उसकी आंखों से दो बूंद आंसू निकल आए और उसने उसे छाती से लगा लिया।

'अरे तू रोती है!' सुखराम ने कहा : 'कजरी ने तो कुछ बुरी नीयत से नहीं कहा था।'

'तू बीच में बोलने वाला कौन है ?' प्यारी ने कहा : 'तू समझता है, मैं इसे नहीं समझती ?'

'प्यारी ठीक कहती है।' कजरी ने कहा : 'दोनों को लड़ाने का मौका ढूंढा करता है, जेठी! अरे औरत में ही समझाई होती है। एक-एक के साथ कितनी कितनी नहीं जनम गवा देतीं। हम तो खैर नटनी हैं, यह मन की बात है, वैसे देख ले आन बिरादरी में, बाप कसाई के हाथ दे देता है, तो बोटी-बोटी कट जाए पर चूं तक नहीं करती। और मरद! औरत को देख के मालिक बन जाता है। लुगाई को पांव की जूती समझता है।'

'अरे तू ऊंच जात वालियों की बात करती है। गूजर, मैना, माली सब धरेजना करती हैं।' सुखराम ने काटा।

'क्या करें बिचारी! पेट को कहां छोड़ जाएं। दो रोटी का सहारा न हो तो क्या मर जाएं! अरे कौन देता है! किसी न किसी की तो होके ही रहेगी। नहीं तो उसके बच्चों को पालेगा कौन? अब धूपो ने नहीं किया तो निबल जान के बदमाशों ने उसे मिटा दिया कि नहीं?'

'तो मरद को क्यों कोसती है?' सुखराम ने कहा, 'नौकरी रखे तो दाम कहां? रोटी करने वाली न होय तो खाय कहां? दो रोटी के लिए यह लुगाई ढूंढ़ता है।

'सो तो है ही,' कजरी ने कहा : 'यों ही दुनिया चलती है। एक-दूसरे का सहारा लेकर काम चलता है। मरद कहे कमाऊं नहीं, औरत कहे काम न करूं, तो दोनों क्या एक-दूसरे को संभालेंगे? हमारे नटों में मर्द हरामी होते हैं, तभी तो नटनियों को अच्छा-बुरा करके टेट पालना पड़ता है। दुनिया ही ऐसी है। जहां औरत बूढ़ी हुई, फिर कौन पूछता है?'

तर्क उठते थे, परन्तु उनकी समस्या का हल नहीं निकल पाता था। वे उसके बन्धन थे। स्त्री के अधिकारों ने मांग तो की, किन्तु वह मांग स्पष्ट नहीं हुई, न पुरुष की सत्ता की ही व्याख्या हो सकी।

कुछ देर बाद सुखराम ने कहा : 'लो, बीड़ी पी लो।'

तीनों ने बीड़ी पी। फिर सुखराम ने कहा : 'अब चलो।'

कजरी ने कहा : 'चल।'

तीनों उठ खड़े हुए।

बोरी को प्यारी ने उठाया। भारी थी। गिर गई।

'नहीं उठती तुझसे ?' सुखराम ने कहा।

'पेट में दरद होता है उठाती हूं तो।'

तो रहने दे कजरी ने कहा

सुखराम आगे आया। कहा : बोरी मुझे दे दे।'

उसने बोरी उठा ली। बक्स रह गया। उसकी ओर उसने मुस्कराकर देखा।

प्यारी ने कजरी की विवशता को देखकर उसकी ओर से कहा : 'क्यों सुखराम तू मरद है, तू ही न ले चल!'

'सो तो हूं।' सुखराम ने कहा : 'पर दुनिया के कुछ नेम भी तो हैं।'

'सो कैसे?' प्यारी ने पूछा।

सुखराम ने कहा : 'मैं तो उजर नहीं करता। पर तू ही जरा सोच। सच कह। यह काम औरत का है। दो-दो मेरे संग चलेंगी और मैं बोझ ढोऊंगा तो कोई देख के हंसेगा नहीं?'

'हंसेगा क्यों?' प्यारी ने कहा।

'यों कहेगा, दोनों का चाकर है।' सुखराम ने कहा।

'कह लेगा तो तेरा कुछ बिगड जाएगा?' प्यारी ने कहा : 'तुझे दूसरो की फिकर है, अपनी की नहीं? पहले घर देख तब द्वार में से बाहर झांक।'

कजरी ने कहा : 'रहने दे जेठो। यह अपने को राजा भी समझता है। इसमे ठाकुर की बू भी तो है। पर ठाकुर लुगाई को हाथ हिलाते देखकर झल्लाता है। बस घर का काम कराता है। रोटी देता है। पर्दा वह कराता है तो पर्दे का इन्तजाम भी तो करता है। कै तो नट रह ले, कै ठाकुर बन जा। ला मैं पर्दा करूं, तुझमे करवाने की ताकत है? सब इन्तजाम कर। ठकुरानी को कोई छेड़ै तो सारे ठाकुर तेगा लेके आते हैं, नटिनी को कोई भी छेड़ जाए।'

हंसकर प्यारी ने कहा : 'सो तो पंचों की राय सिर-आंखों पर, पर परनाला यहीं से बहेगा।' उसने बक्स उठा लिया।

अभी वे लोग बढ़े ही थे कि आवाज़ आई। उस बीहड़ दर्रे में खौफनाक पत्थरों के बीच में उस आवाज को सुनकर सुखराम के सिर पर भय का भाव नहीं जागा, जिज्ञासा ने सिर उठाया। पत्थर काले-काले-से दिखाई दे रहे थे। पानी का बरसाती बहाव उसी रास्ते से होने के कारण छोटे-छोटे पत्थर उधर बहुत थे और उन पर चलने से पांव सहज ही टिकता नहीं था।

वे चौंक उठीं। धीरे-धीरे आवाज पास आने लगी थी। सुखराम अंधेरे में आहट लेता रहा। कान के पास मुंह ले जाकर धीरे से फुसफुसाकर प्यारी ने कहा : 'कोई जिनावर होगा।'

कजरी ने कहा : 'नहीं; मानुस लगते है।'

'कौन होंगे?' वह डरी।

'राम जाने।'

प्यारी ने कहा : 'खूनी होंगे!'

'डरै मत।'

'नहीं, डरती नहीं। पर वह हम दो के संग है। अकेला है। कैसे संभालेगा सब!'

कजरी ने प्यारी को पकड़ लिया। वह स्वयं संत्रस्त थी। उस स्पर्श में जहां सात्वना ली गई थी, वहीं दी गई थी। यह पारस्परिक सहिष्णुता का आदान-प्रदान था, सबल को जैसे संबल ने पकड़ा था।

सुखराम चिल्लाया : 'कौन है?'

पहाड में वह आवाज़ प्रतिध्वनित होकर लौट आई और पत्थर जैसे चिल्ला उठे—कौन है? कौन है?

झोंकों के पीछे से एक भयानक-सा आदमी निकला। वह तारों की छांव में श्लिष्ट-सा दिखाई दिया। उसकी काली और घनी दाढ़ी ऊपर की तरफ चढ़ी हुई थी। वह मारवाड़ी ढंग का पुराना अंगरखा पहने था, जिसमें उसकी छाती का हिस्सा दिखाई देता था। उसने धोती पहन रखी थी, कुलांगी। सिर पर पग्गड़ था। वह देखकर भला आदमी नहीं लगता था। उसकी आंखें कुछ डरावनी और चढ़ी हुई-सी थीं। वह रंग का काला था। उसने तीनों को घूरा।

उसकी आंखें कजरी और प्यारी पर पड़ीं। प्यारी चुप रही, पर कजरी कह ही उठी, 'देखो कमबख्त को! कैसा घूरता है, जैसे खा ही जाएगा!'

वह आने वाला आदमी हंसा। उसके सफेद-सफेद दांत चमक उठे। सुखराम ने उसकी वह गाढ़ी आवाज झटके ले-लेकर उसके गले में निकलती देखी। फिर उसने एक क्रुद्ध स्वर में कहा: 'तुम कौन हो?'

'परदेसी हैं।' कजरी ने कहा।

'उधर किस देश को जाते हो?' उस आदमी ने व्यंग्य में कहा।

'डांग को।' सुखराम ने कहा।

'कौन लोग हो?'

'करनट हैं।'

'दिन में क्यों नहीं जाते?'

तीनों चुप। उस आदमी ने कहा: 'यहां मेरी अमलदारी है, जानते हो? पुलस के आदमी आते हैं तो मैं उन्हें नहीं छोड़ता।'

'हम पुलस से डरकर ही रात को जाते हैं।' सुखराम ने कहा।

'क्यों क्या कतल किया है?' उसने पूछा।

'नहीं, चोरी लगाई है हमपर।'

'करनट पर लगाई है?' उसने कहा: 'तू तो हाथ की सफाई में हुनरबाज होगा!'

'मैं चोर नहीं हूं,' सुखराम ने कहा: 'मैं डाकू बन सकता हूं पर चोर नहीं हूं।'

वह आदमी बड़े जोर से हंसा। उसका हास्य जब समाप्त हुआ तो उसने पुकारा: 'खड्गसिंह!'

'हां सरदार!' कहते हुए एक आदमी और निकल आया। उसके पीछे चार आदमी और थे। उनके कंधों पर गठरियां थीं।

'देखा तूने!' सरदार ने कहा: 'मुंह तो देख इस करनट का!'

'देख लिया, क्यों?' एक ने कहा।

'यह कहता है—चोर नहीं है, डाकू बन सकता है!'

तब वे सब हंस पड़े। कजरी से न रहा गया। कहा: 'हंसते क्यों हो? जोर अजमा के देख लो न?'

'फिर देख लेंगे।' खड्गसिंह ने कहा: 'पहले अपना सबूत दो, बक्स दिखाओ।'

'क्यों?' कजरी ने कहा।

प्यारी ने चुपचाप उसे नोंचा। चुप रहने का इशारा किया। पर कजरी न डरी। कहा: 'तुम कौन हो जो दिखा दें? अगर हम चोर हैं, और हमारे पास माल है, तो तुम कैसे देख लोगे? जो होए तो छीन लो।'

उस समय उनके चारों ओर और कुछ लोग निकल आए। उनके हाथों में बल्लम थीं, चारों ओर से उठी हुईं, सधी हुईं।

कजरी ने कहा ये न्याव है?

सरदार हंसा और उसने कठोर स्वर से कहा बहुत बक-बक मत कर'

कजरी ने फिर कुछ कहना चाहा पर प्यारी के कान में कहा : 'कजरी ! तुझे सौगन्ध है, चुप रह। ये लोग डाकू लगते हैं। इन्हें दया नहीं होती। काट देंगे।'

सुखराम ने कहा : 'दिखा दो री।'

प्यारी ने बैठकर बक्स धर दिया। कहा : 'देख लो।'

वह हट गई। खड्गसिंह आगे बढ़ा। उस समय सुखराम ने अपनी कनखियों से देखा, सरदार ने इशारा किया। चारों ओर से बल्लभ वाले पास आ गए। खड्गसिंह ने बैठकर कहा : 'अरे इसमें तो ताला भी नहीं !'

उसकी बात सुनकर सरदार चौंका।

बकस खुला। पुराने दो-चार कपड़े और एक तस्वीर।

'यह क्या है ?'

'तस्वीर है एक।' खड्गसिंह ने कहा।

सरदार के इशारे पर एक दियासलाई जलाकर रोशनी की।

तस्वीर देख ठाकुर ने कहा : 'यह कौन है ?'

सुखराम सोचने लगा। क्या कहे ? क्या वह बताए कि यह चित्र किसका है !

कजरी ने समस्या तुरन्त हल कर ली। कहा : 'क्या करोगे जानकर ?'

'इसपर बड़ा माल है। हीरे-मोतियों से ढकी हुई है।' सरदार ने कहा।

'मालकिन थी पुरानी।' कजरी ने कहा : 'उस पै माल न होगा तो क्या हम-तुम पै होगा ? तुम भी भिखारी, हम भी भिखारी !'

'ऐ !' खड्गसिंह ने कहा : 'कैसे बोलती है ? जानती है किससे बात कर रही है ?'

'इस जंगल-पहाड़ के इलाकेदार से।' प्यारी ने कहा, जैसे रहा न गया।

'हैं ?' सरदार ने तस्वीर की ओर देखकर पूछा। वह जैसे अपने ही मतलब की सोच रहा था। वे हीरे ! वे मोती ! वे डाकू को विचलित कर रहे थे।

सुखराम ने ठंडी सांस ली और कहा : 'ठकुरानी ! कहां ? वह ही होती तो क्या बात थी ! बेचारी मर गई।'

'इसका घर कहां है ?'

सुखराम ने कहा : 'राजा के खान्दान की थी। बंस नास हो गया। राजा ने जमीन-जैजात पर कब्जा कर लिया।'

डाकू की आशा टूट गई। पूछा : 'कहां जाओगे ! डांग में ?'

'हां।' सुखराम ने कहा।

'चले जाओ।'

'कै दिन का रास्ता है ?

'कल दुपहर ढले पहुंच जाओगे।'

'हमारा कोई सहारा नहीं।' कजरी ने कहा : 'भूखे हैं।'

'खड्गसिंह !' डाकू ने कहा : 'इन्हें आटा दे दो।'

'हां सरदार,' खड्गसिंह ने इशारा किया। उन गठरी वालों में से एक ने गठरी उतार दी। आटा दिया।

'और दे दे महाराज थोड़ा।' प्यारी ने कहा : 'तुझे आसीस देंगे। तू राजा है !

आटा ले लिया। खड्गसिंह ने सुखराम से कहा : 'आदमी तो डीलडौल का है। कुछ दम भी है ?'

'गरीब आदमी हैं हम !' सुखराम ने दांत निकालकर कहा।

खड्गसिंह ने झटाक से चांटा दिया सुखराम ने उसे पकड़ लिया औ

उठाके फेंक दिया। औरतें भय से चीख उठीं। खड्गसिंह ने हंसते हुए कहा : 'शाबाश सरदार, आदमी काम का है।'

सरदार ने हंसकर कहा : 'है तो!'

अब परस्पर मित्रता-सी हो गई। सुखराम ने कहा : 'सरदार, तुम मालिक हो। थोड़ा गुड़ और दे जाओ तो पेट भर जाएगा।'

'दे दे रे!' खड्गसिंह ने कहा।

गुड़ देकर वे चले गए।

सुखराम ने कहा : 'चलो री, एक किनारे चले चलें।'

वे एक बड़े पत्थर पर आ गए। धौ के पेड़ खड़े थे।

'बड़ी भूख लग रही है मुझे।' सुखराम ने कहा।

'रात को खाया भी तो नहीं कुछ। बस कल दुपहर को खाया था।' प्यारी ने कहा : 'कजरी!'

'हां जेठी।'

'जा, पत्थर बटोर ला।'

कजरी पत्थर बटोर लाई। अब के प्यारी ने कहा : 'जा, जरा लकड़ियां बीन ला।'

गई। लाई। अब चूल्हा जला। डोरे में से थाली निकाली। आटा डाला। और कजरी से कहा : 'जा, पानी ले आ।'

कजरी लोटा लेकर चली गई।

सुखराम लेट गया। उसे झपकी आ गई थी। प्यारी ने तवा चूल्हे के पास रख लिया। और कजरी की बाट देखने लगी। इस बीच गुड़ का छोटा-सा टुकड़ा मुंह में डालकर चूसने लगी। बड़ा अच्छा लगा। भूख बड़े जोर की लग रही थी।

रात के उस निर्जन सन्नाटे में वे वहां जीवन का प्रबन्ध कर रहे थे। सुखराम ने पांव फैला दिए। प्यारी ने देखा, वह अब नींद में था। पुकारा : 'अरे तू तो सो गया!'

'काम कर, काम!' सुखराम ने कहा और करवट बदल ली।

सामने ताल से पानी लेकर कजरी आ गई। उसने आटा गूंधा, फिर पानी लेने चली गई। तब आकर चैन से बैठ गई।

कहा : 'ला मैं सेंक दूं।'

'अरी मैं कोई घिस न जाऊंगी।'

'तेरी मर्जी।'

'जगा दे इसे।'

प्यारी ने रोटी सेंकी। सुखराम को कजरी ने जगाया।

सुखराम उठ बैठा। पूछा : 'बन गई?'

'अब सिकी जाती है।'

'अरे तुम दो हो, फिर भी देर लग गई!' सुखराम ने कहा। पुरुष की हमेशा की आदत होती है कि खाने को बैठकर उसे इन्तजार अच्छा नहीं लगता। प्यारी ने रोटी दी।

'बड़ी अच्छी बनी है!' सुखराम ने कहा।

'तुझे भूख लगी होगी।' प्यारी ने कहा। उसके स्वर में ममता थी, जैसे वह अपने लिए गौरव नहीं चाहती थी

परन्तु सुखराम ने कहा नहीं बहुत दिन बाद खाई है बड़ा स्वाद आया है

'मुझसे अच्छी बनाती है ?'

'तू क्या जाने रोटी बनाना !'

'और इत्ते दिन तूने क्या खाया था ?' कजरी ने चिढ़कर कहा।

'करम अपने !' सुखराम ने उत्तर दिया।

'तू हट जा, अगली मैं ठोकनी हूं।' कजरी ने कहा। प्यारी ने मना किया : 'रहने दे री। वह दिल्लगी करता है।'

'अरी नहीं,' कजरी ने कहा : 'तू हट तो।'

लाचार प्यारी हटी। कजरी रोटी बनाने लगी।

'अब फिर वही कच्ची-पक्की मिलेगी।' सुखराम ने कहा। प्यारी हंस दी कजरी खिसियाई।

प्यारी ने कहा : 'ला मुझे भी खिला दे।'

'सच तू बतइयो।' कजरी ने कहा : 'मुझे तो तेरा ही सहारा है।'

प्यारी फिर हंस दी। कहा : 'जो मैं भी इससे मिल जाऊं तो ?'

'मिल जा।' कजरी ने कहा : 'डरती हूं ?'

प्यारी तैयार बैठ गई। कजरी ने एक रोटी उसे दी। प्यारी खाने लगी। और कजरी खिलाने लगी।

'बड़ी अच्छी बनी है।' प्यारी ने कहा।

'सच जेठी ? झूठे ही न कहा।'

'भाई, तेरी सौगंध !'

कजरी ने सुखराम की ओर देखा कि वह भी कुछ बोले।

सुखराम ने कहा : 'वह बात नहीं है !'

'तो रहने दे ! नही सही !' कजरी ने कहा : 'तू कह देगा तो क्या हो जाएगा ? तू इसके हाथ की खा लिया करियो, मैं इसे बनाके खिला लूंगी।'

सुखराम ने कहा : 'यह ठीक है और मैं तुझे बनाके खिला दिया करूंगा।'

उस बात को सुनकर वह प्रेम का तनाव ढीला हो गया। आनन्द ने कंपन भर दिया। कजरी हंस दी, प्यारी भी, सुखराम भी।

'क्यों छेड़ता है उसे तू ? मेरी छोटी है। उसके तो अभी लाड के दिन हैं।'

इस तरफदारी से कजरी झेंपी। कहा : 'चल, रहने दे।'

वे लोग लेट गए। पत्थरों पर, नंगे आकाश के नीचे। इन्सानों की देहों ने चैन पाया। इन्हीं पत्थरों की सख्ती और आकाश की नीली पलक के विरुद्ध विद्रोह करके मनुष्य ने शताब्दियों में घर बनाया, पलंग बनाया। परन्तु उनके पास कुछ भी नहीं। वे केवल मनुष्य हैं। उनके पास ज्ञान नहीं, किन्तु स्नेह है, और वही जीवन का शाश्वत सबल है। वे मर जाते हैं, फिर जी उठते हैं, उनके ऐसे भावना के सत्य अमर हैं। बियाबान जंगल है जिसमें तरह-तरह के पशु घूमते हैं। खूंख्वार और खतरनाक। और उनके पैरों पर पगडंडियों की हल्की बेड़ियां कहीं-कहीं कसती हैं, जिनसे कतराकर वे और गहन हरियाली में चले जाते हैं, क्योंकि चलने के निशान छोड़ना 'सिर्फ आदमी के पांव जानते हैं। और वह जंगल सूनी-सूनी-सी सांस लेता है, फिर अपनी झाड़ियों में ऊंघता है। सूना-सा पहाड़ ऊपर तक चला गया है। दूर से नीला दिखता है, पास से काला। इनकी शृंखला अरावली तक ऐसे ही चली जाती है। इन रास्तों को आदमी कम रूंदता है, जानवर अधिक।

पर संसार में आदमी हर जगह घुस गया है वहां जीवन कठिन है कभी कभी पहाड़ी कुण्डों में हिरन पानी पीते हैं और दूसरी ओर की चट्टान पर चढ़ बघेर को

देखकर कृषान हारकर भागते हैं। यहां हर गर्मी में ऊंचाई पर छिपकली [illegible] लेती है और बरसात में इन पत्थरों पर मखमल की तरह काई जम जाती है, जो भादों के बाद फिर सूखने लगती है। जाड़े में जब बिच्छू पड़ता है तब यहां की हवा तीखी बन जाती है। पत्थरों को छूती है, तो वे ठंड से अकड़ने लगते हैं।

कजरी जनपद में इधर-उधर पड़ी हुई लकड़ियां बटोर लाई। दिन में गूजर और ग्वारिये यहां आते। गाय-भैंस चराते। गांव के ग्वालों की गौओं का इन्तजाम करते। फिर शाम को उनकी आवाजें गूंजने लगतीं। रात होते-होते फिर यहीं सन्नाटा छा जाता।

कहा जाता था कि एक समय इन पहाड़ों पर जोगी अपनी धूनी रमाते थे और अलख जगाते थे। पर वह पुरानी बात थी। उससे अब कुछ बनता नहीं था।

लेटे-लेटे सुखराम ने उस ऊंचाई से देखा, सामने ही उसका अधूरा किला खड़ा था। प्यारी समझ गई। कहा: 'फिर तुझे राजाई याद आ रही है? वह तुझे नहीं छोड़ेगा, क्यों?'

कजरी ने सुन लिया। दूर से ही कहा: 'छोड़ देगा तो भरम न टूट जाएगा जेठी! उसे उसी में सुख है तो होने दे। वह हम लोगों से अपने को ऊंचा समझता है। मैं तो इसकी सूरत नहीं देखूंगी।'

प्यारी ने कहा: 'क्यों बकती है कजरी! इसका मन इसे देखके धक्-धक् करने लगता है।

'अरी कहीं पत्थर से भी कोई प्रीत करता होगा!'

'क्यों, पुरखों की बपौती कौन छोड़ता है?'

'हम क्या जानें जेठी! हमारे पुरखों ने हमारे लिए तो धरती छोड़ी थी, सो हम तो उसी को जानते हैं। धरती सबकी है, हमारी है, घमंड करें तो किसका?'

'इसीका करो।' प्यारी ने कहा: 'यही संभालती है सबको।'

कजरी ने आग जला दी। उजाला-सा हुआ, फिर आंखों को आदत हो गई। हल्का ताप शरीर को अच्छा लगता था। अतः वे उसके पास आ गए। लपट उठी, थर्राई और फिर लकड़ियों में पलटे खाने लगी।

ठंडी हवा अब पहले से भी ज्यादा ठंडी हो गई थी। क्रूर उसके आंचल में जो फूलों की खुशबू भरती थी वह सब रास्ते में बिखेरकर जब वह वहां पहुंचती थी तब वह खाली हो जाती थी। परन्तु शरीर को सिहरा देने की शक्ति उसमें तब भी बच रहती थी। जैसे वह हवा भी यहां आजाद थी।

लपट फरफराने लगी। पीली, फिर बल खाते में लाल हो जाती और गर्म में हरी-सी झाईं देती। जहां वह लकड़ियों पर सरकती वहां उसमें नीलापन भी होता।

सुखराम ने ठंडी सांस ली। कहा: 'आज सिर पर डेरा भी नहीं रहा।'

कजरी ने उत्तर दिया: 'बन जाएगा! चिड़िया तक हर साल नया घोंसला बनाती है।'

प्यारी ने स्वीकार किया: 'मानुस होगा तो सौ घर बना लेगा।'

सुखराम ने कहा: 'कौन कहेगा तुम सौत हो?'

'क्यों, तू जल रहा है?' प्यारी ने कहा।

'क्यों न जलूंगा?' सुखराम ने कहा: 'तुम दोनों की दोस्ती में खतरा नहीं है?

वे हंस दीं।

'मैं यों ही न कहती थी।' कजरी ने कहा: 'आखिर इसके मन की बात निकल ही गई भुगाइयां लोगों की तरह छोटे दिल की नहीं होतीं।

और सामन्ती समाज की वह स्त्री उस समय बड़ी प्रसन्न हो उठी थी। वह न
ानती थी कि उसके आधार कितने पुराने थे। उसके आकाश में नई भोर नहीं फ
कती थी। वह अपने छोटे दायरों को ही अपने जीवन के लम्बे विस्तार का पर्या
मझती थी और अभी तक समझती चली जा रही थी। कुछ देर यों ही बीत गई। म
ांसे अतीत याद आने लगा। पुरानी तस्वीरें आने लगी।

'गांव में क्या हो रहा होगा ?' सुखराम ने कहा।

दोनों ने सुना।

सुखराम कहने लगा : 'मेरे सामने पुलस आ गई थी।'

'किसीको पकड़ा ?' प्यारी ने पूछा।

'नहीं। तब तक तो नहीं।'

'वह बन्दूकें कैसी चली थी ?' कजरी ने पूछा : 'मुझे तो डर लगने लगा थ
ब। मैंने किसीसे कहा नहीं था। सच यों घोड़ा दबाया, यों मानुस फट मर गया। भल
कोई लड़ाई है ? जिसके पास हथियार नहीं हों वह क्या करेगा ?'

'हथियार नहीं होना ही तो कमजोरी है।' सुखराम ने कहा।

'उन्हीं पर चली होगी गोली ?'

'पता नहीं।' सुखराम ने फिर कहा : 'जरूर उन्होंने कुछ गड़बड़ की होगी।'

'किसने ? चमारों ने ?'

और नहीं।' प्यारी ने कहा : 'वरना गोली क्यों चलती ?'

'इनका क्या बिगड़ता है,' सुखराम ने कहा : 'जब चाहें चला दें।'

'पुलस ने चलाई होगी तो जरूर चमारों पर ही।' कजरी ने कहा।

सुखराम चुप हो गया। चिन्ता में पड़ गया-सा लगा। कजरी ने पूछा : 'तुझे क्य
ग्रकर है ?'

'धूपो का बदला किसने लिया ?'

'कजरी ने।' प्यारी कह उठी।

'तो रुस्तमखां को तूने मारा था ?'

'हां।'

'तुम दोनों को खून करते डर न लगा ?'

उस वक्त मुझे मालूम ही नहीं था कि खून कर रही हूं।'

'यह मैं जानता हूं, तू इतना आगे बढ़ने से डरती थी।'

'अब भी डरती हूं। सोचती हू तो रोंगटे खड़े होते हैं। फिर जब याद आता
 मैंने ही उसे मारा था तो और भी डर लगता है।'

'वा ! जेठी।' कजरी ने कहा : 'मुझे तो डर नहीं लगता। यह तो सोच कि व
सा पापी था। सांप को कोई क्यों मारता है ? उसे छोड़ दो तो वह तुम्हें काटेगा।'

'खैर समझो,' सुखराम ने कहा : 'आग लग गई। भगदड़ में पता नहीं चला
रना वहीं गिरफ्तार हो जाते।'

'तुझे इत्ती देर कहां लग गई थी ?'

'मुझे एक तमोली अहमदाबाद की बात बता रहा था। मैं सोच रहा था—तीन
ही चलें। मेहनत-मजूरी करके पेट पाल लेंगे।'

'तो चल न !'

'नहीं, मैं डरता हूं।'

'क्यों ?'

सहर के लोग अच्छे नहीं होते

'न होंगे, हमारा क्या लेंगे ?'

'हमारा क्या लेंगे ! [illegible]।' [illegible]। [illegible], अपना भय [illegible] दे। पर कह न सका। ठाकुर के पास एक आदमी को दो औरतों को देखेंगे तो अच्छा ही कहेंगे। [illegible] कहा : 'यहां हमारा कौन है और ?'

'यहीं कौन है ?' कजरी ने कहा।

इसका भी वह उत्तर नहीं दे सका।

'तू फिर सोचने लगा ?' प्यारी ने कहा।

'सोच रहा हूं जिस आदमी ने आग लगाई थी, वह बेदाग बच गया।'

'कौन था ?'

'निरोती बामन।'

प्यारी ने कहा : 'सांप ! वह था !!'

'हां।'

'और जानता है, भूपो पर बांके के साथ जुलम करने वाले कौन थे ?

'उसके साथी थे।'

'कौन से ?'

'मुझे नहीं मालूम।'

'तो सुन ले। जो कहा कर ले। वे इस्माइल और नरेस ठाकुर थे।'

'वे दोनों !!!' सुखराम ने कहा।

'हां, आग आग ही होती है।' कजरी ने कहा।

'बांके ने झूठ कहा था यों,' कहकर प्यारी ने बांके के मुंह से सुनी हुई वे सब बातें बता दीं। सुखराम को सुन-सुनकर गुस्सा आने लगा। पर अब बांके तो था ही नहीं। स्त्रियों ने उसे सब कुछ सुनाया।

'सो जाओ।' प्यारी ने बात समाप्त करके कहा।

'नींद नहीं आ रही है।' सुखराम ने उत्तर दिया।

'तू गांव की न सोच।'

'नहीं सोचूंगा।'

'कल हम डांग पहुंच जाएंगे !' कजरी ने कहा।

प्यारी ने कहा : 'तूने तो देखा है कजरी !'

'खूब !'

'सुखराम ने कहा : 'दोनों को कल पहुंचा दूंगा वहां। सुना है, अच्छी जगह है। वहां तुम दोनों रहना। चैन है। कोई झंझट नहीं। फिर वहां तो अपनी बिरादरी होगी ! वे भी तुम दोनों की देखभाल कर लेंगे। और तुम दोनों ही क्या अपना इन्तजाम नहीं कर सकतीं ?'

कजरी ने शंका से देखा और कहा : 'हम दोनों का क्या मतलब, जो तूने बार-बार कहा ! और तू कहीं जाएगा ?'

'हां।'

'कहां ? मैं भी तो सुनूं।' कजरी के स्वर में एक ललकार-सी थी।

'मैं गांव जाऊंगा।' उसने कहा।

'क्यों ?' प्यारी ने कहा।

'एक काम करूंगा वहां।'

दोनों डर गईं।

कौन-सा काम ? कजरी ने पूछा

'बदला लूंगा।'

दोनों ने एक-दूसरी की ओर देखा। आतंक था, ममता उसे रोकना चाह
से गले लगाना चाहता था, प्रेम उसकी जड़ें काटना चाहता था, परन्तु व
था। अब उसे हटाना सहज नहीं रहा था, क्योंकि उसका स्वर दृढ़ था।

'कजरी, तू रोक इसे !' प्यारी ने कान में कहा।

उसके स्वर में अनुनय था। उस नम्रता में एक समर्पण की भावना थी।

'मेरी क्या मानेगा ?' कजरी ने संदेह से कहा। जैसे वह कहते हुए डर रह
छा था कि जब यह तेरी नहीं मानता हो तो भला मेरी तो बिसात ही क्या

'अरी मैं जानती हूं।' प्यारी ने उसे ढांढस दिया : 'तू ही कह।'

कजरी को प्रसन्नता हुई। यह उसके लिए एक गौरव का विषय बन ग
ने अपने से जबरदस्त समझती है।

कजरी ने कहा : 'बदला लेगा ? किससे ?'

'निरोती से।'

'क्यों ?'

'उसने आग जो लगाई है।'

'आग न लगाता तो हम पकड़ी न जातीं ? मैं तो कहती हूं, उसने हमारा

सुखराम ने कहा : 'वह तो ठीक है, पर उसकी नीयत तो दूसरी थी।'

हुआ करे। नीयत से हमें क्या ?'

'तुझे न हो मुझे तो है।'

'क्या, ज़रा बता तो।'

'सोच, चमारों का क्या होगा ?'

'अरे तू नहीं सबका ठेकेदार है करनट !'

प्यारी ने कहा : 'क्यों री ! तूने ये कैसे कह दी ! वह तो अपने को
है। अधूरे किले का मालिक जो है।'

उस व्यंग्य से सुखराम आहत हुआ। दोनों हंसीं। व्यंग्य इस हास्य में
था कि उसे जाने से रोका जा सके, यह वे समझ रही थीं।

सुखराम ने कहा : 'हंसती हो तुम लोग ! हंस लो। पर मैं तो जाऊंगा।'

तू जाएगा तो मैं भी चलूंगी।' प्यारी ने कहा।

'नहीं। तुम दोनों नहीं चलोगी।' सुखराम ने दृढ़ता से कहा।

'तेरे कहे से ?' कजरी ने कहा : 'तू है कौन ?'

'अच्छा मुझे सोने दो।'

'तू जाकर क्या करेगा ? निरोती का कतल ?'

मैं क्या कोई तुम्हारी तरह हूं !' सुखराम ने कहा।

'दोनों के मुंह पर हवाई-सी उड़ी।

'तू हमें खूनी समझता है ?' कजरी ने पूछा।

और क्या समझूं ?'

'तो जा !' कजरी ने कहा : 'जा त कल गिरफ्तार हो जा।'

ये तो तेरे सिर चढ गया है प्यारी न राय दी

दो दो खूबसूरत बन हैं कजरा ने कहा तभी तो धरती पर पा

आऊँगा । बस !! अब ठीक है । मैं क्या [illegible] हूँ ?'

'हाँ, आँखें न [illegible] ने तेरी [illegible] था ?' कजरी ने पूछा ।

सुखराम [illegible] । बोला : 'तू कहती है [illegible] कर रहा है । समझी न बात !'

'मैं नहीं समझी । [illegible] अकल पर पत्थर पड़ गए हैं ।'

'भला सो कैसे ?'

'अच्छा, तूने लोगों से कहा भी था [illegible] के [illegible] तेरे पास [illegible] गया है !'

'कुछ नहीं,' प्यारी ने कहा ।

'सबूत !' सुखराम ने कहा : '[illegible] आँखों से देखा है ।'

'अब ये नहीं समझता ।' प्यारी ने कहा : 'मैं इसे [illegible] बेवकूफ कहती थी ।'

कजरी ने कहा : 'हाँ जीजी ! तू ठीक कहती थी । मैं [illegible] इसकी अकलमन्दी पर [illegible] रही थी । पहले तो [illegible] ऐसा न था । [illegible] आ [illegible] फिर बेवकूफ हो गया ।'

'अरे नहीं । यह [illegible] का पेशा है । एक बार पहले यह [illegible] ही मेरी इज्जत बचाने गया था, तब पिटा था ।'

'कब ?'

'शुरू में । दरोगा ने पकड़ा भी थी, तो राजाजी अपनी ठकुरानी के लिए गए थे ।'

'फिर क्या हुआ ?'

'पिटे, और हुआ क्या ।'

'नटनी की इज्जत !' कजरी हंसी ।

'अच्छा, दोनों की सलाह हो गई है,' सुखराम ने कहा : 'मैं नहीं डरता, समझी ! मुझे जो अच्छा नहीं लगता, उसे मैं बुरा ही कहूँगा ।'

'अरे कहने का हक भी तो हो ।'

'हक तो लिया जाता है ।'

'क्यों न हो ? कितने ले लिए तूने ?'

सुखराम जवाब न दे सका । कहा : 'झगड़ा करना है तो आपस में कर लो । मुझे फुरसत नहीं है ।'

'तू तो एक छोड़ दो-दो की छाती पै मूंग दलने को सोच रहा है ।' कजरी ने कहा ।

'रहने दे,' प्यारी ने कहा : 'इस वखत यह बड़े काम में लगा है, इसे फुरसत नहीं है ।'

दोनों हंस दीं ।

'अच्छा, मुझे सोने दो ।' सुखराम ने कहा ।

'आज, तुझे नींद आने लगी ?' प्यारी ने कहा ।

'अच्छा बकै मत ।' सुखराम ने टोका ।

'जो बघेर आके तेरी इस लाडली को उठा ले गया तो ?' प्यारी ने कहा ।

'बांध के सिराहने धर के सो जा ।'

'और मुझे ले गया तो ?'

'आंख तेज कर दे परमेसुरी । सोने देगी कि यहां से हट जाऊं ? कांय-कांय-कांय मचा रखी है हे [illegible] किसी को दो मत दीजो कै तो आपस मे कलेस करके

चन नहीं लेने देंगी, कै मिल के उसीको खा जाएंगी। एक से ही भर पाया था, अब तो दो हो गईं।'

'देखो नासपीटे को। जाने कहां से इसे नींद फटी पड़ रही है!' कजरी ने कहा: 'चारों ओर सुनसान है। राजाजी को पत्थर भी गदेले हो गए हैं। चैन से पड़ा है निपूता!'

प्यारी ने उसके आश्चर्य को समझते हुए कहा: 'अरी मेरा बाप भी ऐसा ही था। मेरी अम्मां से हमेशा दब के रहता था पर नींद के बखत नहीं। कजरी, मरद की जात ऐसी कि नींद के बखत राजा होता है। उस समय जो पत्ता खड़क जाए तो पेड़ का दुसमन हो जाए। बड़ी खराब नीयत का होता है यह। बच्चा रो गया तो उसकी अम्मा को मारैगा। भला कोई बात है। बच्चे पर भगवान का जोर नहीं। उसपर भी हुकम लागू करैगा।'

और इसी तरह वे दोनों बातें करती रहीं। सुखराम सो गया। तब वे दोनों थकी-सी उसके बारे में चर्चा करती रहीं। दोनों ने अपने-अपने मन के भय व्यक्त किए।

फिर सो गईं।

भोर के पहले ही पेड़ पर कोई चिड़िया चहक उठी। उसे सुनकर प्यारी जाग उठी। उसने दोनों को जगा दिया।

'सच कहता हूं,' सुखराम ने कहा· 'ऐसी गहरी नींद में सो गया था मैं कि फिर अब होश आया है। सारी थकान दूर हो गई।' और उसने एक बार अंग मरोड़कर जभाई ली। कजरी को देखा-देखी जंभाई आई। यह जंभाई की बीमारी ऐसे ही फैलती है। तैयार हुए। रोटी बनी। खा चुके तो उजाला फैल चला।

सुबह चले तो एक नगला पड़ा। कोई चार-पांच घर। कुछ आदमी। कुछ ढोर। और चारों तरफ वही पहाड़।

सुखराम को देखकर कुछ लोग बाहर आ गए। उस रास्ते पर नये आदमियों को देखकर उनको आश्चर्य होना स्वाभाविक ही था। कुछ स्त्रियां भी आड़ में खड़ी हो गई।

'क्यों भइया, करनट कहां हैं?' सुखराम ने पूछा।

'तुम कौन हो?' एक ने पूछा।

'करनट हैं।' सुखराम ने जवाब दिया।

'बस कोई आध कोस होगा उनका बास।'

जब ये लोग करनटों की बस्ती में पहुंचे तो कई करनट पास आ गए। पूछताछ हुई। अन्त में उन्होंने प्रसन्नता से कहा: 'मन चाहे जहां रहो। यहां कोई डर नहीं है।'

उन्हें डेरा बनाने की इजाजत मिल गई। सौभाग्य से एक डेरा भी मिल गया क्योंकि उसकी मालकिन ने ब्याह कर लिया था और वह डेरा उसके पास बेकार था। प्यारी के पास रुपये थे। पांच रुपये देकर वह डेरा ले लिया गया।

जब वे डेरे में आ गए तो सुखराम ने कहा: तेरे पास रुपये हैं?'

'हैं।'

'कितने?'

'सौ थे। अब पांच कम सौ हैं।

'तैने रखे कहां हैं?'

प्यारी ने लहंगे के नाड़े में भर रखे थे। भारी लहंगा था। पता भी नहीं चलता था।

'तू ले कैसे आई इन्हें?'

'मैं [illegible] थी। कौन जाने [illegible]।'

वह दिन आराम से [illegible]। [illegible] पहचान [illegible]।

[illegible]। सुख-राम के संग [illegible] कजरी ने कहा : '[illegible]! [illegible] आज तो थे।'

प्यारी ने [illegible] कहा : '[illegible] है उस?'

दोनों हंसीं।

सुखराम ने उसे बिठाया और कहा : 'यह दोनों मेरी [illegible] है।'

उसने मुस्कराकर देखा और कहा : '[illegible] है। वह उसकी देखभाल कर लेगी। तुम फिकर न करो। [illegible] है! वह भी आ जाएगी कल। फिर से सब रह लेगी।'

'राजाजी कहां हैं?'

'वे तो शहर गए हैं।'

शहर से उसका तात्पर्य [illegible] था, क्योंकि असली शहर उसने देखा ही नहीं था।

सुखराम ने कहा : 'तो बस ठीक है।'

आगन्तुक चला गया। प्यारी ने कहा : 'आज से [illegible] कहां से ले आया।'

सुखराम हंसा। कहा : 'तूने तो [illegible] के पास न रहा?'

'अब छू लेगा।' प्यारी ने कहा।

'मेरे भाग!' कहकर वह फेंटा बांधने लगा।

'फिर फेंटा क्यों बांध रहा है?' प्यारी ने कहा।

'जरा गांव हो आऊं।'

कजरी बाहर जा बैठी। प्यारी ने कहा : 'और तुम क्या करेगी?'

'भजे करो। यहां कोई चिन्ता नहीं है।'

वह बाहर आया तो उसने कहा : 'कजरी कहां है?'

'मुझे क्या खबर!' प्यारी ने कहा। डेरे की ओर से आहत-सी मलिन मुख से देखती हुई, उस वक्त कजरी ने कहा : 'तू जा रहा है?'

सुखराम ने कहा : 'डरती क्यों है?'

'अपने लिए डरूं तो कसम है।' वह वहीं खड़ी रही।

'अरे तू बड़ा वो हो गया है!' प्यारी ने कहा : 'रोकते-रोकते छोटी का मुंह सूख गया।'

'तू क्यों बोली!' सुखराम ने कहा : 'तूने तो न रोका!'

प्यारी ने कहा : 'सुनती है! तू कहती है, तो चाहता है कि मैं भी अलग से कहूं?'

कजरी ने याचना की : 'कह दे न जेठी! अगर ये तेरे कहने से ही मान जाएं। यह दुनिया बड़ी खतरनाक है।'

सुखराम ने कहा : 'तुम नहीं जानतीं। मैंने धूपो को वचन दिया था। मैं देख तो आऊं उन लोगों को। नहीं तो वे यह न कहेंगे कि उसने भड़काया और भाग गया? कित्ती बुरी बात है! आखिर उनके क्या जान नहीं है? और फिर रात को उनपर गोली चली थी। जाने कौन मरा होगा। उनको देखने वाला कोई नहीं।'

मुझे कसम दे दे जा प्यारी ने कहा

तू कसम क्यों दिलाती है? कजरी ने पूछा उसके स्वर में उलाहना था जैसे

परोपकार की वह सब बातें वह मानती है, पर उसकी राय में अब भी उसक
व्यर्थ है।

'किसकी ?' सुखराम ने कहा।

प्यारी ने अपने गम्भीर मुख को उसकी ओर मोड़ा और उसके नेत्रों
चमक-सी आ गई। उसने क्षण-भर रुककर दृढ़ता से हाथ फैलाकर कहा : 'कजरी

कजरी स्तब्ध रह गई। प्यारी के मुख पर उन्मत्त महिमा थी। उनकी
नाक पर उठी हुई भ्रू अराल हो गई थीं और बरौनियां फैल गई थी। उसकी
हथेली फैली हुई थी। वह प्रतीक्षा करती हुई खड़ी थी। सुखराम ने इस रूप को
दिन के बाद देखा था। यह उसके पास की छवि का साकार आविर्भाव था।

'अपनी क्यों नहीं कहती !' उसने पूछा।

कजरी ने क्षण-भर सुखराम को देखा और फिर प्यारी को। उसने अपनी
को परोक्ष में रखकर जैसे दो प्रत्यक्षों को तुला पर रखकर टांगा। प्यारी उसकी
को समझ गई थी।

'मैं झूठ क्यों बोलूं ?' उसने कहा : 'मुझे यहां कौन लाया है, बता सकता

'मैं।'

'अरे जा।' प्यारी ने कहा।

'तो ?'

'कजरी लाई है।'

'कजरी ही सही। मुझे क्या उससे कोई होड़ है !'

'तो कसम दे !'

'जा, सौगन्ध है ! लौट आऊंगा।'

'वहां किसीने कह दिया कि तू बडा बहादुर है तो भट्ठी पै मत चढ़ जइयो

सुखराम चला गया। कजरी ने वेदना से भरी सांस छोड़ी। प्यारी ने
'डर मत, वह आ जाएगा।'

एक बुढ़िया ने पुकारा : 'खबर आई है। राजाजी गिरफ्तार हो गए।'

'ये कैसी बात !' प्यारी ने कहा : 'राजा को कौन पकड़ सकता है ?'

'अरी ये करनटों के राजा की कहती है।' कजरी ने कहा।

'तो क्या वह बड़ा नहीं होता ?'

'वह ? जैसे हम, वैसा वह।'

'तो फिर उसकी अमलदारी कहां है ?'

'तू तो लगता है नटिनी नहीं।'

'पर हमारे गांव में राजा एक बेर आया था, जब मैं बच्ची थी। मुझे तो
ी नहीं।

'तभी। उसकी अमलदारी वहां है जहां-जहां करनट हैं, चाहे कहीं हों।'

प्यारी की समझ में आया।

धीरे-धीरे सांझ आ गई। अंधेरा पहाड़ पर चुभकी मारता और हर बार
ट्टान को ले रंगता। धीरे-धीरे सारा पहाड़ काला हो गया। उसके किनारे
धुंधले-से हुए, फिर धुआं-धुआं हो गए, जैसे बहुत घना कोहरा छा रहा था। और
रो और झोंपड़ों में चूल्हे सुलग उठे।

प्यारी आटा गूंधने लगी। कजरी पास बैठी थी। रोटी बनाकर प्यार
कहा : 'चल, कजरी, खा ले।'

कजरी ने कहा : 'मुझे भूख नहीं जेठी।'

'क्यों ?'

'जाने क्या बात है ?'

'अरी, मैं सब जानती हूं ।'

'तुझे नहीं लगता कुछ ?'

'लगता क्यों नहीं ? पर सारी जिम्मेदारी तो मुझ पर है ।'

'सो कैसे ?'

'तू अभी छोरी है, समझती नहीं ।'

वह कितना स्नेह था ! इसे क्या कजरी नहीं समझती ?

दोनों ने रोटी खाई और लेट गईं । डेरों में कहीं-कहीं गीत उठ रहे थे । कोई बांसुरी बजा रहा था और कहीं ढोलक बजती थी । धीरे-धीरे वे सो गईं । आधी रात को कजरी जग गई ।

'क्या है ?' उसने कहा ।

'कुछ नहीं ।' प्यारी ने कहा, 'जब से रोटी खाई है, पेट कुछ भारी-सा हो गया है ।'

'अभी तू कराह रही थी न !'

'हां, नींद खुल गई । पेट में दरद है ।'

'जाने तेरे कैसे लगी है । बड़ी जोर की लात थी । अब वह आए तो देखे । वह तो ठीक कर देगा । तूने उससे कहा नहीं ।'

'मैं समझी ठीक हो जाएगा । ये तो फिर उठ आया । और क्या होगा, ज्यादा से ज्यादा मर ही तो जाऊंगी !'

कजरी ने कहा : 'अब के तो कह के देख ! दांत झाड़ दूं तेरे ।'

26

चमारों पर पुलिस ने अपने जुल्म शुरू किए । उन्होंने पहले अपना आतंक जमाया । उन्होंने सिपाहियों को भेजा जिन्होंने इक्के-दुक्के चमारों को पकड़कर थाने में बंद करके खूब पीटा और फिर भी नहीं छोड़ा । नौजवान चमारिनों के साथ कितने ही लोगों ने छेड़-छाड़ की, परन्तु अब उनकी रक्षा करने वाला कोई भी नहीं था । उनका रोदन घरों में डूब गया । पर बाहर आने पर उसका कोई भी मूल्य नहीं था । बच्चों के वे रोने से चुप करके घरों में घुसा लेतीं और राह पर भी सिपाही देखकर थर-थर कांपने लगतीं ।

औरतों को चारों ओर अंधेरा ही अंधेरा दिखाई देता था । वह बूढ़ा जिसने धूपो का विरोध किया था, अब पुलिस का मुखबिर था । उसने एक-एक खबर दी थी । उसकी सारी रक्षा पुलिस पर निर्भर थी । औरतें उसे गाली देतीं, पर उसकी जोरू अब सबको जोर-जोर से गालियां देती । उसके अहंकार को देखकर तो कोई भी सरकारी अफसर शर्मिन्दा हो सकता था, क्योंकि बरसाती पानी से भी कम समय के उस उद्वेग में अथाह प्रवाह था ।'

दोनों ठाकुर अब पुलिस से मिले हुए थे । चरनसिंह मूंछों पर ताव देता था । उधर ठाकुर हरनाम के प्रयत्नों से नटों में से कई जवानों को थाने में पकड़ लिया गया था और कई जवान नटिनियों को सिपाहियों की बुभुक्षा को तृप्त करना पड़ा था । नटों के पास से जितने पैसे निकल सकते थे, वे निकलवा लिए गए । चारों तरफ से दुगुनी मार खाकर जनता विक्षुब्ध हो गई परन्तु फिर भी कोई राह नहीं थी

निरोती पुलिस की नाक का बाल था। उसने साफ जनेऊ की कसम खाकर खचेरा को आग लगाने के जुर्म में गिरफ्तार करवा दिया। खचेरा ने कहा : 'पण्डित दुहाई है। गंगा की ओर हाथ उठाकर कहो। तुमने मुझे आग लगाते देखा ?' परन्तु पण्डित ने कहा : 'देखा दरोगाजी ! इसकी मजाल जो मुझे धरम सिखाने लगा !'

दरोगाजी ने कड़ककर कहा : पकड लो साले को। इसकी यह हिम्मत !'

खचेरा चमार था। डरा भी था। परन्तु इतने बड़े झूठ को सहना, और बोलना उसके लिए असम्भव हो गया था। उसने जवाब दिया और अब लोहे के सींखचों के पीछे बंद था। उसकी बहू एक भी बार उससे मिलने नहीं दी गई।

चमारों की खेती खडी थी, कट रही थी। पर कौन काट रहा था इसका कोई हिसाब नहीं था। ठाकुरों ने उनका जैसे बांट कर लिया था। चोरी के माल का आधा दरोगाजी के यहां पहुंच जाता था और फिर किसी का डर शेष नहीं था।

जो लोग मारे गए थे उनकी लाशों को पुलिस ने ही ठिकाने लगा दिया था। चमारों के परिवार प्रयत्न करके भी उन्हें पा नहीं सके थे। जिनके घरों के मर्द मर गए और औरतें ही बच रही थीं, वे घर भूख के अड्डे हो गए। बच्चे तड़पते थे। पहले कम से कम एक जून तो पेट भरते थे, अब इतनी मेहरबानी और बढ़ गई कि दूसरे जून पर भी कृपा कर दी गई।

ऐसा था वह चमारों का मुहल्ला, जहां सुखराम पहुंचा। उसको हर्ष था। वह धूपो के अपमान का बदला सुनाने के लिए आया था। उसे आशा थी कि खचेरा मिलेगा। परन्तु खचेरा कहीं भी न मिला।

सुखराम को देखकर चमारिनों ने मुंह फेर लिया।

वह पास गया। उसने देखा, उनकी आंखों में आंसू थे। वही अधेड़ औरत पास आ गई।

सुखराम ने कहा : 'खचेरा कहां है ?'

स्त्री ने बताया। वह सुनाती जाती थी, सुखराम दांत पीसता जाता था।

'और क्या-क्या हुआ ?'

'पीतो को उन्होंने इतना मारा, इतना मारा, कि उसके दांत तोड़ दिए।'

'वह कहां है ?'

'मर गया !'

वह रोई।

'और ?' सुखराम ने कठोरता से पूछा।

'राधू की बहू कुएं में डूब मरी।'

'क्यों ?'

'ठाकुरों ने उसे कहीं का न रखा।'

सुखराम ने दोनों हाथ उठाकर कहा : 'तू देख रहा है ? यह है तेरी दुनिया ! यह है तेरा न्याव ! और कहने को हम कमीन हैं। ये लोग जाति के बल पर, डंडे के बल पर गरीबों की खाल खेंचते हैं। इनका घमंड सबको कुचलकर रखता है। यह नफरत के बल पर जीते हैं, ताकि दूसरों का घर बरबाद कर सकें।'

वह कह नहीं सका। उसका गला रुंध गया। फिर रुककर कहा : 'और कह भाभी !'

'उन्होंने,' स्त्री ने कहा : 'बुद्धा, हीरा और पंगा को नंगा करके बेंतों से पीटा और उनकी औरतों के मिर्च भर दी।'

सुखराम के रोंगटे खड़े हो गए उसकी आंखें भय से निकल आईं स्त्री ने

कहा : [illegible] गिर गया । [illegible] मर गई ।'

[illegible] हुआ ! बहुत अच्छा हुआ ! [illegible]

[illegible]

'[illegible] ?' [illegible] जो पूरी हो जाएगी ! [illegible] नहीं जाना [illegible] बेईमान, कमीने, [illegible] हमारी औरतें [illegible] हैं । [illegible] सिपाही, ये बड़े लोग उन्हें [illegible] हैं । फिर हम [illegible] किसीका भला नहीं कर [illegible] जो भूखे मरते हुए [illegible] हैं, वे भी [illegible] हैं । [illegible] वकील ठगता है, [illegible] सब सुनते हैं, पर हम [illegible] की तरह [illegible] को अपनी आजादी कहते हैं । पर हम [illegible] नहीं । तुम [illegible] हो ?'

सुखराम आवेश में आ गया था । स्त्री ने कहा : 'फिर हम [illegible] ?'

'हां भाभी ।' सुखराम ने कहा : 'हंसो । तुम धरती की तरह गरभ में बच्चों को पालो और जनम दो । वे तुम्हारे बच्चों को साग-भाजी की तरह काटें तो तुम रोओगी ! धरती कहीं रोती है ? नहीं । धरती को जब गुस्सा आता है तब भूचाल आते हैं ।

उसने गुस्से से अपना सिर पकड़ लिया । और कहा : 'तू मुझे रोकती थी कजरी ! तू मुझसे न आने को कहती थी प्यारी । आओ ! यहां आकर देखो ! क्या हो रहा है यहां ? अरे, तुमने देखकर यह झेला आगा ? किसानों का कतल किया जा सकता है । हे भगवान !' उसने हाथ उठाकर कहा : 'ये दुनिया नरक है । हम गन्दे कीड़े हैं । तूने यह संसार ऐसा क्यों बनाया है जहां आदमी कटता है तो उसके लिए दर्द तक नहीं होता ? यहां पाप इतना बढ़ गया है कि गरीब और कमीना आदमी कोढ़ी बन-बनकर अपने पेट के लिए अपनी अच्छी देही को गन्दा बना लेता है ! यहां एक-एक आदमी दबाता है, पर हम तो कमीन हैं । ये बड़े लोग क्यों करते हैं ऐसा ? क्या ये अपने धन और हकूमत के लिए आदमी पर अत्याचार करने से नहीं कांपते ? तू चुप है, तू जवाब नहीं देती ? नट की छोरी पर जवानी आती है और गन्दे आदमी उसे बेइज्जत करते हैं, फिर भी वह रंडी की तरह जिए जाती है । जिए जाती है । मर क्यों नहीं जाती ? हम सब मर क्यों नहीं जाते ?'

'हम नहीं मरते,' उस अधेड़ औरत ने कहा : 'भइया, क्योंकि हम रोज पाप करते हैं । भगवान जिला-जिलाकर दण्ड देता है । भगत कहते थे कि चौरासी लाख जोनि पार करके यह जन्म मिला है ।'

'भाभी,' सुखराम ने कहा : 'चौरासी लाख जोनि पार करके यह जनम मिला है ? इसके बाद फिर उतनी ही बार मनुष्य-जनम नहीं मिलेगा ? तो फिर अब भी, तब भी, सदा ही हमें बैल की तरह जुते रहना है !'

उस भयानक चित्र की कल्पना करके दोनों दहल गए ।

सुखराम ने हंसकर विद्रूप से कहा : 'तो खचेरा जेल में है भाभी ! आ मेरे पास, एक बात कहूं । सौगंध दे किसीसे न कहेगी ?'

कह देवर

'किसीसे नहीं कहेगी ?'

'नहीं। वचन देती हूं।'

'तो सुन, मेरी ही लुगाइयों ने बांके और रुस्तमखां को गोद-गोद के मारा था जिनकी मौत का बदला अब खचेरा से लिया जाएगा।'

'लिया जाएगा ! उन्होंने उसका घर उजाड़ दिया। उसकी बहू...'

वह कांपने लगी।

'क्या हुआ ?'

'वह फांसी लगाकर मर गई। उसके बच्चों को वह अपने हाथ से गला घोंट-घोंटकर मार गई।'

सुखराम ने सिर दीवार से दे मारा।

'और खचेरा राजधानी की जेल में है। उसे फांसी हो जाएगी।'

सुखराम हंसा। कितना भयानक था, वह हास्य ! उसने कहा: 'भाभी ! मैंने सोचा था कि कजरी और प्यारी को पकड़वाके खचेरा को छुड़ा लूं। पर अब ऐसा नहीं करूंगा, अब बदला लूंगा। मैं इस दरोगा को धूल में मिला दूंगा। यह दुनिया तो ऐसी ही रहेगी, पर पापी को दण्ड भरना ही होगा।'

स्त्री उसके साहस पर मुग्ध हो गई थी। कहा: 'भगवान तेरे साथ है सुखराम ! जो कहीं आज तुझ-सा एक मेरा बेटा होता तो मैं खुशी से पागल हो गई होती।'

सुखराम ने झुककर उसके पांव छुए। कहा: 'तू मेरी मां ही है, आज से मैं तेरा बेटा हूं।'

'जुग-जुग जी मेरे लाल !' स्त्री ने कहा और आंसू पोंछे।

अत्याचार का विरोध गांव में तत्कालीन कांग्रेसियों ने किया था। अधिकांश कांग्रेसी परचूनिए और दुकानदार थे। ठाकुर विक्रमसिंह (नरेश के पिता) पहले ही से जेल में थे। उनके परिवार का काम बड़ी मुश्किल से चल रहा था। (मेरी) भाभी के पास नरेश उस समय छोटा-सा था। परचूनियों का असली शोर तो तब होता था जब उनके व्यापार में गड़बड़ी पड़ती थी। कुछ बनिए छिपा-चोरी चन्दा दे देते थे। खबर राजधानी के वकीलों के पास पहुंच गई थी और वहां उसका वितंडा खड़ा करने की तैयारी की जा रही थी। किन्तु गांव में मुआयने के लिए आने में देरी थी। गांव के मास्टर प्रायः हर जगह ही मन में कांग्रेस के सहायक थे। वे भी दबी जबान से पुलिस के अत्याचार की निन्दा कर रहे थे। परन्तु ठाकुर और बामन उनके विरुद्ध थे। वे चमारों की इस सरकशी को सीधे या उल्टे तरीके से कांग्रेस के प्रचार का ही फल मानते थे और इसमें उसकी शाश्वत धारणाएं कलियुग के प्रवाह में बही जा रही थीं। न जाने कैसे भीड़ में एक-आध बार महात्मा गांधी जी की जै बोल दी गई थी।

शाम हो गई थी। थानेदार बीच में बैठे थे। उनके आसपास छोटे अमले बैठे थे। जैसे वर्णन नागों के आते हैं कि बीच में नागों का राजा बैठता है और फिर इधर-उधर छोटे-छोटे सांप बैठते है, वैसे ही वे सुशोभित हो रहे थे।

शराब चल रही थी। उन्होंने बीकानेर के एक कलार से खिंचवाई थी। अंगरेजी हुकूमत में सुना जाता था कि कांग्रेस कहीं-कहीं शराबबन्दी करवा रही थी। इसकी प्रतिक्रिया यहां शराबियों में आतंक बनकर फैल गई थी।

सामने गिद्ध-दृष्टि से देखता हुआ तहसील का पेशकार बैठा था। उसके साथ निरोती बामन धरमात्मा बना बैठा हुआ था। वह शराब नहीं पी रहा था। ठाकुर हरनाम और चरनसिंह की आंखों में तो लाली आ गई थी।

सुखराम पहुंचा। उसने सलाम करने से पहले सब ओर देखा। उसको देखकर

निगोड़ी चौंक उठा। दरोगाजी अपनी बातों में मशगूल थे। अभी उनकी निगाह नहीं पड़ी थी।

सुखराम ने यह सवाल उठाया तो व्यथा-सी उभरने लगी। एक और इसी गांव में हाहाकार मचा है, दूसरी ओर यह आनन्द है। यह संसार कैसा अजीब है? एक का दर्द दूसरे के लिए कुछ नहीं! जो लोग बैठे हैं, वे उसका दर्द समझते कहाँ हैं! यहां ठाकुरों के बीच में बामन बैठे हैं। सब चल रहा है। सब अपनी-अपनी जगह चलता ही जा रहा है। पर कोई रोक नहीं है। सदा से ऐसा ही चलता आ रहा है।

परन्तु सुखराम को इसमें मन में कचोट उठती है कि वह जानवर की तरह दूर बैठा रहे और वे सब आनन्द मनाया करें। पर उसके सोचने, न सोचने से होता ही क्या है!

वह ठाकुर नहीं है। दुनिया में केवल एक करनट है, और करनट नीच होता है।

नीच! उसको फुरफुरी-सी आ गई। दरोगाजी किसी बात पर हंसे और सामने देखा। सुखराम ने सलाम किया।

दरोगाजी ने पूछा: 'कौन है?'

'हुजूर, करनट हूं।'

'क्या नाम?' उन्होंने कड़ककर कहा।

'मालिक, सुखराम।'

'अबे तू मालिक है! बैठ जा।'

वह बैठा और कहा: 'मालिक तो सरकार आप हैं। मैं तो सुखराम हूं।'

कुछ लोग हंस दिए। पेशकार ने डांटा: 'कैसे बोलता है बे! हुजूर की शान में बेअदबी करता है!'

सुखराम सकपका गया। उसने कहा: 'मालिक माफ करो। अपढ़ गंवार हूं।'

'कैसे आया?' दीवानजी ने पूछा।

'सरकार को सलाम करने आया था। हमपर महरबानी नहीं हुजूर! जमादार थे तब तो चैन था सरकार!' उसका इंगित दसमखां से था।

'तू कहां था अब तक!'

'भटकता था सरकार!' उसने सिर पर हाथ दे मारा। इधर नटों पर जुल्म हुआ था और वह अभी तक गिरफ्तार नहीं हुआ था। उसके तो दो खूबसूरत बीवियां थीं। सुखराम ने कुछ क्षण अपनी दयनीयता का झूठा प्रदर्शन करके कहा: 'सरकार, पूछो नहीं। मैं मर गया!'

दीवानजी ने हंसकर कहा: 'देखा हुजूर! ये लोग कितने मक्कार होते हैं! हट्टा-कट्टा बैठा है, फिर भी यह कह रहा है, मर गया। बाहर जाकर कहेगा कि थाने में मेरी लाश निकल रही है, पुलिस के ईमानदार पेशे को बदनाम करेगा। क्यों?'

'बड़े चालाक लोग हैं।' पेशकार ने कहा।

'हुजूर! माई-बाप हैं,' सुखराम ने गिड़गिड़ाकर कहा: 'गरीब आदमी हैं!'

'अबे,' दीवानजी ने कहा: 'इसमें गरीब-अमीर का क्या सवाल है? देखा हुजूर, गरीब है तो जैसे इसके सब कसूर माफ?'

दरोगाजी ने कहा: 'तेरी औरतें कहां हैं?'

'मेरी दोनों लुगाइयां खो गईं। पता नहीं चलता महाराज। उन्हें ही ढूंढ रहा था। अब हार गया तो सरन में आया हूं।'

'देखा हुजूर!' दीवानजी ने कहा, 'इसका मतलब यह है कि हमने इसकी औरतों को पकड़ रखा है। देखा आपने साहिबान!' उन्होंने उपस्थित लोगों की ओर

देखकर अपनी पवित्रता की दुहाई दी।

'समझ में आ गया,' थानेदार ने कहा : 'तो वे ठठरियां बांके और रुस्तमखां की ही थीं। जब इसकी बीवियां वहां से गायब हो गईं तो लगता है डरकर भाग गईं। इन दोनों में शराब पीकर औरतों के पीछे झगड़ा हुआ और खून-खराबा देखकर वे दोनों रफूचक्कर हो गईं। और गिरफ्तार न हो जाएं, इसलिए इसको भी मंरी दे दी गई।'

पेशकार ने कहा : 'मगर वे गईं कहां ?'

'लुट गया सरकार !' सुखराम ने रुआंसे स्वर से कहा, जैसे दु:ख से मरा जा रहा था।

निरोती बामन ने कहा : 'हुजूर ! नटिनी का क्या ! रंडी और नटिनी में क्या फरक है ?

उसकी बात सुनकर दरोगाजी ठठाकर हंसे। कहा : 'वाह पंडितजी, कमाल करते हो !'

निरोती ने कहा : 'सरकार, अब आप ही देख लें।' और हंसकर उसने कुटिलता से सिर हिलाया, जिसमें आंखें मिच गईं और अपनी हथेलियां खोल दीं।

सुखराम ने कहा : 'मैं बताऊं सरकार ! रंडियों और नटिनी में उतना ही फरक है महाराज,' उसने निरोती की ओर देखकर कहा : 'जितना तुममें और चमारों में !'

अर्थात् क्रम से उसने चमार और नटिनी एक ओर रखे और रंडी और निरोती बामन एक ओर।

सभा में सन्नाटा खिंच गया।

'क्या बकता है !' निरोती चिल्लाया। दरोगाजी चुप थे। उनकी राय में यह भी ठीक ही था कि थोड़ी निरोती की भी पगड़ी उछल रही थी। अब माला दबकर तो रहेगा। निरोती को विक्षोभ हुआ। उसने दरोगा की ओर देखकर कहा : 'देखा सरकार, जात का करनट कैसे बोलता है !'

उन्हें बड़ा क्रोध था।

दरोगाजी ने कहा : 'अबे होश में नहीं है क्या ? पंडितजी से ऐसे बोलते हैं !'

वह दूसरा पक्ष भी दबाए रखना चाहता था। नीच धोबी, कुम्हार, भंगी सब ही सिर पर चढ़ रहे थे। फिर चमार तो जैसे कांग्रेस के आदमी थे और यह करनट सबसे गया-बीता था।

सुखराम ने कहा : 'हुजूर अन्नदाता माई-बाप हैं। पर इन्हीं पण्डितजी की वजह से जमादार मारे गए। मेरी लुगाइयां खो गईं।'

पंडित तमककर खड़े हो गए। चिल्लाए : 'साले, मुझपर दोष लगाता है ? तू ब्राह्मण पर पाप लगाता है ! और वह भी तब जबकि बदमाश पकड़ गया है।'

'कैसा दोष महाराज ?' सुखराम ने कहा।

'तू यही कहना चाहता है कि आग मैंने लगाई थी।' पंडित गुस्से और घबराहट में बक गया। वह कहता गया :'मैं जानता हूं, तू यह भी कहेगा कि तूने मेरा पीछा किया और मैं तेरी पकड़ में नहीं आया। क्यों ?'

सुखराम ने कहा : 'पंडित महाराज, तुम वह सब मेरे मन की कैसे जान गए ? तुम्हें तो तिरलोकी दीख रही है आज।'

दरोगा ने दीवानजी के कान में झुककर कुछ कहा। पंडित कांपने लगा। सुखराम ने कहा : 'पंडित, कांपते क्यों हो ?'

'कहा ?' पंडित ने कहा 'मैं कांपता हूं ?'

और फिर दरोगा को देखकर : 'सरकार, आपके दरबार में मेरी बिनती पर ध्यान नहीं दिया जा रहा है। यह क्या कह रहा है ?'

लगा, पंडित रो पड़ेंगे।

'अब रोते हो महाराज !' सुखराम ने कहा : 'जब जमादार से दुश्मनी निकालने चले थे ?'

निरोती का मुंह सूख गया। कहा : 'मेरा जमादार से कब का बैर था ?'

'उसकी रखैल से तो था !'

'था ! और तुझे शर्म नहीं कि वह मेरी लुगाई थी।'

'भली कही,' सुखराम ने कहा : 'जो हमारी बिरादरी में होता है उसमें शरम कैसी ?'

'तभी तो कहता हूं तुम लोग नीच हो।'

'और,' सुखराम ने कहा : 'सरकार और कहूं ?'

'क्या है ?' दीवानजी ने कहा।

'पंडित जी ने आग लगाई थी। मैंने देखा था।'

'पकड़ा क्यों नहीं ?'

'मैं पीछे भागा। पंडित कहीं अंधेरे में छिप गए।'

'यह हो सकता है सरकार !' पंडित चिल्लाया।

'और सुनिए अन्नदाता !' सुखराम ने कहा।

'क्या है, कह।' दरोगाजी ने कहा।

'सरकार, डरता हूं।'

'हमारे रहते ?'

'मालिक, आप ही का भरोसा है।'

दीवानजी ने कहा : 'अबे जल्दी बोल !'

सुखराम की आंख दौड़ने लगी। उसकी आंखों ने फौरन अपने चोर पकड़ लिए।

'सरकार, बाके मेरा यार हो गया था। ठाकुर हरनाम और ठाकुर चरनसिंह ने भी...'

'क्या बकता है।' दोनों ठाकुर चिल्लाए।

दरोगा चौंका।

सुखराम ने कहा : 'सरकार, ये मेरे कहने के पहले ही समझ गए। अब आप ही पूछ लीजिए।'

'तू ही कह !' दीवानजी ने कहा।

सुखराम ने देखा, वे दोनों भस्म कर देनेवाली निगाहों से देख रहे थे और घबरा रहे थे।

सभा थक रह गई थी। सुखराम उठा और बढ़ा। कहा : 'सरकार भी ठाकुर हैं, और ये दोनों भी ठाकुर हैं। क्या आज मुझे न्याय मिलेगा ? या आप भी इनसे मिल जाएंगे ?'

दीवानजी गरजे : 'चुप रह !'

दरोगा चिल्लाया : 'साले, तू मुझपर ही दोष लगाता है। तेरी इतनी मजाल !'

'सरकार ! दुहाई !' सुखराम ने कहा : 'आप इलाके के राजा हैं। पर ये दोनों आदमी खतरनाक हैं, ये दोनों आदमी नहीं हैं, इन्होंने पाप किया है...और आज ये आपके दोस्त हो गए हैं सरकार आप पाप से घिरे बैठे हैं'

दरोगा ने कनखियों से इधर-उधर देखा सब प्रभावित-से लगे वह चिल्लाया,

'पकड़ लो इसे !'

'पकड़ लीजिए सरकार !' सुखराम गरजा : 'इन दोनों ने भी धूपो से जबर्दस्ती की थी !'

धिक्कार का एक हल्की-सी आवाज गूंज गई। परन्तु सिपाहियों ने सुखराम को पकड़ लिया।

दरोगा ने कहा : 'अब बोल !'

'हुजूर, यह तो जुलम है।'

'जुलम ? दीवानजी !'

'हुजूर !' दीवानजी ने बढ़कर कहा।

'देखते है कैसे बोलता है ?'

'सरकार, समझ में नही आता। क्या हो गया। वरना पहले तो ऐसा हमने कभी नही देखा।'

'हां दीवानजी।' सुखराम ने कहा : 'पहले तो बामन-ठाकुर ऐसा करते भी नहीं होगे। एक ने आग लगाई, दो ने पाप किया, और आप लोग उनकी रक्षा कर रहे है। यह जुलम नहीं है तो क्या है ?'

'लगने दो जूते !' दरोगा चिल्लाया। क्रोध से वह पागल-सा लग रहा था।

जूते पडने लगे। दरोगा कहकहा लगाने लगा। निरोती और ठाकुर चौकन्ने से देखते रहे। सुखराम लडने लगा। उस समय उसे लगा कि अब वह और सहन नहीं कर सकेगा। वक्त आ गया है। उस समय भीतर मनुष्य का स्वाभिमान जागा और सुखराम ने अनुभव किया कि सब उसे ही घूर रहे है। सब उसे ही अपनी आंखो से बेध रहे है। वे सब उसका मखौल उड़ा रहे हैं। क्या वह इतना गया-बीता है ? क्यों वह चुपचाप सिर झुका दे ? क्यों वह विद्रोह नहीं करे ? कीड़ा तक हमला होते देखकर काटता है, तब वह अपनी जान देता है।

क्यों न वह लड़कर जान दे दे !

एक दिन तो मरना ही है।

पर फिर प्यारी को दिया वचन याद आया।

वह फिर चिल्लाया : 'दुहाई है सरकार ! माफी दो। माफी दो।'

सभा ठठाकर हंस पड़ी।

निरोती ने कहा : 'देखा सरकार ! करामात देखी !'

हरनाम ने कहा : 'लातों के देव बातों से कभी मानते हैं !'

चरनसिह तो ऐसा हंसा कि लगा अब आंतो का जाल गले में चढ़ चुका है और अब बाहर गिरने ही वाला है। दरोगा किसी सम्राट के गौरव की छाया बनकर ठाठ से बैठा था।

दीवानजी ने उंगली उठा दी। जूते पड़ने रुक गए। सुखराम हांफने लगा। उसका फेंटा उसके गले के चारों ओर पडा था। सिर के बाल बिखरे हुए थे। उसका मस्तक नत था, पराजय आंखो में झूल आई थी। आज प्रेम ने उसे लाचार कर दिया था। परन्तु भीतर ही भीतर हृदय मे बड़ा संघर्ष हो रहा था।

एक भाव उठता था : यह ठीक नहीं है ''मर मिट, पर सिर न झुका'''

दूसरा भाव कहता था : करनट ! नीच ! खाल मे रह, बाहर न निकल, बाहर न निकल'''

हठात् विफर गया।

उसने दो लातें मारीं और भय [illegible] से गरजा [illegible] मकी गरज और उसके गौ[illegible]

परिवर्तन को देखकर सब चौंक उठे। वह ऐसे बदल गया था, जैसे पौधा अचानक पेड़ बनकर झोंके लेने लगा था, या कुत्ता अचानक भेड़िये की तरह गुर्राने लग गया था। वह परिवर्तन इतना आकस्मिक था कि दरोगा देखता रह गया। दीवानजी ने बोलना चाहा पर मुंह खुला रह गया, क्षण-भर आवाज ही नहीं निकली। निरोती फिर थर्रा गया और दोनों ठाकुर सन्नद्ध-से देखने लगे। पेशकार सोचने लगे कि यह क्या आफत आ गई। सुखराम ने दोनों सिपाहियों को धक्का दिया और फिर एकदम एक झटके में उसने छुड़ा लिया, और क्रोध से बढ़ा। उसने एक और को धकेल दिया।

दरोगा आतुर-सा अपनी जगह खड़ा हो गया। उसकी आंखों में भी आतंक छा गया और अपने-आप उसका हाथ कमर पर पहुंच गया। परन्तु सुखराम ने इससे पहले ही जोर से हमला किया। दरोगा गिर गया, और तब दरोगा को पकड़कर उसने फेंकने का यत्न किया, किन्तु सिपाहियों ने उसे झपटकर पकड़ लिया और धुनाई करने लगे। कोई जूता मारता, कोई ठोकर देता, कोई घूंसा मारता।

सुखराम प्राणपण से लड़ने लगा। वह अकेला था, वे कई थे। खूब मारपीट हुई और भगदड़-सी मच गई। उसी झगड़े में किसीसे टकराकर जलती लालटेन बुझ गई, और फिर अंधेरा छा गया। पर वे अंधेरे में भी रुके नहीं। कोलाहल में सुखराम का चिल्लाना दब गया। वे उसे धुआंधार मारते रहे। उन्होंने उसकी पसलियों पर लातें मारीं। दरोगाजी पुराने आदमी थे। उन्होंने अपने हाथ में फंसे हुओं की बिलिया कटवाई अर्थात् सिर के बाल घुटवाकर बीच सिर तक सिर की खाल छिलवा दी थी और उसमें नमक भरवाई थी। उस दारुण यंत्रणा को देखने के आदी व्यक्ति के लिए यह तो साधारण-सी बात थी।

कोई चिल्लाया: 'रोशनी लाओ!'

दरोगा ने गोली चलाई। उस अंधकार में वह निर्घोष हठात् गूंज उठा और सबके हाथ शिथिल हो गए क्योंकि गोली चलने की बात भयंकर थी। उस समय सबके हृदय स्तम्भित हो गए।

दरोगा ने डराने के लिए हवा में गोली चलाई थी। परन्तु जैसे सांप को मारने वाला आदमी इतना डरा हुआ होता है कि अगर सांप बच गया तो उससे कोई बचा नहीं सकेगा, दरो ा के कांपते हाथ ने फिर उसी तरह गोली चला दी। इस बार का परिणाम घातक हुआ।

'आह!' करके कोई चिल्लाया और गिरा। और फिर सन्नाटा वैसे ही बरसने लगा जैसे बिजली गिर जाने के बाद गिरने लगता है। एकरस और गहन।

इसी समय कोई लालटेन लेकर आ गया। उसकी रोशनी को देखकर सबको चैन आ गया। और फिर उन्होंने अपने-अपने शरीर को देखा कि कहीं उनके तो कुछ नहीं लगा। वह आतंक अब कम हो गया था, क्योंकि वे देख सकते थे।

'ठाकुर हरनाम मारे गए।' निरोती पुकारा: 'दरोगाजी ने गोली मार दी।'

'गोली मार दी! गोली मार दी!' फुसफुसाहट गूंज उठी।

दरोगा कांपने लगा।

दीवानजी ने बढ़कर कहा: 'हुजूर, यह तो बड़ा कातिल निकला।' वह अविचलित था। उसकी बात सुनकर सब चौंक उठे। उसने फिर कहा: 'सरकार! हमारे रहते ऐसी क्या जल्दी थी! आपने यह भी न सोचा था कि अगर वह आपके गोली मार देता तो क्या होता!'

सबने कहा: 'कौन मार देता!'

दीवानजी ने कहा पुलिस म मुझ बाईस वरस हो गए यह कोई नौटों का

खेल है ! तुम लोगा ने देखा ही नही। जिस वक्त यह नट पिट रहा था, उस वक्त इसने पिस्तौल निकाली। मैं और दरोगाजी दोनों झपटे। मगर दरोगाजी का मुकाबला मै क्या करता ? जान पर खेल गए और पिस्तौल उसके हाथ मे छीन ली।' फिर मुड़कर कहा. 'हजूर ! कमाल कर दिया आपने ! मैने कई अफसर देखे, मगर ऐसा शेर एक भी नही देखा।'

दरोगा ने दीवान को ऐसे देखा जैसे वह स्वर्ग में से सीधा उनके थाने मे आ गया हो। उन्होंने इतना अच्छा आदमी कभी देखा ही नही था !

'गोली सुखराम ने मारी है ?' तहसील के पेशकार ने पूछा।

निरोनी बामन सकते की-सी हालत मे था। चरनसिंह अब समझ गया था। परन्तु वह सोच रहा था कि यह तो मर ही गया। अब लौटकर तो आ नही सकता। [illegible] सुखराम तो दुश्मन है।

सुखराम बेहोश पड़ा था। वह धीरे से जगा। उस समय अंग-अंग दुख रहा था।

दीवानजी ने कहा : 'निरोनी पंडित !'

'हां हुजूर,' निरोनी ने कांपते-कांपते कहा।

'सिपाहियो ! पंडित को गिरफ्तार कर लो।'

'सरकार, दुहाई है !' पंडित चिल्लाया।

सिपाहियो ने उसे पकड लिया और पंडित फिर चिल्लाया : 'मेरा कसूर हुजूर !

पेशकार ने कहा : 'अरे पडित ! तुम इस नट से मिले हुए थे। तुमने दरोगाजी को ही खूनी करार देने की चेष्टा की ?'

दीवानजी ने कहा : 'पेशकार साहब, तीन दिन से सरकार की पिस्तौल गायब थी। यह नट पहले ही चुराकर ले गया था। खुदा का शुक्र है कि अपने-आप लौट आई। 304 का मामला है।'

पंडित गिरफ्तार हो गया।

सुखराम ने कहा : 'मै खूनी नहीं हूं। लेकिन चरनसिंह, पंडित को देख ! हरनाम को देख ! दुखियो और गरीबों को सताने का नतीजा देख !'

चरनसिंह की निगाह हठात् दरोगा की तरफ उठ गई जैसे कह रहा हो, जरा इन्हे भी तो देख !

हुक्म हुआ। सिपाहियो ने सुखराम को खींचकर बद कर दिया। सुखराम ने आखें खोलकर देखा :

अधेरे मे एक आदमी बढ आया। वह धीरे-धीरे कुछ बड़बडा रहा था : 'पकड लाए, साले···जाने कौन है···साला मौका कहीं बिगाड़ न दे···'

वह सोचने लगा। सुखराम अधकार मे धरती पर गिरा दिया गया था। अब वह धीरे स उठ बैठा और चारो ओर देखने का प्रयत्न करने लगा। कुछ देर बीत गई।

फिर दूर महफिल का कोलाहल सुनाई दिया, जैसे सब फिर से ठीक हो गया था। उस स्वर मे आनन्द गूंज रहा था, जिसमें अहंकार था। और सुखराम ने सुना तो हृदय झकझना उठा। उसे अब याद आया : क्यों किया उसने यह सब ? क्यो वह उस चक्कर मे फंस गया ? अब क्या होगा ? अब क्या ये छोड़ सकेंगे उसे ? वरना सब खून किसपर लगेगा ? उस समय घोर घृणा हुई और इच्छा हुई कि सिर पटक-पटककर जान दे दे। पर उससे लाभ ?

कोई वेश्या अब महफिल में नाच रही थी। उसके घुंघरुओं की आवाज आ रही थी। शायद हरनाम की लाश को सिपाही ले गए होंगे उसके घर के लोगो में पहुंचा दी होगी क्या होगा अब यह सब क्या जाने यहां तो अपने ऊपर बन [illegible]

है। और वह बेड़नी का गाना : 'हाय मरि जाऊंगी ''।'

चारों ओर कहकहे और वाहवाहों की बौछार, जैसे इस संसार में और कुछ है ही नहीं।

उस समय वह आदमी सुखराम के सामने आकर खड़ा हो गया। सुखराम ने सिर उठाया। आदमी ने कहा : 'तू कौन है ?'

'कौन ?' सुखराम ने कहा। वह पास आ गया। सुखराम उसे अंधेरे में पहचान नहीं सका।

'बोलता क्यों नहीं ?' उस आदमी ने कहा। उसके स्वर में खिजलाहट थी। सुखराम ने क्षण-भर सोचा और फिर उसके भय दूर हो गए। उसने धीरे से कहा, 'मैं ? मैं हूं करनट सुखराम।'

'करनट !' उस आदमी के मुंह से खुशी की हल्की आवाज निकली। फिर उसने दुहराया : 'करनट !' जैसे उसे एकाएक विश्वास नहीं हो रहा था कि उसका बिगड़ता हुआ खेल अचानक ही फिर ऐसे बन जाएगा।

'शाबाश !' उसने कहा।

सुखराम चौंका।

'क्यों ?' उसने पूछा।

वह आदमी हल्का सा हुआ।

'तू कौन है ?' सुखराम ने पूछा।

उस आदमी ने जैसे सुना नहीं। अन्धकार में भी वह इस समय निश्चिंत-सा दिखाई दिया।

सुखराम ने खीझकर कहा : 'बताता क्यों नहीं ?'

वह आदमी और पास गया और उसने विभोर स्वर में कान में कहा : 'मैं करनटों का राजा हूं।'

सुखराम में जैसे जिन्दगी लौट आई। उसका स्वप्न पूरा हुआ था।

उसीकी तो खोज थी और वह ऐसे अचानक ही पूरी हुई।

'राजा जी !' सुखराम ने पांव छुए।

'सुखी रह।' राजा ने आशीर्वाद दिया।

'बीड़ी पी ले।' राजा ने कहा।

दोनों बीड़ी पीने लगे। धुआं कोठरी में भर गया। उस समय बीड़ी पीकर सुखराम की चेतना लौट आई। थकान उतरने लगी।

'तुझपर' राजा जी ने सोचते हुए कहा : 'वे कतल का मुकदमा चलाएंगे।'

'मैंने कतल नहीं किया।'

'तो तू करनट नहीं है।' राजा जी ने कहा।

'पर मैं बेकसूर हूं।'

'बेवकूफ !' राजा जी ने कहा : 'करनट कभी बेकसूर नहीं होता। अगर तूने कतल नहीं किया, तब भी तुझे मानना ही होगा कि तूने कतल किया है।'

'क्यों ?'

राजा जी ने कहा : 'मगर तूने कतल क्यों नहीं किया ?'

सुखराम क्या कहे, समझ में नहीं आया। वह उसकी ओर देखने लगा। अंधेरे में मुंह साफ नहीं दिखता था। बीड़ी जलते समय जो उजाला हुआ था उससे एक हल्की झलक अवश्य उसने देख ली थी

तू जानता है ? राजा जी ने कहा

'क्या ?'

'मैं क्यों पकड़ा गया हूं ?'

'नहीं।'

'मैंने एक बच्चे की हंसुलिया उतार लेने की कोशिश की थी। पकड़ा गया।'

'क्यों उतारी थी ?'

'अबे तू मुझसे झूठ बोलता है ? करनट होकर पूछता है क्यों उतारी थी ? अगर तू असल नटिनी का जाया होता तो पूछता—पकड़ा क्यों गया ?'

सुखराम चिन्ता में पड़ गया।

राजा जी ने कहा : 'तू गधा है।'

'फिर क्या करूं ?'

'सो जा !'

'सो जाऊं ? फिर ?'

'फिर फांसी पर चढ़ना होगा !'

'और तुम क्या करोगे ?'

'जो अभी तक किया है।'

'राजा जी ! मैं मरना नहीं चाहता।'

'मैं तो तुझे नहीं मार रहा।'

'पर तुम हमारे राजा भी तो हो।'

'हां, हूं।'

'मैं तुम्हारी सरन आया हूं।'

उसकी बात सुनकर सुखराम से उसने कहा : 'तो तू मेरे हुकम पर चलेगा ?'

'जरूर, राजा जी !'

'तो सो जा !'

'सो जाऊं ?' सुखराम चौंक गया।

'हां, मैं जगा लूंगा।'

'तुम क्या करोगे ?'

'मैं तेरी रच्छा करूंगा।'

'क्यों ?'

'तू मेरी सरन जो आया है।'

सुखराम यह सुनकर चुप हो गया। आधी रात हो गई थी। राजा जी उठे। मेरे संग हाथ बटा।' राजा ने कहा।

सुखराम खड़ा हो गया। चारों ओर सन्नाटा छा रहा था। सब सो रहे थे। कोठरी में एक छोटी-सी खिड़की थी। उसमें लोहे के सींखचे लगे थे, वही एक हवा आने का रास्ता था। उसी पर राजा जी की नजर पड़ी।

सुखराम और राजा जोर लगाने लगे, पर वह न उखड़ी। सुखराम निराश हो गया।

'अब क्या होगा राजा जी ?'

'घबराता क्यों है ?'

'राजा जी, मारे जाएंगे। मैं फांसी पर चढ़ जाऊंगा।'

'कायर !' राजा जी ने कहा : 'मेरे रहते डरता है ?'

'डरता तो नहीं राजा जी !'

ठीक है एक काम कर यह ले राजा जी ने एक बड़ा मजबूत छुरा कहीं से

निकाल लिया। अंधेरे में सुखराम न देख सका। कहा : डरा! तू काट।'

सुखराम ने काटा तो आवाज हुई। वह डरा। पर राजा जी खड़े-खड़े खर्राटे भरने लगे। आवाज डूब गई। कोई घंटे-भर बाद सलाखों के नीचे की लकड़ी कट गई।

खर्राटे धीरे-धीरे कम हो गए।

खिड़की खोल ली गई। अब रास्ता निकल आया। राजा जी ने बाहर झांका। सन्नाटा था।

'सुखराम!' वे फुसफुसाए।

'क्या है?'

'कोई नहीं है।'

'भाग चलो राजा जी।'

'अभी नहीं। वह कुत्ता जा रहा है।'

'वह क्या करेगा?'

'भौंक उठेगा।'

फिर कुत्ता भी चला गया।

दोनों बाहर निकल गए। उस समय उन्हें लगा जैसे वे मौत के मुंह से निकल आए थे। ठीक उसी समय ठाकुरों ने थाने के आगे आकर पुकारा : 'दरोगाजी!'

ठाकुर हरनाम की मृत्यु से वे विक्षुब्ध थे। पता नहीं क्या हुआ। आगे चलकर यह अवश्य हुआ कि खून सुखराम पर नहीं आया, क्योंकि गांव के पण्डित और ठाकुरों ने मिलकर दरोगा को कसवाकर ही छोड़ा। परन्तु उस समय भय था।

दोनों भाग चले।

ठाकुर के दबाव से दरोगा ने कोठरी खुलवाई। पर वहां कोई नहीं था। सिपाही भाग चले। बन्दूकें अंधेरे में चलीं।

राजा जी ने फुलवाड़ी में पहुंचकर कहा : 'ठहर जा।'

'क्यों?' वह ठहरा।

'सिपाही आ रहे हैं।'

'फिर?'

'अब भागेंगे तो आवाज होगी।'

सुखराम ने कहा : 'राजा जी!'

'हां!'

'सोचते क्या हो? जल्दी करो।'

'क्या करूं?'

'लपककर पेड़ों पर चढ़ जाएं।'

राजा खुश हो गया। बोला : 'शाबाश! जब मैं उल्लू की बोली बोलूं तब उतर आना।'

दोनों पेड़ों पर चढ़ गए।

थोड़ी देर में दो सिपाही भागते हुए उधर आ गए। वे बातें कर रहे थे : 'देखा पण्डित शिवराम! दरोगा ने ठाकुर मार डाला।'

'मैं ठाकुरों को जरूर बता दूंगा असली बात। हरनाम ठाकुर मेरे साले लगते हैं।' दूसरे ने कहा।

'गवाही देनी पड़ेगी।'

'दूंगा।'

मैं भी दूंगा। पण्डित निगोनी मरे न त्यार हूं। नौकरी की मा[िर] क्या मैं धरम

छोड दूंगा।

'साली नौकरी ने कुत्ता बना रखा है।'

'यह तो देखो, दीवानजी ने कैसा झूठ बोला!'

'अजी इसने बड़े मठा दुघारे हैं।'

'बड़े भाई का सरा माल दबा गया ये। इसकी भाभी और छोटे-छोटे भतीजे भूखे मरते हैं।'

'वह भी तो सिपाही था!'

'हां।'

'जैसी आई वैसी गई।'

'चलो, यहां कोई नहीं है। छोड़ो। जब वह बेकसूर है तो पकड़कर भी क्या होगा!'

'दूसरा भी तो है?'

'वह तो अब तक डांग पहुंचा होगा।'

वे चले गए।

कुछ देर बाद उल्लू बोला।

सुखराम ने सुना तो सांस ली।

दोनों उतर आए। गले मिले।

'दद्दा! बच गए।' राजा ने कहा।

'भाग की बात है।'

'अरे करतट का सहारा और है ही क्या?'

'यार!' सुखराम ने कहा: 'मजा आ गया?'

'आ गया न?' राजा ने कहा: 'हमारे साथ आज तक किसी को मजा न आया हो, सो नहीं हुआ।'

'तुमने सुना था न? खून दरोगा ने किया है।'

'कोई करे! मुझे-तुझे क्या?'

'सो तो कुछ नहीं।'

'फिर मरने दे सालों को।'

'ठाकुर हरनाम कौन भला था! और पण्डित तो बड़ा बदमाश है।'

'कहां जाएगा?'

'डांग।'

'वहां कौन है तेरा?'

'तुम जो हो!'

'मैं?' राजा ने चौंककर पूछा।

सुखराम ने कहा: 'क्यों, डर गए? भला बताओ। जब मैंने तुम्हें राजा माना है तो तुम राजा हो। और मुझे कौन आसरा देगा?'

'ठीक बात है।'

'मेरा डेरा वहीं है।'

'कब से रहता है तू? मैंने तुझे देखा नहीं।'

'मैं नया पहुंचा हूं। गांव में झगड़ा हो गया था सो भाग गया था यहां से।'

'तू मरद है. मेरा यार. चल मेरे साथ।' राजा जी ने कहा।

'किस्मत की बात है

क्या

'देखो तुम मुझे कैसे मिले !

'तू किस्मत को बहुत मानता है ?'

'क्यों नहीं ?'

राजा ठिठक गया।

'क्या हुआ ?' सुखराम ने पूछा।

'सोचता हूं, तुझे ले जाना ठीक होगा या नहीं ?' राजा ने कहा। सुखराम समझा नहीं।

'क्यों ?' उसने कहा।

'मुझे सोचने दे।' राजा ने कहा।

सुखराम चुप हो रहा।

'दो वादे कर।' राजा ने कहा।

'क्या ?'

'एक तो तू मेरे कहने पर चलेगा।'

'यह भी कहने की बात है !'

'अरे पहले भी एक को ले गया था, उसने मेरी नटिनी को ही फंसा लिया था। वह चली गई उसके साथ। लोग हंसने लगे। वह उसके संग थी। आखिर मुझे लड़ना पड़ा। वह मर गया, तब वह फिर मेरी हो गई।'

'मैं वादा करता हूं।' सुखराम ने कहा : 'उस तरफ से डरो मत।'

'क्यों, तू आदमी नहीं है ?'

'मेरी दो औरतें हैं।'

'औरतों से कोई रुकता है ?'

'तो तुम भी वादा करो।'

'क्यों ?'

'तुम मेरी औरतों पर आंख न डालोगे ?'

'मैं तो नहीं डालूंगा।' राजा ने कहा : 'और तेरी लुगाइयों ने मुझे छेड़ा तो ? तू जाने, रानी बनने का लोभ किसे नहीं होता ?'

'तो तुम काट डालना उसे।'

'बसा न लूं ?'

'नीयत बिगड़ रही है तुम्हारी राजा ?'

'चोखी भई, सुखराम। मार डालूंगा सुसरी को ! तू दूसरा वादा कर।'

'कहो।'

'मेरी गद्दी तू नहीं छीनेगा।'

'कभी नहीं।'

दोनों फिर गले मिले।

आसमान में हलकी पौ की रोशनी फट रही थी। उजाले में राजा ने कहा :

'मेरे यार सुखराम ! तू तो बड़ा जोर का आदमी है।'

'सो कैसे राजा जी ?'

'अबे तेरी औरत तो मुझे न देखेगी। पर मुझे अपनी से जरूर डर हो गया है।'

'बेकार डरते हो। मेरी औरतें देखेंगी रानी, तो आगे पट जाएगी।'

'मैं देखूं तो !'

'तो !!' सुखराम ने कहा : 'लुगाइयों की मरजी। पर जबरन कुछ न करने

ऱ्गा

'और किया तो क्या करेगा ?'

सुखराम ने उसका हाथ पकड़कर बताया : 'ये करूंगा।'

'अरे छोड़-छोड़, टूटा-टूटा···!'

सुखराम ने छोड़ दिया।

सुखराम हंस दिया।

27

उधर आसमान मे लाली छलकी, इधर दो आदमी दिखाई दिए काली छायाओं के-से।

बूढ़ी चिल्लाई : 'अरे आओ-आओ ! राजा की छूट आए !'

उस आवाज को सुनकर सब बाहर आ गए। उनके चेहरों पर उल्लास था। धीरे-धीरे ये लोग पास आ गए। कोलाहल मच उठा।

बूढ़ी मस्त थी। हंसकर कहा : 'अरे राजा जी ! तु कहां चला गया था ?'

'आप से तो नही गया था।' नट आ-आकर राजा जी के पांव छूने लगे। सुखराम ने निगाह दौड़ाई। उसका काला वाला परिचित अभी नहीं आया था। न उस भीड मे कजरी और प्यारी थीं। क्या बात हुई, अभी तक कोई नही आ सकी ?

नटों और नटनियों के गाने और नाच शुरू हो गए। वे विभोर थे। उन्हें इस तरह की कोई उम्मीद ही नही थी कि राजा इतनी जल्दी छूटकर आ जाएगा।

'कहो राजा जी,' एक ने कहा : 'क्या हुकम है ?'

'जसन मनने दो।' राजा ने कहा।

'राजा जी की जै' का नारा गूंज उठा।

कुछ नट चिल्लाए : 'आओ ! आओ !'

शराबें खुल गईं।

सुखराम ने कहा : 'मैं चलूं ?'

'कहां ?' राजा चौंका।

'लुगाइयों से मिल आऊं ?'

'सब यहीं आ जाएंगी।' राजा ने कहा : 'तुझे जाने का हुक्म नहीं।' वह हंसा।

राजा बीच में कुर्सी पर बैठा। इसी समय रानी आ गई। राजा को देखकर उसने सलाम किया और फिर सुखराम की ओर देखा। सुखराम ने उसके सामने आखें नीची कर लीं। राजा हंसा। रानी से बोला : 'यह वैसा नहीं है, समझी !'

रानी ने कहा : 'हाय मरे, तुझे शरम नहीं आती ! कैसे बकता है !'

राजा अपनी जांघ पर हाथ मारने लगा।

रानी ने पूछा : 'यह कौन है ?'

राजा ने चूमकर कहा : 'यह हमें छुड़ाके लाया है।' और सबकी ओर उसने देखकर हाथ घुमाकर कहा : 'सुनो, सुनो !'

सब पास आ गए। एक ने कहा : 'हुकम राजा जी ?'

'इसे देखा !'

सब देखने लगे। सुखराम को अजीब-सा लगा।

'यह कौन है ?' एक और ने पूछा।

यह मेरा वजीर है राजा जी ने कहा

कैसे हो जाएगा ? रानी के पीछे खडी स्त्री ने पूछा

'मेरी मरजी से।'

'पर बताना तो पड़ेगा।'

'बताऊंगा जरूर।' राजा ने कहा : 'इसने मुझे जेल से भागने में मदद दी थी।'

नट सुखराम को सलाम करने लगे। वे सन्तुष्ट हो गए थे। इतना बड़ा कारण और क्या हो सकता था?

एक ने कहा : 'आदमी तो जोर का है।'

'क्या बात है!' दूसरे ने कहा : 'नटनी का जाया जोर का न होगा तो होगा ही कौन?'

तब ही रानी ने शराब का प्याला भरकर सुखराम की ओर बढ़ाया।

सुखराम ने राजा जी की ओर देखा।

'अरे उधर क्या देखता है?' रानी ने कहा : 'तू तो बड़ा डरपोक है।'

'उसके दो लुगाइयां हैं।' राजा ने कहा और ठठाकर हंसा।

रानी खिसियाई। कहा : 'पर फिर भी डरता है।'

'कभी नहीं।' राजा ने कहा : 'कभी नहीं डर सकता। पी ले मेरे वजीर। दरोगा!'

एक नट बढ़ आया। सुखराम ने देखा कि रानी ने उसे देखा। राजा ने कहा : 'सबको खबर दे दो, वजीर आया है।'

दरोगा चला गया।

राजा ने कहा : 'पी ले वजीर।'

सुखराम ने पी डाला। बहुत दिन बाद आज शराब पी। वे दिन और थे जब उसे पीने की आदत थी। कजरी के रहते कभी होश खोने लायक दुख नहीं हुआ था, कोई ऐसा अभाव ही नहीं रहा था। पर पीते ही मजा आया। पुरानी चीज ने ठोंसा दिया।

गीत उठने लगे। राजा और रानी तथा वजीर के चारों ओर खास-खास आदमी थे, औरतें थीं और गोल बनाकर चारों ओर नट-नटनियां नाच रहे थे। गोश्त पकने लगा था। गंध आने लगी थी। वे लोग खूब शराब पीते रहे। राजा ने रानी के मुंह से प्याला लगा दिया। रानी अन्त में नशे में नाचने लगी और चारों ओर हुड़दंग और मस्ती का आलम छा गया।

जब सुखराम महफिल में झूमा तब भी शराब की मस्ती गजब ढा रही थी। राजा ने खाते वक्त कहा : 'अब कहां जाता है?'

'घूमने।' सुखराम ने झूमकर कहा।

राजा बोला : 'और घूमकर फिर घूम आ!'

वह बक रहा था। उसे खुद होश न था। रानी ने अश्लीलता से कमर नचाई और गाया : 'अब मैं क्या करूंगी सखी! मेरा बलमा बड़ा रसीला है, पर सारी डांग में ढूंढ आई, कहीं नहीं मिला। हाय, मेरी तो डेरे की टाट उड़ गई, सिर पर छाया न रही, हाय मैं क्या करूं?'

सब हंसने लगे। राजा खुद नाचने लगा। और उसने सुखराम की कमर में हाथ डाल दिया। सुखराम भी नाचने लगा। आदी न था। जल्दी लड़खड़ाने लगा।

'और लाओ थोड़ी।' सुखराम ने कहा।

एक नट ने प्याला दिया। सुखराम पीकर चिल्लाया : 'राजा!'

'हां वजीर!'

मजा आ गया।

मजा? और राजा ने अट्टहास किया और क्या वजीर और वह फिर

भूल गया।

तभी कई नट नाचने लगे। सुखराम झूमने लग गया था।

धीरे-धीरे ज्वार कम हुआ। उन्होंने मदमस्त होकर गोश्त खाया और राजा ने तारीफों के पुल बांध दिए। बड़ा मजा आ रहा था। धीरे-धीरे खाना खतम हुआ। महफिल खतम हुई।

सुखराम निकला तो पांव लड़खड़ा रहे थे। सिर घूम रहा था। ऐसा लग रहा था, वह उड़ा जा रहा है। पर वह चल पड़ा था। कहां जा रहा था, यह उसे स्वयं ज्ञात नहीं था। वह तो चल रहा था।

आखिर वह पेड़ के नीचे बैठ गया और उसने पांव फैला दिए और ऊपर देखा। पेड़ पर बेल लग रहे थे। उसे वे बहुत बड़े-बड़े-से लगने लगे। उसने सिर पर हाथ रख लिए जैसे वे सिर पर गिर जाएंगे। वह डर गया।

कुछ देर बाद वह उसे भी भूल गया और चित सो गया। इस समय उसकी आखें मिच गईं।

आज उसे गाना सूझ रहा था। उसने भर्राए स्वर में गाया : 'चलत-चलत मोरे बाजे री बिछिया···'

बिछिया पर वह स्वर बल खाने लगा और उसने गाया :

'पनघट आय छिप्यो री सवरिया···'

संवरिया का शब्द उसके मुंह से बार-बार निकलने लगा, लड़खड़ाता हुआ, झूमता हुआ।

तभी कजरी ने उसे देखा। वह उसे बड़ी देर से ढूंढ़ रही थी। उसने सुन लिया था कि वह वजीर हो गया था। परन्तु वह आया नहीं था, इसका उसे खेद था। वह वजीरनी हो गई थी। उसे बुलाना चाहिए। मरद की जात भी क्या, फौरन ही तो भूल गया। ऐसा मौका होता तो वह कभी भूल सकती थी!

पास आई। उसका दिल भर आया। उसने उसके पास बैठकर उसका हाथ पकड़ लिया। ऐसे, जैसे गिरे हुए बालक को मां कुछ खीझती हुई और दया करती हुई ममता से उठाती है। जिसे स्त्री प्यार करती है उसकी भूलों को माफ करना भी जानती है।

'उठ।' उसने कहा : 'प्यारी की हालत खराब है।'

सुखराम ने सुना ही नहीं। तान जारी रखी···

'हाय गही मोरी गोरी ये बैयां,
हौ नही जाऊंगी ऐ मेरी दैया।'

'ऐ!' कजरी चिल्लाई।

पर सुखराम ने उसको पकड़कर गाया :

'हाय गही मोरी गोरी ये बैयां···'

कजरी ने उसके हाथ को झटका दिया। सुखराम ने फिर हाथ पकड़ने की चेष्टा की। कजरी की खीझ बढ़ गई। चिल्ला उठी : 'हरामी! शराब पी के पड़ा है। तुझे लाज नहीं आती?'

'ऐं ऽऽऽ?' सुखराम की चेतना ने जवाब दिया।

'मर गया है तू?' कजरी ने कहा।

सुखराम को धक्का लगा। कहा : 'मर गया? मैं?'

कजरी ने सिर पीट लिया। भागकर गई और पानी में फरिया का किनारा भिगो लाई। लाकर मुंह पर पानी छिड़का। कुछ देर में सुखराम को कुछ होश-सा

आया। कजरी आंखें फाड़कर देख रही थी।

'कुछ ठीक हुआ?' उसने कहा।

सुखराम ने आंखें मींच ली। सिर भिन्ना रहा था।

कजरी ने कहा : 'उठ।'

'क्या है री?' वह जैसे जग गया, और कजरी को देखकर मुस्कराकर उसकी कमर में बांह डालकर बोला : 'आ गई तू! अरी तू अब वजीरनी हो गई है।'

'आग लगे तेरी मस्ती में।' कजरी ने हाथ अलग करते हुए कहा।

'क्या बात है?' सुखराम ने पूछा।

'चल, प्यारी के पास चल।'

'पहले तू तो मेरी सुन ले कजरी। कित्ते दिन से तूने मुझसे मन की बातें नहीं की।'

'अरे हट!' कजरी ने कहा : 'दिन-दहाड़े क्या बक रहा है! कमबखत सब भूल के नट हो गया असल।'

'अरी,' सुखराम ने हंसकर कहा : 'तुझे मेरी तरक्की से खुशी नहीं हुई!'

'बड़ी तरक्की कर ली तूने।' कजरी ने कहा : 'अब चलता है!'

'कहां?'

'डेरे पर।'

'यहां मैं अच्छा नहीं लग रहा हूं! यहीं जो बैठी रह।'

'अभी तू नसे में है।'

'नसे में होगा तेरा बाप।'

'अरे बाप तक न पहुंचियो, कहे देती हूं।'

'क्या कर लेगी?'

'कुछ नहीं करूंगी परमेसुरे,' कजरी ने कहा : 'चलता है कि नहीं। प्यारी बीमार है।'

सुखराम खूब हंसा। बोला : 'वाह री कजरी! अभी तक ठीक थी, अब प्यारी बीमार हो गई। बात का बतंगड़ करना तू खूब जानती है।'

कजरी सकते में पड़ी। क्या करे?

कहा : 'तू चलता है कि मैं जाऊं?'

कजरी उठ खड़ी हुई। सुखराम ने हाथ पकड़कर बिठा ली और कहा : 'अरी चली जइयो। कजरी! मेरी वजीरनी! एक गीत सुना दे मुझे!'

'तेरे मुंह पै आग बराऊं।' कजरी ने कहा : 'देखो नासपीटे को, कैसा मस्ता रहा है। गीत सुना दे मुझे! अरे तो क्या तब उठेगा जब प्यारी की ल्हास उठ जाएगी।'

'खबरदार!' सुखराम ने कहा और तड़ाक उसके मुंह पर चांटा जड़ दिया। कजरी रो पड़ी। उसे गुस्सा आ गया। उसने झटककर उसका मुंह नोच लिया और चिल्लाने लगी : 'सुसरा सराब पी के आ गया है, जरा अकल नहीं।'

दोनों अलग हुए। सुखराम ने कहा : 'और कहेगी तू?'

'सौ बेर कहूंगी। अब चलेगा कि यहीं मरेगा?'

तभी कोई दौड़ा-दौड़ा आया। कजरी का मुख फक् हो गया। पुकार उठी 'क्या हुआ?'

प्यारी की हालत खराब है जल्दी चलो

कजरी ने सुखराम की ओर देखा। सुखराम का मुंह से फट गया

उसने कहा : 'कजरी !'

कजरी रोई। सुखराम ने कहा : 'मुझे माफ कर कजरी····'

वह आदमी बोला : 'जल्दी चलो।'

कजरी ने हाथ खींचा।

तीनों वेग से चल पड़े।

प्यारी ने देखा तो मुस्कराई।

सुखराम बैठ गया। प्यारी में नई शक्ति-सी आ गई। सुखराम ग्लानि से कटा जा रहा था। कजरी ने कहा : 'शराब पी के मस्त हो रहा था तेरा बालम, जिसके लिए तू रात में बिहाल हुई जा रही थी।'

प्यारी फिर मुस्करा दी।

'क्या हुआ तुझे ?' सुखराम ने कहा।

'कुछ नहीं।' प्यारी ने उसे देखते हुए जवाब दिया।

उसकी दृष्टि में अथाह तृप्ति थी, जिसे देखकर सुखराम का मन चंचल हो उठा।

'पेट में बड़ा दरद है।' कजरी ने कहा।

'पेट में !' सुखराम ने चौंककर पूछा। उसके दिमाग में यही बात घूम गई।

'कहां देखूं !'

'वहीं है।' कजरी ने कहा।

छूकर देखा। पता नहीं चला, क्या था। वह समझा नहीं। भूला-सा देखता रहा।

प्यारी ने उसके हाथ को अपने हाथों में ले लिया।

कजरी बैठ गई। कहा : 'जेठी बोलती क्यों नहीं ?'

'अच्छी हूं अब।' प्यारी ने उसे प्यार से देखते हुए कहा। कजरी उसी स्नेह को देखकर झुक गई।

'तुझे ताप है।' सुखराम ने कहा।

'होगा।' प्यारी ने उत्तर दिया।

'ताप तो रात से है।' कजरी ने बताया।

'फिर तूने क्या किया ?' सुखराम ने पूछा।

'मैं क्या करती ! इसने मुझे उठने ही नहीं दिया। कहती थी, ठीक हो जाएगी। अभी हो ही रहा है।'

'होने दो।' प्यारी ने कहा।

'रात मैंने सिकाई की थी।' कजरी ने कहा : 'तू तो दुनिया का भला करने गया था न ? जा हो आ। मैं बैठी हूं यहां। तुझे क्या फिकर कि कोई जीता है या मरता है ! तू भला अब गरीबों की फिकर क्यों करने लगा ?'

'कजरी !' धीरे से प्यारी ने कहा।

कजरी रूठी हुई बैठी रही।

'मेरी ओर देख।' प्यारी ने स्नेह से कहा।

'क्या है ?' कजरी ने मुड़कर देखा।

प्यारी विचलित हो गई। बोली : 'अरी यह क्यों ?'

उसकी आंखों में आंसू भरे थे। कजरी की आंखों का वह पानी बूंद बनकर ढुलक आया। उसे देखकर सुखराम का मन पानी-पानी हो गया। उसे अपने ऊपर बड़ी लाज आ रही थी परन्तु यह समय सोच विचार का नहीं था

तू बैठ जा यहां मैं किसीको लाता हूं कहकर वह उठ खड़ा हुआ

'सुनती है जेठी,' कजरी ने कहा 'क्या कहता है ! तू बैठ जा यहां । जैसे मैं तो घूम रही थी न इधर-उधर !' उसके मुख में दुख के कारण और शब्द नहीं निकल रहे थे ।

प्यारी ने कहा : 'रहने दे छोटी । उसे दुखी न कर ।'

सुखराम उठा और राजा के पास गया । राजा अभी तक मस्त था ।

'राजा जी !' उसने कहा ।

'क्या है ?' राजा ने पूछा ।

'मेरी लुगाई बीमार है । यहां कोई इलाजी है ?'

रानी ने कहा . 'है तो ।'

राजा ने कहा : 'करेला कहा है ?'

करेला को लेकर सुखराम आ गया । उसने पेट सूता । बड़ी पीर हुई, परन्तु करेला कह रहा था : 'नस पर नस चढ गई है । दस्त आए थे ?'

'नहीं ।' कजरी ने कहा ।

'तो नर नही हिला है । वही बात है ।'

और वह फिर सूंतने लगा । अपने सूंतने में वह अंगूठा प्राय: गड़ा देता था और प्यारी दर्द से दांत भींच जाती ।

सुखराम चुपचाप बैठा रहा ।

करेला ने कहा : 'ये दो बूटियां हैं, पीसकर पिला दो ।'

सुखराम पीस लाया । पिला दी । चला गया ।

'कुछ खाएगी ?' कजरी ने उसके गाल पर प्यार से हाथ फेरकर पूछा ।

'नहीं ।'

'हाय, कल से तैंने कुछ नही खाया है !'

'मेरा मन नहीं करता ।'

'मेरी कसम है, दो कौर ले ले ।'

'नहीं खाएगी तो देही कैसे चलेगी ?' रुककर फिर कहा ।

और प्यारी को खाना पड़ा । चार कौर खाए तो ऐंठा शुरू हो गया । लाचार पड रही ।

गांव वालों मे 'ले रोटी खाय ले' की बात इतनी अधिक होती है कि रोग में भी बराबर खाए जाते है । उनका खयाल होता है कि भूखा पेट डालना बुरा होता है । न जाने यह अज्ञान कितनी जानें ले डालता है । सुखराम बाहर आकर बैठ गया था । इस समय वह गम में डूब गया था । उसे कुछ भी नहीं सूझ रहा था । प्यारी सो गई थी या दर्द की ज्यादती से चुप पड़ गई थी, यह पता नहीं चलता था । कजरी धीरे-धीरे उसके पाव सहला रही थी ।

दुपहर की आखिरी झिल्ली उतर गई है और भीतर से वही काली-सी शाम निकल आई है । उसकी उदासी आज काटे खा रही है । सुखराम आज डूबा-सा जा रहा है । इसमें साहस नही हो रहा है कि भीतर जाए और प्यारी के पास जाकर बैठे । वह उसे देखता है तो उसका कलेजा मुह को आने लगता है । वह कराहती है तो आतंक-सा छा जाता है ।

वह मन ही मन भगवान का नाम ले रहा है : 'हे महादेव ! प्यारी को अच्छा कर दे. उसे बचा ले ।'

प्यारी ने आंख खोल दी कजरी ने पुकारा मा जा भीतर वह जग गई है

सुखराम महादेव को ढोक दे उठा : 'भगवान मेरी सुन ली। मेरी सुन ली दीनानाथ ! अरे बमभोले ! तू बड़ा दया वाला है।'

प्यारी ने आंखें घुमाईं। कहा : 'वह कहां है ?'

'बाहर बैठा है।'

उसने क्षीण स्वर में कहा : 'उसे बुला ले।'

कजरी रुआंसी हो गई। बोली : 'नहीं, तू ठीक हो जाएगी।'

प्यारी का मुख शांत था। भव्य। कजरी ने दीया जला दिया था, जिसकी रोशनी उसके मुख पर पड रही थी। उसकी लम्बी आंखें चमक-सी उठी थीं। कजरी ने देखा तो उसे लगा, प्यारी पर एक तेजस्विता आ गई थी। वह उसे देखकर चौंक उठी। कहा : 'तू क्या कह रही है प्यारी !'

'एक बार मेरी भी तो मान ले।' प्यारी ने पूर्ण शांति से उत्तर दिया। उसमे कोई उत्तेजना नहीं थी। आज उसमें कोई भी क्षुद्रता दिखाई नहीं देती थी।

कजरी रोने लगी। उसकी वेदना आज अन्तरात्मा से घुमड़कर आंसू बनकर रिस रही थी। वह जैसे अपने को संभालने का यत्न करती थी, किन्तु आज यह उसके बस के बाहर की बात थी।

'तू अच्छी हो जाएगी प्यारी।' उसने आर्द्र स्वर से कहा।

'अरे क्या है ?' सुखराम ने पूछा।

किसी ने उत्तर नहीं दिया। वह शंकाकुल हुआ।

प्यारी ने क्षीण स्वर से कहा : 'कुछ नहीं।'

'फिर भी तो ?'

प्यारी ने देखा। कजरी ने मुंह छिपा लिया।

'कजरी रोती है।'

'क्यों ?'

'पता नही, पगली है।'

सुखराम झनझना उठा।

'क्यों ?'

'पगली है ! !'

'कजरी ! !'

'पता नहीं ! !'

उससे रहा नहीं गया। वह आतुर हो उठा। भीतर एक उदास सन्नाटा था, वह बाहर नहीं बैठ सका।

अब वह भीतर आया तो प्यारी हंस दी, पर स्वर नहीं निकला। उसने उसे भरी-भरी आंखों से देखा। अपलक। एकटक। गंभीर, परन्तु ममता-भरी दृष्टि से। और कजरी भयातुर-सी सहमी हुई। सुखराम अवाक्, जहां घुटन के पंख निकल आए है, और वह उड़ना चाहती है, पर उड़ नहीं सकती। अथाह निस्तब्धता अब कजरी के नेत्रों से निकलकर सुखराम के मन पर उतरी जा रही है।

'मेरे पास बैठ जा।' प्यारी ने धीमे से कहा।

सुखराम ठिठका खड़ा है। उसका साहस कहां चला गया है ? आज वह कितना दुर्बल हो गया है ! लगता है जैसे उसमें शक्ति बाकी नहीं है। वह प्यारी को देख रहा और उसकी आंखें आज उसको देखती ही रहना चाहती हैं; जैसे वह प्रकृति की किसी अनुपम सत्ता को देख रहा है, जिसका उसे कोई उपमेय नही दिखता, न वह उसका कहीं अन्त ही पा सकता है

कजरी ने कहा : 'यहां आ न !'

वह अवरुद्ध स्वर, उसके भीतर आज आवाहन नहीं है, आज वह उसे रुलाई-सी लग रही है, जो अपने समुचित और संचित रूप में एकत्र हो गई है; वह भावनाओं का मोल-तोल नहीं है, वह मानवीय मूल्यों की भीतरी गहराई है जो कभी-कभी अचानक प्रकट होती है। सुखराम पास आ गया। उसके बैठ जाने पर कजरी धीरे से खिसकी और उसने प्यारी का सिर उसकी गोद में रख दिया।

प्यारी को आज सन्तोष हुआ है। वे घृणा, विद्वेष और ईर्ष्या के शूल कहीं नहीं हैं, सुखराम डाल पर लगा एक फूल है और लेटी हुई प्यारी उस फूल पर जैसे पंख खोलकर एक खूबसूरत तितली चिपक गई है। और फूल निस्तब्ध-सा देख रहा है, तितली अवाक्-सी अपने अन्तस् को भर रही है। इसमें आदान-प्रदान नहीं है, दोनों अपने को लुटा रहे हैं, बांहें तनों को नहीं मनों को लपेटे ले रही हैं, गाढ़ और गहन-आलिंगन में, जो दिखाई नहीं देता, किन्तु जिसका ताप युगान्तर तक की ऊष्मा को अपने-आपमें स्पन्दित कर रहा है।

रात अंधियारी थी।

एक पुरुष था, एक स्त्री थी। दोनों के शरीर की बनावटों में कुछ भेद था। उस भेद ने एक ही मन के दो पहलू बना दिए थे और वे दोनों जीवन-भर एक-दूसरे को समझने की चेष्टा कर रहे थे। परन्तु आज उनका द्वैत हट गया था। वे एक नए प्रदेश में थे, जहां मन का अचेतन अब चेतन बनकर भास्वर हो उठा था। वह दृष्टियों का मिलन नहीं था। वह पूर्ण एकाकार था। प्यारी के बड़े-बड़े नयनों की पलकें अब ढलक-कर आ गई थीं और वे नेत्र उनींदे-से, अधमुंदे-से, अपने भीतर पूर्ण वासना को ले आए थे। वह मादक वासना आज प्रेम की अतीन्द्रिय आभा में डूबकर कितना उन्निद्र-सी हो गई थी; और सुखराम के सीधे नयन पर उसकी भौं तनिक खिंचाव देकर स्तब्ध हो गई थी।

प्यारी के वे लम्बे-लम्बे लगने वाले नेत्र उसको देख रहे हैं, बाहर हवा पर तैरता अंधेरा नहीं रहा, वह सब उसकी पुतलियों में आकर इकट्ठा हो गया है, और उसमें वह तारा चमक रहा है, जो न जाने कितनी-कितनी माधवी निशाओं का खुमार लिए हुए है और स्नेह की गहराइयां आज उठे हुए समुद्र की भांति अनंत रागिणी लिए हुए गूंजती चली जा रही है। कैसा करुण झूमता हुआ स्वर है! उसमें कितनी विभोर आत्मसमर्पण की अंतिम गाथा है! आज बुझता हुआ दीपक जैसे अपनी लौ की अन्तिम दीप्ति में आलोक का समस्त विगत इतिहास फिर से अन्धकार पर लिख जाना चाहता है। इस पूर्ण शान्ति में निर्द्वन्द्व आकाश की भांति पवित्र सम्मोहन है, जिसमें समस्त अतीत की प्रेमस्मृतियां अब इन्द्रधनुष की भांति निकल आई हैं, और मन उन्हें देख-देखकर अपने क्षण-क्षण को दुहराकर अपने को उसी में लय कर देना अपनी सार्थकता की चरम सफलता समझता है। जहां अनुभव के बन्धन छोटे हो गए हैं, जहां ज्ञान के अभिमान दूर हो गए हैं, जहां सृष्टि ने अपनी गहन रहस्य-भरी बात अनजाने ही कह दी है, जहां कुल-कुल करते प्रात-क्षणों के मधुर जागरण से स्फुरित हुए आन्दोलित जीवन से सुरभि लुटाकर फूलों की भांति अपनी मांसल पंखुड़ियों को खोल दिया है, वहां आज मृत्यु पर विजय हो रही है, क्योंकि विनाश की प्रतिपल सन्निकट आती पगध्वनि, चिरन्तन बनी हुई जीवन की इस मोहक तन्मयता को भेदने में असमर्थ हो गई है। न कहीं जड़ता है, न कहीं अवरोध ही दिखाई देता है। यहां गौरव और पराक्रम भी क्षुद्र बन गए हैं, इन सबके ऊपर उठने पर जो तादात्म्य है, वही आज मुसकरा उठा है। बचपन के खेल-कूद में जो धरती में बीज-सा उतरा और किशोरावस्था के प्राथमिक दर्शन में जिसमें यौवन ने

छूकर अंकुर उत्पन्न कर दिए, यौवन में जो शरीरों की बाह्य सत्ता में संभोग बनकर अपनी अधूरी पूर्णता प्राप्त कर सका, डग-डग पर जो जीवन में दो पांवों की भांति चलता रहा, वह प्रेम आज एकत्व की पूर्णता प्राप्त कर गया था। जैसे किसी मकान के सामने अपने कर्तृत्व का अभिमान रखने वाले दोनों हाथ नमस्कार में जुड़कर अपनी अहंमन्यता को खो बैठते हैं, वैसे आज प्यारी और सुखराम के नेत्र मिलकर एक हो गए हैं। आज तक जो था वह सब उपासना का कोलाहल था, प्रबंध था, आज देवता और उपासक सचमुच पास आ गए हैं, एक-दूसरे में अपने-आपको मिटा-मिटाकर प्राप्त करते चले जा रहे हैं।

कजरी देख रही थी। दीया टिमटिमा रहा था। धीरे-धीरे वह बुझने के पहले जैसे एक बार फिर अपनी सारी ताकत से जगमगाने की चेष्टा कर रहा था। अन्धकार को जैसे इस बार वह सदा के लिए मिटा देने को सन्नद्ध हो उठा। प्यारी का मुंह सफेद-सा पड़ चला था।

कजरी सह नहीं सकी। वह आकुल होकर फूट-फूटकर रो उठी। उसके स्वर को सुनकर दोनों चौंक उठे। उनका वह स्वप्न टूट गया। मंगलवेला में जब महल दीपों की आरती सजाकर उठाई तो उस समय क्रूर वायु ने उसे बुझा दिया।

'कजरी!' प्यारी ने डांटा।

परन्तु कजरी नहीं रुकी। वह तो घुमड़ उठी थी और ऐसी बदली थी जो बार-बार कांप उठती थी। कैसे शान्त हो जाती वह! उसे मिट्टी का लोभ पुकार रहा था। क्योंकि मिट्टी मिट्टी को प्यार करती है।

'क्यों रोती है बावरी!' प्यारी ने कहा और कुछ नहीं। जैसे प्यारी ने जीवन के अनन्त सत्यों को खोल दिया था। रुदन और कोलाहल के ऊपर ही मुस्कान और शान्ति है। उन्हीं में तो असली तन्मयता है। परन्तु कजरी की आत्मविस्मृति कितनी पवित्र थी! वह जीवन के प्रति साकार निष्ठा थी। उसकी हिचकी बंध गई थी।

'प्यारी!' कजरी कहती है।

'क्या है छोरी?' वह धीरे से पूछती है।

'जेठी!!!' वह कुछ कह नहीं पाती। उसने तो एक शब्द में अपना सब कुछ उड़ेल दिया है। वह तो रो रही है, वह तो हिल उठी है, वह अपने-आपको पानी-पानी किए दे रही है, उसके सामने उसकी प्यारी चली जा रही है···

प्यारी ने कहा: 'बलमा!'

सुखराम देखता है और करुणा फिर उसके मुख पर सजीव हो उठती है। प्यारी उसे जो कुछ दे रही है, प्यारी उससे जो कुछ ले रही है, वह सब कितना भव्य है! वह सब कितना महान है! सुखराम उसे देख रहा है।

'तू जा रही है?' सुखराम पूछता है, जैसे वह किसी स्वप्न-लोक में है। वह आज स्वयं भी तो अपनी कुण्ठाएं छोड़ बैठा है।

'हां, मेरे बलमा।' प्यारी कहती है। वह स्वीकृति है।

'क्यों?' सुखराम पूछता है।

प्यारी उत्तर नहीं देती, देखती है। उसका मुख ऐसा हो गया है, जैसे शरद् का पूर्ण चन्द्र हो और उसमें से कितना-कितना आलोक न फूटा पड़ता हो, बहा जा रहा हो।

'तुझे इतनी भी दया नहीं?' सुखराम पूछता है, जैसे श्वेत भव्य ताजमहल शारदीय ज्योत्स्ना में भीगा मढ़ा हुआ हो और चुपचाप देख रहा हो अपने भीतर प्रेम की समाधिस्था की अनन्त निद्रा में से जगे हुए दिव्य आसाद को उस बाह्य प्रकाश में

मिल जाता हुआ पहचान रहा हो।

प्यारी मुस्कराई है। वह एक मुस्कान नहीं है, वह जीवन की जय है, जो विनाश के किसी भी पल में घबराती नहीं, अपनी सुसंस्कृत अवस्था को जो इतनी ऊंचाई पर ले जाने का यत्न करती है कि फिर उसे इस परिवर्तनशीलता में भी अपनी मिट जाने की भीति के परे कर दे, क्योंकि वह उसको कल्पों के विराट अन्धकार में एक पल के आलोक में ही पूर्ण कर देना चाहती है!

और कजरी फिर रोती है। वह चिल्लाती है: 'सुखराम! उन्होंने प्यारी को मार डाला···मार डाला···'

सुखराम ने कहा: 'तेरे उसने लात दी थी न? वह मर गया, पर जो बचे हैं उनकी मैं जाकर टांगें काट दूंगा।' वह हठात् जगकर चिल्ला उठा। वह जो अभी तक खोया हुआ था वह प्रेम की पराजय देखने लगा, क्योंकि वह भी प्यारी की भांति ऊंचाई पर नहीं पहुंच सका। उसे फिर सूनापन दिखाई देने लगा। कजरी के हाहाकार में डेरा गूंजने लगा। सुखराम भयाक्रान्त-सा देखने लगा। इस समय वह आवेश में था।

प्यारी दृढ़ थी। उसकी शक्ति क्षीण होती जा रही थी। उसने कहा: 'कजरी मेरे पास आ।'

कजरी रोती हुई आ गई। प्यारी ने उसका माथा चूम लिया। फिर आंसू से भीगा उसका गाल चूम लिया। कजरी का मन कातर हो उठा।

तब प्यारी ने धीरे से कहा: 'बलमा!'

सुखराम स्तब्ध हो गया था।

फिर प्यारी ने कुछ नहीं कहा। वह देखती रही। उसने आज अपने पुरुष से कोई चुंबन की भीख नहीं मांगी। वह क्या कोई अभावग्रस्त थी! नहीं, वह तन्मया, निर्द्वन्द्वा, अपराजिता और चिरंतन तथा पूर्ण थी। वह देखती रही, देखती रही। वे नेत्र फिर मुस्कराए, वह मुस्कान होंठों पर छा गई, वह मुस्कान एक आलोक बनकर विकीर्ण होने लगी, वह लगा जैसे मनोहर फूल खिल गया, वह लगा जैसे निरभ्र आकाश में पूर्ण चन्द्र निकल आया, वह लगा जैसे अनन्त निद्रा में से सौन्दर्य के स्वप्न ने जन्म लिया, वह लगा जैसे अतलांत सिन्धु में से अपनी समस्त श्री के साथ पद्मस्थिता लक्ष्मी का आविर्भाव हुआ, वह लगा जैसे अपनी प्रसुप्त जड़ता छोड़कर सृष्टि ने पहली बार जीवन की चेतना के प्राप्त होने पर आदिनाद किया, वह लगा जैसे कलपों में गहन स्तरों को भेदकर उज्ज्वल सत्य अपने साकार रूप को धारण करके अवतरित हुआ, वह लगा जैसे कोई दिव्य संगीत निर्बाध सम्मोहन बनकर शाश्वत युगों तक के लिए व्याप्त हो गया, और वह मुस्कान फिर स्थिर हो गई, अपलक होकर वह नयनों में जैसे सदा के लिए उजागर हो गई, प्यारी आज सचमुच जी गई।

उस समय कजरी करुण स्वर में रो उठी---'जेठी!'

उसका वह चीत्कार हवा पर टकराया और हाहाकार बनकर अंधकार को ऐसे फाड़ने लगा, जैसे उसे खंड-खंड कर देगा। किन्तु सुखराम स्तब्ध बैठा रहा। उसको हाहाकार सुनाई न दिया। उसे तो वह मुस्कान दिखाई दे रही है जो आज उसमें ऐसी व्याप गई है कि वह अपने को सुखराम नहीं समझता। वह तो प्यारी की महामान्वित अमर मुस्कान बन गया है। उसे नहीं लगता कि प्यारी सो गई है, वह तो उसे शाश्वत जागरण समझ रहा है। उसे लग रहा है जैसे साक्षात् जगदम्बा आकर सामने लेट गई है।

परन्तु कजरी हाहाकार कर रही थ उसकी वह असीम वेदना आप फटी पड़ रही थी उसे सुनकर न[illegible] न [illegible]

एक नट आगे आया।

उसने कहा : 'उठ वजीर ! वजीरनी मर गई।'

'यह झूठ है,' सुखराम कह रहा है : 'प्यारी मुझे कभी नहीं छोड़ सकती। उसने कजरी के आने पर भी मुझे नहीं छोड़ा, वह तो मेरे पास है, मेरे पास लेटी है, उसे सोने दो…'

और कजरी फिर फूट-फूटकर रो उठती है, दारुण स्वर में निढाल होकर, जैसे सब कुछ खो गया है, और सब अंधकार बाहर अट्टहास कर उठा है, वीभत्स भयानक, कठोर…दिगंत व्यापी…।

किसी ने कहा : 'अरी कोई सौत के लिए भी ऐसी रोती होगी…!'

परन्तु वे शब्द व्यर्थ हैं, क्योंकि सुखराम पर्वत की भांति उठा जा रहा है, कजरी हिमखंडों की भांति पिघली चली जा रही है…

प्यारी शांत पड़ी थी।

कजरी ने उसका पांव पकड़ लिया। पांव ठंडा हो गया था।

वह चीत्कार करने लगी।

एक नट ने कहा : 'ओढ़ा दो।'

दूसरे ने उसे ढक दिया।

कजरी को रोते देख औरतें पसीज गईं।

'रो नहीं, री !' एक ने कहा।

'किसका यह दिन नहीं आता !' एक बूढ़ी ने कह ही दिया।

सुखराम बैठा रहा।

'बिचारी बड़ी अच्छी थी !' एक स्त्री ने प्रकट किया।

'अरे मैं मर जाती।' बूढ़ी ने कहा : 'जवान थी, उसे भगवान ने उठा लिया। उसके तो एक बच्चा भी नहीं हुआ। क्या सुख देखा बिचारी ने !'

सुखराम फिर भी स्तब्ध था। अब उसकी दृष्टि जैसे चादर के भीतर से भी प्यारी का मुंह देखे ले रही थी। वह सब उसे स्पष्ट दिख रहा है।

फिर क्या हुआ ? उसे मालूम नहीं।

कौन आया है ? कौन गया है ?

सुखराम नहीं जानता।

बूढ़ी कहती है : 'भगवान को न्याव न आया री, अब तक नहीं आया। कैसी मलूक थी कि देख के दीदे ठंडे होते थे ! उसे उठा लिया, दुनिया में सैकड़ों पापी बाकी हैं।'

कजरी रोती रही। एक स्त्री ने उसे सहारा दिया। कहा : 'अरी तनिक धीरज धर !'

बूढ़ी ने दार्शनिक के स्वर में कहा : 'ऐसा अच्छा घर था, बेरहम ने उजाड़ दिया। सौत-सौत को काटती है, पर यहां दोनों ऐसे रहती थीं जैसे बहिन हों, एक पेट की जाई भी सौत होके दुस्मनाई कर उठती हैं, पर यहां तो भगवान हार गया।'

उसीका बदला ले लिया उसने, काकी !' कोई बोल उठी।

सुखराम बैठा रहा।

उसकी निस्तब्धता को देखकर डर लगता था। बिल्कुल जैसे निर्जीव ! जड़ !

अंधेरी रात बाहर गल गई और एक कोने से आसमान में एक उजाले की झाईं पड़ने लगी थी। आज की शुरुआत रुलाई के झटकों से कांपती हुई आई।

अब सुबह हो गई थी

'अरी बुलाओ न सबको !' बूढ़ी ने कहा।

कोई भाग चला।

बूढ़ी ने कहा : 'रो नहीं कजरी। अपने आदमी की गोद में सिर धरे-धरे मर गई है, इससे बढ़कर सुहाग का सुख क्या है ? देखा तूने उसका चेहरा ! तनिक डर नहीं है।'

राजा आ गया। उसे देखा। क्षुब्ध से सिर हिलाया। बोला : 'इन्तजाम करो अब !'

और फिर वे लोग प्रबन्ध में लग गए। बूढ़ी कह रही थी : 'बड़ी अच्छी थी बिचारी। मरते बखत आदमी को अपने जनम-भर के पाप डराने लगते हैं। देखा है ! ऐसी पड़ी है जैसे मुस्करा रही हो। देवी-सी लगती है ! बड़ी पुन्नात्मा थी बिचारी।'

कजरी का हृदय फटा जा रहा था।

जब लाश उठी तो कजरी डकराकर रो उठी। जीवन की ममता ने संचित स्मृतियों की धरोहर को अन्तिम बार झकझोर दिया और मृत्यु की विकरालता पर जैसे उसने अन्तिम प्रहार किया। योगी जिसे सृष्टि का अनादि नियम कहकर उसे निरासक्त भाव से सहने को उपदेश देते हैं, उसे आज तक मनुष्य की जीवन के प्रति आस्था ने कभी स्वीकार नहीं किया। उसने अस्तित्व के प्रति सदैव श्रद्धा की है। वही उसका रुदन है।

'बेटी ऽऽऽ···' उसका करुण क्रन्दन गूंज उठा।

सुखराम नहीं रोया। वह पीछे-पीछे चलने लगा।

राम नाम सत्त है···

सत बोलो गत है···

और यह स्वर बार-बार बदलते कन्धों पर गूंज रहा था : शाश्वत किन्तु सदैव नवीन !

चिता पर लाश रख दी गई।

उन्होंने आग लगा दी। लपटें धधक उठीं।

सुखराम अपलक देख रहा है। वह नहीं जानता, वह क्या सोच रहा है।

राजा ने चिल्लाकर कहा : 'सुखराम ! चौधरानी में आग लग गई है, देखता है, वह जल रही है !'

'नहीं, राजा जी !' सुखराम का स्वर पीछे से सुनाई दिया : 'वह तो नहीं है।'

नटों ने सांस छोड़ी। कुछ की आंखों में नमी आ गई।

परन्तु सुखराम चुपचाप देखता रहा।

लपटें धक-धक करके उठीं और चारों ओर से अपना ताना-बाना बुनने लगीं। उनमें अदम्य दाह था, जो सर्वनाशी क्रूरता को लेकर इस समय लकड़ियों पर जीभ फिराने लगा था। आज वह अन्त का प्रतीक बन गया था। वह आलोक की मर्यादा को लांघकर आज भस्म करने पर उद्यत हो गया था। उसकी लहर हवा पर व्याप रही थी।

उसकी गर्मी से नट पीछे हट गए।

'सुखराम,' राजा ने कहा : 'पीछे आ जा !'

'क्यों ?' सुखराम ने पूछा।

राजा पास आ गया और उसे खींच लाया।

'क्यों राजा जी ! तुम मुझे उससे दूर क्यों करते हो ?'

'तुझे ताप नहीं लगता ?'

'ताप ? कहां है ताप ?'

और लपटों ने जैसे उस समय हंसकर भीतर के शव को पकड़ लिया। एक नट ने कहा : 'पहुंच गई भीतर !'

दूसरे ने कहा : 'जा रे, जरा कपाल किरिया कर दे।'

एक आगे बढ़ा। उसने थोड़ा घी एक लम्बे करछुल में रखकर सिर को छू दिया। तड़ाक की एक हल्की आवाज़-सी गरजती लपटों में खो गई।

'पहुंच गई।' एक बूढ़े ने कहा।

और उन्होंने कहा : 'बिंदराबन पहुंच गई वह तो।'

'जो रह गए सो रह गए।'

'एक दिन सबको जाना है।'

राजा बढ़ आया। उसकी आंखों में कौतूहल था। वह इस आदमी को पहचानना चाहता था। क्या बात थी कि अभी तक विचलित-सा दिखाई नहीं दिया था ? क्या वह साधु है ? पर वह तो उसे बहुत प्यार करता था, यही तो सब कहते हैं न ?

उसने पास आकर देखा। वही निस्तब्ध गम्भीरता, वही अमर विश्वास। अडिग समर्पण !

'सुखराम !' उसने कहा।

'राजा जी !' सुखराम ने पहचाना।

'देखता है ?' राजा ने कहा।

'क्या है ?' उसने पूछा।

'तू देख रहा है न ?'

'हां।'

'तुझे क्या दिखता है ?'

'सब कुछ देखता हूं।'

'तो तू रोता क्यों नहीं ?'

'रोऊं ? क्यों ?'

'प्यारी मर गई है।'

'नहीं।'

'वह सामने कौन है !'

'प्यारी है।'

'वह आग के बीच में है।'

'नहीं राजा जी ! तुम झूठ कहते हो।'

'वह मर गई है सुखराम।'

'अच्छा ! !'

'तुझे विश्वास नहीं ?'

'नहीं।'

'क्यों ?'

'वह मुझे छोड़कर कैसे जा सकती है !'

'यह भगवान की मर्जी है।'

'आज तक तो मेरे-उसके बीच में किसी और की मर्जी नहीं आई ?'

राजा कैसे समझाए ? एक बूढ़े ने कहा : 'बेचारा सह नहीं सका है।'

दूसरे ने धीरे से कहा : 'कहीं पागल न हो जाए।'

'पागल !' सुखराम ने कहा 'कौन है पागल ?

'कोई नहीं, कोई नहीं,' सबने कहा। वे डर गए थे कि कहीं वह सचमुच पागल न हो जाए। पर सुखराम ने कहा : 'मुझको कहते हो ?' वह हंसा और फिर उसने कहा : 'वह डेरे पर मिलेगी मुझे। वह सबसे पहले लौट गई है।'

राजा सहम गया।

'राजा जी !' सुखराम का स्वर उठा।

'क्या है वजीर ?'

'तुम भी नहीं मानते ?'

'क्या सुखराम ?'

'तुम देखना। वह लौट गई है। मैंने उसे लौटते देखा है।'

राजा का मुख भय से आक्रान्त हो गया।

'तुम क्या जानो ?' सुखराम ने कहा : 'वह मुझसे कभी झूठ नहीं बोली।'

बूढ़े ने सोचा, शायद पुरानी यादें उखाड़ देने से मन सुस्थिर हो जाएगा। उसने पुकारकर पूछा : 'क्या कहती थी वह ?'

'वह कहती थी कि मेरे बिना नहीं रह सकती।'

'पर वह दगा दे गई।'

'तुम झूठ कहते हो।' सुखराम ने उसी तन्मयता से कहा : 'वह सबसे झूठ कह सकती थी, पर मुझपर उसका भरोसा था। तुम क्या जानो, जब मैं छोटा था, तभी से वह मुझे चाहती थी। तब मैं बहुत छोटा था, वह भी बहुत छोटी थी, वह धूल में खेलती थी, मैं इधर-उधर से आते-जाते उसे मार जाता था, तब वह रोती थी। फिर हम दोनों साथ-साथ खेलने लगे थे। और वह मुझे दिक करती थी। मैं उसे मारता था, वह रोती थी, मुझे काट खाती थी। और फिर जिस दिन मेरे मां-बाप मरे थे, उस दिन उसीने मुझे सहारा दिया था। वह मुझे छोड़ जाएगी ? तुम जान जाओगे, और मैं नहीं जानूंगा ? क्यों ? मेरे साथ रहने का क्या उसे चाव न था ?' वह हंसा। वह हास्य बहुत निर्मल और ठंडा था। उसे सुनकर वे सब कांप उठे।

राजा ने कहा : 'चल सुखराम, अब कुछ नहीं रहा।'

'तुम जाओ, मैं नहीं जाऊंगा।'

'क्यों ?'

'प्यारी मुझे दिखाई दे रही है।'

राजा निराश हुआ। सबने हताश होकर देखा और एक-एक करके सब चले गए। केवल राजा रह गया। सुखराम बैठ गया। राजा पास खड़ा रहा।

'राजा जी !' सुखराम ने कहा।

'क्या है ?'

'आज प्यारी बड़ी गहरी नींद में है।'

'मूरख, वह जल रही है, मर गई है, तू समझता नहीं !' राजा ने हारकर कहा।

सुखराम हंसने लगा, कहा : 'ठीक है, मैं नहीं समझता। तुम समझते हो। जानते हो, उसने क्या किया था ? गुस्साई थी। तुम उसे जबर्दस्ती बांध लाए हो। तुम राजा हो। जैसे सब बड़े आदमी निठुर होते हैं, तुम भी निठुर हो, तुम्हें दया नहीं है।'

लकड़ियां चटचटाने लगी थीं। आकाश में धुआं उठा जाता था। भयानक आग थी और सुखराम ने कहा : 'राजा जी !'

क्या

तुम्हें तो याद होगा [illegible] था [illegible] ही था न ?

राजा ने वैसे ही कहा : 'हां, याद है।'

'तुम अच्छे आदमी हो।' सुखराम कहता रहा : 'याद है न ? मैं कितना डर गया था ! मैंने समझा था, प्यारी और कजरी उसी में जल उठेंगी। और मैं भागा-भागा पहुंचा था। पर प्यारी और कजरी दोनों खड़ी थीं। डर तो गई थीं। जली कोई नहीं थी। वह उस आग में नहीं जली थी, तो क्या वही प्यारी इस आग में जल जाएगी ? जानते हो, यह क्या है ?'

'क्या है ?'

'यह सुपना है।'

'सुपना ही है सुखराम !' राजा ने कहा : 'यह सारी दुनिया ही एक सुपना है।'

'प्यारी बड़ी अच्छी है राजा जी।' वह कहने लगा : 'वह कभी मुझसे रूठती है, कभी मान मनाती है; पर मैं जानता हूं, 'वह मुझे बहुत चाहती है। मुझे तो ऐसा लगता है जैसे वह पिछले जनम में भी मेरे साथ ही था। हम दोनों तब शायद हिरन और हिरनी थे। एक झरने पर संग-संग पानी पीने जाया करते थे।'

राजा डर गया। उसे लगा कि सुखराम सचमुच पागल हो गया है। उसकी इच्छा थी कि किसी तरह वह रो पड़े, किन्तु वह नितान्त शान्त था। और यह उसका ठंडापन उसके अथाह दुःख का ही पर्याय था। परन्तु राजा की समझ में नहीं आ रहा था कि वह क्या करे। उसको सोचने में देर लग गई।

'तुम्हें बिसवास नहीं होता !' सुखराम ने उसे जवाब न देते देखकर पूछा।

'होता है।' राजा ने कहा।

सुखराम ने कहा : 'तो वे सब क्यों चले गए राजा जी ? तुम उन सबको सजा दोगे न ? वे सब हमें छोड़कर चले गए ?'

'चलो मेरे साथ।' राजा ने कहा : 'मैं उन सबको सजा दूंगा।'

उसने सुखराम का हाथ पकड़ लिया। सुखराम उठ खड़ा हुआ और बोला : 'राजा जी !'

'अब क्या है ?' राजा ने चलते हुए पूछा।

'देखो किसीको मारना नहीं।'

'नहीं मारूंगा।' राजा उसे लेकर बढ़ चला।

'वे नादान हैं।' सुखराम ने कहा।

दोनों पहुंचे। उस समय कई नट और नटिनी वहां खड़े थे। उनके मुख उदास थे।

'राजा जी !' सुखराम चिल्ला उठा।

'क्या है ?'

'वह देखो !' वह फिर चिल्लाया।

देखा। राजा कांप गया।

सुखराम ठठाकर हंसा। उसका वह भयानक हास्य सुनकर अन्तराल तक थहर उठा। उसमें हृदय की पर्तें तड़क गईं और फिर राजा ने सन्नद्ध होकर आंखें फैला दीं।

द्वार पर कजरी प्यारी के कपड़े पहने खड़ी थी। वह मुस्करा रही थी।

कजरी चिल्लाई : 'बलमा !'

सुखराम हंसता रहा। कहा : 'घबराती क्यों है ? मैं गया ही कहां था ?'

राजा अवाक् खड़ा रहा। वह आज जैसे एक नये लोक में आ गया था। सब स्तब्ध खड़े थे जैसे किसी ने उनपर इन्द्रजाल फैला दिया था

तब राजा की ओर देखकर सुखराम ने कहा राजा जी

'क्या है ?' उसने धीरे से पूछा।

सुखराम चिल्लाया : 'मैंने कहा था न ?'

राजा नहीं बोला।

कजरी और सुखराम गले मिले।

'प्यारी !' उसने कहा। वह स्वर कितना गद्‌गद्‌ था। जैसे बहुत दिन के बाद आज वह अपने आराध्य के पास आ गया, जैसे बहुत दिनों के बाद बटोही को अपनी मंजिल मिल गयी थी।

'हां !' कजरी ने रुआंसे कण्ठ से कहा।

'मैंने कहा था, प्यारी लौट गई है।' सुखराम ने कहा : 'पर ये सब लोग मानते ही नहीं थे। कजरी कहां है ?'

'कजरी ?' कजरी ने कहा : 'वह मर गई !'

तब सुखराम ने आंख फाड़कर देखा। और कजरी की आंखों से धारा फूट निकली।

'प्यारी ऽऽऽऽ !' सुखराम धाड़ मारकर रो उठा और धरती पर सिर फोड़ने लगा और आर्त स्वर से हृदयों को हिलाने वाला चीत्कार करके अब बार-बार पुकार उठा : 'निरदई ! तू चली गई ! तू मर गई ! मुझे भी साथ क्यों न लेती गई !'

और कजरी का रुदन ऊर्ध्व श्वास के साथ खिंचकर उस समय झिझक-झिझक-कर घुटता-घुटता-सा बिखरने लगा।...

राजा पास आ गया।

रानी ने कहा : 'रोके मत !'

राजा रुक गया।

रानी ने कहा : 'वह पागल हो गया था न ?'

राजा ने सिर हिलाया।

रानी कहने लगी : 'उसे तुम ले गए, मैं तो मर-मर गई।'

'क्यों ?' राजा ने पूछा।

'इसका तो रोना ही बन्द न होता था।'

'हाय कैसी-कैसी रोई है !' बूढ़ी ने कहा : 'मेरा तो कलेजा हिल गया।'

'और वह नहीं रोया, रानी।' राजा ने कहा।

'मरद की बात है।' बूढ़ी ने उत्तर दिया।

रानी ने धीरे से कहा : 'मरद नहीं काकी, वह तो पत्थर हो गया था। वह तो और भी खतरनाक है...'

और सुखराम और कजरी का वह रोदन अब भी गूंज रहा था। छोड़कर एक ओर आ गए थे।

राजा ने कहा : 'पर यह प्यारी कैसी बनी ?'

'मैंने बना दिया।' रानी ने कहा।

'सो कैसे ?'

'बहुत रोई, बहुत रोई, तो मैंने कहा कि तू ही रोएगी तो फिर तेरे आदमी को ढाढस कौन बंधाएगा। बस।'

'फिर ?' राजा ने पूछा।

'फिर पीछे पड़ गई।'

'कैसे ?'

'बोली मुझे मरा समझ लो मेरा मरद उसे ही मानता था वह मानने लायक

थी। मैं क्या उसकी बराबरी कर सकती हूं।'

'तब ?' राजा की जिज्ञासा बढ़ी।

रानी ने कहा : 'क्या करूं। मानती न थी।'

'क्या कहती थी ?'

'वह कहने लगी कि सुखराम इसे सह नहीं सकेगा। वह मुझसे ज्यादा प्यारी को चाहता था। कजरी आई है, कजरी चली गई है। मैं प्यारी हूं, आज से मैं प्यारी हूं।'

'अरे !' राजा ने कहा।

'हां,' रानी कहती गई : 'कजरी नहीं मानी। उसने कहा : उससे कह देना, कजरी मर गई। वह नहीं रोएगा। अगर मैं प्यारी बनकर ही उसे सुख दे सकती हू तो क्या है ? क्या एक जिन्दगी उसके लिए मैं प्यारी बनकर नहीं बिता सकती ? और इसने प्यारी के कपड़े पहन लिए और बोली : 'कहो रानी ! मैं प्यारी जैसी लगती हूं कि नहीं ?'

राजा ने कंधे पर हाथ धरकर कहा : 'सुखराम !'

वह नहीं बोला।

रानी ने फिर कहा : 'और फिर इसने सिंगार किया !'

राजा चौंका। पूछा : 'सिंगार ?'

'हां ! कहती थी कि बलमा देखेगा तो क्या रूखी-रूखी-सी जाऊंगी उसके पास !'

पर सुखराम रो रहा था। आज हृदय में से प्रत्येक सिसक प्यारी की स्मृति बनकर रिस रही थी। यह कठिन ग्रन्थि खुलती थी तो अपने साथ कितना विस्तार लेकर घूम-घूमकर आती थी।

रानी ने कहा : 'मन हल्का हो जाएगा।'

राजा ने देखा। उसकी करुणा कराह उठी।

एक वृद्ध बढ आया। कहा : 'राजा जी !'

'क्या है ?' राजा ने पूछा :

वृद्ध ने धीरे से उसे अलग ले जाकर कहा : 'रोको नहीं। इस बखत इसे खूब रो लेने दो।'

'क्यों ?'

'रो लेगा तो पागल नहीं होगा।'

राजा ने कहा कुछ नहीं। देखता रहा। और जो कुछ वह देख रहा था, उसपर उसे आश्चर्य ही बढता जाता था।

कजरी ने गाया —'हाय जेठी। तू चली गई, निरदई भगवान, तूने उसे उठा लिया, तूने उसे उठा लिया, अरे क्या वह अभी से जाने के जोग थी…'

सुखराम ने दोनों हाथों से सिर पीट लिया। कजरी ने अपनी छाती पीट ली। सुखराम ने कहा : 'प्यारी !'

और फिर उस पुकार के साथ वह मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा। कजरी बड़े जोर से चिल्ला उठी।

रात हो गई थी। डेरे में सुखराम पड़ा था। कजरी की गोद में उसका सिर था। जब उसे होश आया, उसने पूछा : 'कौन ?'

'मैं हूं कजरी।'

ने उसे खींचकर छाती से लगा लिया और फिर धीरे स कहा तू ही है कजरी तू तो मुझ छोड़कर न चली जाएगी ?

दोनों फूट-फूटकर रो पड़े।

28

'मैं इसका बदला लूंगा।' सुखराम ने कहा।
कजरी चौंकी। पूछा : 'किसका ?'
'प्यारी की मौत का।' वह दृढ़ था।
'भला कैसे ?'
'तू ठहरी रह।' उसने सोचते हुए कहा।
'मैं तो यहीं हूं।' कजरी ने कहा।
सुखराम ने कुछ नहीं कहा। सोचने लगा।
'जो दुश्मन था वह मर चुका।' कजरी ने कहा।
'वह तो एक था।'
'फिर अब कौन है ?'
'पुलस है।'
कजरी डरी, पर हंसी।
क्यों हंसती है ?' उसने चिढ़कर पूछा।
'हंसू न तो करूं क्या ? तू तो बेवकूफ है।' कजरी ने कहा।
'क्यों ?'
'पुलस का क्या मतलब ? पुलस इतनी है, तू अकेला है।'
'पर उन्होंने प्यारी को मारा है न ?'
'क्यो ? प्यारी उसके पास जाकर बसी भी तो थी। वैसे ही उसके
चाहत भर नहीं सकती थी ?'
'तू प्यारी की बुराई कर रही है, कजरी ?' वह धीमे स्वर से कह
'तू ऐसा मानता है ?'
'नहीं। पर कहते बखत सोचती नहीं।'
'मैं सब सोचती हूं,' कजरी ने कहा : 'पर अपनी सकत भी देख
ता है ?'
'मैं कुछ नहीं हूं, मैं निबल हूं, तू यही कहना चाहती है न ?'
उसने कजरी की आंखों में झांका।'
'नहीं,' कजरी ने कहा : 'पहाड़ कोई आदमी नहीं खोदता, सब मि
।'
'पर हमारे साथ तो कोई नहीं।'
'कोई नहीं ? तभी कहती हूं : नहीं है, तो जैसे पी जाते हैं, वैसे
जिस जगह कोई चारा नहीं, वहां अगुआ बनें, सो क्या हमें ही
ी है ?'
उसके तर्क में सत्य था।
कजरी ने फिर कहा : 'तू चला जा। तू कुछ कर। पर वे तुझे पकड
देंगे। फिर तुझे फांसी दे देंगे। कुछ भी नहीं होगा। कोई ऊंच जात
होता तो असर भी पड़ता। तू नहीं रहेगा तो किसीका कुछ नहीं
या अंधेरी हो जाएगी।'
वह कह न सकी

पर उसने सत्य कहा था।

सुखराम ने कहा : 'कजरी ! तुझमें यह सब विचार कहां से आ गया ?

कजरी ने कहा : 'भाग से बडा कोई नही। बता, इधर आए हैं तब से हाथ हिलाना पड़ा है कुछ ? प्यारी के रुपये भी खतम हो चले है। पेट के लिए तूने कुछ सोचा है ?'

'नहीं, कजरी।' सुखराम ने कहा।

कजरी ने कहा : 'फिर खाएगे क्या ?'

सुखराम सोचने लगा। कहा : 'अभी तीस रुपये है। बहुत है। तब तक कुछ न कुछ आ ही जाएगा।'

'क्यों ?' कजरी ने कहा . 'बैठे-बैठे आ जाएगा ?'

'और नट कहां से लाते ?'

'चोरी करते है। नटिनी कमाती हैं।'

सुखराम क्षण भर सोचता रहा।

'खतरे का काम है,' कजरी ने कहा : 'पर चोरी करना बुरा नहीं है। न करें तो करें क्या ? पर मुझे यह सब नही भाता। ये अच्छे काम नही। अभी रुपये हाथ मे हैं तो चल अहमदाबाद निकल चलें। वहां कमाकर खाएंगे।'

'वह परदेस है।'

'हुआ करे। यहा सब बिरादरी है, पर कोई मुह में तो रोटी नहीं धर जाएगा ?'

'हम तो राजा की सरन हैं।'

'राजा खुद भूखा नही है ?' कजरी ने पूछा : 'वह क्या पेट भर देगा ?'

'तू तो वैसे ही डरती है !' सुखराम ने टाला।

कजरी ने कहा : 'मैं क्या डरती हूं, तू खुद डरता है। तू सोचता है, और सोचकर भी अन्त नही पाता तो घबरा के सोचना नहीं चाहता।'

'तू ठीक कहती है।'

'फिर ले चलेगा न ?'

'पर मैं डरता हू।'

'क्यों ? मै क्या बैठी-बैठी खाऊंगी ? अरे तू देखियो, मैं भी मजूरी करूंगी।'

'नही कजरी।'

'क्यों ?'

'कहीं तू भी चली गई तो ?'

'मै कहा जाऊंगी ?'

सुखराम की आंखें भीग गईं। वह बाहर देखने लगा। आसमान उजला था। डेरे में सुस्ती थी। कजरी को प्यारी की याद आ गई, और फिर ध्यान आया। सुखराम उसी ओर इंगित कर रहा है।

'तू न डर,' कजरी ने कहा और फिर धीरे से बडबड़ाई : भाग की बात कौन जानता है कमेरे !'

कजरी रो दी।

सुखराम की चेतना सुस्थिर हुई। कहा : 'तू रो नहीं कजरी।'

कजरी ने आंसू पोंछे।

'हम क्या सोचते थे और क्या हो गया !'

की मरजी कजरी ने उत्तर दिया

तब सखराम ने कहा मैं गाव जाऊगा

'क्यों ?' कजरी चौंकी।

'मैं ऐसा काम करूंगा कि कोई जान ही न पाएगा, और बदला भी चुक जाएगा।'

'मैं भी चलूंगी।' कजरी ने कहा।

सुखराम ने कहा : 'मैं जल्दी आऊंगा। तू फिकर न कर। काम ऐसा चुपके का है कि कानोकान खबर न होगी।'

कजरी ने कहा : 'और किसीको पता न चल जाए ! !'

'चल जाएगा तो पुलिस न पकड़ लेगी। अब डर नहीं ?'

'नहीं।'

'क्यों ?'

'मैं जानती हूं, तू बड़ा चालाक है। तुझे कोई सहज ही पकड़ नहीं सकता। जेल में से भागा है तू करनट ! आज तक नहीं पकड़ा गया।'

सुखराम हंसा। कहा : 'और तलाश करूंगा कि हरनाम का खून किसपर लगा। मैंने तुझे बताया, निरोती पकड़ा गया था !'

'कहां, कुछ तो नहीं।'

सुखराम ने पूरा किस्सा सुनाया। सुनकर कजरी डर गई।

'क्यों ?'

'वे पकडकर मारते हैं !'

'तो उनके हाथ में मैं आऊंगा कब ?'

'तुझे मेरी सौगन्ध है।'

सुखराम ने कजरी की आंखों में आंखें डालकर देखा। वह हंस दी।

सुखराम जब चला तो शाम हो रही थी। वह [illegible] से उतरने लगा। किसान अपने बैल हांककर घर चले गए थे। ग्वारियों के ढोरों से उठी धूलि बैठ चुकी थी। वह जब चन्दन के द्वार पर पहुंचा, रात पूरी उतर आई थी। वह गांव के बाहर-बाहर चलकर वहीं पहुंच गया। चन्दन गाव के बाहर ही रहता था क्योंकि वह मेहतर था। उसके घर के पास ही गांव का घूरा गिरता था, जिसके भीतर तक सूअर घुस जाते। पास ही एक बड़ी नाली थी जिसमें से सड़ांध आया करती थी।

सुखराम को भी बदबू आई। परन्तु उसके भीतर विद्वेष था। वह उसे व्याकुल कर रहा था। घृणा मे बहुत बड़ी अन्धी शक्ति होती है, क्योंकि वह मनुष्य को बहुत-सी विकृतियों की ओर खींच लेती है। वहां तर्क के ऊपर मनुष्य का कलुष जाग उठता है।

घृणा जब समर्थ में आती है तो वह वीरता बनती है। किन्तु जब निर्बल में वह जगती है तो बिना पानी की मछली की तरह तड़पने लगती है। वह एक लोहा होता है जो हृदय को काटने लगता है। निर्बल मनुष्य को घृणा सांप के जहर की तरह व्याप जाती है। वह उस समय सब भूल जाता है। उसका एक ध्येय होता है कि किसी तरह उसका काम हो जाए, ताकि उसके बाद वह अपनी विकृत और जघन्य प्रतिहिंसा की तृप्ति में नीचता से हंस सके। और इस तरह के काम में किसी को माध्यम बनाना चाहता है।

सुखराम का असल में यही हाल था। उसे तो क्रोध था। दरोगा से वास्तव में उसकी शत्रुता नहीं थी। परन्तु उसके भीतर अपनी ठकुराई का एक सुप्त अहं था, जिसको दरोगा ने ठोकर दी थी। निरोती गिरफ्तार हो चुका था, हरनाम मर गया था, दरोगा पर ठाकुरों ने [illegible] चला दिया था यह सब [illegible] ने रास्ते में अपनी परिचित उसी चमारिन से पूछकर जान लिया था, तब चंदन के द्वार पर आया था

जब मन ने तर्क किया तो उसके उस आहत अहं ने कहा था कि तू ठीक कर रहा है, खचेरा के खानदान का बदला जरूर लेना चाहिए।

चंदन की पांच बीवियां थीं। वह दिन-भर बैठा रहता और औरतें दिन-भर काम करतीं। जिसपर तुर्रा यह था कि वह उन्हें काम ठीक से न करने पर हरामखोर कहकर गालियां देता था। औरतें उसका अदब करती थीं। उसके सामने कोई नहीं बोलती थी। चंदन की हरएक स्त्री के सन्तान थी और वे सन्तानें भी माताओं के साथ काम करती थीं। चंदन की भौं जरा चढ़ी रहती। वह मस्त आदमी था। अपने काम से काम रखता। कर्ज लेता तो मागने से पहले चुका देता और अगर किसी ने माग लिया तो चंदन की आबरू बिगड़ जाती थी।

वह साठ के करीब था पर उसमें बुढ़ापे का एक ही लक्षण आया कि कान के पास के बाल सफेद हो गए थे, वरना उसकी खाल खिची-खिची थी और चारों ओर से एक चिकनापन दिखाई देता था। उसके कपड़े उसके शरीर पर फंसे-फंसे-से आते। उसकी काली घनी मूंछें उसके मुंह पर पड़ी रहतीं जैसे पानी में सरकंडों की आडी-तिरछी छाया पड़ गई हो। और उसकी भद्दी मोटी नाक उस पर ऐसे जमी बैठी थी, जैसे उसके वजन से ही वे फूले जैसी मूछें फैल गई हों।

उसका काला भुजग रंग था, पर छबीला इतना कि एक दिन बड़े जमींदार ने जब उसे पांच पोशाक दी, तो पहनकर फूला न समाया और गांव के बाजार में सारे बनियों को भिभोड आया कि साले बनियाबांटू ! तुम क्या दोगे ! जो रईस है, देने को उनका ही हाथ उठता है, और इस प्रकार वह अपने दाता के विरुद्ध विष के बीज बो आया था।

मोटा हट्टा-कट्टा वह भारी आवाज का आदमी देखकर ही क्रूर लगता था। परन्तु वह ऐसा था नहीं। हृदय का कोमल था। जब उसकी बहुएं आपस में लड़ती थीं तो वह पहले तो चुप रहता, फिर बडप्पन के लिहाज से कभी बड़ी की तरफ बोलता, कभी जवानी के लिहाज से छोटी की तरफ। बीच की बहुएं अब उसके लिए बेकार थीं।

उसकी आंखें सुर्ख रहती थीं। एक तो बहुत काले आदमी की आंखें वैसे ही कुछ सुर्ख होती हैं, फिर शराब का शौक तो उन्हें और भी ललाई दे देता है। उसकी औरतें शराब पीकर मस्त हुए पति को देखतीं तो मुस्कराती। वे सुरीली आवाज में गातीं और उसको सुनकर चंदन कहता : 'सुसरियो ! खूब गाओ, खूब गाओ ! अब के फगुआ लेने जाओ तो ऐसा गाना कि जमींदारनी खुश हो जाए।'

शराब चंदन के जादू-टोने से सम्बद्ध थी। चंदन प्रसिद्ध टोनेबाज था और मर-घट तो उसका घर समझा जाता था। उससे गाव के बड़े लोग भी डरते थे। भूतों का ठेका मेहतर और धोबियों के हाथ में ही होता है।

उसने पेड की छाया में शराब उंडेली कि दुनिया आकर कुल्हड में बैठ जाती। और फिर वह भद्दे स्वर में गाता—

'ऐ तेरे बैना मोहे सुहाए···'

और अपने गर्दभस्वर से सुरीली आवाज के बारे में वह ज्यों-ज्यों कल्पना करता, राहगीर और बिगडते। प्यासी कोरी चौधरी कहलाता था। साढे चार फुट का पतला सा आदमी, आंख का अंधा कि एक झलक-सी दिखाई देती। राह चलता जानवर तो दीखता, पर बहुत ही करीब जाने पर उसे गाय और भैंस का फरक पता चलता। वह ठिठककर एक दिन रुक गया था।

चंदन ने देखा तो पुकारा 'आओ चौधरी !'

क्या है ? चौधरी ने पूछा कौन चदन है ?

'हां, चौधरी।'

'क्यों रोकता है मुझे ?'

'आओ, अद्धा खोल डाला है, ढालू कुल्हड़ में ?'

चंदन शराब के नशे में मस्त था। चौधरी ने मां से प्रारम्भ किया और पांचों बहुओं का सम्बन्ध जोड़कर एक बार गाली दी और फिर बड़बड़ाता चला गया। चंदन को कुछ नहीं व्यापा।

चंदन की आदत थी कि जब उसे रुपयों की जरूरत पड़ती तो मालिक के घर जाता और झाड़ू स्वयं हाथ में लेता। इधर-उधर करके कई बार उनकी नजर में पड़ता और अन्त में सलाम करता। वह उस दिन पैसे लेकर लौटता। जमींदारनी से उसने कई बार बहुओं के लिए कपड़े मंगवाए थे। बड़ों की रईसी को मीठी चुनौती देता और काम निकाल लेता।

सूअर पालना उसका धन्धा था। उनके बाल बेचता। कुछ नट भी उससे खरीद ले जाते और बड़े कस्बे ले जाते जहां से इकट्ठा होकर वह सब माल शहरों में चला जाता जहां से वे बाल विलायत के कारखानों में चले जाते। जब कहीं चंदन ने यह सुना कि उसके सूअरों के बाल विलायत जाते हैं, तब से उसे लगने लगा कि विलायत की आधी जायदाद अपने पास रख छोड़ी है।

सुखराम ने कहा : 'चंदन हो !'

छोरी निकली। पूछा : 'कौन है ?'

'अरे चौधरी है ?'

'है। क्या काम है ?'

'तू कह दे, कजरी का आदमी आया है।'

वह अपना नाम नहीं लेना चाहता था। कहीं कोई सुन ले तो खतरा जो पैदा हो सकता है। छोरी भीतर चली गई।

चंदन कच्चे कोठे से निकल आया। बोला : 'कौन है ?'

सुखराम ने पास आकर कहा : 'राम-राम।'

'अरे तू है बेटा !' चंदन ने कहा : 'बैठ-बैठ। अरी छोरी, हुक्का ले आ !'

'अरे नहीं, नहीं,' सुखराम ने कहा : 'मैं तो चिलम पीता ही नहीं, बीड़ी पीता हूं।'

चंदन अपने में मस्त था। बोला 'जाने दे, जाने दे।'

वह जानता था कि वह उसके घर का नहीं पिएगा, पर उसकी आदत और थी।

बोला : 'कैसे आया ?'

'एकांत का काम है।'

'चल उधर।'

एक पेड़ के नीचे दोनों बैठे। सुखराम ने कहा : 'यह दरोगा बड़ा तंग करता है चौधरी। तुम ही बचा सकते हो।'

'सो कैसे ?'

'अरे अब लगे न भोले बनने, इतना जंतर-मंतर जानते हो। डाकिन तुम्हारे पास आती है, बैताल तुमने सिद्ध किया है।'

'अरे नहीं !' चंदन हंसा। सुखराम ने कहा : 'भला बताओ।'

क्या-क्या ?'

तू पक्का होके आया है ?

'बिलकुल।'

'तो मरघट में एक लुगाई ले चल।'

'लुगाई ?'

'हां, हां, काम आएगी।'

'क्या काम ?' सुखराम ने अचकचाकर पूछा। वह तो इसकी कल्पना भी नहीं करता था।

'मैंने तो पांचवीं को फंसाया था।' चंदन ने कहा: 'फिर ब्याह करके डाल लिया। खूब काम करती है। उसके अब तीन बच्चे हैं।'

सुखराम का गला सूखने लगा। उसने कहा: 'औरत मंतर में क्या करेगी ?'

'अरे तू क्या जाने!' चंदन ने कहा: 'लड़का है अभी। यह जंतर-मंतर की बात है। बहेलिन है एक, मढैया के परे रहती है। उसका बाप अंधा है। वह आजकल इधर-उधर जवान यार करती रहती है। मैं जानता हूं। उसे ले आ।'

'ले तो आऊं, पर उससे काम क्या होगा ?'

'उसे नंगी करके मरघट में शराब पिलाकर···'

'नहीं, नहीं,' सुखराम ने कांपकर कहा: 'नहीं काका।'

'नहीं काका!' चंदन ने आश्चर्य से कहा।

'मुझसे न होगा ये!'

'क्यों, तू मरद नहीं है ?'

'अब तुम यही समझ लो कि मैं मरद नहीं हूं। मुझे तो यह सोचकर ही डर लगता है। काका! यह तो बड़ी डरावनी बात है। मेरे तो रोयें खड़े हो गए!!'

'तो फिर रकम लाया है ?' चंदन ने चिढ़े हुए स्वर से कहा।

'कैसी रकम ?'

'खर्चे की।'

'वह मंजूर है।' सुखराम ने कहा: 'काहे में लगेगी ?

'भजन-पूजा में।'

'हां। यह ठीक है।'

'अबे यह रास्ता जरा कठिन है। उसमें तो डाकिन तुझसे बोलती, और फौरन काम हो जाता।' पर सोचकर कहा: 'तू जरा हिम्मत नहीं कर सकता ?'

'क्यों नहीं कर सकता ?'

'तो तू बहेलिन को···'

'नहीं-नहीं, काका,' सुखराम ने कहा: 'वह नहीं, दूसरा तरीका ही ठीक रहेगा।'

'वरना पचास रुपये लगेंगे। सोच ले।' चंदन ने आंखें गड़ाईं, 'उसमें पन्द्रह रुपये में सब हो जाएगा। बहेलिन ज्यादा से ज्यादा तीन रुपये ले लेगी।'

'काका पांव पड़ता हूं।' सुखराम ने कहा: 'वह तो बात छोड़ दो।'

'तेरी मर्जी।' चंदन ने पुकारा: 'छोरी! हुक्का नहीं लाई ?'

'लाई!' छोरी ने आवाज दी।

सुखराम ने झट बीड़ी सुलगा ली कि कहीं पीने को न कह दे। धरम सारा बरबाद हो जाएगा।

लड़की हुक्का दे गई। चंदन ने नली में मुंह लगाया।

पचास लगेंगे ? ने कहा

रकम कण्टान चंदन ने सिर हिलाया

कुछ कसती कर लेते ।

'यार मेरे ! जोखों का काम है ।'

'तो फिर ला दूंगा ।'

'शाबाश !' चंदन ने कहा और फिर हुक्के से मुंह लगाया ।

'पर काम हो जाएगा ?'

'पछाड़ खाके गिरेगा नीचे ।'

'कब ?'

'इधर मेरी तलवार चलेगी, उधर उसका हिया धड़क के बन्द हो जाएगा ।'

सुखराम को चैन मिला । उसने कहा : 'तो रात को ला दूंगा दो घंटे में ।'

'जा, ले आ ।' चन्दन ने धीरे से कहा : 'आजकल बोहरे लल्लू के घर माल है ।'

'तुम्हें कैसे खबर ?'

'हमें खबर न हो भला ! उसका भतीजा सब माल हथियाना चाहता है, मुझसे मंतर करवाने आया था । मैंने मना कर दिया ।'

'क्यों ?'

'बनिये का लड़का है । कच्चे दिल का । जो किसीसे पीछे मेरा नाम ले दिया तो मेरी गिरस्ती कौन संभालेगा ? मेरे बिना कोई इनमें से काम करता है । सुसरिया हाथ पर हाथ धरे बैठी रहती हैं ।'

'सो तो है,' सुखराम ने बिना किसी दिलचस्पी के सिर हिलाया, हां में हां मिला दी, क्योंकि इसमें उसका कुछ बनता-बिगड़ता नहीं था ।

सुखराम अंधेरे में छिपता हुआ चल दिया । बोहरे लल्लू की बाजार में दुकान थी । जब निठल्ले लोग आकर बैठ जाते और अपनी दुकानदारी में उसे फरक नजर आता दिखाई देता, तुरन्त डांट फटकारकर झाड़ू लगाने लगता और सबको भगा देता । वैसे वह मीठा आदमी था, पर जब पैसे की बात आती तो आंखें तुरन्त बेपानी की हो जातीं और लगता कि उसमें दया ही नहीं । किफायत का यह हाल था कि घी में पड़ी मक्खी को निचोड़कर फेंकता । दुकान से वह लौटता तो दस-एक बज जाते क्योंकि अड्डे के पास दुकान थी जहां लोग देर तक रहते । वह बड़ा सगा आदमी था । कानों पर चूंकी धोती नीचे रहती, अधमैला कुर्ता ऊपर पहनता और पांव में चमरौधा पहनता जिसमें जगहों पैबन्द लगे होते । उसे देखकर कोई नहीं कह सकता था कि वह बोहरा था । उसकी लम्बी-लम्बी मूंछों का हिलना तो तब बड़े मजे का था जब वह कटकटाता था लेता था और लौटता बाद में था, पहले डंडी मार लेता था । बाहर से खड़े होकर भीतर की आवाज ऐसे लगाता जैसे ओऽऽऽ की बांग देता हो और फिर माला उसकी उंगली में ऐसे चलती कि देखने वाले आश्चर्य करते । बराबर सटासट घूमती चली जाती थी और उसके घूमने की फुर्ती देखकर लगता था कि उंगलियां घूम नहीं रही हैं । माला अपने आप नाच रही है । फिर एक टांग पर खड़े होकर वह प्रार्थना करता ।

सुखराम ने बोहरे लल्लू की दीवार में सेंध लगा दी । यह काम आज वह पहली बार कर रहा था । परन्तु जान का खतरा भी था । कोई नहीं आया, सुखराम ने काम पूरा कर लिया और भीतर घुस गया ।

सामने ही घड़े रखे थे । उस कोठे में उस समय कोई नहीं था । सुखराम उन्हें टटोलने लगा । एक घड़े में उसे दो हंसलियां मिलीं । उसने रख दीं । अगले घड़े में रुपये थे । उसने धीरे से उठाए । दोनों मुट्ठियां दो बार भरीं ।

सुखराम रुपये लेकर भागा ।

जब वह बाहर आ गया तो उसने इधर उधर देखा दिल धड़क रहा था वह

तीर की तरह भाग चला।

भीतर शायद कोई आया, उसने देखा तो हल्ला किया। सब आए देखा। परन्तु अब क्या हो सकता था! सेंध लगाने वाले ने उस्तादी की थी। तिरछी सेंध लगाई थी, जिसमें आवाज कम होती है।

गांव में हल्ला हो गया। बात फैलते कुछ देर नहीं लगी।

गांव के बाहर आकर सुखराम ने पग संभाले और वह चन्दन के पास जा पहुंचा। चन्दन पेड़ के नीचे सो रहा था। कुछ देर बाद सुखराम ने खांसा।

'अरे कौन है?' चन्दन ने पूछा।

'कोई नहीं।' सुखराम ने कहा: 'मैं हूं चौधरी।'

'लो काम हो गया।' सुखराम ने निकट बैठकर कहा।

चंदन कंठ के भीतर हंसा, और वह हंसी बड़ी अजीब थी जिसमें से 'ह' और 'स' का मिला हुआ शब्द बाहर निकल रहा था। चंदन ने अपने हाथ फैला दिए।

सुखराम ने चंदन के सामने रुपये धर दिए।

'कितने हैं?' चन्दन ने पूछा।

'तुम गिन लो।'

चन्दन ने गिने। कहा: 'अस्सो हैं।'

'तुम ही रख लो सब।' सुखराम ने कहा: 'मुझे नहीं चाहिए। तुम चौधरी ठहरे, मुझे नहीं लेने।'

'बस, कल रात चलेंगे।' चौधरी ने कहा: 'अब तू जा।'

'कल कब आऊं?'

'आज जब आया था तभी।'

'आज क्यों नहीं चलते?'

'इस बखत?'

'हां।'

'तो चल। उसे आवश्यकता से अधिक मिल चुका था। रुपयों की शक्ति ने चन्दन को घिस दिया था।

धीरे-धीरे रात घनी हो गई थी। चन्दन ने एक मुर्गा ले लिया और कुछ सामान अपनी पांचवी बीबी से इकट्ठा करवाया। वही उसके इन कामों में पक्की मदद करती थी। चलने लगा तो बहू ने कहा: 'आज क्या इरादा है?'

चन्दन ने बहू को लाड़ किया। पांच रुपए उसे दे दिए। सत्ताईस साल की औरत थी। अभी तक अकेले में घूंघट मारकर गाती और नाचती थी। चन्दन का बड़ा लड़का उससे सिर्फ पांच साल बड़ा था। रुपये देखकर उनकी भी चिन्ता कम हो गई।

चन्दन ने कहा: 'डरै मत?'

वह बोली: 'सो क्या तुम्हें जानती नहीं?'

चन्दन बाहर आ गया।

चुपचाप वे दोनों निकल चले।

सुखराम ने कहा: 'अब क्या करोगे?'

'अब तू फिकर क्यों करता है?'

'तो पूछूं भी नहीं?'

'क्या करैगा पूछकर?'

इस सवाल में सुखराम चित आया बोला ऐसे ही दिल नहीं मानता

डरता होगा?

'हां, थोड़ा-थोड़ा।'

'क्यों ? मरघट थोड़े ही जा रहे हैं !'

'फिर कहां चलेंगे ?'

तभी बगल की तरफ से दो आदमी आते दिखाई दिए। उनके पास कंधे तक के के ऊंचे लट्ठ थे।

''कौन है ?' एक ने पूछा।

'हम हैं।' चन्दन ने कहा : 'इसी गांव जा रहे हैं।'

दुर्भाग्य से वे भी उसी गांव को जा रहे थे।'

किसके घर जाते हो ?'

'बिरादरी में। मदन भंगी को जानते हो ?'

सुनने वाले जरा हट गए। कहीं छू न जाएं ?

'हम भी वहीं जाते हैं।' उनमें से एक ने कहा : 'चलो, साथ हो जाएगा। अंधेरी रात है।'

चन्दन चकराया। बोला : 'हां, हां चलो, बड़ा अच्छा रहा। मेरे संग का यह लडका वैसे ही डर रहा था। तुम जानो अंधेरे मे देवता निकलते है न ?'

दोनो आदमी सकपकाए। एक ने कहा : 'तुमने देखा है कभी ? हमने तो कभी नही पाया।'

'नही पाया होगा।' चन्दन ने कहा : 'भाग अच्छे होंगे। हम तो गांव से निकले ही थे कि एक तमाकू मांग रहा था। पूछो इस छोरे से।'

'क्यों ?' एक ने पूछा।'

सुखराम झूठ बोलने मे हिचकिचाया तो 'हां-हां' का स्वर घुटा-घुटा सा निकला। उन्हें लगा, अभी तक डरा हुआ है।

एक ने पूछा : 'रात को कैसे जाते हो ?'

'अरे जरा रूखड़ी-ऊखड़ी लेते जाएंगे जंगल से।' चन्दन ने कहा।

'क्यों भला ?'

'दवा-दारू के काम आएगी, और क्या !'

'तुम भी अमावस की रात को निकले हो ! क्या दीखेगा ?'

हमें न दीखेगा तो रूखड़ी का देवता आप दिखाई देगा।'

दोनों फिर डरे। हवा के चलने से गूंज उठती थी। चन्दन ने सुखराम को इशारे से नोचा। सुखराम अचानक चौंक उठा। चंदन धरती पर पड़ा किच्चा रहा था, चिल्ला रहा था, 'परमेसुर छोड मुझे, अरे तू नहीं मानता'''।'

दोनों ने देखा। चन्दन चिल्लाया : 'जै भवानी की। टं-टं-टं-टं-टं कबीर, हुत ज्ञान बुद्धि जै, टं-टं-टं-टं'''।'

उसका वह रूप देख सुखराम भागा। उसे लगा उसपर भूत आ गया था। उन दोनों ने जो देखा कि साथी ही भाग चला तो वे भी भागे। जब वे भाग गए तो चंदन उठा और लौटा।

उसने पुकारा : 'अबे कहां भाग गया ?'

पेड के पीछे से सुखराम निकलकर आ गया और हंसा। कहा : 'खूब बनाया !'

'सुसरे संग ही लगे जाते थे।'

चंदन ने चामड पर दीपक चढाया। दीपक का आलोक फैल गया और एक सकण्ड मे 1 लाख 86 हजार मील चलने वाला प्रकाश उन दोनो भागते हुओं को भी

दिखा। वे डरकर और भी भाग चले।

चंदन ने कहा : 'तू डरता तो नहीं ?

'क्यों ?' सुखराम ने कहा।

'हां ! हिम्मत रखना, भला !' चंदन ने कहा।

सुखराम ने देखा, चंदन ने कपड़ा खोला और देवी की मूर्ति के सामने ही मुर्गा पकड़कर बांध दिया।

उसने आलथी-पालथी लगाई और कहा : 'तू हटकर बैठ जा। जा बीड़ी पी ले।'

'तुम क्या करोगे ?' सुखराम ने कांपते स्वर से पूछा।

'मैं ? अब देवी बोलेगी !'

सुखराम ने मूर्ति की ओर देखा और उसे जब लगा कि वह बोलेगी तो वह डरा। क्या करेगा वह तब ? कैसे सह सकेगा सब ? उसे तो हिम्मत हारती हुई नजर आई।

'कौन है तेरा दुश्मन ?'

'दरोगा है।'

'हांडी छोड़ता हूं,' चंदन ने कहा : 'उसके बीवी-बच्चे हैं ?'

'हैं।'

'वे क्या करेंगे ?'

सुखराम क्या जवाब दे ? चुप रहा।

'उनका दुख पाप बनकर तुझ पर चढ़ेगा। तू तैयार है ?' चंदन ने कहा : 'समझ ले, पर बचाने वाला और भी बड़ा है। अगर उसकी मरजी होगी तो वह मर जाएगा, अगर नहीं होगी तो कोई कुछ नहीं कर सकता।'

सुखराम स्तब्ध खड़ा रहा।

चंदन ने कहा : 'वह सबके ऊपर है। अपनी तबीयत से दुनिया को चलाता है।'

'तो किस्मत की बात हो गई। काम न होगा तो क्या होगा ?'

'हांडी लौटेगी तो मुर्गा काट दूंगा।'

'क्यों ?'

'वरना वह छोड़ने वाले पर आकर फटेगी और वह मर जाएगा।' चंदन ने कहा : तभी मैंने कहा था, बहेलिन ले आता तो उसे पागल करवा देता, न पाप लगता, न डर रहता। किसी की जिन्दगी लेने का क्या नतीजा भोगना पड़ता है, जानता है ?'

सुखराम का दिल धक्‌धक् करने लगा। कहा : 'नहीं।'

मरते वखत तुझे कोढ़ हो जाएगा और तू गल-गल कर मरेगा।'

सुखराम के रोंगटे खड़े हो गए।

और चंदन ने कहा : 'तू अगले जनम में सूअर बनेगा।'

'रोक दो यह पूजा।' सुखराम ने कहा : 'मुझे यह बदला नहीं लेना है।'

'यह कैसे हो सकता है ?' चंदन ने कहा : 'मैया के थान पर आ गए अब तो। अगर मैया को मंजूर होगा तो तेरा काम हो जाएगा।'

'तब भी पाप मुझे लगेगा ?'

'अबे तब आधा रह जाएगा।'

'तब क्या होगा ?'

आखिरी वखत में तू सड़ जाएगा

'तो छोड़ दे यह काम।'

'तू छुड़ाने वाला है कौन,' चंदन ने कहा : 'अगर मैया को ही म
तो आप बिघन डाल देगी।'

'और तू करता है सो तेरा क्या होगा ?'

चंदन ने गले की कंठी दिखाई और कहा : 'इसके रहते मुझे कुछ
कवच है कवच !'

सुखराम हताश हो गया था। उसे भय ने ग्रस लिया था।

चंदन ने कहा : 'और अगर तू खुद रोकेगा तो तेरा सबसे प्या
जाएगा।'

कजरी ! ! ! मर जाएगी ! ! !

सुखराम ने भराए स्वर में कहा : 'मैं कोढ़ से सड़-भड़कर, गल-गल
तैयार हूं, सूअर बनने को तैयार हूं—चंदन, तू पूजा कर। मेरी ओर से
नहीं है। मैया से कह दे, मैं नहीं रोकता।'

चंदन ने कहा : 'शाबाश ! देवता की गैल में ऐसे ही कहा जाता
डरपोक भी है। पांचवीं बहू ने तो शराब पीकर मरघट में नंगी होकर
जरा भी नहीं डरी थी।'

चंदन की बात सुनकर सुखराम आहत हो गया और उस भयानक
में सोचने लगा।

'उसका बाप बड़ा भगत था !' चंदन ने सिंदूर मुर्गे के माथे
लगाते हुए कहा। फिर चामड़ मैया के द्वार पर लगा दि । चामड मैर
है। भीतर मेहतर घुस नहीं सकता, पर बाहर सब बैठ स

तब चंदन ने अंटी के पास कमर में खुंसी हुई बोतल
पिएगा ?' उसने पूछा।

करनट शराब किसी के हाथ से छीनकर पीने पर
कहा : 'नहीं।'

'कभी नहीं पीता ?'

'अब छोड़ दी है।'

चंदन ने पी और पीकर फड़का।

तभी दूर हल्ला-सा होने लगा। चंदन चौंका।
कोलाहल उसी दिशा की ओर अब बढ़ रहा था। चंदन ने
सुखराम चौंक गया।

कहा : 'क्या हुआ ?'

'तू बच गया।' चंदन ने कहा।

'देवी को मंजूर नहीं।'

'तुझे कैसे पता चला ?'

'बिघन पड़ गया।'

'कैसे ?'

'तू शोर सुनता है ?'

'हां।'

चंदन ने पचीस रुपये निकालकर सुखराम के
कहा : 'ले यह वापिस ले।'

'क्यों ?'

'तेरा काम नहीं हुआ।'

'तू ही रख, वह चोरी के रुपये हैं। और देवी ने जो आज रक्षा की है, उसके लिए मैं उसे फिर-फिर ढोक देता हूं।' वह ढोक देने लगा।

'भाग सुखराम।' चंदन ने कहा।

'क्यों ?'

'खतरा आ रहा है ?' उसने शराब की बोतल कमर में खोंसकर कहा।

'कैसा खतरा ?' वह उठा।

तभी कोलाहल पेड़ों के पीछे सुनाई दिया। हो-हो के अतिरिक्त कुछ सुनाई नहीं देता था।

'गांव वाले लाठीबन्द आ रहे हैं।' चंदन ने कहा।

'क्यों ?'

'उन्हें शक हो गया है।'

'पर उन्हें डर क्या है ?'

'वे यही समझते हैं कि उनके गांव पर कोई हांडी चलाने आया है।'

'तब ?'

'वे उसे रोकने आ रहे हैं।'

'अच्छे आदमी हैं !' सुखराम ने ठंडी सांस लेकर कहा।

'अच्छे हैं ?' चन्दन ने कहा : 'तू यहीं ठहरा रह जरा। फिर देख।

'तू जा रहा है ?'

'खबर फैल गई है मूरख। भाग। अगर उन्होंने एक को भी पकड़ लिया तो मार-मार के धज्जियां बिखेर देंगे। फिर की फिर देखी जाएगी।'

सुखराम ने देखा, भीड़ और पास आ गई थी क्योंकि कोलाहल अब सामने के पेड़ों के पीछे ही था।

'अबे भाग !' चंदन भाग चला। क्षण-भर में ही सुखराम भी भागा।

'दोनों अंधेरे में खो गए।'

सुखराम बेतहाशा भाग रहा था। उसे लगा कि सारी भीड़ उसे ही पकड़ने चली आ रही है और अगर उन्होंने पकड़ लिया तो आज जीता नहीं छोड़ेंगे। लाश का पहचानना भी मुश्किल हो जाएगा।

कोलाहल चामड़ के पास आ गया था। उस समय मशालें जल उठीं। एक ने कहा : 'यह देखो, मुर्गा बंधा है।'

'अरे इसके सिंदूर चढ़ा दिया है।'

'अभी भागे हैं वे लोग।'

'पकड़ो उन्हें। हमारे गांव पर ही हाथ उठाया था !'

'पर थे कहां के ?'

'यह तो मैंने नहीं पूछा।' यह वह व्यक्ति था जो भाग गया था।

'चलो, चलो, अब कोई फायदा नहीं।'

एक ने मुर्गा पकड़ा, उसकी गर्दन उमेठकर फेंक दिया।

सुखराम ने देखा, दूर एक खंडहर था। वह उसीमें छिप गया। जब हल्ला बंद हो गया तो वह बाहर निकला। आहट ली। सब चले गए थे। चैन आया। आंखें उठाईं। विश्वास नहीं हुआ। अधूरा किला !

सो वह अधूरे किले में छिपा था !

तो आज फिर उसके पुरखों ने उसे बचाया था

'तो छोड़ दे यह काम।'

'तू छुड़ाने वाला है कौन,' चंदन ने कहा : 'अगर मैया को ही मंजूर न होगा तो आप विघन डाल देगी।'

'और तू करता है सो तेरा क्या होगा?'

चंदन ने गले की कंठी दिखाई और कहा : 'इसके रहते मुझे कुछ डर नहीं। यह कवच है कवच!'

सुखराम हताश हो गया था। उसे भय ने ग्रस लिया था।

चंदन ने कहा : 'और अगर तू खुद रोकेगा तो तेरा सबसे प्यारा आदमी मर जाएगा!'

कजरी!!! मर जाएगी!!!

सुखराम ने भराए स्वर में कहा : 'मैं कोढ़ से सड़-सड़कर, गल-गलकर मरने को तैयार हूं, सूअर बनने को तैयार हूं---चंदन, तू पूजा कर। मेरी ओर से कोई रुकावट नहीं है। मैया से कह दे, मैं नहीं रोकता।'

चंदन ने कहा : 'शाबाश! देवता की गैल में ऐसे ही कहा जाता है। पर तू कुछ डरपोक भी है। पांचवीं बहू ने तो शराब पीकर मरघट में नंगी होकर खेल किया था, जरा भी नहीं डरी थी।'

चंदन की बात सुनकर सुखराम आहत हो गया और उस भयानक स्त्री के बारे में सोचने लगा।

'उसका बाप बड़ा भगत था!' चंदन ने सिंदूर मुर्गे के माथे और सीने पर लगाते हुए कहा। फिर चामड़ मैया के द्वार पर लगा दिया। चामड़ मैया सबकी देवी है। भीतर मेहतर घुस नहीं सकता, पर बाहर सब बैठ सकते हैं।

तब चंदन ने अंटी के पास कमर में खुंसी हुई शराब की बोतल निकाली। 'तू पिएगा?' उसने पूछा।

करनट शराब किसी के हाथ से छीनकर पीने वाली जात, परन्तु सुखराम ने कहा : 'नहीं।'

'कभी नहीं पीता?'

'अब छोड़ दी है।'

चंदन ने पी और पीकर फड़का।

तभी दूर हल्ला-सा होता लगा। चंदन चौंका। उसने उधर कान लगाया। कोलाहल उसी दिशा की ओर अब बढ़ रहा था। चंदन ने हठात् दीप बुझा दिया। सुखराम चौंक गया।

कहा : 'क्या हुआ?'

'तू बच गया।' चंदन ने कहा।

'देवी को मंजूर नहीं।'

'तुझे कैसे पता चला?'

'बिघन पड़ गया।'

'कैसे?'

'तू शोर सुनता है?'

'हां।'

चंदन ने पचीस रुपये निकालकर सुखराम के हाथ पर धर दिए और अंधेरे में कहा : 'ले यह वापिस ले।'

'क्या?'

'तेरा काम नहीं हुआ।'

'तू ही रख, वह चोरी के रुपये हैं। और देवी ने जो आज रक्षा की है, उसके लिए मैं उसे फिर-फिर ढोक देता हूं।' वह ढोक देने लगा।

'भाग सुखराम।' चंदन ने कहा।

'क्यों ?'

'खतरा आ रहा है ?' उसने शराब की बोतल कमर में खोंसकर कहा।

'कैसा खतरा ?' वह उठा।

तभी कोलाहल पेड़ों के पीछे सुनाई दिया। हो-हो के अतिरिक्त कुछ सुनाई नहीं देता था।

'गांव वाले लाठीबन्द आ रहे हैं।' चंदन ने कहा।

'क्यों ?'

'उन्हें शक हो गया है।'

'पर उन्हें डर क्या है ?'

'वे यही समझते हैं कि उनके गांव पर कोई हांड़ी चलाने आया है।'

'तब ?'

'वे उसे रोकने आ रहे हैं।'

'अच्छे आदमी हैं !' सुखराम ने ठंडी सांस लेकर कहा।

'अच्छे हैं ?' चन्दन ने कहा : 'तू यहीं ठहरा रह जरा। फिर देख।

'तू जा रहा है ?'

'खबर फैल गई है मूरख। भाग। अगर उन्होंने एक को भी पकड़ लिया तो मार-मार के धज्जियां बिखेर देंगे। फिर की फिर देखी जाएगी।'

सुखराम ने देखा, भीड़ और पास आ गई थी क्योंकि कोलाहल अब सामने के पेड़ों के पीछे ही था।

'अरे भाग !' चंदन भाग चला। क्षण-भर में ही सुखराम भी भागा।

'दोनों अंधेरे में खो गए।'

सुखराम बेतहाशा भाग रहा था। उसे लगा कि सारी भीड़ उसे ही पकड़ने चली आ रही है और अगर उन्होंने पकड़ लिया तो आज जीता नहीं छोड़ेंगे। लाश का पहचानना भी मुश्किल हो जाएगा।

कोलाहल चामड़ के पास आ गया था। उस समय मशालें जल उठीं। एक ने कहा : 'यह देखो, मुर्गा बंधा है।'

'अरे इनके सिंदूर चढ़ा दिया है।'

'अभी भागे हैं वे लोग।'

'पकड़ो उन्हें। हमारे गांव पर ही हाथ उठाया था !'

'पर थे कहां के ?'

'यह तो मैंने नहीं पूछा।' यह वह व्यक्ति था जो भाग गया था।

'चलो, चलो, अब कोई फायदा नहीं।'

एक ने मुर्गा पकड़ा, उसकी गर्दन उमेठकर फेंक दिया।

सुखराम ने देखा, दूर एक खंडहर था। वह उसीमें छिप गया। जब हल्ला बंद हो गया तो वह बाहर निकला। आहट ली। सब चले गए थे। चैन आया। आंखें उठाईं। विश्वास नहीं हुआ। अधूरा किला !

सो वह अधूरे किले में छिपा था

तो आज फिर उसके परखों ने उस था

उसने दण्डवत की। और गद्गद स्वर से कहने को मुख खोला, किन्तु कह नहीं सका। हवा किले के खंडहर में सू-सां, भू-सा कर रही थी। भयानक हास्य-सी वह बार-बार गूंज उठती थी। अमावस्या के अंधकार में वह दुर्ग एक दानव के विकराल वक्ष की भांति कठोर दिखाई दे रहा था। वह निर्जनता चारों ओर सांप की तरह फुफकारती हुई बार-बार छटपटा उठती थी। किन्तु सुखराम को डर नहीं लगा। उसे लगा, वह किसी महान संबल के सामने खड़ा है। उस पर आज कोई गहरी छाया है।

तभी लगा, कोई खंडहर के भीतर हंस उठा और यद्यपि वह उल्लू का स्वर था, सुखराम में एक हहर-सी भर गई। वह आज फिर वहीं है जहां एक दिन कजरी के साथ आया था। झील दूर फुंकार रही है। उसमें अंधेरा घुर्रा रहा है। सुखराम को भय लगने लगा। तब उसने भगवान की याद की और सम्पूर्ण आदर और भक्ति से नमित भाव और साष्टांग दण्डवत् करके कहा : 'पुरखो! मैं पापी हूं, अभागा हूं, मैं तुम्हारी तरह जोग नहीं हूं, मैं दीन, गरीब, नीच हूं, मैं जात-कुजात हो गया हूं, इसलिए जो तुमने छोड़ा था वह मुझ तक कभी नहीं पहुंच सकता। मुझे इसका दुख नहीं है, मुझे नहीं चाहिए ये सब। पर तुमने मेरी रक्षा की है, तुमने मुझे बचाया है।'

और सुखराम ने धरती पर नाक रगड़कर माथे को टेक दिया। वह पूर्ण विश्वास था। भय दूर हो गया।

जब वह लौटा तो सोचता हुआ चला जा रहा था। आज वह सपना टूट गया था। पर सपने में से सपना पैदा हो गया। वह चुपचाप फिर चामड़ पर पहुंचा। कोई नहीं था। उसने मुर्गे को मरा हुआ पाया।

तब उसने अपना सिर देवी के द्वार पर टेककर कहा : 'मैया! तूने पाप से बचा लिया। यह ही क्या कम पाप है कि मैं ठाकुर होकर भी करनट बना दुख भोग रहा हूं! फिर यह पाप तो मुझे मानुष-जनम से ही दूर कर देता। पर तुझे तो यह मंजूर न था। ठकुरानी ने पाप किया था, जिसका बदला आज तक पूरा नहीं चुका। यह पाप तो रही-सही कसर पूरी कर देता। मैया, किला नहीं मिलता तो न सही, पर मानुष तो बना रहने दे—मैया…'

वह और कह नहीं सका। उसकी आंखें भीग गईं।

उस समय आकाश में नक्षत्र निकल आए थे। अमावस्या का अंधकार पहले से कम हो गया था। और सुखराम ने देखा, देवी जैसे मुस्करा उठी थी। उसने फिर ढोक दी।

29

कजरी ने पूछा : 'क्या हुआ ?'

वह उठकर बैठ गई।

'कुछ नहीं।' सुखराम खाट पर बैठ गया।

'तू इसी अंधेरे में आया है ?'

सुखराम ने बताया। कजरी ने सुना। और कहा : 'तो अब क्यों चिन्ता करता है ? जब भगवान को ही मंजूर नहीं तो क्यों जान देता है ?'

'पर मुझे चैन नहीं आता।'

कजरी ने उसका हाथ पकड़ लिया और कहा : 'तू तो पागल है। छोड़ इन

बातों को। सो जा, रात-भर का जगा है। देख तो आंखें कैसी भारी पड़ रही हैं।'

'नींद नहीं आ रही है।'

'तुझे मेरी कसम है। लेट जा।'

किन्तु उसका मन विक्षुब्ध था। उसने कहा : 'तू नहीं मानती ?'

'हां, मेरा हक है, नहीं मानती।'

सुखराम लेट गया। परन्तु उसे आराम नहीं मिला। आखिर कजरी थक गई। उसने कहा : 'तेरा जी ठिकाने नहीं है।'

'सचमुच नहीं है।'

वह उठकर घूमने लगा। बोला : 'कजरी !'

'फिर कहीं जाएगा क्या ?'

'हां, सोचता हूं।'

'अब के कौन है ?'

'लौटकर बताऊंगा।'

वह हठात् मुड़ गया, जैसे बिजली कौंध गई थी।

'बताकर जाने में हरज है ?' कजरी ने कहा।

'नहीं, लौटकर ही बताऊंगा।' और इससे पहले कि कजरी कुछ कहे, वह बाहर निकल आया। कजरी के दिल पर सांप लोट गया। नहीं बताता तो मत बता। कसम है जो मैं भी अब अपने-आप पूछूं। वह रूठी बैठी रही।

सुखराम पगडंडी से बीहड़ की ओर चलने लगा। उसे निश्चय नहीं था, परन्तु उसे आशा थी कि वे लोग इधर ही रहते होंगे। वहां एक-आधा कोस चलने पर एक छोटी-सी इमारत दिखाई दी। अनगढ़ पत्थरों से बनी हुई थी।

बाहर आकर वह ठहर गया। सोचा। फिर पुकारा : 'अरे खड़गसिंह है ?'

'कौन है ?' एक पतला स्वर आया।

'मैं हूं सुखराम।'

'क्या चाहता है ?'

'खड़गसिंह है ?'

सुखराम आगे बढ़ आया था। उसने खुले द्वार में से भीतर झांककर देखा। वहां शराब के नशे में झूमती एक औरत बैठी थी। उसने सुखराम को देखा तो हंस दी। उसकी आंखों में ऐसी जंगली तृष्णा थी कि सुखराम उसे देखता ही रह गया। सुखराम को अपनी ओर इस तरह देखते देखकर स्त्री ने एक नितान्त कामुक और अश्लील इशारा किया। सुखराम सकपका गया। औरत ने कहा : 'तू है ! खड़गसिंह ये रहा। सो रहा है।'

'कब जागेगा ?'

'अभी जग जाएगा। ये ले।' कहकर स्त्री ने उसे एक धप्प मारा। खड़गसिंह उठ बैठा। पूछा : 'क्या है री ?'

'देख तेरा बाप-आप आया है।' स्त्री ने कहा।

उसने देखा तो पूछा : 'तू कौन है ?'

'मैं सुखराम हूं।'

'कौन ?' उसने जंभाई ली।

'वही जो उस रात दो लुगाइयों के साथ पहाड़ में करनट मिला था, जिसे तुम्हारे सरदार ने आसरा दिलाया था।'

हां हां याद आया खड़गसिंह ने कहा कैसे आया है ?

मुझे काम था।

'कह।'

सुखराम ने स्त्री की ओर देखा। स्त्री हंसी।

खड्गसिंह ने कहा : 'अरे इससे क्या है?' मानो वह उसकी सत्ता को स्वीकार ही नहीं करना चाहता था। स्त्री को इसमें कोई अपमान नहीं लगा। परन्तु औरत के पेट में बात पचे या न पचे, सुखराम ने कहा : 'मैं फिर कहूंगा।'

'तू हट जा री।' खड्गसिंह ने कहा।

स्त्री पीछे हट गई। परन्तु उसकी आंखों में द्वेष-सा दिखाई दिया, जैसे वह कुछ सोचने लग गई थी। वह पीछे की ओर चली गई और सुखराम के पीछे आ गई।

'मुझे सरदार के पास ले चल।' सुखराम ने धीरे से कहा।

'क्यों?' वह चौंका।

'सुखराम ने कहा : 'मुझे एक दुश्मन से बदला लेना है।'

'किससे!'

'पुलिस के दरोगा से।'

औरत ही-ही करके हंसी।

सुखराम ने कहा : 'इससे कहो चुप रहे।'

'अरे उसे बकने दे। तू मेरे साथ चल।'

दोनों निकले। स्त्री चुपचाप पीछे-पीछे चल दी। उन लोगों को यह मालूम भी न हुआ। वे एक मढ़ैया पर पहुंचे।

'तू ठहर।' कह वह भीतर घुसने के लिए बढ़ा। किन्तु द्वार बन्द था। उसने पुकारा : 'सरदार!'

कोई उत्तर नहीं आया। ऐसा लगा, कहीं कोई छोटी-सी संध के पीछे छाया डोल गई।

चौथी बार पुकारने पर आवाज लगाई : 'कौन है?'

'मैं हूं खड्गसिंह!'

'कैसे आया?'

'एक आदमी को लाया हूं।'

'वह कौन है?'

'एक करनट है।'

सरदार का स्वर सुनाई नहीं दिया। अब दूसरी ही आवाज सुनाई दी : 'क्या कहा?'

'करनट सुखराम!'

उसने पूछा : 'उस दिन वाला?'

'हां।'

'उसके साथ कौन है?'

'कोई नहीं।'

'औरतें नहीं हैं?'

'नहीं हैं।'

कुछ देर के लिए नीरवता छा गई। फिर आवाज आई : 'उसके पास क्या है!'

'कोई हथियार नहीं है।' सुखराम ने कहा।

वह खीझने लगा था।

खड्गसिंह ने उसे चुप रहने का इशारा किया। तभी भीतर से फिर आवाज

आई : 'अभी है कि गया ?' और फिर जैसे कोई नींद में से ही थर्रा उठा था, सुनाई दिया : 'क्या चाहता है !'

'मदद।' खड़गसिंह ने उत्तर दिया।

'कैसी !'

'बन्दूक की।'

'किससे लेना है बदला !'

'पुलस से बदला लेना है उसे।'

भीतर एक हास्य गूंज उठा। तब लगा, भीतर एक ही आदमी नहीं है और भी हैं।

'कतल करना है !' किसीने पूछा। यह स्वर पहले वाला नहीं था। स्पष्ट ही भर्राया हुआ स्वर न था।

'हां, अगर जरूरत पड़ी तो।' खड़गसिंह ने कहा।

उस उत्तर को सुनकर कई लोग एकसाथ हंस पड़े। एक ने हंसते हुए ही कहा, 'बेवकूफ है। उससे कहो, जाए।'

दूसरा स्वर सुनाई दिया : 'उसकी लुगाई पकड ली है किसीने ?'

'नटनी है, आ जाएगी।'

फिर सब बन्द हो गया।

वह औरत पीछे आ गई थी। उसने खडगसिंह के सामने ही सुखराम के कंधे पर हाथ धर दिया। सुखराम चौंक उठा।

'क्या बात है ?' औरत ने पूछा।

'सरदार ने मना कर दिया।' खड़गसिंह ने उत्तर दिया।

'कायर !' सुखराम ने कहा : 'पेट के लिए गरीब और कमजोरों को लूटता फिरता है। जो सजा पाने के लायक है उन्हें नहीं दबाता।'

'कौन है कायर ?' स्त्री ने पूछा।

'तेरा सरदार।' सुखराम ने कहा। उसका स्वर उठा हुआ था। स्त्री ने हंसकर उसके गले में बांह डाल दी।

खड़गसिंह ने धीरे से कहा : 'चुप-चुप।'

'अरे कौन है यह ?' सरदार की आवाज सुनाई दी। खड़गसिंह ने कहा : 'अरे वह आ गया।'

भीतर से वह निकला।

'किसने कहा था कायर ?' डाकू गरजा।

'इसने।' स्त्री ने इशारा किया।

डाकू झूमता हुआ पास आ गया। उसने स्त्री को धक्का देकर सुखराम से दूर कर दिया। स्त्री हंस दी।

डाकू ने अपना हाथ सुखराम के कंधे पर धरकर कहा : 'करनट !'

उसके स्वर में घृणा थी।

फिर पूछा : 'क्या कहा तूने ?'

सुखराम ने कहा : 'जो मुझे लगा, सो मैंने कह दिया।'

'दुहराता क्यों नहीं।' स्त्री ने कहा : 'अब सामने डरता है ?'

'नहीं, डरता नहीं।' सुखराम ने काटा : 'फिर कह सकता हूं, और तब तक कहता रहूंगा जब तक ये उसकी उलटी बात साबित करके नहीं दिखा देगा।'

चार-पांच आदमी भीतर से निकलकर और आ गए

सरदार ने कहा : 'तुझे जान का डर नहीं !'

सरदार के हाथ में पिस्तौल दिखाई देने लगी। सुखराम मुस्कराया। बोला : 'बस ! निहत्थे पर पिस्तौल ! अगर मर्द है तो सामने आके लड़, और हाथों से किस्मत अजमा ले !'

'अच्छा ! तू मरद है !' सरदार ने व्यंग्य से कहा।

'मरद है तो मेरे संग चल।' उस स्त्री ने अश्लील इंगित करके कहा।

उसको देखकर सरदार ने कहा : 'अच्छा तो तू भी मस्ता रही है !'

औरत ने कहा : 'क्यों अभी मेरी उमर ही क्या है ! इसको देख। यह भी जवान है, और मैं भी जवान हूं।'

और वह ऐसे छाती निकालकर खड़ी होकर मुस्कराने लगी कि सुखराम ने शर्म से आंखें नीची कर लीं। उसने नटनियां देखी थीं, जो निर्लज्ज होती हैं, किन्तु यह स्त्री तो पराकाष्ठा थी। उसे देखकर वे पशुओं के-से कठोर डाकू भी सकपका गए।

सांझ आने लगी थी। उसकी किरणें अब पहाड़ के ऊपर ऐसी निकल रही थीं जैसे धरती में से फूटकर निकल रही हों। और पक्षी अब आकाश से लौट चुके थे। सुखराम ने देखा कि जहां वह खड़ा था वह स्थान अत्यन्त गुप्त और भयानक था। चारों ओर से ऐसा घिरा हुआ था कि दिखाई नहीं दे सकता था। वहां से भाग निकलना तो असंभव था। एक बार सुखराम को चंदन के पास जाकर अफसोस हुआ था तो दूसरी बार उसे यहां आने पर भी खेद होने लगा।

ये लोग डाकू हैं। भयानक बीहड़ों में पड़े रहते हैं। राजा के राज्य में लूटते हैं। राजा इनको पकड़ नहीं पाता। जब ये लोग पकड़े जाते हैं तो फांसी लग जाती है। और आश्चर्य की बात है कि जब संसार इतना आधुनिक हो गया है, तो ये लोग भी जाने कहां से नये-नये हथियार ले आते हैं। इनके इस जीवन का आरम्भ विक्षोभ, भूख, प्रतिशोध से होता है।

सरदार ने चारों ओर देखा, परन्तु उसके साथी मजा देख रहे थे। खड्गसिंह ने कहा : 'कैसे बोलती है ! सरदार क्या बूढ़े हो गए हैं !'

'बूढ़े न होते तो तेरे पास क्यों आती !'

सरदार ने खड्गसिंह को जलती आंखों से देखा।

'नहीं सरदार,' खड्गसिंह ने सरदार के पांव पकड़कर कहा : 'झूठ बोलती है।'

सरदार ने खड्गसिंह के लात दी। वह गिरा और उठ खड़ा हुआ। सुखराम यह सब आश्चर्य से देखता रहा। वह स्त्री का इतना मुखर रूप कभी नहीं देख सका था।

उसने ऊपर देखा तो स्त्री मुस्करा उठी और उसने कहा : 'जो तू इससे हार गया तो मेरी टांग के नीचे से निकलकर जाना होगा। मेरा दूध पीके मैया कहना होगा।'

'इसे चुप कर दे।' सुखराम ने कहा।

'क्यों, मरद तो तू है न !' वह चिल्लाई।

'चुप रह ! क्या बकती है ! बेड़नी-साली ! शराब पीके मस्त हो रही है। अपने-पराये का फरक नहीं जानती ! जिससे चाहे जो कुछ बकने लगती है ! तुझे हया नहीं !' सरदार ने डांटा।

'आय हाय !' स्त्री ने कहा : 'कैसा डांट रहा है, जैसे मैं इसकी कोई ब्याहता हूं न ? जो जी में आएगा करूंगी। शेरनी तो शेर के पास रह सकती है। समझा !'

'बक मत।' सरदार गरजा।

'अरे तेरी डांट अब काम न देगी सरदार !' औरत ने कहा : 'लड़ के दिखा मुझे।'

'वाह हरामजादी ! इसी दिन को पाला था ?'

'पाला था सो मैंने क्या बदला नहीं चुकाया है तुझे ?' स्त्री ने कहा।

'क्या चुकाया है तूने ?' सरदार ने कहा : 'तुझ-सी तो सकड़ों कुतियां डोलती हैं !'

'कुतिया के जाये ! मुझे कुतिया कहता है !' स्त्री नशे में उबली और हम उठी। सरदार उसे मारने बढ़ा।

'आ मार !' स्त्री बढ़ आई : 'मार के तो देख। तुझे बता दूं अभी नामरद !'

सरदार की क्रोधावस्था स्पष्ट हो गई।

'तो ले।' उसने चिल्लाकर कहा और ज्योंही हाथ उठाया, आगे बढ़कर सुखराम ने उसका वह हाथ पकड़ लिया।

'क्या करते हो ?' सुखराम ने कहा : 'वह औरत है। मरद होकर औरत पर हाथ उठाते हो ?'

'तू छोड़ दे मुझे !' सरदार फुंकारने लगा।

'कैसे छोड़ दूं ?' सुखराम ने कहा : 'मुझसे न देखा जाएगा।'

'छुड़ा ले सरदार !' एक डाकू ने कहा।

'छोड़ दे।' सरदार ने डांटा।

'अरे छुड़ा क्यों नहीं लेता ?' औरत ने कहा : 'धमकी क्यों देता है ? करके दिखा दे न ?'

सरदार को अपमान ने आहत किया। उसने जोर से झटका दिया; एक, दो, तीन, पर सरदार कोशिश करके हार गया।

हाथ नहीं छूटा, नहीं छूटा, सरदार के पसीने चुआते देखकर स्त्री हंसी। उसने जांघ पर हाथ मारा, जैसे ताल ठोंक रही हो। सरदार ने लज्जा से सिर झुका लिया। सुखराम गिद्ध की दृष्टि से उसके दूसरे हाथ को देखता जा रहा था। वह हाथ पिस्तौल वाली जेब की तरफ बढ़ा कि सुखराम ने पिस्तौल वाली जेब पकड़ ली। सरदार लाचार हो गया।

सुखराम ने कहा : 'और किसीकी तबीयत हो तो आओ।'

डाकू एक-दूसरे की ओर देखने लगे। सरदार तब शिथिल हो चुका था। उसको वे सबसे बलिष्ठ मानते थे। आज उसको पराजित होते देखकर कोई नहीं बढ़ा।

सुखराम ने तब सरदार को गले लगा लिया। सरदार उल्लू-सा देखने लगा।

सुखराम ने कहा : 'मैं दोस्ती के लिए आया हूं। मुझे अपना हाथ दे !'

सरदार ने हाथ बढ़ा दिया। डाकू खुश हुए। लेकिन सुखराम मन में प्रसन्न नहीं था। उसे एक नई मुसीबत लग रही थी। कजरी को वह छोड़ आया है। इस सोहबत में जान भी जा सकती है। परन्तु प्रतिहिंसा भयानक होती है। जब मनुष्य उससे घायल हो जाता है तो तड़पने लगता है। उसे अपनी दुर्बलता में दूसरे के अहंकार का पालन दिखाई देता है।

सुखराम ने कहा : 'मैं दौलत नहीं चाहता, इनाम नहीं चाहता, मैं दोस्ती चाहता हूं।'

'बोल !' सरदार ने कहा।'

'मैं पुलिस के दरोगा से बदला लेना चाहता हूं।'

'दरोगा से ?' सरदार चौंका।

'हां।'

क्या ?

'उसने बेकसूरों को सताया है।'

'तो मैं क्या करूं?'

'तुमने राज के खिलाफ सिर उठाया है, तुमने हथेली पर जान धरी है, बताओ उनकी रक्षा कौन कर सकता है? राजा अपने कानून का राजा है, डाकू गरीब का मददगार है।'

ही-ही-ही करके स्त्री हंसी और बोली : 'अगर ऐसा होता तो यह मुझे उठा लाता? मेरे क्या खसम न था? इसने मुझे बिगाड़ दिया। तब से मेरा कोई नहीं रहा। तू आदमी नहीं लगता, तू मुझे पागल लगता है। तू दूसरों के भले की सोचता है? मैं तेरे संग चलूंगी करनट!'

'और जो इसने रोका तो?'

'तो तू मुझे बचा नहीं सकता?'

'नहीं।'

'क्यों?'

'क्योंकि मैं तुझे नहीं ले जाना चाहता।'

'क्योंकि तू डरता है? तू चाहता है मैं इस हत्यारे की बेड़नी बनकर यहीं बनी रहूं!'

सुखराम ने उस कीचड़ में से कमल पैदा होते हुए देखा! परन्तु वह उसपर विश्वास नहीं कर सका।

डाकू-सरदार ने कहा : 'करनट! मैं नहीं जानता। मैं जो कुछ करता हूं अपनी जान बचाने के लिए करता हूं। मौत के मुंह में जाकर जिन्दगी का मजा लूटता हूं। तू चाहता है तो मैं दरोगा पर हमला कर दूंगा। पर तू मेरे साथ चलेगा?'

'चलूंगा।' सुखराम ने कहा : 'पर एक वादा करना होगा।'

'क्या?'

'मेरे सामने तुम किसी बेकसूर को नहीं सताओगे!'

'मंजूर है।'

औरत बढ़ आई। कहा : 'पहले मेरा फैसला कर दो।'

डाकू ने कहा : 'अपना मुकदमा कह।'

स्त्री ने कहा : 'यह मेरा है आज से।'

'पूछ ले उसीसे।' सरदार ने मुस्कराकर उत्तर दिया।

सुखराम ने कहा : 'अरे इसीकी बनी रह न!' पर स्त्री ने सरदार की गर्दन पकड़ ली। सरदार ने उसे झटका दिया। वह पीछे हट गई।

'इसीमें बड़ा जोर है।' सुखराम ने कहा।

स्त्री की आंखें चढ़ गईं। बोली : 'अब मैं बेड़नी हूं, समझा! मुझसे बचकर कहां जाएगा?'

'अब तो तेरे ही पास आ गया है ये बकरा।' सरदार ने कहा : 'लहू पी ले इसका।'

सुखराम हंसा।

स्त्री चिल्लाई : 'हंसता है गधे!'

'हंसूं न तो रोऊं?'

'तू इस लायक भी तो हो।'

उस स्त्री ने सुखराम के सिर पर जूता मारा। खड़गसिंह ने बीच में आकर जूता रोक लिया। स्त्री विक्षुब्ध-सी दिखाई दी वह जैसे समझ नहीं पा रही थी और सब

ठठाकर हंसने लगे। सुखराम का मन भारी हो गया।

सरदार ने कहा : 'आज तो तू कमाल कर रही है।'

स्त्री होंठ चबाने लगी। उसने कहा : 'भूल गया तू! मैंने नहीं कहा था कि तब तक तेरे पास रहूंगी जब तक तुझसे जोरदार कोई नहीं मिलेगा? मैं सिपाही के पास नहीं रहती, सरदारों के पास रहती हूं। तूने क्या समझा है मुझे?'

सुखराम हंसा। कहा : 'सरदार तो परमेसुरी यही है।'

स्त्री ने कहा : 'तू सरदार नहीं है?'

'मैं गरीब करनट हूं।'

'छीन ले इसकी पिस्तौल।' स्त्री ने कहा : 'यह सरदारी के जोग नहीं।'

'क्यों परमेसुरी! तू कौन है जो मैं तेरी हर बात मान लूं?'

सब हंसने लगे।

'तो तू मेरी न मानेगा?'

'नहीं। मेरे घर लुगाई है।'

स्त्री ने बहुत कुछ गंदी गालियां दीं और कहा : 'तो मैं तेरी उसे ही देख लूंगी।'

सुखराम कजरी का यह अपमान देखकर खीझ उठा। उधर मदमस्त होकर वह स्त्री बढ़ी।

सुखराम चौंका। उसने सरदार की ओर देखा, जिसे स्वयं अब बुरा लगने लगा था। उसने कहा : 'ज्यादा पी गई है।'

खड़गसिंह ने कहा : 'डेढ़ बोतल चढ़ा गई है सुसरी।'

'इसे भेज दो।' सुखराम ने कहा : 'वरना कलेस करती रहेगी और बोलने नहीं देगी। इस बखत इसे होश तो है नहीं।'

'अरे नशे में है, ले जाओ इसे।' सरदार ने कहा।

'नशे में नहीं हूं।' वह चिल्लाई : 'करनट! तुझे मैं सरदार बनाकर छोड़ूंगी।'

'मान जा भागभरी!' सुखराम ने हाथ जोड़कर कहा : 'मैं गरीब ही भला हूं।'

डाकू उस स्त्री को पकड़कर ले जाने लगे। वह बकती ही रही। उसे जाने इतना क्रोध कैसे आ गया था। बिफरी जाती थी। छूट-छूट भागती थी। आखिर वे उसे ले ही गए। और फिर वे बातें करने लगे।

रात हो गई थी। घना अंधेरा छा रहा था। अमावस की छाया अपनी दूसरी रात में भी उतनी ही गाढ़ कालिमा लिए हुए उतर आई थी। हाथ को हाथ नहीं सूझता था।

घोड़े पहाड़ से उतरकर भागने लगे। उनके सुमों से आवाज सम पर उठती, खटाखट, खटाखट। पहाड़ों की भीमाकृतियां केवल चोटियों के पास हल्की-सी दिखाई देतीं, और काजर के-से ढेर वे आकाश से उतरते गीले अंधेरे में ऊपर जाकर घुल जाते। फिर केवल वही नीरव गहन अन्धकार छा जाता।

अंधेरे में इस समय वे लोग सिर पर ढाटा बांधे थे। वे बीस आदमी थे। उनके कंधों पर बंदूकें लटक रही थीं। केवल सुखराम के पास पिस्तौल थी। उसकी भी गोलियां भरना उसने अभी सीखा था। वह निशाना लगाना नहीं जानता था, क्योंकि उसने जीवन में कभी इस चीज को छुआ भी नहीं था। आज उसके मन में संशय था। वह एक नए जीवन की ओर जा रहा है! क्या कजरी यह सब सुनकर खुश होगी? क्या वह कहेगी कि यह ठीक है?

कुछ ही घंटों में वे गांव पहुंच गए। वे लोग फुलवाड़ी के पीछे के कच्चे डगरे से उतर गए और फिर एक-एक करके निकले कुछ-कुछ देर में ताकि किसीको शक न हो

वे अंधेरे में ही जाकर एक घने और ऊंचे पेड़ के नीचे खड़े हो गए। सामने ही अधूरा किला खड़ा था। सुखराम ने उसे प्रणाम किया और घोड़े पर चढ़े हुए उसे लगा कि वह राजा ही था।

दरोगा की महफिल जमी थी। पर दरोगा नहीं था। दीवान जी के आज सबसे ज्यादा ठाठ थे। वे लोग आज आपस में बातें कर रहे थे। वे गांव के मुसाहबी, जो हर गांव में होते हैं, और इन छोटे सरकारी अफसरों को मुफ्त का-सा दर्जा बख्श देते हैं, इस समय बैठकर चर्चा कर रहे थे। ये लोग किसी के नहीं थे। अपनी स्वार्थ-भरी जघन्यता के लिए ये लोग दान निपोरते हैं, और पीठ में निन्दा करते हैं, और जगह-जगह काम के लिए झूठ बोलते हैं, बेईमानी करते हैं।

घोड़े पर चढ़े होकर सरदारसिंह ने गोली चलाई। गोली की आवाज सुनकर सब चौंक उठे। और इससे पहले कि वे लोग संभल सकें, गोली सीधी दीवान जी के सीने में घुसकर निकल गई। तहलका मच गया। कोई भागा, कोई चिल्लाया, 'डाकू आ गए, डाकू आ गए…'

कोलाहल मच उठा। सरदार ने बन्दूक उठाई।

लालटेन फूट गई। और अन्धकार फैल गया। इसके बाद चारों तरफ से गोलियां चलने लगीं। धू-धू का वह विकराल शब्द अन्धकार में भयानक रूप से गरजने लगा। मरने और घायल होने वालों का अन्तिम चीत्कार सबसे अधिक हृदय-द्रावक था।

सरदार गरजा : 'हर-हर महादेव !'

और जब डाकू चिल्लाए तो इधर भगदड़ मच गई। गांव के थाने का काम तो दबदबे से चलता है, वहां सिपाही होते ही कितने हैं !

सरदारसिंह ने कहा : 'सरदार, अभी सेठ बाबू को घर ले चलो।'

सरदार : 'ठीक है। जब आए हैं तो जरा फायदा भी करते चलें। क्यों रे करनट ?'

'सरदार, फिर कभी कर लेना।'

'तो फिर हमें आने-जाने का क्या मुआवजा देगा ?'

'मैं क्या दे सकता हूं ?'

'तो चल।' सरदार आगे बढ़ा। कुछ लोग पीछे-पीछे धीरे बढ़ चले। एक बनिए का मकान घेर लिया। चलते समय उन्होंने आतंक फैलाने के लिए धड़ाधड़ गोलियां चलाईं। उनको सुनकर सब डरकर अपने-अपने घरों में जा छिपे।

सुखराम ने कहा : 'औरत पर हाथ न उठाना सरदार !'

'अच्छी बात है।' सरदार ने हंसकर कहा : 'तू निभा यार, बनिया लगता है मुझे।' और उसने गोली चलाई। सन्नाटा खिंच गया। केवल मकान में रोने की आवाज आई।

सुखराम ने कहा : 'चलो तुम। मैं उधर जाता हूं।'

'यहीं रह।' सरदार ने कहा : 'कोई तुझे पकड़ लेगा।'

'भागूंगा नहीं।' सुखराम ने कहा।

बड़ी जोर से सरदार ने कहा : 'दरवाजा खोल दो, वरना आग लगा देंगे।'

उस समय बड़ी जोर का चीत्कार सुनाई दिया, जैसे औरत किसी की घिग्घी बंध गई हो। पर दरवाजा नहीं खुला। अपने तीन साथियों के साथ सरदार धड़ाधड़ गोलियां चलाता हुआ ऊपर चढ़ गया और सबसे पहले सरदार भीतर कूद पड़ा।

सुखराम सोचने लगा। वे लोग लूट रहे हैं। क्या वह उनका साथी नहीं है ? बनिया खून चूसता है। पर डकैती तो अच्छी नहीं है। यह सब क्या है ?

उसका हृदय सशंक था। उधर कोलाहल में याचना, करुण क्रंदन था। औरतें

चिल्लाने लगी थीं, बच्चे रो उठे थे, और धांय-धांय गोलियों की आवाज़ सुनाई देती थी। तहसील की तरफ जो गोलियां चलती थीं तो कोई यही निश्चित नहीं कर पाता था कि जाने कितने डाकू चढ़ आए हैं और आपसी फूट के कारण गांव वाले असंख्य होकर भी उन संख्या में अल्प शत्रुओं से भयभीत हो गए।

कुछ ही देर में सरदार लौटा। साथ में गठरी थी। कूदकर घोड़े पर चढ़ गया और फिर चिल्लाया : 'हर-हर महादेव!'

उस समय वह प्रसन्न था।

उसका घोड़ा आगे बढ़ा। पीछे गोलियों की बौछार हो रही थी।

सरदार ने कहा : 'कहां है तू?'

सुखराम घोड़ा पास ले आया। 'क्या है?' उसने पूछा।

'चल काम हो गया।' सरदार ने एड़ दी। घोड़ा फरफराया।

वे अंधेरे में भाग चले। जब जंगल आ गया तो रुके। कुछ ही देर मे अलग-अलग दिशाओं से आकर सब डाकू इकट्ठे हो गए।

'कोई नही गिरा।' खड्गसिंह ने कहा : 'तांतिया के जरा जांघ में चोट आई है।'

फिर वे लोग भाग चले।

पहाड पर पहुंचकर सुखराम रुक गया। डाकू ने कहा : 'चल!'

'नही,' सुखराम ने कहा।

'तू नहीं चलेगा?'

'तेरा-मेरा साथ खतम।'

'क्या मतलब?' डाकू सरदार ने कहा : 'क्या बस, मैंने इसीलिए तेरे साथ इतनी जोखम उठाई थी?'

'तेरे हाथ में माल है सरदार। और वह तेरा इनाम हो गया अब।'

'और इसमें से हिस्सा-बांट करने तू कल आ जाएगा?' सरदार ने व्यंग्य से कहा।

'कभी नहीं।' सुखराम ने कहा : 'वह तेरी रोजी है, मेरी नहीं। मुझे उससे कोई सरोकार नहीं। दरोगा नहीं मरा, पर मेरा काम हो गया। वे लोग तो यह भी नही जान सके कि हमला किसने किया। पर दीवान मारा गया। वह बड़ा कमीना था। उसने मुझपर खून का झूठा इल्जाम लगाया था।'

एक डाकू ने कहा : 'दरोगा! वह तो सुना यहां से चला गया!'

सुखराम घोडे से उतर गया। पूछा : 'क्या कहा?'

'हां, उस पर सरकार में मामला चला रही है यहां की ठाकुर पंचायत। उसका तो तुझे डर नहीं होना चाहिए। वह तो राजधानी गया है।'

'लेकिन रपट तो छोड़ गया होगा? दरोगा किसका अपना, सरदार! सुनार को कहानी सुनी है न? मां का गहना बनाने बैठा तो चोर न पा सका, सो दुबला होने लगा। मां समझ गई कि सुनार का बेटा यों दुबला हो रहा है कि चोर नहीं पाता। एक दिन बोली : बेटा, वह मेरा गहना बन गया? पडोसिन का था, जल्दी बना दे। दूसरे दिन गहना भी बन गया और सुनार भी मोटा हो गया। सो दरोगा की कुर्सी ही ऐसी होती है। राम-राम।'

सुखराम के घोड़े की रास एक ने पकड़ ली। वे सब चले गए। सुखराम देखता रहा। इस समय उसे लगा, वह थक गया था। बहुत थक गया था।

वह डेरे पहुंचा मन में डर रहा था जैसे बच्चा कहीं दंगा कर आए और फिर

मां के पास जाते हुए करता है, वही हाल सुखराम का भी था। क्या कहेगी वह ? यह तो किस्मत की बात थी कि वह सही-सलामत लौट आया था। कहीं किसीकी गोली ही लग जाती तो ? तब कजरी बैठी-बैठी राह ही देखा करती और वह कभी भी लौटकर डेरे नहीं आता।

तभी वह ठिठक गया। उसे एक काली-सी छाया डेरे के इधर-उधर दिखाई दी। बाहर कोई घूम रहा था। कौन हो सकता है यह ? क्या कजरी ही बेचैनी से घूम रही है ? सुखराम को आश्चर्य हुआ। पर वह इस तरह पांव दबाकर क्यों चलती ? वह दुनिया में डकैती डालकर आया है और अब उसीके घर चोर आ गया है ! हृदय में गुदगुदी भी हुई और फिर शंका के साथ भय भी उत्पन्न हुआ।

सुखराम पेड़ की आड़ में हो गया।

वह छाया अब स्तब्ध खड़ी थी, जैसे किसी चिंता में पड़ गई थी। सुखराम धीरे-धीरे आगे खिसकने लगा। उसके पांवों में तनिक भी आहट नहीं होती थी। ज्यों-ज्यों वह पास जाता था, उसके भीतर कौतूहल अब अधिक उकसाता था, यहां तक कि अब तो जिज्ञासा भी अंगूठों के बल खड़ी हो गई।

उसने पहचाना। डाकू सरदार के यहां जो स्त्री मिली थी, वही थी। तो यह सचमुच बदला लेने आई थी !

सुखराम सोचने लगा। कितनी गन्दी औरत है ! कितनी भयानक ! इस वक्त कजरी का खून करने आई है। वह कितने अच्छे मौके से आया है ! कहीं वह न आता तो कजरी इससे क्या बच पाती ! वह कांप उठा। वह लौटता तो आकर देखता कजरी···

नहीं, नहीं, भगवान इतना बड़ा दण्ड नहीं दे सकता। आखिर उसने आज किसी की हत्या नहीं की। पर शैतान मर गया। उसके जोरू-बच्चे अब क्या करेंगे ? वह भी तो जब सजा देता है तब बीवी-बच्चों की आड़ में किसीको छिपने नहीं देता।

फिर विचार आया : यह औरत सरदार से नफरत करती है। सरदार इसे पकड़ लाया था। उसने इसे कहीं का नहीं रखा। यहां यह भेड़ों की तरह रखी गई। मजबूर होकर उसने इसीको स्वीकार कर लिया। क्या यह बुरा नहीं है ? यह बुराई को अब भी बुरा कहती है।

वह सुखराम के साथ आना चाहती थी। वह कैसे में आता उसे···

तभी स्त्री भीतर घुसी। सुखराम छिपकर पीछे आ गया। उसने देखा, दिए की रोशनी में उस औरत के हाथ में कटार चमक रही थी और कजरी सो रही थी।

सुखराम ने भगवान को मन ही मन सिर झुकाया। भगवान आज वह लुट गया होता। कजरी मर गई होती। फिर क्या होता ?

यह औरत कितनी खतरनाक है ! यह सोचती है कि इस तरह कजरी को मार-कर वह मेरी हो सकेगी !

औरत आगे बढ़ी, चौकन्नी-सी, दबे-दबे पांव धरती हुई। सुखराम बिल्कुल ऐसा हो गया जैसे अब वह झपटकर आगे टूटेगा।

औरत ने कटार उठाई। तभी कजरी ने करवट बदली। औरत ठिठक गई। वह स्वयं डरी हुई थी। उसका हाथ कांप रहा था। अचानक उसे कैसी आहट-सी हुई। उसने डरकर देखा चारों ओर। कोई नहीं था। शायद उसे भ्रम हो गया था।

अब फिर सुखराम ने देखा, वह कजरी के मुख की ओर देखने लगी। सिर हिलाया, जैसे है तो अच्छी। फिर मुद्रा आई कि मैं बुरी हूं ! उसने अपने ऊपर निगाह डाली फिर वह दुख दिखाई दी

सुखराम हिला एक हल्की-सी छाया डेरे में पड़ी

स्त्री चिहुंक उठी। उसने चारों ओर देखा। सुखराम आड़ में हो गया। स्त्री का हृदय धड़क रहा था, क्योंकि वह घबरा गई थी। उसकी सांस अब जोर-जोर से चल रही थी जिसे वह दांत भींचकर दबा लेना चाहती थी, क्योंकि उसका वक्ष बार-बार उठता था और गिरता था। गेहुंएं रंग की उसकी छाती सिर्फ चोली से ढकी हुई थी और उसने फरिया को ऐसे ढंग से खोंस रखा था कि उसकी नाभि दिखाई देती थी, लहंगा और नीचे कसा हुआ था अचानक उसकी चूड़ियां खनक गईं।

तब वह घबराकर डेरे से बाहर निकल आई।

सुखराम द्वार में चिपक गया कि कहीं वह देख न ले। जब औरत को कोई नहीं दिखा तो फिर डेरे में घुसी। इस बार वह तनिक भी विचलित नहीं दिखाई देती थी।

सुखराम उसकी मुद्रा देखकर आतंकित हो गया था।

औरत बढ़ी। ठोकर से खाट का पाया हिला। औरत पीछे हट गई, पाया हिल जाने से कजरी कुलबुला उठी और उसने धीरे से पूछा: 'आ गया?' उत्तर नहीं मिला तो कजरी जैसे चौंक उठी। स्त्री अब झपटने को तैयार थी। कजरी जागी। सामने एक औरत! अपरिचिता! कजरी ने पलक मारते देखा: हाथ में कटार!

दिये की रोशनी में चमचमाती कटार!

'कौन है?' कजरी चिल्लाई।

'तेरी मौत!' स्त्री ने फूत्कार किया।

औरत आगे टूट पड़ी। उस समय सुखराम चौंक उठा। कजरी तड़पकर उठी और सुखराम ने ताज्जुब से देखा कि वह बिजली की तरह झपटी। उसने उसको पकड़ लिया। दोनों स्त्रियां लड़ने लगीं। दोनों में बड़ा वेग था।

सुखराम को आनन्द आया। उसने कभी कजरी को लड़ते हुए नहीं देखा था, उसे आश्चर्य हुआ कि उसमें इतनी स्फूर्ति थी। वह ऐसे लड़ रही थी जैसे कौशल उसके लिए हस्तसिद्ध था।

शीघ्र ही यह लगने लगा कि कजरी उससे अधिक फुर्तीली थी। उसने उस स्त्री को धक्का दिया और टंगड़ी मारकर नीचे गिरा लिया और कजरी उसके ऊपर चढ़ बैठी।

औरत छटपटाने लगी। कजरी ने उसके कटार वाले हाथ को उमेठ दिया और कटार नीचे गिर गई। औरत घिघिया उठी। उसने अन्तिम चेष्टा की कि उठ खड़ी हो, परन्तु कजरी ने घुटना मारकर उसको दबा लिया। स्त्री चिल्ला उठी।

कजरी ने कटार लेकर हाथ उठाया कि सुखराम ने कहा: 'नहीं, कजरी नहीं...'

वह भीतर गया। उसने कहा: 'छोड़ दे!'

'छोड़ दूं!' कजरी ने फूत्कार किया: 'यह मुझे मारने आई थी!'

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible] रोते हुए कहा

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible] मुस्कराता रहा [illegible]

[illegible]

कजरी उठ खड़ी हुई। उसने कहा : 'बताया नहीं तूने ?'

'यह तेरी नई सौत है।'

कजरी ने औरत को घूरा और एक लात दी। औरत आर्त-सी उठ बैठी।

'उठ !' कजरी चिल्लाई। सुखराम हंसा : 'तो क्या मार ही डालेगी ?'

औरत डरी-सी उठी।

सुखराम ने कहा : 'परमेसुरी !'

स्त्री कांप उठी। कजरी ने आश्चर्य से देखा।

सुखराम ने कहा : 'क्यों शेरनी ! अब निकलूं तेरी टांग के नीचे से ?'

औरत की हालत खराब थी। चेहरा फक पड़ गया था। वह कुछ नहीं कह सकी। उसने बोलने का यत्न किया, किन्तु गला रुंध गया।

सुखराम ने उसका हाथ पकड़कर खींच लिया और उसकी धूल झाड़ दी।

कजरी को चैन कहां ! झट घास ले आई। उसके मुंह में देके कहा : 'कह, मैं तेरी गौ हूं।'

औरत ने विक्षोभ से देखा। सुखराम ठठाकर हंसा। कहा : 'हाय भगवान ! कजरी, तूने तो शेरनी को घास खिला दी।'

'बोल !' कजरी ने पटाक चांटा मारकर कहा : 'हरामजादी ! दुनिया में मरद मर गए थे जो तुझे ये ही दीखा ! अपनी सूरत तो देख मुंहजली, कुतिया ! बोल···'

उसने फिर चांटा मारा।

औरत ने पांव पकड़ लिए और रोते हुए कहा : 'मैं तेरी गौ हूं।' फिर सुखराम के पांव पकड़कर रोने लगी। सुखराम पिघला। कहा : 'अरी रोती क्यों है ? तू तो उसका खून करने आई थी न ?'

औरत ने रोते हुए कहा : 'मुझे माफ कर !' और उसने कजरी के पांव पर सिर धर दिया। कजरी ने लात देकर पांव हटा लिया।

'सरदार न कहियो,' औरत ने धरती पर पड़े-पड़े कहा : 'मैं क्या करूं ? उसने मेरा धरम बिगाड़ा था। मेरा एक बच्चा भी था। पर अब मैं यहां पड़ी हूं। क्या करूं ? कहां जाऊं ? तू आया था ! मैंने समझा था तू मुझे सरन देगा। मैं उससे घिन करती हूं। वह बड़ा कमीना है, मेरे सामने ही कितनी लड़कियों को बिगाड़ चुका है···मैं क्या करूं···'

कजरी को कोई दया नहीं आई। सुखराम को उसकी कथा में दर्द लगा।

'चल, चल,' कजरी ने कहा : 'आई बड़ी पतबरता, निकल यहां से।'

स्त्री ने दयनीय दृष्टि से सुखराम को देखा।

'उधर क्या देखती है हरामजादी !' कजरी ने कहा : 'यह तेरा खसम है ? निकल चल ! डोरे डाल रही है उसपर। आंसू बहा-बहाके पिघलाए जा रही है। मैं भी लुगाई हूं, सब समझती हूं।'

उसने उसके बाल पकड़ लिए और द्वार की ओर खींच ले चली। सुखराम देखता ही रह गया, कजरी उसे बाहर पटककर चिल्लाई : 'जाती है कि नहीं···'

वह कहने को हुई कि स्त्री भाग चली। उसके चले जाने पर कजरी भौं चढ़ाए भीतर घूमी। उसे अत्यन्त क्रोध था।

'कौन थी यह ?' वह बड़े जोर से चिल्लाई।

सुखराम ठठाकर हंसा और खाट पर चित लेट गया। कजरी मुंह फाड़कर देखती रही और फिर उसके पास बैठ गई।

'मैं बहुत थक गया हूं कजरी,' सुखराम ने कहा और फिर कजरी की ओर

उसने लालायित आंखों से देखा।'

कजरी तिनककर उठ गई।

30

कजरी नित्य कहती : 'अब काम कैसे चलेगा?'

'मैं नहीं जानता।'

'पर पेट तो सब जानता है।'

'इतना मैं भी समझता हूं।'

'फिर?'

'तू कुछ क्यों नहीं सोचती?'

सुखराम कहता और उसके मुख की ओर देखने लगता। गांव वह जा नहीं सकता। आन गांव जाता है, कभी शहद बेच आता है, कभी डाग मे दवा-दारू कर देता है। कजरी जाकर सूप बेच आती है। पर अधूरे किले के गांव की ओर दोनों नहीं जाते। इसीसे जो मिल जाता है उसमें पेट भर जाता है। फिर भी मन नहीं भरता। खुलकर चलने-फिरने की आजादी नहीं है। कहां जाए, जिसमें कोई देखनेवाला न हो। किसी और रियासत में क्यों न चले जाएं, डांग में से उधर की डाग भी तो मिली हुई है।

सुखराम शिकार मारकर लाता है। दोनों उस मांस को भरपेट खाते हैं। उनके पास जमीन नहीं कि खेती करें। पैसा नहीं कि बिरजी फिरें। खेल दिखा नहीं सकते, पकड़े जाने का डर है और नौकरी में रखेगा कौन? अहमदाबाद ही कैसा रहेगा? पर नितान्त परदेस में जाने की हिम्मत नहीं पड़ती एकाएक।

एक दिन राजा आया। दोनों ने उठकर स्वागत किया। खाट पर बिठाया। कुशल-क्षेम पूछी गई। राजा ने अपनी नई चोरियों का किस्सा बयान किया। उसे जैसे कोई डर नहीं। उसे पुलिस वाले दिखते हैं तो छिप जाता है।

'अरे तू बता, कजरी — ?' उसने पूछा।

सुखराम ने [illegible] की ओर देखा, कजरी ने सुखराम की ओर। जैसे दोनों ही उत्तर की खोज में हों। परन्तु क्या कह सकते थे! और कजरी की आंखों से निराशा छा गई।

'कुछ नहीं राजा जी।' सुखराम ने कहा।

'खाना मिलता है?'

'सो तो भगवान की दया है।' कजरी ने कहा : 'दोनों जून मिल जाता है राजा जी।'

सुखराम ने भी स्वीकृति में सिर हिलाया।

'तो मेरे साथ चलता क्यों नहीं?' राजा ने पूछा।'

इसी समय रानी आ गई।

कजरी ने उसे प्रेम से खाट पर राजा के पास ही बिठा दिया।

रानी ने पूछा : 'कहां ले जा रहा है उसे?'

'धंधे पर।'

तू जायगा?' कजरी ने पूछा।

'जी नहीं करता।' सुखराम ने उत्तर दिया।

'जी!' रानी ने [illegible] : 'पेट के आगे जी का क्या सवाल है मूरख? जी बड़ा कि जिन्दगी?'

'जिन्दगी ।' सुखराम ने कहा ।

'ले सो चले ।' राजा ने दाद दी ।

रानी ने कहा : 'कजरी, तू नहीं कहती कुछ ?'

'कहती तो हूं ।' कजरी कह उठी ।

'तो तू ही डरता है ?' राजा ने कहा : 'देख !'

उसने पीठ दिखाकर कहा : 'यह देख, हंटरों की मार ! पर मैं कभी नही डरता । बचपन से जिसको मौका मिला है उसीने मुझको मारा है । पर मैंने भी कसर नही की । मै मुहब्बत मे नही फसता । मौका मिलते ही पैसा हाथ से जाने देना मेरा धरम नही । किसान गरीब मेहनत करता है, उसकी बेदखली होती है, घर बिकता है, ढोर बिकते हैं; पर शिकमी को वह भी नही छोडता । फिर हम तो शिकमी भी नही । हम भी खेतों में मजूरी करके पेट पाल सकते थे, पर हम जात के नट हैं । कोई हमारा भरोसा नही कर सकता, तो हम क्यों किसीका भरोसा करें ?'

वह चुप हुआ तो रानी ने उसके पीठ के निशानों पर गर्व से हाथ फेरा और कहा : 'मरद होना भी बडा कठिन है कजरी । कैसी-कैसी सांसत उठानी पड़ती है । जरा दया नही की जाती इन पर । देख ! यह देखती है इसकी इस छोटी उंगली का नाखून ! पुलिस ने खींच लिया था । पर यह भी मरद है । इसने उफ तक न की, न माल का पता दिया; ऐसा भोला बना रहा कि वे चक्कर में पड़े रहे । सच, मैं तो यही सोचती रही हूं कि भगवान ने औरत बनाई तो बड़ा अहसान कर दिया ।'

कजरी रो उठी ।

'क्यों, क्या हुआ ?' राजा ने पूछा ।

कजरी ने कहा : 'नही, मैं न जाने दूंगी इसे । वे इसे मार डालेंगे ।'

'अरी तो मरनेवाले क्या महलों में नही मरते ?'

'वह और बात है ।'

'तेरी मरजी !' राजा उठ खड़ा हुआ । सुखराम भी खड़ा हो गया । कजरी बैठी रोती रही ।

सुखराम ने लौटकर पूछा : 'तू रोई क्यों ?'

'मुझे जेठी की याद आ गई थी ।'

'झूठी ।'

'क्यों ?'

'तू समझी थी, मैं उसके संग चला जाऊंगा । वे मुझे मार डालेंगे । यही बात थी न ?'

'जब तू समझ ही गया है तो पूछता क्यों है ?'

सुखराम ने कहा : 'कजरी, तू इतनी [illegible] क्यों है ?'

'क्या बकता है !' कजरी ने [illegible] कहा : '[illegible] भी इतनी [illegible] करना होगा !'

[illegible]

[illegible]

दायित्व पुरुष और नारी साथ-साथ उठाते है, और फिर कोई जघन्यता नहीं बची रहती।

'सच कजरी, तू बड़ी अच्छी है!' सुखराम ने दुहराया।

'मैं अच्छी हूं कि तू पागल है?'

'क्यों?'

'मैं यही सोचती थी कि तू इतना अच्छा क्यों है!'

'कितना अच्छा हूं?'

कजरी मुस्कराई और फिर सुखराम के बालों में हाथ फिराने लगी। उसकी उगलियां कंघी की तरह हो गईं।

'बता तो।' सुखराम ने फिर पूछा।

कजरी ने कहा: 'मैं कैसे बताऊं तुझे? मन की बात कैसे समझाऊं? फिर मुझे कहना भी तो नही आता।'

'अगर पुलिस को मालूम हो जाए,' सुखराम ने कहा: 'कि एक बहुत अच्छा आदमी यहां रहता है तो?'

कजरी का मुंह उतर गया। उसने कहा: 'राज राज ही है, पर राज का अंधेर कौन रोक सकता है?'

बाहर आहट हुई। सुखराम ने पूछा: 'कौन है?'

एक डाकू आया। कजरी उसे देखकर मन ही मन कांप उठी, पर उसने अपने को दृढ़ बनाए रखा।

'अरे खड्गसिंह!' सुखराम ने पूछा: 'आज बहुत दिन बाद दिखाई दिए। क्या है? अच्छे तो हो?'

'क्या है?' खड्गसिंह ने कहा: 'पूछता है, क्या है! डाकू कब अच्छा नहीं रहता है?' वह हंसा।

'बैठो, हुक्का पी लो।' सुखराम ने कहा।

'सरदार ने बुलाया है।' खड्गसिंह ने कहा। कजरी के कान खड़े हुए। वह कहता गया: 'फिर बैठ लूंगा। इस बखत चल जरा।'

सुखराम ने कजरी की ओर नहीं बल्कि धरती की ओर देखा।

'नही भैया,' कजरी ने कहा: 'हमे किसीसे कुछ नही चाहिए। वह नही आएगा अब।'

'क्यों?' डाकू ने पूछा।

'हमे सांसत मोल नही लेनी अब।' कजरी ने कहा।

'नही कजरी, सरदार ने बुलाया है।' सुखराम ने आगन्तुक की ओर देखते हुए कहा।

'वह सरदार है।' आगन्तुक ने कहा: 'सौ बार काम आता है, यह समझ लो।'

'जाना ही होगा।' सुखराम ने कहा: 'वह दोस्त है।'

'ऐसे की दोस्ती भी बुरी,' कजरी ने कहा: 'और बैर भी बुरा। तू जो करता है ऐसी ही गड़बड़ करता है।'

डाकू के दांत चमके।

'अरी तो मरी क्यों जाती है?' सुखराम ने कहा: 'आदमी आदमी के ही काम आता है।'

एक न आदमी एक वो आदमी आदमी सा तो मुझ कोई न लग

जब सुखराम पहुंचा तो ने कहा तू कहा था?

'कहीं नहीं।'

'क्या ? तेरे सिर पर छत भी नहीं ?'

'डेरे में था सो गो।'

'तो यों कह।' सरदार ने कहा।

सुखराम बैठ गया। सरदार ने हुक्का दिया। उसने चिलम उतारकर दम लगाए।

'अब क्यों नहीं चलता ?' सरदार ने बातों के बीच में पूछा।

'कहां ?'

'किसी दिन मेरे साथ चल। मजा रहेगा। पड़े-पड़े तेरे पांव अकड़ते नहीं ?'

'मैं दुनिया से ऊब गया हूं।'

उसी समय वही स्त्री भीतर आई और उसने अन्तिम वाक्य सुनते हुए कहा : 'क्यों, वह तेरी औरत क्या हुई ? मर गई !'

'मरे तू।' सुखराम ने कहा : 'वह तो मजे में है।'

'तू उसे बहुत चाहता है !' स्त्री ने बैठकर कहा।

'तुझे मतलब ?' सुखराम ने मुंह मोड़कर उत्तर दिया।

'क्या बताऊं ? एक दिन मुझे भी ले चल वहां।' उसने कहा : 'सरदार, वैसे मने देखी है। इसके लिए ऐसी जोड़ी है कि देखके आंखें सिरा[illegible] हो जाती हैं।'

सरदार ने कहा : 'अरे जाने दे उसे, तू मुझे उससे बात करने दे। घूम-फिरकर ले आई वही लुगाइयों वाली बात। हां सुखराम ! तू करता क्या ?'

'मैं नहीं जानता।'

'यार, तू तो साधू हो गया।'

सुखराम ने सिर झुका लिया।

'पर यों जीना तो मेरे लिए [illegible] है।' सरदार ने कहा।

'क्यों ?' सुखराम ने पूछा।

'भई, बगत की बात है। कल को तुझे पुलिस [illegible] तो तू तो मुझे फंसा देगा।'

'तुम ऐसा मानते हो तो मैं चला जाऊंगा।'

'कहां ?'

'दूसरी रियासत में।'

'नहीं तू रह, मुझे डर नहीं,' डाकू ने कहा : 'वह [illegible] गया, उसकी जगह दूसरा आ गया है।'

सुखराम ने [illegible] गया या नहीं।

पूछा : 'वह एक [illegible], चमार था···'

'उसे फांसी हो गई।' सरदार ने कहा।

सुखराम कांप उठा। उसका मन [illegible] किया, [illegible] पर [illegible] को जेल हुई। रुस्तम मरा, [illegible] मरी, [illegible] मरा, बांके मर गया, और दीवान भी मर गया ! एक पेशकार रह गया जिसे उसपर [illegible] करने की [illegible] हो सकती है। और तो कोई नहीं।

'क्या सोचता है ?' सरदार ने पूछा।

'सोचता हूं, गांव लौट जाऊं।'

[illegible] क्य है

[illegible] न [illegible] दरोगा [illegible] होगा

'सो तो है।'

'मैं किसीका बुरा नहीं चाहता सरदार, मै दुश्मनी नहीं रखता; पर लोग जीने क्यो नहीं देते ?'

स्त्री हंसी। कहा : 'यही तो मैं कहती हूं। रांड रंडापा तो तब काटे जब रंडुआ उसे काटने दे।'

सरदार ने ठहाका लगाया। आज सुखराम हंस नहीं सका। फीकी-सी मुस्कराहट होठों पर डोलकर रह गई, जैसे बेचारी मन मार गई हो।

'तू जा सुखराम !' सरदार ने कहा : 'तुझसे कोई डर नहीं।'

'दगा न करियो !' स्त्री ने कहा।

'मैंने तुझसे की है ?' सुखराम ने आंखें गड़ाकर पूछा।

'नही।' स्त्री के दांत खिसियाकर क्षमा-याचना की मुद्रा में खुल गए।

लौटा तो कजरी रास्ते में मिली। सुखराम को आश्चर्य हुआ। पर गया तो देखा, उसकी आखें लाल थी, जैसे रोकर आई हो।

'तू रोई थी ?' उसने पूछा।

'नही तो,' और कजरी ने नीचे का होंठ काट लिया, जैसे अपनी रुलाई को रोक रही थी।

'पगली !' सुखराम ने उसकी पीठ पर हाथ रखकर कहा : 'भला इसमें रोने की क्या बात थी ?'

'तू नहीं समझेगा ?' कजरी ने आसू पोंछे।

'तू क्या कर रही थी यहां ?'

'तेरी राह देख रही थी।'

'क्यों, मै क्या आता नही ?'

'मैं तो डर रही थी।'

'डरने की बात ही क्या थी जो ?'

कजरी ने आंखें तरेरी।

'क्यो ?' सुखराम ने उत्सुकता से पूछा।

'मुझसे बनता है ! तू मेरे हिये की इतनी भी नहीं जानता ?'

हिये की होती तो जान जाता कजरी, यह जरूर तेरी अकल की होगी, और उसे समझना उड़ती चिड़िया पकड़ने के बराबर है।'

'कही उस डायन ने कोई जाल न फैलाया हो, मैं तो यही सोच-सोचकर मन ही मन मरी जा रही थी।'

'अरे भला वह औरत है। वह क्या है ?' सुखराम ने व्यंग्य किया।

'सच कहती हूं !' कजरी ने कहा : 'मुझे तो बाद में ध्यान आया उसका, नही तो नही जाने देती ! औरत ? तू क्या जाने औरत को ? जित्ती नरम दिखती है उत्ती पत्थर होती है। तू उसकी क्या जाने ? सब कुछ छीनकर अपना कर लेना चाहती है।' कजरी ने सोचते हुए कहा : 'वह नही जानती कि वह क्या करना चाहती है, उसे लगता है कि उसका दुसमन और कोई नही, औरत ही है। सच, अगर औरत औरत के खिलाफ न जाए, तो वह मरद को उल्लू बना सकती है। कुत्ता भी एक-दूसरे से उतनी नफरत नही करता जितनी औरत औरत से करती है बलमा ! मरद कैसा भी हो, औरत के सामने सिर झुकाता है, क्योंकि वह औरत का जाया होता है। और लुगाई ! लुगाई लुगाई के पेट म आती है वह क्या है इसे औरत ही जानती है

त तो प्यारी म नही करती थी कुछ सुखराम ने पूछा उसे अब भी ताज्जुब

हो रहा था। प्यारी का नाम सुनते ही कजरी को रोमांच हो आया। उसे फिर दुःख ने घेर लिया।

'वह तो मुझे चाहती थी।' उसने धीरे से कहा। उस स्वर में जैसे उसकी मन की भीतरी वेदना ने धीरे से झांका और फिर जहां की तहां बैठ गई, जहां से संभवत वह कभी भी निकल सकेगी, इसमें सन्देह था।

सुखराम ने कहा: 'कजरी, मुझे वे बीते हुए दिन याद आते हैं।'

'मुझे क्या नहीं आते?'

दोनों ने एक बार आंखों में झांककर देखा। कहा कुछ नहीं।

वे डेरे मे पहुंच गए।

दूसरे दिन दोपहर बाद एक व्यक्ति आया। वह करनट था। उसने सुखराम को दिखाया। पांव में बड़ा जख्म था।

सुखराम ने कहा: 'यह तो बहुत बढ़ गया रे। पहले क्यों नहीं आया? अच्छा, जड़ी ले आऊं तेरे लिए।'

'रात हो गई है।' कजरी ने उसे उठते हुए देखकर कहा: 'अब तुझे दिखाई भी क्या देगा वहां? जंगल का मामला। कीड़ा दौड़ता होगा, बघेर होगा। कल जो चला जइयो!'

सुखराम ने कहा: 'रात हो गई? तेरे लिए भी लकड़ी ले आता हूं।'

'क्यों।'

'मुझे लगता है तुझे रतौंध शुरू हो गई है।'

'अब के सावन-भादों मे नारी का साग खिला दीजो।' उस मरीज ने सच्चे दिल से राय दी।

कजरी ने खिसियाकर कहा: 'तेरी हरियाली में फूटी होंगी, जो सावन-भादों ही दिखाई दे रहे हैं।'

'अरी परमेसुरी!' मरीज ने कहा: 'मुझसे तकरार करती है, वह कहता है तो कुछ नहीं कहती?'

'वह तो मेरा खसम है।' कजरी ने कहा।

'वह!' मरीज ने कहा: 'तुझे लाज नहीं आती उसके सामने लड़ते!'

कजरी ने जीभ दांतों में काट ली। मात खा गई। कहा: 'अभी देख लाएं। पर मैं आटा लाने को थी, ला, पैसे दे दे।'

सुखराम ने कहा: 'अरी कल ले अइयो।'

मरीज ने आठ आने निकालकर देते हुए कहा: 'लो बहू री! ले आ। मैं कल आ जाऊंगा, सवेरे।'

'नहीं, नहीं,' सुखराम ने दिखावा किया, पर तब तक अठन्नी कजरी के हाथ की मुट्ठी में बन्द हो चुकी थी।

मरीज के जाने के बाद सुखराम बैठ गया। कजरी गेहूं ले आई उस छोटी-सी दुकान से। और फिर पड़ोसिन को एक पैसा देकर गेहूं की जगह रात लायक आटा मांग लाई। रोटी खा चुके तो सूरज ढल रहा था।

कजरी ने कहा: 'चलेगा नहीं?'

'कहां?'

'आज मेरा मन करता है, तू मुझे घुमा ला।'

दोनों चल दिए। पहाड़ पर से देखा सामने ही अधूरा किला खड़ा था। आज सुखराम को लगा जैसे वह बहुत दूर हो गया था, बहुत दूर, इतनी दूर कि वह मर गया था

की कल्पना के प्रसार से भी दूर था।

'क्या देख रहा है ?' कजरी ने समझ लिया।

'मैं उसका मालिक कभी नहीं हो सकता!'

'न सही। होकर हो क्या मिल जाएगा?'

'कजरी, तू कुछ नही चाहती?'

'नही। मेरे पास सब कुछ है; जो कुछ है सो दूगी नहीं, नये के लिए हाथ नही पसारती।'

कजरी की बात ने सुखराम के मन में जगह बनाई। वह मन ही मन कजरी और अधूरे किले को तोलने लगा; और आज उसे पहली बार यह अनुभव हुआ कि वह कजरी को चाहता है, अधूरे किले को नहीं। वह अधूरा किला उसके मन की हवस है, कजरी उसके मन का ठहराव है। वह कजरी के सामने अधूरे किले को धूल के बराबर भी नहीं समझता।

और उसे उस क्षण यह आश्चर्य हुआ कि वह क्यों इस पत्थर के ढेर के लिए व्याकुल था। उसके पास कजरी थी। कजरी उसके लिए सब कुछ थी। और सचमुच अगर वह अधूरा किला उसे मिल जाए तो? तो क्या वह उसे संभाल सकता है? उसे तो पढ़ना भी नहीं आता। कहते है, बड़े आदमी पढे होते हैं। और पढ़ाई से आदमी मे अकल आती है। वह क्या है? एक करनट। भले ही वह ठाकुर कहता रहे।

और आज वह चोरों की तरह मुंह छिपाकर पड़ा है यहां! कजरी ही तो उसका एकमात्र सहारा है!

दोनों देर तक सोचते रहे। कजरी सोच रही थी: अगर कहीं काम लग जाए तो अच्छा हो। न काम है, न सही, पर आजादी तो चाहिए!

सुखराम ने कहा: 'कजरी! मुझे किला नहीं चाहिए।'

'दे कौन रहा है?'

'दे भी, तो नहीं चाहिए।'

'बड़े भाग मेरे! तुझमें अकल तो आई!'

'कजरी, हम चलेंगे।' उसमें नया विश्वास था।

'कहां?'

'अहमदाबाद!'

सूरज डूब चुका था। पर कजरी ने उस नवीन जागरण को देखा और उसे सुख हुआ। आज जैसे भय दूर हो गये थे। पूछा: 'कब चलेगा?'

'कल ही। तेरे पास रुपये बचे है?'

'है, पन्द्रह बचे हैं।'

'बहुत हैं, रास्ते का खर्च निकाल ही लेंगे। फिर वहां तो काम मिल ही जाएगा।'

कजरी ने कहा: 'चल, अंधेरा छाने लगा।' वह चौंक उठी थी।

'पर मुझे आखिरी बार इसे देख लेने दे। तब चलूंगा जब अंधेरा इसे मेरी आखो से खो दे, ताकि इसे मन में भी संग-संग ही धो दू।'

कजरी ने कहा: 'हाय, मुझे डर लगता है।'

धीरे-धीरे किला अन्धकार मे खो गया और फिर चारो ओर कालिमा छा गई। तब वे दोनों चल पडे। सुखराम का मन भारी था।

तूने जडी नहीं ली ?

'कल ले लूगा सुखराम ने कहा

'यही सोचती थी। उसे बता दीजो। वरना कल के बाद कौन इलाज करेगा उसका।'

'दवा बनाके दे दूंगा। ऐसे बहुत बता दी।' सुखराम ने कहा : 'गुरु का हुकम है, बता नहीं सकता।'

अचानक एक औरत की चीख सुनाई दी। अन्धकार की निर्जनता में स्वर भयानक बनकर गूंज उठा। कजरी सुखराम से लिपट गई।

'क्यों डरती है ?'

'यह क्या हुआ ?'

'अभी तो मैं हूं री।'

फिर चीख सुनाई दी। अब की बार और पास।

कजरी चौंकी। सुखराम ने उसकी कमर में हाथ डालकर उसे और पास खींच लिया। कजरी को चैन आया। उसने कान के पास मुंह ले जाकर कुछ बहुत धीरे से कहा।

'क्या ?' सुखराम ने वैसे ही पूछा।

कजरी ने कहा : 'कोई औरत है।'

सुखराम ने इशारा किया। वह चुप हो गई। फिर सुखराम आहट लेने लगा। बाद में कहा : 'आवाज उधर से आई है।'

फिर पगध्वनि सुनाई दी।

कजरी ने कहा : 'देख, कोई चल रहा है।'

'चल, देखें।'

दोनों भागे, पर पांव संभालकर। कुछ दूर चलने पर ही एक मशाल जलती हुई दिखी। उसकी आग हवा में फरफरा रही थी और उससे उजाला हो रहा था।

सुखराम ने कजरी का हाथ पकड़कर कहा : 'वह देख।'

चट्टान की आड़ से देखा। कजरी फुसफुसाई : 'अरे !'

'क्या हुआ ?'

'यह तो तेरा वही है।' कजरी ने पहचानते हुए बताया।

'कौन ? [illegible]सिंह और सरदार !' सुखराम ने कहा।

'यह संग कौन है ?'

'कोई लुगाई है।'

'अरी भभूका गोरी है रे !' कजरी चौंकी।

'मुझे तो मेम-सी लगती है।' सुखराम और भी चौंका।

'दैया री ! मेम ? यह तो मेम ही है।'

'यह कहां से ले आया !' सुखराम ने कुरेदा।

'मरने दे ! हमें क्या !' कजरी को वह उत्सुकता भयकारक लगी।

'नहीं कजरी, यह तो खतरा है।'

'क्यों !' वह घबराई।

'कल ही डांग में पुलिस आ जाएगी।'

कजरी कांप उठी। कहा : 'फिर ?'

'इसे बचाना होगा।'

'और सरदार न माना तो ?' कजरी ने खतरा दिखाया।

'उसे मानना होगा,' सुखराम ने दृढ़ स्वर में कहा, 'वरना हम सब तबाह हो जाएंगे।'

कजरी एकदम सामने पहुंच गई। चिल्लाई : 'औरत पर हाथ उठाते तुम्हें लाज नहीं आती ?'

'अरे कौन है तू ?' खड़गसिंह ने कहा : 'चुप रह, भाग जा !'

'नहीं भागूंगी।' कजरी ने कहा : 'पकड़ के लिए जाते है दोनों। अरे तू कहां रह गया ?'

सुखराम ने आगे बढ़कर कहा : 'राम-राम, भैया !'

'अच्छा !' सरदार ने कहा : 'और भी कोई है ?'

'कोई नहीं।'

'तो हट जाओ सामने से।'

'हट तो जाए,' सुखराम ने विनीत स्वर में कहा : 'पर तुमने यह भी सोचा है कि क्या कर रहे हो ?'

'क्या कर रहे है ?' सरदार ने पूछा।

'यह मेम है, जानते हो ?'

देख, इसकी खाल कैसी नरम और अच्छी है !' सरदार ने उस स्त्री का हाथ अपने हाथ मे मसलकर कहा। वह स्त्री संत्रस्त-सी कांपकर चिल्ला उठी।

'सुसरी चिल्लाती है।' सरदार हंसा।

'यह ठीक नहीं है,' सुखराम ने कहा : 'तुम्हें फायदा क्या ? तुम्हें इसके बदले मे कोई रुपया नही देगा। कल में ही पलटनें डांग मे गोली चला-चलाके सबको भूनना शुरू कर देगी। मूरख ! ये राजों के राजा हैं।'

'अरे शेर को न जगा,' कजरी ने कहा : 'अपनी मौत अपने-आप क्यो बुला रहे हो ?'

मेम डरी हुई थी। पत्ते की तरह कांप रही थी। उसे भय के कारण पसीना आ गया था। उसके कटे हुए बाल कन्धों पर लहरा रहे थे।

उसने कहा : 'बचाओ। बचाओ...'

और वह कजरी के पांवों पर गिर गई। सरदार चौंक उठा। वह आगे बढ़ा। पर सुखराम ने कहा : 'नही, नही, तू नहीं समझता। ऐसा मत कर। तू आगे की भी तो सोच !'

कजरी ने मेम को उठाकर कहा : 'डरो नही, बीबी जी। डरो नही। कोई तुम्हारा कुछ नहीं करेगा।'

उस आश्वासन को सुनकर मेम को चैन मिला। उसने कजरी को आलिंगन मे कस लिया और रोने लगी, जैसे भय अब फूट निकला था।

सरदार ने कहा : 'छोड दे उसे !'

सुखराम ने कहा : 'मान जा सरदार !'

'नहीं !' सरदार चिल्लाया : 'छोड दे उसे तू।'

'क्यों छोड़ दें !' कजरी ने कहा : 'तेरे बाप की लुगाई है जो मै छोड़ दूं ? मेरे रहते तू एक औरत की इज्जत बिगाड़ लेगा ? अरे मै मर जाऊंगी पर हाथ न लगाने दूंगी।'

'ऐसी लुगाई मैंने आज तक न देखी।' खड़गसिंह ने कहा : 'बड़ी मूरख है।'

परन्तु स्त्री ने कजरी को अब और कसकर पकड़ लिया और कहा : 'तुम मेरी मा हो।'

किसीको क्या पता चलेगा ? ने कहा

अरे पहले तो ऊपर वाला ही देख रहा है कजरी ने डाटा

'सुसरी अकेली घूम रही थी।' खड्गसिंह ने कहा।

'कहां?' कजरी बोली।

'पहाड़ पर।'

'तो गांव पर गोली चलेगी।' सुखराम ने जल्दी में बुड़बुड़ाकर कहा। मेम के हिन्दी बोल देने के बाद उसने जान-बूझकर ऐसी बात की, और वह सचमुच नहीं समझ सकी। परन्तु बाकी कजरी और वे दोनों समझ गए।

'और यह लौट गई तो?' खड्गसिंह ने पूछा और सरदार की ओर देखा। दोनों की आंखें चार हुईं। फिर इशारे हुए।

सुखराम ने सोचा और फिर कहा: 'लौट गई तो भी क्या? हमें क्या डर है कि फिर क्या होगा?'

'हमें तो है।' सरदार ने कहा।

'मैं तुम्हें नहीं जानता। यह जान लेगी?' सुखराम ने धीरे-धीरे स्पष्ट स्वर में कहा: 'जानें तुम्हें पड़ोस की किसी रियासत के लोग?'

'मैं नहीं मानता!' सरदार बड़बड़ाया।

'सौगन्ध है। दगा नहीं दूंगा।' सुखराम ने वैसे ही शब्द घुमाकर कहा। मेम डरती ही-सी दीखती थी।

सरदार सोचने लगा।

कजरी ने मेम से कहा: 'मेम साब।'

मेम ने आंखें खोलकर उसे देखा।

'तेरी तबियत आ गई है लुगाई गोरी देखके?' कजरी ने सरदार से कहा।

'क्यों, न आएगी?' सरदार ने कहा: 'मरद नहीं हूं?'

'अरे तू मरद है तो क्या इसीलिए कि पराई लुगाइयों की बेइज्जती करे?'

'तुझे इस सबसे क्या?' सरदार खीझ उठा।

'क्यों' मैं क्या लुगाई नहीं हूं?' कजरी ने बात काटी।

'अच्छा!' खड्गसिंह ने कहा: 'तो तू इससे अपना मुकाबला कर रही है नटनी?'

'अरे चल, दाढ़ीजार!' कजरी ने कहा।

सुखराम ने कहा: 'तो तूने इसे छोड़ दिया?'

मेम ने डरकर आंखें फिर मीच लीं। मशाल के फरफराते उजाले में कजरी ने से देखा: वह एक अठारह-उन्नीस साल की छरहरी और तन्दुरुस्त स्त्री थी, जिसके बाल कुछ सुनहरे थे और आंखें भी पीली-सी थीं। उसके होंठ पतले थे और उसके पास से खुशबू आ रही थी। वह पाउडर और लैवेण्डर की गंध थी। कजरी ने सोचा, शायद कोई इतर होगा। उसने आराम से उस गंध को सूंघा, और इसलिए स्त्री के इतना कसकर पकड़ने पर भी उसे बुरा नहीं लगा।

'छोड़ दूंगा।' सरदार ने कहा: 'पर यों नहीं।'

'तो कैसे?' सुखराम ने पूछा।

'तू आज इसे ले जा, पर पहले मुझे हरा जा।'

'सो कैसे?'

'तू मुझसे लड़ ले।'

'यह नहीं होगा।'

'क्यों? जब तू मुझे जानता नहीं तो वैसे ही कैसे ले जाएगा? बहुत दिनों से अटक रही है उस दिन की। आज तू फसला कर ले

सरदार ने पिस्तौल वाला हाथ उठाया।

'कायर!' कजरी चिल्लाई : 'वह निहत्था है।'

मेम ने आंखें खोल दीं और उसे लगा, अब वह सब आशा मिट्टी में मिल जाएगी। उसने देखा सामने सुखराम—एक मजबूत आदमी अपने हाथ सीने पर बांधे खड़ा था। वह मुस्कराया। उसने कहा : 'तो तू सचमुच लड़ना चाहता है?'

'हां।' सरदार फुंकार उठा।

'तो···' सुखराम ने झपटकर लात दी और पिस्तौल उछाल दी, और सरदार के चैतन्य होने के पहले ही अपने हाथ में ले ली तथा हंसकर उसने खड़गसिंह को देकर कहा : 'इसका क्या काम? तू रख ले। हमारी-इसकी बराबर की होगी।'

सरदार ने झपटकर पिस्तौल खड़गसिंह से छीन ली और हटकर तानकर खड़ा हो गया।

'तो ठहर जा!' सुखराम ने पत्थर का टुकड़ा फुर्ती से उठाकर कहा : 'मुझे भी संभल जाने दे।'

'क्यों?' सरदार ने पूछा।

'मुझे तैयार होने दे।'

'मंजूर है।'

दोनों आमने-सामने खड़े हो गए। कजरी ने आकुल चिन्ता से मेम को और कस लिया और मेम ने भयार्त्त होकर आंखें फाड दीं और उसके मुख से निकला : 'क्राइस्ट!'

कजरी समझी नहीं। उसने कहा : 'डरो मत! वह भी न रहे, पर मैं तो हूं। जब मैं भी न रहूं, तब तुम भी न रहना।'

मेम चीख उठी।

सरदार ने गोली चलाई। पहाड़ी प्रान्त में एक बार धूं की भयानक आवाज़ गूंज गई और साथ ही देशी तमंचे से धुआं भी निकला। सुखराम उछला।

'कायर!' कजरी चिल्लाई : 'निहत्थे पर गोली चलाता है।' और उसने मुड़कर देखा।

सुखराम हंसा। कजरी की छाती फूल उठी और उसने मेम को फिर चिपका लिया इस बार और जोर से।

गोली सुखराम का हाथ छीलकर निकल गई। खून चुचा आया। और कुछ नहीं।

'अब तेरी बारी है।' डाकू ने कहा : 'फिर मैं देखूंगा। बोल मर्द है तो वार कर।'

खड़गसिंह ने मशाल झुकाकर उजाला कर दिया जैसे स्पष्ट देखना चाहता था।

'अब संभाल,' सुखराम ने कहा और घुमाकर पत्थर फेंका। पत्थर डाकू की कलाई में लगा।

'हाय माहुडाला!' कहके वह नीचे बैठ गया और पिस्तौल छिटककर [illegible] गिरी। सुखराम ने झपटकर पिस्तौल उठा ली और सरदार पर [illegible]। सरदार के [illegible] पर चढ़कर उसने पिस्तौल तानी कि सरदार ने कहा : 'दुहाई है!' सुखराम [illegible] पिस्तौल गिर गई। उठ खड़ा हुआ। कहा : 'जा, चला जा!'

सरदार उठा। क्षण-भर कृतज्ञ और गद्गद नेत्रों से वह विकराल व्यक्ति [illegible] रहा। सुखराम मुस्कराया।

सरदार ने पगड़ी [illegible] सुखराम के पांव पर फेंक दी

[illegible] ? सुखराम ने पूछा

का पता बताओ। हम कहां से बता देंगे ?'

'हम वादा करती हूं।' मेम ने वचन दिया : 'हमारे रहते कुछ नही होना। तुम हमको पहुंचाओ, हमारा बाप तुमको इनाम देगा।'

वे चलने लगे।

'आज तुमने हमको बचाया।' मेम ने कजरी का हाथ पकड़कर कहा : 'वो लोग हमको पकड़कर ले जाते थे।'

'डाक बंगला इधर है,' सुखराम ने कहा : 'उधर से दो मील का चक्कर पड़ेगा। इधर से चलो। रास्ता तो खराब है, पर आधा रह जाएगा।'

'चलो,' मेम ने कहा।

'गिरोगी तो नही ?' कजरी ने पूछा।

'नही।' मेम ने कहा : 'मैं पहाड़ पर चढना-उतरना जानती हूं।'

सुखराम ने कहा : 'तो ठीक है। आ जाओ।'

'तुम्हें कैसे पकड लिया उन्होंने मेम साब ?' कजरी ने पूछा।

'हम पहाड पर घूमती रही, वहां हमको अचानक पकड़ लिया। हम कुछ नही कर सकी।' मम ने सरलता से कहा : 'तुम आई। तुमने हमको बचाया। तुम बहुत अच्छी हो। तुम बहुत अच्छी हो।'

उसने जैसे दुहराकर अपनी बात को दृढ किया और कजरी को स्नेह से देखा।

'हाय दैया!' कजरी ने कहा : 'कैसे बोलती है!'

सुखराम हंस दिया।

मेम ने सुखराम को नजर भरकर देखा।

कजरी ने कहा : 'ऐ मेम साब! उसे खाओगी क्या ?'

मेम ने आंखें नहीं हटाई। उसी तरह विभोर स्वर में उसे देखते हुए मग्न होकर कहा : 'बड़ा बहादुर है!'

कजरी पर सांप लोटा।

'दैया री! नजर लगाने लगी कलमुंही तुझे। मैं क्या करूं ? हम गंवार। यह राजाओं की रानी। तेरी बलिहारी भगवान।'

मेम कुछ नहीं समझी। उसने सुखराम की ओर देखा। वह केवल मुस्करा दिया। कुछ कहा नहीं।

'क्या कहती है ?' मेम ने पूछा।

सुखराम ने कजरी की ओर देखा। वह आंखें तरेरे हुए थी।

'हुजूर, आपसे डरती है।' सुखराम ने कहा।

'डरे मेरी बला।' कजरी गोलमोल बड़बड़ाई और फिर धीरे से उसने सुखराम को नोचा।

'क्यों डरती है ?' हम अच्छी बात करती हैं।' मेम ने कहा।

'हां मेम साब।' कजरी ने कहा : 'अब नहीं डरूंगी।'

'यह तुम्हारा आदमी है ?' मेम ने पूछा।

'हां हुजूर,' कजरी ने कहा है : 'यह मेरा आदमी है।'

'वेरी गुड!' मेम ने कहा : 'ठीक है।' फिर जैसे अपने-आप ही प्रशंसात्मक स्वर मे कहा : 'अच्छा है।'

कजरी ने सुना तो घबराई। उसे सारी दुनिया अपनी कल्पना मे ही रंगी दिखाई देती थी

[illegible] कजरी ने कहा [illegible] हाय मैया [illegible] चल नासपीटे अब भी लौट चल

उसका इशारा सुखराम से था। पर वह चलता रहा।

'अरे सुनता नहीं! देखो तो कढ़ीखाए को। छछूंदर के सिर में चमेली का तेल!' कजरी ने फिर कहा।

'किसका तेल!' मेम ने कहा : 'क्यों? तेल का क्या हुआ?'

कजरी ने झल्लाकर कहा : 'तेल-मेल नहीं मेम साब!'

सुखराम हंसा।

कजरी बड़बड़ाई : 'बड़ा मजा आ रहा है तुझे?'

सुखराम को जोर से हंसी आई।

'क्यों हंसते हो तुम?' मेम ने पूछा

'वैसे ही हुजूर!' सुखराम ने कहा।

'सरकार, हम गरीब लोग हैं। गमार है।' कजरी ने कहा : हमसे गलती हो ही जाती है। आप हमें माफ कर दें।'

'पर तुम्हारा बडा बहादुर आदमी है!' मेम ने कहा : 'हमने ऐसा आदमी नहीं देखा।'

कजरी ने कहा : 'भगवान! भगवान!!'

डाक बंगला आ गया। कजरी और सुखराम दोनों ही जैसे डरकर रुक गए। मेम समझी नहीं। सुखराम गम्भीर था।

मेम ने कहा : 'आगे चलो।'

उस आगे का गलत प्रयोग गजब ढा गया। डर बढ़ गया।

'नहीं, कढ़ीखाए। आज जेल भेजैंगी ये?' कजरी ने सुखराम को टोक दिया, 'तू मेरे संग चल। छोड इसे। आप पहुंच जाएगी। मुझे तो डर लगता है। भाग चल। अभी मौका है।' कजरी पीछे भागी। सुखराम खड़ा रहा।

कजरी कुछ दूर जाकर रुक गई। देखने लगी।

'क्या बात है?' मेम ने पूछा।

'सरकार, डरती है।' सुखराम ने याचना-भरे स्वर में कहा।

'क्यों?' उसने आश्चर्य से पूछा।

'हुजूर! आप साब लोग हैं। राजाओं के राजा हैं। हम गरीब लोग हैं।'

'ओह!' मेम हंसी। उसकी चेतना को अपनापन अनुभव होने लगा था। वह अब भी पूर्ण रूप से मुखर नहीं हुई थी। बोली : 'उसको बुलाओ। बोलो, हमसे डरने की जरूरत नहीं।'

'आ जा री!' सुखराम ने कहा।

कजरी धीरे-धीरे आई। वह भयभीत थी; और झपटकर उसने मेम के पांव पकड़ लिए। रोने लगी। उसने घिघियाते हुए कहा : 'नहीं हजूर! हमें छोड़ दो। हम यहीं से [illegible] जाएंगे।'

[illegible]

[illegible]

[illegible]

'तुम क्या करते हो?' मेम ने पूछा

'सरकार, मैं···' सुखराम ने कहना चाहा, पर कजरी ने कहा : 'हम गरीब हैं। म नीच जात हैं। कुछ नहीं करते।'

'तो खाते क्या हो ?'

'मेम साहब, रोटी !'

मेम हंस दी। उसने कहा : 'ओह, नो नो ! तुम्हारी आमदनी कैसे होती है ?'

दोनों नहीं बोले।

'तुम नौकरी करोगे ?'

'नहीं हुजूर,' कजरी ने कहा : 'हमारी जात में···'

सुखराम ने जोर से बोल कर उसके स्वर को दबा दिया : 'सरकार, हम नीच जात हैं, हमें कोई नौकरी नहीं देता।'

'हम देंगे तो करोगे ?'

'करूंगा सरकार ! वरना मर जाऊंगा।'

उसने याचना के स्वर में कहा।

पर कजरी ने काटा : 'कर लेंगे सरकार, पर हम दोनों करेंगे।'

'तुम भी चलना चाहती हो ?'

'और मैं इसे छोड़कर कहां रहूंगी ?'

मेम हंसी। पूछा : 'तुम इसको चाहती हो ?'

कजरी ने जल्दी-जल्दी कहा : 'देखो दईमारे ! क्या पूछती है ? इसे सरम नहीं !'

'चुप, चुप।' सुखराम बड़बड़ाया।

'चलिए हुजूर !' कजरी ने आगे होकर कहा।

सुखराम ने कजरी के कान में धीरे से कहा : 'अहमदाबाद कब चलेगी ?'

कजरी हंसी। कहा : 'मेम साब, आप हमारी मां हैं। हम आपके बच्चे हैं।'

मेम ने कहा : 'ओह नो ! अभी हमारी शादी नहीं हुई है।'

दोनों मुस्करा दिए। जब वे डाक बंगले पहुंचे तो वहां एक अजीब समां था। गबदड थी। कभी सीटी बजती, कभी कोई लालटेन लिए इधर-उधर आता-जाता, जैसे ब घबरा गए थे।

मेम आगे बढ़ी। वहां उसकी चाल में अब हुकूमत भर गई। अभी तक का साधारणत्व उसमें से खो गया था।

सिपाही दौड़े आ गए।

'मेम सा'ब आ गईं, मेम सा'ब आ गईं।' चारों ओर यही स्वर गूंज उठा।

'हुजूर, आपको ढूंढ़ते-ढूंढ़ते साहब तो थक गए।' एक सिपाही ने कहा। मेम मुस्करा दी।

'हुजूर !' दरोगा ने कहा : 'खुदा का शुक्र है। लाख-लाख शुक्र है।' उसने बड़ी विनम्रता से हाथ उठा दिए, हालांकि अब भी दिल में वह उसे गाली ही दे रहा था, क्योंकि उसकी वजह से उसे रात को तकलीफ उठानी पड़ी थी।

सुखराम को काटो तो लहू नहीं। एकदम पूरा थाना यहीं मौजूद है।

'इधर आओ।' मेम ने मुड़कर सुखराम और कजरी से कहा।

उन दोनों की यह खातिर देखकर वे सब जल उठे : मेम ने उन दोनों को अपने पास बरामदे में बुला लिया। दोनों सहमे हुए थे।

हुजूर यह जेल से भागा था एक सिपाही ने कहा

जेल से ? मेम ने कहा कौन ?

'हुजूर, यह आदमी।' उसने उत्तर दिया।

'तुम चुप रहो! हम सब देखेंगे।' मेम ने कठोरता से उत्तर दिया। सुखराम और कजरी दोनों स्तब्ध खड़े रहे। सुखराम के मुख पर तनिक भी विकार नहीं दिखाई देता था। मेम ने उसे देखा।

एक सिपाही ने कहा : 'हुजूर! साब आ गए।'

मेम आगे बढ़ी। उसने आतुरता से पुकारा : 'डैडी!'

एक बूढ़ा आया। मेम को देखकर उसने माथा चूमा। वह उसका बाप था। वह गद्‌गद हो गया था। सीने से लगाकर सिर पर हाथ फेरता रहा।

उसने अंग्रेजी में पूछा : 'सूसन! क्या हुआ?'

मेम ने उत्तर दिया, जिसे दरोगा थोड़ा-थोड़ा समझ सका, क्योंकि उसके लिए अंग्रेजी का वह उच्चारण सुनना और समझना एक पूरी समस्या थी। वह तो दसवें दर्जे तक पढ़ा था; और क्योंकि ठाकुर था, इसलिए रियासत में वह ओहदेदार था। काफी हिस्सा वह नहीं ही समझा।

मेम ने अंग्रेजी में कहा : 'मैं घूमने गई थी। डाकू पकड़ ले गया। एक आदमी ने मुझे बचाया। वह उसकी बीवी है। वे बहादुर हैं। उसने पिस्तौल वाले से नंगे हाथ मेरी रक्षा की है। सिपाही कहता है, यह आदमी जेल से भागा है। यह नीच जात है। यहां इनको सताया जाता है। यह क्रिश्चियन नहीं है। मैंने वादा कर दिया है। इन्हें बच गए। मैंने इन्हें इनाम देने और नौकरी देने को भी कहा है।'

बूढ़े ने कहा : 'वैल दरोगा!' अपनी एकमात्र पुत्री की रक्षा करने वाले से वह मन में प्रसन्न हो गया था।

'हुजूर।' दरोगा ने झुककर कहा : 'हुकम!'

'तुम जाओ!'

'सरकार, यह आदमी...'

'उसको हमारा बेटी ने माफ कर दिया।' बूढ़े ने कहा और फिर प्रेम से अपनी पुत्री का मस्तक चूम लिया। आज वह कितना प्रसन्न दिखाई देता था! आज लगता था कि वह भी मनुष्य है, उसकी दुःख-सुख की वही भावनाएं हैं, जो साधारणतः संसार के लगभग दो अरब मनुष्यों में है।

सुखराम ने बढ़कर वृद्ध के पांव पकड़ लिए और कहा : 'हुजूर!'

कजरी ने झपटकर उसके पांवों को जकड़कर कहा : 'भगवान करे, आप अमर हों, आपकी बेटी का सुहाग अमर हो। आपका राज अमर हो।'

बूढ़ा मुस्करा दिया। सुखराम की ओर नहीं, कजरी की ओर, क्योंकि अंग्रेज स्त्री के लिए सदैव विनम्रता दिखाने की चेष्टा करता है।

'वैल, वैल।' बूढ़े ने कहा और फिर हाथ का इशारा किया, जिसका अर्थ था, पुलिस जा सकती है। कुछ सिपाही पहरों पर तैनात हो गए। बाकी चले गए।

बूढ़ा दफ्तर में चला गया।

मेम ने कहा : 'तुम...क्या नाम है?'

'हुजूर, सुखराम।'

'तुम हमारा अर्दली में रहना।'

'बहुत अच्छा सरकार!'

कजरी ने कहा : 'हुजूर, मैं क्या करूंगी?'

'तुम बोलो तुम क्या चाहती हो?' मेम ने पूछा।

कजरी ने इधर उधर देखा और फिर जैसे कहना ही पड़ा कह

दिया : 'हुजूर ! मैं इसके पास रहूंगी ।'

मेम जोर से हंस उठी । फिर कहा : 'वैल ! हमको मालूम है, तुम इसकी औरत हो ।'

वह भीतर चली गई ।

कजरी ने लम्बी सांस ली ।

'क्या हुआ ?'

'कुछ नहीं ।' कजरी ने कहा ।

'मुझसे छिपाती है ?'

'छिपाती नहीं, सोचती हूं ।'

'क्या ?'

'अहमदाबाद चलते तो कैसा रहता !'

'मुसीबत ।'

'तुझे यह जगह भा गई है ?'

'क्यों न भाएगी ! तू देखती चल, क्या-क्या होता है !'

'क्या-क्या होगा ?'

'मुफ्त तनखाह मिलेगी ।'

'काम नहीं करना पड़ेगा ?'

'साहब के पास काम ही क्या है ! और भी कई नौकर हैं । यहां तो अब हम खुद सरकारी आदमी हो गए हैं । अब हम दूसरों को पकड़ सकते हैं, पहले की तरह पकड़े नहीं जा सकते ।'

'हाय राम !' कजरी ने कहा : 'यह क्या हो गया ?'

'अरी भाग पलटते हैं तो ऐसा होते क्या देर लगती है !' सुखराम ने कहा : 'वह तो नजर की बात है । जरा भगवान भी सीधी करे कि काम ठीक !'

'अरे जा !' कजरी ने कहा : 'बस, भगवान को कोई काम नहीं जो हम पर ही आंख गड़ाए बैठा होगा ।'

सुखराम ने कहा : 'तू मानती ही नहीं ।'

'फिर अब यहीं रहना तय हो गया है ?' कजरी ने पूछा ।

'कजरी, चल सामान ले आएं ।' सुखराम ने कहा ।

'क्या है तेरा सामान ?' व्यंग्य से कजरी ने पूछा : 'यहां क्या मेम साब को डराना है ? कहीं वह खूबसूरत खाट देखके मांग ली उसने, तो मेरा दिल न दुखेगा ?'

'अरी, उसकी अठन्नी वापस नहीं करनी है ?' उसने मरीज की ओर इंगित किया ।

'वह तो आप आ जाएगा यहीं ।'

'यहां उसका न आना भला है ।' सुखराम ने उत्तर दिया और फिर कहा : 'और मेरा बकस !'

'बकस ! अरे हां,' कजरी ने कहा : 'वह तो ठीक है ।'

'और उसके भीतर क्या है ?'

'क्या है भीतर !' कजरी ने सोचा और फिर कह उठी : 'अच्छा ! अभी बके जा रहा है !! अधूरा किला !!! ठकुरानी की तस्वीर है उसमें । अब तू उसे भूलेगा कि नहीं ?'

अरी तस्वीर क्या बिगाड़ती है जा तो रहे ही हैं क्या उसे फेंक आए ?

और जो सरदार ने पकड़ा तो ? कजरी ने कहा वह तो ठीक है कहां रात

से खिसियाकर ही गया हो, कौन जाने ? सामने तो तेरे कुछ चलती नहीं उसकी। व पीछे से हमला किया तो जान लेकर ही छोड़ेगा। मैं हो आती हूं। तू यहीं रहना खतरा आ गया तो !'

'तो ककड़ी की तरह तोड़कर धर दूंगा उसे।' सुखराम ने कहा : 'कजरी ! फिर आजाद हूं। और तू जानती है, मैं कहां हूं ?'

'कहां है ?'

'मैं रानी की रानी के पास हूं। यहां कोई डर नहीं। अब यह सब मुझसे डरेंगे'

'तुझसे तो बिल्ली न डरेगी। पराई ओट में तू भौंकने क्यों लग गया अरे पेट है तो नौकरी की है। पर सच, तू तो उल्लू का पट्ठा है। अब बहक उठा। डरेंगे, वो डरेंगे। क्या सब राजा के खानदान के लोग तुम जैसे बेवकूफ ही होते हैं !'

मेम फिर आई, दोनों विनीत हो गए।

'तुम कहां रहोगे ?' मेम ने पूछा।

'सरकार, हुकम दें।' सुखराम ने सिर झुकाया।

'तुम उधर रहना।' उसने नौकरों के क्वार्टर दिखाकर कहा : 'अभी हम तो यहां है। हम यहां से जाएंगे तब हमारे साथ चलोगे। बोलो, मंजूर है ?'

सुखराम ने कहा : 'सरकार जहां हुकम देंगी, हम वहीं चलेंगे।'

मेम प्रसन्न दिखाई दी।

'पूछ ले।' कजरी ने सुखराम को इशारा किया।

'हुजूर, समान ले आएं ?' सुखराम ने कहा।

'कहां है ?'

'डेरे पर।'

'फिर आएगा ?' उसने सिर हिलाकर पूछा : 'कब ?'

'बस, सवेरे तक आ जाएंगे मालकिन।' कजरी ने उत्तर दिया।

'जरूर सरकार।' सुखराम ने कजरी की ओर देखा। मेम भीतर चली गई।

'मालकिन नहीं नटनी, हुजूर कह !'

'अरे मेरी तो जीभ घिसी जाती है।' कजरी ने कहा : 'चल।'

सवेरे तक ही वे लौट आए। बसंत आ गया, शर्मा अधूरा किला आ गया।

31

भाभी ने कहा : 'उठोगे नहीं ?'

मैंने मुंह खोला। सरदी में मैं जल्दी नहीं उठ पाता। देर तक जाग सकता हूं। उठते ही सिगरेट सुलगाई और बैठ गया। भाभी ने चाय का प्याला दे दिया। मैं पीने लगा।

'तुमने सुना ?' भाभी ने कहा : 'मैंने रमेश से पूछा था।'

'नरेश ने जवाब दिया ?' भाभी दरयाफ्त किया।

'कुछ नहीं।'

मैं चुप हो रहा।

'अब क्या होगा ?' भाभी ने व्यंग्य किया : 'तुमने ही तो लड़के को बहकाया !'

मैं आगे बढ़ूं तो फायदा क्या है सोचकर मैंने कहा मैंने बहकाया है ? वा भी गई भी भूल रही बच्चे मां-बाप पर जाते हैं

भाभी चली गईं। वे कुछ तिनक गई थीं। इधर नरेश का आना-जाना बदस्तूर था। वह उन्हें पसन्द नहीं था। मैं उठा और भीतर गया।

मैंने कहा : 'भाभी!'

'क्या है?'

भाभी ने आंखें उठाईं। वे आंखें लाल थीं। शायद रोई थीं।

'क्या बात है?'

'कुछ नहीं।'

'बताती क्यों नहीं?'

'बताने से फायदा ही क्या है?'

'क्यों?'

'जो होना है वह वह तो होगा ही।'

'तुम भी भाभी भाग्य को ले बैठीं।'

'तुम चुप रहो।' भाभी ने डांटा।

'क्यों?'

'मेरा पिण्ड छोड़ो तुम। जाकर अपने भाई साहब से टकराओ। लड़का तो हाथ से निकल ही गया।'

उन्हें इनका अत्यन्त दुःख था। मां चाहती है कि उसका पुत्र सदैव उसकी ही आज्ञा पर चले। पर पुत्र नहीं मानता। विलायत में पाल-पोसकर आजाद कर देते हैं, पर अपने यहां जानवरों में यह बात समझी जाती है। इंसानियत के नाते इससे ऊपर सोचा जाता है। मैं सकपका गया। बगल के कमरे में मेरे दोस्त बैठे थे।

मैं सोचता रहा। परिवार पति-पत्नी का होता है। पर हमारे यहां बड़ा परिवार होता है जो कुटुम्ब कहलाता है। यूरोप में पति-पत्नी सड़कों पर चिपटकर चुम्बन लिया करते हैं और कोई इसे बुरा नहीं कहता। अपने यहां पति-पत्नी एकांत में भी चुम्बन लेते समय झेंपते हैं, क्योंकि भगवान तो फिर भी सब देखता ही है। विलायत में बात-बात पर मर्द-औरत हाथ पकड़ते हैं, अपने यहां हाथ पकड़ना कोई सहज खेल नहीं है। जनम-जिन्दगी निभाना पड़ता है। हिन्दुस्तान में तो आंखों का जुल्म है। बोलेंगे नहीं, मिलेंगे नहीं, पर आंखों की याद बनी रहेगी।

मैं बगल के कमरे में गया।

भाई साहब उठकर चले गए थे। मैं वहीं बैठकर धुआं उड़ाने लगा। सोचता रहा : गांव अनगढ़ होता है। यहां प्रेम का अर्थ स्त्री-पुरुष का शारीरिक मिलन है। ठाकुरों और रजवाड़ों में देश-प्रेम दो तरह का होना, स्वकीया प्रेम यानी गुलामी का दस्तावेज और परकीया प्रेम यानी व्यभिचार! शहरों में आंखों का प्रेम चलता है, बच्चे पैदा होना अलावा बात है। विलायत में हमारे अनगढ़ गांवों का-सा प्रेम चलता है, बल्कि वहां तो औरत को नंगी रहने की जरूरत आ पड़ती है। हमारे यहां की राजस्थानी पोशाक में औरत का सीना दिखाई देता रहता है, मुंह ढका रहना है और फिर भी वह प्राचीन माना जाता है। कैसा अजीब है! फ्रांस की औरतों को दुनिया नंगी कहती है, पर राजस्थान में कोटा की औरत अपनी छातियों को आधा खोलकर चलती है।

पोशाक अदब और धर्म से नहीं, समाज के कानून से ताल्लुक रखती है। अपने राजस्थान में मर्द नंगे बदन ही ठीक हैं, विलायत में मर्द का बदन दिखाना बेअदबी की निशानी है; और मध्यवर्ग जो सबसे मजेदार चीज है, उसके अपने पैमाने इतने मजेदार हैं कि बयान नहीं किए जा सकते। मैं सोचते-सोचते अपने-आपको भूल गया।

दुपहर हो गई थी मैंने आवाज सुनी तो झाका . बाहर खड़ा था मैं

समझा, मेरे पास आया होगा। नीचे आया अभी पौरी में ही था कि सुना, मेरे दोस्त कह रहे थे : 'सुखराम, आ गया ?'

'हां, ठाकुरजी !'

'अच्छा, बैठ जा।' उन्होंने कहा। वे मूढ़े पर बैठ गए। सुखराम धरती पर उखरू बैठ गया।

'सुखराम,' मेरे दोस्त ने कहा : 'तू जानता है, मैंने क्यों बुलाया है ?'

'नहीं ठाकुरजी।'

'तो सुन। अपनी लड़की को समझा ले। वरना अच्छा नहीं होगा।'

'क्या किया सरकार उसने ?'

'वह लड़के को फुसलाती है।' दोस्त ने कठिनाई से ही कहा।

'सरकार बड़े आदमी हैं।' सुखराम ने कहा : 'चाहे जो कुछ कह सकते हैं। मैं गरीब हूं; मैं क्या कहूं ?'

ऐसा लगा जैसे वह खून की घूंट पीकर रह गया। मैंने देखा, वह विक्षुब्ध था।

'नहीं, नहीं।' ठाकुर ने कहा : 'मैं पुराने विचारों का आदमी नहीं हूं। मैं आदमी-आदमी का फरक नहीं मानता। तू कह सकता है।'

'सरकार, आपने मेरी बेटी पर दोष लगाया है।' सुखराम ने कहा : 'मेरी बच्ची नादान है। फूल की तरह कोमल है। मैंने उसे बड़े लाड़ से पाला है। मेरी जिन्दगी का कोई सहारा नहीं है। चाहता हूं उसका ब्याह हो जाए। वह सुख से रहे !'

'तो ठाकुर खानदान में ही तुझे लड़का ढूंढने की सूझ पड़ी !' मेरे दोस्त ने व्यंग्य से कहा : 'तू जानता है, मैं जुल्म के खिलाफ हूं। मैं ठाकुरों की तरह गंवार नहीं हूं। पर पढ़ाई-लिखाई क्या करेगी ? मैं दुनिया को तो नहीं बदल सकता ! कौन बाप अपनी बेटी को अच्छे घर नहीं भेजना चाहता ? इसके लिए तू मेरा घर बिगाड़ना चाहता है !'

'तो सरकार !' सुखराम ने कहा : 'आप मेरी बच्ची पर दोष लगाते हैं, कौन नहीं जानता कि इस उमर पर लड़का क्या नहीं करना चाहता !'

'ठीक है,' मेरे दोस्त ने कहा : 'पर ताली दोनों हाथ से बजती है।'

सुखराम सोचने लगा। उसने कुछ देर बाद कहा : 'सरकार, एक बात अरज करूं ?'

'कह।'

'तो मालिक ! छोटे सरकार को भी उधर आने से मना कर दें। मैं लड़की को समझा लूंगा।'

'तू उसे समझा, मैं भी इसे समझाऊंगा। मैं जानता हूं कि तू और करनटों सा नहीं है। मैं जानता हूं।' मेरे दोस्त ने उठते हुए कहा और फिर अन्त कर दिया : 'बस, मुझे कुछ और नहीं कहना। तू जा सकता है। और मुझे आशा है, अब फिर तुझे बुलाने की जरूरत नहीं पड़ेगी।'

सुखराम ने सुना और सिर झुका लिया। वह जैसे चिन्ता में पड़ गया था। मैंने देखा कि वह अभी कुछ कहना चाहता है, किन्तु संकोच ने उसे ऐसा जकड़ लिया है कि वह कह नहीं सकता और शीघ्र ही उसने अपने ऊपर काबू पा लिया। मित्र भीतर चले गए।

सुखराम चलने लगा। मैंने आवाज दी; वह रुक गया। मैं बाहर आया। पूछा : 'कैसे आए ?'

ठाकुर साब ने बुलवाया था

कैसे ?

'कहते थे…ऐसे ही घरेलू-सी बातचीत थी।' वह कहते-कहते रुक गया और फिर एकदम बात बदल दी।

'अब पांव ठीक है ?' उसने पूछा।

मैं समझ गया। कुछ चलकर दिखाया।

वह बोला : 'ठीक है बाबूजी, अब तो आप आराम से चल लेते हो।'

'हां, चल सकता हूं नहीं, भाग सकता हूं।'

वह मुस्कराया। कहा : 'सरकार इनाम नहीं मिला।'

'मिलेगा।' मैंने कहा और एक दस रुपए का नोट दिया। उसने अपने कोट मे सलाम करके रख लिया।

'घूमने चल रहे हो उधर। मैं चलता हूं।'

'चलिए। मैं उधर ही से घर चला जाऊंगा।'

जाडे की दुपहर, अच्छी-अच्छी धूप। और ज्यादा अच्छी इसलिए कि धूप को हवा ठहरने नहीं देती, जैसे उड़ाए लिए जाती हो और एक-एक रास्ते पर अब छाया हुआ सन्नाटा।

हम बातें करने लगे। पर उसने चंदा की बात नहीं की।

सुखराम जब घर पहुंचा तब शाम होने लगी थी। और वह आश्चर्य में पड़ गया, क्योंकि चंदा वहां नही थी। कहां गई ! और सुखराम की समझ में आया।

वह उसे ढूढ़ने निकला :

सफेद महल के पीछे झाड़ियों में से स्वर सुनाई दिया। वह धीरे-धीरे दबे पाव वहा चला गया। वह स्थान भयानक कहलाता था। एक वो खंडहरों में डग-डग पर भूत और फिर उस हिस्से में जानवरों और सांपों का भय। उधर कोई आता-जाता नही।

गढ़ैया वाले हनुमान अवश्य उस ओर थे, पर उनके उपासक भी धूप रहते ही लौट जाते थे। हनुमान के आसपास शिवलिंग, नंदी आदि रखे थे, और न जाने इसी भारत की कितनी-कितनी जातियों के मिलन के पर्याय बनकर दिखाई देते थे। एक दिन उन्होने आपस में मिलकर मनुष्य से होने वाली मनुष्य की घृणा को मिटाया था, सम्प्रदायों की असहिष्णुता को मिटाया था, किन्तु दुर्भाग्य से आज फिर नई रूढ़ियो ने उनको घेर लिया था।

सुखराम झाड़ियों के पीछे खड़ा रहा और चारों ओर सांझ उतरती रही, अपना अंधियारा बरसाती रही। जंगल-जलेबी के पेड़ों पर कुछ ललाई लिए हरी-हरी फलियां गोल-गोल-सी दिखाई दे रही थीं और तोते झुण्ड के झुण्ड बांधकर उन्हें छोड़कर उड गए थे ताकि वे किसी उजले हरे पेड़ मे जाकर छिप जाएं।

आवाज आई।

नरेश ने कहा : 'आज तेरा सुखराम आया था।'

'कहां ?'

'दद्दू के पास।'

'क्यों ?'

'शायद मेरी शिकायत करने आया होगा।'

'ऐसा नहीं हो सकता।'

'क्यों ? उसे शायद मैं अच्छा नहीं लगता।'

चंदा ने कहा तू नहीं जानता उसे वह दुनिया में सबसे अच्छा आदमी है वह बड़ा भोला है उसे मुझसे बहुत प्यार है वह कभी ऐसी बात नहीं कर सकता।

सुखराम के मुंह पर तमाचा-सा लगा।

चंदा ! क्या कह रही है वह !!!

चंदा ने फिर कहा : 'सच कहती हूं। मैं कोई बात कह दूं, वह कभी नहीं टालता। दूसरे लोग अपनी बेटी को यों ही डांटते हैं। वह कुछ नहीं कहता।'

नरेश बोला : 'तो दद्दू ने बुलवाया होगा।'

'क्यों ?' चंदा ने पूछा।

'मेरे दद्दू बड़े अच्छे आदमी हैं चंदा !' नरेश ने कहा : 'पर मां अच्छी नहीं है। वह मुझे बहुत तंग करती है।'

चंदा ने हंसकर कहा : 'अरे चल। कोई मां के लिए ऐसा कहता होगा।'

'क्यों न कहूंगा ! बड़े सवाल-जवाब करती है तुझे लेकर !'

'अरे नहीं।'

'सच कहता हूं। पूछेगी---क्यों रे ?' कहां गया था ? तू तो मेरा खून पी ले।'

नरेश ने धीरे से जवाब दिया. 'भला बता, मैं खून पीता हूं ?'

चंदा ने कहा : 'तूने बताया न होगा।'

'क्यों ?'

'कि तू आता-जाता है।'

'बता दूं, तो आफत ही समझ।'

चंदा फिर हंसी, कहा : 'मारेगी ?'

'बहुत मारेगी तुझे।'

'मैं पिट लूंगी।'

'क्यों ?'

'तेरी अम्मा मारेगी तो पिटना ही पड़ेगा।'

सुखराम का हृदय टूक टूक हो रहा था। चंदा सपना देख रही थी। और वह स्वप्न टूटना ही था।

सुखराम बढ़ा। आज वह जाना नहीं चाहता था, पर उसे सामने जाना पड़ रहा था। उस समय उसके भीतर कितना भयानक संघर्ष चल रहा था ! उसी समय नरेश ने कहा : 'चंदा ! एक बार मेरे साथ चलेगी ?'

'कहां ?'

'मां के पास।'

'क्यों ?'

'तुझे देखकर उन्हें दया न आएगी ?'

'नहीं।' सुखराम ने कहा।

दोनों देखकर चौंक उठे।

'दादा तू !' चंदा ने कहा। आश्चर्य से उसका मुंह फट गया और फिर जैसे पकड़ी गई थी, इसलिए लाज से उसने सिर ढक लिया।

परन्तु सुखराम ने उसपर ध्यान नहीं दिया। नरेश से कहा : 'छोटे सरकार !'

चंदा ने काटा : 'नाम लेके बात करो दादा !'

'नादान लड़की !' सुखराम ने कहा : 'तू जरा चुप रह। मुझे उससे पूछने दे !'

चंदा रुआंसी हो गई। पर रूठी-सी चुप हो रही।

'हां कुंवर, बताओ,' सुखराम ने कहा : 'चंदा से ब्याह करोगे ?'

'करूंगा।' नरेश ने दृढ़ता से कहा।

सुखराम हंसा कहा फिर क्या होगा जानते हो '

'कुछ नहीं।'

'कुछ नहीं! चंदा को वे मार डालेंगे!'

'तो मैं भी मर जाऊंगा!'

उस समय सुखराम ने नरेश को सीने से लगा लिया और रोने लगा। आज उसकी आंखों से आंसू रोकने पर भी छलक ही आए, जैसे वह व्याकुल हो गया था। आज ममता ने उसे व्याकुल कर दिया था। पिता के हृदय में संतान के प्रति कितना बड़ा ममत्व होता है! और यह एक सत्य है कि मां को पुत्र से अधिक प्रेम होता है, पिता को पुत्री से। समाज के बंधन बेटी को दूर कर देते है, तब पिता अपने व्यवहार-ज्ञान के कारण मन को समझा लेता है। मां बेटी को चुरा-चुराकर माल देती है, किन्तु इस सबके रहते हुए भी पिता का ममत्व तब झलकता है जब वह पुत्री को किसी योग्य के हाथों में सौंपना चाहता है, ऐसे हाथों में जिन्हें पुत्री चाहती हो, और जो उसकी बेटी को संसार में सुख दे सकें और वही आज सुखराम का स्नेह था। परन्तु फिर उसका वह ध्यान डिग गया। उसने नरेश को छोड़ दिया और कहा: 'नहीं कुंवर! इससे तुम्हारी जिन्दगी बिगड़ जाएगी।'

'क्या?' नरेश ने पूछा।

'तुम छोटे हो अभी, तभी नहीं समझ पाते,' और सुखराम को अपने उस अतीत की स्मृति हो आई और फिर प्यारी के संग बिताए हुए वे दिन याद हो आए।

'मैं क्या नहीं समझता?' नरेश ने कहा: 'मैं बताऊं?'

'बताओ।'

'जो राकेश का हुआ था, सो मेरा होगा।'

'वह कौन है?'

वह असल में 'माया' की एक कहानी का नायक था। जिसने एक नीच जाति की स्त्री से विवाह कर लिया था और फिर दुख उठाए थे। नरेश अब सुखराम को कैसे समझाता! कहा: 'वह एक था ऐसे ही! उसने भी मन की शादी कर ली थी, और फिर तकलीफें पाई थीं।'

सुखराम ने देखा, चंदा उसकी ओर आशय से देख रही थी। परन्तु वह कुछ कह नहीं सका। उन आंखों को देखकर न जाने अतीत की कितनी यातना उसके भीतर घुमड़ने लगी। बेहिसाब बूंदें झड़ गईं। दोनों गाल भीग गए। ऐसा लगा जैसा किसी ने ऊपर रखा बोझ उठा दिया तो स्मृतियों के बहुत से कागज चलती हवा में इधर-उधर उड़ गए। सुखराम उन्हें इकट्ठा करना चाहता है, किन्तु कर नहीं पाता। वह करे तो क्या? उसे लग रहा है कि वह बड़ा निरीह है और चंदा को देखता है तो उसका हृदय हाहाकार कर उठता है।

'मैं जानता हूं।' नरेश ने कहा: 'पर मैं नहीं घबराता।'

सुखराम अवाक् देखता रहा। उसे लगा, दोनों कितने अच्छे लग रहे थे बराबर-बराबर में खड़े! दोनों कितने सुन्दर हैं! उन्हें देखकर आंखें ठंडी हुई जाती हैं।

'फिर क्यों नहीं मानते?' नरेश ने कहा: 'तुम मुझपर भरोसा नहीं करते?'

सुखराम ने कहा: 'बड़े ठाकुर कह देंगे?'

'नहीं।'

'फिर तुम खाओगे क्या?'

नरेश सोचने लगा। चंदा ने कहा: 'थोड़े दिन तेरे पास ही जो रह लेंगे?'

वह बचपन की बात थी हंस दिया

उसने चलते हुए कहा चंदा बेटी महलों के सपने न देख मैं तेरा इतजाम

कर दूंगा।' चंदा खड़ी रही।

'चल री चंदा।' उसने मुड़कर कहा : 'बेटी!'

चंदा को चलना पड़ा।

नरेश ने धीरे से कहा : 'कब आएगी ?'

'थोड़ी देर में।'

सुखराम आगे बढ़ा। चंदा पीछे-पीछे चली। परन्तु उसने चुपके से ही मुड़कर नरेश को देखा। सुखराम कहता जा रहा था : 'तू मेरी बहुत प्यारी बेटी है। तुझे मैं मुसीबत में नहीं डालूंगा। रोज की सांसत से तो गरीबी भली···अभी तू छोटी है, समझती नहीं···।'

पर उसकी बात न चंदा ही सुन रही थी, न नरेश ही सुन रहा था।

दोनों में कुछ इशारा हुआ। सुखराम नहीं देख सका। बाप-बेटी चले गए।

दूसरे दिन फिर चंदा घर से निकल आई और नरेश भी चला गया। दुपहर को वे कुछ सलाह करते रहे।

सुखराम जब घर पहुंचा तो चंदा न थी। वह खीझ उठा। बाहर निकला। पर तभी उसने देखा कि कंधे पर रस्सी रखे हुए कुएं की तरफ से बाल्टी हाथ में लिए चंदा आ गई।

वह प्रसन्न हुआ। पूछा : 'रोटी खा ली ?'

'हां दादा। तू खाएगा ?'

'ला, दे दे।'

चंदा ने रोटी दे दी सुखराम खाने लगा। चंदा उसे बैठी देखती रही।

परन्तु शाम का वक्त नई रोशनी लाया। आज अचानक ही कोई पक्षी फुलवाड़ी की तरफ बोल उठा। नरेश ने इधर-उधर देखा और बाहर की ओर चला। भाभी बैठी थीं। पूछा : 'कहां जाता है ?'

'कहीं नहीं।'

'बैठकर पढ़ता नहीं ? अगले साल शहर भेज दूंगी तुझे। नाना के घर रहेगा तो मामाजी ठीक कर देंगे। यह तो नहीं कि दिया बले, मर्द-मानुष घर में भले।'

'वह पुराने जमाने की बात है।' नरेश ने कहा : 'शहरों में अब बिजली लग गई है, मालूम है ?'

'अरे बड़े नये जमाने का है तू!' भाभी बड़बड़ाईं।

नरेश हवेली से निकला। बाहर नौकर ढोरों को पानी पिला रहे थे। नरेश ने उन पर ध्यान नहीं दिया।

फुलवाड़ी में फिर पक्षी बोला।

भाभी ने खिड़की में देखा, इस वक्त हुक्का कैसे बोल रहा है। और वह भी भयातुर-सा! और देखा तो पांव के नीचे धरती खिसक गई। दौड़कर गई भाभी इस वक्त हुक्का पी रहे थे।

'सुनते हो!' भाभी ने कहा।

भाभी के स्वर में घोर घबराहट थी, जैसे लुट गई हों। भाई साहब ने देखा तो घबराकर उठ खड़े हुए। बोले : 'क्या हुआ नरेश की मां ? क्या हुआ ?'

परन्तु भाभी को तो जैसे सांप सूंघ गया। बोलने का प्रयत्न किया, परन्तु बोल न सकीं।

'अरे हुआ क्या ?' वे चिल्लाए।

'मैं मर गई' नरेश की मां ने बिस्तर में मुंह छिपाते हुए रोते हुए कहा इस

इस लड़के ने मेरे मुंह पर कालिख लगा दी। हाय, मैं क्या करूं!'

'पर हुआ क्या?'

'वह नटनी के साथ फुलवाड़ी मे था।'

सुनते ही ठाकुर को क्रोध आया। वह सीधा-सादा कांग्रेसी, जो न्याय और अहिंसा चिल्ला-चिल्लाकर गला सुखाया करता था, इस समय ऐसे भड़क उठा जैसे आग की चिनगारी बारूद के ढेर में लगने पर एकदम विस्फोट से सब पर छा जाती है। और ठाकुर भी छाने लगा।

वह गरजा: 'जोरावरसिंह!

'अन्नदाता घणीखमा।' कहती हुई एक बांदी बाहर भागी। उसने जाकर बाहर सूचना दी: और जोरावरसिंह कद्दावर जवान, जो उस समय अफीम खाने की फिराक मे था, वह हड़बड़ाकर उठा और जल्दी-जल्दी फेंटा बांधकर भागा। उसने जब ठाकुर को जुहार की तो ठाकुर का क्रोध नीचे की मंजिल से ऊपर की मंजिल में आग की तरह चढ गया था। वह चिल्लाया: 'तू सोता है कि पहरा देता है?'

'अन्नदाता!' जोरावरसिंह ने कांपते हुए कहा: 'हुकम!'

ठीक उसी समय फुलवाडी में नरेश चन्दा से कह रहा था: 'चल चंदा भाग चलें।

'पर कहां चलेंगे?'

उस समय फुलवाडी लगा जैसे में दो रूहें खेल रही थीं। दोनों किशोरावस्था की नवीन आहुतियों की तरह देदीप्यमान, अल्हड़, किन्तु संसार में अनभिज्ञ!

'दूर कहीं चलेंगे।' नरेश ने कहा: 'जहां सिर्फ हम तुम हों और कोई नहीं।

'यह कैसे हो सकता है?' चंदा ने हंसकर कहा।

'क्यों नही हो सकता चन्दा! मैं सोचा करता हूं, कहीं चले जाएं, जहां ठडी-ठडी हवाएं चलती हो, सुनहली धूप हो, जहां कोई किसी को मारे नही, कोई किसी पर जुल्म न करे! यह संसार एक स्वर्ग हो जाए और फिर मोठी-मीठी तान गूजा करे!'

चन्दा विभोर-सी देखती रही। पूछा: 'कहीं ऐसी जगह है?'

नरेश ने कहा: 'चन्दा! तू मेरे संग चलेगी?'

'चलूंगी।'

'डरेगी तो नहीं?'

'डरूंगी क्यों?'

ठाकुर के द्वार पर कोलाहल मचा। बूढ़े ठाकुर रघुनाथ ने कहा: 'अपण जैसलमेर, उदैपुर मे तो नट की हस्ती ही क्या! यह तो पूरब है भैया, तभी हल्ला होता है इनका…'

उसका वाक्य खत्म नहीं हुआ। भीड़ में नरेश आगे था। वह लड़ रहा था। दो नौकरों ने उसे पकड़ रखा था। वह चिल्ला रहा था: 'छोड़ दो मुझे, छोड दो।'

और चन्दा को एक नौकर ने जकड़ रखा था।

भाई साहब ने झांककर एक खिड़की से देखा। नरेश बुरी तरह चिल्ला रहा था: 'तुम कौन होते हो मुझे पकड़ने वाले! मैं नहीं चाहता। मैं यहां नही रहूंगा। मैं किसी ठाकुर का बेटा नही हूं। मैं आदमी हूं, मै आदमी हूं।'

तब नौकर आगे बढ़ आए। उन्होंने उन्हें छोड दिया, पर अब दोनों को घेर लिया।'

मुझे जाने दो नरेस चिल्लाया

छोटे ठाकुर एक बूढ़ा तड़पा

'मैं नहीं हूं ठाकुर !' नरेश ने कहा। आज वह म्यान से आखिर निकल आया था। उसने चिल्लाकर कहा : 'तुम कौन हो ? मैं तुम्हें नहीं जानता'''।'

'अभी कुंवर नाबालिग है।' एक वृद्ध ने कहा : 'बच्चा है। वह समझता नहीं

तभी ढोलिन बाहर आई। कहा : 'नटनी कहां है ?'

'यह रही।' एक ने कहा।

'हुकम हुआ है,' ढोलिन ने कहा : 'इसे भीतर छोड़ आया जाए।'

चन्दा पकड़कर भीतर भेजी गई।। नरेश पीछे भागा। वह चिल्ला रहा था 'तू मार डाली जाएगी चन्दा। तू नहीं जानती, ये लोग आदमी नहीं भेड़िये हैं।'

उस वक्त ठाकुर विक्रमसिंह ने सिर पकड़ लिया था। वे महात्मा गांधी के चित्र के सामने फटी-फटी आंखों से देखते हुए खड़े थे और उनके कान में गूंज रहा था- –

'वैष्णव जन तो तेने कहिए, जो पीर पराई जाणे रे।'

ढोलिन ने कहा : 'आ गई मांजी साब।'

ठकुरानी साहिबा इस समय पलंग पर बैठी थीं। उनका मुख गम्भीर था। वे शेरनी की तरह देख रही थीं। उनकी बाईं भौं ऊपर खिंच गई थी।

चन्दा शान्त। अभीत। मुस्कराती हुई। उसे झकझोर डाला गया था ! पर वह अनिंद्य शोभा के लिए अपराजित-सी खड़ी थी, जैसे अंधकार में दीप जल गया हो !'

'मेरी बहू बनेगी तू ?' ठकुरानी ने गरजकर पूछा और तनकर खड़ी हुईं।

चंदा ने आंखें भरकर देखा और आज वह श्रद्धा में नत हो गई। नरेश चिल्लाया : 'हां कह दे चंदा।'

औरतों ने जीभ काट ली।

'कुंवर ! लाज करो।' एक स्त्री ने कहा : 'तुम्हें शरम नहीं आती ?'

नरेश ने जलते हुए नेत्रों से उसे देखा। परन्तु चंदा और भाभी के नेत्र टंग गए थे। एक स्त्री तलाव पर आकर नई उठान का दुस्साहस देखकर क्रुद्ध हो गई थी।

और दूसरी ! वह अपने प्रेमी की मां को देख रही थी। सोच रही थी कि उसकी मां है जिसने उसे पाला है। एक ऐसे बंधनों में जकड़ी हुई थी कि आजादी को भूल चुकी थी, दूसरी की स्वतन्त्रता उसका बन्धन बन गई थी। एक अमरता का नाम लेकर जड़ की उपासना करती थी, दूसरी अपनी नश्वरता का एक-एक क्षण, उपासना में नहीं, अपने उपास्य में लय होने में सफल करना चाहती थी। एक जानती थी, दूसरी कुमारी थी। एक भयभीत थी, दूसरी भय से दूर, मुक्त थी। दोनों ने अपनी आंखें भर-कर देखा। भाभी की आंखों में घृणा, विक्षोभ, अहंकार और क्रोध था। चंदा की आंखों में प्रेम, याचना, सरलता, शुद्ध सात्विकता और मर्यादा की वास्तविकता थी। भाभी आकाश में तड़पती हुई बिजली थी, चंदा डाल पर खिला हुआ सुरभि से भरा हुआ फूल।

भाभी उस दृष्टि को सह न सकी। उन्हें लगा, वह सचमुच बहुत पवित्र थी बहुत सुन्दर थी। उनका मन हारने लगा।

ढोलिन ने कहा : 'बोलती नहीं नटनी !'

और ठकुरानी का मन फिर भयानक हो गया। वह विचार फिर चले गए। कहा : 'बोलती क्यों नहीं ! तू बनेगी मेरी बहू ?'

चंदा ने कहा : 'नहीं मांजी। तुम्हारी बांदी बनूंगी।'

सटाक की आवाज हुई ठकुरानी ने उसके मुंह पर आघात किया

नरेश ने मां का हाथ पकड़ लिया और चंदा ने कहा नहीं नहीं

रोको नहीं। मारने दो। मुझे अच्छा लगता है।'

तब ठकुरानी कांप उठी। उन्होंने देखा। पुत्र! जिसे पाला था! वही! उसने एक नटनी के पीछे हाथ पकड़ लिया! अब वे दुनिया को मुंह दिखाने लायक नहीं रहीं! इतना अपमान! अपने ही पुत्र से!

उन्होंने चिल्लाकर कहा : 'जोरावर!'

'हां मांजी! हुकम।'

'पकड़ लो कुंवर को।'

जोरावर ने झपटकर कुंवर को पकड़ लिया।

तब ठकुरानी गरजी : 'तुझे मैंने इसी दिन के लिए पाला था! कपूत! तूने रजपूतनी का दूध पीके नाहरनी का हाथ पकडा और वह भी नाहर के जिन्दा रहते!'

ठकुरानी ने आगे बढ़कर कहा : 'ले बचा ले!' और फिर चिल्लाईं : 'हराम-जादी! अभी से तिरिया चरित्तर दिखाके लडके को फुसलाती है! हरजाई नटनी, तुझे अच्छा लगता है, तो ले···'

और ठकुरानी उसे मारने लगी। चंदा पिटती रही, पर रोई नहीं। पिटती रही। सब औरतों ने उसे मारा।

चंदा पिटते-पिटते मूर्छित होकर गिर गई, फिर भी उसकी आंखों से एक भी आंसू नहीं निकला। ठकुरानी ने गुस्से से अपने बाल नोच लिए और कहा : 'ले जाओ इसे!'

चंदा के माथे पर मोटे-मोटे कड़ों की चोट से खून निकल आया था, और नरेश फटी आंखों से देख रहा था।

जब वे चंदा को उठाकर ड्योढ़ी पर ले जाने लगे तो जोरावर ने कहा : 'कुंवरजी! गम खाओ।

पर नरेश चिल्ला रहा था : 'तू मेरी मां नहीं है! डायन है! तू डायन है! तूने मुझे जनम देते ही क्यों मेरा गला घोंटकर नहीं मार डाला! तूने मेरी चंदा का लहू नहीं बहाया, तूने मेरा लहू पिया है! तूने मेरा सीना फाड़कर मेरा लहू चाट-चाट-कर पिया है!'

वह बक रहा था। औरतें अवाक् थीं। और हारी हुई-सी क्रोध-विह्वला हो भाभी रो रही थीं। आज वे क्या करतीं! खास पेट का जाया उनको गाली दे रहा था। वे डर रही थीं कि कहीं लड़का इस गुस्से में पागल न हो जाए। फिर क्या होगा! यह सब इसीके लिए था; और अगर यही नहीं रहा तो? क्या होगा यह सब! व्यर्थ है। व्यर्थ है···सब धरा रह जाएगा।

भाई साहब चक्कर में थे। गांधी की तस्वीर हंस रही थी। वह नंगा सामने खडा था। खानदान की इज्जत की धूल पर वह मनुष्यता का प्रतिनिधि खड़ा जैसे उनके मनुष्यत्व को बार-बार ललकार रहा था। वे बार-बार सोचते थे, पर राह दिखाई नहीं देती थी।

बूढ़ा राजपूत आ गया। बोला : 'ठाकुर साब!'

भाई साहब ने मुड़कर देखा। और फिर दोनों ने एक-दूसरे की ओर देखकर सिर झुका लिया।

सुखराम बुलवाया गया।

जब वह आया तो सब गंभीर थे

क्या हुआ ठाकुरजी? उसने पूछा

ठाकुर ने मुंह फेर लिया। सुखराम समझा नहीं। उसने ठाकुर की ओर देखा पर पीठ सामने थी।

ढोलिन ने कहा : 'देख, वह क्या है ?'

'क्या है भैया !' सुखराम ने कहा और उत्सुकता से वह उधर ही बढ़ा। देखा और ठिठक गया।

उसने चंदा को देखा। वह लहू से भीगी बेहोश पड़ी है। सांस हल्की-हल्की चल रही है। सुखराम बोला नहीं, देखता रहा। उसकी आंखों से दो बूंद आंसू गिर गए और फिर उसने कहा : 'ठाकुर जी !'

उसका गला रुंध गया। ठाकुर देख नहीं सके।

'तुम्हारे पांव छूता हूं।' सुखराम ने कहा : 'तुमने मेरी बच्ची को जान से नहीं मारा।'

फिर कहा : 'पानी ला दो कोई भैया। मेरी बच्ची बेहोश हो गई है।'

सबने ठाकुर की ओर देखा। सुखराम ने देखा। ठाकुर सह नहीं सके। उनकी आंखों से आंसू टपक पड़े।

सुखराम उठ खड़ा हुआ और उसने गर्व से झुककर चंदा के शरीर को हाथों पर उठा लिया और कहा : 'ठाकुर ! दुनिया के धंधे कुछ कराएं, पर मुझे तुमने आज जो पानी दिया है वह मेरी बच्ची के लिए बहुत है। बहुत है !'

वह कह नहीं सका। उसका गला अब गीला हो गया था। जोरावर ने आश्चर्य से देखा कि सुखराम पीछे मुड़ा और धीरे-धीरे द्वार की ओर बढ़ने लगा। भीतर नरेश चिल्ला रहा था : 'छोड़ दो मुझे'''छोड़ दो !' सुखराम ने सुना तो कहा : 'अरे ? कंवर !' और फिर जैसे कहने को कुछ नहीं रहा। वह चला गया।

मैं घूमकर लौट रहा था। आज मेरा मन मस्त था। बाहर बेरों की गंध ने मुझे झूम दी थी, और पहाड़ पर चढ़कर डूबता हुआ सूरज देखा था। कितना भव्य था वह सब !

तभी देखा। सुखराम आ रहा था।

आवाज दी : 'सुखराम !'

वह ठहर गया। मैंने पास जाकर देखा तो चौंक उठा।

'क्यों, डर गए ?' उसने मुस्कराकर कहा।

'किसने मारा इसे !' मैंने पूछा। मुझे क्रोध था।

'गुस्सा न करो बाबूजी।' सुखराम ने कहा : 'इसे ठकुरानी ने मारा है।'

'भाभी ने !' मैंने पूछा।

'हां।' उसकी आंखों में आंसू थे। बोला : 'अगर कोई मरद होता तो मैं उसका सीना फाड़कर लहू पी जाता।'

मुझे ताज्जुब नहीं हुआ, क्योंकि मैं सुन चुका था; और यह वही सुखराम था !

'भैया थे ?' मैंने पूछा।

'थे।' और उसने कहा : 'वे अच्छे आदमी हैं।'

मैं ताज्जुब में पड़ गया।

'क्यों ?' मैंने पूछा।

'वे प्यार जानते हैं बाबूजी !' सुखराम ने कहा : 'ठाकुर रो दिए थे।'

वह भी रो दिया।

और मैंने देखा पिता का हृदय कितना विशाल था उसकी बेटी के लिए

किसीने उसे मारकर भी दो बूंद आंसू गिरा दिए हैं, यही उसके लिए बहुत है। वह मनुष्य क्या जो बच्चे के लिए ममता नहीं रखता! वह पवित्र निष्कलंक नयन जो कल्पषों से दूर रहते हैं, वे ही मानव-जाति के शृंगार हैं। उनको सुधारने के लिए मरना पड़ता है; पर वह मार उनका नाश नहीं, निर्माण करती है।

ठाकुर विक्रमसिंह के प्रति मेरे हृदय में जो घृणा उत्पन्न हुई थी, वह धुल गई। मुझे लगा, वे छटपटा रहे थे और मेरे हृदय ने कहा कि इन बन्धनों से व्याकुल एक ठाकुर है जो रूढ़ियों से विवश होकर क्रन्दन कर रहा है। उसकी परम्परागत कायरता, लोक-लज्जा का भय जब उसे मनुष्यत्व छोड़ने पर मजबूर करता है, तब-तब वह उद्भ्रान्त हो उठता है, वह अपनी इस असम सत्ता का न्याय नहीं दे पाता।

मुझे संतोष हुआ। जब मनुष्य अपनी करनी को गलत समझने लगता है, और केवल स्वार्थ से या भय से उससे चिपका रहता है, जब उसका विश्वास कुछ दूसरा हो जाता है, तब वह सचमुच निर्बल हो जाता है।

मैंने कहा : 'सुखराम!'

'बाबू भैया!' उसने आर्द्र कंठ से कहा।

'तुम डेरे चले जाओ।'

'जाता हूं। चंदा बेहोश है।'

'जल्दी करो सुखराम! जल्दी करो!'

वह चला गया। मैं तसल्ली से मन को बहला नहीं सका।

मैं उसके डेरे पर गया। ठाकुर विक्रमसिंह का सामना करके मैं उन्हें लज्जित नहीं करना चाहता था। मुझे सुखराम ने देखा तो वह विचलित-सा हो उठा। उसने मेरे पांव पकड़ लिए।

'क्या करते हो तुम?' मैंने कहा।

'बाबू भैया!' वह कह उठा : 'होश में आ गई। बच गई।'

'चंदा!' मैंने चंदा के सिर पर हाथ फेरा। वह अब थकी हुई पड़ी थी।

मैंने अपने रूमाल से उसके माथे का लहू पोंछा और अचानक ही वह कपड़ा मैंने होंठों से लगाकर चूम लिया। मैं सच कहता हूं, मेरा हृदय रसहीन है, लोग कहते हैं, मैं भावुक नहीं हूं, कठोर हूं, पर उस समय मेरी आंखों में आंसू छलक आए।

कितनी पवित्र है यह कन्या! साक्षात् उमा हैमवती की भांति! जैसे हिमशृंगों की छाया में तपस्विनी खड़ी हो। वह भी तो प्रेम की ही पुजारिन थी! और तब इतिहास मेरी आंखों के सामने से धुआं बनकर उड़ गया। मनुष्य की सत्ता का गौरव मेरे सामने जागरित हो उठा। वह घायल पड़ी थी, जैसे जीवन-संग्राम में लड़कर अपराजित ब्रह्मचारी भीष्म शर-शय्या पर पड़ा उत्तरायण की प्रतीक्षा करता हुआ मृत्यु पर शासन कर रहा था।

मैंने कहा : 'क्या होना चाहिए सुखराम! मुझसे पूछते हो। चारों तरफ मुझे खतरनाक खामोशी दिखाई देती है।'

'मैं नहीं जानता।' उसने कहा।

'सच है, तुम नहीं जानते। तुम्हारा न जानना ही उन लोगों की मस्ती की वजह है जो तुम्हीं को धोखा देकर, तुम्हारी ही कमाई पर धोखे से तुम्हारा पेट काटते हैं, और यह सब न्याय के नाम पर होता है। बड़े-बड़े नेता तुम्हें भाषण देते हैं। वे तुम्हें नीति और धर्म की बात सुनाते हैं। कोई तुम्हें कोई पुड़िया देता है, कोई तुम्हें कुछ देता है। पर यह सब फरेब की बुनियादों पर खड़े महल हैं।'

बाबू भैया जमाने की कहते हो? सुखराम ने कहा

चंदा उठकर बैठ गई। मैंने कहा : 'कैसी है अब ?'

चंदा ने सुखराम के वक्ष में मुंह छिपा लिया। वह उसके सिर पर हाथ फेरने लगा। मुझे ऐसा लगा जैसे आश्रमवासी कण्व ने शकुन्तला के सिर पर हाथ फेर दिया हो!'

'बेटा, अब तो ठीक है ?' सुखराम ने पूछा।

'मेरे लगी नहीं, दादा।' उसने कहा।

'उन्होंने तुझे मारा था ?' मैंने पूछा।

'मुझे नहीं मालूम।' चंदा ने उत्तर दिया।

मुझे उस समय लगा, मेरा सारा ज्ञान धूल है। वह केवल अहंकार है। मैं क्षुद्र हूं। मैं अपने बन्धनों को ही सत्य बनाने के लिए अपने को न्याय्य कहने के लिए चारों ओर धोखे की टट्टी खड़ी करने मे लगा हुआ हूं।

परन्तु जीवन यह नहीं है, यह जो चंदा ने कहा है।

तन्मयता की पूर्णता! अपने समस्त रूपों में मुखर हो गई है। इसीको ऋषि कहता था, पूर्ण से पूर्ण को प्राप्त करो।

मैं अवाक् देखता रहा।

मेरी आत्मा में से उठता हुआ वह गम्भीर निनाद अब मुझे व्याकुल करने लगा। सब इस संसार को सुखी करना चाहते हैं। यहां अहंकार, धन का, कुल का, जाति का, ओहदे का, सब एक-एक को ग्रसे हुए है। अयोग्य व्यक्ति किसी तरह खुशामदों से ऊपर चढ़ गए हैं, कुनबापरस्ती चल रही है, और फिर अपनी अयोग्यता को वे अहंकार में छिपाकर अपनी ही जड़ता को शाश्वत बना देना चाहते हैं। तर्क और सत्य के उज्ज्वल आलोक को सह सकना उनके लिए असंभव है, क्योंकि उनमें उनके स्वार्थों का पर्दाफाश होता है और एक की पोल में दूसरे की पोल ऐसी घुसी हुई है कि सब उसपर पर्दा डाले रहना चाहते हैं।

यहां स्वाभिमान का कोई मूल्य नहीं है। स्वाभिमान का अस्तित्व उनमें बाकी है जो मृत्यु के पंजों में पंजा फंसाकर लड़ रहे हैं। क्रान्ति के नाम पर यहां अवसरवादी और चोरों की जमात चल रही है। यहां सुधार का बोझा उठाने वाले वही हैं जो पाप के ठेकेदार हैं। सब जानते है, फिर भी ऐसे ही लोग शासन करते हैं, क्योंकि जनता अभी नहीं जागी है। वह सिंह अभी अपनी मर्यादा को पूरी तरह से पहचानकर गर्जन नहीं कर सका है, जिसकी एक प्रतिध्वनि सुनकर ही यह दूसरों के खेतों को चरने वाले पशु चौकड़ी भरकर भागते हैं। दो-दो कौड़ी के मेधावी बनने वाले टुटपूंजिए आज ज्ञान की गद्दियों पर बैठकर अपने को संस्कृति का दावेदार मानते हैं!

अपराजित मानव उठ! इन जघन्यताओं में से सौंदर्य जन्म लेगा। जैसे नरकासुर पृथ्वी को महासमुद्र में लेकर डूब गया था, तब वराह बनकर भगवान इस धरती को उबार लाए थे और वेद गूंजने लगे थे, उसी तरह इस बार जनता ही इस कल्मष को धो सकती है और तब उसके अभय गीतों की जो अजस्र रोर उठेगी, वही मानवता का कल्याण कर सकेगी। मैं भावना में नहीं बह रहा हूं। मैं ठंडे दिमाग से देख रहा हूं कि यह पापी, यह शोषक, यह शोषकों के दास अफसर, यह शोषण की संस्कृति के पूजक अध्यापक, यह सब मैं वैसे ही इतिहास में मरे हुए देख रहा हूं जैसे एक दिन कृष्ण ने भीष्म और द्रोण जैसे व्यक्तियों को पतंगों की तरह जल जाते देखा था। उस दिन कुलों के ऊपर उठकर व्यक्ति की विजय के स्थान पर अहंकार का दमन हुआ था, और अपनेपन की आड़ में पलने वाला यह दंभ वह अनाचार वह अत्याचार खंड-खंड करके फेंक दिया गया था

घृणा का समुद्र उमड़ रहा है। ऐसा, जैसा कभी नहीं उमड़ा था। परन्तु मनुष्यता का जहाज़ थपेड़े खाकर भी डूब नहीं सकेगा। उसपर जो कोलम्बस आज बैठा है, वह सोने-चांदी की तलाश में नहीं निकला है, वह मिट्टी की नई बस्तियां खोजने निकला है, वह यूलिसीज़ की भांति व्यक्ति का पराक्रम दिखाने नहीं निकल पड़ा है, वह नूह और मनु की भांति सृष्टि के बीजों की रक्षा करने को बाहर झटके नहीं खा रहा है, वह तो एक नये मन को बनाने निकला है, जिसमें इसी संसार के लिए एक नया स्वप्न साकार होता जा रहा है, प्रतिपल, प्रतिक्षण एक नया निर्माण करता चला आ रहा है।

वह अपराजित है, अदम्य है। वह नहीं मर सकता। समस्त सौंदर्य जब इसका मोल नही चुका सकता, तो मैं अकेले क्या अनुमान कर सकता हूं!

हम शाश्वत नहीं हैं। पीढ़ी-दर-पीढ़ी निरन्तर बढ़ते चले जा रहे हैं। युग-युग से अंधकार हमारी प्रगति को रोकने का यत्न करता चला आ रहा है। स्त्री का प्रेम और बच्चों का प्यार इसी कठोरता में जीवित रहा है। उसने ही पुरुष का उन्माद बार-बार झुकाया है; और उसीकी सहायता से विजय मिली है, और यह विषमता जो आज मानवीयता के नये मूल्यों के लिए काटी जा रही है, उसका भी आधार यही है।

मैंने कहा: 'सुखराम!'

'क्या है बाबू भैया?'

'तुम जानते हो, यह सब क्या है?'

वह समझा नहीं। पर चंदा की आंखों में चमक दिखाई दी। वह मुझे बुद्धि-शालिनी लगी।

'क्या बाबू भैया?'

'यह दुनिया बहुत गरीब है,' मैंने कहा: 'और पैसे की गरीबी ने लोगों के मन को भी गरीब कर दिया है।'

उसने कहा: 'आप जो कहते हो वह मैं नहीं जानता। लड़ाई मे तो यहां लोगो के पास खूब पैसा था।'

'था,' मैंने कहा: 'पर उससे क्या हुआ! भैंस बेचकर जाट ने घोड़ा ले लिया। खूब बरातों पर बरबाद किया। फरेब, जालसाजी और झूठ का बोलबाला हुआ। दो वक्त खाकर पैसा बचा तो सोना-चांदी जमा किया, पर लोगो का रहन-सहन तो नही उठा! लोगों में बदमाशी बढी, अकल नहीं।'

'सो तो है बाबू भैया!' उसने कहा।

'ठीक है सुखराम!' मैंने कहा: 'पर भूखे मरतों को रुपया फिर दूसरी हविस बन गया। सुख तो नहीं आया। आंधी के आमों की लूट से घर तो नही भरता?' सुखराम ने सिर हिलाया। चंदा ने आश्चर्य से देखा।

'रियासतें खतम हो चुकी हैं। एक-एक कर यह ऐयाशी के अड्डे खत्म हो रहे है। एक जमाना था जब राजा प्रजा के लिए जान देते थे, देश की रक्षा करते थे। पर ये जो आज हैं, ये सिर्फ ऐयाशी करते हैं। इनमें सिर्फ पुराने कानूनों की लकीरें पीटी जाती है। रजवाड़ों में ठकुरानी खाना तक नहीं पकाती, वह सिर्फ ऐश के लिए होती है। कोई पढता-लिखता नहीं। वह सब जो दिखाई दे रहा है, मर रहा है।' और मैंने रुककर गभीरता से कहा: 'सब ढह रहा है। इसका मोह बड़ा भयानक है। वही इसका भूत बनकर ज़िन्दा है।'

'भूत!!' सुखराम ने कहा।

'भूत!!' चंदा ने कहा।

हा मैंने कहा यह सब क्या है? इस निज़ाम में सब कुछ लूट पर कायम है

और यह जो सैकड़ों बरसों से दुनिया एक ढर्रे पर चलती चली आई है, वह सब ऐसा लगता है जैसे बदला नहीं जा सकता।'

'बदला जा सकता है?' चंदा ने पूछा।

'हां।' मैंने कहा: 'तुम देखते रहोगे और यह सब बदल जाएगा। छोटे-छोटे यहां के बहुत-से जागीरदार, धनी, आज अपने सामने आने वाला कल देखकर ईमानदारी से समझ गए हैं कि कल दूसरा दिन आएगा; पर ये भी छटपटा रहे हैं। एक आदमी से काम नहीं चलेगा। सुखराम, दुनिया एक आदमी की नहीं है। यहां तो बहुत-बहुत-से आदमी हैं। और वे सब इसे बदलेंगे।'

सुखराम ऊब गया था। उसने कहा: 'क्या कहते हो बाबू भैया? हम कोई पढ़े-लिखे तो नहीं हैं।'

'औरतों की-सी बात न करो सुखराम।' मैंने खीझकर कहा: 'समझने की कोशिश करो।'

'कहो बाबू भैया!'

'तुम गरीब हो?'

'हूं।'

'नीच जात हो?'

'हूं।'

'जो सब उलझा हुआ लगता है,' मैंने कहा: 'आगे चलकर वह सब मिट जाएगा।'

'मैं नहीं समझता।' सुखराम ने कहा।

चंदा पास आ गई। उसने कहा: 'मैं समझती हूं बाबूजी। थोड़ा-थोड़ा-सा मैं समझती हूं।'

'तू समझ लेती है?' सुखराम ने पूछा। चंदा ने सिर हिलाया।

सुखराम को और भी आश्चर्य हुआ।

'बाबू भैया!' सुखराम ने कहा: 'यह समझ लेती है। मैं नहीं समझ पाता। सो क्यों?' मैं क्या उत्तर देता?

मैंने सोचा, चंदा और नरेश को प्रेम करने का हक मांगना नहीं है, पाना है। दुष्यन्त और शकुन्तला के युग से आज तक कोई भीख मांगकर नहीं पा सका है।

'बाबू भैया, मैं नहीं समझता सचमुच।' सुखराम ने कहा। मैंने सोचा, जब न्याय अपने सत्य में प्रतिष्ठित हो जाता है, तब भीख मांगना भी अपने अधिकार लेने के समान हो जाता है।

चंदा ने कहा: 'तो क्या जात की ऊंच-नीच भी मिट जाएगी?'

'जरूर मिट जाएगी!'

'तब लोग हमसे घिन नहीं करेंगे?'

'नहीं।'

'वह दुनिया कितनी अच्छी होगी!'

मैंने उसे खींचकर सीने से चिपका लिया।

मैंने कहा: 'सुखराम, तुम नहीं समझोगे, पर यह समझती है। क्योंकि यह आजाद हिन्दुस्तान में बढ़ रही है। यह तब बढ़ रही है जब हमें किसीके सामने भी सिर झुकाने की जरूरत नहीं।'

मैंने उसका माथा सूंघा और कहा: 'अब हमने दुनिया में अपनी हस्ती को तो मालूम कर लिया है मगर अभी तक अपने घर की गन्दगी को साफ नहीं कर सके हैं

चंदा ने कहा : 'कैसी गंदगी ?'

'बेटी !' मैं कह नहीं सका। उस बच्ची को मैं कैसे समझाता !

उसने ही कहा : 'यही कि पुलिस नटनियों को पकड़ ले जाती है।'

'यह तुझे किसने कहा !'

'दादा ने !'

'इसने तुझे बताया कि यह बुरा है ?'

'तुम इसे बेटी कहते हो बाबू भैया।' सुखराम ने कहा। उसने मेरी ओर श्रद्धा देखा और कहा : 'तुम ठाकुर सा'ब के रिश्तेदार हो ?'

'नहीं, दोस्त हूं।'

'ऊंच जात हो।'

'हां।'

'तुम्हें यह कहते घिन नहीं हुई ?'

'नहीं।' मैंने कहा। वह सकपका गया।

'सबकी बुराई छोड़ दो सुखराम !' मैंने कहा : 'यह बुराई नहीं है। यह जात-ात सब आदमी के बनाए हुए बंधन हैं। दुनिया में एक मुल्क अमरीका है। वहां काले ब्शी रहते हैं। उनपर अत्याचार होता है, क्योंकि वहां के बाकी हुकूमत करने वाले लोग ोरे रंग के हैं !'

'अरे नहीं !!' सुखराम ने कहा।

'बुरा कौन है ?' मैंने पूछा।

'बुरा मन है।' उसने कहा।

'नहीं।' मैंने उत्तर दिया।

'तो ?' चंदा ने पूछा।

'बुरा धन है, धन की गुलामी बुरी है।' मैंने कहा।

हम फिर भी बातें करते रहे। चंदा उठ खड़ी हुई। वह पानी का डोल लेकर ए की ओर चली गई, तब सुखराम ने बताया। बताया कि चंदा और नरेश का प्रेम चमुच एक गम्भीर बात थी।

32

सुखराम वर्दी पहनने लगा। कजरी साड़ी। दुनिया बदल गई। मिसी बाबा का था सूसन। सच तो यह था कि सूसन सिर चढ़ी थी। उसने किप्लिंग पढ़ा था। द्रनाथ की रचनाएं भी पढ़ी थीं और उसका एक अलग ही ध्यान था।

विलायत में इतना अधिकार नहीं देख पाई थी। सीधी-सादी लड़की थी। फिर भारत आई। स्वेज नहर पार करते ही उसने एक दूसरी हालत देखी और फिर आप यहां उसकी तृष्णा बलिष्ठ हो गई।

उसके पिता आए थे राजा का शासन देखने। बहुत शिकायतें पहुंची थीं। वाय-य को भी बोलना पड़ा था। किसानों ने बगावत-सी कर दी थी। उसका पिता टिकल एजेण्ट सॉयर बड़ा चतुर व्यक्ति था। वह अपनी पुत्री को बहुत प्यार करता भी सूसन मस्त थी। कभी वह अपने को 'क्वो वादिस' की नायिका अनुभव करती से लगता कि वह ऐसी ईसाइन है जो चारों ओर मूर्तिपूजकों के बीच में है। पर के मूर्तिपूजक स्वामी थे भारत के मूर्तिपूजक दास थे और शोषित ईसाई अब शोषक े थे

और यह जो सैकड़ों बरसों से दुनिया एक ढर्रे पर चलती चली आई है, यह सब ऐसा लगता है जैसे बदला नहीं जा सकता।'

'बदला जा सकता है?' चंदा ने पूछा।

'हां।' मैंने कहा : 'तुम देखते रहोगे और यह सब बदल जाएगा। छोटे-छोटे यहां के बहुत-से जागीरदार, धनी, आज अपने सामने आने वाला कल देखकर ईमानदारी से समझ गए हैं कि कल दूसरा दिन आएगा; पर वे भी छटपटा रहे हैं। एक आदमी से काम नहीं चलेगा। सुखराम, दुनिया एक आदमी की नहीं है। यहां तो बहुत-बहुत-से आदमी हैं। और वे सब इसे बदलेंगे।'

सुखराम ऊब गया था। उसने कहा : 'क्या कहते हो बाबू भैया? हम कोई पढ़े-लिखे तो नहीं हैं।'

'औरतों की-सी बात न करो सुखराम।' मैंने खीझकर कहा : 'समझने की कोशिश करो।'

'कहो बाबू भैया!'

'तुम गरीब हो?'

'हूं।'

'नीच जात हो?'

'हूं।'

'जो सब उलझा हुआ लगता है,' मैंने कहा : 'आगे चलकर वह सब मिट जाएगा।'

'मैं नहीं समझता।' सुखराम ने कहा।

चंदा पास आ गई। उसने कहा : 'मैं समझती हूं बाबूजी। थोड़ा-थोड़ा-सा मैं समझती हूं।'

'तू समझ लेती है?' सुखराम ने पूछा। चंदा ने सिर हिलाया।

सुखराम को और भी आश्चर्य हुआ।

'बाबू भैया!' सुखराम ने कहा : 'यह समझ लेती है। मैं नहीं समझ पाता। सो क्यों?' मैं क्या उत्तर देता?

मैंने सोचा, चंदा और नरेश को प्रेम करने का हक मांगना नहीं है, पाना है। दुष्यन्त और शकुन्तला के युग से आज तक कोई भीख मांगकर नहीं पा सका है।

'बाबू भैया, मैं नहीं समझता सचमुच।' सुखराम ने कहा। मैंने सोचा, जब न्याय अपने सत्य में प्रतिष्ठित हो जाता है, तब भीख मांगना भी अपने अधिकार लेने के समान हो जाता है।

चंदा ने कहा : 'तो क्या जात की ऊंच-नीच भी मिट जाएगी?'

'जरूर मिट जाएगी!'

'तब लोग हमरा घिन नहीं करेंगे?'

'नहीं।'

'वह दुनिया कितनी अच्छी होगी!'

मैंने उसे खींचकर सीने से चिपका लिया।

मैंने कहा : 'सुखराम, तुम नहीं समझोगे, पर यह समझती है। क्योंकि यह आजाद हिन्दुस्तान में बढ़ रही है। यह तब बढ़ रही है जब हमें किसीके सामने भी सिर झुकाने की जरूरत नहीं।'

मैंने उसका माथा सूंघा और कहा : 'अब हमने दुनिया में अपनी हस्ती को तो साबित कर दिया है मगर अभी तक अपने घर की गन्दगी को साफ नहीं कर सके हैं

चंदा ने कहा : 'कैसी गंदगी ?'

'बेटी !' मैं कह नहीं सका। उस बच्ची को मैं कैसे समझाता !

उसने ही कहा : 'यही कि पुलिस नटनियों को पकड़ ले जाती है।'

'यह तुझे किसने कहा !'

'दादा ने !'

'इसने तुझे बताया कि यह बुरा है ?'

'तुम इसे बेटी कहते हो बाबू भैया !' सुखराम ने कहा। उसने मेरी ओर श्रद्धा से देखा और कहा : 'तुम ठाकुर सा'ब के रिश्तेदार हो ?'

'नहीं, दोस्त हूं।'

'ऊंच जात हो।'

'हां।'

'तुम्हें यह कहते घिन नहीं हुई ?'

'नहीं।' मैंने कहा। वह सकपका गया।

'सबकी बुराई छोड़ दो सुखराम !' मैंने कहा : 'यह बुराई नहीं है। यह जात-पात सब आदमी के बनाए हुए बंधन है। दुनिया में एक मुल्क अमरीका है। वहां काले हब्शी रहते है। उनपर अत्याचार होता है, क्योंकि वहां के बाकी हुकूमत करने वाले लोग गोरे रंग के है !'

'अरे नहीं !!' सुखराम ने कहा।

'बुरा कौन है ?' मैंने पूछा।

'बुरा मन है।' उसने कहा।

'नहीं।' मैंने उत्तर दिया।

'तो ?' चंदा ने पूछा।

'बुरा धन है, धन की गुलामी बुरी है।' मैंने कहा।

हम फिर भी बातें करते रहे। चंदा उठ खड़ी हुई। वह पानी का डोल लेकर कुएं की ओर चली गई, तब सुखराम ने बताया। बताया कि चंदा और नरेश का प्रेम सचमुच एक गम्भीर बात थी।

32

सुखराम वर्दी पहनने लगा। कजरी साड़ी। दुनिया बदल गई। मिसी बाबा का नाम था सूसन। सच तो यह था कि सूसन सिर चढ़ी थी। उसने किप्लिंग पढ़ा था। रवीन्द्रनाथ की रचनाएं भी पढी थीं और उसका एक अलग ही ध्यान था।

विलायत में इतना अधिकार नहीं देख पाई थी। सीधी-सादी लड़की थी। फिर वह भारत आई। स्वेज नहर पार करते ही उसने एक दूसरी हालत देखी और फिर अपने-आप यहां उसकी तृष्णा बलिष्ठ हो गई।

उसके पिता आए थे राजा का शासन देखने। बहुत शिकायतें पहुंची थीं। वाय-सराय को भी बोलना पड़ा था। किसानों ने बगावत-सी कर दी थी। उसका पिता पोलिटिकल एजेण्ट सॉयर बड़ा चतुर व्यक्ति था। वह अपनी पुत्री को बहुत प्यार करता था। तभी सूसन मस्त थी। कभी वह अपने को 'क्वो वादिस' की नायिका अनुभव करती और उसे लगता कि वह ऐसी ईसाइन है जो चारों ओर मूर्तिपूजकों के बीच में है। पर रोम के मूर्तिपूजक स्वामी थे भारत के मूर्तिपूजक दास थे और शोषित ईसाई अब शोषक बन चुके थे

प्यैरे लुई की 'एफ्रोडाइट' पढ़ने के बाद वह अपने को आइरिस समझती। वह चारों ओर उन्मुक्त व्यभिचार और विलास देखती। विलायत दूसरी दुनिया की चीज थी, जहां क्लब था, मद्य-नृत्य था, मद्य-भोज था, लोग समझते थे वे सभ्य थे, यहां जो था वह अपनी ही हुकूमत थी, बाकी लोग ऐसे थे जो सलाम करते थे। जो नहीं करते थे, वे कुचले जाते थे और फिर सूसन को लगता, यह सब एक ऐतिहासिक घटना की भांति ही अद्भुत था, आकस्मिक भी।

कभी उसे आइवनहो की 'रैबेका' की स्मृति हो आती और घंटों बैठकर सोचा करती। फिर टॉड का 'राजस्थान' पढ़ती और राजपूतों के शौर्य की यूरोप के वीर 'नाइट्स' से तुलना करती। फिर सोचती कि यह सब कैसे हुआ? यूरोप ने उसी नाइट्स की दुनिया में से यह नया जीवन कैसे निकाल लिया? उससे मिलते-जुलते सामन्तीय भारत में यह सब क्यों नहीं हुआ? वह उसका हल न निकाल पाती।

यह सब उसे उतना विचित्र लगता जैसे वह रोम साम्राज्य के किसी बड़े अधिकारी की पुत्री थी। वह चलती तो लोग सिर झुकाने लगते। क्या यह सत्य नहीं था कि भारतीय वीर थे? वे फौजों में जाते हैं तो अपना वीरत्व दिखाते हैं। पर वे राष्ट्र के लिए क्यों नहीं लड़ते?

बाप नौकरी का काम करता और वह अकेली रहती। वह यह पढ़ती कि भारतीय इस समय सिर उठा रहे थे। पर क्या वह उसे उचित नहीं कह सकती थी? यदि इंग्लैंड पर किसी का राज हो जाता, तो क्या फिर उसका इंग्लैंड सिर नहीं उठाता? दबा रहता?

तरुणाई के सुनहले सपने उसकी पलकों में डोल सकते। वह नई जवानी उसकी देह पर अब फूटी थी। विलायत में थी तो उसके पुरुष मित्र थे। यहां उसे बाप ने लाकर कहां पटक दिया है! वहीं तो उससे जिद करती थी। बात करने को कोई नहीं। पियानो मंगाया था। अभी तक आया नहीं। बस ग्रामोफोन सुना करती है। और कब तक सुने! अकेली कमरे में नाच भी लेती है, गत बजती रहती है। पर थककर बैठ रहती है। अगर मां होती तो कितना अच्छा रहता! मां तो बचपन में ही स्वर्ग चली गई। दूसरी मां आई थी, वह भी दो साल पहले मर गई।

चारों ओर फैले हुए देश की विचित्रता उसे विभ्रांत कर देती। वह सोचती कि यह जीवन इतना सहज भी नहीं है जितना समझा जाता है। क्लाइव एक नीच और झूठा आदमी था। उसने साम्राज्य बना डाला। वह महान हो गया। इंग्लैंड के दृष्टिकोण से वह महान हो सकता है, पर मानवीयता के मूल्यों से भी क्या वह महान था? यदि था तो फिर कोई भी अत्याचारी महान क्यों नहीं है?

वह कुर्सी पर बैठ जाती और डूबते सूरज को देखा करती। कार्लाइल के शब्द कानों में गूंजते, भारत सदा नहीं रहेगा, पर शेक्सपियर हमारा ही रहेगा।

सूसन कहती : 'तुमको कहानी आती है सुखराम?'

'हजूर! ऐसी ही एक-आध।' वह नम्रता से उत्तर देता।

सुखराम उसे बहादुर लगता था। वह उसे विचित्र दृष्टि से देखा करती थी। वह उसे एक जंगली कुत्ता समझती जो उसके लिए पालतू था। वह सोचती कि यदि यह अंगरेज होता तो कितना नाम पाता!

फिर भारत के बारे में सवाल पूछा करती। उसके सवालों को सुखराम बड़ी कोशिश करके उत्तर देने का प्रयत्न करता, किन्तु वह संतुष्ट न होती। सुखराम कोई पढ़ा तो था नहीं।

! यह देसी बोली आप कैसे सीखती हैं?' वह पूछता

'हमने कैसी बोली है ?'

'सरकार खूब बोलती है।'

फिर वह पूछती : 'अच्छा, इंडी का बोलना अच्छा है कि हमारा ?'

सुखराम कहता : 'मिसी बाबा ! यह तो मालूम नही।'

'तुम डरता है।'

सुखराम मुस्कराकर सिर झुका लेता।

सूसन हंसती।

सुखराम पूछता : 'सरकार ने पढी होगी ?'

वह कहती : 'हमने शौक से सीखी है। हम हिन्दुस्तान के बारे मे जानना चाहती है। तुम कुछ जानते हो ?'

'सरकार, मैं गंवार आदमी हूं।' सुखराम कहता : 'विलायत में सब अंगरेजी बोलते होगे ?'

वह दया की दृष्टि से उसे देखती और अंग्रेजी में कुछ बुड़बुड़ाती। इधर-उधर से मीर-मुंशी चश्मे मे से देखते कि हां, करनट बैठा है और मिसी बाबा उससे बातें कर रही है तो उन्हें यह सह्य नही होता। वे चित्रगुप्त के वंशज थे। देखकर जलते कि करनट जन्नत की सीढ़ी पर पांव धर रहा है। अगर मिसी बाबा कही उनपर इतनी मेहरबान हो जातीं, तो वे तो घर भर लेते और मकान की गौख कभी की पक्की हो गई होती। पर करते क्या ! लाचार थे।

पर सुखराम से मिसी बाबा खुश थी। वह उसे हर बात पर बुलवाती और अपने काम उसीसे करने को कहती। बाकी लोग खुशामदी थे, वह उनसे परेशान थी।

वह घोड़े पर बैठती, सुखराम घोडा पकड़ घुमाने ले जाता; और पहाड़ पर घूमकर शाम की अंधेरी के पहले जब वे लौटती, तो सुखराम उनके कमरे मे बड़ा लैम्प जलाता, और फिर मिसी बाबा पढ़ती। पिता के आने पर वह साथ-साथ खाते। सुखराम कभी खड़ा रहता, कभी कजरी के साथ परोसता।

एक दिन घोड़े पर चलते वक्त मिसी बाबा ने कहा : 'सुखराम ! यह किला किसने बनाया था ?'

सुखराम का कलेजा मुंह को आ गया। अधूरा किला ! और मिसी बाबा पूछ रही है। मिसी बाबा ने नजर फेंककर कहा : 'यह एक तरफ से अधूरा है। है न ? किसने इसको बनवाया था ?'

'हुजूर ! राजा अनमोलसिंह ने !' सुखराम ने बताया। उसका हृदय धड़कने लगा था। आज उसीके पूर्वजों के बारे मे पूछा जा रहा था ! और वह कह भी नही सकता था कि वह उन्हीं का वंशज है !' कैसे कह देता वह ! वह क्या मान लेती !

मिसी बाबा ने कई सवाल पूछे। सुखराम भरसक प्रयत्न करके उत्तर देता गया, पर वह उद्विग्न हो उठा था।

सुखराम से रहा नही जाता था। उसने कहना चाहा पर घुटकर रह गया। लौटकर आए तो मिसी बाबा ने फिर बुलाया। उस वक्त कजरी रोटी कर रही थी। टोका : 'कहा जा रहा है ?'

'मिसी बाबा ने बुलाया है।'

'जंगल में क्या-क्या किया था ?'

उसका स्वर कठोर था। सुखराम ने कहा : 'घोड़े की सवारी कराके लाया हू।'

'और ?'

कजरी तू क्या कहती है मसी बाबा

'अरे तेरी बाबा होगी वह।' कजरी ने रोष में कहा और रोटी धरती पर धप् से पटकी। 'सुसरी छिनाल !' उसके मुंह से निकला।

सुखराम स्तब्ध हो गया।

'बड़ी मेम है। तूने काहे को रोका होगा !' कजरी ने व्यंग्य किया।

'क्या ?'

'तू नहीं जानता ?'

'नहीं।'

'तो चला जा, जा।'

'कजरी !' सुखराम ने डांटा।

'क्या है ? डराता है ?'

'तू जानती है, क्या कह रही है ?'

'तू भी जानता है, मैं भी जानती हूं।' कजरी ने कहा, मैंने वह और यह नहीं सकेगी। सुखराम ने क्रोध में कहा : 'बेवकूफ !'

कजरी रोई, जैसे आज वह निस्सहाय हो गई थी।

परन्तु सुखराम ने कहा : 'यहां आ।'

कजरी नहीं आई।

क्रोध से सुखराम का मुंह लाल हो गया। कहा : 'मैं कहता हूं यहां आ !'

कजरी उठी और ठुमककर खड़ी हो गई और सामने आ गई।

सुखराम को उसका वह रूप देखकर उस गुस्से में भी हंसी ने घेर लिया। कजरी खिसिया गई।

'क्या कहती थी तू ?' सुखराम ने कहा।

'कुछ नहीं।' कजरी ने उत्तर दिया।

वह चला गया। वह देखती रही। पर फिर सुखराम लौटा।

'क्यों आ गया फिर ?'

'भीतर चल।' उसे वह कोठरी में ले आया और कहा : 'क्या कहती थी तू ?'

कजरी ने कहा : 'तू उसके साथ...'

सुखराम ने उसके मुंह पर चांटा मारा, और बोला : 'तूने मुझे मेरे बिसवास का यह बदला दिया !'

और इससे पहले कि कजरी जवाब दे, कोठरी के बाहर चला गया। कुछ देर बाद जब वह सुस्थिर हो गया तो मिसी बाबा की सेवा में जाकर उपस्थित हो गया।

मिसी बाबा ने इशारा किया। उसने पानी पिलाया। वह हर तरीका देखता। सुखराम हाथ पर खाना, वह प्लेटों में खाती। उसने यह जान लिया कि अंग्रेजों का रहन-सहन आराम का होता है। ज्यादातर हिन्दुस्तानियों का नहीं होता।

मिसी बाबा ने कहा : 'अर्दली !'

'हजूर !' इशारा पाकर खड़ा रहा। और जब मिसी बाबा ने इशारा किया, वह फर्श पर ही बैठ गया।

मिसी बाबा बोली नहीं। वह किसी गम्भीर चिन्ता में मग्न थी। उसने सोचा कि वह कुछ बात शुरू करे पर हिम्मत नहीं पड़ी। अंग्रेजी साहित्य के प्रसिद्ध 'रैमडीन' (रामदीन) नामक अर्दली के बारे में सोचती-सोचती सूसन कुर्सी पर लेटी-लेटी ऊंघ गई थी।

सुखराम धीरे से उठा। मिसी बाबा ने आंखें खोलकर कहा : 'सुखराम ! हमको किस्से की कहानी सुनाओ' वह फिर बैठ गया

जब लौटा तो कजरी ने कहा—

'क्यों रे, तुझमें अकल है कि तू गधा है!'

'क्यो?'

'तू बैठकर मिसी बाबा को अधूरे किले की कहानी सुना रहा था।'

'वह कहती थी इसकी कहानी बड़ी अजीब है। सुनकर मिसी बाबा को मजा आ गया! मैंने ठकुरानी की कहानी सुनाई। उसकी तस्वीर भी दिखाई।'

'क्यों?'

'वह चाहती थी।

'चाहती तो तभी न जब तूने बताया होगा।'

'मैंने बताया ही था।' सुखराम ने कहा।

'तू समझता है वह तुझे राजा बना देगी?' कजरी ने कहा और व्यंग्य से हँस दी।

'अब तेरा गुस्सा कहां है?' सुखराम ने पूछा।

कजरी ने फिर मुंह फुला लिया।

'मिसी बाबा मुझपर आसिक हो गई!'

'यह तो मैंने नहीं कहा।' कजरी झेंपी।

'तूने नहीं कहा?' सुखराम ने उसका कान पकड़कर कहा।

कजरी ने सिर झुका लिया।

'तूने सोचा होगा, गोरी लुगाई को रानी बनाऊंगा?' सुखराम ने फिर चोट की।

'मुझे तू माफ नहीं कर सकता?' कजरी ने कहा: 'पहले तो तू मुझसे कुछ नहीं कहता था!'

'बेवकूफ! वे मालिक है। तेरी इतनी मजाल कि तू यह सोचती है!' सुखराम ने कहा।

'तेरे बारे में सोचा सो मेरी भूल थी।'

'और उसके बारे में ठीक था!'

'कौन जाने!!'

'बावरी, वे बड़े लोग है।'

कजरी ने कहा: 'अरे धन से क्या होता है! मैं तेरी तरह धौंस में नहीं आती किसीकी। औरत मरद चाहती है—मेम हो, चाहे बामनी, चाहे नटनी!'

'यह गलत है।' सुखराम ने कहा।

'अगर तेरी बात ठीक है तो तेरी ठकुरानी काहे को दरबान से फंस गई थी? सच कह, वह गोरी मेम तुझे अच्छी नहीं लगती?'

'क्यों नहीं लगेगी?' सुखराम ने कहा: 'जिसका नमक खाऊंगा, उसे बुरा कहूंगा?'

कजरी ने उसके पांव छुए। कहा: 'तू सचमुच ठाकुर है; और मैं सचमुच नटनी हूं। तू मुझे माफ कर दे। अब ऐसी भूल नहीं करूंगी।'

सुखराम ने उसका सिर पकड़कर कहा: 'पगली! यह तो मैंने कभी सोचा भी नहीं।' और उसे उठाकर अपने वक्ष से लगा लिया। आज वे बहुत दिन बाद फिर एक-दूसरे के इतने पास आ गए थे।

'दैया री, मुझे कैसी चाहना दिखाता है!' कजरी ने लजाकर कहा। पर सुखराम उसकी ओर मुग्ध दृष्टि से देखता रहा देखता रहा। कजरी ने शरमाकर सिर झुका लिया

इतने में माली आया। देखा तो खांसा। दोनों खिंचकर अलग हो गए।

'क्या है ?' सुखराम ने पूछा।

'मिसी बाबा ने बुलाया है।' माली ने कहा और चला गया।

कजरी हंसी। कहा : 'जा ! यह तो भाग की बात है।' वह व्यंग्य नहीं था, मजाक था। सुखराम ने कहा : 'अब नहीं कजरी। अब मन नहीं करता।' वह मुस्कराया।

'अब ऐसा जोगी भी न बन। अभी से क्या बूढ़ी हो गई हूं मैं !' कजरी ने इठलाकर कहा।

'मेरे लिए तू कभी बूढ़ी भी हो जाएगी क्या ? मैं तो ऐसा सोच भी नहीं पाता।'

'भले न सोच।' कजरी ने कहा : 'जब हम-तुम पोपले मुंह से बैठकर भजन करेंगे, तो कैसा मजा आएगा !' दोनों ठठाकर हंसे। भविष्य तक की कल्पना थी।

सुखराम ने कहा : 'पर जब तू अभी से इतना कलेस करती है, तो बूढ़ी होकर तो न जाने कितनी खूसट बनेगी !'

'और तू बनेगा खर्राट !' कजरी ने हंसकर कहा।

सुखराम पहुंचा तो मिसी बाबा कमरे में घूम रही थीं। उसने पगध्वनि सुनी तो मुड़कर देखा।

'बड़ी देर में आया !' उन्होंने कहा।

सुखराम ने घबराकर कहा : 'सरकार···वह···कजरी···मुझे···'

मिसी बाबा हंसी। कहा : 'हम समझते हैं। काम के वक्त काम; बात के वक्त बात !'

'जी हां, हुजूर।' उसने सोचा। मेज पर ही ठकुरानी का चित्र था। मिसी बाबा ने फिर चित्र देखा।

और देखती रही। सुखराम देखता रहा। उसकी समझ में उसका बड़बड़ाना नहीं आ रहा था, क्योंकि वह अंगरेजी में था। वह चुप होकर सोचने लगी और कुछ देर में फिर बड़बड़ाई।

फिर हिन्दी में कहा : 'रानी !!'

सुखराम ने देखा, वह कुछ जोश में थी। परन्तु उसकी आंखों में बड़ा गहरा चिन्तन था। वह जैसे आकाश में उड़ती चील की तरह सुदूर को भी देख लेना चाहती थी।

उसने चित्र रखकर कहा : 'सुखराम !'

'सरकार !'

और मिसी बाबा कुर्सी पर बैठ गई। सुखराम फर्श पर बैठ गया। मिसी बाबा चुप थी। उसने आंखें बन्द कर ली थीं। वह जैसे ध्यानमग्न थी। सुखराम उसकी समाधि के टूटने का इन्तजार करने लगा।

'सुखराम !' अचानक उसने कहा।

'हां सरकार !'

उसने कहा : 'मरकर फिर जन्म होता है ? हिन्दू ऐसा कहते हैं।'

'हां हुजूर !' वह चकराया।

'तुमने देखा ?' वह आंखें बन्द किए ही बोल रही थी।

'नहीं सरकार, सुना जरूर है।'

'तुम मानते हो ?'

'सब मानते हैं हुजूर।'

'ठकुरानी का फिर जनम हुआ है ?

'कौन जाने सरकार। वह रानी थी। आप भी रानी हो। रानी की रानी ही जान सकती है।'

सुखराम थर्रा गया। वह यह कभी नही सोच पाया था। और मिसी बाबा ने कहा : 'आदमी मरकर फिर क्यों पैदा होता है ?'

'सरकार, उसके पाप-पुन्न का फल मिलता है। एक जनम में जो उसकी इच्छा अधूरी रह जाती है, वही दूसरे जनम में पूरी करने को आता है।'

'तुम जानते हो !' उसके स्वर मे आश्चर्य था। फिर वह अंग्रेजी में बड़बड़ाई। सुखराम नहीं समझा।

पर अब उसकी कल्पना जाग उठी। उसे डर लगने लगा। यह सब वह क्यों पूछ रही थी ! यह सब अचानक ही उसके दिमाग मे आ कहां से गया ! बैठी-बैठी ही क्या मिसी बाबा सोच रही है कि वह फिर जनम लेकर आई है ! और उसकी कल्पना ने हिसाब लगाया।

कहां विलायत, कहां हिन्दुस्तान ! फिर पहाड़, डाकू, मिलन, नौकर और ठकुरानी, फिर जनम ··

'क्या यह···

क्या यह वही ··

क्या वही ठकुरानी···

और झटके से बात फिसली : 'क्या यह वही ठकुरानी है !'

'क्या यह उसीकी आत्मा है !'

'क्या वह उसका वंशज होकर भी जान नहीं सकेगा !'

मिसी बाबा ने कहा : 'तुमने खजाना देखा है सुखराम ?'

उसकी विचारधारा टूट गई। पूछा : 'सरकार ! आप पूछती हैं ! आप ठकुरानी हैं !'

'मैं ठकुरानी हूं।' मिसी बाबा ने हंसकर कहा। वह प्रश्न था, वह विस्मय-सूचक वाक्य था या स्वीकृति थी, यह सुखराम नहीं समझा। वह वैसे ही घबराया हुआ था। अब वह इतना घबरा गया कि देखता ही रह गया। मिसी बाबा ने कहा : 'तुमने खजाना कभी देखा ?'

'नहीं सरकार !' वह उसे रहस्य-भरी-दृष्टि से देखता हुआ बोला।

'हमको ले चलेगा ?'

'सुखराम के शरीर पर कांटे-से उग आए। बोला : 'सरकार, मैं डरता हूं।'

'क्यों ?'

'सरकार, वह बड़ी भयानक जगह है।'

'पर तुम बहादुर है।'

'सरकार, आप डरेंगी···'

'हम !' सूसन हंसी। कहा : 'हम ! नहीं मैन ! हम नहीं डर सकती।'

'सरकार !' सुखराम ने कहा : 'बड़े महाराज के बखत एक जर्मनी का साहब आया था, खजाना ढूंढ़ता था। वह उसमें घुसा था। उसके देवता ने ऐसा चांटा मारा कि साहब सबेरे ही भाग गया।'

'नहीं।' सूसन ने उठकर कहा : 'हम जाएंगे ! तुम चलेगा !'

'चला चलूंगा सरकार !' पर उसका स्वर कांप उठा।

तुम डरते हो ?

'हां सरकार।'

'क्यों ?'

'सरकार ! वहां जानवर भी है।'

'हम बन्दूकवाला लेकर चलेंगे।'

सुखराम ने उसे स्फूर्ति से भरा हुआ देखा। वास्तव में वह कल्पनाशील स्त्री एक भारतीय नरेश के पुराने खजाने की कल्पना करके मस्त हो गई थी। वह खजाना निकालेगी। और वायसराय के साथ बैठेगी तो उसका नाम इंग्लैंड में बार-बार दुहराया जाएगा।

सुखराम की मार्मिक भूमि पर वह एक नई इमारत बनी। वह ठकुरानी की आत्मा थी। तभी तो फड़क रही थी और सारा तारतम्य अपने-आप उसके मस्तिष्क में बैठ गया था, उसे विचलित कर रहा था। और उस अधूरे किले के वंशज की जड़ें हिल गईं। उसे यह भाग्य बड़ा आश्चर्यजनक-सा लग रहा था।

मिसी बाबा चली गई, किन्तु सुखराम खड़ा ही रह गया। माली आया। कहा : 'अरे सुखराम !'

'क्या है !' वह चौंक उठा।

'वह धोबी बीमार है।'

'एक दूसरा बुला ले न !'

'साहब का धोबी ! यहीं रहना होगा। गांव वाले तो डरते हैं।'

'अरे मैं तू यहां के नहीं हैं !'

'अच्छा ! बुलवाता हूं।' माली चला गया।

कजरी बैठकर सी रही थी और धीरे-धीरे किसी गीत की कड़ी गुनगुना लेती थी।

सुखराम जब लौटा तो वह थका हुआ था। वह आकर धम से खाट पर बैठ गया और फिर वैसे ही लेट गया। उसके मुख पर गम्भीर चिन्ता थी।

कजरी घबराई।

पूछा : 'क्या हुआ ?'

'कुछ नहीं।'

'तो क्यों निढाल हो रहा है ?'

सुखराम ने कहा : 'कजरी !!'

'क्या है ?' वह आश्चर्य में थी।

'वह मेम नहीं है। ठकुरानी है !' सुखराम ने जैसे आवेश में कहा : 'तू समझी कि क्या कहा ?'

ठकुरानी !!

मेम नहीं ठकुरानी है !!

कजरी के कानों में वे शब्द बार-बार गूंज उठे। विश्वास नहीं हुआ।

'तुझे कैसे पता चला ?' उसने पूछा।

'क्यों ?' सुखराम ने कहा : 'मैं क्या समझता नहीं ?'

'पर कोई बात हुई ?'

'हुई।'

'क्या ? उसे बताता क्यों नहीं ?'

'कहती थी वह खजाने को ढूंढेगी।'

कजरी हंसी। कहा : 'तूने बताया होगा कि उसमें खजाना है ?'

'हां, मगर वह तो खुद कहती थी··
'कि वह ठकुरानी है।'
'यही तो मैं सोचता हूं।'
'यह नहीं हो सकता।'
'आत्मा का कुछ ठीक नहीं कजरी।' सुखराम ने कहा।
'तूने पक्की कर ली!'
'किसकी? ले जाने की?'
'नहीं, इसकी कि वह अब मेम नहीं है ठकुरानी है।' उसके स्वर में उपहास था। सुखराम आहत हुआ। उसने कहा कुछ नहीं। केवल निराशा में दया की भीख मांगनेवाली दृष्टि से देखा। वह दर्द-भरी आंखें कजरी के मन को छू गईं। उसकी निरीहता पर उसे करुणा आ रही थी। क्या हो जाता है इसे ऐसे मौकों पर? अकल कहां चली जाती है इसकी?
कजरी सुस्त पड़ गई थी। कहा: 'होगी।'
सुखराम समझा। कहा: 'तू मेरा दिल बहलाती है!'
'दिल बहलाती हूं कि ठीक कहती हूं। अब मुझे क्या मालूम। होगी! शायद! कौन जाने!' और उसने अन्त में जोड़ा: 'राम की माया, कहीं धूप कहीं छाया! वह ही बनाए, वह ही बिगाड़े। कौन समझ सकता है। बच्चा! हम तो हाथ में लोटा, बगल में सोटा, तीनों लोक जागीरी में। रमते जोगी हैं। क्या ठिकाना है···'
वह खूब खिलखिलाकर हंसी और उसने सुखराम का सिर पकड़कर कहा 'अभी क्या है! अभी तो तुझे आतमा दिखी है, कहीं भूत न दिखने लग जाएं।'
दोनों एक-दूसरे की तरफ देखते रहे और अन्त में सुखराम ने शरमाकर मुंह मोड़ लिया। कजरी ने कहा: 'सुन तो!'
'क्या है?' उसने वैसे ही कहा।
कजरी ने चिराग बुझा दिया।
सुबह चाय पीते वक्त सूसन ने अपने पिता से कहा: 'डैडी!'
'हूं।' बूढ़े ने टोस्ट खाते हुए कहा।
'डैडी, सुखराम कहता है कि यहां के किले में बहुत बड़ा खजाना है।'
वृद्ध हंसा। कहा: 'यूरोप के रहने वाले सारे एशिया की धरती में खजाने ही खजाने देखते हैं।'
सूसन का मन छोटा हुआ। कहा: 'डैडी!'
'तुम मालकिन हो। हुकूमत करने आई हो।' बूढ़े ने अपनी आंखों से देखते हुए कहा। वह लम्बा-चौड़ा आदमी था। सिर के आगे चुके बाल गिर के थे, कुछ पके हुए बालों का एक लौंदा सामने रह गया था, और फिर दोनों कानों के ऊपर गुच्छे थे। ऐसा लगता था जैसे पकी हुई घास के बीच से सख्त धरती चिकनी-चिकनी दिखाई दे रही हो। उसकी भौं बरायनाम रह गई थी। मुंह पर लाल रंग खुरदरा-सा दिखता था। और उसके दांत पीले थे, नाक के बीच में गांठ पड़ती थी और फिर वह ऊपर के पतले होठ पर झुक जाती थी। उसकी गर्दन मोटी थी। पुतलियों का रंग नीला था। बात करता था तो रुक-रुककर। वह महारानी विक्टोरिया के जमाने में जो शिक्षा-काल समाप्त कर चुका था, उसका जैसे उस पर अभी तक प्रभाव था।
सूसन नहीं समझी। पूछा: 'उससे क्या हुआ?'
'ये गंवार देशी लोग हैं।' उसने कहा।
पर किले में इतनी दौलत है सूसन ने कहा कि अगर हम उसे ले आ सकें तो

सारा इंग्लैंड हमारी तरफ देखने लगेगा।

बूढ़ा अबकी बार नहीं हँसा। उसने गम्भीरता से कहा : 'फिर भी यह सीमित धन है। हिन्दुस्तान की उपजाऊ धरती का दाना-दाना सोना है। वहाँ का किसान जोतता है और हमारा खजाना साल के साल भरता है, सूसन!'

सूसन को यह विचार पसन्द नहीं आया।

'तुमको सख्ती करनी चाहिए।' बूढ़े ने कहा।

'यह आदमी तो भला है।' सूसन ने कहा।

'ठीक है, पर हमारा गुलाम है। उसे बराबरी का दर्जा नहीं दिया जा सकता। इंग्लैंड का हर गरीब, हिन्दुस्तान के बड़े से बड़े आदमी से भी ऊँचा दर्जा रखता है।'

सूसन को लगा कि अब जो उसके बाप ने सिर उठाया, तो इंग्लैंड का झण्डा फरफरा उठा।

बूढ़े ने फिर कहा : 'सारी सभ्य दुनिया हमसे जलती है. अमेरिका के लोग जनतन्त्र चिल्लाते हैं, क्योंकि वे अंग्रेजों के गुलाम थे। आज वे बनिये हैं. मगर व्यापारी ही नहीं, हम राजा भी हैं। हमने हिन्दुस्तान को अपनी अकल और तलवार से दबाया है! तुम्हारा वह नौकर है, उसे कुत्ता बनाकर पालो। हिन्दुस्तानी अच्छा होता है, पर उसे कभी यह महसूस न करने दो कि वह भी हमारा जैसा आदमी है, वरना फिर अदब उठ जाएगा। डर पैदा करो। इन लोगों के भीतर सामन्तीय भावना है, स्वामिभक्ति है। वे नहीं जानते कि इससे आगे क्या है? शहरों में शिक्षा ने इन्हें चेतन कर दिया है। वहाँ के लोग सिर उठाते हैं। ये लोग हमारे आने से पहले भी गुलाम थे। हमने सिर्फ उसीको पक्का किया है। इनके पुराने स्वामी भी हमारे गुलाम हैं। रियासतों का क्या होगा? ये सब एक दिन अंगरेजों के हाथ में आ जाएँगी।'

सूसन ने आँखें फाड़कर देखा। बूढ़े ने कहा : 'हर अंगरेज को देशभक्त बनना चाहिए, वरना इंग्लैंड का गौरव ही समाप्त हो जाएगा। क्या किया जाए? डलहौजी के बाद हमारे हाथ कट गए हैं! हम किसीको अब खतम नहीं कर सकते। पर इनमें ताकत नहीं है। कांग्रेस के बढ़ने के साथ ये सब राजा इतने कमजोर हो गए हैं कि हमारी तरफ देखते हैं, हमसे उम्मीद करते हैं!'

'क्यों? सूसन ने पूछा।

'क्योंकि जनता इनके साथ नहीं है।'

'फिर भी तो ये अब भी बने ही हैं।'

'हम इन्हें खतम नहीं कर सकते। वैसे ये लोग गदर करते हैं।'

बूढ़ा हँसा। सूसन नहीं।

'फिर क्रान्ति क्यों नहीं होती?' सूसन ने पूछा।

'ओह लड़की!' बूढ़े ने कहा : 'उसके लिए अकल चाहिए। इनपर भाग्य का भूत लदा हुआ है। मेरी बच्ची! यह यूरोप नहीं है, यह एशिया है, एशिया! ये सब पिसते हैं पर इसी राज खान्दान को चाहते हैं। उधर, कांग्रेस मंत्रिमंडल बन गए हैं तो यह यहाँ भी परचूनिए सिर उठाने की कोशिश करते हैं। याद है, फ्रांस में जैसे दुकानदारों ने सिर उठाया था। ये लोग कभी ताकत में नहीं आ सकते। कभी नहीं। ये लोग जात-पाँत मानते हैं और हम उसीका इस्तेमाल करते हैं।'

सूसन ने कहा : 'लेकिन गवर्नर (पिता)…!'

बूढ़े ने प्रश्नवाचक दृष्टि से देखा।

सूसन ने कहा : 'यह सब कब तक चलेगा?'

जब तक इंग्लैंड समुद्र का राजा है

'जर्मनी में हिटलर कितना बढ़ गया है।'

'वह जलता है!' बूढ़े ने कहा।

'मगर ताकतवर है!' सूसन ने जताया।

'अगर हम सफल हो गए तो हम जर्मनी और रूस को भिड़ा देंगे। दोनों आपस
ड़कर मर जाएंगे। सबसे बड़ा खतरा रूस है।'

'क्यों? वे तो भगवान को भी नहीं मानते!'

'नास्तिक हैं। वे यूरोपीय तो नाम के हैं सूसन। वे भी असल में एशियाई ही

'मैं अब बहुत व्यस्त रहूंगा।' वृद्ध ने कुर्सी छोड़कर कहा: 'लेकिन तुमको मेरी
ग्लैंड की मर्यादा के अनुकूल रहना चाहिए।'

'मैं योग्य बनने का प्रयत्न करूंगी।'

'क्राइस्ट तुम्हें मंगल देगा।' वृद्ध ने अत्यन्त स्नेह से देखते हुए कहा: 'और
तुम कहीं इधर-उधर न जाना।'

'क्यों?'

'मैं बहुत काम में लगा हूं।'

'डैडी, आप अपने काम में मुझसे मदद क्यों नहीं लेते?'

'तुम बच्ची हो, खेलो-कूदो। बहुत जिन्दगी पड़ी है।'

बूढ़ा चला गया, तब सूसन फिर पहले जैसी रह गई। वह आज हुकूमत की नई
पा चुकी थी।

दोपहर को सूसन ने खाना खाया। वह अपने कमरे में चली गई। जाकर सो
कजरी ने मसहरी डाल दी। और द्वार भेड़ गई।

इसी समय बाहर शोर मचने लगा। सूसन की नींद टूट गई। उसे बुरा लगा।
गे। सोचा, चलकर डांटे। चपरासी और माली कहां गए?

पुकारा: 'सुखराम!'

कजरी आई। कहा: 'हजूर!'

'यह क्या शोर हो रहा है?'

'सरकार, अभी पता चलाती हूं।'

वह बाहर आई। सूसन ने कहा: 'जल्दी देखकर आओ।'

कजरी ने तलाश किया।

लौटकर आई तो सूसन ने गाउन पहनते हुए पूछा: 'क्या हुआ?'

कजरी घबरा गई थी।

'क्या हुआ?' सूसन ने पूछा।

'माली को सांप ने काटा है सरकार!'

सूसन बाहर चली। पूछा: 'कहां है?'

'उधर है हजूर।' कजरी आगे-आगे चली।

सूसन ने देखा, माली मुंह से झाग डाल गया था। बेहोश था। सब देख रहे थे
को देखकर सब उसको कौतूहल से ताक रहे थे।

'क्या करता था?' सूसन ने पूछा।

'सरकार, घास काट रहा था।'

सब परेशान थे।

'पुअर मैन' हाय बेचारा सूसन ने कहा इसका तो कोई भी इलाज नहीं
सांप था?

वह गवार, गन्दा आदमी, जो कुछ नहीं जानता था, आज सारे यूरोप के ज्ञान को चुनौती दे रहा था। और सूसन ने हठात् जो देखा तो आँखें अब आश्चर्य से फटी रह गई! क्या वह सच था!!

सूसन ने देखा—थाली स्याह पड़ गई।[1]

गोरखी ने मन्त्र रोका और कहा : 'उतार लो।'

सुखराम ने थाली उठा ली। थाली मांज दी गई और गोरखी की आज्ञानुसार फिर चिपका दी गई।

सूसन ने आश्चर्य से देखा कि वह मन्त्र पढ़ता जाता था और फिर थाली, जो अभी साफ होकर चमक आई थी, अब कुछ स्याही पकड़ने लगी थी।

गोरखी ने फिर मन्त्र पढ़े और कुछ ही देर में थाली फिर स्याह पड़ गई।

'फिर उतार लो!' गोरखी ने कहा।

अबकी बार जब कजरी थाली को मिट्टी से मांजने लगी तो सूसन ने पास से देखा। सचमुच वह स्याह थी। और फिर उज्ज्वल-सी चमचमा उठी।

'अब के रखो इसे।' गोरखी ने कहा, जो सूसन के कौतूहल के प्रति ऐसे देख रहा था जैसे किसी साधु-संत की आंखों में नास्तिक बालक के प्रति करुणा, उपेक्षा, दया और दुःख पैदा होता है।

तीसरी बार भी थाली स्याह पड़ी, उतरी, मंजी और फिर चिपका दी गई। इस बार माली तनिक हिला तो उपस्थित लोगों में खुशी की लहर-सी दौड़ गई। सूसन चकित थी।

चौथी बार थाली स्याही की हल्की छाया लिए आई।

माली ने आंखें खोल दीं। सूसन आश्चर्य में पड़ गई।

'माली!!' वह चिल्ला उठी।

माली मुस्करा दिया।

सूसन ने आज जादू देखा था। अब वे सब प्रसन्न थे। कजरी ने कहा : 'देखा मिसी बाबा!!'

भारतीयों की अबाध यातना का यह कैसा अजीब रूप था, सूसन ने सोचा कि इतनी करामात रखकर भी ये गंवार हैं, गुलाम हैं! ऐसा क्यों है?

'तुमको इनाम देंगे हम।' सूसन ने माली से कहा।

'नहीं सरकार,' गोरखी ने सलाम करके कहा : 'हम धरम के लिए किए गए कामों का दाम नहीं लेते। गुर मंतर है। इसका पैसे से मोल होते ही यह झूठा पड़ जाएगा। इसका बदला मानुस नहीं दे सकता, भगवान देता है।'

वह अहंकार नहीं था, स्वाभिमान था। कजरी को लगा कि सूसन नाराज होगी; पर वह नाराज नहीं थी, आश्चर्य में थी।

सब चले गए। वह आज थपेड़े खाने लगी।

कजरी भी चली गई।

सूसन उठ खड़ी हुई।

पूर्व और पश्चिम का भेद अब समझ में आ रहा था। ये लोग दुःख पाते हैं, परन्तु इनका पुनर्जन्म का सिद्धान्त इनको मरने नहीं देता। उसके कारण ये कुचले जाने पर सिर नहीं उठाते, उसे भी पापों का फल मान लेते हैं। परन्तु कितना भी वैभव और

---

1 यह सत्य है। एक एम॰ बी॰ बी॰ एस॰ डाक्टर की भुनाबर भरतपुर राज्य में यह इलाज करते थे पर इसका रहस्य नहीं बताते थे यह अनुसंधान का विषय है

तृष्णा हो, उससे इनका मूल निदान नहीं मिलता था।

रात हो गई थी।

वह गरीब माली था। उसने दाम लेने से इन्कार कर दिया। यदि यूरोप में किसी को यह दवा मालूम होती, तो वह इसे 'पेटेण्ट' करवा लेता, लाखों कमा लेता, दुनिया में नाम कर लेता।

वह घूमने लगी।

यह लोग क्यों इस तरफ ध्यान नहीं करते? फिर जब एक ओर ये लोग इतना त्याग दिखाते हैं, तो दूसरी तरफ आपस में लड़ते क्यों हैं? मुकदमे करते हैं। इतनी जात-पांत क्यों मानते हैं?

और इंग्लैंड की वे भीगी हुई बर्फीली रातें याद आने लगीं। जहां सन्ध्या सन्नाटे में बीतती है, वहां ऑरगन (बाजा) की लय गलियों पर गूंजती थी, नाचा करती थी।

उसका मन किया कि वह किसी तरह हिन्दुस्तान के इस रहस्य को समझ ले। और उसे याद आया। जब वह बम्बई में पहली बार उतरी थी, तब समझी थी कि हिन्दुस्तान कुछ विशेष नहीं है। दुनिया के किसी बड़े शहर की नकल है।

वह चली। और उसके मन में आया, वह किसी से बात करे। कोई नहीं था। नौकर अपने-अपने क्वार्टरों में थे।

सामने एक द्वार खुला था। अन्दर से हल्की रोशनी आ रही थी। अपनी आतुरता में सूसन उधर ही बढ़ी। पिता का दिया हुआ सबक तो गोरखी माली का मन्त्र समाप्त कर ही गया था, और अब तरुणी को सारे हिन्दुस्तान के जर्रे-जर्रे में रहस्य ही दिखाई दे रहा था।

उसने जब लान पार किया, तब कोठरी में हंसी का शब्द सुनाई दिया। खाट पर सुखराम लेटा था, और बीड़ी पी रहा था। कोठरी में धुआं भर गया था। कजरी ने अपनी बीड़ी का आखिरी कश लिया और फेंक दी और फिर उसके पांवों पर हाथ जमाए सुखराम इधर-उधर की बातें करता जाता था और मुग्ध होकर कजरी पांव दबा रही थी।

पति-पत्नी का स्नेह था वह!!

सूसन को देखकर दोनों हड़बड़ा कर उठ खड़े हुए। सूसन को शर्म ने घेर लिया। वह मालकिन। आज वह अचानक ही भूल से आ गई। वह यह भी भूल गई कि किसीके कमरे में घुसना नहीं चाहिए। और फिर अब याद आया कि वे पति-पत्नी भी थे। उसका कौमार्य उसे लज्जा से झुका गया। क्या वह उसने ठीक किया! सुखराम मुस्करा रहा था। कजरी के दांत खुल गए थे।

आखिर कजरी ने ही कहा : 'सरकार! बुला क्यों न लिया!'

सूसन सुस्थिर हुई। बोली : 'तुम सांप का जहर उतारना जानते हो सुखराम?'

अब समझ में आया। कहा : 'नहीं हुजूर!'

'कजरी!'

'हां सरकार!'

'तुम क्या करती थीं? इसका पांव दबाती हो।'

कजरी ने माथा ढंका, सिर झुका लिया।

'दर्द होता है?' सूसन ने कहा।

नहीं सरकार सुखराम ने पानी पानी होकर कहा कजरी को मजा आया। भीतर ही भीतर हंसी

'फिर क्यों दबाती है यह ?' सूसन ने आश्चर्य से पूछा।

सुखराम उत्तर न दे सका। कजरी ने कहा : 'सरकार, हमारी रीत है।'

'क्या ?'

'सरकार, हमारे यहां चलता है। एक कायदा है।'

'ओह,' सूसन ने कहा : 'हमको बताओ।'

'औरत मरद के पांव दबाती है।'

'लेकिन क्यों ?' सूसन ने जोर देकर पूछा।

कजरी ने उसकी ओर देखा। वे आंखें थीं कि किताब खुली पड़ी थी। उसमें कितना आत्मविश्वास था ! जैसे अंगरेज निडर होकर गिरजे में जाता था, और अंगरेजी पढ़ा हिन्दुस्तानी मंदिर में जाने में झेंपता था, वैसे ही थोड़ी देर पहले वे दोनों सूसन के सामने घबरा गए थे। परन्तु अब भाव बदल गया था। कजरी को गर्व था। वह बांदी नहीं थी। यह उसके प्रेम का प्रकटीकरण था। नारी का समर्पण था। वह जिस दुनिया में पली थी, जितना जानती थी, उसमें यही सब कुछ आदर्श माना जाता था। उस दुनिया में नारी बराबरी का दावा नहीं करती थी, अपने को झुकाना जानती थी। नई दुनिया की स्त्री वह सब करना नहीं चाहती, और नहीं करेगी, परन्तु कजरी तो इस सब नयेपन को नहीं जानती। वह उसीमें गौरव अनुभव करती थी।

सूसन ने देखा तो हंसी और कहा : 'ओह ! लव।'

'क्या सरकार ?' कजरी ने पूछा।

'तुम उसको प्यार करती हो !'

कजरी ने स्त्री के विश्वास से उसकी आंखों में झांका। सूसन ने सरकार-हजूर करने वाली स्त्री की मर्यादा का अभिमान देखा। वह प्रचण्ड था। वह उसे अच्छा लगा।

'तुम भी कभी उसके पांव दबाते हो ?' सूसन ने सुखराम से कहा।

सुखराम झेंप गया। कजरी ने कहा : 'नहीं सरकार ! यह धरम नहीं है।'

'ओह !' सूसन अकारण हंस दी।

दोनों झेंपी-झेंपी हंसी हंसने लगे। सुखराम वहीं रह गया।

अब वे डाकबंगले की ओर चल रही थीं।

'सरकार, आप सोईं नहीं ?'

'नहीं, नींद नहीं आई।'

कजरी ने पूछा : 'सरकार, आपकी शादी हो गई ?'

'नहीं।'

कजरी ताज्जुब में पड़ गई।

'शादी करना क्या जरूरी है ?' सूसन ने पूछा।

कजरी उत्तर नहीं दे सकी।

'तुमको मालूम है, शादी बड़ा कठिन काम है।'

'सरकार, उसमें कठिन की क्या बात है !'

'तुम बोलो, तुमसे बात करने में अच्छा लगता है। शादी तुमने कब किया ?'

'सरकार, मैं भी चौदह बरस की थी तब।' वह असली बात छिपा गई।

'तुम्हारा आदमी तुमको छोड़ सकता है कजरी ?' कजरी से सूसन ने गंभीरता से पूछा।

कजरी के नेत्र फिर बल खाने लगे पर संभल गई कहा क्यों नहीं सरकार

'उन्नीस !'

'सरकार, आप शादी क्यों नहीं कर लेतीं ?'

'अभी हमारा उमर ही क्या है !' सूसन ने कहा।

'तो सरकार, और उमर कब आएगी ?'

'क्यों ?' सूसन ने कहा : 'हमारे यहां दो सौ साल पहले लड़की की जल्दी शादी हो जाती थी। अब नहीं। पहले औरत वोट भी नहीं देती थी।'

'सरकार, वोट क्यों ?'

'यहां नहीं होती !'

'नहीं सरकार, कभी नहीं।'

'ओह !' सूसन चुप हो गई।

'तो हजूर,' कजरी ने कहा : 'अब आपकी क्या उमर हो जाएगी तब आप शादी के लायक कहलाएंगी ?'

'अभी दस बरस तक हम नहीं कर सकती।'

कजरी ने कहा : 'हजूर ! मैं तो तेईस-चौबीस की होऊंगी। अभी से बूढ़ी हो गई। मेरी उमर की कुछ औरतें मां हो गई हैं, तो वे तो और भी बड़ी लगती हैं। मैं तब पैदा हुई थी जब उस साल गिरीज ग्वारिये की पचपन भैंस एकदम बीमारी से मर गई थीं।'

सूसन ने करवट ली और उसे घूरने लगी। कजरी डरी। चुप हो गई। सूसन ने थोड़ी देर में कहा : 'कजरी, तुमको कहानी आती है ?'

'आती है सरकार !' उसने झेंपते हुए कहा : 'अच्छी नहीं आती। अच्छी तो बूढ़ा हरपाल सुनाता था। गीत भी बनाता जाता था। मैं तो ऐसे ही सुना लेती हूं।'

और सूसन को पुश्किन याद आ रहा था, जो इसी तरह जाकर कबीलों में रात बिताया करता था। सच तो यह था कि वह विलायत से सीधी यहां आ गई थी। कम-उमर थी। विक्टोरिया के वैभव का विष उसमें चढ़ नहीं सका था। नौकरानी मुंह लग रही है, यह वह नहीं जानती थी। और फिर अकेली करती भी क्या ? नहीं बोलती तो पागल हुई जाती है। कहा : 'कजरी, बड़ा सा'ब आया ?'

'नहीं सरकार ! कहीं मोटर में गए थे। आज तो पल्टन के जवान भी संग गए थे। क्या हो गया हजूर ?'

'पता नहीं।'

'सरकार, मरदों को तो काम लगा ही रहता है। इन्हें जाने कहां से इतने काम आ जाते हैं। सरकार, आप एक दुनिया में औरत ही औरत रखिए और रानी बन जाइए।'

'तुम्हारी ठकुरानी थी न !' सूसन ने हंसकर कहा : 'वह तो औरत ही थी, रानी थी न !'

कजरी को काटो तो लहू नहीं। थूक निगलकर मुश्किल से कहा : 'हां हजूर !'

'वह तो मार डाली गई थी।'

हां हजूर !' कजरी ने फिर कठिनाई से कहा। सूसन अपने ध्यान में मग्न थी।

'कजरी, तुम ठकुरानी है ?' उसने पूछा।

'नहीं सरकार।'

'सुखराम ठाकुर है ?'

'हां सरकार।'

फिर तुम उसकी बीवी है न ? उसकी जात की नहीं है ?

रही थी, यह औरत अपने हिन्दुस्तान को नहीं जानती। पर वह कहती है सारी दुनिया आदमी के लिए है। वह सोचने लगी : रोम में गुलाम थे। तब क्राइस्ट ने उनको आजादी दिलाई थी। हम भी वैसे ही हैं। परन्तु हमारे पास वे अधिकार कहां हैं ? उसका उन्मत्त हृदय तब एक अज्ञात, पर हृश पिपासा से कांप उठा।

रात के ग्यारह बजे थे। टं टं टं करके घड़ी बज उठी।

'ओह ! कितनी रात बीत गई !' सूसन ने जंभाई लेकर कहा।

'सरकार, आप सो जाइए।'

'हमको नींद नहीं आती।'

'सरकार, पानी लाऊं ?'

'ले आओ।'

कजरी ने पानी दिया। सूसन पीकर फिर लेट गई।

कजरी ने कहा : 'सरकार, आप कितनी अच्छी है !'

'क्यों ?'

'आप रानी हैं, फिर भी मेरे हाथ का पानी पी लिया।'

'हम सबके हाथ का खाते है। साफ होना चाहिए।'

'सरकार, अब मैं रोज नहाती हूं।'

'गुड।' सूसन ने कहा।

'सरकार !' कजरी ने कहा।

'क्या है कजरी ?'

'सरकार···' वह रुक गई।

'बोलो, डरो नहीं।'

'सरकार, एक साबुन मुझे दे दें, मैं कल साबुन से नहाकर आऊंगी। गांव में तो मिलता नहीं।'

'साबुन ! तो तुम लोग सिर किससे धोती हैं ?'

'मुलतानी मट्टी से, रीठे से, या दही से। पर सरकार आपकी नौकरानी होकर मै उनमें नहीं धोऊंगी।' उसने बालक की भांति कहा : 'मैं तो एक साबुन लूंगी। आपका वह आधा घिसा रखा है, वह ले लूं ?'

'ले लो।' सूसन ने मुस्कराकर कहा।

'हुजूर !' कजरी ने पांव पकड़कर गद्‌गद स्वर से कहा : 'भगवान आपको मन-चाहा मरद दे। आपके चंदा-से बच्चे हों। खूब सुखी रहें।'

सूसन हंस दी।

कजरी लौट आई।

सुखराम लेटा था। उसके सिर पर ले जाकर कजरी ने साबुन रख दिया। उसकी खुशबू से सुखराम चौंक उठा। पूछा : 'चुरा लाई ?'

'जा, कह दे।' कजरी ने कहा : 'मैं नहीं डरती। सुसरी वह नहाएगी इससे, मैं नहीं नहाऊंगी !'

बूढ़ा सा'ब लौटा तो सुबह हो चुकी थी। उजाला घने-घने पेड़ों के पीछे अब दमदमा रहा था। मोटर उसे उतारकर सामने दगरे पर रुक गई। सुखराम दौड़कर भागा।

खानसामा ने मेज सजा दी। कजरी उसका हाथ बंटाने लगी।

मेज पर खाते वक्त सूसन ने पूछा : 'डैडी ! रात क्यों नहीं आए ?'

बूढ़े ने कहा : 'काम बहुत है'

'मुझे लगता है, यह काम आप पर [illegible]'

'हां, मगर [illegible]'

'क्या ?'

'शायद तुम्हारा यह बूढ़ा [illegible] में ही [illegible] गवर्नर-जनरल हो जाए।' बूढ़े ने कहा। [illegible]

'वंडरफुल !' सूसन की आंखें फैल गईं।

'होगा, अगर यह काम हो गया।'

'काम क्या है ?'

'इस रियासत में नया इन्तजाम करूंगा।'

'फिर क्या होगा ?'

'फिर उम्मीद बंध जाएगी। खयाल रखना है कि कांग्रेस का रियासतों में भी असर बढ़ रहा है।'

'यह सरकार की गलती है।' सूसन ने कहा, 'कांग्रेस-मंत्रिमंडल भंग क्यों नहीं कर देती ? सब ठीक हो जाएगा। यह जालिम लोग मानते ही क्या हैं ! हिटलर ने क्या किया है !'

बूढ़ा हंसा। कहा : 'ब्रिटिश न्याय बड़ी ऊंची चीज है सूसन। हम ऐसा नहीं कर सकते !'

'क्यों !'

'क्योंकि हिटलर के पीछे जर्मन हैं, और हमारे साथ यहां की जनता नहीं है, राजा है।' बूढ़े ने नीतिज्ञता से कहा और समझाने लगा : 'मगर बेटी ! यहां का राजा ऐयाश है। वह कुछ नहीं जानता। वह दो बार इंग्लैंड गया है, पर वहां से उसने फ्रांस जाकर केवल फिजूलखर्ची की है। वह बड़ा कामुक है।'

'उसे उतारकर फेंक क्यों नहीं देते ?'

'दूसरा उसी खानदान का आदमी तैयार किया जा रहा है जो उसकी जगह बैठेगा। कमबख्त के कोई छोटा बच्चा होता तो काम यों ही हो जाता।'

बूढ़े से तो सूसन पूछ न सकी, पर उसने सोचा कि बाद में पूछेगी, और किससे, यह भी उसकी समझ में आ गया। चुपचाप खाती रही।

जब वृद्ध चला गया और फिर निस्तब्धता छा गई, तब वह एक आरामकुर्सी पर बरामदे में बैठ गई। उसने अखबार पढ़ा और फिर उसे भी धर दिया।

उसने सुखराम को बुलवाया। वह आया। बैठ गया।

'हुजूर ने बुलाया है ?' उसने पूछा।

'हां !' सूसन ने कहा : 'सुखराम ! राजा को जानता है ?'

'कौन राजा हुजूर !'

'तुम्हारा राजा !'

'अरे हुजूर ! आप भी कैसी बात करती हैं ! मैं गरीब भला महाराज को कैसे जान सकूंगा !'

'ओह !' सूसन को निराशा हुई। फिर पूछा : 'तुमने उसका महल देखा है ?'

'हां हुजूर, बाहर से तो देखा है।'

'तुम उसके बारे में कुछ नहीं जानता ?'

'हुजूर, वह मालिक है, इतना ही जानता हूं।'

'तो तुम जाओ। कजरी को भेजो।'

अभी लीजिए

वह चला गया। कजरी डरी हुई आई। बोली : 'सरकार! उसने कहा होगा! पर मैं तो आपसे ही ले गई थी!'

'क्या?' सूसन ने पूछा।

'हजूर, साबुन!' कजरी ने कहा : 'मैं ले गई थी तो कहता था कि मैं चोर हूं, चुरा लाई हूं।'

सूसन खूब हंसी। कहा : 'उसने तुमसे ऐसा कहा?'

'हां हजूर! डराता था। आपने डांटा नहीं उसे?'

सूसन खिलखिलाई। कहा : 'वह नही पूछती मैं। बैठ जा?'

कजरी बैठ गई। बोली : 'सरकार, तो क्या बात हुई?'

'तू राजा को जानती है?'

'ऐल्लो हजूर!' कजरी ने कहा : 'राजा को मैं क्या जानूं? वह बड़ा आदमी है! मैं गरीब! हजूर! मुझ-जैसी तो सैकड़ों उसकी बांदियां भी नही बन पातीं। ऐसी गोरी-गोरी खूबसूरत लुगाइयां चुनकर रखी जाती हैं!'

सूसन जो चाहती थी वही मिल गया। पूछा, बिल्कुल निरासक्त बनकर : 'क्या होता है उनका वहां?'

'अब हजूर,' कजरी ने कहा : 'छोटा मुंह बड़ी बात कैसे कहूं, मुझे तो लाज आती है। फिर आपका अभी ब्याह भी तो हुआ नहीं। मैं नहीं कह सकती।'

'राजा के कितनी शादी होती हैं?'

'सरकार उसका भी कोई बयान है? राजा तो बड़ी चीज है, उसके सरदारो के ही कई-कई होती है। सरकार, आप तो राजा हैं। आपके यहां भी ऐसा ही होता होगा?'

'नही, हमारे यहां एक आदमी की एक औरत होती है।' सूसन ने कहा : 'अब दूसरी सादी होती है तो पहली को तोड़ना पड़ता है।'

'हाय दैया!' कजरी ने कहा : 'बिल्कुल हम नोटों का-सा कायदा है, पर पहले हममें भी कई-कई रखी जाती थी। अब कोई नहीं रहती सरकार! मन आए की बात और है। इधर किसी पर मन आ गया तो हम तो अपने पहले नाते को तोड़ देती हैं।' कजरी ने हाथ उठाकर कहा : 'पर हजूर, बड़ी जातों मे ऐसा नहीं होता। वहां तो एक-एक की कई-कई औरतें होती है। बेचारी बहुत-सी मरद का मुंह भी नही देख पाती, वैसे ही उमर निकल जाती है, और किसीसे नाता जोड़ें तो अधरम हो जाए। बडी सांसत है सरकार, बड़ी जात का होना भी पूरी आफत ही समझो!'

सूसन सुनती रही, सुनती रही। कजरी कहती रही : 'और हजूर! जहां कोई खूबसूरत लुगाई देख ली, राजा पकड़वा लेता है। कोई पूछता थोड़े ही है! बस आप लोगों का तो डर है। आपसे तो सब डरते है, सरकार।' उसने सिर हिलाकर कहा : 'पर सरकार अब तो कभी-कभी आती हैं। सरकार, वहां तो रोज देखने की बात है। रोज नाच-रंग होते हैं।'

सूसन ने कहा 'एशिया! एशिया! कितना बर्बर! कितना अद्भुत!' और उसने रुककर फिर कहा : 'हाउ पेगन! हाउ पेगन!'

'क्या सरकार?' कजरी ने पूछा।

'रानी क्या करती है?'

'अरे सरकार', कजरी ने कहा : 'रानी कहती है कुछ! वह तो हुकम देती है। मजे में रहती है! और करेगी क्या!'

सूसन इस विलास की रोमाचकारी कथा को सुनकर गई उसे

करूं !' और उसने प्रेम से कहा कितना सुंदर है ! हम लन्दन मे मिले थे, और आज एक गांव में मिले हैं। तुम कहते थे कि कभी ट्रॉपिक्स[1] में मिलेंगे। लो मिल ही गए। और वह भी रात को। ऐसा अचरज है। तुम आ गए। मैं कब से यहां आदमी की बाट जोह रही थी।'

लॉरेंस ने प्रेम से देखा और कहा : 'तुम्हारे पिता कहां है ?'

'पिता !' उसने झल्लाकर कहा : 'साम्राज्य ! साम्राज्य ! हमेशा उसीमे लगे रहते हैं। क्या है इस साम्राज्य में ! हमारा इंग्लैंड दुनिया में सबसे अच्छी जगह है। क्या जरूरत है इंग्लैंड को इन सबको सभ्य बनाने की जिम्मेदारी लेने की ? मैं तो ऊब गई हूं। मेरी तो तबियत कोफ्त से भर गई है। वह तो बस दफ्तर, फाइल, राजा···उफ़ !'

कजरी ने लॉरेंस की ओर देखा। गिटपिट-गिटपिट करती हुई सूसन जाने कितने दिन का गुबार निकाल रही थी। बाप बात नहीं कर रहा था। अंग्रेजों में ज्यादातर हमउम्रों में ही बात होती है। दुनिया के लोग आपस मे बातें करते हैं। अंग्रेज चुप रहने से गौरव समझता है। किसी से बात करना उसे हेठा काम मालूम देता है।

कजरी मुस्कराई। आज वह अच्छे कपड़े पहने थी। लॉरेंस हठात् कठोर दिखाई दिया। बोला : 'भीतर चलें।'

उसने बैठते ही बोतल खोली और सुखराम को इशारा किया। सुखराम ने दो गिलास मेज पर रख दिए। तभी लॉरेंस ने सूसन का मुंह चूम लिया। कजरी को देख सूसन शरमा गई।

'यह कौन है ?' लॉरेंस ने अंग्रेजी में पूछा।

'नहीं लॉरेंस,' सूसन ने कहा : 'इन लोगों के सामने यह क्या किया तुमने ! ये गंवार है, नहीं समझते। यह इंग्लैंड नहीं है।'

कजरी ने सुखराम की ओर उड़ती नजर से देखा और फिर लॉरेंस पर आंख टिका दी।

'मेरी नौकरानी है।' सूसन ने कहा : 'अच्छी औरत है।'

सूसन और लॉरेंस पीने लगे। लॉरेंस झटके से बात करता था और कम बोलता था। सूसन चकड़-चकड़ करती चली जा रही थी।

सुखराम ने कहा : 'हजूर, हुकम हो तो जाकर सा'ब के आदमियों का इंतजाम करवा दूं !'

'येस, येस।' लॉरेंस ने कहा।

इतनी अंग्रेजी तो सुखराम भी सीख गया था। वह चला गया।

'यह इसका आदमी है।' सूसन ने कहा : 'बड़ा बहादुर है।'

'तुम सबको जानती हो यहां !' लॉरेंस चौंका।

'मैं कुत्ते तक को बता सकती हूं। मुझे यहां और काम ही क्या था ? एक की गर्दन पर काला दाग है। एक बिल्कुल टेरियर का-सा लगता है। भयानक ! यहां बाल-दार कोई नहीं है।'

सूसन जोर से हंसी। लॉरेंस मुस्कराया। उसने कहा : 'तुम्हारा तो बड़ा गहरा अध्ययन है।'

'क्या करूं !' सूसन ने कहा : 'वक्त ही नहीं कटता था।

कुछ देर बाद ही दूसरी मोटर आई। बड़ा सा'ब आ गया। लॉरेंस उठ खड़ा हुआ। दोनों ने हाथ मिलाए। बूढ़ा इस वक्त भी व्यस्त लगता था।

---

1 समशीतोष्ण भू भाग विलायत शीत देश है।

खाने के बाद मेज पर बैठ तो बातें होने लगी।

सुखराम बाहर खड़ा रहा। क्या बातें हो रही थीं यह तो समझ में नहीं आया। कजरी भीतर गई। लॉरेंस ने देखा तो मुस्करा दी। सुखराम ने खिड़की के पीछे से देख लिया। बाहर आई तो कहा : 'क्यों ?'

'ठहर जा जरा।' कजरी ने कहा।

'क्यों ?' वह कुछ चौंका।

'तू कहता था, ये बड़े लोग हैं। मुझसे मेरे सामने लिपट रहे थे। जिस पर वह अभी क्वारी है।'

'अरी, यह तो इनकी बिरादरी में चलता है।'

'दैया री ! इतना तो नटों में भी नहीं चलता।' कजरी ने कहा : 'तू मजे से देखे चल।'

'कैसे !'

'देखा है तूने उसे ? मैंने उसे बांध तो दिया है।'

'चल, अपनी सूरत तो देख आ।'

'अच्छा !' कजरी ने कहा : 'अब तू भी यह कहने लगा। क्यों ?'

'अरी मरद तो कचना होता ही है, पर तू मुझे क्या बताती है ?'

'अरे बुद्धू, ताली दोनों हाथों से बजती है।' कजरी ने कहा : 'देखता रहियो यहीं से।'

सूसन को बुखार-सा आ गया था। बराबर बढ़ता जा रहा था। लॉरेंस सुन रहा था। कजरी सूसन के पीछे जा खड़ी हुई। लॉरेंस अब सूसन को देखता, तब ही उसकी नजर कजरी पर पड़ती, जो उसे एकटक देख रही थी। लॉरेंस सहम गया। कजरी धीरे से चली आई। सुखराम ने कहा : 'बोल !'

'क्या ?'

'यह भी आदमी हैं।' कजरी ने कहा : 'राजा भी मानुस ही होता है। इनसे डर क्या ?'

'गांव वाले तो डर के मारे इनकी छाया को सलाम करते हैं।'

'दूर जो रहते हैं। जानते नहीं।'

'कहते हैं, गांधी महात्मा इनसे नहीं डरते।'

'वह महात्मा जो हैं।' यही वह नाम था जो कजरी भी जानती थी। उसके यश की गाथा भारत के चप्पे-चप्पे में पहुंच गई थी।

खाना खाने के बाद सूसन ने ग्रामोफोन चला दिया। नृत्य की गत बजने लगी। बूढ़ा तो सो गया, पर लॉरेंस और सूसन नृत्य करते रहे। यह अंग्रेज में विफत होती है कि जरा भी वश चल गया, तो जहां खड़ा होगा उसी जगह को विलायत बनाने की कोशिश करने लगेगा।

सुबह नया रंग आया। सैकड़ों किसानों से डाकबंगले के बाहर की जमीन भर गई थी। हाहाकार मच रहा था। उन्हें पीटा गया था। वे मजबूर होकर आ गए थे।

बूढ़ा सा'ब बाहर आया। इस समय वह बिलकुल बूढ़ा दिखाई देता था। सूसन और लॉरेंस उसके पीछे निकले। बूढ़ा नंगे हाथ था। वह गम्भीर-सा भीड़ के सामने आकर खड़ा हो गया। उसकी सिंह-मुद्रा देखकर कोलाहल शांत हो गया। वह चुपचाप गृध्र-दृष्टि से देखता रहा।

भीड़ कांप-सी गई। बूढ़े ने कहा : 'तुम किसलिए आया है ?'

भीड़ में सन्नाटा रहा। फिर एक बोला दूसरा बोला और फिर वे सब विलोम

लने लगे।

एक सिपाही चिल्लाया : 'खामोश !' भीड़ चुप हो गई।

बूढे ने कहा : 'तुम एक-एक करके बोल सकता है। तुमको कुछ फरियाद करना

'हां सरकार।' एक ने कहा : 'पटवारी ने तमाम जमीनो का पट्टा उल्टा-सीधा
दया है। हम क्या करें ? क्या खाए ?'

'जमीन किसका है ?'

'हजूर, सरकारी है।'

'हम देखेगा। और कुछ कहना मांगटा है ?'

लोगों ने कहा : 'सरकार, पुलिस बहुत जुलम करती है।'

'राजा का पुलिस ?' साहब ने कहा।

'हां गरीबपरवर !' एक ने कहा : 'जबर्दस्ती दरोगाजी की लड़की की शादी के
कर उगाहा जा रहा है। सरकार गवरमेंट में तो ऐसा अत्याचार नहीं होता।'

'हजूर !' एक कायस्थ मास्टर साहब ने कहा : 'आपके राज्य मे बकरी और
क घाट पर पानी पीते है। मगर यहां जागीरदार साहब ने हजूर, कानून अपने
म ले लिया है।'

तब बूढा झल्लाने लगा। बोला : 'हम नही जानता। हमको लिखकर दो। और
इस तरह भीड़ देखना नही मांगता। समझा ?'

'तो हजूर, हमारी कोई सुनता ही नही।

बूढ़े ने जवाब दिया : 'राजा को बोलो। राजा साहब सुनेगा।'

उस समय तक थाने के हथियारबन्द सिपाही आ गए थे।

'जाओ !' हाथ उठाकर बूढे ने कहा।

भीड़ क्षण भर देखती रही। फिर उठती हुई बन्दूकें देखकर उसका साहस कम हो
। भीड़ छट गई। साहब मुस्कराया। इसी समय फुलवाडी में से भीड की गरज सुनाई
'महात्मा गांधी की जय !'

जवाहरलाल नेहरू की···जय !

अंगरेजी राज का···नाश हो।

नौकरशाही का···नाश हो···

बोल वन्देऽऽमातरम् !

प्रायः रियासतों का उस समय का आन्दोलन इतना ही था। बूढे के सामने
क के बल पर दबा लिया गया था, पर आग सुलग रही थी।

उसने क्रोध मे होंठ चबाया।

दरोगा बढा। कहा : 'सरकार ! ये कांग्रेसी है !'

'यू स्वाइन (सूअर),' बूढा चिल्लाया : 'गेट आउट (निकल जाओ) !'

दरोगा गिटपिटाकर हट गया। बूढ़ा भीतर चला गया और मुट्ठी बांधकर घूमने
। सूसन और लॉरेंस भी भीतर चले गए।

सूसन ने लॉरेंस से कहा : 'आग बढ रही है।'

लॉरेंस ने मुस्कराकर कहा : 'दबा दी जाएगी।'

कजरी ने सुखराम से पूछा : 'यह क्या था ?'

सुखराम ने कहा : 'जुलम के बगावत।'

'हाय, मैं तो डर गई !'

बूढा सूसन को बुलाकर समझाने लगा

लॉरेंस को रहने को कहकर बूढ़ा मोटर में बैठकर चला गया।

दूसरे दिन शाम हो गई थी। धूप अब छन-छनकर पेड़ों में आ रही थी, क्योंकि सूरज झुक गया था।

सुखराम दो घोड़े लिए खड़ा था। वह अपनी वर्दी पहने था। कजरी आज सफेद साड़ी पहने थी।

कजरी कह रही थी: 'मूआ! मुझे बड़ा घूरता है। सच! तू तो मानता ही नहीं!!'

भीतर से बिरजिस पहने सूसन और लॉरेंस निकले। वे आज हथियारों से लैस थे। सूसन के कंधे पर हल्की बन्दूक थी। लॉरेंस के पास बन्दूक के अलावा पिस्तौल भी थी। वे घोड़ों पर सवार हुए। घोड़े चलने लगे। तब उनके साथ-साथ, तेज-तेज कदम रखकर उनके सामने ही सुखराम चल पड़ा।

जब सुखराम चलने लगा तो कजरी ने कहा: 'ठहर!'

वह नहीं रुका।

कजरी बढ़ी और दौड़कर पास पहुंच गई।

'तुम कहां चलती हो?' सूसन ने कहा।

'सरकार, मैं भी घूम आऊंगी।' कजरी ने हंसकर उत्तर दिया।

'तुम पैदल चलोगी?' उसने आश्चर्य से पूछा।

'हां सरकार, क्या हुआ?' उसने ऐसी मुद्रा बना ली जैसे कुछ बात ही नहीं है।

लॉरेंस ने कुछ कहा, वह अंग्रेजी में था। कजरी और सुखराम नहीं समझे। सुनकर सूसन हंसी।

घोड़े अहाते के बाहर आ गए।

उस समय अपने बैलों को हांकते हुए धीरे-धीरे उठती हुई धूल में थके हुए किसान घर लौट रहे थे। उनको भूख लग रही थी। घर आकर बैलों और अपने पेटों को भरने की आतुरता उनमें उमड़ आई थी।

चिड़ियां चहचहाती हुई अपने-अपने स्थानों को लौटती आ रही थीं, झुण्ड के झुण्ड। उनकी उड़ान एक सीध में होती या वे गोल-गोल चक्कर देकर गायब हो जातीं। पहाड़ खड़ा था। काला नीला-सा। गम्भीर। शाम के धुंधलके में धीरे-धीरे डूबता हुआ।

लॉरेंस ने देखा। खरगोश! वह सफेद-सा फुदका और फिर आहट पाकर कान उठाए। लॉरेंस ने कहा: 'सबली (सुन्दर)!'

उसने घोड़ा भगाया। टपाटप आवाज सुनकर खरगोश ने लम्बी उछाल मारी और देखते ही देखते दूर हो गया।

कजरी ने कहा: 'सरकार!'

पर लॉरेंस नहीं रुका।

'उसको यह बात नहीं आती।' सूसन ने कहा: 'वह बहुत कम समझता है।'

'सरकार! छोड़ रहे हैं!' कजरी ने कहा।

खरगोश भाग गया था। तब लॉरेंस का घोड़ा पास आ गया। सूसन ने उसकी ओर भौं उठाईं। तब लॉरेंस ने कहा: 'एक पत्थर बीच में आ गया।'

कजरी हंसी। वह उसकी बात भी नहीं समझी थी।

सुखराम ने धीरे से डांटा: 'मूरख! चुप रह।'

कजरी ने मुंह पिचका लिया। वह न मानी। उसकी हिम्मत खुल गई थी। कहा: 'सा'ब भाग गया!' और लॉरेंस को इशारा किया और फिर उसे टेढ़ी आंखों से से देखा। लॉरेंस खिसिया गया पर मुस्कराकर चुप हो रहा। कजरी की निगाह घूम

गई थी। वह सूसन की ओर देखकर गंभीर हो गया।

कुछ दूर चलने पर मोटी पूंछ की लोमड़ी दिखाई दी।

कजरी ने बढ़कर लॉरेंस का पांव पकड़ लिया।

'सरकार !' उसने इशारा किया।

'फॉक्स !' लॉरेंस ने देखा।

'नहीं सरकार, लोमड़ी है।' कजरी ने कहा : 'वह रही।'

लॉरेंस ने पिस्तौल निकाली और उसने निशाना लगाने को हाथ उठाया।

'ना सरकार।' कजरी ने इशारा किया। लॉरेंस समझा नहीं। उसने सूसन से पूछा : 'क्या बात है ?'

'मैं लाती हूं।' कजरी ने इशारा किया कि ठहर जाओ, मैं ही ले आऊंगी। लॉरेंस ने हाथ नीचा कर लिया।

वह भागी। उसको पीछे आते देखकर लोमड़ी ने सतर्क होकर कन्नी काटी। कजरी ने घेरा। लोमड़ी ने चक्कर काटे। जब कजरी ने उसे भागने नहीं दिया, तब वह फुर्ती से रपटी और झट से भिट में घुस गई। कजरी हंसी। पास से एक बार धूल में से उसने बड़ा-सा पत्थर लिया और फिर भिट के पास चली गई। पहले झुककर देखा और मारा। दो-तीन बार मारते ही धप्प-धप्प की आवाज हुई और अरकिर छोटा भिट दब गया। लोमड़ी भीतर छटपटाई और कजरी को काटने का यत्न किया। पर कजरी ने दबाया। लोमड़ी निकली। निकलते ही कजरी झपट पड़ी और उसने हाथ फैलाकर गर्दन पर से जिन्दा पकड़ ली। लोमड़ी ने छूटने की चेष्टा की और निराश होकर अंत में गर्दन टेढ़ी कर उसने काटने की कोशिश की। कजरी समझ गई। धरती पर भींचकर उसने उसके सिर पर दिया जोर का धप्प। दो-तीन बार कसके हाथ जड़े और चौथी बार की चोट के बाद लोमड़ी लटक गई। फिर उसने विजय से देखा। तीनों देखते रह गए और आकर उसने लॉरेंस के पांव पर पटककर सलाम किया। सुखराम के मुख पर अद्भुत उल्लास था। लॉरेंस देखता रह गया। कजरी की शान देखने लायक थी। उसने झुककर सूसन को सलाम किया। सूसन खुश हुई। लोमड़ी घोड़े पर टांग ली गई। तब वे लोग घोड़े लेकर आगे चले।

धुंधलका छाने लगा था और गहरा होने लगा था। अब रास्ता उतना नहीं दीखता था। सूसन ने घोड़ा रोक दिया।

'क्यों ?' लॉरेंस ने कहा : 'क्यों रुक गईं ?'

'यह जंगली इलाका है।' सूसन ने कहा : 'आगे जाना ठीक नहीं है, खतरा है।'

'तुम डरती हो ?' लॉरेंस ने कहा।

सूसन ने डाकुओं का किस्सा सुनाया।

लॉरेंस ने हंसकर कहा : 'उस दिन तुम अकेली थीं। आज मैं हूं। फिर तुमको किसका डर है ?'

घोड़े बढ़े। सूसन अनमनी थी। सुखराम ने कहा : 'हुजूर ! अब रास्ता साफ नहीं है, लौट चलिए सरकार !'

झाड़ियां आ गई थीं। लॉरेंस बढ़ रहा था। सूसन लाचार थी।

हठात् घोड़े हिनहिना उठे। उसको देखकर सुखराम चिल्लाया : 'लौट चलिए सरकार !'

झाड़ी के पीछे बघेर गरजा और फिर गर्जन बढ़ा। उस गर्जन को सुनकर कजरी घबरा गई। घोड़े भागे। लॉरेंस ने पूरे जोर से रास खींची पचास गज चलकर वह घोड़ा रुका सूसन तो मुश्किल से रोकने में समर्थ हुई

विल थी। सूसन ने फिर हाथ बढ़ाया, परन्तु इस बार पहले से दृढ़ स्वर में गम्भीरतापूर्वक ही उस कजरी ने फिर टोका।

सूसन झल्लाई।

उसने कहा : 'बेवकूफ !'

'कजरी !' सुखराम ने डांटा : 'तू नहीं समझती, यह कौन है ? मालकिन हैं। कसूर की माफी मांग। पांव पकड़।'

कजरी रो दी।

'क्यों रोती है ?' सूसन ने पूछा।

सुखराम ने कहा : 'सरकार, इसका कहना है कि इसके रहते इसके आदमी को कोई दूसरी औरत नहीं छू सकती।'

सूसन की समझ में आया। सुखराम ने कहा : 'माफ करें सरकार ! आप मालकिन हैं, पर यह नहीं समझती।'

सूसन हँस दी और उसने अंगरेजी में लॉरेंस को बताया। लॉरेंस ने आश्चर्य से कजरी की ओर देखा और उसे तब और भी अधिक आश्चर्य हुआ जब उसने देखा कि कजरी सुखराम के सीने पर लगे घाव को अपनी साड़ी से साफ कर रही है। वह कितनी साहसान्वित थी ! कितना गर्व था उसको !

और एक लॉरेंस था। सूसन ने अंगरेजी में उससे कहा : 'कम लॉरेंस, जंगली ने शेर मारा, सभ्य से खरगोश भी निकल भागा।'

लॉरेंस की आंखों में प्रतिहिंसा जगी और उसने सूसन को ऊपर से नीचे तक आंका।

कजरी ने कहा : 'सरकार ! आपके पास पिस्तौल है। आप ठहरें, मैं लोगों को ले आती हूं। वे उसे ले जाएंगे।'

सुखराम कोठरी में लेट गया। सूसन ने सिपाही भेजकर डाक्टर को कस्बे से बुलवाया। डाक्टर रात ही को आया।

डाक्टर हि-हि-हि करके हँसकर खुशामदी ढंग से बात करता था। कजरी को ताज्जुब हुआ। यही डाक्टर कितनी हकूमत और साहबियत दिखाया करता था। लॉरेंस ने अंगरेजी में कुछ कहा। डाक्टर समझा नहीं। सूसन हिन्दी पर उतर आई। डाक्टर मरहम-पट्टी करके चला गया। कजरी ने देखा। वह फर्क कितना बड़ा था ! डाक्टर इन लोगों के सामने कितना देसी साबित हुआ, जब कि वह पहले नस्ल से अंगरेज बनने की कोशिश करता था !

डाकबंगले में आकर शराब उंडेलते हुए लॉरेंस ने कहा : 'मुझे अब आदत नहीं रही।'

सूसन ने व्यंग्य से कहा : 'तुम भी तो फौज में हो।'

लॉरेंस ने कहा : 'मगर अब मेरी दिलचस्पी साहित्य में बढ़ गई है। तुम कुछ पढ़ती भी हो ?'

'अखबार पढ़ती हूं।'

'किताबें नहीं ?'

सूसन ने बताया, वह पढ़ती क्यों नहीं है। लॉरेंस ने साहित्य की ओर मोड़ दिया और मनोविज्ञान की वे पेचीदी पहेलियां सुनाने लगा, जिनका आधार यौन सम्बन्धों से था। कुवांरी लड़की। इस मामले में नादान। दिलचस्पी से सुनती रही। सारे का माहौल बना उसने तब कविता सुनाई वे सब दर्द भरी थी

सुखराम सो गया था कजरी उठ खड़ी हुई उसने सिर पर भारी बकी रो

वह चला। पानी ज़ोर से आ गया। चलने की इच्छा ने और बढ़ाया, परन्तु आखिर रुक गया। अब वह ठीक हो गया था। उसका यश फैल गया था। साहब उसपर अत्यन्त प्रसन्न होता, परन्तु वह अभी आया नहीं था। मिसी बाबा ने कहा था कि वह उसे इनाम दिलाएगी। कजरी ने सुना था तो प्रसन्न हो उठी थी। उसके सुखराम को इतने आदमियों के बीच में बिल्ला मिलेगा।

कजरी अब एक नई बात अनुभव करती। उसके चेहरे पर कुछ पीलापन आ गया था। होंठों पर की मुस्कान बड़े गौरव से चेहरे पर चमका करती थी। क्या हो गया था उसे! सारी देह सालस रहती, पलकों पर जैसे एक उनींदा खुमार छा गया था।

कल उसने सुखराम से कहा था। सुखराम देखता रह गया था। कजरी ने कहा था : 'सुनता है!'

'क्या?'

'मैं···मैं मां···'

सुखराम को खुशी हुई थी। वह कह नहीं सकी थी।

'सच?' सुखराम ने पूछा था।

कजरी उसके सिर को सहला उठी थी। उसकी आंखों में चमक थी। देखकर लगता था जैसे वह गरिमा से भर गई थी। उसकी आंखों में एक अद्भुत स्वप्न था। सुखराम उसे एकटक देखता रह गया था।

वह लजा गई थी। और सुखराम! वह चित्र उसकी आंखों में सदा-सदा के लिए अमर हो गया था। उसने गर्व से उसको वक्ष से लगा लिया था।

कजरी सोने लगी थी। आज देही टूट रही थी। सुखराम नहीं आया था। कहा रह गया वह! आस्मान में मेघ-गर्जन होता था। रात हो गई थी। अंधकार बरस रहा था। हवा काली हो गई थी और जब चलती थी तो सारी धरती और व्यापक आकाश को काले रंग में भिगोए दे रही थी। बाहर सुनसान था। सांय-सांय गूंज उठती थी।

पर वह काया का कष्ट कजरी को प्रिय था। प्रत्येक स्त्री जब मां बनने को होती है, तो उसे एक सहज गर्व होता है। वह धरती मां का-सा गर्व होता है।

बाहर अभी तक पानी बरस रहा था। कमबख्त झड़ी लग गई है, जाने कहा होगा वह! रुक ही गया होगा। अच्छा है, इस पानी में नहीं आया। बिजली है कि कान फाड़े डालती है। गरजती है तो कजरी को लगता है, कोई उसके भीतर डर रहा है। वह कितना कोमल होगा! कैसे सहता होगा इस सबको! पर वह शेर का बच्चा है। वह भी शेर ही होगा। और कजरी कल्पना करती है, वह बूढ़ी हो जाएगी, तब सुखराम भी बूढ़ा हो जाएगा। उस समय उसका पुत्र उन्नत-भाल प्रशस्त वक्ष बगल में खड़ा होगा। कितना सुन्दर लगेगा वह! सुखराम से भी ज्यादा सुन्दर, ऐसा कि जैसा कोई नहीं हुआ। वह उसे पालेगी। अपना सब कुछ उस पर न्योछावर कर देगी। अब वह उसके लिए छोटे-छोटे कपड़े बनाकर रखेगी। पैदा होते ही उसे छाती से लगाकर दूध पिलाएगी। कैसे पिएगा वह दूध! उसे कौन बता देता है जो वह मुंह चलाने लगता है! कजरी का खून दूध बन-बनकर उतरेगा उसके लिए।

ममता का यह चमत्कार किस स्त्री को विह्वल नहीं कर देता! जीवन के निर्माण और सृजन की यह शक्ति जिसमें हो, वह क्यों न उसका गर्व करेगी! कैसा आता है यह इन्सान! क्या जानता है! और उसी मांस के लोंदे को जब मां पालती है, अपने समय को नष्ट करती है, तब वह कितना बड़ा निर्माण करती है, जैसे पल-पल वह सृष्टि में एक शक्ति, एक नये सौन्दर्य का सृजन कर रही हो।

क्वा-क्वा करके वह दुधमुहा बिना दांत के मुंहवाला फूले-फूले गालों वाला

सूसन घबरा गई। कहा : 'क्या करते हो?'

वह मुस्कराया। सूसन समझी नहीं।

'आओ सूसन!' लॉरेंस ने कहा : 'यह अंधेरी रात, गरजती हुई बिजली, तूफानी हवा। क्या तुम्हारे अन्दर कोई हलचल नहीं होती?'

'कैसी हलचल?' सूसन ने कहा, परन्तु उसका स्वर कांप गया था। वह लॉरेंस का संबल बन गया।

'तुम कुंवारी हो सूसन। मैं जानता हूं, पर यह सब पुराने खयाल हैं। इंग्लैंड तरक्की कर रहा है। अमेरिका को देखो, वहां कितनी मस्ती है!'

लॉरेंस आगे बढ़ा। उसपर जुनून छा रहा था। उसकी आंखों में नशा लाल हो हो चुका था और उसकी हर सांस में बू आ रही थी। उसे इस प्रकार अपने शरीर से सटता हुआ देखकर हठात् पलंग से उछलकर सूसन झटके से खड़ी हो गई।

'लॉरेंस बैठा रहा। उसने कहा : 'पुरानी दुनिया बदल रही है सूसन!'

'मैं जानती हूं।'

'जिद न करो। आओ जीवन में सुख वही है जो प्राप्त कर लिया जाए।'

'पर मैं औरत हूं।' सूसन ने कहा और द्वार की ओर बढ़ी।

लॉरेंस ने रास्ता रोक लिया।

'मुझे जाने दो लॉरेंस!' सूसन ने कहा 'तुम शराब पी गए हो। तुम नशे में हो। तुम नहीं जानते, तुम क्या बक रहे हो। यह इंग्लैंड नहीं है। इंडिया है। गनीमत है कि पानी बरस रहा है। कोई है नहीं। वरना नौकरों को भी मालूम हो जाएगा।'

'कोई नहीं जान सकेगा, सूसन,' लॉरेंस ने उसके कंधे पकड़कर कहा : 'बस हम-तुम होंगे। और कोई आएगा ही क्यों? तुम सुन्दरी हो! जब से मैंने तुम्हें देखा है, मेरे हृदय में आग जल रही है। तुम मेरे साथ इंग्लैंड चलो, सूसन! वहां मेरे चाचा की जायदाद बेचकर मैं तुम्हें कहीं दूर किसी प्रशान्त महासागर के द्वीप में ले चलूंगा! कैसा साहसिक कार्य रहेगा वह!'

'वैसा ही जैसा तुमने खरगोश का शिकार किया था!' सूसन ने मुस्कराकर कहा। लॉरेंस के भीतर प्रतिहिंसा जाग उठी। उसने कहा : 'सूसन! तुम उस देसी कुत्ते की तारीफ करती हो?'

'वह बहादुर है।' सूसन ने कहा।

'बहादुर!' लॉरेंस ने कहा : 'बोझ ढोने वाला गधा हमेशा आदमी से ज्यादा बहादुर है। इंसान की ताकत जिस्म की नहीं, दिमाग की होती है।'

'ठीक है।' सूसन ने व्यंग्य से कहा : 'आज तभी तो तुम्हारा दिमाग मेरे सामने ताकत दिखा रहा है। क्या करूं, बाप की इज्जत का ध्यान है, वरना नौकरों को बुलाकर अभी निकलवा देती।'

लॉरेंस क्षुब्ध हो गया। उसने कहा : 'तुम मुझसे घृणा करती हो सूसन!'

'मैं तुम पर दया करती हूं लॉरेंस।' सूसन ने कहा : 'घृणा भी योग्य व्यक्ति से की जाती है। तुम समझे थे कि मैं कोई चरित्रहीन स्त्री हूं। मैं क्रिश्चियन हूं। मैं पवित्र हूं। मैं वासना की कठपुतली नहीं हूं। तुमने मुझे क्या किसी गरीब क्लर्क की स्त्री समझा था! मेरे पिता तुम्हें यहां अपने देश का समझकर छोड़ गए हैं, तो तुम उनसे ही दगा कर रहे हो? चले जाओ यहां से! तुम्हें इतनी हिम्मत हुई कैसे?'

लॉरेंस पीछे हट गया। उसने होंठ चबाए और धीरे से कहा : 'मैं चला जाऊंगा सूसन! लेकिन तुम्हारा यह अहंकार नहीं रहेगा। जो बर्ताव तुमने मुझसे किया है, उससे अच्छा बर्ताव तो तुम इन गुलाम हिन्दुस्तानियों से करती हो। तुम्हें बड़े बाग

का घमंड है। पर इंग्लैंड में ऐसे पोलिटिकल एजेंट, जो भारत में धन लूट-लूटकर ले जाते हैं, सम्मान नहीं पाते। तुम समझती हो, तुम्हारी इंडिया के वाइसराय के साथ शादी होगी? मैं दगा कर रहा हूं? अगर मैं इतना घृणित हूं तो मुझे क्षमा करो सूसन, मुझे क्षमा करो'''।'

उसने सूसन के पांवों को पकड़ लिया। सूसन पिघल गई। उसने कहा: 'उठो लॉरेंस!'

'नहीं, मुझे यहीं रहने दो। मैं पापी हूं।'

'सूसन ने कहा: 'नहीं लॉरेंस, इसे भूल जाओ।'

उसने लॉरेंस को उठाया।

उसका मुंह उतरा हुआ था।

'तुमने मुझे माफ कर दिया सूसन।'

'भूल जाओ लॉरेंस। भूल जाओ इस सबको।'

'भूल जाऊं!' लॉरेंस ने कहा: 'यह तो मरते वक्त तक मेरे अन्दर कांटे की तरह गडता रहेगा।' उसने सिर पकड़ लिया। सूसन उसके पास चली गई और उसने कहा: 'रोओ नहीं लॉरेंस। मर्द बनो, मर्द! एक औरत के सामने तुम रोते हुए अच्छे नहीं लगते।'

'तुम पवित्र हो सूसन!' लॉरेंस ने कहा: 'यदि तुमने क्षमा कर दिया है, तो मुझे मेरे माथे पर चूम लो।'

सूसन ने अपना मुंह उठाया और तब लॉरेंस ने उसकी कमर में हाथ डाल दिया और अपने गर्म-गर्म होंठों में उसके होंठों को कुचल दिया। क्रोध से सूसन लड़ने लगी। लॉरेंस ने छल किया था। उसने चेष्टा की, किन्तु वह उसके आलिंगन में अपने को छुड़ा न सकी। लॉरेंस घुटती हुई हंसी हंसा और बोला: 'बुला लो नौकर को। तुम्हारे इस अस्त-व्यस्त रूप को देखकर वे समझ जाएंगे कि तुम अब भी कुआरी हो!' सूसन ने उसे नोच खाया, पर लॉरेंस ने उसे पलंग पर पटक दिया और उसने उसके हाथों को पकड़ लिया। झगड़े में सूसन का गाउन फट गया। उसका शरीर चमकने लगा। लॉरेंस भड़क उठा। सूसन ने लात दी। वह लॉरेंस के सीने में लगी और वह संभल नहीं सका। लॉरेंस पीछे लुढ़का। पर तभी उसने पांव से उठती हुई सूसन को दबा लिया। लॉरेंस की पीठ के धक्के से बगल की मेज हिल गई और उसपर से गिलास गिरकर झन्न से टूट गया।

हालांकि कजरी सो रही थी और पानी बरस रहा था, पर वह आवाज पहुंच ही गई। कजरी की आंख खुल गई।

क्या हुआ?

वह भागी। मिस्सी बाबा के कमरे में रोशनी!!

क्या हो रहा है आखिर!

कमरे में जाकर देखा कि लॉरेंस ने सूसन को दबा लिया है और वह लड़ रही है। 'सरकार!' कजरी ने फुत्कार किया।

लॉरेंस ने कजरी को देखा और वह पागल-सा खड़ा हो गया। उसने कहा: 'भाग जाओ!'

कजरी डर गई। सूसन ने घबराहट में बोलने का यत्न किया, पर लज्जा के कारण बोल न सकी। हकलाती-सी रह गई।

लॉरेंस चिल्लाया: 'निकलो'''

सूसन ने दोनों हाथ फैला दिए जैसे बचाओ

कजरी नहीं हटी। वह समझ गई उसकी आंखें चमकने लगीं उसने कहा

'ऐ सा'ब ! चल, अपने कमरे में चला जा !' उसने हाथ से उसे द्वार से बाहर जाने का इशारा किया और कहा : 'मालकिन, हुकम दें ! अभी इसकी अकल ठिकाने कर दूंगी।'

सूसन ने आंख खोल दी और बोली : 'इसको मार दो कजरी...'

कजरी के हाथ में कटार चमक उठी। सूसन उठ बैठी। लॉरेंस ने कटार देखी तो गुस्से ने उसे पागल कर दिया और सूसन ने कहा : 'कमीना ! नीच ! कुत्ता...'

पर लॉरेंस ने तकिया खींचकर मारा और कजरी, जो सूसन की बात में ध्यान बटा गई थी, उसके हाथ पर तकिया लगा और छूरे पर घुस गया। लॉरेंस ने आगे बढ़-कर घुमाकर लात दी।

कजरी बचा गई। परन्तु कटार को वह खाली नहीं कर सकी। उसपर तकिया मुक से घुस गया था। सेमल की मुलायम रुई थी, गिलाफ रेशमी था। लॉरेंस ने दूसरी लात चलाई। कजरी के नितंब पर पड़ी।

कजरी भहरा गई और कुर्सी से टकराई। तभी लॉरेंस ने पैशाचिक क्रोध से उसके मुख पर घूंसा मारा। उसे गश-सा आ गया।

वह गिरी और बेहोश-सी हो गई। सूसन झपटकर उसके पास आ गई और लॉरेंस को उसे मारने को झुका देखकर उसने उसका हाथ पकड़ लिया।

'हट जाओ !' लॉरेंस ने फूत्कार किया।

'नहीं, नहीं, तुम उसे नहीं मार सकते। सूसन ने रोते हुए कहा और लॉरेंस का हाथ काट खाया। लॉरेंस ने उसे एक चांटा दिया और पकड़कर बिस्तर पर दे मारा। सूसन दर्द से चिल्ला उठी।

लॉरेंस हंसा। आज वह बिल्कुल पशु हो गया था। उसने कजरी का पांव पकड़ लिया और खींचने लगा। सूसन डर के मारे गुरगुराई।

लॉरेंस ने खींचकर उसे बाहर पटक दिया। और उसने सूसन की ओर देखा और हंसा, तभी बाहर कड़कड़ाकर आकाश और पृथ्वी को विदीर्ण करती हुई बिजली गिरी। खिड़कियों के शीशे चमक उठे और फिर सब शांत हो गया। मूसलाधार वर्षा होने लगी, जैसे प्रकृति रोने लग गई थी। कजरी बेहोश पड़ी रही।

जब उसे होश आया, सन्नाटा था। बदन में दर्द हो रहा था। पेट में भी कुछ कष्ट था। माथा अभी तक भनभना रहा था। वह धीरे से उठकर बैठ गई। आंख खोल-कर देखा। पानी बरस रहा था। गगन से अनवरत धारासार वेदना बरस रही थी।

कजरी बल लगाकर उठी। देखा, द्वार बन्द था। छोटा-सा आलोक का बिन्दु शीशे में निकलता दीख रहा था।

उसने शीशे की दरार से देखा।

अब कोई हलचल नहीं थी। कमरे में पूर्ण निस्तब्धता थी। रोशनी में गिलास के टूटे हुए टुकड़े चमक रहे थे। मेजपोश गिर गया। किताब खुली हुई धरती पर उलटी पड़ी थी। तकिया एक कोने में पड़ा था जिसमें अभी तक कटार मुंकी हुई थी।

सूसन रो रही थी। उसके मुंह से आवाज नहीं निकल रही थी। केवल आंखों से पानी निकल रहा था। उसका नीचे का होंठ बार-बार बाहर निकल आता था जिसे वह दांतों में चबा लेती थी। उसके हाथ उसके मुंह पर रखे हुए थे, जैसे वह कुछ देखना नहीं चाहती थी। उसके वस्त्र अब भी अस्तव्यस्त थे और उसके फटे गाउन में से उसका शरीर चमक रहा था।

लॉरेंस अब उठ खड़ा हुआ था। वह सूसन के पास गया। उसने अनुनय के स्वर में कुछ कहा। फिर रुका रहा पर सूसन नहीं बोली।

का घमंड है। पर इंग्लैंड में ऐसे पोलिटिकल एजेंट, जो भारत से धन लूट-लूटकर ले जाते हैं, सम्मान नहीं पाते। तुम समझती हो, तुम्हारी इंडिया के वाइसराय के साथ शादी होगी? मैं दगा कर रहा हूं? अगर मैं इतना घृणित हूं तो मुझे क्षमा करो सूसन, मुझे क्षमा करो...।'

उसने सूसन के पांवों को पकड़ लिया। सूसन विमग्न गई। उसने कहा : 'उठो लॉरेंस!'

'नहीं, मुझे यहीं रहने दो। मैं पापी हूं।'

'सूसन ने कहा : 'नहीं लॉरेंस, इसे भूल जाओ।'

उसने लॉरेंस को उठाया।

उसका मुंह उतरा हुआ था।

'तुमने मुझे माफ कर दिया सूसन।'

'भूल जाओ लॉरेंस। भूल जाओ इस सबको।'

'भूल जाऊं!' लॉरेंस ने कहा : 'यह तो मरते वक्त तक मेरे अन्दर कांटे की तरह गड़ता रहेगा।' उसने सिर पकड़ लिया। सूसन उसके पास चली गई और उसने कहा : 'रोओ नहीं लॉरेंस। मर्द बनो, मर्द! एक औरत के सामने तुम रोते हुए अच्छे नहीं लगते।'

'तुम पवित्र हो सूसन!' लॉरेंस ने कहा : 'यदि तुमने क्षमा कर दिया है, तो मुझे मेरे माथे पर चूम लो।'

सूसन ने अपना मुंह उठाया और तब लॉरेंस ने उसकी कमर में हाथ डाल दिया और अपने गर्म-गर्म होंठों से उसके होंठों को कुचल लिया। क्रोध से सूसन लड़ने लगी। लॉरेंस ने छल किया था। उसने चेष्टा की, किन्तु वह उसके आलिंगन से अपने को छुड़ा न सकी। लॉरेंस घुटती हुई हंसी हंसा और बोला : 'बुला लो नौकर को। तुम्हारे इस अस्त-व्यस्त रूप को देखकर वे समझ जाएंगे कि तुम अब भी कुंवारी हो!' सूसन ने उसे नोंच खाया, पर लॉरेंस ने उसे पलंग पर पटक दिया और उसने उसके हाथों को पकड़ लिया। झगड़े में सूसन का गाउन फट गया। उसका शरीर चमकने लगा। लॉरेंस भड़क उठा। सूसन ने लात दी। वह लॉरेंस के सीने में लगी और वह संभल नहीं सका। लॉरेंस पीछे लुढ़का। पर तभी उसने पांव से उठती हुई सूसन को दबा लिया। लॉरेंस की पीठ के धक्के से बगल की मेज हिल गई और उसपर से गिलास गिरकर झन्न से टूट गया।

हालांकि कजरी सो रही थी और पानी बरस रहा था, पर वह आवाज पहुंच ही गई। कजरी की आंख खुल गई।

क्या हुआ?

वह भागी। मिसी बाबा के कमरे में रोशनी!!

क्या हो रहा है आखिर!

कमरे में जाकर देखा कि लॉरेंस ने सूसन को दबा लिया है और वह लड़ रही है। 'सरकार!' कजरी ने फूत्कार किया।

लॉरेंस ने कजरी को देखा और वह पागल-सा खड़ा हो गया। उसने कहा : 'भाग जाओ!'

कजरी डर गई। सूसन ने घबराहट में बोलने का यत्न किया, पर लज्जा के कारण बोल न सकी। हकलाती-सी रह गई।

लॉरेंस चिल्लाया : 'निकलो...'

सूसन ने दोनों हाथ फैला दिए, जैसे बचाओ

कजरी नहीं हटी वह समझ गई उसकी आंखें चमकने लगीं उसने कहा

'ऐ सा'ब ! चल, अपने कमरे में चला जा !' उसने हाथ से उसे द्वार से बाहर जाने का इशारा किया और कहा : 'मालकिन, हुकम दें ! अभी इसकी अकल ठिकाने कर दूंगी।'

सूसन ने आंख खोल दी और बोली : 'इसको मार दो कजरी···'

कजरी के हाथ मे कटार चमक उठी। सूसन उठ बैठी। लॉरेंस ने कटार देखी तो गुस्से ने उसे पागल कर दिया और सूसन ने कहा : 'कमीना ! नीच ! कुत्ता···'

पर लॉरेंस ने तकिया खींचकर मारा और कजरी, जो सूसन की बात में ध्यान बटा गई थी, उसके हाथ पर तकिया लगा और छूरे पर घुस गया। लॉरेंस ने आगे बढ़-कर घुमाकर लात दी।

कजरी बचा गई। परन्तु कटार को वह खाली नहीं कर सकी। उसपर तकिया भुक से घुस गया था। सेमल की मुलायम रुई थी, गिलाफ रेशमी था। लॉरेंस ने दूसरी लात चलाई। कजरी के नितंब पर पड़ी।

कजरी भहरा गई और कुर्सी से टकराई। तभी लॉरेंस ने पैशाचिक क्रोध से उसके मुख पर घूंसा मारा। उसे गश-सा आ गया।

वह गिरी और बेहोश-सी हो गई। सूसन झपटकर उसके पास आ गई और लॉरेंस को उसे मारने को झुका देखकर उसने उसका हाथ पकड़ लिया।

'हट जाओ !' लॉरेंस ने फूत्कार किया।

'नहीं, नहीं, तुम उसे नहीं मार सकते। सूसन ने रोते हुए कहा और लॉरेंस का हाथ काट खाया। लॉरेंस ने उसे एक चांटा दिया और पकड़कर बिस्तर पर दे मारा। सूसन दर्द से चिल्ला उठी।

लॉरेंस हंसा। आज वह बिलकुल पशु हो गया था। उसने कजरी का पांव पकड लिया और खींचने लगा। सूसन डर के मारे गुरगुराई।

लॉरेंस ने खीचकर उसे बाहर पटक दिया। और उसने सूसन की ओर देखा और हसा, तभी बाहर कड़कड़ाकर आकाश और पृथ्वी को विदीर्ण करती हुई बिजली गिरी। खिडकियों के शीशे चमक उठे और फिर सब शांत हो गया। मूसलाधार वर्षा होने लगी, जैसे प्रकृति रोने लग गई थी। कजरी बेहोश पड़ी रही।

जब उसे होश आया, सन्नाटा था। बदन में दर्द हो रहा था। पेट में भी कुछ कष्ट था। माथा अभी तक भनभना रहा था। वह धीरे से उठकर बैठ गई। आंख खोल-कर देखा। पानी बरस रहा था। गगन से अनवरत धारासार वेदना बरस रही थी।

कजरी बल लगाकर उठी। देखा, द्वार बन्द था। छोटा-सा आलोक का बिन्दु शीशे में निकलता दीख रहा था।

उसने शीशे की दरार से देखा।

अब कोई हलचल नहीं थी। कमरे में पूर्ण निस्तब्धता थी। रोशनी में गिलास के टूटे हुए टुकड़े चमक रहे थे। मेजपोश गिर गया। किताब खुली हुई धरती पर उलटी पड़ी थी। तकिया एक कोने में पडा था जिसमें अभी तक कटार मुंकी हुई थी।

सूसन रो रही थी। उसके मुंह से आवाज नहीं निकल रही थी। केवल आंखो से पानी निकल रहा था। उसका नीचे का होंठ बार-बार बाहर निकल आता था जिसे वह दांतों में चबा लेती थी। उसके हाथ उसके मुंह पर रखे हुए थे, जैसे वह कुछ देखना नही चाहती थी। उसके वस्त्र अब भी अस्तव्यस्त थे और उसके फटे गाउन में से उसका शरीर चमक रहा था।

लॉरेंस अब उठ खडा हुआ था। वह सूसन के पास गया। उसने अनुनय के स्वर मे कुछ कहा। फिर रुका रहा पर सूसन नहीं बोली।

लॉरेंस ने कहा : 'सूसन !'

फिर क्या कहा, कजरी नहीं सुन सकी, न समझ सकी, क्योंकि वह सब अंग्रेजी में था।

सूसन ने उसकी ओर नहीं देखा। लॉरेंस उसके बालों को सहलाता रहा, जैसे वह उसे सान्त्वना दे रहा था। वह सामने बैठ गया और फिर मुस्कराया। सूसन ने अपने बाल नोच लिए।

लॉरेंस दरवाजे की तरफ बढ़ा। फिर रुक गया। कहा : 'अब तुम क्या करना चाहती हो ?'

सूसन ने उत्तर नहीं दिया।

'सच कहो सूसन ! तुम्हें कुछ अच्छा नहीं लगा ?'

सूसन ने जलते नेत्रों से देखा।

लॉरेंस ने हंसकर कहा : 'औरत !'

'वह द्वार के पास आ गया।

कजरी ने नहीं देखा। वह रोने में मग्न थी। लॉरेंस ने दरवाजा खोला। कजरी हटकर एक ओर छिप गई। उसने इधर-उधर देखा और जब कजरी न दिखी तो उसने कहा : 'सूसन, वह कुतिया तो भाग गई। अब अगर अपनी इज्जत रखना चाहती हो, तो शोरगुल न करो और चुप बनी रहो। फिर दोनों ऐसे ही आनन्द किया करेंगे ठीक है ?'

सूसन नहीं बोली। वह चला गया। जब वह अपने कमरे में आया, तब उसने शराब की बोतल निकाली और पीने लगा। आज जो कुछ उसने किया था वह उसे उद्भ्रान्त कर रहा था। सोच रहा था, मदर बड़े के आने पर उससे कह दिया तो ? पर कहेगी कैसे ? मैं उसे तब तक आदत डाल दूंगा। मगरमच्छ ने उसको ऐसे ही वर्षों में किया था। पहली बार के बाद वर्षों रोक ही नहीं सकी थी। नहीं। यह आनन्द एकतरफा नहीं होता। औरत सिर्फ धर्म-कर्म से जकड़ी हुई बेवकूफ होती है। वह व्यर्थ ही आनन्द नहीं लेती, और न ले तो कोई बात नहीं, अपने से मिलने वाले आनन्द से पुरुष को व्यर्थ ही वंचित कर देती है।

लॉरेंस की राय में यह सब उसने ठीक किया था। इस समय यदि वह इतना दुस्साहस नहीं करता तो वह उसे कुचल देती। बुड्ढे से तो वह उस समय भी कहती। फिर अब शायद नहीं कहेगी। कहेगी तो बुड्ढा शर्म से दब जाएगा। नौकरों की मदद वे नहीं ले सकते। बदनामी का डर है। दूर-दूर तक खबर फैल जाएगी। मदर कहीं मुंह दिखाने लायक नहीं रह जाएगा।

लॉरेंस अब सोच रहा था। उसे डरने की वजह दिखाई दी। कजरी देख गई है। पर क्या हुआ ? उसकी कोई नहीं मानेगा। अगर वह सूसन की बात भी कहेगी तो उसे निकाल दिया जाएगा। सूसन खुद कहेगी, यह झूठ है। सूसन क्या यह कहेगी कि हां, लॉरेंस ने मेरे साथ बलात्कार किया था ! कभी नहीं। वह एक सभ्य औरत है और अपने सम्मान की रक्षा करना क्या वह नहीं चाहेगी ? और मैं भी सूसन को समझाऊंगा कि इस सबको छिपाने के लिए जरूरी है कि प्रेम जारी रखा जाए। उसमें संदेह नहीं होगा। मगर क्या वह सूसन से विवाह कर लेगा ?

सूसन सुन्दरी है। उसके शरीर का सौन्दर्य उसे अभी तक व्याकुल किए दे रहा था। पर लॉरेंस का मन खट्टा हो गया। प्रेम एक वस्तु है, विवाह और वस्तु है। दोनों एक जगह नहीं रह सकते जब वह अमेरिका में था तब वह नंगी औरतों के नाच देखता था। गुप्त क्लब थे क्या मजा रहता था ! वह एक फ्रांस की स्त्री थी जो बिलकुल नंगी

होकर नाची थी। उसे कोई लज्जा ही नहीं थी। लेकिन सूसन कुमारी थी !!!

उसकी पैशाचिक वासना अब भी उद्दाम थी और उसने फिर प्याला भरकर गट-गट कर गले के नीचे उतार लिया और सिगरेट जलाकर पीने लगा।

लॉरेंस के चले जाने पर कजरी अपने स्थान से बाहर आ गई और जब उसे विश्वास हो गया तब वह चुपचाप सूसन के कमरे के भीतर घुस आई। द्वार बन्द कर लिया और उसके पास आई।

वह बोली नहीं। सूसन उस समय घुटनों के बीच में सिर दिए चुपचाप बैठी थी। कजरी ने देखा तो आंखों मे दया उमड़ आई। वह कितनी अपमानित-सी, लुटी हुई-सी बैठी थी, जैसे वह अनुभव कर रही थी कि वह निरीह थी, और केवल घृणा ही उसे चारो ओर दिखाई दे रही थी।

'मिसी बाबा !' सूसन की ओर देखकर कजरी ने कहा।

परन्तु वह वैसी ही बैठी रही।

'वह कहां गया ?' कजरी ने पूछा।

उत्तर नहीं मिला।

'मिसी बाबा !!' कजरी चौंकी।

सूसन ने मुह छिपा लिया। कजरी ने कहा : 'रोती क्यों हैं, मिसी बाबा ?'

वह यह सुनकर रोने लगी। उसका फफकना धीरे-धीरे बढ़ चला और कजरी ने कहा : 'मिसी बाबा !'

'कजरी !' कहकर सूसन फूट पड़ी। नारी, नारी ही थी। और इस समय सात्वना ने उसे हिला दिया था।

कजरी ने उसका सिर सीने मे छिपाकर हाथ फेरा। वह हाथ जब सूसन के बालों पर फिरा तब उसके भीतर से आर्द्र वेदना गल-गलकर बहने लगी। और उसकी असहाय व्याकुलता उसे बार-बार रुलाने लगी, जैसे आज उसकी सत्ता पानी बनकर बह जाना चाहती थी। यह पाप था। पाप की भयानकता से अधिक अपमान की जघन्यता उसे जर्जर किए दे रही थी। कजरी उसके सिर को सहलाती रही। और उसका वक्ष सूसन के आंसुओं से भीग-भीग गया। सूसन रोती रही।

कजरी ने कहा : 'कब तक रोती रहोगी मिसी बाबा ! दुनिया में मर्द ऐसे ही होते हैं। मुझे भी ऐसे ही एक ने बिगाड़ दिया था।'

इस सांत्वना ने सूसन के मुंह पर कालिख फेर दी। वह हिचकी ले-लेकर रोने लगी। बाहर का पानी थम गया था, पर वहां दूसरी बरसात शुरू हो गई थी।

सुखराम लौट आया था। वह आज बड़ा प्रसन्न था। बच्चे के लिए पहले ही कपड़े खरीदकर ले आया था। सोच रहा था, कजरी कितनी खुश होगी इन्हें देखकर।

कोठरी मे पहुंचा तो चौंका। द्वार खुला था और रोशनी नहीं थी। उसने अंधेरे मे ही कपड़े उतारे और सूखे कपडे पहने। सामान एक ओर रखकर लालटेन जलाई।

कजरी कोठरी मे न थी। खाट खाली पडी थी। कहां गई वह इस वक्त ! आधी रात की बेला है ! वह तो समझा था वह रोटी लेकर बैठी इन्तजार कर रही होगी। पर रोटी तो एक कोने मे रखी है करी-कराई। वह खुद कहां चली गई !

सुखराम का हृदय आतुर हो उठा। वह विह्वल-सा बाहर निकल आया। सब ओर सन्नाटा छा रहा था। परन्तु मिसी बाबा के कमरे में अभी तक लैम्प जल रहा था !

वह रोशनी देखकर वहां गया तो देखा. द्वार बन्द था।

तब तो वह सो रही होगी।

फिर कजरी कहां गई ?

वह चुपचाप लौटने लगा। बूट की हल्की आहट सुनकर कजरी ने कहा : 'कौन ?'

'मैं हूं।'

'कौन ?'

'सुखराम !'

कजरी बढ़ी, पर सूसन ने कहा : 'मत खोल कजरी ! यह वही शैतान है।'

सुखराम ने धीरे से कहा : 'कजरी ! तू मेरी आवाज नहीं पहचानती ? अरी मैं हूं सुखराम ! दरवाजा क्यों नहीं खोलती ?'

कजरी ने सूसन को देखा।

द्वार खुल गया। सुखराम ने प्रवेश किया। उसको देखकर सूसन झपटकर उठी और उसके सीने पर सिर रखकर फूट-फूटकर रो उठी। सुखराम हक्का-बक्का रह गया।

'क्या हुआ ?' उसने पूछा।

सूसन ने कहा : 'सुखराम ! !'

आज वह फिर अपने प्राणरक्षक की शरण में आ गई थी। उसीने तो उस दिन बचाया था। उस दिन उसीने तो उसकी लाज को बचाया था। सूसन का रोदन देखकर सुखराम का हृदय पसीज गया। उसने कहा : 'कजरी ! बताती क्यों नहीं ?'

कजरी ने कहा : तू क्या करेगा जानकर ! यह औरतों की बात है।'

सूसन उस समय कजरी की महानता देखकर व्याकुल हो गई। उसके सम्मान के लिए कजरी झूठ बोल गई थी। परन्तु सूसन ने कहा : 'नहीं कजरी ! बता दे। इसको बता दे।'

'मिसी बाबा के साथ नये सा'ब ने पाप किया है।'

'पाप ! !' सुखराम ने सूसन को धक्का दे दिया। वह शय्या पर गिर गई।

'फिर रोती है ?' सुखराम ने पूछा।

'उसने जबर्दस्ती की है। बिचारी ने बहुत रोका, पर वह जीत गया।'

'जीत गया !' सुखराम को हठात् क्रोध चढ़ आया। उसने दांत पीस लिए और वह फड़कने लगा। उसने झुककर सूसन के पांव छूकर कहा :'जब-जब मैं महिषासुर की बात सुनता हूं, तब-तब मुझे भवानी की याद आती है कजरी ! धूपो का बदला याद है न ? मिसी बाबा, हुकम दें। मैं तुम्हारा नौकर हूं। मैंने तुम्हारा नमक खाया है !'

सूसन उठ खड़ी हुई। उसके नेत्रों में गुस्सा फिर से आ गया था। वह प्रतिहिंसा-सी लरज उठी थी।

उसने कहा : 'सुखराम !'

'सरकार !'

'तुम डरोगे तो नहीं ?'

'सरकार, जब तक जान है तब तक तो कोई डर नहीं।'

कजरी सकते में पड़ गई। क्या होने जा रहा है ! अब क्या लड़ाई होगी ? उसने कहा : 'मिसी बाबा !'

'क्या है ?' हठात् सूसन ने कहा।

'कहां जाती हैं ?'

'क्यों ?'

आप गुस्से में हैं ?

'तो क्या इस वक्त मुझे हंसना चाहिए ?'

कजरी उत्तर नहीं दे सकी। सूसन ने द्वार की ओर पग बढ़ाया और कहा : 'सुखराम !'

'जी सरकार !'

कजरी ने बढ़कर सुखराम को रोकना चाहा, परन्तु उसका वह क्रुद्ध रूप देखकर उसकी हिम्मत नहीं पड़ी।

हवा सांय-सांय चल रही थी, इतनी तेज कि कुछ सुनाई नहीं देता था। चारों ओर सूं-सूं, सां-सां गूंज रही थी।

'मेरे साथ आओ।' सूसन ने कहा।

कजरी ने टोका : 'सरकार !'

'क्या है कजरी ?'

'आपके हाथ में कुछ नहीं है।'

सुखराम पीछे चला। उसने कहा : 'वह है क्या जो मैं हथियार उठाऊं !' कजरी अवाक्-सी पीछे-पीछे चली।

सूसन ने इशारे से दोनों को द्वार के बाहर रोक दिया और अकेली कमरे में घुस गई।

लॉरेंस कमरे में खड़ा था। उसने सिगरेट का कश खींचकर ढेर-ढेर धुआं उगला और फिर मस्ती से अंगड़ाई ली।

सूसन रुक गई और उसे जलते नेत्रों से देखने लगी।

'कौन ?' लॉरेंस ने कहा।

'मैं हूं, सूसन !' सूसन फुंकार उठी।

वह सूसन को देखकर चौंका तो था, परन्तु उसकी शैतानियत फिर जाग उठी। उसने सूसन को देखा, तो उसके मुख पर वह एक कुटिल मुस्कराहट बनकर खेल गई। और आंखें खोलता हुआ कहने लगा : 'मैं जानता था, तुम अपने-आप आओगी।'

सूसन ने झपटकर चांटा मारा।

लॉरेंस हंस दिया। कहा : 'और मारो।'

सूसन दोनों हाथ चलाने लगी, तब लॉरेंस जोर से हंसा और उसने पीछे हटकर कहा : 'शाबाश ! इसके बाद !!' सूसन चिल्ला उठी : 'कमीने ! कुत्ते !' पर लॉरेंस ने उसका हाथ पकड़ लिया और कहा : 'इसके बाद तुम फिर मेरी हो सूसन ! यहां तुम्हें बचाने वाला कोई नहीं। और मैं जानता हूं, तुम्हारा यह क्रोध कितना कच्चा है। असल में तुम मेरे पास खुद आई हो।'

सूसन चिल्लाई : 'हट जाओ !'

द्वार पर सुखराम आ गया था।

सूसन ने सुखराम को इशारा दिया। लॉरेंस ने देखा तो एक बार वह सिटपिटा गया। वह सूसन का हाथ छोड़कर खड़ा हो गया था। उसने गरजकर कहा : 'गेट आउट (निकल जाओ)...यू स्वाइन इंडियन बास्टर्ड (तू सुअर हिन्दुस्तानी दोगला) !'

सुखराम शेर की तरह झपटा और लॉरेंस को उसने जोर से धक्का दिया। लॉरेंस का सिर भट से दीवार से जा टकराया और उसे हल्का-सा चक्कर आया। पर साहब का बच्चा अपने को मालिक समझता था। उसने छूटने की चेष्टा की। सुखराम ने उसकी गर्दन दबाई और औंधा करके टंगड़ी मारकर गिरा दिया। लॉरेंस गुस्से से गुर-गुराने लगा। सुखराम ने उसकी नाक धरती से घिस दी और दो हाथ ऐसे करें जड़े कि उसकी आंख से पानी निकल आया

तब सूसन रोष में आगे बढ़ आई। और कजरी का मुख खुल गया, क्योंकि सूसन उसके ठोकरें लगाने लगी। उसने अत्यन्त घृणा से बार-बार उसकी पसलियों में ठोकरें दीं। जूते की चोट से वह बिलबिला गया। सूसन कह रही थी : 'मैं आई हूं तेरे पास, कमीने, कुत्ते···'

वह दांत पीसती जाती थी और इतने जोर से मुट्ठी बांधे थी कि उसके नाखून उसकी हथेली में घुस गए थे।

लॉरेंस ने सुखराम के पंजे से छूटने की कोशिश की, परन्तु वह असंभव था। सुखराम ने उसकी पृथ्वी घिस दी। लॉरेंस चिल्लाया नहीं, पिटता रहा। उसे क्रोध था, किन्तु पाप अब उसे दबाने लगा था। उसकी आधुनिकता अब मध्यकालीन धर्म की रूढ़ियों और सतीत्व के विचारों के नीचे कराहने लगी थी। अब वह पिटकर स्वयं उस नयेपन से डर रहा था। वह सतीत्व को रूढ़ि से तोड़कर अलग करते समय जब नारी को मुक्त कर रहा था, तब वह यह भूल गया था कि संभोग अपने-आप में भले ही पाप नहीं हो, किन्तु स्त्री को पशु बनाकर उसका भोग करने की प्रवृत्ति पाशविकता ही है और जघन्य है, क्योंकि वह स्त्री को समान स्वतन्त्रता देता नहीं है, वरन् उसे दासी से भी बदतर बना देता है। और सूसन उसे एक नौकर से पिटवा रही थी। यह कितना अपमान था! द्वार पर कजरी देख रही थी और अवाक् दे रही थी। उसे उसके पिटने में संतोष हो रहा था।

लॉरेंस फुफकार उठा : 'मैं गोली मार दूंगा!'

सूसन ने पांव रोककर पुकारा : 'कजरी!'

'हां सरकार!!'

'एक रस्सी ले आ।' सूसन ने कहा।

कजरी रस्सी ले आई। सूसन ने कहा : 'बांधो इसे, वरना यह गोली मार देगा।'

'तू हट जा कजरी।' सुखराम ने कहा।

कजरी हट गई। वह डर रही थी : क्या होगा अब! जब बड़ा मा'ब आएगा तो यह कहेगा नहीं? परन्तु सुखराम निश्चिन्त था। उसने कहा : 'सरकार! इससे कह दें कि अगर यह उठा तो मैं इसकी हड्डी तोड़ दूंगा। पड़ा रहे यों ही।'

सूसन ने अंगरेजी में कहा : 'यू डैविल! स्टे व्हेअर यू आर। आ'ईल गेट योर बोन्स क्रश्ड बाई हिम! यू थॉट आई वॉज़ हैल्पलैस! आइ'ड प्रिफर टु डाई दैन टु सरवाइव इन इगनोबल एण्ड सरवाइल एग्ज़िस्टेन्स!'*

किन्तु लॉरेंस उठकर भागा। सुखराम ने उसकी टांग पकड़ ली, वह धड़ाम से गिरा, किन्तु सुखराम ने उसे बीच में ही थाम लिया। उसने कहा : 'सरकार! यह शोर कर रहा है। लोगों को बुलाना चाहता है। मैं इसे भीतर के कमरे में ले चलता हूं।'

और उसने उसे उठा लिया, जैसे वह बहुत हल्का था, और भीतर के कमरे में ले जाकर धरती पर पटक दिया। कहा : 'कजरी! रस्सी कहां है?'

सूसन रस्सी लेकर आगे बढ़ी। लॉरेंस पांव चला रहा था। कजरी ने कहा : 'मिसी बाबा···बचकर···'

तब सुखराम ने उसका पांव जोर से धरती पर दे मारा। सूसन ने रस्सी उसके चारों ओर डाल दी। सुखराम उसे जोर से दबाए रहा और दोनों ने उसे कसकर बांध दिया। उस समय सूसन विकराल लग रही थी।

*ओ शैतान! ऐसे ही पड़ा रह। वरना मैं इससे तेरी हड्डियां तुड़वा दूंगी। तूने सोचा था कि मैं निस्सहाय थी। मैं एक अपमानित और दासता की दशा से मर जाना ज्यादा पसन्द करती हूं।

कजरी ने कहा : 'सरकार !'

'क्या है ?'

'अब रहने दीजिए ।'

'नहीं ।' वह फुफकार उठी ।

लॉरेंस पड़ा था। उसके हाथ-पांव बंध गए थे, वह धरती पर सीधा पड़ा था। उठने की चेष्टा की तो करवट के बल आ गया। उस समय सूसन ने ठोकर दी तो धरती पर औंधा हो गया।

'सरकार, और कोई हुकम ?' सुखराम ने कहा।

सूसन ने आंखें उठाईं। वे आंखें अब फटी पड़ती थीं। लगता था, अब वह सुलग उठी है, और थोड़ी देर में ज्वालामुखी की भांति फट पड़ेंगी।

'इधर खड़े रहो तुम।' सूसन ने कहा।

कजरी नही समझी।

सुखराम ने कहा : 'जो हुकम हजूर !'

सूसन आगे बढ़ी।

कजरी ने सुखराम से धीरे से कहा : 'अब क्या होगा ?'

'मैं क्या जानूं ?' सुखराम ने कहा : 'भवानी से पूछ। मैं उसका नौकर हूं इस बखत।'

सूसन कमरे में गई। कजरी ने कहा : 'अरे मर जाएगा। वह तो पागल हो रही है। ऐसे नहीं हर लुगाई भवानी हो जाएगी !'

'कजरी !' सुखराम ने डांटा, पर आवाज नहीं उठी।

सूसन लौटी तो बाप का घोड़ा चलाने का हंटर ले आई। जिस वक्त उसने हंटर खोलकर फटकारा, तब कजरी ने हाथ पकड़ लिया। कहा : 'मिसी बाबा, पागल हो गई हैं !'

सूसन ने उसे धक्का देकर अपने से दूर कर दिया और वेग से आगे बढ़ी और फिर उसने मारना शुरू किया। लॉरेंस की पीठ पर सड़ासड़ हंटर पड़ने लगे। जिस हंटर की मार से मोटी खाल वाला घोड़ा हिरन हो जाता है, उसकी मार ने लॉरेंस के छक्के छुड़ा दिए। परन्तु वह होंठ चबाता रहा, और सूसन का हाथ नहीं रुकता था। वह हर बार हाथ उठाती और साड़-साड़ उसे मारती। इस समय वह कितनी भयानक बन गई थी !

लॉरेंस बेहोश हो गया पर चिल्लाया नहीं।

कजरी ने तब उसे पकड़ लिया।

'छोड़ दे मुझे···' सूसन ने कहा।

'सरकार ! वह मर गया है।' कजरी ने कहा और जबर्दस्ती हंटर छीन लिया। वह उसके कमरे मे खींच ले चली। सुखराम पीछे-पीछे गया। कजरी ने कहा : 'मिसी बाबा ! बैठ जाइए।'

वह बैठ गई। उसने सिर उठाया। सामने ही सुखराम था। सूसन ने कहा : 'अब तुम जाओ सुखराम।' सुखराम बाहर आ गया।

बाहर भयानक हवा चिल्लाती फिर रही थी। फिर से बादल इकट्ठे हो रहे थे, पहले से भी काले और तूफानी।

अपने कमरे में आकर सूसन फूट-फूटकर रोने लगी। कजरी पास आ गई।

उसने कहा · 'सरकार रोने से क्या होगा !'

कजरी वह फफक उठी

'सरकार,' कजरी ने कहा : 'दुनिया में औरत और मरद यही तो करते हैं।'

सूसन रोती रही।

कजरी ने कहा : 'हुजूर!'

सूसन ने देखा।

कजरी ने कहा : 'आपकी तबियत नहीं थी। उसके लिए। आपने मार-मार उसकी धज्जियां उड़ा दीं। आपने देखा नहीं था। उसकी कमीज तार-तार हो गई थी और पीठ जख्मों से भर गई थी। पर हुजूर! यह भी बड़ा काबिल आदमी है। आपने इतना मारा और चिल्लाया तक नहीं।'

'बस?' सूसन ने पूछा। जैसे वह पूछ रही थी कि क्या यही उसके सतीत्व का, उसकी पवित्रता का मोल है?

'और क्या मालकिन जान दे देंगी?' कजरी ने कहा।

मरना कितना कठिन था! सूसन को लगा कि वह बिना मारे ही मर गई थी।

कजरी ने कहा : 'सरकार! मेरी मानेंगी?'

'बोल।'

'जो हो गया उसे भूल जाएं।'

'कजरी!' सूसन ने अनुनय किया, जैसे : चुप रह, ऐसी बात न कर।

परन्तु कजरी ने कहा : 'आप अभी छोटी हैं सरकार! दुनिया की जानकारी नहीं है आपको। आप बदनाम हो जाएंगी। मुझे तो डर है कि कहीं रात को आहट नहीं पहुंच गई हो। वैसे तो भगवान आपकी तरफ था। बड़ी तेज हवा चल रही है। कुछ सुनाई नहीं देता। फिर भी कौन जानता है! कोई देख ही गया हो तो? आप तो ज्यों का त्यों मामला दबा दीजिए।'

सूसन चुपचाप दीवाल पर नजर गड़ाए रही। वह सोच रही थी, अगर वह यहां से चली जाए तो! कौन जान सकेगा? कोई नहीं। कजरी ठीक ही तो कहती है! आत्महत्या तो पाप है। एक पाप मिटाने के लिए वह दूसरा पाप करेगी? क्या और औरतें नहीं करतीं? यही समझने में क्या हर्ज है कि वह पहले आदमी से तलाक ले बैठी?

और जितना ही वह अपनी आधुनिकता से अपनी पाप-पुण्य की भावना को कचोटती, उतने ही उसके मध्यकालीन संस्कारों के अवशेष अपनी खेद-भरी हंसी हंस उठते।

तो राह किधर है! न आत्महत्या, न मुक्ति। यह क्या? क्यों है तो क्या केवल जघन्य यातना में तड़पा करे? उसका तो कोई अपराध नहीं? उसने तो कुछ नहीं किया था। वह तो अन्त तक रोकती रही थी।

क्या भगवान इसको भी पाप कहेगा?

वह जितना सोचती उतना ही उलझती। और सोरेन अब भी उसे डरा रहा था। वह सुखी थी। यह कौन था जो अचानक ही उसके जीवन में आ गया था? पर्वत से गिरते स्वच्छ झरने में, यह किसने आकर विष मिला दिया था? कितना क्रूर था वह!

उस कमीने ने उसकी पवित्रता को खंडित कर दिया था। क्या वह सचमुच अब अपवित्र हो गई थी!

'जा कजरी' सूसन ने धीरे से कहा। उसकी आंखें अब भी कांप रही थीं।

'नहीं हुजूर आप अकेली हैं।' कजरी ने कहा 'मैं आपको अकेले ही छोड़कर

नहीं आऊंगी। आपका मन अपने हाथ में नहीं है।'

कजरी उसका सिर सहलाने लगी।

तभी सूसन की दृष्टि कजरी की पसली पर पड़ी।

'यह खून क्या है?' उसने पूछा : 'तेरे यह चोट कब लगी?'

'कजरी मुस्कराई।

'हुजूर, मैं बेहोश हो गई थी।' कजरी ने कहा : 'अगर नहीं होती तो बता देती। आजकल मेरे पेट मे बच्चा है, इसमें मैं डरती-डरती सी रहती हूं, वरना यह क्या था!'

'बच्चा!!' सूसन घबरा गई।

'कहीं उसे चोट तो नहीं लगी कजरी?' सूसन ने आर्त्त स्वर से पूछा, जैसे वही इसके लिए दोषी थी।

'सरकार, वह ठीक कर लेगा,' कजरी ने कहा। वह अर्थात् सुखराम। 'वह दवाई जानता है।'

उस आपत्ति में भेद नहीं रहे। सूसन भूल गई कि कजरी एक नौकरानी थी और वह रानियों की रानी थी।

सूसन ने उठकर दवाई का बक्स खोला। दवाई लाई और उसके रोकते रहने पर भी उसके पट्टी बांधी।

'अब कैसा है?'

'हुजूर, ठीक हो जाएगा। अब आप सो जाएं।

सूसन नहीं सोई, बैठी रही। और कजरी उसके पास धरती पर बैठी रही। जब चार बज गए, तब सूसन झपक गई। उसका शरीर निढाल हो गया था। और यों ही रात बीत गई। फिर उजाला छाने लगा।

कजरी चाय बना लाई।

सूसन खड़खड़ाहट सुनकर उठ बैठी।

'सरकार, चाय पी लीजिए।'

सूसन ने मना कर दिया। उसका मुख उतर गया था, सफेद-सा पड़ गया था, निर्जीव, मलिन, परन्तु आंखों मे अब भी घृणा चमक उठी थी।

कजरी न मानी। कहा : 'पी लीजिए सरकार! आपको मेरी कसम है।'

और सूसन ने बुरा नहीं माना। कजरी उसे चाय पिलाने लगी।

सुखराम चाय लेकर लॉरेंस के पास गया। उसे होश आ गया था। उसकी आंखें अब लाल थीं। लॉरेंस ने आंखें मीच लीं। वे जल रही थीं। उसका क्रोध अदम्य था।

सुखराम ने कहा : 'हजूर! मालिक का हुक्म था। मेरा कोई कसूर नहीं।'

लॉरेंस ने मुंह फेर लिया। वह शायद समझा नहीं था।

सुखराम चाय लिए खड़ा रहा। फिर चला गया।

कजरी मिली तो पूछा : 'क्या हाल है?'

'पागल-सी बैठी है।'

'ऐसा ही होता है।'

'अरे हो गया सो हो गया!' कजरी ने कहा।

'तू नहीं जानती, कजरी।' सुखराम ने कहा।

'सब जानती हूं।' कजरी ने कहा : 'तू यों कहता होगा कि मैं नटनी हूं। ये ऊंचे हैं। यही न?'

हां सुखराम ने कहा गलत है यह? और पूछा अरे यह तो बता अब

किसने किया इतना साहस ! ऐसा दुस्साहस !

वृद्ध अविचलित खड़ा था। अब भी बाहर से बिलकुल शांत था। आंखों में भी बल नहीं था।

उसने कजरी की तरफ देखा। कजरी ने देखा तो समझ गई, परन्तु उसका साहस नहीं हुआ। वह नहीं कह सकी। साहब उससे एकटक दृष्टि से जैसे पूछ रहा था

कजरी ने सुखराम की तरफ आंखें कीं। वृद्ध ने सुखराम की ओर देखा। उसने कहा : 'जल्दी बोलो।'

'छोटे सा'ब ने !'

वृद्ध कांप उठा। जंगल की लकड़ी ! कुल्हाड़ी की बेंट ! उसने अविश्वास से फिर देखा। पर सुखराम ने कहा : 'हां सरकार ! छोटे सा'ब ने ही !'

बुड्ढे के हाथ गुस्से से कांपने लगे। और अचानक ही उसके हाथ में उसके जेब की पिस्तौल निकल आई। सुखराम कांप गया। कजरी ने इशारा किया—रोक !

बूढ़ा खटखट करता बाहर निकला और उसने कहा : 'कहां है ?'

सुखराम आगे चला। बूढ़ा पीछे। जब वह लॉरेंस के कमरे में पहुंचा तो देखकर पूछा : 'यह किसने किया ?'

'मिसी बाबा ने।'

'किसने बांधा इसे ?'

'मिसी बाबा ने हुकम दिया था हुजूर।'

वृद्ध के नयनों में कृतज्ञता दिखाई दी। लॉरेंस ने देखा तो चेहरा सफेद हो गया। बूढ़े ने पिस्तौल वाला हाथ उठाया, पर सुखराम ने बढ़कर पकड़ लिया।

'हट जाओ ?' वृद्ध ने धीमे गुस्से से कहा।

पर सुखराम ने परवाह नहीं की। वह बूढ़े को जबर्दस्ती दूसरे कमरे में खींच लाया। वृद्ध अब भी क्रोध से कांप रहा था।

'हुजूर !' सुखराम ने उसके पांव पकड़ लिए : 'आप चाहें तो मुझे गोली मार दीजिए।'

वृद्ध का हाथ झुक गया।

'क्या करते हैं हुजूर !' सुखराम ने कहा : 'गुस्से ने आपको अन्धा कर दिया है। आप इतने बड़े आदमी होकर नहीं सोच पाते ! इसका नतीजा भी तो सोच लीजिए मालिक। बदनाम हो जाएंगे। आपकी बेटी है, बेटा नहीं है।'

वृद्ध रुक गया।

सुखराम ने फिर कहा : 'दिन में पिस्तौल चलेगी तो हुजूर सारा गांव जान जाएगा। फिर कहां जाकर मुंह छिपाएंगे ? सरकार, सब जगह खबर पहुंच जाएगी।'

और बूढ़े के सामने चित्र आ गया। खबर गांव में फैलेगी। गांव वाले हंसेंगे। राजा हंसेगा। रियासत हंसेगी। और जितनी रियासतें उसके नीचे हैं, वे सब ठहाका लगा-लगाकर हंसेंगी। स्त्री और पुरुषों का वह अट्टहास जब दिल्ली में गूंजेगा तो वायसराय चौंक उठेगा। फिर वह अट्टहास समुद्र पार करके इंग्लैंड में पहुंचेगा। दुनिया हंसेगी, पालिटिकल एजेण्ट की कन्या से ! और वह भी एक अंगरेज ने !! अगर कोई हिन्दुस्तानी ऐसा करता तो वह राष्ट्र-द्वेष की बात बन जाती। पर इसमें तो इंग्लैंड का गौरव धूल में लोट रहा था। लेकिन वह यह क्या सोच रहा है ! यह हिन्दुस्तानी सामने खड़ा है। गंवार ! नीच गुलाम ! और उसने उसकी लड़की की रक्षा की है। उसने आततायी को पकड़ा ! उसने पोलिटिकल एजेंट को घोर अनर्थ करने से रोक दिया। यह नीच है कि लॉरेंस नीच है ? यही है वह आदमी जो उस दिन उसकी लड़की को जान

पर खेलकर पहाड़ों में से बचाकर लाया था। यह दास है, परन्तु मनुष्य है। असभ्य है, परन्तु इसमें जीवन की गरिमा है। यह उपहासास्पद है, किन्तु इसमें सत्य के लिए मर मिटने की साध है। यह हिन्दुस्तान है! लॉरेंस जिस लूट पर पला है, उसने वही तो किया है जो उस लूट की नैतिकता हो सकती है! यही है इंग्लैंड का भविष्य!!

बूढ़े का हाथ गिर गया था। पिस्तौल छूट गई थी। सुखराम उठकर खड़ा हो गया। उसने देखा, वृद्ध शिथिल हो गया था। उसने देखा। आज देखा। वह तो सिर्फ एक बूढ़ा आदमी था, परन्तु उसके अधिकार ने कभी ऐसा लगने नहीं दिया था कि वह भी किसी प्रकार निर्बल हो सकता है। अब उसके माथे पर पसीना झलक आया था। वह कितना दीन-सा दिखाई देता था!

सुखराम को लगा जैसे पेड़ कटकर गिरने के पहले डांवाडोल हो रहा हो। वह कल कितना रौबीला था! लगता था यह तो फौलाद है, सिर्फ हुकूमत करने को पैदा हुआ है!

सुखराम ने देखा, उसने मुंह छिपा लिया। आज वह सचमुच किसी को मुंह दिखाने लायक नहीं रहा था। उसे एक-एक परिचित दिखाई दे रहा था। वे सब उसे व्यंग्य से देख रहे थे। और वह इसी लॉरेंस से स्नेह करता था! उसीने उसे नौकरी दिलाई थी! यही था कृतज्ञता का नतीजा!! यही था!!

बूढ़ा कुर्सी पर गिरा और मेज पर हाथों के बीच सिर रखकर रो पड़ा।

पत्थरों में जैसे खड़-खड़ हो रही थी और चट्टान फोड़कर सोता फूटा पड़ रहा था। यही तो वे आंखें थीं जिन्होंने सैकड़ों-हज़ारों आदमियों की गरीबी देखकर भी उन्हें कुचला था। उस वक्त न्याय और कानून का आश्रय लिया था! दूसरों की मौत पर ये आंखें झूठी हमदर्दी दिखाया करती थीं।

सुखराम को आश्चर्य हुआ। उसे सचमुच यह देखकर आश्चर्य हुआ कि यह आदमी इतना दिल रखता है कि उसमें भी तो किसी से प्यार पैदा हो सकता है! वह तो यह समझता था कि ये तो मालिक हैं। जो राग-द्वेष साधारण मनुष्य में हैं, वे इनमें नहीं हैं। ये तो सिर्फ आराम करने के लिए पैदा हुए हैं। इन्होंने तो हुकूमत करने को जन्म लिया है।

परन्तु आज उसका वह भाव खंडित हो गया। और उसकी मनुष्यता देखकर सुखराम का वह डर दूर होने लगा।

बूढ़ा कुछ देर पड़ा रहा। उसने झुककर पिस्तौल उठा लिया।

सुखराम ने कुछ नहीं कहा। बूढ़ा आगे बढ़ा।

'हुजूर!' सुखराम ने टोका।

'क्या है?' बूढ़े ने मुड़कर पूछा।

सुखराम आगे बढ़ा। कहा: 'इसे मुझे दे दीजिए हुजूर!'

'नहीं।' बूढ़े ने कहा: 'मैं उसको गोली नहीं मारूंगा।'

सुखराम ने कहा: 'तो फिर इसे हाथ में आपने क्यों उठा लिया है हुजूर! मुझे डर लगता है। आप अभी गुस्से में हैं। बाद में क्या होगा, जानते हैं? इसका नतीजा क्या है, मालूम है?'

'क्या है?' और फिर हृदय के कानों में दिशाओं से उसे जनता के अट्टहास सुनाई देने लगे। उसे लगा, एक लपट फरफराकर उठी और बढ़ी और इंग्लैंड का झंडा धू-धू करके जलने लगा।

पिस्तौल यहीं धर दीजिए सरकार' सुखराम ने कहा बूढ़े की आंखों में सुख राम के प्रति एक [illegible] आई। वह बड़े असमंजस में जगह सन बाला

आज सहज ही उसके मुख पर आ गया था।

बूढ़े ने पिस्तौल जेब में भरकर कहा : 'मेरा बेंत लाओ।'

सुखराम बेंत लेने आया। वृद्ध लॉरेंस के पास गया। वह इस समय तनिक भी उत्तेजित नहीं लगता था, जैसे उसमें अब ठंडा गुस्सा भर गया था। और फिर उसने निर्दयता से लॉरेंस को मारना शुरू किया। वह बेंत क्या था, उसकी तड़पती हुई लचक थी। मांस पर पड़ता था तो दांत की तरह घुसता; और फिर लॉरेंस रोने लगा, जैसे उसके सहन करने की भी पराकाष्ठा हो गई थी।

लॉरेंस ने कहा : 'मुझे माफ करो डैडी ···।'

बूढ़ा मारता जा रहा था। कजरी ने सुना तो सूसन का हाथ पकड़कर कहा 'चलो मिसी बाबा।'

'मैं नहीं जाऊंगी।'

'चलो रानी जी!' उसने आजिजी से कहा।

जब दोनों पहुंचीं तो लॉरेंस कराह रहा था : 'तुम मेरे बाप हो, मुझे माफ करो · मैं इंगलैंड चला जाऊंगा···मुझे माफ करो···।'

बूढ़े का क्रोध आज थमने का नाम नहीं लेता था।

सूसन ने देखा तो रुकी नहीं। चुपचाप कमरे में लौट आई और सामने आकाश के व्यापक प्रसार को देखती रही। बाहर से कोई देख न ले, इसलिए सुखराम ने उधर का द्वार बन्द कर दिया था।

लॉरेंस कराह : 'मुझे छोड़ दो···इंग्लैंड के लिए मुझे छोड़ दो···इंग्लैंड!'

वह और न कह सका। उसका सिर लुढक गया। वह बेहोश हो गया था। कहते हैं, रावण का भेजा हुआ मारीच जब सोने का हिरन बनकर राम को छल से भगा लाया था और अन्त में राम ने उसे बाण से मार ही दिया था, तब वह यही चिल्लाया था : 'हा लक्ष्मण···हा राम····' और इसी तरह जब लॉरेंस चुप हुआ तो भला-बुरा उसने घूम-फिरकर इंग्लैंड को ही समर्पित कर दिया था।

वृद्ध को पता नहीं चला था कि वह मूर्छित हो गया था। कजरी ने सुखराम से कहा, 'रोक अब! मर जाएगा!'

सुखराम ने बूढ़े का हाथ पकड़ लिया और कहा : 'हजूर बस!'

एक चपरासी की यह हिम्मत कि पोलिटिकल एजेण्ट का उठा हुआ हाथ पकड लिया! परन्तु नहीं, आज वृद्ध अपनी सारी जड़ता को छोड़कर खड़ा था। यह गुस्सा न्याय के लिए था। मनुष्यत्व के लिए था। यह अन्याय और साम्राज्य के लिए नहीं था। इसीसे इसमें अहंकार, जड़ता और दम्भ का प्रभाव नहीं था।

बूढ़े के हाथ से सुखराम ने बेंत ले लिया। बूढ़े के माथे पर पसीना आ गया था। कजरी दौड़कर पानी का गिलास ले आई।

डर छोड़कर कहा : 'पी लीजिए हजूर।'

वृद्ध ने कांपता हाथ बढ़ा दिया और गट-गट करके पानी पी गया! जो कल तक मेज पर मदमस्त होकर जब खाने बैठता था, तो शेर बनने के लिए चाट-चाटकर शराब पीता था, क्योंकि वह भूखे पेट में नहीं खाता था। उसके ओहदे का अहंकार नित्य उसकी मनुष्यता को हराया करता था। आज वह सब टूट गया था--इस पल, केवल इसी क्षण··

सूसन कपड़े बदल चुकी थी।

बूढ़ा उसके कमरे में घुसा तो वह उसकी ओर मासूम आंखों से देखती रही।

कैसे इतना बर्बर हो सका वह वृद्ध ने कहा और उसे हृदय से लगा लिया

'कोई आनेगा कैसे ?' सुखराम ने पूछा।

'ओह !' बूढ़े के मुंह से निकल ही गया : 'जाओ, ऐसा ही करो ।'

सुखराम ने जाकर लॉरेंस को खोल दिया। और उसे उठाया, पर वह थोड़ी देर तक सीधा खड़ा नहीं हो सका।

कजरी एक डबल रोटी और चाय ले आई। उसने कहा : 'बैठ जाओ साहब।'

वह समझा नहीं तो उसको उसने बिठा दिया और पास बैठ गई। उसे चाय पिलाने लगी। वह अपने हाथ देख रहा था, जिनमें जगह-जगह नील पड़ गए थे। कजरी को दया आई। करुणा से उसके हाथ पर हाथ फेरकर कहा : 'हाय, कैसे नील पड़ गए हैं ! बेचारे को कितना मारा है !'

वह सचमुच इतनी मार देखकर विचलित हो गई थी। वह उससे आकर्षित हुआ था। कजरी के मन में इसका स्नेह था। और यह एक जीवन का बड़ा सत्य है कि स्त्री विवाहित होकर भी अनजाने ही एक काम करती है। जब तक उसमें जवानी रहती है, तब तक वह अपने को दूसरे लोगों की आंखों की कसौटी पर अपने रूप और यौवन को आंका करती है। वह देखती है कि उसमें अब भी कोई आकर्षण है या नहीं। और यदि है तो अवश्य वह अपने पति को अभी तक अच्छी लगती होगी। बस, उसमें इससे अधिक कोई भाव नहीं रहता।

कजरी की यह दशा देखकर लॉरेंस को लगा, वह अभी तक मनुष्य है। इतना घृणित होते हुए भी उसमें दया के योग्य कुछ है। वह कजरी के कन्धे पर सिर धरकर फूट-फूटकर रो उठा। कजरी ने उसका सिर थपथपाया। उसे बिठाया। फिर इशारा किया कि मेरे साथ चल।

लॉरेंस उसके पीछे चला। कजरी ने इशारा किया। लॉरेंस ने बूढ़े के सामने ही जाकर सूसन के पांव पकड़ लिए और ऐसे रो उठा जैसे वह जन्म-जन्मांतर का जघन्य पापी था। उसको ऐसे रोते देखकर भी वे दोनों चुप रहे। सूसन ने पांव हटा लिए। कजरी कहना चाहकर भी नहीं कह सकी कि मिसी बाबा, माफ कर दो।

बूढ़े ने कहा : 'इसे ले जाओ।'

कजरी उसे ले आई। वह रो रहा था। कजरी ने उसके आंसू पोंछ दिए।

सुखराम कपड़े ले आया। लॉरेंस चुपचाप तैयार हो गया।

सुखराम ने बाहर कहा : 'रात-भर साहब बुखार में बर्राता रहा। मिसी बाबा तो रात-भर रो-रोकर परेशान हो गईं। बुखार था। पूरा सरसाम समझो। उठकर भागता था। तब उसे बांधकर पटकना पड़ा। मैं उसे ले जा रहा हूं।'

'कहां ?' माली ने कहा : 'शहर ?'

'अजी यहां क्या इलाज होगा ! रेल में बिठा आता हूं। तू जमींदारजी की घोड़ा-गाड़ी ले आ।'

माली ने कहा : 'पर रात तो तूफान था। हमें मालूम भी नहीं पड़ा। अच्छा जाता हूं।'

गाड़ी आ गई। जमींदार धन्य हो गए। लॉरेंस बैठ गया। सुखराम ने गाड़ी हंकवा दी। उसने गाड़ीवान की बगल से झांककर देखा, लॉरेंस सो गया था।

शाम को जब वह लौटा तो कजरी को देखा। पड़ी थी। कोठरी में सन्नाटा था। माली खड़ा था। और एक चपरासी भी था।

वह कोठरी में घुसा। सूसन ने देखा तो इशारा किया—धीरे बोलो।

सूसन उसके मुंह में थर्मामीटर लगाए थी उसने नि तेखा

क्या काम है ? सुखराम ने पूछा

'कुछ नहीं।' कजरी ने मुस्कराकर कहा।

सुखराम ने छूकर देखा, वह गरम हो रही थी।

'बुखार है।' माली ने कहा।

कजरी ने कहा : 'अरे तुम लोग जाओ अब। अब तो यह आ गया।'

माली और नपरागी चले आए। कजरी ने कहा : 'मिस्सी बाबा! आप जाओ। अब कोई डर नहीं।'

सूसन ने बताया।

सुखराम को अब पता चला कि कजरी के पेट में चोट थी।

सूसन ने कहा : 'मैंने पट्टी बांध दी थी।'

उसने पेट दिखाया।

कजरी ने हंसकर कहा : 'ठीक हो जाएगी मिस्सी बाबा। आप तो दया भी इत्ती करती हैं! मानुस कौन है, जिसे कभी बुखार नहीं आता? उसका भी इतना सोच!'

सुखराम सिर पकड़कर बैठ गया।

'तुझे क्या हुआ?' कजरी ने पूछा।

सुखराम ने उत्तर नहीं दिया।

सूसन समझी नहीं, पूछा : 'क्या हुआ?'

'कुछ नहीं।' कजरी ने कहा : 'चक्कर आ गया होगा इसे।'

पर वह समझ गई थी। कहा : 'अरे रहने दे।'

सूसन ने पूछा : 'मुझको बताओ।'

'अजी कुछ नहीं है, मिस्सी बाबा!' कजरी ने कहा : 'वैसे ही दिखाता है। आप जाओ आराम करो।'

सूसन चली आई।

सुखराम अभी तक वैसे ही बैठा था।

'क्यों रे, उठेगा नहीं?'

वह फिर भी चुप था।

कजरी उठी। कहा : 'नहीं बोलेगा तू?'

'क्या बोलूं मैं?'

'छोड़ आया उसे?'

'हां।'

'कुछ बताना नहीं। हां। बस! सांप सूंघ गया है तो!' हंसते हुए कजरी ने कहा : 'क्यों रोता है?'

'कहां? मैं कहां रोता हूं?'

'तो तेरी सूरत ऐसी क्यों हो गई है?'

सुखराम ने पूछा : 'बहुत दर्द है?'

'अरे, ऐसा पूछता है! जब चल रही थी तू बढ़ा लिया जो अब पूछता है!'

सुखराम मुस्कराया। आशा बंधी।

'मैं मरूंगी नहीं।' कजरी ने कहा : 'मैं क्या तुझे अकेला छोड़ दूंगी!'

'कजरी! तू प्यारी की तरह मुझे छोड़ तो न जाएगी?'

'तू चाहेगा तो क्या नहीं होगा। अरे मत! बड़ा भोला है रे तू! क्या पूछ रहा है?'

क्यों?

मुझे मालूम है कि कब आऊंगी, कब जाऊंगी

'भगवान जानता है कजरी, तूने रात का सामान देखा ?'

'मैंने तो नहीं देखा।'

'मैं कपड़े ले आया हूं। तू बना लीजो।'

'सच ! तो मुझे दिखा दे, अच्छे लाया है न ?'

'देख कित्ते अच्छे हैं ···'

सुखराम ने यह कपड़े उसके हाथ में दिए। तभी सूसन ने कोठरी में प्रवेश किया। वह कह रही थी : 'अब कैसी हालत है कजरी, डैडी पूछते हैं।'

'हजूर ! अच्छी है !' कहते हुए उसने लाज से कपड़े छिपा लिए। परन्तु सूसन ने देख ही लिए।

'यह क्या है ?'

'कुछ नहीं हजूर।' कजरी ने कहा। और हाथ पीछे कर लिया।

सुखराम बड़े अदब से शर्माए हुए, सिर एक ओर तनिक झुकाए खड़ा खुश था।

और तो सिर्फ कपड़े थे, पर टोपा कमबख्त रेशमी था, छोटा-सा बना हुआ। उसके पास दो खिलौने थे। साहब का अर्दली था। कोई गरीब था !!

'अरे !' सूसन के मुंह से निकला। स्त्री ने समझ लिया।

उसने कहा : 'कजरी ! तूने पहले क्यों न कहा ! उसने तेरे पेट में लात मारी थी !!'

उसपर आतंक छा गया था।

कजरी ने हंसकर कहा : 'मिसी बाबा ! कहकर क्या आपपर अहसान जताती ? बच्चे का क्या है ! फिर हो जाएगा।'

असल नटनी बोली थी ! सूसन को लगा, उसका सिर अब जो झुका है वह कभी नहीं उठ सकेगा।

वह लौट गई। सुखराम उसे बंगले तक पहुंचाने आया। पर वह चुप थी। बोली नहीं।

वृद्ध उस समय आराम से पाइप पी रहा था।

'डैडी !' सूसन ने कहा। उसका स्वर कंपित था।

वृद्ध ने धुआं उगलकर कहा : 'क्या हुआ ?'

'डाक्टर बुलवाइए फौरन।'

'क्यों ?'

'कजरी बीमार है।'

'कजरी अपने आप ठीक हो जाएगी, बेटी। ये लोग डाक्टर-वाक्टर नहीं बुलवाते। और फिर तुम उनसे इतनी हमदर्दी करोगी तो लोगों को शक नहीं होगा ?'

परन्तु सूसन ने मुंह फेर लिया और कहा : 'आपको कसम है। एक बार चलकर तो देख लीजिए। वह गर्भवती है। उसका हाल तो देखिए।'

बूढ़ा उठा। उसे देखकर कजरी चौंक उठी, सिर ढक लिया।

'क्या हुआ ?' उसने पूछा।

सुखराम के साथ भीतर आ गया। देखा और समझा। उसका हृदय झनझना उठा। तब बूढ़े ने कहा : 'यह किसने किया ?'

कजरी नहीं बोली। सूसन ने रोते हुए कहा : 'वह जंगली !!'

बूढ़ा गम्भीर हो गया

सुखराम उसने अवश मुद्रा में कहा सुखराम ने देखा उसकी [illegible]

जाकर देखा।

शाम हो गई थी। सूसन घुटनों के बल बैठी ईश्वर से प्रार्थना कर रही थी।

दिन आते, चले जाते; रात आती, ढल जाती। और इसी तरह कुछ महीने निकल चले।

एक दिन कजरी ने कहा : 'सुनता है! यह मैंने बनाए हैं।'

कपड़े सामने धर दिए। बड़े उम्दा थे। सुखराम चौंका। पूछा : 'यह कहां से आए?'

कजरी मुस्कराई।

'अरी बताती नहीं! तुझे इस हाल में भी कोई दे जाता है। बात यह है, बेवकूफों की दुनिया में कमी तो है नहीं।'

'मैं तो तुझे देखकर यही सोचा करती हूं।' कजरी ने कहा।

'क्यों री,' सुखराम ने कहा : 'तू मुझे ऐसा जवाब देती है; कहीं तेरा बेटा ऐसे ही मुझे जवाब दे उठेगा तो?'

'पालूंगी नहीं उसे?' कजरी ने कहा : 'दूसरा बाप को जवाब देगा! पालूंगी तो मैं ही। तेरे जैसा बेवकूफ नहीं बनने दूंगी उसे मैं।'

'चलो अच्छा है।' सुखराम ने कहा : 'मेरी तरह वह दुख भी न पाएगा।'

'तो मैं तुझे दुख देती हूं?' कजरी ने चिढ़कर कहा।

स्त्री सब कुछ सह लेती है, लेकिन अपने और अपने मायके के बारे में मजाक सुनना उसकी ताकत के बाहर होता है।

सुखराम हंसा। कहा : 'यह भी सिखाएगी उसे कि बात-बात पर तिनक उठे।' उसने हाथ जोड़कर कहा : 'हे भगवान! अगर देने पर ही दया की है, तो मेरी अकल और इसकी शकल देना।'

कजरी का क्रोध दूर हो गया। उसकी शकल की जो तारीफ हो गई थी उससे मन सन्तुष्ट हो गया था।

बोली : 'लोग कहते तो हैं कि लड़की बाप की सूरत पर जाए और लड़का मां की सूरत पर, तो दोनों भागवान होते हैं।'

'भागवान न होते तो उसके पेट में रहते ही कोई यह कपड़े दे देता!

'अरे जा! यह तो मिसी बाबा ने दिए हैं।'

सुखराम ने कहा : 'किसने, मिसी बाबा ने?'

'हां।' वह हंसी और बोली : 'और यह दिया है।'

उसने दिखाया। पूरा, नया साबुन!

'अरी नटनी, कहीं कला तो नहीं दिखा रही है?' सुखराम पूछ बैठा।

'तू जाके कह दे,' कजरी ने कहा : 'जैसे पहले साबुन लाई थी तब कह आया था!'

'मैंने तो नहीं कहा।'

कजरी चौंकी। अब समझी, मिसी बाबा क्यों हंसी थीं।

34

मेरे दोस्त ने सुखराम को बुलाया। डांटा। जाने क्या किया वह मैं नहीं जानता पर उसका परिणाम निकल ही आया।

कुंवर अपने-आप नहीं जाएगा।'

'क्यों ?' मैंने पूछा।

'वह जात की नटनी है।' भाभी ने कहा : 'और क्या ? अब ढर्रे से लग जाएगी।'

मैं समझ गया, वे दुनियादारी की बात कर रही थीं। उनका ख्याल था कि अब तो उसका ध्यान बंट जाएगा।

मैंने कहा : 'भाभी ! वह कन्यादान से नहीं गई जो गरीब-बेबस हो ! उसने अभी अपने पति को अपना शरीर भी छूने नहीं दिया।'

'उसे परार मरद का तो डर ही नहीं देवर, भाभी ने कहा : 'क्या पतबरता बना रहे हो उसे !'

'मैं बना रहा हूं ? जानती हो, नरेश उसे भूला नहीं है !'

'अरे, नहीं भूला तो क्या करूं ?' भाभी ने कहा : 'एक इसके लिए भी लाऊंगी। देखू कैसे नहीं भूलता। क्या बखत आ गया है ! जरा-जरा-से लड़के लड़कियां आसमान में थेगली लगाते हैं। हमने तो न किया, न सुना। इसी जमाने में आकर यह कमाल शुरू हुए हैं।' उनके स्वर में उन सबके प्रति घृणा और अपमान का भाव था।

मुझे विक्षोभ हुआ। मैंने कहा : 'भाभी ! पर जितना तुम आसान समझती हो वह सब उतना सहज है नहीं।'

वे बोलीं नहीं। नरेश कहीं से आया। चुपचाप भीतर चला गया। भाभी को देखा तो शून्य दृष्टि से।

'क्यों, अब भी खुश नहीं हो ?' भाभी ने कहा : 'देखा, क्या हाल हो गया है इसका !'

'क्यों, ऐसी क्या बात हुई है ?' मैंने पूछा : 'जो मैं शीरनी बांटूं।'

'अरे, मैं उसकी मां हूं।' भाभी ने कहा : 'तुम मुझे समझाने बैठे हो !'

दूसरे दिन नरेश घूमने गया। मैंने देखा तो मैं भी उसीके पीछे-पीछे चल दिया। मुझे डर था। अतः कौतूहल ने कहा कि चलो, देख आओ। क्या वे अब भी आपस में मिलते हैं !

परन्तु मैंने देखा, वह सफेद महल में ठहर गया। देर तक खड़ा-खड़ा सोचता रहा। मैं पहले तो समझा नहीं, पर फिर अचानक मेरे भीतर की कल्पना जागी। उसने कहा, तू जानता है यह क्या कर रहा है ? दुनियादारी का स्वार्थ, जो अपना एक क्षण भी नष्ट नहीं करना चाहता, वह बोला—मूर्ख है। मैं क्या जानूं !—तब मनुष्यत्व ने कहा—यह उन पुरानी जगहों की याद कर रहा है, जहां एक दिन वह चंदा से मिलता था।

नरेश हठात् चल पड़ा। मैं उसके पीछे था।

चंदा राह में मिली। वह चली आ रही थी। उसका मुंह उतरा हुआ था। बाल बिखरे हुए थे। नरेश को देखा तो ऐसी खड़ी रह गई जैसे क्या करे !

और नरेश ने देखा तो देखता ही रह गया।

'तू !'!' चंदा ने कहा। पर पास आ गई।

'मैं जानती थी, तू आएगा।' चंदा ने कहा : 'तू जानता है, उन्होंने मेरे साथ क्या किया है ?'

'जानता हूं।'

'फिर तूने क्या किया ?'

क्या करता मैं ?

मेरे मन में आया, नरेश से कहूं कि देख, आज जीवन की वास्तविकता बोल उठी है !

नरेश ने कहना चाहा, पर कुछ उत्तर नहीं दे सका। वह घुटकर रह गया।

किन्तु वह मेरी संकुचित धारणा थी। नरेश इतने में ही पूर्ण नहीं था। वह तो विकास कर रहा था। हृदय का मंथन कर रहा था। कभी वह बोलता था, कभी उसका संस्कार बोल उठता था।

चंदा उसके बाद नरेश से फिर मिली।

'तू मुझे नहीं चाहता ?'

'चाहता हूं।'

'फिर मुझे छूता क्यों नहीं ?'

'यह पाप है, मैं डरता हूं।'

'पाप ? कैसा पाप ?'

'तेरे लिए क्या कुछ पाप नहीं है ?'

'पाप !' चंदा ने कहा : 'यों नहीं कहता कि मुझे असल में चाहता ही नहीं; बातें बनाता है।'

'अगर मैं तुझे चाहता न होता तो क्यों आता ?'

'पर मुझमें पाप क्या है न ?'

चंदा ने दृढ़ता से पूछा। नरेश ने उसकी आंखों में झांका और फिर धीरे से कहा : 'तू पराए की है !'

'कैसे ?' चंदा ने पूछा।

'तेरा ब्याह नहीं हुआ ?'

'हुआ।' चंदा ने कहा : 'पर मैं अब भी वैसी ही हूं। मैंने उससे आज तक जब नाता न जोड़ा तो मैं पराए की कैसे हुई ?'

नरेश कह नहीं सका।

'मैं अब भी तेरी हूं नरेश।' चंदा ने याचना की।

'यह नहीं हो सका चंदा।'

'क्यों ?'

'क्योंकि तू पराए के घर भेजी जा चुकी है, और दुनिया तुझे उसीकी मानेगी।'

'तेरी भैंस खोलकर कोई तेरे सोते में ले जाए और अपने नौहरे में बांध ले, तो वह उसीकी हो गई ?' चंदा ने पूछा।

'नहीं।'

'क्यों ?'

'वह मेरी है।'

'तू उसके लिए लड़ेगा, पर मेरे लिए नहीं लड़ेगा ?'

'नहीं।'

'क्यों ?'

'क्योंकि जग हंसेगा।'

'फिर तू मुझे छोड़ देगा ?' चंदा ने रुआंसी होकर पूछा।

'हां।'

'और तू मुझे भूल जाएगा ?'

नरेश की आंखों में आंसू आ गए। बोला : 'नहीं।'

चंदा मुस्करा दी उसका साहस लौट आया कहा तू सच कहता है ?'

'मैंने तुझसे कभी झूठ भी कहा है चंदा !' चंदा की ओर द्रवित दृष्टि से देखकर नरेश ने कहा।

'नहीं ! तो बिना भूले तू जिएगा कैसे ?'

'मैं नहीं जानता।' नरेश ने हाथपांव झाड़ते हुए कहा।

'फिर मुझे ले चलेगा ?'

'नहीं।'

चंदा हतप्रभ हो गई। कहा : 'मैं मर जाऊंगी।'

'मैं क्या जानूं चंदा ! तू मर जा, मैं भी मर जाऊंगा।'

'तो चल।' चंदा ने कहा : 'मैं नहीं डरती। यहां नहीं मिलेंगे तो वहां मिल जाएंगे।'

पर नरेश लौटा। चंदा देखती रही। वह उसे छोड़कर चला जा रहा था; वह देखती रही और फिर वह भागी।

उसने सामने आकर कहा : 'तू मुझे चंदा के लिए छोड़कर जा रहा है ?'

नरेश ने कहा : 'मैं तुझे छोड़कर नहीं जा रहा हूं, चंदा। मैं थककर जा रहा हूं।'

चंदा ठिठक गई। नरेश देखता रहा और फिर आगे बढ़ गया। चंदा फिर भागी।

उसने उसे पकड़ लिया।

नरेश ने कहा : 'मुझे छोड़ दे।'

'नहीं।' वह चिल्ला पड़ी।

नरेश रुका। चंदा ने पांव पकड़ लिए। इसी समय नीलू दिखाई दिया। उसने झपटकर नरेश पर हमला किया। नरेश गिर गया।

नीलू ने हटकर चंदा के बाल पकड़ लिए।

नरेश ने कहा : 'हट जा कायर !'

नीलू ने कहा : 'आ, आ !'

नरेश झपट पड़ा, कुश्ती होने लगी। नरेश नीचे आ गया था। चंदा ने नीलू के बाल खींच लिए। नीलू नीचे आ गया। चंदा उसे ठोकर मारने लगी। नरेश ने उसके मुंह पर घूंसे मारे।

नीलू गुस्से में पागल था। वह उसकी स्त्री थी और नरेश ! वह चिल्लाया : 'साले, तेरी सारी कठिनाई निकाल दूंगा।'

नरेश ने इसका उत्तर नहीं दिया, कसकर एक घूंसा दिया। नीलू गिर गया, पर फिर उठकर झपटा तो नरेश धरती पर गिरा। उस समय अत्यन्त क्रोधित होकर नीलू ने बढ़कर चंदा की कमर में कसकर लात दी। चंदा कहराकर गिरी। फिर नरेश नीलू पर टूटा। अबकी बार वे दोनों बड़े जोर से भिड़े। नीलू ने नरेश को बुरी तरह मारा। उसने उसके सिर को धरती पर बाल पकड़-पकड़कर दे मारा। लहू बहने लगा। नरेश गिर गया था।

नीलू उठकर खड़ा हो गया।

'अरे तेरा सत्यानास जाए कसाई !' चंदा चिल्लाई और नरेश से चिपट गई। वह रोने लगी और उसने कहा : 'निरदई ! तूने इसे मार डाला !'

नीलू ने उसके बाल पकड़ लिए और खींचकर उठा लिया। चंदा रोने लगी। नीलू ने कहा : 'कुतिया !'

किन्तु नीलू चंदा को कंधे पर उठाए चला गया

कुछ देर बाद जब होश आया तो नरेश ने आंखें खोलीं सिर में दर्द हो रहा

था। खड़ा होकर देखा। दूर नीलू चंदा को लिए चला जा रहा था। उस समय नरेश को क्रोध आया और फिर वह अचानक बोल उठा : 'करनट ! तेरी इतनी हिम्मत !!'

नरेश खड़ा नहीं रहा। वह बदला नहीं चाहता था, वह अपने अपमान को धोना चाहता था।

जब नरेश घर पहुंचा तो ठाकुरों ने देखा।

'क्या हुआ छोटे सरकार ?' जोरावरसिंह ने कहा।

'मुझपर करनट ने हमला किया था।' उसने कहा।

'नटों की यह हिम्मत !'

आठ-दस लठैत तैयार हो गए।

वे चले। कोई तर्क नहीं हुआ। सवाल नहीं उठे। जैसे यह सब अपने-आप में न्याय था।

नटों को पकड़ लिया गया। नट समझे नहीं। आखिर बात क्या थी ! परन्तु इतना ताव किसे था !

लट्ठ बरसने लगे। नट पहले तो चुप रहे, पर तभी एक चिल्लाया : 'अरे क्या पिटते ही रहोगे ?'

सुखराम बाहर आया। नटों ने लट्ठ लेकर हमला किया। सुखराम चिल्लाने लगा : 'रोको, रोको !' पर किसी ने नहीं सुना। उस समय नरेश भागता हुआ आया और चिल्लाया : 'रोक दो, रोक दो !' परन्तु शीघ्र ही सुखराम और नरेश घायल होकर गिर गए। ठाकुर लौट गए।

जब मुझे मालूम हुआ तो दौड़ा-दौड़ा गया। सुखराम घायल पड़ा था। मैंने उसे उठाया। उसने कहा : 'तुम क्यों आए हो बाबू भैया ?'

मैंने कहा : 'देखने आया हूं, जुल्म के कितने पहलू हैं।'

'मत देखो बाबू भैया !' उसने करुण स्वर से कहा।

'क्यों ?'

'छाती फट जाएगी।' और दारुण वेदना से कह उठा : 'अब नहीं सहा जाता !'

वह लहू से भीग गया था। उसने पूछा : 'मगर यह हुआ क्यों !' नरेश लाठी की चोट खाए सामने खड़ा था।

'तुम भी कुंवर !!' उसने पूछा।

चंदा ने कहा : 'नीलू ने नरेश को मारा था पहले। ठाकुरों ने इसे भी मारा। यह तुम्हें बचा रहा था।'

'तूने ?' सुखराम क्रोध से उठा और उसने नीलू को जोर से थप्पड़ दिया। नीलू की घिग्घी बंध गई। फिर सुखराम ने कुंवर के सिर पर हाथ फेरा और अचानक ही बदल गया। 'तू फिर गई थी वहां ?' वह मुड़कर चंदा पर चिल्लाया।

'नहीं जाऊं ?' चंदा ने डपटकर पूछा : 'तूने मुझे नीलू से बांधा है, इसलिए ?'

'हां !' वह गरजा।

'तो तू मेरा मन बांध लेगा ?' चंदा ने डपटकर पूछा।

सुखराम को झटका लगा। उसने सिर पकड़ लिया और बैठ गया। चंदा रोती हुई, 'दादा, दादा' पुकारती उसके पांवों से लिपट गई। सुखराम स्थिर बैठा रहा। वह रो दिया।

'तुझे दुख होता है ?' चंदा ने पूछा।

'नहीं।'

फिर रोया क्या ?

'तूने मुझे जवाब दिया चंदा ।'

'तो तू क्या मुझे मार नहीं सकता ?'

'मेरी बच्ची !' उसने चंदा को सीने से लगा लिया । मैं देखता रहा ।

'मुझे न भेज दादा ! इसके पास न भेज !' उसने नीलू की ओर उंगली उठाकर कहा : 'मुझे न भेज ! मैं नरेश के पास नहीं जाऊंगी, पर इसके पास से मुझे बचा ले दादा तू !' वह ऐसी रोई कि सुखराम का हृदय टूक-टूक हो गया ।

'तू मेरे पास रहेगी चंदा !' सुखराम ने कहा, 'तू सुनता है नीलू ! यह अब तेरे पास नहीं रहेगी । और जो तूने इस पर हाथ उठाया तो [illegible] ।'

नीलू कांप गया था । बोल उठा : 'लड़कों के साथ [illegible] सुखराम ।'

'तो क्या करूं ?'

'यह तो नरेश, ठाकुर [illegible] लेगा ?'

सुखराम उत्तर नहीं दे सका । एक नटनी ने कहा, 'छोरी का क्या ! दो-चार बार इसके संग हो आएगी, फिर तू ही तो बना दीजो नीलू । फिर आ जाएगी यह । मैं कहती हूं सुखराम, [illegible] आने दे । तेरा क्या बिगड़ जाएगा जो उसके पास हो आएगी ये ।'

'क्या कहती है तू !' सुखराम ने कहा ।

तभी मंगू और उसकी बीवी आ गईं ।

नटनी ने कहा : 'अरे रहने दे, किसी के साथ आप [illegible] !'

सुखराम जवाब न दे सका ।

नटनी चली गई । मंगू की बहू ने कहा : 'अरे सुखराम ! तेरी ठकुरानी ने तीन-तीन पीढ़ी से मांगन नहीं । रस्सी जल गई, पर बल नहीं गये ।'

'बकती है उन्माद ।' मंगू ने टोका : 'अब ठीक हो जाएगा ।'

मैंने कहा : 'सुखराम, तू चल मेरे साथ ।'

'कहां बाबू भैया ?'

'मैं कुछ बात करना चाहता हूं ।'

'चलो ।' वह कठिनाई से उठा ।

मंगू चंदा के पास रह गया । उसकी बहू उसके बाल काढ़ने में लग गई ।

हम दोनों एकान्त में आ गए ।

मैंने कहा : 'सुखराम ! तुमने शादी क्यों कर दी ?'

'क्या करता मैं ?'

'नरेश तो छोड़ता ही नहीं ।'

'मैं करूं क्या बाबू भैया !' वह लाचार था ।

'चंदा की भी चिन्ता की है ?'

'वह तो नटनी नहीं है बाबू भैया ! उसमें ठकुराई है, तुमने कभी नहीं देखा ?'

'नटनी नहीं है !' मैं चौंका ।

'मैंने नहीं बताया था उस दिन !' उसने कहा : 'शायद इसलिए नहीं बताया होगा कि मैं डरता था ।'

'तो यह लड़की कजरी की नहीं है ?'

'नहीं ।' उसने कहा ।

'इसका तुमसे कोई सम्बन्ध नहीं ।'

'नहीं ।' उसने निश्चयात्मक स्वर में कहा ।

फिर मैंने पूछा

'मैं डरता हूं बाबू मैया। यह बात सिवाय मेरे कोई नहीं जानता।'

मुझे झटका लगा। कहा : 'पर तुमने तो मुझे बहुत कुछ बताया था ?'

'वह सब मेरे बारे में था।' उसने स्पष्ट कहा।

'और यह ?'

'यह चंदा के बारे मे है।' जैसे यह तो एक रहस्य था।

'फिर क्या हुआ ?'

'मैं सोचता हूं, अगर नरेश जान गया तो ?'

'मैं नही बताऊंगा उसे।'

उसे विश्वास हुआ। कहा : 'सिर्फ नरेश से डरता हूं। ठाकुर ने मुझसे भीख मांगी। जानते हो, यह मिसी बाबा की है।'

'किसकी ?'

'मिसी बाबा की !' मैंने सुना और फिर भी विश्वास नहीं हुआ।

'मिसी बाबा की ?' मैंने दुहराया।

सुखराम के नेत्रों में जैसे कोई सुदूर की स्मृति हो आई हो।

'हां।' उसने कहा।

उत्सुकता मेरे अन्दर जाग उठी थी। मैंने कहा : 'खून से कुछ नहीं होता सुखराम ! यह तो तुमने उसे ऐसा सिखाया है। तुमने उसे नटनी की तरह नहीं पाला ! वक्त बदल गया है, वरना क्या तुम उसकी हिफाजत कर पाते ? मैं सुनना चाहता हू। सुखराम ! मुझे बताओ।'

वह चिन्ता में पड गया था। उसने कहा : 'बाबू मैया ! इसे मैं फिर बता दूंगा।'

'आखिर क्यों ?'

'क्योंकि इसमें मेरा दिल कांपता है। मुझे ऐसा लगता है कि यह बात अगर खुल गई तो नरेश जरूर ठाकुर सा'ब से कहेगा। कौन जाने तुम हीं कह डालो। तुम सोच सकते हो कि ठाकुर ने मुझसे क्या कहा था ? उन्होंने कहा था : सुखराम ! मेरे एक बेटा है। उसको छोड दो। मैंने कहा : ठाकुर सा'ब मैं तो कुछ नहीं करता। बच्चे नहीं मानते तो मैं क्या करूं ? वे कहने लगे : मानता हूं, जमाना बदल रहा है, और आगे चलकर यह सब बदल जाएगा। पर क्या मैं और तू इस सबको आज ही बदल सकते हैं ? बाबू मैया ! कभी कोई ठाकुर किसी करनट से ऐसे बात कर सकता है ? वे बड़े नरम दिल के आदमी हैं। मैं उन्हें दुःख नहीं देना चाहता। मैं गरीब हूं। आज तक ऐसे ही रहा हूं। मेरी अब जिन्दगी ही कितनी बची है ! थोड़ी और है। वह भी ऐसे ही निकल जाएगी। लेकिन चंदा ! वह कभी सुख पाने के लिए नहीं आई। वह अपने को उस दिन ठकुरानी कहती थी। याद है ? अव्वल तो यह अंग्रेज की बेटी ! फिर इसमें ठकुरानी की चाह है। यह आगे दबेगी कैसे ?'

मैं सुनता रहा। सुखराम कहता रहा : 'बाबू मैया ! इसे मैंने जितने आराम से पाल सकता था, पाला। मुझे चलते वक्त अपने पास के सात हजार रुपये मिसी बाबा ने दे दिए थे। उन्हींसे मैंने इसे भूखा नहीं मरने दिया। पर डर के मारे मैं किसी से भी नहीं कह सका।'

'ठाकुर से तुमने कहा था यह सब !'

'नहीं बाबू मैया !' सुखराम ने कहा।

'क्यों ?'

'क्या होता ?'

कहकर देखने मे हर्ज क्या था ?

कहते सरमाती है।'

'क्वांरी है वह !'

'फिर ?'

'फिर क्या ?' सुखराम ने पूछा।

'मैं पूछती हूं, लजाकर फायदा ही क्या ? गरभ हुआ है, तो बच्चा तो होगा ही। जो हो गया, सो तो हो ही गया। अब वह तो आ गया है। कहीं छूमंतर तो हो नहीं सकता। फिर क्या उसका कोई इन्तजाम नहीं करना है ?'

'मैं क्या बताऊं कजरी। तभी वह तुझे बच्चे के लिए इतनी चीजें देती है।' कजरी समझी नहीं।

'तो आखिर होगा क्या ?' सुखराम ने पूछा।

और सुखराम ने सोचा : मां तो मां है। पर पाप का डर उसकी अपनी ममता को फलने-फूलने नहीं देता। उसे वह पूरा करती है कजरी की ममता को बढ़ावा देकर।

'मैं क्या जानती हूं जो मुझसे पूछता है !' कजरी ने कहा।

सुखराम बीड़ी पीने लगा। कजरी ने बीड़ी पीते हुए कहा : 'अकेला-अकेला पीता है तू ! मुझे पूछता भी नहीं !'

'अरे हां, भूल गया था।'

'अभी तो बीड़ी भूला है, आगे चलकर कहीं मुझे ही भूल गया तो ?'

'तो क्या होगा !'

'कुछ नहीं होगा ?'

'अरे भूल गया तो भूल ही गया।'

कजरी रूठी।

'क्यों ?' सुखराम ने पूछा : 'क्या हुआ ?'

'कुछ नहीं।'

'तू मानती है कि मैं तुझे भूल जाऊंगा ?'

'मानती तो नहीं।'

'इसका जापा कहां होगा ?' सुखराम ने बात बदलकर कहा : 'गांव में तो हो नहीं सकता। यहां तो साहब की भद उड़ जाएगी।'

'सो तो मैं जानती हूं।'

'तो तैने पूछा नहीं ?'

'मैंने नहीं पूछा। वह सोच में मरी जा रही है वैसे ही।'

'लेकिन यह तो कोई बात नहीं। वह मर रही है तो तू भी मरी जा रही है ! क्यों ?'

'मैं क्यों मरी जाती हूं ?' कजरी ने पूछा।

'उससे सब पूछ, वह क्या कहती है। साहब से कहना ही होगा। वह इसका इन्तजाम करेगा।'

'फिर ? वह कहेगा ही क्या ?'

'यह मुझे क्या खबर !' सुखराम ने कहा : 'बड़ी जातों में बच्चा गिरा देते है, यह तू नहीं जानती क्या ? हम लोग तो ऐसा नहीं करते कजरी। मानुस का जनम मिलता है औ फिर !'

'फिर ! फिर !' कजरी ने मुंह चिढ़ाया : 'बड़ा मानुस का जनम लिया। अरे जनम सब लेते हैं कोई भला कोई बुरा

पर जनम लेना भी मामूली बात नहीं है

'उसमें क्या मुश्किल है ?' कजरी ने पूछा।

'तू समझती ही नहीं। मैं क्या करूं ?'

कजरी बोली : 'लुगाई का क्या ? अपनी बात बताती हूं। मरद को उल्लू बनाती है वह, ताकि अपनी इज्जत करवा सके।' कजरी फिर हल्के से हंसी और कहा : 'बच्चा होना मरद को बहुत बड़ी बात लगती है, औरत को तो नहीं लगती।'

सुखराम ने देखा, वह कल्पना में मग्न थी। उसने फिर सुखराम की ओर देखकर कहा : 'सबके होते हैं। और जिसके नहीं होते उसका मन धुक-धुक करता है दारी का, दूसरों के देखके छाती फटती है उसकी। दुनिया में उस लुगाई की इज्जत ही क्या जो बांझ हो ! बंजर धरती कौन लेता है ? मैं तो समझती हूं कि जिसी बाबा के बच्चा हो रहा है सो इसमें कोई बुरी बात नहीं है।'

'लेकिन यह तो ठीक नहीं है न !' सुखराम ने कहा।

'क्यों ?' कजरी ने पूछा : 'मां होना क्या लुगाई के लिए अच्छा नहीं है ? औरत मां न होती तो तू कहां से आ जाता ?'

'पर वह क्वांरी है।' सुखराम ने कहा।

'उसमें क्या हुआ ?' कजरी ने कहा : 'ब्याह तो बिरादरी की बात है। बच्चा होना भगवान की कुदरत की बात है। यों हो चाहे त्यों हो, पर बच्चा तो बच्चा ही है, और उसका जनम तो एक ही-सा होता है। पहले पाप हो जाए, फिर पुन्न हो जाए, यह समझ नहीं आता।' और फिर उसने जैसे सोचकर कहा : 'तो ब्याह क्यों नहीं कर लेती वह ? अगर इतनी ही हिम्मत है, तो कर-करा ले।'

'अब पेट वाली से कौन करेगा ?'

कजरी हंसी। कहा : 'मैं अपना कल्ल करके दिखा दूं तुझे।'

'अरी हमारी बात और है, उनकी और है। वे बड़े लोग हैं, हम छोटे आदमी ..।'

'अच्छा तो बड़े लोग हम लोगों की तरह नहीं जीते-मरते ? हम क्या मानुस नहीं हैं ?'

'पर उसका बच्चा पाप कहलाएगा।'

'क्यों ?'

'दूसरा मरद, दूसरे मरद का बच्चा क्यों पाले ?'

'अच्छा !' कजरी ने कहा : 'दूसरी औरत दूसरी औरत का बच्चा कैसे पाल लेती है ?'

'कहां ? सौतेली मां को देखा नहीं तूने ?'

'पर सब तो बुरी नहीं होतीं।' कजरी ने कहा : 'दुनिया है यह। मरद ने नाम धर दिया सौतेली मां। बदनाम कर दिया औरतों को। यह भी सोचा है कभी कि इस दुनिया में सौतेले बाप होते तो मरद कितने खून करते !'

'वह तो ठीक है !' सुखराम जवाब नहीं दे सका। उसने कहा : 'मतलब की बात कर।'

'इससे भी बड़ी कोई मतलब की बात हो सकती है ?' कजरी ने कहा : 'दैया री ! लुगाई मां बने और वह पाप हो जाए। लुगाई की कोख तो धरती माता है। धरती कहीं पाप करती है ? और फिर बच्चे का इसमें क्या दोस है ?'

'तू इसे पूछ. मुझसे बहुत मत कर।'

'अब जवाब नहीं बनता तो खिस्याता है। अरे तुम मरद हमीसे जनम ले के हमारे ही हाथ पांव बांधो तुमने लुगाइयों को बेवकूफ बना रखा है

पतबरता कहके तुमने खूब बनाया है। अब मैं क्या औरों के संग नहीं रही हूं ? पर मजबूर थी। अब मुझमें कुछ खोट आ गया है ? तू प्यारी के संग था तो खोट आ गया है तुझमें ?'

'तो फिर तेरी राय मे दुनिया में आदमी बस ऐसे ही जगह-जगह खाते-पीते रहें !'

'वा रे ! बड़े खाने की बात करता है। आदमी आजाद होगा, अकल होगी तो कुएं का पिएगा, कि मनमानी नाली का भी पीता रहेगा ?'

'पर सब तो ऐसे नहीं होते ?'

'सब ही भोले-भाले आते हैं बलमा दुनिया मे।' कजरी ने कहा : 'लुगाई भगवान जैसे भोले-भाले को जन्म देती है। यह सब तो यहां दुनिया में आके वह सीखना है।'

शाम को कजरी ने सूसन से पूछा।

सूसन ने कहा : 'क्यों पूछती है ?'

'वह पूछता था !'

'तूने सुखराम से कह दिया क्या ?'

'हां मिसी बाबा !'

सूसन का चेहरा लाल पड गया।

'नहीं कहना चाहिए था ?' कजरी ने पूछा।

सूसन का मुख नीचे हो गया।

'आपको दुःख है मिसी बाबा !' कजरी ने कहा : 'मुझे क्या खबर थी !'

'उसने क्या कहा ?' मिसी बाबा ने पूछा।

'परेशान हो गया वह।'

सूसन का कौतूहल बढ़ा। पूछा : 'उसने कहा क्या, वह नहीं याद है ?'

'पता नहीं, फिकर में पड़ गया वो।' कजरी छिपा गई।

सूसन सोचने लगी।

'सरकार, क्या सोच रही है ?' कजरी ने पूछा।

'कुछ नहीं।'

'क्यों मिसी बाबा, यह तो खुसी की बात है ?'

'क्यों ?'

'हजूर, आप मां होंगी तो क्या यह अच्छी बात नहीं है ? दुनिया ऐसे ही तो बढती है।'

सूसन ने कहा · 'नहीं कजरी।'

'क्यों ?'

सूसन ने कहने को मुंह खोला, पर होंठ फड़ककर रह गए।

'हां, तुम क्वांरी जो हो।' कजरी ने कहा, जैसे बाद में अचानक याद आ गया हो।

तब मातृत्व का प्रेम उमडा। कैसी विवशता थी ! पुरुष के अत्याचार का परिणाम गर्भ में नारी का वरदान बन गया था और वह उसे प्यार करने लगी थी। सूसन रोने लगी। कजरी उसके सिर पर हाथ फेरती खड़ी रही। कहा : 'मिसी बाबा ! मुझे तो बड़ा अच्छा लगता है। आपको भी लगता तो होगा ! पर यह भी क्या दुनिया है ! इतना सब कुछ है, पर फिर भी आपको आजादी नहीं, आपके लिए तो सब कुछ होकर भी नहीं के बराबर है।'

बूढ़ा रुक गया था। सूसन चुप बैठी रही।

'सुखराम !' वृद्ध ने कहा।

'सरकार !'

'तुम समझा ?'

'मालिक, जान रहेगी तब तक खिदमत करूंगा।'

'दगा तो न देगा ?'

'अगर भरोसा नहीं हो तो नहीं जाऊं।'

बूढ़ा उठा। घूमने लगा। उसकी मुट्ठी बंध-बंध जाती थी। फिर उसने मुड़कर अपने बाल नोच लिए और वह कराह उठा : 'इंग्लैंड !'

सूसन फिर भी चुप बैठी रही।

कजरी डरी। पुकारा : 'मिसी बाबा !'

कजरी कह गई पर सूसन ने सुना नहीं।

कजरी ने फिर पुकारा : 'मिसी बाबा !'

सूसन चौंकी और वह फूट-फूटकर रो पड़ी।

'रोती है ?' बूढ़ा गुस्से से बढ़ा।

'सरकार !' सुखराम ने कहा : 'आपकी बेटी है। औरत है। वह क्या करती ?'

बूढ़ा हार गया। वह हारकर बैठ गया। फिर वह बड़बड़ाया : 'मैं आया था··· मैं जीत गया···पर मैं हार गया हूं···क्राइस्ट···माफ कर ··हमें माफ कर···'

वह प्रार्थना करने लगा। मन हलका हो गया। फिर उसने कहा : 'कजरी !'

'जी मालिक !'

'वह बच्चा क्या होगा ?'

'सरकार, जो कहें।'

'तुम पाल लेगा उसे ?'

'पाल लूंगी सरकार !'

'हम तुमको रुपया देगा !'

'तो नहीं पालूंगी सरकार !'

'क्यों ?'

'सरकार, बच्चे का मोल नहीं लूंगी। वह तो देवता होता है। आपका नमक खाया है। उसे निभाऊंगी। दुनिया में सबके बच्चे तो नहीं पाल लेती मैं ?'

वृद्ध के हाथ कांप उठे। उसने कहा : 'इंग्लैंड !!'

जैसे वह घोर यातना में था, फिर उसने सूसन को सीने से लगाकर कहा : 'मेरी बेटी !'

सूसन सिसक उठी।

वृद्ध बड़बड़ाया : 'मेरी बेटी का बच्चा मेरा नहीं होगा··' लगा जैसे वृद्ध की आत्मा भीतर ही भीतर मरोड़ खा रही थी।

दूसरे दिन ही वे चल पड़े। वृद्ध ने बेटी को स्टेशन पर विदा दी। कजरी सूसन के साथ ही रही। पूरा फर्स्ट क्लास का डिब्बा था। सुखराम 'सर्वेण्ट्स' में था। कजरी ने आंखें फाड़कर देखा और जब सूसन एक सीट पर लेट गई तो नीचे बैठ गई। पर सूसन ने हाथ पकड़कर कहा : 'ऊपर बैठ कजरी।'

अरे नहीं मिसी बाबा आप मालकिन हैं मैं मर न जाऊंगी ?

तू मेरे बच्चे की मा होगी कजरी मेरे पास बैठ इस सारी दुनिया में तू ही

उसके हंसने-रोने पर हंसेगी-रोएगी। यहां मैं और तू हैं। कोई नहीं है, मेरे पास बैठ···
तुझे मैं बच्चा नहीं, अपना हृदय दे रही हूं···तू उसकी मां होगी।'

कजरी को बैठना पड़ा।

सुखराम जब आया तो आंखें फटी रह गईं।

इशारा किया, नीचे बैठ।

कजरी ने मुंह बिचकाकर मार लिया। सुखराम कठपुतली-सा देखता रह गया। पर वह फिर-फिर इशारा कर रहा था। कजरी ने देखा और नीचे बैठने लगी।

'क्या हुआ?' सूसन ने पूछा।

'वह कहता है।' कजरी ने इशारा किया।

सूसन ने हंसकर कहा: 'उसको कह दे, चुप रहे।'

कजरी ने इशारा किया, 'जा-आ···'

और सीट पर ही बैठी रही।

सुखराम गांव लौट रहा है। उसकी गोद में बच्ची है। एक गोरी-सी छोटी-सी बच्ची। आज वह फिर गांव लौट आया है। पर वह हृदय में रो रहा है। वह संरक्षक बन गया था, और आज फिर संरक्षक बनकर लौट आया है। उसे एक बात याद आ रही है।

बम्बई को देखकर कजरी की आंखें फटी रह गई थीं। उसने कहा: 'दैया री! दुनिया कित्ती बड़ी है!'

सूसन ने कहा था: 'इससे भी बड़ी है यह दुनिया।'

'सच्ची!' कजरी ने कहा: 'बूढ़ा इसमाइल कहा करता था कि आसमान में जो तारे हैं उनपर भी हमारी ही जैसी दुनियाएं बसी हुई हैं।'

पर वह बात रास्ते की थी। बम्बई!! विराट् बम्बई! हाहाकार! वैभव!! अनन्त उन्माद!! पिसते, मरते, भागते हुए आदमी! और वहां वे लोग एक होटल में टिके थे। कितना विलास था वहां?

सुखराम की इच्छा होती है वह इस सबको भूल जाए। भूल जाए, क्योंकि उसकी याद करके उसका हृदय फटने लगता है।

कजरी ने कहा: 'मिसी बाबा!'

'क्या?' सूसन ने पूछा था।

'तुम्हारे मन में मां का प्यार नहीं आता?'

'आता है कजरी।'

'फिर तुम बच्चा छोड़ोगी कैसे?'

सूसन रोने लगी थी।

डाक्टर आता था। देख जाता था।

और सुखराम आंखें पोंछ लेता है।

वे हवा-पानी के झोंके बम्बई में नहीं थे। कजरी बीमार हो गई थी। सुखराम दुविधा में फंस गया था। दुतरफा काम था। कजरी बीमार थी, सूसन आराम में पली रच्ची थी। सूसन कहती थी: 'मुझे अच्छा होना है कजरी, वरना मेरे बच्चे को कौन संभालेगा?' सुखराम अब जान के लिए लड़ता न था। उसके सामने एक नए इंसान का धुंधला-सा सपना आता था। वह सब खो गया था। पर एक वह पल अमर था।

और कुछ याद नहीं आ रहा है अब भी उसे लगता है, कजरी सो गई है वह सामने बैठा है सूसन पास बैठी है।

कजरी, जो हिरनी-सी कुलांच मारती थी, इस वृद्ध जीवन में रुग्ण होकर मृत्यु-शय्या पर पड़ी छटपटा रही है। किन्तु सुखराम भारालस हृदय से, वेदना के उन गहन स्तरों को खोलने में आज समर्थ हो गया है। कजरी छटपटाकर अंत में शान्त हो गई है। डाक्टर पेट फाड़कर बच्चा निकाल रहा है। किन्तु सुखराम की आंखें रो-रोकर सूज गई है। वह कुछ समझ नहीं पा रहा है। उसे लग रहा है, यह सारी सत्ता एक दारुण यंत्रणा है, जिसमें निर्दोष और स्नेही व्यक्ति केवल अत्याचार सहने के लिए हैं।

वह कजरी के पलंग के पास बैठा रो रहा है।

वह पूछता है : 'मिसी बाबा! कजरी क्यों मर गई है? क्या मैं अपने बच्चे का मुह नहीं देख सकूंगा?' सूसन उत्तर नहीं देती। वह बेहोश हो जाती है और उस बेहोशी के परिणामस्वरूप अठमाही बच्चे का जन्म होता है। सूसन मां बनकर पड़ी है। कितनी भव्य लग रही है वह! जी करता है उसे शत-शत नमस्कार किया जाए। मां ने जन्म दिया है। सुखराम देख रहा है। बच्ची, कितनी कोमल, कितनी गोरी है! वह अपने नन्हे-नन्हे हाथों को मुंह में देकर चूस रही है। ठीक एक गुड़िया-सी। उसकी आंखों की ताराएं अभी स्थिर नहीं हैं। वे न जाने किस अज्ञात लोक की ओर अभी तक देख रही है। सुखराम स्तब्ध है। सूसन की आंखें भर आई है।

सुखराम पूछता है : 'मिसी बाबा! कजरी कहां चली गई है?'

'वह मर गई है सुखराम!' सूसन कहती है : 'मेरी बच्ची की मां को भगवान ने छीन लिया है।'

सुखराम कहता है : 'नहीं, मिसी बाबा, नहीं। ऐसा खेल अच्छा नहीं है। कजरी! देख, मैं तुझे कब से पुकार रहा हूं!'

सूसन देख नहीं सकती, वह तो रो उठी है। तभी बच्ची का वह असहाय क्वा-क्वां का शब्द गूंज उठा है।

और सुखराम ने उसे अपने हाथों में उठा लिया है। वह उसे कभी सीने से लगाता है, कभी हाथों पर झुलाता है, कभी उसके फूले-फूले गालों को प्यार से चूम उठता है। वह कहता है 'कितनी प्यारी है! कैसा चंदा का-सा मुंह है इसका! मिसी बाबा! इसका नाम चंदा है। इसे मुझे दे दो मिसी बाबा! कजरी इसे देखेगी तो कितनी खुश होगी! मैं पूछूंगा : कजरी, कैसी है, तो वह ...'

पर सूसन फूट-फूटकर रो रही है। भयानक! कितना आर्द्र स्वर है वह! धरती की कठोर पर्तों को फोड़कर जैसे संगीतमय आलोक की अतीन्द्रिय चेतना निकल रही है। वह कोलाहल, वह विस्मय, वह वैभव, वह दैनंदिन जीवन की उथल-पुथल, वह हृदयों को व्याकुल करने वाला आलोड़न-विलोड़न, वह मृत्यु की विकराल छाया की दुर्दमनीय वेदना, वह निराश्रित सूनापन, वह माता का संतान से बिछुड़ने का भीषण दुःख, जैसे धरती अपने ही क्षितिज से अलग कर दी गई हो, और वह पुरुष की अतलान्त घुटन, सब खो गए हैं और नए जीवन का वह स्वर, उस बच्ची का वह कोमलकांत रुदन, वह रुदन जिसमें इतिहास की विभीषिकाएं खो गई हैं; वह बच्ची, जिसके पवित्र नयनों में नया जागरण ऐसे देदीप्यमान हो रहा है, जैसे आदि—महान आदि में सृष्टि के प्रारम्भ में जीवन कुलबुलाया था, केवल वही अब रह गया है, जो अब सुखराम के सामने स्थित है।

वह कह रहा है : 'बैरिन, तुझे जाना ही था तो चली जाती, पर तूने कहा था तो इस चंदा-सी बच्ची को दूध तो पिला जाती! अभागिन, अभी तक कहीं तेरी चिता में दूध न उफन आया हो क्योंकि वह तो मी तुमसे नहीं छीन सकता

35

शुक्रवार था। चारों तरफ एक नीरवता छा रही थी। आज की उदासी बहुत गहरी थी। बहुत गहरी !

सुखराम डेरे में लेटा था। उसके दिमाग में तरह-तरह की बातें घूम रही थीं। वह जीवन में क्या स्वप्न लेकर प्रारम्भ में उठा था ! वह एक आकस्मिक-सी घटना थी, जिसने अचानक ही उसके विचारों को ले जाकर किले पर केन्द्रित कर दिया था। और इतने दिन बाद भी उसका वह स्वप्न झाड़ी पर ही टंगा हुआ था। उसके हाथ में तो कुछ भी नहीं था।

दोपहर की वेला ढलने लगी थी। वह उठकर बैठ गया था। उसके सामने चंदा की समस्या थी। क्या उसने उसे कष्ट नहीं दिया था ? उसे क्या हक था कि उसने उस पराई बच्ची को कष्ट दिया था ! वह अगर पाप की संतान न होती तो क्या वह आज किसी बड़ी जगह नहीं होती ? वहां उसकी भौं के इशारे पर काम चला करते। अच्छा खाती, अच्छा पहनती। उसे किस बात की कमी होती ! वह यहां की तरह एक-एक चीज के लिए तरसती रहती !

गांव थका-सा पड़ा था। उसमें जातियां थीं, वर्ग थे, एक उचाट कर देने वाली घनघोर विषमता थी, किन्तु देखने को वह शान्त लगता था। उसमें दासता थी, किन्तु अहंकार भी था। भारत की धरती पर असंख्य शासक आकर चले गए थे, पर गांव अब भी थोड़ा ही-सा कुलबुलाया था। उसमें व्यक्ति निर्बल था, किन्तु मनुष्यत्व फिर भी अबाध था।

दगरों में कीचड़ थी क्योंकि पानी बरस चुका था। और उनमें गाड़ियों के पहियों के चलने से गहरी लीकें पड़ गई थीं, जिनमें पानी भरकर स्थिर हो गया था ! पनहारिनें जब निकलतीं तो घुटनों तक कीचड़ में सन जातीं। किसान निकलते तो जूते-बिगड़ने के डर से नंगे पांव ही निकलने की कोशिश करते।

मेघों ने अंधेरा-सा कर रखा था। ऊने-ऊने, घने-घने, दल के दल छा गए थे। सारा आकाश ढक रहा था। कभी-कभी उनमें गर्जन हो उठता। बादल अलग-अलग दिखाई नहीं देते थे। वहां तो आस्मान ही बादल हो गया था, एक छोर से दूसरे छोर तक फैलकर अनंत वारि-राशि से वह अछोर हो गया था, जैसे निराश व्यक्ति के सामने केवल विपत्तियां ही विपत्तियां आकर छा जाती हैं। वह आकाश गम्भीर था जैसे कपाल का ऊपरी भाग होता है, सख्त और घटाटोप छाई रहने वाली हड्डी की गोलाई...'

कड़कड़ाती सर्दी पड़ रही थी। जगह-जगह अलाव जल रहे थे। मनुष्य की आदिम अवस्था से अभी अधिक उन्नति नहीं हुई थी। लोग आग को सीने से लगाए बैठे थे। बाहर जाने का धर्म नहीं था, क्योंकि हवा चीरे डालती थी और दांत से दांत बजाती हुई वह अपनी झांझ-सी बजाती, पेड़ों में लात मार-मारकर ठहाके लगाती थी। फिर कभी बरसते मेघों की गिरती जलधारा को पकड़ने जाती तो वे बौछारें तिरछी हो जातीं और धरती पर सीधी चोट न करके आड़ी होकर मारने का प्रयत्न करने लगतीं। झील पर धुआं-सा छा गया था। वह लबालब भर गई थी। यह म्हावट आई थी—चनों को उबारने नहीं, इंसान की हफ्तों की कड़ी मेहनत जो खेतों में फूट निकली थी, उसे जला देने के लिए। किला भीगकर और लाल निकल आया था और हरे पेड़ ठिठुरे हुए से भीग रहे थे, जिनपर कभी-कभी मोर कैंओं-कैंओं, करके चिल्ला उठते और फिर वही दमघोट नीरवता काटने लगती जैसे पहले से भी गहरी हो गई हो।

चंदा सो रही थी सुखराम बैठा हुक्का पी रहा था पीकर उसने चिलम उलट

दी । चंदा हठात् पागल-सी उठ बैठी ।

'मैं आऊंगी···मैं आऊंगी···'

उसका बकना सुनकर सुखराम ने जोर से कहा : 'चंदा !'

चंदा चौंक उठी ।

'कौन, दादा !' उसने आंख खोलकर देखा; मुस्कराई नहीं । मुस्कराहट तो उसी दिन चली गई थी जिस दिन उसने कहा था कि वह कभी भी नरेश से फिर नहीं मिलेगी । सुखराम क्या इस सबको देखता नहीं था ! वह जानता था कि उसमें कितना दाह है ।

'क्या हुआ तुझे बेटी ?' सुखराम ने पूछा : 'तू तो सो रही थी ।'

'हां दादा ।' चंदा ने कहा । उसका मुख गंभीर था ।

'फिर जग क्यों गई ?'

'कुछ नहीं दादा, कुछ नहीं ।'

'मेरी बेटी ! तू समझती है मैं तेरा दुश्मन हूं ! नहीं बेटी । पर मैं क्या करूं ? सारी दुनिया पर तो मेरा बस नहीं । जो कुछ मैंने किया है वह तेरी जान बचाने के लिए किया है ।'

'मैं तो कुछ नहीं कहती, दादा ।'

'पर तू हंसती नहीं, सोचती रहती है । यह सब क्या मैं देखता नहीं हूं ? खुश रहा कर बेटी ?'

'मैंने सपना देखा है दादा ।'

'अच्छा !!' सुखराम ने सोचा, शायद यों बहल जाए । उसे तो किसी तरह बेटी को खुश करना था । बात बदल देना भी तो अच्छा ही होता है । उसे आशा हुई ।

'क्या देखा है, तूने सपना ?' उसने पूछा : 'रात देखा होगा ?'

'नहीं, अभी देखा है ।'

'मालूम है अब रात नहीं है । बादलों ने अंधेरा कर रखा है ।'

'जानती हूं ।'

'अच्छा बता तो ।'

'तुम मान लोगे ?' उसने पूछा ।

'जरूर ।' सुखराम ने आश्वासन दिया ।

'मुझे विश्वास नहीं होता ।'

'अरी सपना सपना है । उसे मैं न भी मानूंगा तो क्या ?'

'क्यों ? मुझे दुःख न होगा ?' चंदा ने आंखें उठाकर पूछा ।

'तुझे दुःख होगा, बेटी, तो मैं जरूर मान लूंगा ।'

'सच कहते हो !' उसे आश्चर्य हुआ था ।

'मैंने तुझसे कभी झूठ कहा है ?' सुखराम ने आर्द्र कण्ठ से पूछा । चंदा ने देखा और समझी, परन्तु वह विश्वस्त नहीं दिखाई दी ।

'बड़ा अजीब सपना है ।' चंदा ने कहा और शून्य की ओर देखा, जहां जहां कुछ भी नहीं था । परन्तु जैसे उसने वहां से शक्ति ग्रहण की, अपने भीतर कुछ संचय-सा करती हुई दिखाई दी ।

'कह तो ।' सुखराम ने कहा । इन सबने उसकी उत्सुकता को जगा दिया था । वह सोचने लगा था कि चंदा ने अवश्य कोई अजीब सपना देखा है । चंदा ने मुड़कर देखा । वह मुस्कराई । सुखराम निहाल हो गया । आखिर उसकी बच्ची इतने दिन बाद आज मुस्करा दी थी । हे भगवान ! तूने आखिर सुन ली

'मैं अधूरे किले में गई थी।' चंदा ने कहा। सुखराम हिल उठा।

'तुम्हें विश्वास नहीं होता ?' चंदा ने कहा : 'मैं जानती थी। तभी तो मैंने वचन ले लिया था, तुम मुझे अधूरे किले में ले चलो दादा, अधूरा किला पुकार रहा है।'

सुखराम के रोंगटे खड़े हो गए।

'नहीं चंदा ! वह एक छलावा है और कुछ नहीं।' उसने कहा : 'तू वहां जाकर करेगी भी क्या ? वह तो एक खंडहर है।'

'मैं जानती हूं दादा।' चंदा ने कहा : 'पर तुमने तो वचन दिया है ! उसे झूठा जाओगे ?'

'दुनिया बहुत बड़ी है बेटी ! तूने अभी कुछ देखा नहीं है, तभी तू ठकुरानी बनने का सपना देखती है।'

'मैं ठकुरानी हूं। नरेश के पास मैं तभी जा सकती हूं जब मैं ठकुरानी हो जाऊं।' चंदा ने कहा।

सुखराम ने बात टाली : 'अरे बेटा, जिद न कर !'

'पर मैं जाऊंगी !' चंदा कहती रही। वह आज डटी हुई थी। उसके गोरे मुख पर दृढ़ता थी जिसे देखकर सुखराम घबराने लगा था।

'कहां ?' सुखराम सोच में पड़ गया।

'अभी तो बताया।' चंदा ने कहा : 'फिर बताऊं। वह जो सामने वहां है...' उसने उंगली उठाई।

अधूरे किले में !

वह रह-रहकर कांप उठता था।

चंदा ! सुखराम को लगा, वह एक कोमल फूल था और किला ! भूतों का अड्डा !

'नहीं चंदा, तू वहां न जा।' सुखराम ने कहा।

'क्यों ?'

'वहां सांप-बिच्छू हैं, बघेर हैं, कौन जाने वहां क्या-क्या है ! तू क्या करेगी जाकर !'

'तुम भी चलो मेरे साथ।' चंदा ने कहा। वह उल्टे संग ले जा रही थी। सुखराम ने सुना : 'दादा, मैं ठकुरानी हूं !'

ठकुरानी !!'

'नहीं, तू चंदा है।' सुखराम ने कहा : 'तू मेरी चंदा है, सिर्फ मेरी प्यारी बेटी चंदा है। यह सब तुझे किसने बहकाया है ?'

वह हंस दी। सुखराम हतबुद्धि बैठा रहा।

चंदा ने बाहर देखा। बोली : 'अरे, पानी बरसा है !'

'हां बेटा !' सुखराम ने कहा : 'बड़ी ठंड है।'

'है तो।' चंदा ने कहा : 'पर फिर नहीं रहेगी।'

'फिर कब ?'

सुखराम सोचने लगा चंदा ने कहा 'जब हम-तुम वहां से लौटेंगे।'

कहां ? किले में ?

और सुखराम के भीतर हलचल होने लगी। दौलत !

कौन जाने लड़की ठीक कहती हो ! अगर वह सब मिल जाए ! चंदा राज करेगी। वह राजाओं के राजा की नवासी है, रानियों की रानी की बेटी है। वह उनकी बेटी है जो पहले हिन्दुस्तान पर लोहा बरसाकर राज करते थे और वही अंग्रेज एक बार उन ठाकुरों के मालिक थे। उनके सामने यह ठाकुर नाक रगड़ते थे। अगर वह दौलत मिल गई तो चन्दा महलों में रहेगी। वह नरेश को खरीद लेगी। और वह सब खंडहर-सी जिन्दगी पुकारने लगी। अधूरे किले की ईंट-ईंट पुकारने लगी: उठ सुखराम ! लड़की की जिन्दगी के लिए उठ ! अपनी नींद छोड़ ! आज फिर उसे याद आया। बघेरों से लड़ते हुए उस बाप की शक्ल याद आई जिसने मां के सामने कहा था कि सुखराम, तू असल में ठाकुर है, तू नट नहीं है। आज ठकुरानी आई है। वह अपनी हवस पूरी करना चाहती है। उसीने अपना खजाना आज खोल दिया है। और अपने ही लिए आज चंदा के रूप में वह लौट आई है।

उसे नहीं लगा कि वह वही नहीं है जो कुछ देर पहले था। वह सोच रहा था दौलत ! दौलत से दुनिया दबती है। सारा गांव पैरों पर गिर जाएगा। और यही ठाकुर फिर जात छोड़कर आ मिलेगा। दौलत ! ! वह हीरे और सोने के ढेर !

वह अथाह पिपासा अब चिल्लाने लगी। उठ...उठ...जल्दी कर...जल्दी कर...

सुखराम उठ खड़ा हुआ। उसने कहा : 'चंदा ! चल। देख आएं। आज अगर भाग साथ देता है तो तुझे मैं महलों में घूमते देखूंगा। शायद जो सपना मैं पूरा न कर सका, वह तेरे ही भाग में लिखा हो।'

चंदा पुलक उठी और उठ खड़ी हुई।

चंदा ने मसाल ले ली और टाट ओढ़ लिया। टाट में से मशाल के भीगने का डर नहीं था। सुखराम ने कोट की जेब में दियासलाई रख ली। धोती कस ली। चंदा लहंगा पहने थी। उसने पीछे लांग-सी खोंस ली। वह बढ़ चली। सुखराम भी टाट ओढ़े पीछे चला।

बाहर पानी पड़ रहा था। हवा काटे खाती थी।

'चंदा ! संभलकर चल बेटी।'

'जानती हूं दादा।'

तालाब भरा हुआ था। लबालब। सुखराम ने कहा : 'इधर से नहीं। पता नहीं, कितनी धरती रपट गई है। उस तरफ हो ले।'

चंदा हरियाली की तरफ बढ़ चली। सब जगह गीली थी।

जाड़े की बारिश से फुलवाड़ी की रविशों में पानी भरकर सब एकमएक हो गया था। पता नहीं चलता था कि वे कब गड्ढे में चले जाएंगे। चंदा लड़खड़ाई। सुखराम ने पकड़ लिया। पर वे राह चलते रहे।

सब तरफ धुआं-सा था। निर्जन सुनसान सफेद महल पानी से भीग-भीगकर चमकने लग गया था। पत्ते धुल-धुलकर हिल रहे थे, जैसे ठंड से कांप रहे हों। उस समय घर-घर में आग जली हुई थी, मगर दोनों कभी टखने, कभी घुटने-घुटने पानी मे छपाक-छपाक करते हुए बढ़ते जा रहे थे।

पानी से भीगकर टाट भारी हो गए थे। तनिक सामने हटाते तो पानी की ठंडी बूंदें आकर लगतीं। बाईं तरफ का सारा जंगल हरहरा रहा था। उसमें जगह-जगह बरसाती पानी [illegible] करता हुआ भागा आ रहा था जैसे मोटे मोटे अजगरों में बिजली की-सी गति आ गई हो और वे भागने लगे हों मिट्टी फटती थी उससे नाला-

'नही दादा ! तू पीछे-पीछे आ। यहां तू डर जाएगा।' चंदा ने कहा। सुखराम सकपका गया।

यह एक कमरा था। बड़ा-सा था। उसकी दीवारें बड़ी-बड़ी और बड़ी भयावनी दिखाई देती थी। काली-काली थीं। कहीं-कहीं पत्थर उखड़ गए थे जिनमें से पीपल की जड़ें फूट निकली थीं। सुखराम चंदा के पीछे था। चंदा ने मशाल घुमाकर चारों ओर देखा। आगे बढ़े। एक और कमरा था।

वे घुसे कि फुफकार सुनाई दी।

'चदा !' सुखराम ने कहा : 'कीड़ा लगता है।'

'यही तो मुझे मिला था दादा।' उसने कहा।

सुखराम ने कहा : 'तू पीछे आ जा चंदा।'

देखा सांप था। उसने चौडा फन खोल दिया। और फिर देखा। चंदा ने कहा : 'दादा ! यह काटेगा नहीं। मंगू बताता था कि पहले यहां बनजारे आते-जाते थे। कहते है, बहुत-सा धन तो उन्हीं का इस धरती में गड़ा हुआ है।'

सांप आगे सरका।

सुखराम पीछे हट गया।

'दादा, डर मत।' चंदा ने कहा : 'वह तो आप चला जाएगा।'

'पीछे आ जा चंदा।' उसने अनुनय की।

पर चंदा नही हटी। उसने मशाल सामने तिरछी करके झुका दी। सांप कुछ दूर से देखता रहा। चंदा ने कहा : 'दादा, देख ! तिलक है न इसके सिर पर ? नाग है पूरा।'

मशाल की आग सांप को ताप पहुंचाने लगी थी। उसने पीछे को सरककर देखा। मशाल की आग उल्टी हो जाने से बढ गई थी। उजाला हो रहा था। सांप उन्हे देख आग से डरकर दीवार मे घुस गया।

चदा हंसी। कहा : 'देखा दादा ! मैंने कहा था न ? वह अपने-आप चला गया। वह तो पुरखों का देवता है। वह क्या काट सकता था कभी !'

सुखराम हतबुद्धि-सा खड़ा रहा। वह कहे तो क्या कहे ! वह कुछ डरने लगा था।

'आ न दादा !' चंदा ने कहा।

'तू कहां जा रही है चंदा ?'

'अरे यहां तक तो आ गए। अब क्या और बहुत दूर चलना पड़ेगा ?' चंदा ने विश्वास से कहा।

सुखराम घबरा रहा था।

यह सब क्या हो रहा है ! चंदा को डर क्यों नहीं लगता ? क्या वह लड़की नहीं है ? लड़कियां तो इस उम्र पर बहुत डरती है।

फिर चंदा तो जैसे पत्थर है। उसे कोई भाव नहीं हिलाता। और सुखराम को याद हो आया। एक दिन वह जब कजरी के साथ आया था तब क्या यही भयानकता थी ? नहीं, तब इंसानियत थी। कजरी डरती थी। वह खुद डरती थी। पर आज वह क्यों डर रहा है ? क्या वह आज आदमी नहीं रहा ? क्या वह कायर है ?

उसे अपने ऊपर आश्चर्य हुआ। क्यों ? कहां चला गया था उसका आतम-विश्वास ! तब वह जवान था। उससे क्या हुआ ? तब कजरी थी। वह स्वयं उसे अपना रक्षक समझती थी, और आज ? आज वह लडकी जिसे उसने गोदी में खिलाया था, वह उसको राह दिखा रही है, कहती है डर मत, जैसे वही सचमुच उसकी मालकिन हो।

चंदा बगल का जीना उतरने लगी सुखराम को लाचार जाना पडा पर वह

'क्या हुआ ?' सुखराम ने पूछा।

'देख, अब हम उल्टी दुनिया में आ गए। यहां मेढ़क सांप को खाते है।

घोर घुप्प अंधेरे कोठे थे। मशाल का हल्का प्रकाश उनकी कालिमा को भग नही कर सका। जब वह उजाला लौटता तो लगता कि उनमें से फिर अंधेरे के अनगिनत हाथ निकल रहे हैं। और फिर वे चारों ओर से घेर लेते हैं और मेढ़क का स्वर गूंजता है—टर्र...टर्र।

वे कोठे में से कोठा पार करते गए। सुखराम अब वहशी-सा है। सिर्फ पीछे चला जा रहा है। चंदा मशाल उठाए आगे बढ़ती चली जा रही है। सुखराम सिर्फ देख लेता है, पर समझता नहीं कि वह कहां जा रहा है। वे इतनी बार इधर-उधर घुसते-निकलते ही चले गए, यहां तक कि फिर रास्ता भूल गए।

फिर एक बड़े कमरे में निकले। वहां पहुंचते ही कोई जानवर एक दर्दनाक-सी आवाज करता हुआ भाग निकला। सुखराम लड़खड़ा गया। उसने कटार हाथ मे ले ली।

चिल्लाया: 'चंदा!'

कोई उत्तर नहीं मिला।

चारों ओर अंधेरा था और अंधेरा चिल्लाने लगा: 'ठकुरानी!' उसे लगा सब कह रहे हैं कि मूरख! ठकुरानी कह। वह मालकिन है।

वह चिल्लाया: 'ठकुरानी!'

चंदा ने कहा: 'क्या है दादा?'

सुखराम की चेतना स्थिर हुई। उसने आगे बढ़कर चंदा को देखा। चंदा ढूंढ़ रही थी। सुखराम ने कहा: 'यहां कुछ नहीं है।'

'क्या नहीं है?'

'खजाना-वजाना कुछ नहीं है।'

परन्तु उसकी बात का कोई असर नहीं हुआ।

चंदा ने कहा: 'दादा, यहां है! मुझे मालूम है। उसीपर नाग जाकर बैठ गया है। वह जानता है। वह मुझे बताने आया है। हो सकता है, वह बच्चे की तरह हंसता-रोता हुआ भी लगे। मंगू बताता था कि पुराने जमाने में जब बंजारों के पास इतना धन हो जाता था कि वे ले जा नहीं पाते थे, तो अपने बच्चे को धरती में धन के साथ गाडकर उस पर आटे का सांप बनाकर रख जाते थे। वह सांप फिर उस धन की रक्षा करता था। वही तो यह सांप है। जिसका भाग होगा, उसे ही यह धन मिल जाएगा।'

सुखराम अभी सोच ही रहा था कि चंदा ने कहा: 'बहुत दिन से इसकी देखभाल नही हुई। जब से मैं गई तब से सूना पड़ा है।'

सुखराम का खून जम गया। अब धीरे-धीरे उसका हृदय कठोर होने लगा। अब वह आवेश उसमें भर रहा था। एक तरह का जुनून!

दीवारों पर ठंडक थी, धरती ठंडी थी, हवा के ठंडे लेकिन बदबूदार झोंके आ रहे थे और उस बदबू में सुखराम ने देखा, एक ओर एक आग का-सा गोला दूर किसी कोठे में उठता था और पृथ्वी से ऊंचा उठकर चलने लौटता था, लगता था, फिर गिर जाता था और हवा द-द-द करके टकराती हुई बिखर जाती थी। फिर लगता था, दलदल-सा कहीं चमकता था। झील का पानी रिसता हुआ लगता था। वह आग उस दलदल में से पैदा होती थी।

सुखराम नही समझा पानी मे से आग निकल रही थी।

उसने कहा चदा

'क्या है दादा ?'

'वह क्या है ?'

'वह आग ?'

'पानी में आग ?' सुखराम चिल्लाया।

'हां दादा।' चंदा ने कहा : 'पानी में आग लग गई है।'

उसका वह स्थिर वाक्य, स्थिर स्वर, अनागत के भय से सुखराम को भर उठा। उसने कहा : 'चल चंदा। लौट चलें।'

'अपने घर आई हूं तो आज मैं लौट जाऊंगी ?' चंदा ने कहा। उसकी आंखों में गौरव था। उसने कहा : 'तू क्या जानता है ? तूने ठकुरानी के वंश में होकर नट-नटनियों में जिंदगी गुजार दी। धिक् है तुझे।'

चंदा ने सीना ठोककर कहा : 'मैं ठकुरानी हूं। मैं अपने महल में आई हूं। मैं जब मैं निकलूंगी तो ठाकुर विक्रमसिंह अगवानी करते दिखाई देंगे। मेरा दूल्हा घोड़े पर मोर सजाए आएगा। शहनाई बजेगी। ढोल बजेंगे, फुलझड़ियां छूटेंगी, आतिशबाजी होगी, आसमान में उजाला हो जाएगा, और मैं निकलूंगी हीरे और मोतियों से भरी। जिस पर किसी की आंख नहीं ठहरेगी। लोग मेरे ऊपर सोने के गहने देखकर कहेंगे अरे पीली आई, पीली आई और मैं दोनों हाथों से ढेर-ढेर अशरफियां उठाकर लुटाऊंगी। कहूंगी—ले जाओ! भूखे मत मरो। ले जाओ! मैं तुम्हारी ठकुरानी हूं।'

'चंदा!' सुखराम भयार्त-सा दारुण यातना से भरा हुआ-सा चिल्ला उठा। 'तू पागल हो गई है! तू नहीं जानती, तू क्या बक रही है!'

'क्या है ?' चंदा ने मुड़कर कहा : 'तू नहीं समझेगा। समझेगा भी कैसे? करनटी का जाया! तू समझेगा! तू नहीं समझेगा।' वह आगे बढ़ी। सुखराम पीछे गया।

बाहर आवाज आ रही थी। ठीक वही आवाज जो बरसों पहले आई थी, वह कजरी के साथ आया था। वह उस दिन भी धक-धक-धक-धक करती हुई गूंज रही थी। उस दिन भी सुखराम डर गया था। असल में बाहर झील टकरा रही थी।

'दादा!' चंदा ने कहा : 'सुनता है!'

'क्या!! चंदा! क्या!!'

ठकुरानी हंसी। उसने कहा : 'देख, मैं आई हूं, मेरे आने पर नगाड़े बजे। आज न दीखने वाले हाथ नगाड़े बजा रहे हैं; क्योंकि मालकिन आई है।' फिर हंसी।

उसका वह विकराल हास्य सुनकर सुखराम को लगा, उसका सिर फट जाएगा। वह हंसी पाली-काली तीखी-तीखी फिर पत्थरों को जैसे ठंडा कर गई।

'चंदा!!' सुखराम चिल्लाया।

'मैं ठकुरानी हूं।' चंदा ने कहा : 'यह सब मेरा ही है। मैं इसकी हूं…मैं मालकिन हूं…देख, नाच शुरू होने वाला है, तोप छूटने वाली है…हूं…।'

चंदा भाग चली…

'चंदा!!!' सुखराम चिल्लाया : 'तू कहां जा रही है…'

'मुझे न रोक!' चंदा ने भागते हुए कहा : 'आज देख, मेरे लिए किला सजेगा, कैसे मोती की लड़ियां टूट-टूटकर गिरेंगी…'

पर सुखराम ने उसका हाथ पकड़ लिया। वह डर के मारे कांप रहा था। उसमें ताकत ही नहीं थी

चंदा ने उसे धकेल दिया···

सुखराम ने सभलकर उसकी ओर हाथ बढ़ाया और चिल्लाया : 'चंदा···न जा···ठहर ··ठहर···चदा···' पर इधर-उधर भागती हुई चंदा दीवार मे टकराई और उसका सिर घूम गया। उसके हाथ की मशाल धरती पर गिर गई···

सुखराम का मुंह भय से खुला का खुला रह गया।

चंदा चीखकर बेहोश हो गई और धड़ाम से गिर गई। मशाल के धरती पर गिरते ही वहां की धूल उसे चारो ओर से चापने के लिए सन्नद्ध हो गई। अब वह ऊपर ही ऊपर की तरफ चल रही थी और सुखराम ने चदा को हाथो पर संभाल लिया। तभी उसने देखा, चंदा फिर भी मुस्करा रही थी। बेहोशी मे! सुखराम ने उसे कंधे पर उठाया, पर तभी उसकी मशाल पर नजर गई और वह उठाने को झुका कि उस भय बढ़ गया। लगा, कोई फिर हंसा। भयानक स्वर से हंसा। अब वह हास्य कोठे-कोठे मे प्रतिध्वनित होने लगा।

सुखराम को उसकी अपनी ही छाया डराने लगी, जैसे वह दीवार पर नाचने लगी थी। अब पकड़ लेगी, अब पकड़ लेगी, और वह विकराल हास्य गूजता चला जा रहा था। वह अब जैसे भीड़ का विराट हास्य था। जिसमें पतले स्वर मे कभी-कभी हवा चिंघाड़ती थी, और सारा किला उसे लगा, एक विराट् बीभत्स हास्य बनकर गरज रहा था : हा-हा-हा-हा ··हा-हा-हा-हा···

सुखराम भागा।

चंदा कंधे पर थी। और वह घुप्प अंधेरे मे भाग रहा था। कभी वह दीवाल से टकराता, कभी वह पांव में चोट खा जाता, पर वह सब अब उसे डरा नहीं रहा था। उसे एक अज्ञात का भय था। वह ठकुरानी को कंधे पर उठाए हुए है।

सुखराम पसीने मे तर-ब-तर हो गया। और किले के इस ओर किसी युद्ध की तैयारी मे जैसे धक-धक-धक-धक करके नगाड़े अनवरत स्वर से बज रहे थे। आज ठकुरानी जो आई थी। आज अनदेखे हाथों ने बाजे बजाए थे। और सुखराम चिल्लाने लगा : 'छोड़ दे ··मुझे छोड दे···नही···नहीं···मैं चंदा को नहीं दूगा···वह धरोहर है···अरी ठकुरानी···तू मर···तू मर गई···अब तू फिर क्यों जी उठना चाहती है ?···'

वह भागता जाता था, कहां जाए···क्या करे···अन्धकार···

और वह भयानक अट्टहास करता हुआ निकला। चारों ओर नितान्त घोर अन्धकार···

सुखराम फिर चिल्लाया : '··· ठकुरानी, तू चली जा···जीतों की दुनिया में न आ···चंदा मेरी है···यह दौलत···यह खजाना···नहीं चाहिए···'

मगर सारी इमारत अपनी भयभीत अंधेरी को लेकर प्रतिध्वनि में चिल्लाई चाहिए···चाहिए ··

सुखराम को लगा वह गिर जाएगा···आज, आज वह···नहीं गिरेगा · चदा है···चंदा को वह कैसे छोड़ दे···

और वह सुखराम उस समय भी मूर्छित नहीं हुआ। वह भागता रहा···

लगता था, भीतर ही भीतर घूमते-घूमते वे दोनों मर जाएंगे···कहां जाए··· कोई रास्ता नही···

चिल्लाता हुआ अंधेरा, गरजती हुई हवा, पुकारते हुए पत्थर·· सूखी-सूखी आत्माओं की प्यासी ललकार और हंसता हुआ भय दिगन्तों तक [illegible] हुआ जैसे हाथियों के झुण्ड के झुण्ड बढ़े आ रहे हैं

'क्या है दादा !'

'वह क्या है ?'

'वह आग।'

'पानी में आग ?' सुखराम चिल्लाया।

'हां दादा।' चंदा ने कहा : 'पानी में आग लग गई है।'

उसका वह स्थिर वाक्य, स्थिर स्वर, अनागत के भय से सुखराम को भर उठा। उसने कहा : 'चल चंदा। लौट चलें।'

'अपने घर आई हूं तो आज मैं लौट जाऊंगी ?' चंदा ने कहा। उसकी आंखों में गौरव था। उसने कहा : 'तू क्या जानता है ? तूने ठकुरानी के वंश में होकर नट और नटनियों में जिंदगी गुजार दी। धिक् है तुझे।'

चंदा ने सीना ठोककर कहा : 'मैं ठकुरानी हूं। मैं अपने महल में आई हूं। यहां से जब मैं निकलूंगी तो ठाकुर विक्रमसिंह अगवानी करते दिखाई देंगे। मेरा दूल्हा सिर पर मौर सजाए आएगा। शहनाई बजेगी। ढोल बजेंगे, फुलझड़ियां छूटेंगी, आतिशबाजी होगी, आसमान में उजाला हो जाएगा, और मैं निकलूंगी हीरे और मोतियों से झुकी, जिसपर किसीकी आंख नहीं ठहरेगी। लोग मेरे ऊपर सोने के गहने देखकर कहेंगे— अरे पीली आई, पीली आई और मैं दोनों हाथों से ढेर-ढेर अशर्फियां उठाकर लुटाऊंगी। कहूंगी : ले जाओ ! भूखे मर गये। ले जाओ ! मैं तुम्हारी ठकुरानी हूं।'

'चंदा !' सुखराम भयार्त-सा दारुण यातना से भरा हुआ-सा चिल्ला उठा। 'तू पागल हो गई है ? तू नहीं जानती, तू क्या बक रही है !'

'क्या है ?' चंदा ने मुड़कर कहा : 'तू नहीं समझेगा। समझेगा भी कैसे ? तू करनटी का जाया ! तू समझेगा ! तू नहीं समझेगा।' वह आगे बढ़ी। सुखराम पीछे-पीछे गया।

बाहर आवाज आ रही थी। ठीक वही आवाज जो बरसों पहले आई थी, जब वह कजरी के साथ आया था। वह उस दिन भी धक-धक-धक-धक करती हुई गूंज रही थी। उस दिन भी सुखराम डर गया था। अंधेरे में बाहर कोई नगाड़ा बजा रहा था।

'दादा !' चंदा ने कहा : 'सुनता है !'

'क्या !! चंदा ! क्या !!'

ठकुरानी हंसी। उसने कहा : 'देख, मैं आई हूं, मेरे आने पर नगाड़े बजे हैं। आज न दीखने वाले हाथ नगाड़े बजा रहे हैं; क्योंकि मालकिन आई है।' फिर वह हंसी।

उसका वह विकराल हास्य सुनकर सुखराम को लगा, उसका सिर फट जाएगा। वह हंसी पतली-पतली तीखी-तीखी फिर पत्थरों को जैसे छूकर रह गई।

'चंदा !!' सुखराम चिल्लाया।

'मैं ठकुरानी हूं।' चंदा ने कहा : 'यह सब मेरा ही है। मैं इसकी मालकिन हूं। मैं मालकिन हूं। देख, नाच शुरू होने वाला है, तोप छूटने वाली है···मैं रानी हूं···।'

चंदा भाग चली···

'चंदा !!!' सुखराम चिल्लाया : 'तू कहां जा रही है···'

'मुझे न रोक !' चंदा ने भागते हुए कहा : 'आज देख, मेरे लिए कितना जश्न सजेगा, कैसे मोती की लड़ियां टूट-टूटकर गिरेंगी···'

पर सुखराम ने उसका हाथ पकड़ लिया। वह डर के मारे कांप रहा था, जैसे उसमें ताकत हो नहीं थी।

चंदा ने उसे धकेल दिया···

सुखराम ने सभलकर उसकी ओर हाथ बढ़ाया और चिल्लाया : 'चंदा···न जा···ठहर ··ठहर···चंदा···' पर इधर-उधर भागती हुई चंदा दीवार से टकराई और उसका सिर घूम गया। उसके हाथ की मशाल धरती पर गिर गई··

सुखराम का मुह भय से खुला का खुला रह गया।

चंदा चीखकर बेहोश हो गई और धड़ाम से गिर गई। मशाल के धरती पर गिरते ही वहा की धूल उसे चारों ओर से चापने के लिए सन्नद्ध हो गई। अब वह ऊपर ही ऊपर की तरफ चल रही थी और सुखराम ने चंदा को हाथो पर संभाल लिया। तभी उसने देखा, चंदा फिर भी मुस्करा रही थी। बेहोशी मे ! सुखराम ने उसे कधे पर उठाया, पर तभी उसकी मशाल पर नज़र गई और वह उठाने को झुका कि उसे भय बढ़ गया। लगा, कोई फिर हंसा। भयानक स्वर से हसा। अब वह हास्य कोठे-कोठे मे प्रतिध्वनित होने लगा।

सुखराम को उसकी अपनी ही छाया डराने लगी, जैसे वह दीवार पर नाचने लगी थी। अब पकड़ लेगी, अब पकड लेगी, और वह विकराल हास्य गूजता चला जा रहा था। वह अब जैसे भीड़ का विराट हास्य था। जिसमे पतले स्वर से कभी-कभी हवा चिंघाड़ती थी, और सारा किला उसे लगा, एक विराट् बीभत्स हास्य बनकर गरज रहा था : हा-हा-हा-हा ··हा-हा-हा-हा···

सुखराम भागा।

चंदा कंधे पर थी। और वह घुप्प अंधेरे मे भाग रहा था। कभी वह दीवाल से टकराता, कभी वह पांव में चोट खा जाता, पर वह सब अब उसे डरा नहीं रहा था। उसे एक अज्ञात का भय था। वह ठकुरानी को कंधे पर उठाए हुए है।

सुखराम पसीने मे तर-ब-तर हो गया। और किले के इस ओर किसी युद्ध की तैयारी मे जैसे धक-धक-धक-धक करके नगाड़े अनवरत स्वर से बज रहे थे। आज ठकुरानी जो आई थी। आज अनदेखे हाथों ने बाजे बजाए थे। और सुखराम चिल्लाने लगा : 'छोड दे · मुझे छोड़ दे···नहीं···नही···मैं चंदा को नही दूगा···वह धरोहर है···अरी ठकुरानी···तू मर···तू मर गई···अब तू फिर क्यों जी उठना चाहती है ?···'

वह भागता जाता था, कहां जाए···क्या करे···अन्धकार···

और वह भयानक अट्टहास करता हुआ निकला। चारों ओर नितान्त घोर अन्धकार···

सुखराम फिर चिल्लाया : '·· ठकुरानी, तू चली जा···जीतो की दुनिया मे न आ···चंदा मेरी है···यह दौलत···यह खजाना···नही चाहिए···'

मगर सारी इमारत अपनी भयभीत अंधेरी को लेकर प्रतिध्वनि में चिल्लाई· चाहिए···चाहिए ··

सुखराम को लगा वह गिर जाएगा····आज, आज वह···नही गिरेगा·· चंदा है···चंदा को वह कैसे छोड दे···

और वह सुखराम उस समय भी मूछित नहीं हुआ। वह भागता रहा···

लगता था, भीतर ही भीतर घूमते-घूमते वे दोनों मर जाएंगे···कहां जाए··· कोई रास्ता नहीं···

चिल्लाता हुआ अंधेरा, गरजती हुई हवा, पुकारते हुए पत्थर·· भूखी-भूखी आ मामो की प्यासी ललकार और हसता हुआ भय दिगन्तो तक हुआ जैसे हाथियां के झुण्ड के झुण्ड बढ़ आ रहे हैं

एक तुमुल निनाद···अघोर प्रतिध्वनि···अन्धकार···और फिर अन्धकार का कठोर व्यंग्य-भरा वह विकराल दुर्दमनीय हास्य···

उसने पुकारा : 'परमेश्वरी, छोड़ दे··· मेरी बच्ची को···छोड़ दे···मैं चला जाऊंगा···मुझे छोड़ दे···'

पर अंधेरा चिल्लाया···नहीं, नहीं···नहीं छोड़ूंगी···

'छोड़ दे···मुझे छोड़ दे···'

सुखराम की चिल्लाहट से इमारत के उस भाग के समस्त जीवित निशाचर जो वहां छिपे हुए थे, चिल्लाने लगे। और उनके स्वर से वह स्थान बार-बार भर गया···

फिर उसे लगा, सारा अंधेरा ठठाकर हंस रहा है।

सुखराम भागते-भागते रुक गया···जिधर देखता है उधर कुछ दिखाई नहीं देता···अब क्या करे···यह पत्थर भी उसे खा जाएंगे···पर वह नहीं रहेगा यहां···

वह फिर भागा···

वह भूतों में भूत बनकर नहीं रहेगा···यह सब कितना भयानक है···

उसकी सांस फूल गई थी···आंखें निकली पड़ती थीं···

भागते-भागते वह एक कोठे में पहुंचा जहां कुछ रोशनी थी। वह तनिक भी नहीं रुका। तेजी से जीने पर चढ़ गया। आखिर वह किनारे में आ गया था···पर भय नहीं छोड़ रहा था···

वह बाहर आया। उसे लगा, वह नरक में से निकल आया था। उसने मुड़कर भी नहीं देखा। दांत पड़े रह गए। ऐसे समय भी घनघोर वर्षा हो रही थी, परन्तु रुकने का समय नहीं था। सुखराम नीचे उतरा। पानी में पांव घुटनों तक डूब गए।

बावड़ी का पानी चढ़ आया था। ऊपर की सीढ़ियां भी डूबने लगी थीं।

सुखराम बड़ी मुश्किल से पत्थर पर पांव जमा-जमाकर चढ़ने लगा। ठंड से उसकी आंखें निकल आई थीं। वह कभी-कभी कांप उठता था। आखिर वह बावड़ी के बाहर निकल आया।

सुखराम चंदा को लिए भाग चला। इस समय उसमें उत्तेजना बढ़ गई थी। लगता था, सारा किला पीछे से पकड़ने के लिए भागा आ रहा था। वह ठकुरानी को लिए जा रहा था। वह फिर भूतों में भरी जाना चाहती थी!

अब वह झोंपड़े पर पहुंचा तब उसे होश आया।

तो इस दुनिया में वह लौट आया है! वह सारी फुलवाड़ी, सफेद महल, वे सबके सब उसी दुनिया के पहरेदार थे, जो अदृश्य हाथों से पकड़ने की कोशिश करते थे।

चंदा को उतारकर धरा। और उसने दौड़कर इधर-उधर से सारी लकड़ियां, जो झोंपड़े में पड़ी थीं, इकट्ठी कीं। सारी घास सामने लाकर पटक दी, एक लक्कड़ पड़ा था, वह भी धर दिया। फिर जलाने के लिए राख में दबी आग को निकाल उसने खूब आग सुलगा दी। शीघ्र ही धुएं के बाद लपट लपकने लगी।

उसने चंदा के कपड़े बदले और आप भी सामने बैठ गया। उसने चंदा को आग के पास लिटाया और उसके हाथ-पांवों को खूब रगड़ा। उसका पेट रगड़ा। माथा रगड़ा··· वह तो बिल्कुल ठंडी सी पड़ गई थी··· बार-बार यों किया तब शरीर गर्म हुआ··· तब चंदा को होश आया···

उसने कहा : 'कौन, ठाकुर ?'

'नहीं, मैं हूं !' सुखराम ने कहा। वह इन शब्दों को भी डर के मारे दुहराना नहीं चाहता था—'अरी मैं ही हूं। तेरा दादा !'

'दादा !' चंदा ने स्वर पहचानकर कहा।

'क्या है बेटी ?'

'हम किले मे कहां हैं ?' उसने पूछा।

'हम डेरे पर है।'

'तो क्या हम किले मे नहीं गए ?' उसने पूछा।

सुखराम उस सबको भुला देना चाहता था। वह अभी तक कांप रहा था। कहा : 'कैसा किला बेटी ?'

'अरे अधूरा किला !'

'क्यों ? तू तो सो रही थी न ?'

चंदा सोच में पड गई। वह बैठ गई। उसने कहा : 'दादा ! मुझे ऐसा लगता है जैसे मैं और तुम वहां गए थे, वहां बड़ी दौलत थी। हम पास पहुंच गए थे। पर फिर क्या हुआ, मालूम नहीं, दादा। चलो एक बार हो आएं न ?'

'नहीं, नहीं,' सुखराम ने कांपकर कहा : 'पागल हुई है ! जाने क्या-क्या सपने देखती है। अगर तू ठीक से नहीं रहेगी तो मैं तुझे अपने पास नहीं रखूंगा।'

'तो ! नीलू के पास भेज दोगे ?'

'नहीं। मैं चला जाऊंगा कहीं।'

'मुझे छोड़कर !'

'अपने-आप। जब तू मेरा कहना ही नहीं मानती, तो मैं रहकर क्या करूंगा !'

'मैंने तुम्हारा क्या कहना नहीं माना ?' चंदा ने कहा : 'तुमने कहा था, नरेश से न मिलना। मैं जाती हूं ?'

'अच्छी बात है।' सुखराम ने कहा : 'ऐसा ही करना चाहिए।'

'पर दादा,' उसने कहा : 'मुझे लगता है, मैं ठकुरानी हूं।'

'तू पागल है।' सुखराम ने डांटा। पर वह भीतर ही भीतर हिल उठा था।

ऊंचे झोंपड़े में लपट उठ रही थी। सुखराम ने बीड़ी सुलगाई। और उसे जैसे विचार आया। पूछा : 'तू पिएगी ?'

'नहीं,' चंदा ने कहा : 'बीड़ी तो, तू कहता था, नटनी पीती हैं।'

'तू नहीं है नटनी ?'

'नहीं।'

'तू मेरी बेटी नहीं है ?'

'हूं। पर तू भी तो ठाकुर है।' उसने तड़ाक से उत्तर दिया।

सुखराम का हाथ धरती पर गिर गया। बीड़ी गिर गई।

ठंडी हवा के झोंके आते थे।

'सर्दी तो नहीं लगती तुझे ?' सुखराम ने पूछा।

चंदा ने कहा : 'ये मेरे बाल सब भीग कैसे गए, दादा ?'

सुखराम ने कहा : 'बौछार भीतर आ रही होगी। बाल खोलकर सुखा ले। और उठकर उसने स्वयं उसके बाल खोले, खूब रगड़-रगड़कर पोंछे और आग पर सुखाए, दूर-दूर से ही। चंदा ने कहा : 'दादा ! मैं गई नहीं, फिर बाल क्यों भीग गए ?'

'तू चुप नहीं रह सकती ?' सुखराम ने डांटा।

चंदा ने कुछ नहीं कहा मुंह ढककर सो गई। उसको सोते देख उसे चैन आया।

ठकुरानी !!!

ठकुरानी !!!!

वही ठकुरानी !!!!!

शब्द बढ़ने लगा। कितनी भयानक प्यास है इसकी! आखिर यह बुझेगी कब ?

इसने परवाह नहीं की। इसने राज छोड़ दिया, अपने घर को छोड़ दिया, इसने जात की चिन्ता नहीं की। क्योंकि वह दरबान से आसनाई कर उठी थी। क्या तड़प रही होगी उसमें! धूल का ढेर बन गया सब कुछ। पर जब छोड़ आई थी तो लौटी क्यों ? इसकी आत्मा क्यों मंडराती रही वहीं ?

जब रात के अंधेरे में हवा चली, तो यह झोंकों पर बैठकर खिलखिलाती रही। इसकी आग ने सबको स्वाहा कर दिया। सबको मटियामेट कर दिया। जब तक एक भी दुश्मन रहा, इसने उन्हें नहीं छोड़ा। सबको मार डाला। जन बच्चा से लेकर बूढ़े तक को तबाह कर दिया। फिर भी इसकी आग क्यों नहीं बुझी ?

अरी चंडी! तू मानुस-देह में रहकर अपनी आत्मा की प्यास मिटाना चाहती है ?

तीन-तीन पीढ़ी से तेरे बंसज नटनियों के पेट से जन्म लेते रहे। तू देखती रही। वे तड़पते रहे। वे अपने किले को देख-देखकर तड़पते रहे और तू देखती रही। वे गरीबी और बेइज्जती की मार सहते रहे! वे ठाकुर नट हुए तो उन्होंने अपनी आंखों से अपनी इज्जत को गोद-गोदकर छुरियों से कटता हुआ देखा और लहूलुहान दिल से आंखों से आग बरसाते रहे और तूने कुछ नहीं कहा।

अब तू आई है! मेरी बच्ची बनकर आई है! अगर तुझे आना था तो पहले ही क्यों न आ गई ?

सुखराम आवेश में था। उसने उन तस्वीरों को उठाकर आग में डाल दिया। वे जल उठीं।

'चली जा!' उसने कहा। 'चली जा! अब मत अइयो यहां। आज से मैं ठाकुर नहीं हूं। नट हूं। मेरी मां नटनी थी। मेरी प्यारी नटनी थी। मेरी कजरी नटनी थी! बाबू भैया कहते हैं, यह कुत्तों की जिन्दगी है। तूने मुझे कुत्ता बनाया और फिर लालच दिखाती है! मैं तेरे भूत को सीने से लगाए-लगाए फिरता था। और तू मेरे ही हरे पेड़ पर बिजली बनकर मंडराने लगी पापिन! दूर हो जा! मेरी आंखों से दूर हो जा!'

तस्वीरें जल गईं। सुखराम का सिर दर्द करने लगा था। वह कितना ही भूलने की चेष्टा करता, उतनी ही वह याद आती। ठकुरानी का विकराल रूप उसके सामने नाचने लगा।

'आ!' उसने कहा : 'मुझे डराती है भवानी! आ! मैं नहीं डरता। मैं तो तेरे किले में नहीं रहता जहां तू प्यासी चिल्लाती फिरती है। जा! मैं कहता हूं। तुझे कहीं चैन नहीं मिलेगा। तू मेरी बच्ची पर आंख डालती है!'

पर उसे लगा, चंदा नहीं है। कहीं नहीं है। यह जो सामने है यह तो वही ठकुरानी सो रही है···

उसने पुकारा : 'चंदा हो!'

चंदा जग गई। पूछा : 'क्या हुआ दादा ?'

'बेटी बेन्नी' सुखराम ने उसे सीने से चिपकाते हुए कहा 'तू तो मुझे छोड़ न जाएगी ?'

'क्यों छोड़ूंगी दादा !' उसने निर्मल आंखों से देखते हुए पूछा।

सुखराम उससे डरने लगा था, वह डर कम हुआ। उसने कहा : 'सो जा बेटी ! सो जा !' चंदा फिर सो गई।

सारा गांव उस वक्त सो रहा था। पर कच्चे घरों के लोग अब भी जाग रहे थे। जगह-जगह छप्पर चुचाने लगते थे। वे बिल्कुल भीग गए थे, आरपार हो गए थे। कभी-कभी नेपथ्य में हाहाकार होता था। ऐसा लगता जैसे आकाश तक वही रोर व्याप्त हो गई थी। वह गर्जन फिर कांपता और फिर हवा पर भूल जाता। वह कोई टूटता घर होता जिसकी आवाज यहां भी सुनाई देती। फिर वह निनाद एक दूसरे निनाद की कड़ी पकड़ लेता और लगता कि सारा अन्तराल आज चिल्लाने लगा था।

रात बीत रही थी। सुखराम बैठा था। उसे मौन में डर लगता था। कहीं चंदा को कोई ले गया तो ! वह उसे नहीं संभाल सकेगा। कल ही वह नीलू के साथ उसे भेज देगा। उन दोनों को दूर कहीं भेज देगा। पर ठकुरानी नहीं मानती। वह तो विलायत में जन्म लेकर भी यहीं आ गई थी। फिर क्या होगा !

चंदा नींद में पुकार उठती : 'नहीं, नहीं...वह दौलत है—नरेश ठाकुर है...मैं ठकुरानी हूं—वह मेरा है।'

सुखराम उसे पकड़कर बैठ जाता : आग की लपटें कांपने लगतीं और फिर नाचतीं। उस समय सुखराम को लगता, जैसे चिता की लपटों में से कुछ निकल रही थी। वह आह भर लेता। उसे बार-बार पसीना निकल आता।

बाहर मूसलाधार पानी गिर रहा था। मोटी-मोटी बूंदें गिरती थीं और घोर नाद कर रही थीं। ऐसा लगता था जैसे आकाश और पृथ्वी सब अलमस्त होने वाले थे। प्रलय नाच रही थी और झोंपड़ा भी हिल उठता था। क्या जाने कब गिर पड़े। पर बाहर भी जाएं तो कहां जाएं !

ठंड बढ़ गई थी। अंधेरे की ताल सुनकर जैसे वायु खग ठसकने लगती थी। और फिर मल्लयुद्ध होता था और लगता है जैसे दूर-दूर तक कोई पगली भयानक स्वर में चीत्कार करती भागी जा रही हो। वह कौन थी ! प्यासी ठकुरानी। आज दिशाओं में चिल्ला रही थी। सुखराम थर्रा उठता था।

उस वक्त नटों के झोंपड़ों में कई बहने लगे थे। उनके निवासी ऊंचाई पर बने झोंपड़ों में भाग-भागकर शरण ले रहे थे। कोलाहल मच रहा था।

रात यों ही बीत गई।

सुबह हो गई। पानी थम गया। सुखराम बाहर निकला।

मंगू ने कहा : 'सुनता है, झोंपड़े उड़ गए। अरे तू क्या रात सोया नहीं ?'

'सोया तो था।' सुखराम ने कहा।

'चल तो जरा देखें। लोगों का तो कोई सहारा ही नहीं रहा।'

वे चले गए और काम में लग गए।

चंदा अभी तो अकेली थी। दादा नहीं था।

तभी छाता लगाए एक आदमी ने पूछा : 'सुखराम करनट यहां रहता है ?'

चंदा बाहर आई। डाकिया था। कहा : 'हां।'

चिट्ठी थी। दादा नहीं था तो वह सीधी मेरे पास आई। मैंने बिठाया। पत्र खोला। पढ़कर हिल उठा। 'क्या है बाबूजी ?' उसने पूछा।

मैंने पढ़कर देखा। मैं अपने को रोक नहीं सका। वह कितना करुण पत्र था ! पता लंदन का था।

पढ़ो बाबूजी चंदा ने कहा

मैने उसे अनुवाद करके सुनाया :

'सुखराम !

आज चौदह बरस बाद मै तुम्हें चिट्ठी लिख रहा हू। तब मैं डाकबगले में था और तुम मेरे यहा काम करते थे। तुमने ही मेरी बेटी की जान बचाई थी। वह सूसन, जिसकी तुम इतनी खिदमत करते थे, वह पारसाल इस दुनिया को छोड़ गई। मैं बहुत बूढा हो गया हू। बीमार हूं। कब मर जाऊगा, यह कोई नही जानता। हिन्दुस्तान मे रहकर मैने जो पैसा कमाया था, वह सब मेरे ही काम नही आया। आज हिन्दुस्तान आजाद है। मै नही जानता, तुम कहा होगे। अगर यह चिट्ठी तुम्हें मिले तो मुझे तुरन्त लिखना। मै यहा बिस्तर पर पड़े-पड़े तुम्हारे खत का इन्तजार करूंगा।

तुम पूछ सकते हो कि मैने इतने दिन बाद तुम्हें यह खत लिखा है। अब तक क्यों नहीं लिखा ? मै तुम्हे इसका जवाब जरूर दूगा। बात यह है कि मैं जब पैदा हुआ था तब हम दुनिया मे हुकूमत करते थे। मैंने हमेशा हुकूमत की थी। मैं हिन्दुस्तानियो को सचमुच जाहिल और बेवकूफ समझता था। पर जब मैने तुमको और कजरी को देखा तो मेरे सारे विश्वास हिल गए। मैने देखा, गरीबी, गुलामी में ही आदमी आदमी रहता है। हुकूमत और दौलत उसकी असलियत उससे छीन लेती है और वह असलियत है इन्सानियत, जो पहाडो और समुन्दरों के पार आती-जाती है, जो इंग्लैंड मे भी है, और तुम्हारे गाव मे भी है, जहां लंदन की-सी मशीनें नही हैं।

आज मै लारेंस के बारे में कुछ नही कहूंगा, क्योंकि वह बराबर मेरी बेबी से मिलता रहा। यह बराबर उससे माफी मांगता रहा और फिर इस लड़ाई में वह मारा गया। वह चला गया। और अब उसके बारे मे कुछ कहना शराफत नहीं कहला सकेगी।

और जानते हो, सूसन का क्या हुआ ? कजरी मर गई। सूसन ने अपनी थाती तुम्हें सौंप दी। फिर उसने इंग्लैंड आकर भी विवाह नहीं किया। वह सदा कहा करती थी, वह नहीं करेगी, वह नही करेगी। वह कहती थी मुझसे कि डैडी ! दुनिया में अच्छे आदमी सब जगह हैं। कजरी की याद है ? उसके पेट मे लात लगी थी, उसके बच्चा था, तब उसने कहा था, बच्चा फिर हो जाएगा। सूसन कहती थी कि उसकी बच्ची उसके पास नहीं रह सकी।

आज यह खत अगर तुम्हें नही मिलता, और किसी और को मिल जाता है तो भी मैं डर नहीं रहा हूं। मुझे अब रहना ही कितना है ! मैं साफ देख रहा कि इज्जत और कानून के जो दायरे हमारे चारों तरफ थे, वे अपनी असलियत छिपाने के लिए थे ताकि दूसरे लोग हमसे डर सकें। सूसन कहती थी कि एक बार उससे अनपढ कजरी ने एक बात कही थी जो उसे याद रह गई थी कि धरती मुल्कों में क्यों बंटी हुई है मिसी बाबा। जहां मनुष्य खड़ा होता है, वही तो उसकी धरती है। सच ! वह कितनी सच बात थी ! यह सारी धरती इन्सान की है। इसे बांटना ही पाप है।

सूसन सदा बच्ची की याद करती थी। पता नहीं, वह बच्ची अब भी जिन्दा है या नहीं ! उसे मरते दम तक उसकी याद ने नही छोड़ा। वह यहां नर्स हो गई थी। उसके लिए अच्छे अच्छे आदमी घूमते रहे। पर उसने कह दिया कि वह अब शादी नही करेगी। सचमुच वह कुमारी ही थी। मैं उसे पापिन नही समझता। वह बेकसूर थी। और जिसने गलती की थी, वह जीवन-भर अपनी इस गलती के लिए पश्चात्ताप करता रहा।

मैं अब मर जाऊगा मुझे बचने की कोई उम्मीद नहीं है मैंने दुनिया मे हुकूमत शान अदब कायदे और रुआब के नाम पर सैकड़ों आदमियो को कुचला था पर

आज सबसे दूर होकर मैं सोचता हूं तो मुझे लगता है, वह सच में नहीं नाच रहा था। वह तो ऐसा था जैसे कोई बहुत बड़ी मशीन थी, जिसमें मैं सिर्फ एक पुर्जा था।

मौत भी कितनी बड़ी असलियत है! वह समझा देती है कि मैं कुछ [illegible] नहीं। मौत के पास आने पर इन्सान सिर्फ इन्सान रह जाता है। वह सारी घृणा, द्वेष, अहंकार और अन्धकार को छोड़ना चाहता है।

सुमन की बच्ची तुमने पाली है। मैं जानता हूं, वह तुम्हें बड़ी प्यारी लगी। उसका नाम तुमने चंदा रखा था न! सुमन ने बताया था। सुमन नहीं रही। अगर तुम ठीक समझो तो उस बच्ची को बता देना कि वह सुमन की बच्ची है। अब वह हिन्दुस्तानी है, वह अंग्रेजी नहीं जानती होगी। वह गरीब भी तुम्हारे पास होगी। पर अच्छा है। मैं उसे बुलाना नहीं चाहता, क्योंकि अब मैं दो दिन का मेहमान हूं। मेरे कोई सन्तान नहीं है, इसलिए अगर तुम उसे बता दोगे कि वह मेरी लड़की की बेटी है तो हिन्दुस्तान की वह लड़की महसूस करेगी कि हम दोनों के मुल्कों में एक ही-से आदमी हैं। हिन्दुस्तान आजाद है, मुझे उस पर गर्व है, क्योंकि मैं देख रहा हूं कि अगर वह गुलाम होता तो मेरी नवासी भी आज गुलाम होती। स्वतन्त्रता जीवन की शक्ति है, पर वही जो दूसरों को कुचलती नहीं।

मेरी तरफ से चंदा को प्यार करना। हम ईसाई दुबारा जन्म नहीं मानते। पर तुम हिन्दू हो। तुम जरूर मानते हो। मैं ठीक नहीं जानता कि फिर से जन्म होता है या नहीं, पर अगर यह सच है कि होता है, तो मैं यही चाहता हूं कि एक बार हम-तुम फिर मिलें, कभी—किसी रूप में। चंदा से मेरी तरफ से माफी मांगना, क्योंकि वह बेकसूर बच्ची झूठी लोक-लाज के कारण छोड़ दी गई। पर उसकी मां तो मां थी, मां क्या लोक-लाज मानती है! वह सबसे ऊपर होती है। अगर समाज ने उसे वैसे नहीं रहने दिया तो नहीं सही, पर उसने अपनी जिन्दगी को इसीलिए तिल-तिल करके गला दिया। जवाब देना। अगर पत्र न मिले तो भगवान मालिक है।

अलविदा —

तुम्हारा — सागर

मैंने देखा, चंदा के नेत्र विस्मय और आनन्द से फट गए थे। वह ठठाकर हंसी। उसके हास्य में गर्व था। उसने कहा : 'बाबू भैया!'

'क्या है?' मैंने पूछा।

'जानते हो, मैं कौन हूं?' उसने कहा : 'नरेश मेरा है। मैं अंग्रेज हूं, मैं नटनी नहीं हूं···'

मैं कह नहीं सका। पर वह चिल्ला उठी : 'इन सबने मुझसे छीन लिया है क्योंकि मैं नटनी हूं। नहीं···' और वह फिर हंस उठी। वह सम्भल नहीं सकी थी।

मैंने कहा : 'चंदा!'

'तुम मुझे बहकाते हो!' चंदा ने कहा : 'मैं जानती हूं, सब जानती हूं···मैं नहीं मानूंगी···नहीं मानूंगी···'

और वह भाग गई। मैं देखता रह गया। वह कहां जाएगी? क्या करेगी? सुखराम सुनेगा तो क्या कहेगा? क्या वह मुझसे नहीं कहेगा कि मैंने उसे यह सब बताकर गलती की है···पर मैं सोच नहीं सका।

सांझ हो गई थी। अंधेरा घना हो गया था क्योंकि चांद तो अभी तक [illegible] के कंधों पर अभी बैठी थी। चारों ओर वहां घनघोर नीरवता छा रही थी।

तभी कुछ शोर-सा मच उठा। मैंने देखा, और मैं समझ नहीं सका।

आगे-आगे सुखराम था। चंदा उसकी बांहों में थी और धीरे-धीरे वह बढ़ा आ

रहा था। क्या हुआ चंदा को ! किसी ने फिर इसे मारा है ! अबके कौन था वह ऐसा ! कोलाहल सुनकर भैया, भाभी, नरेश और सब लोग वहीं एकत्र हो गए थे।

पीछे पुलिस थी। और पुलिस के बीच में सुखराम पूर्ण शान्त था। यह कैसी भयानक तन्मयता थी जो उसकी पलकों में आकर आज समा गई थी। गहरी और घोर ! जैसे समुद्र की नीची-नीची उतार वाली गहराई, जिसमें इतनी शक्ति होती है कि अपने भीतर सब कुछ समा ले जाए। पीछे इस समय धीमे-धीमे स्वर से बातें करती हुई नट-नटनियों की भीड़ थी।

'यह क्या है सुखराम ?' मैंने चौंककर पूछा। और पूर्ण शान्ति के साथ सुखराम हंसा। उसका वह हास्य सुनकर मैंने चंदा की ओर देखा। देखकर मुझे लगा, आकाश गिर पड़ेगा। सुखराम चंदा की लाश उठाकर लाया था।

मेरे दोस्त घबरा गए थे। उन्होंने बोलने की कोशिश की, परन्तु जैसे लाज ने उन्हें घेर लिया था। वे प्रयत्न करके भी बोल नहीं सके।

'किसने मारा है इसे ?' नरेश ने पूछा।

'मैंने, छोटे सरकार !' सुखराम ने दृढ़ स्वर से कहा : 'मैंने ! और किसमें इतनी हिम्मत थी !'

भाभी चकराई हुई थी।

सुखराम ने पागल की तरह कहा : 'जानते हो, वह कौन है ?'

नरेश ने उसे शून्य दृष्टि से देखा। जैसे वह समझ नहीं पाया था। मैंने देखा, वह केवल देख रहा था।

'तुमने मारा है इसे ?' मैंने चिल्लाकर पूछा।

'हां बाबू भैया, मैंने !' सुखराम ने कहा।

'क्यों ?'

'पूछते हो क्यों ? छोटे सरकार ! तुम रोना नहीं, कहीं छाती न फट जाए तुम्हारी। पर यह चंदा तो नहीं है, यह तो अभागिन है। अरे यह ठकुरानी है। मैंने इसे अधूरे किले में पाया था। छोटे सरकार ! वहां यह भीतर तहखानों में खेल रही थी।

मेरे रोंगटे खड़े हो गए।

सुखराम ने कहा : 'हंसती थी, कहती थी, मैं ठकुरानी हूं, मैं अंग्रेज हूं, बाबू भैया···'

वह ठठाकर हंसा। और कहा : 'मैं हार गया। कहीं नहीं मिली। इसने सपना देखा था। इसके कहने से मैं इसे किले में ले गया था, पर वहां से मैं डरकर भाग आया, वह फिर चली गई। अरे, मैं तो उसी ठकुरानी के बंस में हूं, पर यह तो खुद ठकुरानी है ···तीन-तीन जनम से भटक रही थी···'

मैं थर्रा उठा। सुखराम कहने लगा—'इसके साथ दुनिया ने सदा ही जुलम किया। पहली बार यह कतल की गई, दूसरी बार इसकी छाती का दूध टपकता रहा, पर अपनी बच्ची को न पिला सकी, और यह तीसरी बार थी। पर रोओ नहीं, आज उबार ली भगवान ने। अब यह नहीं आएगी। नहीं आएगी !'

मेरी अधूरी बात ने कितना अनर्थ ढा दिया था ! मैं अवाक् देखता रहा। सुखराम ने हंसकर कहा : 'बाबू भैया ! जानते हो कहां खड़ी थी ? किले के भयानक तहखाने में। और चारों तरफ हड्डी के ढेर जमा थे। सामने एक उल्लू बैठा था और यह कह रही थी : बोल ! मुझे बता ! खजाना कहां है ? जानता है, मैं कौन हूं ? मैं ठकुरानी हूं। मैंने ही तुझे पहरे पर बिठाया था। उल्लू हंसा तो यह भी हंसी। इसने कहा चौकीदार नरेश मेरा है वे मुझे उसके पास नहीं जाने देते वे नहीं जानते कि

रोम-रोम में एक व्यथा व्याप गई। कितना उन्माद था उसमें ! जैसे फूटा पड़ रहा हो।

भीगी लकड़ियों से धुआं दे-देकर लपटे निकलती थीं और नरेश देख रहा था।

हम घर आ गए। जब नहा-धो चुके तो भाभी ने खाना लाकर दिया। मैं नहीं खा सका। नरेश ने कहा : 'काका, खाते क्यों नहीं ?'

वह खाने लग गया था।

मैंने आश्चर्य से देखा।

'मां बहुत अच्छी है,' नरेश ने कहा : 'यह न होती तो चंदा इतनी जल्दी ठकुरानी कैसे बनती ! इसलिए मां की आसीस लो। खूब खाओ। वह तो चली गई; वह दुःखी नहीं है।'

भाभी रो रही थीं। एकमात्र पुत्र क्या कह रहा था ! शायद वे खुश होतीं अगर उस वक्त नरेश रोता होता, या उनसे लड़ पड़ता। नरेश ने कहा : 'मां ! जरा और दे न हलुआ ! अच्छा बना है। अबकी बार मैं चंदा के साथ आऊंगा तब फिर ऐसा ही बनाएगी न ?'

दूसरे दिन मैं सुखराम से मिलने गया। दरोगा मुझे खुद ले गया। सीखचों के पीछे वह चुपचाप बैठा था। उसके बाल बिखरे हुए थे। और चेहरा उतर गया था। निढाल हो रहा था।

मैं उसे पहचान नहीं सका।

मैंने कहा : 'सुखराम !'

उसने मुड़कर देखा।

मैंने फिर पुकारा।

वह पागल-सा देख रहा था। फिर अचानक ही उसने कहा जैसे शून्य से कह रहा हो : 'छोटे सरकार, मैंने चंदा को नहीं मारा, वह तो मेरे जिगर का टुकड़ा थी। मैंने तो ठकुरानी की भटकती आत्मा को आजाद कर दिया है···।'

मैं खड़ा नहीं रह सका।

घर आकर देखा। नरेश बैठा था। भाभी कह रही थीं : 'बेटा ! काका आ गए। तू पूछ रहा था न उन्हें !'

वे रो रही थीं। रो-रोकर उनकी आंखें सूज गई थीं। ढोलिन रो रही थी। भैया चुप थे। सब लोग खामोश थे। मुझे देखकर नरेश ने हंसकर कहा : 'आ गए काका ! मैं तुम्हारी ही बाट जोह रहा था। मैं जानता था, तुम अच्छी-अच्छी किताबें लिखते हो, मिल आए ?'

'हां।' मैंने कहा।

'उसने क्या कहा ?' नरेश ने पूछा।

'कुछ नहीं।' मैंने बात दाबने के लिए कहा।

और नरेश सूना-सा खड़ा हो गया। फिर चौंककर एकदम उसने कहा : 'कुछ नहीं बोली ?'

'कौन ?'

'वही ठकुरानी।'

नरेश भाभी के कलेजे को मैंने तड़कते हुए सुना

बेटा उस समय भैया विचलित हो गए वे रोते हुए बोले मुझे माफ कर

रोम-रोम में एक व्यथा व्याप गई। कितना उन्माद था उसमें! जैसे फूटा पड़ रहा हो।

भीगी लकड़ियों से धुआं दे-देकर लपटें निकलती थीं और नरेश देख रहा था।

हम घर आ गए। जब नहा-धो चुके तो भाभी ने खाना लाकर दिया। मैं नहीं खा सका। नरेश ने कहा: 'काका, खाते क्यों नहीं?'

वह खाने लग गया था।

मैंने आश्चर्य से देखा।

'मां बहुत अच्छी है,' नरेश ने कहा: 'यह न होती तो चंदा इतनी जल्दी ठकुरानी कैसे बनती! इसलिए मां की आसीस लो। खूब खाओ। वह तो चली गई; वह दुःखी नहीं है।'

भाभी रो रही थी। एकमात्र पुत्र क्या कह रहा था! शायद वे खुश होतीं अगर उस वक्त नरेश रोता होता, या उनसे लड़ पड़ता। नरेश ने कहा: मां! जरा और दे न हलुआ! अच्छा बना है। अबकी बार मैं चंदा के साथ आऊंगा तब फिर ऐसा ही बनाएगी न?'

दूसरे दिन मैं सुखराम से मिलने गया। दरोगा मुझे खुद ले गया। सींखचों के पीछे वह चुपचाप बैठा था। उसके बाल बिखरे हुए थे। और चेहरा उतर गया था। निढाल हो रहा था।

मैं उसे पहचान नहीं सका।

मैंने कहा: 'सुखराम!'

उसने मुड़कर देखा।

मैंने फिर पुकारा।

वह पागल-सा देख रहा था। फिर अचानक ही उसने कहा जैसे शून्य से कह रहा हो: 'छोटे सरकार, मैंने चंदा को नहीं मारा, वह तो मेरे जिगर का टुकड़ा थी। मैंने तो ठकुरानी की भटकती आत्मा को आजाद कर दिया है...।'

मैं खड़ा नहीं रह सका।

घर आकर देखा। नरेश बैठा था। भाभी कह रही थीं: 'बेटा! काका आ गए। तू पूछ रहा था न उन्हें!'

वे रो रही थीं। रो-रोकर उनकी आंखें सूज गई थीं। ढोलिन रो रही थी। भैया चुप थे। सब लोग खामोश थे। मुझे देखकर नरेश ने हंसकर कहा: 'आ गए काका! मैं तुम्हारी ही बाट जोह रहा था। मैं जानता था, तुम अच्छी-अच्छी किताबें लिखते हो, मिल आए?'

'हां।' मैंने कहा।

'उसने क्या कहा?' नरेश ने पूछा।

'कुछ नहीं।' मैंने बात दाबने के लिए कहा।

और नरेश सूना-सा खड़ा हो गया। फिर चौंककर एकदम उसने कहा: 'कुछ नहीं बोली?'

'कौन?'

'वही ठकुरानी।'

नरेश भाभी के कलेजे को मैंने तड़कते हुए सुना

बेटा उस समय भैया विचलित हो गए वे रोते हुए बोले मुझे माफ कर

दे, मुझे माफ कर दे, मैंने माधो की लाश में ठोकर मार दी है, मुझे माफ कर…'

परन्तु नरेश ने कहा : 'दद्दू ! मुझसे भूल हो गई। तभी वह नहीं बोली। मैं समझ गया हूं। तुम्हें घबराने की कोई जरूरत नहीं है। सब ठीक हो जाएगा।' उसने रुककर कहा : 'काका !'

मैंने आंखें उठाईं और दो बूंद नीचे ढुलककर गिर पड़ीं।

'मेरी ठकुरानी पर दुनिया आज मोती बरसा रही है,' नरेश ने कहा। और फिर बढ़कर कहा : 'अच्छा जानते हो, वह क्यों रूठ गई ? आज तुमसे क्यों नहीं बोली ?'

भाभी ने सिर पीट लिया। नरेश ने हंसकर कहा : 'मैं भी तो भूल गया था काका, तुमने भी याद नहीं दिलाया।'

'नरेश !!' मैंने चिल्लाकर कहा।

'जानता हूं।' नरेश ने कहा : 'तुम्हें अब याद आता है।'

और जैसे कोई बात याद आ गई। वह बड़ी मस्ती से हंसा, फिर कहा : 'सुहागिन चली गई वह ! मैंने उसको सेज पर सुलाते वक्त उसकी मांग में मोतियों की लड़ नहीं सजाई, उसके हाथ और पांवों में महावर नहीं रचाई। उसके चंदन और इतर भी नहीं लगाया। इतनी बड़ी ठकुरानी ! नाराज भी नहीं होगी…'

भैया उठे थे सो वैसे ही बैठ गए। भाभी ने मुंह खोला था, सो खुला ही रह गया। मेरे हाथ उठे, पर उठे ही रह गए।

बाहर आकाश में वज्र ठनका और उसकी प्रचण्ड प्रतिध्वनि से धरती का कण-कण सिंहों की तरह दहाड़ने लगा, कण-कण हुंकारकर ठनकने लगा…

उस समय मेरी आंखों ने देखा, सुदूर विलायत में एक वृद्ध मृत्यु-शय्या पर पड़ा अन्तिम बार कह रहा होगा : 'आई, मेरी चंदा आई…'

निर्द्वन्द्व ! कितनी मानवीयता !

कहां है वह मानवीयता की गौरव-गाथा। मैं क्या करूं !

मैं पुकार-पुकारकर कहना चाहता हूं कि सुनो !! सुनो ! दिगंतों में यह अधिकार की तृष्णा चिल्ला रही है। पर मैं भी चुप नहीं हूं। ये कमीने, नीच ही आज इन्सान हैं, इनके अतिरिक्त सबमें पाप घुस गया है क्योंकि उन सबके स्वार्थ और अहंकारों ने उनकी आत्मा को दास बना लिया है। ये कमीने और गरीब अशिक्षा और अज्ञान में छटपटा रहे हैं। जब तक ये शिक्षित नहीं होते तब तक इन पर अत्याचार होता ही रहेगा और जब तक ये शिक्षित नहीं होते तब तक इनके अज्ञान, फूट और घृणा पर संसार में जघन्यता का केन्द्र बना रहेगा। तब तक इनके पुत्र धरती पर मिट्टी में पैदा होते रहेंगे और कुत्तों की मौत मरते रहेंगे। परन्तु ये ही एक संबल हैं। शताब्दियों से जो मनुष्य का ज्ञान है, वही मुझसे कह रहा है कि इनके पास दुःख सहने की ताकत है। ऐसी अटूट ताकत है कि ये दुःख को दुःख नहीं समझते। परन्तु जिस दिन जान जाएंगे कि मनुष्यत्व क्या है, उस दिन नया मनुष्य उठ खड़ा होगा।

शोषण की घुटन सदा नहीं रहेगी। वह मिट जाएगी, सदा के लिए मिट जाएगा ! सत्य सूर्य है। वह मेघों में सदैव के लिए घिरा नहीं रहेगा। मानवता पर से यह बरसात एक दिन अवश्य दूर होगी और तब नई शरद् में नये फूल खिलेंगे, नया आनन्द व्याप्त हो जाएगा।

उसी समय नरेश चिल्लाया : 'चंदा !! तू मुझे छोड़कर चली गई है। नहीं, मैं कायर नहीं हूं। मैंने तेरा अपमान किया था। मुझे क्षमा कर ! आज मैं तेरे सामने हाथ खोलकर भीख मांग रहा हूं।' वह हंसा : 'अरे ! तू तो मेम थी, ठकुरानी बन गई आज ! तू यहीं तो आना चाहती थी !! चली गई !!! पर मुझे तो तू यहीं छोड़ गई !!! क्या

मैं नहीं आ सकता वहां ? ?'

और उसने पुकारा : 'मुझे बुला ले ! तेरे बिना मैं जी नहीं सकूंगा ! यह दुनिया बहुत भयावनी है। तू इसे घृणा से छोड़ गई बावरी !' वह फिर हंसा और चिल्ला उठा : 'ठकुरानी बनकर तू रूठ गई। चंदा ! मैं आ रहा हूं···मैं आ रहा हूं···'

और बेहोश होकर गिर गया। मैंने आंख के आंसू धरती पर गिर जाने के बाद देखा, अधूरा किला अब भी खड़ा था।

* * *